धर्म निर्णय

शब्द ओं ही सृष्टि क्रम का उपादान कारण,
निमित्त कारण, तथा साधारण कारण है
वही स्वय विश्व है और ईश्वर का
स्वयम् सिद्ध नाम ओं ही है।

बाबू हरिदास खण्डेलवाल मालगुज़ार पोस्ट
आफ़िस विजयराघोगढ़ मौज़ा सिंहवारा,
तहसील मुड़वारा ज़िला जबलपुर
द्वारा प्रकाशित।

पं० बद्रीप्रसाद पांडे ने
अभ्युदय प्रेस-प्रयाग में छापा।

संवत् १९६६

प्रथम बार १०००] मूल्य १)

सूचीपत्र ।

प्रथम मयूख ।

द्वितीय मयूख ।

तृतीय मयूख ।

चतुर्थ मयूख ।

शुद्धा शुद्ध पत्र ।

पृष्ठ ६६ लाइन ५ में खनिज की जगह मूल चाहिए ।

श्रीमान् डाक्टर श्री गंगानाथ झा एम० ए०
प्रोफेसर
म्योर सेन्ट्रल कालिज प्रयाग की सम्मति ।

धर्म निर्णय ।

हमने इस ग्रन्थ को सावधान होकर पढ़ा । ग्रन्थ बड़े अनुभव और परिश्रम से लिखा गया है । ऐसे ऐसे विषयों पर एक तो ग्रन्थ ही कम पाए जाते हैं । जो पाए भी जाते हैं तो सबके सब एक पीटी लकीर पर चले जाते हैं । ऐसे अवसर पर पीटी लकीर को छोड़ कर दूसरे के लिखे हुए का अवलम्ब त्याग कर केवल अपने अनुभव पर निर्भर होकर बाबू हरिदास जी ने इस ग्रंथ को जो रचा है उससे लोगों का बड़ा उपकार किया । इस ग्रंथ से केवल यथार्थ धर्म का उपदेश ही नहीं होता किन्तु इससे यह भी स्पष्ट ज्ञात हो जाता है कि स्वयं अनुभव से प्राप्त जो ज्ञान सो कैसा दृढ़ होता है ।

इस ग्रंथ में चार मयूख हैं ।

प्रथम में आत्मविचार, ईश्वर निरूपण, जीव निरूपण—ईश्वर जगत् का ऐक्य निरूपण, मतभेदमीमांसा—इतने विषय हैं । इन विषयों पर जो कुछ लिखा है उसको संक्षेप से मैं यहां लिखता हूं । ईश्वर के ज्ञान उपार्जन करने में चित्तशुद्धि परम आवश्यक है । यह शुद्धि आत्मविचार से होती है । मेरा आचार विचार कैसा है इस बात को जो अच्छी तरह विचारेगा और विचार कर शोधन करने का यत्न करेगा उसी का चित्त पवित्र होगा । दूसरों के दोषों पर न ध्यान देकर अपने दोषों को हटाना और शरीर में ममता त्यागना यही बुद्धिमान् का काम है । चित्तशुद्धि के अनन्तर दृढ़भक्ति और ईश्वर प्राप्ति की इच्छा भी उत्कट रूपेण ईश्वर ज्ञान में अपेक्षित हैं ।

ईश्वर शक्तिरूप हैं । कोई एक प्रकार की शक्ति नहीं । सर्व प्रकार की शक्ति की समष्टि पराकाष्ठा यही ईश्वर पद से विवक्षित है । ईश्वर

अप्रमेय है। जो स्वयं शक्तिस्वरूप है सो किसी निगम का कर्म वा विषय नहीं हो सकता है। और ज्ञेय वा प्रमेय जो होगा सो अवश्य प्रमाण क्रिया का कर्म होगा। 'ईश्वर का ज्ञान' वा 'ईश्वर का परिचय' इत्यादि जो शास्त्रों में पाया जाता है उसका अर्थ यह नहीं है कि ईश्वर ज्ञेय है। ईश्वर और जीव एक है। अपने को भिन्न मानने वाला जीव जब अपना यथार्थ स्वरूप समझ लेता है और ईश्वर से अपने को अभिन्न देखता है उसी को 'ईश्वर ज्ञान' हुआ ऐसा कहा जा सकता है। 'जीव' पद से इस ग्रंथ में केवल मनुष्य मात्र नहीं विवक्षित हैं। जितने पदार्थ इस संसार में हैं वे सब ईश्वरीय शक्ति के अंश हैं। और इसी अंश को जीव माना है। इससे जितने पदार्थ हैं-मनुष्य-जन्तु-वृक्षादि-द्रव्य-स्वर्ण-रौप्य-जल इत्यादि इत्यादि सभी 'जीव' पद से विवक्षित हैं।

जो लोग केवल मनुष्य मात्रही को अथवा जानवर मात्र को जीव मानते हैं वे लोग इस बात को भूल जाते हैं कि जैसाही ईश्वर शक्ति का अंश मनुष्य वा घोड़े में है वैसाही तृण गुल्मादि में भी है। फिर क्या कारण कि मनुष्य ही 'जीव' कहे जायं और तृण गुल्मादि नहीं। मनुस्मृति ने तृण गुल्मादि को भी सजीव माना है।

'अन्तस्संज्ञा भवन्त्येते सुखदुःखसमन्विताः' इत्यादि।

जब ईश्वरशक्तिही का अंश सब जीव हुए तब जीव और ईश्वर में ऐक्यही रहा। क्योंकि अंश व अंशी में तत्वतः भेद नहीं है।

ईश्वरशक्ति शब्द रूपेण सब वस्तुओं में अनुस्यूत है। यदि ऐसा न होता तो वह 'वस्तु' नहीं कहलाता।

इस पर प्रायः यह आक्षेप किया जायगा कि ईश्वर को 'शक्ति' मानना उनको जड़ कहना है। परन्तु जो लोग ऐसा आक्षेप करते हैं वे यह भूल जाते हैं कि 'ज्ञान' वा 'चैतन्य' भी एक प्रकार की शक्ति ही है। यह भी कहा जा सकता है कि 'ज्ञान' वा 'चैतन्य' शक्ति से अतिरिक्त पदार्थ नहीं है। यदि यह न भी माना जाय तो भी ज्ञान एक प्रकार की शक्ति है यह निर्विवाद है। ऐसी अवस्था में यदि ईश्वर को शक्ति स्वरूप कहा तो इससे उनके महत्व में किसी तरह का ह्रास नहीं हुआ।

मतभेद मीमांसा में यह सिद्ध किया गया है कि-(१) सृष्टि असत् नहीं है। सब लोगों का अनुभव है कि संसार सत् है और साकार है। (२) सृष्टि अनीश्वर नहीं है-बिना कारण के कार्य होना असम्भव है। (३) ईश्वर साकार हैं-जगत साकार है सो प्रत्यक्ष है। यदि जगत् साकार है तो इसका कारण भी साकार ही होना चाहिये। कारण गुण पूर्वक ही कार्य के गुण होते हैं। [यहाँपर इस बात का विचार करना उचित था कि यदि ईश्वर साकार है तो इनमें इयत्ता अवश्य होगी बिना इयत्ता के आकार नहीं हो सकता। यदि इयत्ता हुई तो 'अनन्त' 'अपार' इत्यादि गुण कैसे हो सकते ? किन्तु ईश्वर की इयत्ता यदि हो भी तो हम लोगों को ज्ञात नहीं हो सकती।]

(४) कार्य कारण में वास्तविक भेद कुछ नहीं है। जितने सत् पदार्थ हैं वे ईश्वरीय शक्ति ही से शक्तिमान् अर्थात् विद्यामान् हैं। इससे अद्वैत शुद्ध रूप से स्थिर हुआ। (५) जगत् नश्वर नहीं है। जो वस्तु शक्तिमान् है उसका आत्यन्तिक नाश कभी हुआ ऐसा किसी ने कभी नहीं देखा। जिसको लोग 'नाश' उत्पत्ति कहते हैं वह केवल शक्ति के आविर्भाव ने ह्रास व 'वृद्धि' रूपही है। जब किसी पदार्थ में शक्ति का किञ्चित् ह्रास हुआ तो उसको लोक नष्ट मानते हैं। परन्तु यत्किंचित् ह्रास होने से शक्ति का अत्यन्त नाश हुआ ऐसा कोई भी नहीं स्वीकार कर सकता।

१८ से ३० पृष्ठ तक आर्य समाज व अन्य मत और आचार्यों का दोष निरूपण किया गया है। मेरी क्षुद्र बुद्धि में ऐसे हितकर ग्रंथ में दोष निरूपण न रहता तो अच्छा होता। अच्छा क्या है इसी के निरूपण से बुरा क्या है सो भी ज्ञान हो ही जाता है। सब लोगो में सर्वथा ऐक्य प्रतिपादन करने वाले ग्रथ में परकीय दोष का उद्भावन करना उचित नहीं समझ पड़ता, विशेषत: जब परदोषोद्भावन एक प्रकार का महान दोष बतलाया गया है (पृष्ठ ४-५)। दोष निरूपण करने में अनुचितोक्तिया भी हो ही जाती है। इससे परदोषोद्भावन जहां जहां

किया गया है वे सब पंक्तिया यदि निकाल दी जांय तो बहुत अच्छा हो। आर्य समाज मुसलमान क्रिश्चन इत्यादि धर्मों पर आक्षेप करने में एक और दोष पड़ता है। कोई भी धर्म ऐसा नहीं है जिसमें सर्व प्रकार से दोष ही हो। कुछ उचित कुछ अनुचित सभी धर्मों में मिला हुआ है। इससे सब धर्म के मतो का यथावत् परिशीलन न करके दोषोद्भावन करना उचित नही। सनातन धर्म भी तो जिस प्रकार आज कल प्रचलित हो रहा है उस से भी बड़े बड़े दोष पाये जाते हैं। इनका उद्भावन न करके अन्य मतों ही का दोष निरूपण करने से ग्रंथ में पक्षपात का भी कलङ्क लगता है।

प्रथम मयूख मे मन्तव्य का निरूपण करके द्वितीय मयूख में कर्तव्यांश का निरूपण किया गया है। प्रथम मयूख में जो कुछ मन्तव्य बतलाये गये है उन्ही को उदाहरण रूपेण आचार मे किस तरह काम में लाना चाहिए सो विशद रूप से बतलाया गया है। इसी प्रसंग में यह भी बतलाया गया है कि (१) 'हित' 'अनहित' 'भला' 'बुरा' 'बड़ा' 'छोटा' ये सब आपेक्षिक और काल्पनिक है। यथार्थ में किसी प्रकार का भेद तात्विक और सत्य नही है। (२) तृष्णा ही सब दोषो का मूल है और द्वैत कल्पना ही तृष्णा का उपादान कारण है। (३) 'धर्म' और 'कर्म' समानार्थक पद है। धर्म का लक्षण ३९ पृष्ठ में बतलाया गया है कि—'जिस कर्म से बहुतो को सुख प्राप्त हो उस कर्म को धर्म माना है।' इस लक्षण से यह ज्ञात होता है कि कुछ कर्म ऐसे भी है जिन से बहुतों को दुःख हो और जिनको इसी कारण धर्म नहीं कह सकते। ऐसी अवस्था मे फिर 'धर्म' 'कर्म' इन दोनों शब्दों को पर्यायवाचक कहना बहुत ठीक नही जान पड़ता। (४) धार्मिक सज्जन के चित्र निरीक्षण और चरित्र परिशीलन से बड़ा उपकार होता है। इसी निरीक्षण और परिशीलन को 'मूर्ति पूजन' माना है। पृष्ठ ४२ पर 'प्राणी मात्र से प्रेम' इसी को 'मूर्ति पूजन' कहा है। (५) मूर्ति पूजन के बिना पूजन ही नहीं हो सकता। 'शक्ल' और 'शब्द' के अतिरिक्त वस्तु ही संसार में नही है। 'शक्ल' और 'शब्द' का पूजन 'मूर्ति पूजन' ही हुआ। मूर्ति पूजन का निरूपण इस ग्रंथ मे नई रीति से किया गया है। बिना आकृति

के कोई वस्तु ही नहीं—ईश्वर भी साकार ही हैं—तब निराकार वस्तु ही नही—फिर निराकार पूजन कहा से हो सकता। जो पूजन होगा सो सब साकार ही का होगा। साकार ही को 'मूर्त' भी कहते है। फिर प्राणी मात्र से प्रेम करना यदि 'मूर्ति पूजन' है तो फिर किस मनुष्य को इस मे किसी तरह का दोष भान हो सकता है। प्रेम ही 'पूजन' हुआ तो साकार से प्रेम करना क्या अनुचित हो सकता।

तृतीय मयूख के आरम्भ में सृष्टि प्रकरण है। आकाशस्थ गर्भ से या भू गर्भ से आविर्भूत होकर जब कोई पदार्थ संयोग द्वारा 'गोचर' अर्थात् अनुभव विषय होता है तब उसकी 'सृष्टि' होती है, और जब वियोग द्वारा 'अगोचर' होता है तब उसका 'लय' होता है। यह आविर्भाव तिरोभाव सब पदार्थों का आकाश—वायु—अग्नि—जल इन चार तत्वों के द्वारा हुआ करता है। मानुषी सृष्टि सब से अन्तिम है। सब सृष्टि संयोग से और लय वियोग से होता है। इसके उदाहरण विशद रूप से पृष्ठ ५१—५७ में निरूपण किया गया है। पृष्ठ ५८ पर काल को गति रूप कहा है। यह एक प्रकार की ईश्वरीय शक्ति है। इसका चाक्षुष प्रत्यक्ष नही होता— अनुभव मात्र होता है। काल के कार्यों के उदाहरण अच्छी तरह पृष्ठ ५९ पर वर्णित हैं। इसी काल गति के नियम को 'प्रकृति' कहा है (पृष्ठ ६०)।

पृष्ठ ६२ से कुछ पृष्ठो तक बहुत विषयों पर स्वल्प रीति से विचार किया गया है। यथा—स्वच्छ जीव निरूपण—स्फुरण शक्ति निरूपण—विराट् निरूपण—शब्द ॐ के अनुभव का निरूपण—स्वभावनिरूपण—शक्ति—चमत्कार—आकृति—आकाश इत्यादि इत्यादि। पृ० ७९—८० पर कहा है की 'मुसल्मानों का ईश्वर अर्बी भाषा बोलने वाला हुआ'। 'अङ्गरेज़ों का ईश्वर अंगरेज़ी भाषा बोलने वाला हुआ'—इत्यादि। इसका तात्पर्य उपहासमात्र है और यह उपहास ईश्वर के प्रति नही परन्तु मनुष्य प्रपंच ही पर है।

अन्त में स्पष्ट रूप से कहा है कि अनेक मतों में जो भेद पाए जाते हैं सो प्रपंच मूलक हैं। वास्तविक तत्व सब मतो के अन्तर्गत एक ही प्रीति व स्नेह है। इस में कुछ सन्देह नही 'भक्तिरेव पारमार्थिकं बीजम्' 'सा पराऽनुरक्तिरीश्वरे'।

सब से अन्त में 'प्राणीमात्र का धर्म' और 'गुरूपदेश' इन विषयों पर बहुत अच्छी तरह विचार किया गया है। इन विषयों पर जो कुछ मन्तव्य बाबू साहब ने अपने अनुभव से प्राप्त की है सो बहुत प्रशंसनीय है। और इनका वर्णन और उपपादन ऐसी उत्तम रीति से किया गया है कि इनका उत्तर होना मुझे दुर्घट मालूम पड़ता है। पर मेरी आशा है कि परम अद्वैत सिद्धान्त पर तो किसी को हृदय से अरुचि हो ही नहीं सकती और यही परमाद्वैत सिद्धान्त इस ग्रन्थ का मुख्य प्रतिपाद्य है। परमाद्वैत सिद्धान्त की जितनी युक्तियां हैं सब स्वरूपतः निरुत्तर हैं।

इलाहाबाद १७-७ ०९

श्री गंगानाथ झा,
प्रोफेसर म्योर सेंट्रल कालेज।
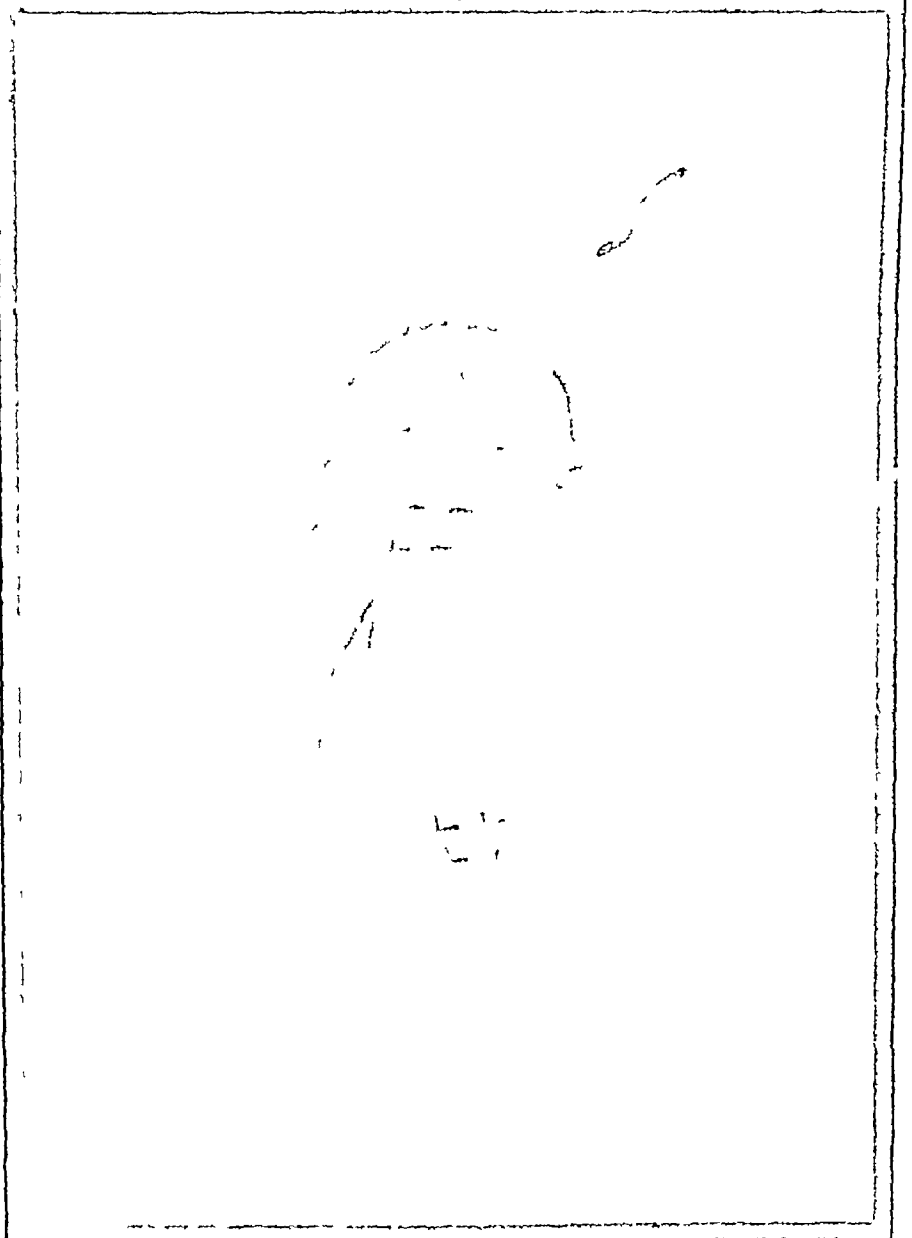
बाबू हरिदास खंडेलवाल

इंडियन प्रेस प्रयाग।

भूमिका ।

धर्म के आधार में ही मनुष्य मात्र का सुख प्रतिष्ठित है। इससे धर्म की मीमांसा और उसके प्रचार के लिये नाना शास्त्र बने हैं। सूचनामें लिखा गया है कि मनुष्य जाति का धर्म एक है पर अनादि काल से धर्म के विषय में विवाद चले आते हैं। सब देशों में सभाएं हुआ करती हैं पर विवाद शान्त नहीं होते। इसका कारण यह है कि जितने जातीय अथवा क़ौमी मज़हब हैं सब में स्वार्थ तत्परता मिश्रित है। इससे धर्म का निर्णय सुगम नहीं है। सभी अपनी २ जाति और मज़हब की बढ़ती और अन्य सब की हानि करने में प्रवृत्त रहते हैं तथा अन्य २ धूर्त धर्म के मिष से अनाचार वृद्धि कर रहे हैं। इससे धर्म में अश्रद्धा होती जाती है। तथा जैसे २ धर्म में ग्लानि बढ़ती है वैसे २ ही देश की अवनति होती है। यह सार्वभौम सिद्धान्त है। धर्म से तथा स्वार्थ तत्परता से अत्यन्त विरोध है, जैसे भक्ष्य भक्षक से विरोध रहता है। आप्तों ने मनुष्य मात्र का निष्काम कर्म अर्थात् स्वार्थ त्याग ही मुख्य धर्म माना है। द्वैतता की दृष्टि को ही अधर्म माना है। "एकं ब्रह्म द्वितीयो नास्ति" अर्थात् अद्वैत सिद्धान्त को ही निश्चित किया है। उसकी उपासना निष्काम कर्म

तथा स्वार्थ त्याग को ही कहा है जिससे प्राणी मात्र का सामान्य हित साधन हो। उस धर्म को निष्पक्षता से जिन्होंने बतलाया है वे आप्त माने गये हैं। उसी धर्म को सत्पथ शब्द से कहा है। उस सत्पथ का अनुवाद "धर्म निर्णय" नामक ग्रंथ देशभक्तों की सेवा में भेट करता हूं इसकी सत्यता की पुष्टि में सब भाषा की फ़िलासफ़ी और सब प्रकार की युक्ति व तर्क साक्षी दे रहे हैं तथा लोक संम्मतपूर्णतया साक्षी दे रहा है कि "नास्ति तत्वमतः परम्" अर्थात् इससे परे और तत्व नहीं है। आशा करता हूं कि सब मत के विद्वान् जो स्वच्छ देश भक्त व देशहितेच्छु हैं निःशंक हो इस प्रकाश रूप धर्म संस्था के मार्ग में एक मत हो प्रवेश करेंगे और धर्म प्रवाह में सदैव एक मत हो स्नान करेंगे और मतमतान्तरों के झगड़े तथा धर्म का निश्चय निर्विवाद हुआ स्वीकार करेंगे अर्थात् जाति भेद अवस्था भेद पर दृष्टि न देकर एक दूसरे के सहायवान व प्रीति-पात्र होंगे। तभी देश का हित व देश की उन्नति होगी। अन्यथा नहीं। इस ग्रन्थ में चार मयूख हैं। उनमें ये विषय हैं।

पहिला मयूख।

१ आत्मविचार। २ ईश्वर निरूपण। ३ जीव निरूपण। ४ जगत-ईश्वर-ऐक्य-निरूपण। ५ मत समीक्षा और निर्णय :-

(१) सृष्टि के असत्व का खण्डन। (२) अनीश्वर-वादी खण्डन। (३) निराकारवादी खण्डन। (४) द्वैत-वादी खण्डन। (५) जगत्-नश्वरवादी खण्डन। (६) आर्य्यसमाज सिद्धान्त खण्डन। (७) अन्य मत समीक्षा। (८) दम्भ धर्म विवेचन। (९) मांस भक्ष दोष।

दूसरा मयूख।

१ भेद, अर्थात् द्वैत भेद कल्पना का मिथ्यात्व निरूपण। २ धर्म निरूपण। ३ मूर्त्तिपूजा निरूपण।

तीसरा मयूख।

१ सृष्टिक्रमनिरूपण—

(१) संयोग। (२) कालक्रम। (३) प्रकृति।

२ तत्वज्ञान—

(१) स्वच्छ वीज निरूपण। (२) स्फुरण शक्ति निरूपण। (३) विराट निरूपण। (४) ओंकार निरूपण। (५) स्वर-आकृति-ऐक्य निरूपण। (६) आकृति वर्णन। (७) आकाश वर्णन।

३ मानुष प्रपञ्च।

चौथा मयूख।

१ गुरूपदेश। २ मानव धर्म। ३ ईश्वर स्तुति और माहात्म्य।

बाबू हरीदास खंडेलवाल, मालगुज़ार,

मौज़ा सिंहवारा, परगना विजयराघोगढ़; तहसील मुड़वारा,
जिला जबलपूर।

सविनय प्रार्थना ।

(१) देशभक्त अथवा देश हितेच्छु सज्जनों को ईश्वर भक्त मानकर मैं प्रार्थना करता हूं ।

मैं अपढ़ हूं और यह विषय ऐसा अत्यन्त गहन है कि जिसके बोध व विज्ञान के लिये सैकड़ों मन के भार की भिन्न २ मतों की धर्म पुस्तकें हैं। मैं अत्यन्त यत्न कर रहा हूं कि यह लेख सरल शैली सरल शब्दों में निर्माण हो कि सुगमता से सभी विद्वान समझ सकें किन्तु इस विषय को स्पष्ट बोध कराने के लिये अनुकूल शब्द ही प्रचलित नहीं हैं और सब मतों का निर्णय करके एकता दिखलाना भी सुगम नहीं है। इससे मैं क्षमा किये जाने योग्य हूं-और विनय करता हूं कि शब्द दोष या शैली दोष जो जिस प्रसंग में ज्ञात हों कृपया संभाल दें और इस अनुवाद में जो पुनरुक्ति दोष प्रायः है इस मतलब से है कि जिसमें सब प्रसंगों का खुलासा भाव समझ में आ जावे ।

(२) इस मेरे परिश्रम का महानुभावों से मैं जो पुरस्कार पाने का आकांक्षी हूं । वह पुरस्कार यह है कि इस ग्रन्थ का शुद्ध व सरल शब्द व शैली में छोटी बड़ी कक्षा के अधिकारियों के लिये अपनी २

भाषा की छोटी बड़ी पुस्तकों में उल्था किया जावे और जिस प्रसंग को अधिक पुष्ट करने की आवश्यकता हो वह किया जावे कि जिसमें सुगमता से Middle वाला भी समझ सके और Entrance, F. A., B A, M. A. विद्वान भी समझ सकें और जिस उचित युक्ति व उपाय से इसका प्रचार भारतवर्ष में हो वह यत्न करें कि मनुष्य मात्र धर्म की छाया में सुख प्राप्त करे। इत्यलम्।

सूचना ।

धर्म वह है जिससे जगत् का हित हो । विद्या, तपस्या और सद्वृत्त की सम्पत्ति जिन ऋषियों में थी, और जिन्होंने लोभ से या मोह से या अहंकार से नहीं किन्तु लोक के हित के लिये शास्त्रों को बनाया है, उनका सिखाया हुआ धर्म भी वही है जिससे जगत् का हित हो । धर्म के विषय में जो मत भेद हैं वे व्याख्या करने वालों या समझने वालों की मति के भ्रम से हैं । टीकाकार बहुधा अर्थ को शब्द जाल से ढक देते हैं और कभी २ उलटा भी दिखा देते है । एक विद्वान ने लिखा है—

दुर्बोधं यदतीव तद्विजहति स्पष्टार्थमित्युक्तिभिः
स्पष्टार्थेष्वतिविस्तृतिं विदधति व्यर्थैःसमासादिकैः।
स्वस्थानेऽनुपयोगिभिश्च बहुभिर्जल्पैर्भ्रमं तन्वते
श्रोतॄणामिति वस्तुविप्लवकृतः सर्वेपिटीकाकृतः ॥

अर्थ—जो बात समझ में नहीं आती उसको टीकाकार यह कह कर छोड़ देते हैं कि इसका अर्थ स्पष्ट है । जिसका अर्थ स्पष्ट है उसको व्यर्थ समासादिकों का प्रयोग करके विस्तार से समझाते हैं । जिन बातों से कोई प्रयोजन नहीं है उनको लिख कर भ्रम को उत्पन्न करते हैं । इस प्रकार टीकाकार पढ़ने या सुनने वालों के लिये ग्रन्थ के अर्थ को डुबा देते हैं । धर्म के जिज्ञासु

को आचार्य्यों के आशय का और लोक के हित का विचार करके विज्ञान की दृष्टि से धर्म तत्व का जानना उचित है।

इस ग्रन्थ का उद्देश्य यह सिद्ध करना है कि मनुष्य जाति भर का धर्म्म एक है। और ईश्वर साकार है। इन साध्यों के सिद्ध करने में कई शब्दों का प्रयोग किया गया है जिनका लोक में प्रचलित अर्थ कदाचित् और हो पर इस ग्रन्थ में उनका अर्थ निम्नलिखित है।

१-"आकृति" इस शब्द से समस्त पदार्थों की शकलों को समझना चाहिये जो देख पड़ते हैं, खाये जाते हैं, पीये जाते हैं, सूंघे जाते हैं, और स्पर्श होते हैं और सूक्ष्म रूप के द्रव्य जो युक्ति से सिद्ध होते हैं अथवा जिनकी पहिचान है जैसे वायु, परमाणु।

२-"लोक-सम्मत"-धर्म सम्बन्ध में जो सार्वभौम मन्तव्य है उसको "लोक सम्मत" शब्द से कहा है।

३-"शब्द"-सब भांति की आवाज़ जो सुन पड़ती हैं यथा स्वर, ध्वनि, नाद, वार्तालाप के शब्द और गरजना इत्यादि इन सब आवाज़ों को "शब्द" से बोध कराया है।

४-"शब्द-व्यापार"-जो वस्तु सम्बन्धी संज्ञा हैं, जो धर्म सम्बन्धी संज्ञा हैं, जो व्यवहार सम्बन्धी संज्ञा हैं, उन सब को "शब्द-व्यापार" से बोध कराया है।

अथ मंगलाचरणम् ।
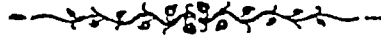
गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः ।
गुरुःसाक्षात् परं ब्रह्म तस्मै श्रीगुरुवे नमः ॥

हरिः ॐ

हे वाणी ॐ तुझको ही सब आप्तों ने ब्रह्मांड का स्थान निश्चय किया है, और यह विश्व तेरा ही लीला स्थल है, अर्थात् तूही शक्तिरूप से सारे विश्व का कार्य्य कर रहा है, तेरे अतिरिक्त और कुछ देख पड़ता ही नहीं, तेरी किस शब्द से स्तुति करूं, किस पदार्थ से उपमा दूं, किस वस्तु से पूजन करूं, जब कि सब तूही तू है, हे अलौकिक प्रभा, हे अमोघ शक्ति, हे नित्य, हे सत्य, इस तेरे व्यवहार लीला को बारम्बार नमस्कार करता हूं, और प्रार्थना करता हूं कि मुझे इस ग्रन्थ को पूरा करने की शक्ति दे-

असितगिरिसमं स्यात् कज्जलं सिन्धुपात्रे,
सुरतरुवरशाखा लेखनी पत्र मुर्वी ।
लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वकालम्,
तदपितवगुणानामीश पारं न याति ॥ १ ॥

आत्मविचार।

उच्च श्रेणी के मनुष्यों का यह अनुभव है कि अपने अंतःकरण की प्रवृत्तियों पर बारंबार दृष्टि डालने का दृढ़ अभ्यास करने से ईश्वर का साक्षात्कार होता है। आप्तों ने लिखा भी है कि अपना अनुभव ही ईश्वर के होने का एक मात्र प्रमाण है। "स्वानुभूत्यैकमानाय" "स्वयं तदन्तःकरणेन गृह्यते"। और जिन्होंने ईश्वर के गुण कर्म्म स्वभाव का अनुभव किया है उन्होंने अपने आभ्यन्तरिक अनुभव से ही किया है। जैसे भूख, प्यास, काम इत्यादि शारीरिक धर्मों का बोध इच्छा की प्रबलता से ही होता है, कर्मेन्द्रिय और ज्ञानेन्द्रिय से नहीं होता, वैसे ही ईश्वर दर्शन भी चर्म चक्षु से नहीं होता। इच्छा की प्रबलता व प्रेरणा से उत्साह उत्पन्न होता है। उस उत्साह से मनुष्य अभीष्ट सिद्धि का प्रयत्न करता है। जो मन्दमति ईश्वर के होने में शंका करते हैं और कहते हैं कि हमको आंख से दिखा दो, उनके लिए सरल उत्तर यह है कि यदि तुमको प्रबल इच्छा उसके देखने की होगी तो तुम स्वयं उसको देख लोगे। यदि तुम में इच्छा नहीं है तो वह तुमको नहीं दिखाई देगा। किसी ने कहा भी है कि- "क्या तू खोजै फिरता बन्दा वह तो तेरे पास है"।

"जिन ढूढ़ा तिन पाइयां गहरे पानी पैठ"

यथा रोगी को अरुचि के कारण उत्तमोत्तम भोजन भी प्रिय नहीं लगता और इच्छा के विघात से स्त्री अरुचिकर हो जाती है, यथा इच्छा की प्रबलता से ही कामादि की जागृति और भूख प्यास के निवारण में प्रवृत्ति होती है उसी प्रकार श्रद्धा के प्रबल होने से ईश्वर भी जाना जाता है। "श्रद्धावाँल्लभते ज्ञानम्"।

जिस प्रकार काम की प्रबल इच्छा जागृत होने पर भूख, प्यास, नीति, अनीति, लज्जा, भय, सब भूल जाते हैं उसी प्रकार ईश्वर के दर्शन की प्रबल इच्छा जागृत होने पर संसार भूल जाता है और विषवत् प्रतीत होने लगता है। साधारण मनुष्यों की तो क्या गणना है बड़े २ राज राजेश्वरों का यह इतिहास विद्यमान है कि जब उनको ईश्वर के दर्शन की प्रबल श्रद्धा हुई तो राजपाट, पुत्र, कलत्र, त्याग कर उसी आनन्द में निमग्न हो गए, और इससे उन्होंने जो अनुपम सुख पाया उसका वर्णन ही नहीं हो सकता। उस आनन्द के लिये ऋषिराजों ने यही कह कर छोड़ दिया है कि "एतस्यैवानन्दस्यान्यानि भूतानि मात्रामुपजीवंति" अर्थात् इसी ब्रह्मानन्द की थोड़ी सी कला का और प्राणी अनुभव करते हैं। यदि किसी को उसके दर्शन की प्रबल इच्छा हो तो उसके लिये एक भाषा कवि ने क्या ही उत्तम कहा है कि-

"जो दर्शन कीन्हा चहिए तो दर्पण माजत रहिए।
जो दर्पण लग गई काई तो दर्शन किया न जाई॥"

मनुष्य का चित्त स्फटिक मणि के समान है। जैसा आचार, विचार, भक्ष्य, भोज्य, संग, कुसंग, रहन, सहन, होता है उसी प्रकार उसकी बुद्धि स्वच्छ अथवा मलिन होती है। इसी लिए लिखा है कि "आचारः प्रथमो धर्म्मः"। यदि मनुष्य अभक्ष्य मद्यमांसादि का सेवन न करके उत्तम शुद्ध पदार्थों का सेवन करेगा तथा महज्जनों की संगति में रहेगा तो उसकी बुद्धि शुद्ध विचारों से निर्म्मल हो जायगी और वह ईश्वर के दर्शन की प्रबल श्रद्धा जागृत होने से अनुपम सुख लाभ करेगा। यही मुख्य आत्मविचार है।

आत्मविचार ही तप है। और बुद्धि के निर्मल हुए बिना ईश्वर का निश्चय, तथा धर्म का बोध, और सुख की प्राप्ति नहीं होती है, क्योंकि--

नास्ति बुद्धिरयुक्तस्य न चायुक्तस्य भावना।
न चाभावयतः शान्तिरशान्तस्य कुतः सुखम्॥

कृष्ण भगवान् कहते हैं कि अयुक्त की बुद्धि ईश्वर में दृढ़ नहीं होती और न अयुक्त की भावना यथार्थ होती है। एवं भावना के बिना शान्ति और शान्ति के बिना सुख नहीं होता है। बिना विचार व बुद्धि के केवल ग्रन्थों को पढ़ कर ईश्वर का ज्ञान नहीं हो सकता--

यथा खरश्चन्दनभारवाही भारस्य वेत्ता न तु चन्दनस्य।
एवंहि शास्त्राणि बहून्यधीत्य चार्थेषुमूढाः खरवद्वहन्ति"

यस्य नास्ति स्वयं प्रज्ञा शास्त्रं तस्य करोति किम् ।
लोचनाभ्यां विहीनस्य दर्पणः किं करिष्यति ॥

केवल तप, दान व यज्ञ करके चाहे कि ईश्वर का ज्ञान हो जाय सो भी कदापि नहीं होता, क्योंकि लिखा है—

नाहं वेदैर्न तपसा न दानेन न चेज्यया ।
शक्य एवंविधो द्रष्टुं दृष्टवानसि मां यथा ॥
भक्त्यात्वनन्यया शक्य अहमेवंविधोऽर्जुन ।
ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्वेन प्रवेष्टुं च परंतप ॥

इस लिए कहा जा सकता है कि विना देशभक्त हुए तथा विना विचार का अवलम्बन किये बुद्धि की निर्मलता नहीं हो सकती है। उसको जिसने जाना विचार ही द्वारा जाना और ग्रहण किया। उसके जानने का और उपाय नहीं है; "नान्यः पंथा विद्यते ऽयनाय"।

ईश्वर के जानने की सुगम रीति यही है कि अपने को देखना सीखे; जिस भांति दूसरे को धनी, निर्धन, गुणी, निर्गुण, सभ्य, असभ्य देखता है, उसी भांति अपने को देखे कि मैं कैसा हूं; अर्थात् मुझसे दूसरों का क्या उपकार या अपकार बनता है; तथा मेरे आचार विचार कैसे हैं। यह न समझे कि अपने को जानना सुगम है। अपने ही को पहिचानना कठिन है। जिसने अपने को पहचान लिया वह ईश्वर को तुरन्त ही पहिचान जाता है। धुरन्धर विद्वानों में भी विरला ही अपने

को जानने वाला होता है। लोग प्रायः अपने दोषों को न देख कर औरों के दोषों को लक्ष बनाते हैं पर मनुष्य का कर्तव्य है कि वह अपने दोषों को देखे। प्रायः सभी अपने दुर्गुणों से अचेत रहते हैं; दूसरे ही के गुण दोषों को देखा करते हैं। जो अपने गुण दोषों को जानने वाला हो जाता है वह शीघ्र ही ईश्वर को साक्षात्कार करता है। सब मत और उपासनाओं के विद्वानों की मंडलियों में ईश्वर व धर्म के विषय में विवाद रहता है; और सब मत भी पृथक् २ हैं; उनका निर्विवाद निर्णय करने व सत्पथ का लक्ष्य कराने वाले ब्रह्मविद्या के महावाक्य हैं, जिनके उपासक, योगिराज, महर्षि व राजर्षि हुए हैं। उनका आचार विचार व उनकी बताई हुई उपासना का नाम सत्पथ है; एवं उन्हीं के निश्चित निर्विवाद सिद्धान्त का ग्रंथ "धर्म निर्णय" नामक यह निर्माण हुआ है।

अथ ईश्वर निरूपणम्।

अलौकिक प्रभा रूप अमोघ शक्ति जो नित्य एक रस है, जो न्यूनाधिक नहीं होती, तथा जिस शक्ति में अप्रमेयता है तथा जिसके समान सूक्ष्म से सूक्ष्म तथा दीर्घ से दीर्घ अन्य रूप नहीं है, उस अलौकिक प्रभा रूप शक्ति की संज्ञा ईश्वर है। इसी को पुरुष, हिरण्यगर्भ, विराट्, ब्रह्म, प्रणव, चैतन्य, शब्द, आत्मा, रूह, खुदा,

निराकार, निर्गुण, निर्विकार, ज्ञान, आदि नाना शब्दों से बोध कराया है और ईश्वर को सर्वज्ञ व सर्व-शक्तिमान् माना है तथा वह सूक्ष्म से सूक्ष्म रूप स्फुरती वाणी ॐ है; स्फुरण का स्थूल रूप शब्द है। और शब्द का सूक्ष्म से सूक्ष्म रूप परमाणु है। प्रमाण-

> आत्मेरयति विवक्षुश्चित्तं तद्वेव वह्निमाहन्ति।
> सम्प्रेरयते दीप्त्या ब्रह्मग्रन्थिस्थितं मरुतम्॥
>
> ऊर्ध्वं विचरन् क्रमतो नाभि हृदय कंठ मूर्ध वक्त्रे सः।
> अति सूक्ष्मादिक संज्ञान् नादांस्तनुतेऽत्रगानार्हाः॥

तथा दीर्घ से दीर्घ बड़े से बड़ा रूप आकाश व विश्व है; प्रमाण–"अणोरणीयान् महतो महीयान्" अर्थात् ईश्वर का रूप सूक्ष्म से सूक्ष्म और स्थूल से स्थूल है। उसकी इयत्ता अर्थात् परिमाण नहीं है। उसके पूर्ण रूप का बोध मनुष्य की परिमित इन्द्रिय शक्ति कदापि ग्रहण नहीं कर सकती। जैसे छोटे भाण्ड में बड़ी वस्तु नहीं समाती व छोटी चिमटी से बड़े पदार्थ का ग्रहण नहीं होता तथा त्रिसरेणु के सदृश सूक्ष्म रूप देख नहीं पड़ता है, तैसे ही आकाश की समस्त दीर्घता प्रतीत नहीं होती। दृष्टि की पहुंच तक ही उसकी सीमा दिखाई देती है, तथा विश्व कितना बड़ा व दीर्घ है; व विश्व में कौन २ वस्तु हैं, किसी को अद्यावधि थाह नहीं मिली। जो मनुष्य उद्योग से ढूंढ़ता है उसको नवीन व अलभ्य वस्तु प्राप्त हुआ करती हैं। जैसे रेडियम्

आदि पदार्थ तथा नये २ टापू व नगर जैसे अमेरिका तथा नाना रूप व जाति के पशु पक्षी खोज करने से पाए गए तथा Airship और लड़ाई के विचित्र २ शस्त्र कल्पना द्वारा बनाए गए। तात्पर्य्य यह है कि सम्पूर्ण वस्तु विश्व में ही हैं। पर नयी बातें और नयी वस्तु बिरलों को ही सूझती हैं। सूझने पर भी जब तक तन, मन, धन से यत्न नहीं किया जाता है तब तक आविष्कारों में सफलता प्राप्त नहीं होती है। इसी प्रकार जो ईश्वर के खोज में तत्पर होता है उसको ईश्वर प्रकाश व गोचर होता है। शक्ति को ईश्वर माना है। शक्ति का स्थूल रूप ही दृष्टिगोचर होता है। शक्ति को बुद्धि से परे माना है यथा-"यो बुद्धेः परतस्तुसः"। शक्ति का प्रभाव अनुभव से ज्ञात होता है जैसे राज्य शक्ति तथा रेडियम् के प्रभाव का परिचय अनुभव से होता है।

अथ जीव निरूपण।

जिन वस्तुओं में शक्ति की तथा विस्तृत और स्थूलाकार होने की सीमा है और जो सूक्ष्म से स्थूलाकार होने पर दृष्टिगोचर होते हैं और स्थूलाकार से सूक्ष्म रूप ही अदृष्ट हो जाते हैं तथा अन्य की शक्ति से शक्तिमान् हुए हैं व होते हैं; अथवा जिनका प्रति क्षण रूपान्तर हुआ करता है और जिनकी शक्ति संयोग से प्रतिक्षण न्यूनाधिक हुआ करती है उन वस्तुओं की

संज्ञा जीव है। उदाहरण:—सूर्य का तेज कुहिरा, बादल, व शीत से और रात्रि हो जाने से न्यून हो जाता है चन्द्रमा की शक्ति दिन को, वायु की शक्ति निस्पन्दत में, अग्नि की शक्ति बुझ जाने में, जल की शक्ति शुष्क हो जाने से, और भूमि की शक्ति डूब जाने से कुंठि हो जाती है। इन उदाहरणों से सिद्ध है कि ये स्वयम शक्ति रूप नहीं हैं, ईश्वरीय शक्ति से ही शक्तिमान और प्रेरित हैं। इसी प्रकार पृथ्वी के सम्पर्ण पदार्थे की शक्ति अनुकूल अर्थात् पोषक पदार्थ पाने से बढ़ती और प्रतिकूल अर्थात् शोषक पदार्थ पाने से घटती है तात्पर्य्य यह है कि सम्पूर्ण पदार्थ और जीव अन्य शक्ति से शक्तिमान् होते हैं; जैसे मनुष्य पोषक पदार्थ के भोजन व राजशक्ति प्राप्ति से शक्तिमान् होते हैं; राज प्रजा की शक्ति से शक्तिवान् होते हैं। सारांश यह कि प्रेरक शक्ति ईश्वर है, जो प्रेरित हैं उनकी संज्ञा जीव है

अथ ईश्वर-जगत्-ऐक्य निरूपणम्।

ईश्वर शक्ति रूप और जगत् शब्द व आकृति रूप सिद्ध व गोचर है। सम्पूर्ण विश्व की वस्तुओं का बोध नाम, रूप, गुण, स्वभाव, या तो आकृति द्वारा या शब्द द्वारा होता है।

जितनी संज्ञा हैं वे सब शब्द हैं और शब्द स्वर तथा व्यंजन से उत्पन्न होते हैं जैसे सम्पूर्ण विषय के

लेख अक्षर वर्ण संज्ञा कल्पना करके लिखे गए हैं, तथा वे स्वकीय चिन्ह से ही आत्मीय बोध कराते हैं; और सम्पूर्ण प्रकार की वस्तुओं की जाति, नाम, रूप, गुण स्वभाव, अवस्था का बोध उनकी आकृति तथा लक्षण से होता है; इससे सम्पूर्ण विश्व आकृति रूप सिद्ध है। जैसे मिट्टी के रज ही से पत्थर, चूना, सुरखी, ईंट, बन के बड़े २ दुर्ग बनते हैं; वैसे ही शब्द से संयोग क्रिया द्वारा परमाणु उत्पन्न हुआ और परमाणु से विश्व का प्रादुर्भाव हुआ। अथवा यों मानो कि यावत् वस्तु का बोध शब्द से ही कराया जाता है। तथा सब भाषाओं में जो २ ईश्वर के नाम हैं सब शब्दमय हैं; और सम्पूर्ण वस्तुओं की जो संज्ञा है वह भी शब्दमयी हैं, और शब्द का मूल स्वर ही सिद्ध है तथा स्वरों का आदि अकार है। इसी-से आप्तों ने ईश्वर को ॐ नाम से पुकारा है और "सोऽहम्" कहा है। ईश्वर को अव्याकृत रूप में निर्गुण और व्याकृत रूप में सगुण माना है अर्थात् ईश्वर को अव्यक्त और जीव को व्यक्त कहा है और उसी की यह जगत् व्यवहार लीला निश्चय किया है। प्रमाण-

"ॐ मित्येकाक्षरम् ब्रह्म" ॥ "तस्य वाचकः प्रणवः ॥ तज्जपस्तदर्थ भावनम्" ॥

हरिरेव जगत् जगदेव हरिः ॥

इस "आशय" को अंगरेज़ विद्वान् ने इस शैली में कहा है "God in nature and nature in God" इसके प्रमाण में वेद गर्ज रहा है ॥

ततो विराडजायत विराजो ऽअधि पूरुषः ।
सजातो ऽअत्यरिच्यत पश्चाद्भूमि मथोपुरः ॥
तस्माद्यज्ञात् सर्व्व हुतः सम्भृतम्पृषदाज्यम् ।
पशूँस्ताँश्चक्रे व्वायव्यामारण्या ग्राम्याश्चये ॥
तस्माद्यज्ञात्सर्व हुतऽऋचः सामानि जज्ञिरे ।
छन्दाᳬसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ॥

पुरुषान्न परंकिंचित् सा काष्ठा सा परागतिः ।
सदेवसौम्येदमग्र आसीत्
एकमेवाद्वितीयमिति ॥

ईशावास्यमिदᳬ सर्वँ यत्किञ्च जगत्यां जगत् ।
तेन त्यक्तेन भूञ्जीथ मागृधः कस्यस्विद्धनम् ॥
यस्तु सर्वानि भूतान्यात्मन्येवानु पश्यति ।
सर्व भूतेषु चात्मान न्ततो न विजुगुप्सते ॥

"एकोहम् बहुस्यामि"
"एको ब्रह्म द्वितीयो नास्ति ।"
सर्वँ खल्विदं ब्रह्म । नेहनानास्ति किञ्चन ॥

शक्ति ही शब्द रूप से सम्पूर्ण विश्व की आकृति में हृदयस्थ हुआ है । शब्द को ही आत्मा व रूह माना है, और वह प्राणियों में शब्द व धातु और मूल में ध्वनि के आवाज़ से व्याप रहा है । तथा अन्य आप्तों ने भी जगत् को अक्षरमय ही कहा है ।

इति जगदेश्वर सिद्धि ।

अथ मत भेद मीमांसा

अर्थात् धर्म विषयक मत भेद का समा

सृष्टि के असत्त्व का खण्डन, जो वि
नहीं मानते अर्थात् जगत् को केवल स्मरण
प्रतीत करते हैं; तिनका खण्डन।

(१) बालक प्रथम जन्मता है और शे
आकृतिवान् वस्तु व पदार्थों को देखता है;
बाप को पहचानता है, और उन आकृतिव
पदार्थों में लक्ष कराने से भला बुरा प्रतीत
शब्द व्यापार सीखता है।

(२) अन्य प्राणी जाति जिनमें व्यक्त
व्यापार नहीं है वे भी जन्म के पश्चात् स्वय
जाति की बोली बोलते और आकृतिवान् व
को देखते हैं। तथा जन्म से मरण पर्य्यन्त
कृतिवान वस्तुओं में ही उपयोग तथा भोग
इससे सृष्टि आकृतिमय तथा शब्दमय
सिद्ध है। प्रमाण-"यथा पूर्वमकल्पयत्"

(३) जो लोग इस बात को कहा करते
कोई चीज़ नहीं है, उन्हें इस बात का स्
चाहिए कि इस संसार में जब कोई शक्ल
उसका नाम होता है। जैसे जब रेल का इ
तयार हो गया तब लोगों ने उसे इञ्जन के नाम

अथ अनीश्वर वाद खण्डनम् ।

जो ईश्वर नहीं मानते अथवा सृष्टि क्रम का कारण नहीं मानते, उनका खण्डन ।

विश्व में बिना कारण के कार्य का होना नहीं देख पड़ता, जो निमित्त को कारण मानते हैं सो निमित्त कारण भी वस्तु के संयोग से ही उत्पन्न होता है; इससे सिद्ध हुआ कि वस्तु मुख्य है। उसी वस्तु को नाना शब्दों से पुकारा है। हिरण्यगर्भ, शक्ति, ब्रह्म, आदि, किन्तु ये सब शब्द हैं तिससे मुख्य वस्तु शब्द ही है ॥ प्रमाण ॥ वेद में खम् ब्रह्म व शब्द ब्रह्म दोनों आये हैं;

निराकार वाद खंडन ।

कारण कार्य एक रूप, एक गुण, एक स्वभाव होता है; और कारण ही कारण, कार्य दोनों रूप होते रहते हैं; यथा वीज वृक्ष व पिता पुत्र । यह विश्वासाकार ईश्वर का फोटो प्रत्यक्ष है । निराकार कोई वस्तु नहीं है, अथवा निराकार से साकार उत्पन्न होता है, ऐसा कोई प्रमाण नहीं है । यावत् पहिचान है वह साकार वस्तु की है । जो मनुष्य ईश्वर के सत्ता को स्थित करता है सो इसी से करता है कि विश्व साकार है; तिससे सिद्ध हुआ कि ईश्वर साकार है; यद्यपि वह दृष्टि से अदृष्ट है परन्तु युक्ति से सिद्ध होता है। जैसे हवा व प्लेग के कीड़े अदृष्ट है परन्तु युक्ति से सिद्ध होते हैं । निराकार यह पहिचान

किसी युक्ति से सिद्ध नहीं होती और यदि सिद्ध है तो वह साकार है।

अथ द्वैतवाद खंडनम्।

जो विद्वान् ईश्वर व जीव में पृथकता घटित करते हैं अर्थात् ईश्वर नित्य व जीव अथवा जगत् को नाशवान् प्रतीत करते हैं—तिनका खण्डन।

जगत् से भिन्न ईश्वर की सिद्धी नहीं तथा जगत् ईश्वर दोनों शब्द वाच्य भेद हैं लक्ष भेद नहीं हैं। कार्य कारण एक रूप, एक गुण, एक स्वभाव होते हैं; और जगत् अथवा जीव ईश्वर का कार्य रूप सिद्ध है; तथा ईश्वर जीव एक रूप हैं; अर्थात् दोनों साकार हैं; ईश्वर, जीव दोनों में एक प्रकार का गुण है; अर्थात् दोनों बीज रूप और शक्ति रूप हैं; ईश्वर जीव दोनों में एक स्वभाव है; अर्थात् दोनों नित्य और कार्यकारण रूप हैं। इन दोनों में राजा प्रजावत् सम्बन्ध हैं। राजा की शक्ति से ही प्रधान मन्त्री से लेकर सब से छोटे कर्मचारी तकअपने २ पद के अनुरूप शक्तिमान्। हैं उसी प्रकार सूर्य्य से लेकर तृण पर्य्यंत सम्पूर्ण पदार्थ अपने २ कृत्य के अनुरूप ईश्वर की शक्ति से शक्तिमान् हैं। जैसे न्यायशील राजा के रक्षार्थ नियम प्रजा में छोटे बड़ों के लिये समान होते हैं वैसे ही ईश्वर का जगतपालन नियम सब के लिये एक है। प्रमाण—

यथा सर्वत्र मा मानो यथा वृष्टिः पयोभुवः ।
तथा भगवतो दृष्टिः सर्व सत्वानुकम्पिनः ॥

जैसे प्रजा की तुलना से राजा सर्वज्ञ व शक्तिमान् है; उसी प्रकार जीव की तुलना से ईश्वर सर्वज्ञ व सर्वशक्तिमान् है । जैसे राजा रक्षा करके प्रजा से वन्दनीय होता है ; वैसे ही ईश्वर विश्व का आधार होने से मनुष्य से वन्दनीय हुआ है। जिस प्रकार प्रजा को राजा की आज्ञा मानने से श्री, यश, और शक्ति प्राप्त होती है; उसी प्रकार ईश्वर के सच्चे उपासक होने से अर्थात् देश सेवा करने से मनुष्य को श्री, यश, शक्ति और निर्भयता प्राप्त होती है। अर्थात् जैसा अच्छा बुरा कर्म करता है तैसा ही फल भोगता है; कहावत है कि– "कर्म प्रधान विश्व करि राखा। जो जस करै सो तस फल चाखा" । और ईश्वर की मुख्य उपासना देशभक्ति अथवा परोपकार ही है; जिस प्रकार राजा की आज्ञा भंग करने वाले को दंड मिलता है उसी प्रकार लोक का अपकार करने वाले को अर्थात् ईश्वर न मानने वाले को अथवा असत्यावलम्बी को अनादर, मानसिक व्यथा, शारीरिक रोग, और राजदंडादिक मिला करते हैं; अर्थात् नाना प्रकार के क्लेश में ही उसका जन्म व्यतीत होताहै ॥

नमामि दुष्कृत तनु प्रपद्यन्ते नराधमाः ।
मायया पहृतज्ञाना आसुरं भाव माश्रिताः ॥ इतिगीतायां

जगत् नश्वरवादी खण्डन ।

"जो विद्वान् जगत् को नाशवान् कहते हैं उनका खण्डन" ।

१-प्रश्न यह है कि कौन वस्तु पहिले पैदा होती थी, और वह अब नहीं पैदा होती, अथवा कौन वस्तु पहिले रही और अब नहीं है। ऐसा किसी प्रमाण से सिद्ध नहीं होता। तब जगत् का नाश किस युक्ति से सिद्ध करते हैं।

२-यह सिद्ध कर चुके हैं कि जगत् आकृति व शब्द मय ही है, अन्य वस्तु नहीं है। यह भी सिद्ध कर चुके हैं कि सम्पूर्ण वस्तु का बीज सूक्ष्म रूप से स्थूल रूप हो कर दृष्टिगोचर होता है, और स्थूल रूप से सूक्ष्म रूप हो कर अगोचर हो जाता है। अर्थात् आकृति शब्द नित्य एक रस स्थित है। समस्त वस्तु की शकलों ही को सृष्टि कहते है उन वस्तुओं में ही शब्द स्थित हुआ है। तृण से सूर्य पर्य्यन्त सम्पूर्ण वस्तु का प्रति क्षण रूपान्तर होता रहता है; और शक्ति कमोबेश हुआ करती है, जैसे बालक से युवा में शक्ति बढ़ती और युवा से वृद्धावस्था में शक्ति घटती है; तैसे ही मरण अवस्था में बोली व पहिचान व क्रिया बन्द हो जाती है; पर आकृति ज्यों की त्यों ही विद्यमान रहती है।

३-मुर्दे में आकृति व ध्वनि की प्रतीति जब तक सूक्ष्म से सूक्ष्म रूप हो कर अदृष्ट नहीं हो जाती तब

तक विद्यमान रहती है। जिस प्रकार धातु व काष्ठ में संयोग क्रिया से ध्वनि प्रगट होती है; उसी प्रकार मुर्दे से भी ध्वनि प्रगट होती है; अर्थात् आकृति व शब्द का नाश नहीं होता, केवल अवयव व इन्द्रिय शक्ति-हीन हो जाते हैं। शक्ति का कुंठित हो जाना नाश नहीं है, बीमारी है; जैसे अचेतन व सुषुप्ति अवस्था में कुंठित शक्ति हो जाती है; व नपुंसकता, जकड़ापन, लकवा की बीमारी, व कान बहिरा होने में उन अंगों की शक्ति कुंठित हो जाती है, वैसे ही मरण अवस्था में सब अवयव व इन्द्रिय की शक्ति कुंठित हो जाती है; पर वह मुर्दा बीज रूप, शक्ति रूप, व कार्य कारण रूप जैसा का तैसा ही रहता है। उदाहरणः-मुर्दे से कीड़े पैदा होते हैं; इससे वह बीज रूप अर्थात् कारण रूप सिद्ध हुआ।

मुर्दा भक्षण करने वालों की उदरपूर्ती होती है; इससे मुर्दा शक्ति रूप सिद्ध हुआ; और भक्षक का वह मुर्दा कार्य व शक्ति रूप सिद्ध हुआ। जो मुर्दा जला दिया जाता है, वह राख रूप आकृति होकर ज़मीन रूप हो जाता है, तब उस आकृति की संज्ञा मिट्टी हो जाती है व वही राख पानी में बहाने से पानी रूप हो जाती है। यदि मुर्दा गाड़ दिया जाता है तो वह कीड़ा और मिट्टी रूप हो जाता है, और जो वह जल में छोड़ दिया जाता है तो अन्य का भक्ष्य कार्य रूप या जल रूप हो

आता है; इससे सिद्ध हुआ कि आकृति का नाश नहीं होता।

अथवा यों मानों कि सम्पूर्ण वस्तु की संज्ञा में जाति, नाम, रूप, गुण, स्वभाव, अवस्था और कर्म की पहचान का जो शब्द व्यापार मनुष्य में है केवल उस पहचान के शब्द व्यापार का ही रूपान्तर होता है।

जैसे २ वस्तु की अवस्था अथवा गति में परिवर्तन होता है तैसे २ जुदी २ संज्ञा में उसका बोध कराया जाता है, यथा वही वस्तु है। किन्तु शिशु से युवा होता है तो उसको युवा के नाम से कहा जाता है, वृद्ध होता है तो वृद्ध के नाम से कहा जाता है। उपर्य्युक्त उदाहरणों से सिद्ध हुआ कि आत्मा व रूह आकृति व शब्द ही हैं; और ये नित्य हैं, इनका नाश अथवा रूपान्तर नहीं होता, और ये ही प्रकाशरूप, साक्षीरूप और व्याप्य व्यापक रूप हैं, ये ही जगत् की स्थिति, जगत् के व्यवहार के आधार हैं। सारांश यह है कि मनुष्य ने जो अनुभव किया सो सब जगत् से किया व जो देख पड़ते हैं ये सब आकृति हैं; वही आकृति समुदाय जगत् हुआ है और आकृति में जो प्रकार, जाति, नाम, रूप गुण, कर्म, स्वभाव, अवस्था का जो शब्द व्यापार है वह केवल प्रपंच रूप है; इससे द्वैत की भ्रान्ति हुई है।

आर्य्यसमाज सिद्धान्त खण्डन ।

(१) स्त्री पुरुष से जो सम्पूर्ण विश्व की रचना सिद्ध की गई है उसका खण्डन—कुदरती नियम है कि जो बीज जिस जाति व आकार का होता है उससे उसी रूप, गुण का स्थूलाकार शरीर उत्पन्न होता है। ऐसा उदाहरण नहीं है कि मनुष्य के बीज से अन्य रूप के प्राणी पैदा होते हों।

(२) ईश्वर जीव दो पृथक् २ हैं इसका खण्डन। जगत् से भिन्न ईश्वर की सिद्धी नहीं है। इससे ईश्वर जीव पृथक् नहीं है, केवल वाच्य भेद हैं, अर्थात् उसी को कोई ईश्वर कहता है कोई जगत् कहता है। वस्तु के शकल को जीव व वस्तु के शकल में जो शक्ति अथवा गुण रहता है तिसको ईश्वर कहा है।

(३) जीव में जो जड़ चेतन दो भेद माना है उसका खण्डन। विश्व में जो सम्पूर्ण वस्तु हैं सभी बीज रूप, शक्ति रूप हैं और सभी में कारण कार्य्य का धर्म देख पड़ता है। वे ही परस्पर उत्पादक, नाशक हुआ करते हैं, अर्थात् सभी वस्तु में उत्पादक धर्म, पालक धर्म, नाशक धर्म रहता है। कालान्तर में वे ही पालक, वे ही उत्पादक, वे ही नाशक रूप होते रहते हैं। कोई वस्तु विश्व की ऐसी नहीं है जो शक्ति रहित हो। तब जड़ चेतन का भेद कैसा? इस प्रकार आर्य्यसमाज का द्वैतवाद भ्रष्ट है।

(४) धर्म के प्रचार में जो भ्रष्टता है, सो देखिये। वेद ने व आप्तों ने धर्म की स्थिति वर्णभेद व आचार विचार के आधार ही पर की है यथा—

चातुर्वर्ण्यं मयासृष्टं गुण कर्म्म विभागशः।

तथा स्वार्थ त्याग अर्थात् निष्काम कर्म को ही धर्म सिद्ध किया है, और जगत् ही को ईश्वर सिद्ध किया है, तथा देश भक्ति ही को ईश्वर भक्ति कहा है। क्योंकि जगत् के भिन्न ईश्वर की सिद्धि नहीं, तो दूसरी किसकी भक्ति हो सकती है। धर्म के दो मार्ग नियत हैं (१) प्रवृत्ति और (२) निवृत्ति—प्रवृत्ति मार्ग में लोक हित के कर्म को ही मुख्य धर्म माना है, जैसे कुंआ बनाना, तालाब बनाना, धर्मशाला बनाना, सड़क पर पेड़ लगाना, अस्पताल, मदरसा, सड़क और नाना प्रकार के हित उपदेश व हित मार्ग व विद्या प्रगट करना तथा यथा शक्ति यथा वित्त परोपकार करना। इन्हीं कर्मों को धर्म माना है। जिसमें सब का उपकार हो व सब को सुख मिले इसी कर्म को निष्काम कर्म अर्थात् स्वार्थ त्याग भी कहा है। अभक्ष्य त्याग तथा कुसंग का बर्जना ही आचार है, और मानव धर्म का चीन्हना ही विचार है। मानव धर्म का विवरण "गुरूपदेश" के प्रसंग में हुआ है—यही सनातन धर्म है। उसी को सत्य भी कहा है। यथा "सत्यान्नास्ति परोधर्मः" (२) निवृत्ति मार्ग वह है जिसमें निःसंग होना तथा आश्रय

से मुक्त होना ही आचार है तथा अपने को पहिचानना ही विचार है। इन दो रूपों में ही सब देशों के आचार्य्यों ने धर्म संस्था विभक्त की है। और इसी को सत्य के शब्द से पुकारा है। इसी को अद्वैत सिद्धान्त माना है। द्वैतता किसी युक्ति व तर्क से सिद्ध नहीं होती। सम्पूर्ण वस्तु शक्ति रूप हैं। शक्ति रहित कोई भी पदार्थ नहीं है। सब कारक व मारक रूप हैं। सब की एक गति है। अर्थात् सूक्ष्म रूप से स्थूल हो कर देख पड़ना व स्थूलाकार से सूक्ष्म रूप हो कर अगोचर हो जाना सभी के लिए एक नियम नियत है। अर्थात् ३० भांति की प्राकृत क्रिया ही में मनुष्य तथा समस्त प्राणी जन्मते, पलते व मरते हैं, जिसका कि विवरण "गुरूपदेश" प्रसंग में हुआ है। समस्त प्राणी की एक अवस्था अथवा एक ही गति है। अर्थात् सत्संग से सब को सुख और कुसंग से सब को दुःख मिलता है। तथा अनुकूल पोषक पदार्थ पाने से सब हृष्ट पुष्ट तथा प्रतिकूल शोषक पदार्थ के संयोग से सब क्षीण व निर्बल होते हैं, तथा बाल्यावस्था से सब को जवानी व जवानी से बुढ़ापा आता है। पराधीन को सदा दुःख और स्वाधीन को सदा सुख होता है। समस्त प्रकार के प्राणी एक दूसरे की अपेक्षा रूप और गुण में न्यूनाधिक होते हैं। इस न्यूनाधिक के भेद से द्वैतता सिद्ध नहीं होती। क्योंकि जगत् के कार्य अनेक रूप में रहते हैं। प्रत्येक रूप को उत्पन्न करने के लिये भिन्न २ साधनों की अपेक्षा होती है।

यथा ज़मीन खोदने के लिये, और पत्थर तोड़ने के लिये, लोहे ही से झूमड़ा, फौड़ा, सब्बल आदि शकल के औज़ार बनते हैं, तथा कपड़ा सीने के वास्ते सुई इत्यादि शकल के औज़ार बनते हैं। इनमें छोटे बड़े व अच्छे बुरे का पण्डित लोग ख्याल नहीं करते। इसी प्रकार मनुष्य की शकल में छोटे बड़े अच्छे बुरे का भेद नहीं है। चलन व कर्म के भेद से ही ऊंच नीच सभ्य असभ्य कहे जाते हैं। एवम् सब से बड़ा व सब से उत्तम और सब से सूक्ष्म केवल एक मात्र हिरण्यगर्भ ही को सब आप्तों ने सिद्ध किया है। इससे निर्विवाद सिद्ध है कि यह चराचर विश्व एक मय है, द्वितीय कुछ भी नहीं है। "एकं ब्रह्म द्वितीयो नास्ति"। यही सनातन धर्म के सिद्धान्त हैं। इस सनातन धर्म के प्रतिकूल अर्थात् वेद व आप्तों का निरादर करते हुए आर्य्यसमाज ने नूतन मार्ग में धर्म स्थापित किया है। जो लोक सम्मति के सर्वथा प्रतिकूल जा रहा है। देखो सब देश में सनातन से वर्ण भेद की मर्य्यादा दृढ़ हुई है यथा—

"चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टम् गुणकर्म विभागशः"
"स्वे स्वे कर्मण्य भिरतः स सिद्धिं लभतेनरः"

और सब ने एक मात्र निष्काम कर्म को ही धर्म शब्द से बोध कराया है। पेशे पर ही वर्ण भेद प्रचलित है। बिना वर्ण भेद रहे संसार का काम ही नहीं चल सकता। जाति मय, सब देश की छोटी बड़ी जातियों में निया-

मक है। इसी जाति भय से मनुष्य लोक हित के प्रतिकूल कर्म से बचते हैं। यही सनातन धर्म सभी देश की छोटी बड़ी जातियों में प्रचलित हैं। तथा धर्म मार्ग में जितनी क्रिया तथा साधन हैं तिन सब का साध्य केवल सुख है। तिस साधन व क्रिया के रूप के फेर फार से किसी जाति का धर्म लघु नहीं माना जा सकता। उसको मूर्खता कहके साधारण को जाति भ्रष्ट करते हैं, अर्थात् इन जातीय मर्य्यादाओं से आर्य्यसमाज मुक्त कर्ता है। किन्तु उसके दुष्ट आचरणों को नहीं मुक्त करते एवम् सभी छोटी बड़ी जाति को एक रूप में प्रवृत्त करके वर्ण भेद तोड़ते हैं, तथा जाति भ्रष्ट करते हैं और वर्ण संकर बढ़ाते हैं। और इस अनाचार को धर्म प्रचार माना है, ऐसा वेद व किसी आप्तों की आज्ञा नहीं है न अन्य और आचार्य्यों के सिद्धान्त से सिद्ध होता है कि प्रवृत्त मार्ग के उपासक को जात पांत से विचलित करना धर्म है। जिन आचार्य्यों ने वर्ण भेद तोड़ा है उन्हीं लोगों के लिये तोड़ा है जिनको उन्होंने प्रवृत्ती मार्ग से छोड़ा के निवृत्ती मार्ग में लिया है। इस अभिप्राय से कि ये सर्वत्र जाके घूम२ कर सर्वसाधारण को मानव धर्म समझावें। दूसरे किसी देश ने भी छोटी जाति को बड़ी बनाने से या उच्च जाति को नीचों के बराबर कर देने से देशोन्नति अथवा अन्य लाभ प्राप्त किया हो प्रमाण नहीं मिलता, ऐसा तो आर्य्यसमाज के धर्म प्रचार में भ्रष्टता व अपवित्रता है उसको विद्वान स्वयम् विचार करेंगे।

अब आर्य्यसमाज के सिद्धान्त का हाल सुनिये कि वह कैसा सत्य व वैदिक धर्म है। यह सिद्धान्त सनातन प्रणीत शास्त्र के आधार पर ही स्थित है, तिनमें कितने ग्रंथों को तो उन्होंने अप्रमाणिक कह दिया। जिनको माना उनका अर्थ भी उलट पुलट कर दिया तथा उनके धर्म सम्बन्धी क्रिया विधान को दूसरे रूप में परिणत कर जातीय धर्म में अश्रद्धा उत्पन्न की है और अनाचार बढ़ाया है।

इसके अतिरिक्त देशहित का उत्पन्न करने वाला कोई भी विधान उनके ग्रंथ में नहीं है। जो सनातन प्रणीत शास्त्र में न हों। यथा सनातन शास्त्र में प्रायश्चित्त का निबन्ध इस प्रयोजन से रक्खा गया है कि जो मनुष्य संसर्गवश कुल रीति व कुल धर्म के विपरीत कर्म करले तो वह जाति दण्ड के प्रायश्चित्त से शुद्ध हो जाय। इस प्रमाण के आधार पर आर्य्य समाजी लोग छोटी जाति को शुद्ध करते हैं, मानो वे गदहा नहला के व रंग के घोड़ा बनाते हैं।

विद्वानों से इस प्रलोभन से धन संग्रह करते हैं कि हिन्दुओं को मुसलमान व क्रिस्तान होने से रक्षा करते हैं, तथा मांस खाना बन्द करते हैं और गाय की व बकरी की जान बचाते हैं तिसके उत्तर में यह है। जब समाज ही जो अपने कुल धर्म की रीति को त्याग के उसमें घुसे हैं उनमें तो मांस खाना बन्द ही नहीं है

तो अन्य मांस भक्षी को क्या उनकी नसीहत काम कर सकती है? मांस भक्षण का मद कोई धर्म के प्रचार का अंग नहीं है। यह गुण दोष के विवेचन का अंग है। कारण मांसहारी ज्यादा मनुष्य हैं। धर्म वही वस्तु है जो समस्त मनुष्य मात्र में समान साधन हो अर्थात् जो धर्म किसी के खिलाफ न हो उसको धर्म माना है इत्यादि। धूर्तता के व्यवसाय से देश के आंख में धूल झोंक कर अनाचार वृद्धि करते हैं और आर्य्य कहलाते हैं, तथा देश के धन के ही बल से भारतवर्ष को अधोगति में डालते हैं। जो लोग हिन्दू धर्म को छोड़ कर और धर्म में जाते हैं वे प्रायः पेट भरने के लिये जाते हैं, मोक्ष के लिये नहीं जाते। नीच जाति के हिन्दू भी और धर्म वालों का छुआ नहीं खाते और उनके जूठे बर्तन नहीं मांजते तो उनके धर्म में क्यों जाने लगे। प्रायः क्षुधार्त होने से ही पराए धर्म में जाते हैं। आर्य्य समाजी हिन्दुओं को मुसलमान या इसाई होने से बचाना चाहते हैं तो उनके पेट भरने का उपाय करें। जिन छोटी जाति वालों को आर्य्य समाजियों ने प्रायश्चित्त कराके शुद्धि की है क्या उनके स्वभाव को भी शुद्ध कर दिया है? क्या उन्होंने असत्य, कपट, लोभ इत्यादि दोषों को छोड़ा दिया? लोक सम्मत ही सनातन धर्म है। किसी ने अद्या-वधि प्रायश्चित्त कराके नीच को ब्राह्मण नहीं बनाया है। मंकी और जावालि की जो उपमा देते हैं वे नीच योनि में जन्मे तथा जन्म से ही उत्तम कर्म किये तिससे वे

उच्च आसनों के योग्य समझे गए, व ब्राह्मण माने गए। ब्रह्म जानने वाले को ब्राह्मण कहते हैं। इसी प्रकार पिछले समय में रयदास, कबीर, नानक, आदि भी उच्च श्रेणी के माने गए। यही सनातन धर्म का मुख्य उद्देश्य है। किन्तु प्रायश्चित्त करके शुद्ध बनाना आर्य्य समाज का उद्देश्य है। ऐसा धर्म प्रचार शास्त्र प्रमाण से व लोक रीति से विरुद्ध है। किसी जाति भ्रष्ट को ईश्वर प्राप्त नहीं होता, तथा कोई भी कुलीन, जाति भ्रष्ट को जाति के सम्बन्ध में आदर नहीं करते अर्थात् उससे खान पान सम्पर्क सब छूट जाता है।

मनुष्य पवित्र तबही होता है, जब स्वच्छ देशभक्त हो कर निष्काम कर्म करता है। पाखंडी क्रियाओं से कदापि पवित्र नहीं बन सक्ता! पवित्र वही है, जो असत्य न बोले व बुरे कर्म न करे और सब का हितकारी हो। हे विद्वानों सोचिये। जब से आर्य्य समाज का धर्म प्रचार बढ़ा है, तब से आज तक इस समाज ने जितने हिन्दुओं को मुसलमान और ईसाई होने से बचाया है उनसे कै गुने और कितने हिन्दुओं को वर्णाश्रम से विचलित व जाति च्युत किया है, और कितनों में धर्म में अश्रद्धा बढ़ाई है। इससे मालूम होगा कि इस धर्म के प्रचार से हिन्दू धर्म की और देश की उन्नति हुई है या अवनति हुई है। यह कोई सिद्ध करे कि जाति पांति की मर्य्यादा तोड़ने से एकता होती है व हो सकती है, अथवा एकता करने का यही एक सुगम उपाय है। एकता

का मतलब यही है कि परस्पर विरोध शान्त हो। सब परस्पर अपना सा कार्य्य दूसरे का भी समझें। वर्ण भेद सर्वत्र लोक सम्मत है। क्या हिन्दू क्या मुसलमान, क्या अंगरेज़, क्या अन्य जाति सभी वर्ण भेद रखते व वर्तते हैं। कोई खानदानी मुसलमान या अंगरेज़, नीच पेशे व चलन वाले व जाति च्युत के साथ सम्बन्ध तथा खान पान व सम्पर्क नहीं रखते। फिर हिन्दुओं में जाति भेद की मर्य्यादा तोड़ने से क्या देश का कल्याण होना सम्भव है ? कदापि नहीं। जो विद्वान जाति बन्धन तोड़ने ही से एकता होना संभव गिन्ते हैं, तो क्या वे जाति बन्धन तोड़ सकते हैं ? कदापि नहीं। जाति बन्धन जभी टूटते हैं, जब निवृत्ति मार्ग में प्रवेश होता है। अर्थात् जाति संबंध छूट जाता है, इष्ट मित्रों से कोई संबंध नहीं रहता, जब तक सब प्रयोजन साथ लगा है तब तक कदापि जाति बन्धन टूट नहीं सकता। यह सार्व-भौम सिद्धान्त है। क्योंकि बिना पेशे वाले के दुनियां के काम का निर्वाह सम्भव नहीं। इससे जो परम्परा से मर्य्यादा नियत है, उसको विलुप्त करने की किसी को सामर्थ्य नहीं है। इसी को सनातन धर्म पुकारा है। एकता उसी को पुकारा है कि सब की रक्षा में अपना सा सुख दुःख समझ के व्यवहार करना। जिसको दूसरा शब्द “रिफाहआम” है, जिसमें दुनियां के कार्य्य में शिथिलता न पड़े, इसी को सनातन धर्म माना है। सब अवतारी पुरुषों ने इसी धर्म का प्रचार किया, इसके प्रतिकूल जो

धर्म हैं वे सब पाखंड हैं। जो २ विद्वानों ने आर्य्य-समाज के धोखे से अपने कुल धर्म का तिरस्कार किया है उनको उचित है कि वे फिर अपनी जाति की मर्यादा का आश्रय लें। और भविष्य में यह जातीय नियम दृढ़ करें कि जो जाति धर्म का निरादर करके आर्य्य-समाज में सम्मिलति हों वे जाति च्युत किये जावें। उनसे जातीय सम्पर्क छूट जावे जिससे फिर सब जाति धर्म को दृढ़ता से पकड़ें और फूट व मत विवाद निःशेष हो कर धर्म की स्थिति हो।

अन्य मत समीक्षा।

अन्य मतावलम्बी धर्म संस्थापन के मिस गोल वृद्धी ही का लाभ करते हैं। सोचिये जिस देश में हमारा जन्म हुआ है, तथा जिस देश का कल्याण हमारे आर्य्यों के द्वारा हुआ है उनका स्मारक विलुप्त करके अपने देश के आर्य्यों का चिंतवन करने को वे प्रवृत्त कराते हैं इस से सिवाय हमारी हानि के और क्या है ? जो वे गोल वृद्धी हेतु अथवा स्मारक विलुप्त करने हेतु वर्ण धर्म से बहका के हमको विचलित करते हैं, क्या इस कर्तव्य से देश का कल्याण सम्भव हो सकता है? कारण जब उन्होंने अपने परोपकारी स्नेही पर ही विश्वास न रक्खा तब वे कृतघ्नी रहेंगे, कदापि धर्मावलम्बी नहीं होंगे। धर्म स्थित केवल प्रेम व स्नेह बढ़ाने के लिये ही नियत है।

दम्भ धर्म विवेचन ।

जो धर्म के नाम अधर्म्म तथा अमर्य्याद बढ़ाते हैं और उन लोगों की श्रद्धा को उनके धर्म्म से विचलित करते हैं उनको धूर्त और मनुष्य जाति के अपकारी समझना चाहिए। जैसे मुसलमान लोग- ईद, बकरीद, आदि में गो हत्या करने को धर्म पुकारते हैं। हिन्दुओं में आर्य्यसमाज वर्णशंकर बढ़ाने को धर्म प्रचार मानते हैं। वाममार्गी व्यभिचार, तथा मांस, मदिरा के सेवन को धर्म स्वीकार किए हैं, और अपने मत के प्रमाणों में बड़े शास्त्र रच डाले हैं। अन्त्यज जाति देवतों के नाम में सूअर काटते हैं, देवी के उपासक देवी के नाम बकरा व भैंसा काटते हैं, आधुनिक वेदान्ती तथा पाखण्डी सन्यासी "सोऽहं" कह कर स्वेच्छाचार करते हैं और ठगते हैं, लोक मर्य्यादा को त्यागकर, अभक्ष भक्षण तथा पतित संसर्ग करते हैं। यह विश्व ईश्वर रूप सिद्ध है किन्तु मनुष्य में कर्म प्रधान हुआ है। अहं ब्रह्मास्मि की भावना तत्वज्ञान की है, अनाचार वृद्धि के लिये नहीं है। अच्छे बुरे कर्म का फल तत्काल ही प्राप्त होता है "क्षिप्रं हि मानुषे लोके सिद्धि र्भवति कर्मजा" अपने को ब्रह्म समझना उस अवस्था में होता है जब निष्काम कर्म करके अपने हृदय की वृत्ती शुद्ध हो गई हो अर्थात् आधि रोग छूट गया हो और आश्रय से मुक्त हो, निसंग हो गए हों, चित्त की वृत्ति रुक कर विचार

का प्रकाश उदय हो गया हो। सन्यासी देखते हैं कि विश्व मुझमें है और मैं विश्व में हूं। ऐसी डोर भीतर बाहर की एक मय हो जाने से समाधि अवस्था तथा जागृत् अवस्था, दोनों में विश्व शक्ति रूप से उनको भासता है। इसी अवस्था को परमगति परमपद कैवल्य कह के पुकारा है। अधि के नाश ही को मुक्ति कहा है। धर्म उसको ही कहते हैं। प्रमाण—"यद्यपि शुद्धम् लोक विरुद्धम् ना करणीयम्" जिससे लोक में सुख, समृद्धि, आरोग्य और प्रीति बढ़े उसको धर्म नहीं कहते हैं। जिससे विवाद विरोध स्वेच्छाचार और निर्मर्य्यादता बढ़े।

अथ मांसभक्षण दोष।

प्रायः मनुष्य उन्हीं पशुओं का मांसभक्षण करता है जैसा ऊंट, घोड़ा, भैंस, सुअर, हिरन, गाय, बकरी, भेड़ आदि तथा जो पशु व पक्षी मांस भक्षी हैं उनका मांस मनुष्य नहीं खाता, जैसे शेर, चीता, भेड़िया, सियार, कुत्ता, बिल्ली, सर्प आदि तथा गीध, चील, कौवा आदि। इससे सिद्ध होता है कि मांसभक्षण में कोई विशेष रोग व विकार अवश्य होता है और लोक रीति के अनुभव से भी बोध होता है कि जो मांसाहारी जीव हैं, तथा मांसाहारी मनुष्य हैं, उनमें निष्ठुरता रहती है, वे अन्य की पीड़ा नहीं देखते, अर्थात् दया उनमें नहीं होती। तथा तत्वज्ञान भी मांसभक्षी को

कदापि प्राप्त नहीं होती। इसी से सर्व धर्म के अचार्य्यों ने तत्व जिज्ञासुओं के लिए मांस भक्षण का निषेध ही किया है।

इति श्री हरिदास विरचितम् धर्म निर्णय, वाद निर्णय, व ईश्वर जीव एकता सिद्धी, अर्थात् अद्वैत प्रतिपादन नाम प्रथमो मयूखः।

अथ भेद अर्थात् द्वैत भेद कल्पना का मिथ्यात्व निरूपणम्।

अज्ञान तिमिरान्धस्य ज्ञानांजनशलाकया।
चक्षुरुन्मीलितम् येन तस्मै श्री गुरुवे नमः॥

विश्व की समस्त वस्तु केवल अर्थात् निरविकार हैं। किसी शकल के वस्तु में अछे बुरे का दोनों भेद नहीं है, क्योंकि प्रत्येक शकल के पदार्थ सब कार्य्य कारण रूप रहते हैं। किसी विद्वान की शक्ति नहीं है कि एक वस्तु को स्थिर करके अथवा एक वस्तु का नाम रख के सिद्ध करे कि यह अच्छा है यह बुरा है। व्यवहार में जो अच्छा बुरा का भेद देख पड़ता है वह भेद अपनी परिचय, अपना मतलब, अपना हित और एक के अपेक्षा में रहता व होता है और वह सिखाए समझाए से दृढ़ होता है। इसी को बासना कहते हैं।

विचारिए—मनुष्य का बालक जन्म के पश्चात पहचान सीखता है। किन्तु पहिले मा बाप यह शब्द भी

नहीं कहता। पश्चात् मा बाप व अन्य रक्षक, पोषक, शिक्षक के सिखाने से, जिस भाषा के बोलने वालों में संसर्ग होता है उसमें जिस विषय का जितना शब्द व्यापार सुनता है तथा जितने प्रसंग की क्रिया निर्माण करना सीखता है उतने ही का वह धीरे २ बोधक व जानकार होता है; वह जिस प्रकार व जाति की वस्तु को पहिचान लेता है; व उसका भेद समझ लेता है; उन शकलों के वस्तु में ही भले बुरे को चीन्हता है; और उतना ही उसके शब्द व्यापार की उच्चरित क्रिया होती है। शेष अन्य वस्तुयें जिनको उसने नहीं चीन्हा, तथा जो क्रिया नहीं सीखा व अन्य भाषा तथा अन्य विषय के शब्द व्यापार में जिनका भाव उसका समझा नहीं होता उन में भला, बुरा, क़ीमती, बे क़ीमती, उच्च, लघु श्रेणी, कुल, जाति आदि का ज्ञान उसे नहीं रहता। उदाहरण :-जिस मनुष्य ने कीमियां की पत्ती, संजीविनी व अन्य गुणी औषधों को नहीं चीन्हा है उसको वे यदि मिल भी जायं तो वह उनको तृण ही प्रतीत करता है। यदि किसी जंगली मनुष्य को उत्तम जवाहरात भी मिल जाय, तो वह मूल्य न जानने से स्वल्प मूल्य में ही अर्थात् गुड़, नमक, अन्न, कपड़ा आदि के बदले में दे देता है; यथा-

न वेत्ति यो यस्य गुण प्रकर्ष स तस्य निन्दां सततं करोति ।
यथा किराती करिकुम्भ जातां मुक्तां परित्यज्य विभर्ति गुञ्जाम् ॥

धनाढ्यों के उत्तम रस, अमूल्य वस्त्र व कीमती २ रत्न आदि जो चोरी से बिकते हैं, वे कौड़ी मोल ही बिकते हैं। बालक भी रत्न व सुवर्ण के गहना को भक्ष्य पदार्थ व खेल की वस्तु समझ कर उसका गुण व मूल्य न जानने के कारण उसके खो जाने या किसी के ले जाने की चिन्ता नहीं करता। इससे सिद्ध हुआ कि कीमती व बे कीमती, भला, बुरा कुछ नहीं, केवल चिन्हारी है। (२) उदाहरण:-अपरचित गुणी, धनी, पंडित, सभ्य, कुलवान्, ब्राह्मण, क्षत्री, उच्चश्रेणी जाति, और निर्गुणी, निर्धनी, मूर्ख, असभ्य, अकुलीन, नीचश्रेणी जाति इन दोनों को साधारण कपड़ा पहिरा कर एक जगह बैठा दो, तथा लड़के को लड़की का पोशाक पहरा दो और अपरचित विद्वान से भी उसका नाम, गुण, चलन, अवस्था, जाति, सम्बन्ध आदि का भेद पूछो तो वह कदापि नहीं कह सकता और पशु पक्षी तो गोरा काला सुन्दर कुरूप का भी भेद नहीं देखते।

अपना मतलब।

उच्छिष्ट भोजन व पुराने वस्त्र को धनी बुरा समझता है पर कंगाल को वे ही भले होते हैं।

एक ही मनुष्य किसी का मित्र और किसी का शत्रु होता है। तथा अपरचित मनुष्य में तथा बिना प्रयोजन पड़े किसी मनुष्य में शत्रु मित्र अच्छे बुरे की

भावना नहीं होती। इससे सिद्ध है कि भला बुरा व मित्र शत्रु कुछ नहीं, केवल अपना मतलब है। मतलब ही से पिता, माता, भाई, पुत्र, और स्त्री आदि हैं, अर्थात् अपने मतलब की सिद्धि न होने से एक दूसरे को छोड़ देते हैं; व अलग हो जाते हैं।

यथा:—"अर्थस्य पुरुषोदासः नार्थो दासोस्ति कस्यचित्।"

मअमुर कि दोस्तानन, हमा दुश्मनान जानन।
हमा तालिबान नानन, च पिसर च ज़न च दुख्तर॥

अर्थात् कोई छोटा बड़ा व भला बुरा नहीं है, अपना मतलब ही बुरे भले रूप से परिणत होता है।

अपना हित।

उत्तम खाद्य पदार्थ—मेवा, फल, मिष्ठान्न, घृत, दुग्धादि, निरोगी मनुष्य को हितकर और शक्तिदायक होते हैं, और ये ही उत्तम पदार्थ रोगी मनुष्य को अहित-कर और रोगोत्पादक होते हैं। बादाम मनुष्य को शक्ति रूप है परन्तु घोड़ों को विष रूप; इन सब उदाहरणों से सिद्ध है कि कोई वस्तु भली बुरी नहीं है, अपने हित में हित और अहित में अहित होती हैं। अन्न प्राण रखने वाला है। विष प्राण खोने वाला है, किन्तु विष भी जान बचाता है, और अन्न भी जान मारने वाला होता है।

भले बुरे का ज्ञान एक दूसरे की सापेक्षता से होता है। उदाहरण:—१ जैसे तांबा से चांदी, चांदी से सोना,

फीके रंग के कुडौल रत्न से गहरे रंग का सुडौल रत्न, सूती कपड़ा से रेशमी व ऊनी कपड़ा, मूर्ख से पंडित, असभ्य से सभ्य, प्रजा से राजा और निर्धन से धनी श्रेष्ठ है। वैसे ही कुरूप से सुन्दर, निर्बल से बली, कृपिण से उदार, मलिन से स्वच्छ, शूद्र पेशेवाले से बनिया का पेशे वाला, बनिया के पेशे वाले से क्षत्री, क्षत्री से श्रेष्ठ ईश्वर भक्त व साधु माने गए हैं। वे ही ब्राह्मण शब्द से पुकारे गए हैं। धन की तृष्णा से कीर्ति की तृष्णा श्रेष्ठ है, और खाद्य पदार्थों में घृत, मान्यों में पिता, उपासना में सत्यावलम्बी, साधना में सन्तोष, पुरुषार्थ में आत्म विचार, शिक्षकों में गुरु, ज्ञान में अनुभव और जीव में ईश्वर श्रेष्ठ माना गया है।

२–समस्त वस्तु तथा प्राणी और मनुष्य मात्र सभी में एक व्यक्ति की अपेक्षा दूसरा रूप गुण में न्यूनाधिक होता है। इन उदाहरणों से सिद्ध हुआ है कि द्वैतता केवल सिखाए समझाए से दृढ़ हुआ है।

३–सुषुप्ति अवस्था व गाढ़ निद्रा में शक्ति अर्थात् ज्ञान ही विद्यमान रहती है; उस अवस्था में ज्ञान रूप क्रिया कुछ नहीं रहती है।

"यो बुद्धेस्परतस्तुसः, और न तत्र सूर्य्यो भाति न चन्द्र तारकम्"

वही शक्ति अथवा ज्ञान स्वप्न अवस्था में संयोग क्रिया से रूप युक्त हो देख पड़ती है। जैसे आसमान में संसर्ग से नाना रंग के व रूप के क़िस्म २ के विचित्र २

शकलें बना करती हैं, और उन्हीं रूपों से क्रिया भी उदय होती है; परन्तु उस रूप में अहंकार तथा अहं भावना अथवा बुरे भले का ज्ञान नहीं रहता, किन्तु मनुष्य द्वैतता मानने के कारण जागने पर अपने में अहं भावना करता है; व स्वप्न के मिथ्या स्वरूप में व उसकी क्रिया में बुरे भले की कल्पना करता है कि मैंने आज अच्छा या बुरा स्वप्न देखा; तथा अपने को कर्त्ता भोक्ता मानता है; यही द्वैत भावना भ्रान्ती वा अज्ञान है; जो मानने से दृढ़ हुआ है, इससे असत्य सत्य सा प्रतीत होता है; इसी पर श्रीकृष्ण भगवान् का वाक्य है; कि-

"अहंकार विमूढ़ात्मा मिथ्याहमिति मन्यते ।
नासतो विद्यते भावो ना भावो विद्यते सतः ।
उभयोरपि दृष्टोन्तस्त्वनयोः तत्वदर्शिभिः ॥"

अर्थात् श्रीकृष्ण अर्जुन को समझा के कहते हैं कि सत् का अभाव नहीं, असत् में भाव नहीं, यही सत्य है। तात्पर्य यह है कि जो तू देखता है ऐसा ही दृश्य अनादि काल से सब देखते आ रहे हैं। ये नित्य हैं, कहनावट है

"दुनियां के ये तमाशे हरगिज़ कम न होंगे ।
चर्चा यही रहेगा अफ़सोस कि हम न होंगे ॥"

अर्थात् समस्त जीव और उनकी क्रिया तथा मानुषी प्रपंच सब को ऐसे ही प्रतीत होते आये व होते जायंगे। अथवा यों मानो कि तू ही सम्पूर्ण देखता है तो तू ही हुआ और अन्य फिर क्या है। द्वैत भावना में जो समस्त शकलों की संज्ञा का जो शब्द व्यापार है, वही असत्य

है; यही सत्य है। ईश्वर जीव, पुण्य पाप, उत्पन्न नाश, मेरा तेरा, यह वह, कर्त्ता भोक्ता, उत्तम मध्यम, मन बुद्धि, अहंकार, चित्त आदि सब शब्द व्यापार द्वैतता के हैं, इसी द्वैतता की दृष्टि ने मनुष्य में तृष्णा व आधि रोग उत्पन्न किया है और बड़े बड़े पारंगत विद्वानों को व्यामोह में डाल दिया व डाल रक्खा है। यथा महाराज रामचन्द्र जी का हवाला देता हूं—

"न पूर्व वार्ता न कदापि दृष्ट्वा न श्रूयते हेममई कुरंगः।
तथापि तृष्णा रघुनन्दनस्य विनाशकाले विपरीत बुद्धि॥

तृष्णा रोग से ही मनुष्य में असत्यता, छल, निर्दयता, धूर्तता दम्भता, कृतघ्नता और विश्वासघातकता उत्पन्न हो जाती है।

द्वैत कल्पना ही तृष्णा का उपादान कारण है। इसी तृष्णा रूप आधि रोग का विनाश करने के लिए उपदेश, क्रिया, साधन, धर्म, उपासना, मर्य्यादा, दण्ड का प्रबन्ध लोक सम्मत पर पृथक् २ रूप में नियत किया गया है; और धर्म में रुचि होने के लिए व प्रवृत्त करने के लिए विश्वास दृढ़ कराया गया है। वही विश्वास सब को फलीभूत होकर चित्त व बुद्धि शुद्ध व निर्मल करता है जिससे किसी भी उपाय से तृष्णा छूटे। तिस उत्कट रोग तृष्णा की मुख्य औषधि दो हैं सत्य धारण और विचार। द्वैत भावना केवल व्यवहार भेद के बोध हेतु कल्पित हुआ है। क्योंकि मनुष्य अन्य के विभव को देख कर अथवा

उत्तमोत्तम पदार्थों का उपभोग देख कर अपना मन छोटा करता है, मलिन चित्त तथा निर्बल हो कर पस्त-हिम्मत और असत्य उपासी होता है। इससे तत्वज्ञान में द्वैतता की कदापि सिद्ध नहीं होती है। जिन बली, धनी, गुणी विद्वानों को उत्तमोत्तम भक्ष व भोग प्राप्य होता है उनमें क्या कोई विकार नहीं होते ? क्या वे बूढ़े तथा रोगी नहीं होते ? क्या उनमें बुढ़ाई में या रोगित अवस्था में निर्बलता नहीं आती ? अथवा उचित आसूदगी प्राप्त हो जाने पर भी क्या उनको आराम करने का सुख मिलता है ? क्या उनको अपने प्रयोजन के लिये किसी की सेवा शुश्रूषा नहीं करनी पड़ती ? क्या उन्हें निर्भयता प्राप्त हो जाती है ? क्या उनकी तृष्णा के तरंगों का उछाल शांत हो जाता है ? क्या निन्दनीय काम करने पर उन की निन्दा नहीं होती ? क्या वे जाति या राज्य दण्ड से मुक्त हो जाते हैं ? क्या वे निर्बल व मलिन चित्त नहीं होते ? और क्या उनके कुपात्र संतान नहीं पैदा होती है ? क्या वे धनी से निर्धनी तथा बली से निर्बली नहीं हुआ करते हैं ? और निषिद्ध से निषिद्ध जिनका भक्ष्य भोग है, व समय कुसमय खाने की भी तंगी है, जाड़ा के लिये जिनको वस्त्र भी प्राप्त नहीं है उनकी सन्तान को क्या जवानी नहीं आती ? अथवा बली नहीं होते ? अथवा नेक चलन व सत्य-वादी नहीं होते ? क्या उनको नेकचलनी पर आदर नहीं मिलता ? क्या उनको पूंछ ताछ और क्या उनको कभी हर्ष का

समय नहीं प्राप्त होता? क्या उनकी सन्तान धनी, बली गुणी नहीं होती हैं? क्या वे ग़रीब से धनी नहीं हो जाते? और पशु पक्षी जो तृण खाते हैं व सर्पादि, कीट, मट्टी ही खाते हैं तो क्या वे पुष्ट व निरोग नहीं होते? कोई पदार्थ अच्छा या बुरा नहीं कहा जा सकता। विश्व ईश्वर का स्वयम् रूप है। सम्पूर्ण वस्तु उत्पादक वा पालक है, कोई निरस व निर्बल नहीं है; योजना, संयोग, उपाय और विचार ही बली निर्बली, अच्छा, सरस, निरस प्रतीत होता है; यह सिद्ध व सत्य है। प्रत्येक वस्तु प्रत्येक के लिये उचित उपयोग से लाभकारी होती है व सब पेट भर खाने को मिलने से तुष्ट होते हैं और अघाते हैं, यह ईश्वरीय नियम है। इसी से ईश्वर का नाम विश्वम्भर हुआ है। सन्तोष ही से सुख प्राप्त होता है, कोई प्राणी व वस्तु अच्छा बुरा व छोटा बड़ा नहीं है। सारांश यह है कि मनुष्य को किसी का विभव देख कर अपना दिल छोटा न करना चाहिये। सभी प्राणी मात्र को हर हालत में सुख तथा दुःख दोनों समान प्राप्त होता रहता है, यही शरीरधारी का नियम है। सोचो खुशी के समय यथा शादी व्याह आदि के उत्साह में धनाढ्यों को करोड़ों रुपया ख़र्च करने से जो खुशी हासिल होती है तथा जवाहरात पहरने से जो मस्ती आती है, ग़रीब कोलों को १०) रुपया ही के ख़र्च में वैसी ही खुशी होती है, तथा मोटा कपड़ा नया पहरने में वैसीही मस्ती आती है, और जिनके बड़े ठाट

बाट हैं तिनको, तथा स्वच्छ झोपड़ी में सोने वालों को दोनों को निद्रा का सुख समान होता है।

धर्म निरूपण।

धर्म कर्म दोनों पर्य्याय वाचक शब्द हैं। जिस कर्म से बहुतों को सुख प्राप्त हो उस कर्म को धर्म माना है। जिस धर्म सम्बन्ध में सर्व देश के छोटी बड़ी जाति पढ़ अपढ़ पण्डित मूर्ख की एक सम्मत है वही धर्म माना गया है। उसी को नाना शब्दों से पुकारा है। किसी ने उसी को ईमान कहा है, किसी ने सत्य कहा है, किसी ने लोक सम्मत कहा है, किसी ने नीति कहा है, किसी ने मर्य्यादा कहा है, किसी ने क़ानून कहा है। हिन्दुओं ने उसको सनातन धर्म व मूर्त्तिपूजन कहा है। अब मैं गीता के आशय से इसे पुष्ट करता हूं-

अर्जुन को अनुकूल बोध न होने पर फिर श्रीकृष्ण भगवान् कहते हैं; "तृष्णा स्वार्थ ही को कहते हैं। स्वार्थ त्याग ही मुख्य त्याग है व धर्म है। जो मनुष्य कर्म अ-कर्म, अर्थात् कीर्त्ति अकीर्त्ति की छान करता है व तद्वत् व्यवहार करता है वास्तव में वही मनुष्य है। मनुष्य के जिन कर्मों के द्वारा देश उन्नति हो, देश हित हो, वही कर्म मुख्य धर्म है। जिस व्यवसाय से देश की अवनति व अहित हो वही अकर्म व पाप है। देखो देश उन्नति के अर्थ मैं वारम्वार जन्म लेता हूं, यह विश्व

मेरा ही रूप अर्थात् मैं ही हूं; विश्व से जो प्रीति करता है वही यथेष्ठ में मेरा भक्त है इससे देश सेवा ही मुख्य धर्म मानना चाहिए और धर्म ग्लानि ही से देश हित में बाधा पड़ती है; धर्म दृढ़ता से ही देश की उन्नति होती रहती है; मनुष्य को ईश्वर ने तद्वत् व्यवहारी बनाया है; वह पुरुप व नर कहाया है। आत्म मनन करने वाले को ही मनुष्य संज्ञा है; और वे ही Next to God मानित हुए हैं; और मैंने अपनी स्वच्छ विचार शक्ति व उपाय शक्ति मनुष्य को ही प्रदान किया है, कि जिस शक्ति से लोग देश की उन्नति करैं; और आप कीर्त्तिमान् होवें। देखो जो राजा या अफ़सर तथा बली, धनी, गुणी, जो देश भक्त होता है वही मान पाता है व विख्यात होता है। मुख्य धर्म कीर्त्ति ही है, जिससे मनुष्य का हृदय प्रफुल्लित व ऊंचा होता है; और मुख्य पाप अपकार है, जिसको मनुष्य छिपाता है तथा जिस अकर्म से श्री हत हो जाती है। विद्वानों ने वही श्रेष्ठ कर्म कहा है जिस कर्म के करने से कीर्ति फैलती है और वही कर्म बुरा कहा है जिस कर्म से निन्दा, बदनामी होती है; कीर्ति ही को पारलौकिक सुख सिद्ध किया है। विद्या, बल, धन, लड़के, गृहस्थी ये दैहिक व सांसारिक सुख माने जाते हैं। इनका सम्बन्ध जीवन ही में रहता है। कीर्ति मरण पश्चात् भी स्थिर रहती है जिससे उसके सम्बन्धियों को सुख मिलता है, कीर्ति ही के लिए बड़े २ सम्राटों ने स्त्री, पुत्र, माता, राज्य व देह की ममता

सब को छोड़ के कीर्ति को चिरस्थाई किया है, जैसे यश के निमित्त राजा हरिश्चन्द्र जीवन निर्वाहार्थ डोमड़े की सेवा करने पर भी कीर्तिवान हुए, श्री रामचन्द्र ने लोक निन्दा के भय से पतिव्रता व गर्भवती स्त्री को त्यागकर कीर्तिवान हुए, परशुरामजी पिता की आज्ञा से माता को मार कर कीर्तिवान हुए। भीष्म पितामह ने पिता के गौरव से राज्य का हक त्याग कर कीर्तिवान हुए, राजा कर्ण ने यश के निमित्त अपने वक्षस्थल को चीर के कवच दे दिया व कीर्तिवान हुए, नौशेरवां बादशाह ने नीति के कारण अपने वली अहद पुत्र को फांसी दे दिया और कीर्तिवान हुए। कीर्ति वाक्य पटुता से किसी को प्राप्त नहीं होती, तन मन धन तीनों की ममता त्यागने ही से कीर्ति प्राप्त हुई है व होती है। सत्य है कि जो स्वच्छ सुख कीर्त्तिवान को प्राप्त होता है वह सुख न इन्द्रासन प्राप्ति में है न राज्य प्राप्ति में है। अर्थात् जिसकी कीर्ति का प्रकाश है वही मनुष्य जन्म का यथेष्ट लाभ पाता है।

२–इसी प्रकार जो मनुष्य तादात्मिक शक्तिके अनुसार अपने कुटुम्ब, साथी, जाति, गोल, वर्ग, समाज व देश की जैसी उचित सेवा करता है व किया है वैसे ही वह कीर्त्तिवान होता है, व हुआ है; और विद्वान व सभ्य मण्डली में उन्हीं कीर्त्तिवानों की तसवीर व जीवन चरित्र रहता है। विद्वान मण्डली अपने सन्तानों को उसी तसवीर के संकेत से उपदेश देते हैं; व ( )

उत्तेजित करते हैं। इसी को मूर्ति पूजन कहा है देशसेवा ही मनुष्य जाति का मुख्य उपासना व धर्म है; और यही मुख्य धर्म उन्नति के हेतु है, धर्म व कर्म की अत्यन्त सूक्ष्म गति है; इस लिये तू विचार अवलम्ब कर तब तुझे सत् असत् का बोध होगा और उस ज्ञान से चित्त शान्त होगा। देखो रक्षा में दया को ही धर्म माना है, और राजा राज्य रक्षा करने ही से स्तुति-योग्य होता है किन्तु उसी रक्षा के प्रबन्ध में जान मारने वाले को फांसी ही धर्म कहा जाता है। जैसे राज्यकुल के वास्ते वीरता व न्याय और प्रजा रक्षा ही मुख्य धर्म है, गृहस्थ के वास्ते अपने २ सन्तानों को उत्तम कर्म में प्रवृत्त करने के लिए यत्न करना ही मुख्य धर्म कहा है, औरतों के लिए पति सेवा, बालकों का पालन, गृहस्थी की रक्षा ही मुख्य धर्म है, पंडितों के लिए स्वच्छ उपदेश देना जिससे मनुष्य धर्म को चीन्हें और धर्म में योजित हो यही मुख्य धर्म है, धनाढ्यों के लिए धन का संयम करना और देशहित के निमित्त मदत देना कि समुदाय पले यही धर्म है, विद्वानों के लिए उत्तमोत्तम विद्या का प्रचार करना जिससे सब मनुष्य अपना २ कर्तव्य समझ लें और अपनी जीविका में प्रवृत्त हों यही धर्म है। सारांश यह है कि मनुष्य मात्र का मुख्य धर्म प्राणी मात्र से प्रेम अर्थात् मूर्तिपूजन है। विना मूर्ति पूजा किए किसी को सुख कदापि प्राप्त नहीं होता। जिस शरीर में व गोष्टी में व कुल में व

जिस समाज में व जिस देश में आचार विचार की न्यूनता है वे ही मूर्ति पूजन के रहस्य को नहीं समझते और वहां ही अज्ञान व भ्रान्ति है, उन्हीं को मनुष्य तन पाने का लाभ नहीं प्राप्त होता, और भ्रान्ति से सत्य का ग्रहण नहीं होता और भय नहीं छूटता है। किन्तु जहां पर विचार है वहां सब मूर्ति पूजन के रहस्य को अच्छी तरह समझते है व सुखी होते है। जैसे दिन में भूत का भय व रस्सी से सर्प की भ्रान्ति नहीं होती, किन्तु अन्धयारी ही में पिशाच भय और सर्प भ्रान्ति होती है।

इसके अतिरिक्त अन्य मानव धर्म नहीं है, जिसको मनुष्य न विचार के पवित्र व पावन धर्म से शीघ्र ही विचलित हो जाते हैं, तिनके रक्षा हेतु मैं समय प्रति समय सब देश में अवतार लिया करता हूं; और धूर्त्त व खलों का नाश करके धर्म संस्थापन करता हूं। इति गीता आशय।

अथ मूर्ति पूजा खण्डन।

प्रायः लिखे पढ़े विद्वान हिन्दुओं के मूर्ति पूजन में कटाक्ष्य करते हैं एवम् सभी देश में छोटी बड़ी जाति पंडित पढ़ अपढ़ सभी मूर्ति पूजन में स्थित हैं। बड़ाही आश्चर्य्य है कि इस शब्द व्यापार से कैसे मोह विद्वानों को उत्पन्न होते है। जिस प्रकार तृण के ओट पहाड़ नहीं देख पड़ता तैसे ही शब्द व्यापार करके व स्वार्थ तत्प-

रता करके धर्म का मन्दिर नहीं देख पड़ता। सोचिए यह विश्व शकलों (Appeiance, Shape or forms) में ही है। शकलों से भिन्न कुछ भी नहीं है। उन शकलों में ही आवाज़ें सम्माई हैं अर्थात् शकल और शब्द के भिन्न कुछ नहीं है। इन्हीं दोनों से प्राणी मात्र का उपयोग, भोग और सम्पर्क रहता है। मनुष्य का व्यवहार, आधार व ईश्वर भावना इन्हीं ही में स्थित है। समझिए जो देख पड़ता है व जिसका गुण बोध होता है वह सब शकल है, सूक्ष्म से सूक्ष्म शकल चर्म चक्षुसे नहीं देख पड़ते किन्तु उनका गुण बोध होता है। गुण से गुणी का बोध होता है यह निरविवाद सिद्ध है। जैसे स्पर्श से वायु का बोध होता है। धूप से सूर्य्य का। गरमी से अग्नि का बोध होता है। तैसे ही ईश्वर का बोध उसकी शक्ति से होता है। इससे ईश्वर साकार है। समस्त वस्तु के शकलों की व उनके नाम, गुण, अवस्था के विवरण में जो समस्त संज्ञा हैं वे सब शब्द ही हैं, जितने शास्त्र रचना हैं वे सब अक्षर ही हैं और उन अक्षरों का बोध शब्द ही करके कहा जाता है। सारांश यह है कि विश्व में शकल व शब्द दो के भिन्न तीसरी वस्तु ही नहीं तो तीसरे की पूजन किसकी होती है और किसकी शुश्रूषा, किसकी रक्षा, किस से स्नेह होता है। जो मन्त्र है, जो कलमा है, जो वायबिल है, जो गायत्री है, जो स्तुति है वह सब मूर्तिमान के गुण के गाथा ही हैं। और धर्म पुस्तकों में उन्हीं के नबी पैगम्बरों का जीवन चरित्र है। उन्हीं के इबारत से सब

उन पर प्रेम करते हैं, उनको सिर झुकाते हैं, उन्हीं की यादगारी में कोई गिरजा में मूर्ति रखते हैं, कोई तसबीरें रखते हैं, कोई सड़क पर खड़ी करा देते हैं, मुसलमान लोग मसजिद में एक स्थान मुकर्रर करते हैं, मक्का मदीना को उसका एक स्थान नियत किया है। बहुत इवादत स्तुत ही से उसका चिंतवन करते हैं। कोई अग्नि कोई सूर्य्य कोई माता पिता राजा गुरु वा जेष्ट श्रेष्ट ही को सिर झुकाते हैं। कोई अन्न कोई नदी कोई पेड़ कोई विशेष स्थान ही पर पहुंच कर सिर झुकाते हैं। यह तो धर्म मार्ग में मूर्ति पूजन सिद्ध है। अब व्यवहारिक समझिए। जिस प्रकार राज्य धन का जो व्यक्ति जैसा रक्षा करता है वैसा ही वह राजा का प्यारा होता है, इसी प्रकार विश्व की समस्त शकलें उस शक्ति का राज्य धन है, उनकी पूजा करना अर्थात रक्षा करना ही देशभक्ति है, उसी को ईश्वर भक्ति कहते हैं। जैसे जो राज्य धन को बिगाड़ता है वह दंड पाता है, और पापी होता है, उसी प्रकार जो मूर्ति पूजन से प्रेम नहीं करता है वह कदापि धर्मा-वलम्बी नहीं। बिना मूर्ति पूजे किसी मनुष्य की स्थिति नहीं दृढ़ रह सकती अर्थात जन्म से मरण पर्य्यन्त मूर्ति पूजा ही हुवा करती है और इसी से मनुष्य को सुख होता है यथा—

नहि कश्चित् क्षणमपि जात तिष्ठत्व कर्म कृत्

सारांश यह है कि सभी देश की छोटी बड़ी जाति पढ़,

अपढ़, पंडित्, मूर्ख सब सप्रेम मूर्ति पूजन करते हैं या मजबूरन करते हैं; नहीं करते यह कदापि नहीं सिद्ध हो सकता। जब कि मनुष्य जर जोड़ू ज़मीन को भजते रहते हैं तथा अपनी भलाई के लिए यत्न करते रहते हैं तब क्या मूर्ति पूजन सिद्ध नहीं है। पूजन का अर्थ केवल स्नेह व प्रेम है जो उसका अर्थ अन्य समझते हैं वही भ्रम में है। इसका विशेष विवर्ण गुरूपदेश में देंगे।

इति मूर्ति पूजन

इति श्री हरिदास विरचितम् निर्णय द्वैत भेद
कल्पना खंडन व धर्म निरूपण व मूर्ति
पूजा मण्डन नाम द्वितीयो मयूखः।

अखण्ड मण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम् ।
तत् पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरुवे नमः ॥

अथ सृष्टि प्रकरण ।

सब मतों के धर्म पुस्तकों में केवल तीन विषय ही मुख्य हैं १ ईश्वर निश्चय । २ सृष्टि उत्पत्ति । ३ मनुष्य का धर्म । जो सुख हेतु यत्न उपदेश उपाय क्रिया साधन आदि हैं । इनमें दो विषय ईश्वर निश्चय तथा मनुष्य का धर्म लिख चुके हैं, अब सृष्टि क्रम को लिखते हैं ।

अथ सृष्टि क्रम ।

जिस स्थान में नाना रूप की शकलें भरी हैं उसको सृष्टि कहते हैं । यह सृष्टि अनादि और ईश्वर रूप सिद्ध है तथा अपने शक्ति से ही स्थित है "सूर्य्याचन्द्रमसौधाता यथा पूर्वमकल्पयत्" "नजायते म्रियते वा कदाचिन्नायं भूत्वा भविता वा न भूय." इसके दो विभाग किए जा सकते हैं । (१) आकाशस्थ वस्तु, ग्रह, नक्षत्रादि । (२) पार्थिव पदार्थ जैसे धातु, वनस्पति और प्राणी । इन दोनों प्रकार की रचना में संयोग तथा काल ही निमित्त कारण है । तिससे एक वस्तु ही नाना प्रकार के रूप के शकलों में हुई है । रचना के विपय में ठीक २ भेद अद्यावधि निश्चित नहीं हुआ। कारण सृष्टि अनन्त है, मनुष्य की दृष्टि परमित है। परमित दृष्टि से अत्यन्त दूरी का अनुसन्धान सम्भव नहीं है ।

अनुभव तथा प्रत्यक्ष प्रमाण से सिद्ध होता है कि सृष्टि क्रम का बीज शब्द अथवा आकृति ही हैं अन्य कुछ नहीं है। यह शब्द और आकृति अगोचर में अपनी महिमा में व्याप रहे हैं। संयोग करके प्रकाशमान् अर्थात् गोचर होता रहता है, वियोग करके गोचर से अगोचर गति में प्रतिष्ठित रहता है।

सोचिए-(१) विश्व की सम्पूर्ण वस्तु का या तो आकाशस्थ गर्भ से या भू गर्भ से या उदर गर्भ से प्रादुर्भाव होता है। यही मानो अगोचर से गोचर हुआ है। सम्पूर्ण पार्थिव पदार्थ का लय पृथ्वी में होता है, यही मानो गोचर से अगोचर गति में प्रतिष्ठित होता है।

गोचर अगोचर का उदाहरण :-पहचानी व कुटुम्बी परदेश में है तब मानो अगोचर है। जब परदेश से वापस आकर मिलता है तब अगोचर से गोचर हुआ। (२) आकाशस्थ नक्षत्र दिन में रहते हैं तो मानो अगोचर हैं, वे रात को देख पड़ते हैं यही मानो गोचर हुआ। दिन रात के संयोग से गोचर व अगोचर हुआ करते हैं। इसी प्रकार समस्त शक्लें अगोचर में स्थित रहती हैं पर उनके तलाश से व ख़रीदने से इधर उधर जाती हैं तब गोचर होती हैं। और शब्द ही स्वयम् विश्व रूप हुआ है आप्तों का अनुमान है परमाणुओं के समुद्र को शब्द सिद्ध किया है, वे ही परमाणु जब इच्छित अवस्था से आपस में रगड़ते है तब उससे शब्द निकलता है। उसी शब्द को ॐ

सिद्ध किया है, वे ही परमाणु स्वयम् संयोग हो हो कर स्थूलाकार नाना चित्र विचित्र की शकलों में हुए हैं, और यूरुप के विद्वानों ने सिद्ध किया है कि शब्द से नाना शकलें बन जाती हैं, और शास्त्र का भी सिद्धान्त है कि शब्द ही स्वयम् विश्व रूप हुआ है। समझिए—

अकाश—शब्द वायु—स्पर्श अग्नि—रूप जल—रस	इन चारों तत्व की जुदी २ आठ संज्ञा कल्पना हुई हैं, गुण गुणी, नाम नामी, देह देही सबों की दो २ कल्पना हुई हैं। इससे शब्द ही से विश्व हुआ।

इसमें प्रायः सभी आश्चर्य करते हैं, एक गुण को शब्द, दो गुण को वायु, तीन गुण को अग्नि, चार गुण के रूप को जल, पांच गुण को पृथ्वी शब्द से कल्पना किया है। अर्थात् शब्द से वायु, वायु के गुण से स्पर्श हुवा, तब वह शकल हुवा। स्पर्श में शब्द व स्पर्श दो गुण प्रतीत हुए। जब वह दो गुण हो स्पर्श हुए तो रूप बना देख पड़ा, अर्थात् बोध हुवा। वायु स्पर्श के बोध ही से जानी जाती है। जो बोध है वही आकृति है। तब फिर क्या सन्देह है कि शब्द से विश्व कैसे हो जाता है। विचारिए आकाश से वायु, वायु से अग्नि, अग्नि से जल उत्पन्न होता है यह सिद्ध है। जब तीन गुण के परमाणु एकत्रित होते हैं तब जीव जल रूप हो उसमें स्वाद गुण प्रगट होता है। वही जल रूप कीड़ा* ही जीव रूप दृष्टिगोचर हुआ

* जल में दुरबीन से देखने से कीड़े ही कीड़े दिखाई देते हैं।

और पृथ्वी के संसर्ग से वही जीव क्रम २ नाना विचित्र २ अनन्त शकलों में व्यक्त हुआ है, इसी से सब शकलों की संज्ञा जीव है।

जो विद्वान सृष्टि क्रम को अनादि नहीं कहते उनके विचार अवलम्बन में त्रुटि है। हां, मनुष्य अन्य प्राणियों के पीछे बना है, यूरप के विद्वान ने सिद्ध किया है कि ये बन्दर के रूपान्तर हुए हैं, यही सही मालूम देता है। इस अनुमान पर कि मनुष्य में जातित्व व्यवसाय व भाषा कोई भी नेचुरल (Natural) नहीं है जैसी कि प्रत्येक अन्य प्राणियों के जाति भाषा व जाति रचना नियम नेचुरल होता है। मनुष्य में प्रपंच रचना और अन्य के गुण कर्म का अनुकरण करना यह नेचुरल स्वभाव है। यही नेचुरल स्वभाव बन्दर के भी है। कारण बन्दर मनुष्य का मुख विदुराता है अन्य कोई पशु पक्षी नहीं विदुराते। मनुष्य ने अन्य २ प्राणियों से व्यवसाय सीखा है। व बोली संसर्ग प्रति जुदी २ होती है। इस सिद्धान्त से सिद्ध होता है कि मनुष्य पहले जन्मा होता तो उसमें भी अवश्य कोई जातीय बोली व जातीय रचना नेचुरल होती। मनुष्य सब के पश्चात् हुआ, और उनके अनुकरण कर्म करना सीखा। इस अनुभव से यह भी सिद्ध होता है कि मानुषी रचित प्रपंच अल्प ही काल से उदय हुए हैं। जब से प्रपंच प्रगट हुआ तब ही से विद्वानों ने सृष्टि क्रम की स्थिति किया है। इसी प्रपंच को दुनियां की तरक्की विद्वान् कहते हैं सो स्वयम् विचारेंगे कि पृथक् २

के क्या क्या ख्याल होते हैं, इससे मनुष्य रचना को वेदान्त वालों ने प्रपंच सिद्ध किया है इत्यादि। अनुभव से सिद्ध है कि यह सृष्टि ईश्वर रूप नित्य है, समस्त वस्तुएं संयोग करके गोचर और वियोग करके अगोचर हुआ करती हैं। वह मनुष्य के मानने करके अर्थात् सिखाए समझाए के अभ्यास से भासित होती हैं; अन्य प्राणी जाति नित्य एक रस ही देखते हैं वे रूपान्तर व नाश प्रतीत नहीं करते। इस प्रकार सृष्टि क्रम हुई व मनुष्य पीछे हुए सिद्ध है। किन्तु आर्य्यसमाज सिद्धान्त में प्रथम युवा स्त्री पुरुष बहुत हुए ऐसा सिद्ध किया है, किन्तु युवा किसके उदर गर्भ से पैदा हुए यह गोल कर रक्खा है। *

इति सृष्टि प्रकरण।

अथ संयोग प्रकरण।

संयोग शब्द का यह भाव है कि एक शकल दूसरे शकल में आकस्मिक या स्वतः मिलना, अर्थात् एक व्यक्ति की वस्तु दूसरे व्यक्ति सजातीय या विजातीय में सम्पर्क करके दूसरे नूतन रूप में हो पड़ती है इसको संयोग कहा है। संयोग उसे कहते हैं कि एक शकल से दूसरी शकल, अथवा एक व्यक्ति से दूसरी

* पृष्ठ १८ में यह भूल से लिख दिया गया है कि आर्य समाज सम्पूर्ण सृष्टि की रचना स्त्री पुरुष से मानता है।

व्यक्ति अथवा एक पदार्थ से दूसरे पदार्थ के सम्मिलन को संयोग कहते हैं।

अथ संयोग निरूपण।

(आकाश) पृथ्वी ग्रह नक्षत्रादि समस्त विश्व आकाश में स्थित है। इससे आकाश अनन्त सिद्ध है, पर वह आकाश संयोग क्रिया से घटाकाश, मठाकाश रूप प्रतीत होता है और वह स्वच्छ निर्विकार आकाश, संयोग से धुंधला, बिजली, बादल, आंधी, पानी वाला अनेक रूप का देख पड़ता है। शब्द संयोग क्रिया से भयानक व प्रीतिकर अर्थात् रोचक, भयानक व अनन्त भांति की आवाज़ में देख पड़ता है। (वायु) संयोग क्रिया से स्पन्दता, निस्पन्दता होती रहती है तथा गर्म, ठण्ढा, सुगंधित दुर्गंधित तथा रोग कारक, नीरोग कारक होता रहता है। अग्नि अथवा ज्योति जैसे पदार्थ से संयोग करती है वैसे ही गुणों से संयुक्त प्रतीत होती है। जैसे सूर्य की ज्योति जिस रंग के और जिस आकार के और जितने बड़े कांच में हो कर आती है उसी रंग उसी आकार की और उतनी ही बड़ी दिखाई देती है। (जल) आकाश से स्वच्छ ही वर्षता है पर भूमि के संयोग से-गंदला (गुड़हिल) खारी, मीठा, हलका, भारी, लम्बा, चौड़ा, गहरा, उथला, अनेक प्रकार का हो जाता है, तथा बनस्पति के संसर्ग से बहुरंगी षट

रस स्वादी, गर्म, ठण्ढा, विष अमृत गुण का हो जाता है, अग्नि के संसर्ग से भाफ़ हो जाता है, वायु के संयोग से ओला व बर्फ हो जाता है, प्राणी के संसर्ग में स्वाती नक्षत्र के पानी से गौ लोचन, मोती, गजमुक्ता व बांस के संसर्ग से वंशलोचन हो जाता है। (पृथ्वी) पृथक् २ देश की ज़मीन में भिन्न २ प्रकार की वस्तु पैदा होती है, जैसे केसर कशमीर ही में पैदा होती है। किसी देश में कोई रत्न, कोई धातु, कोई पशु पक्षी, कोई जिन्स, किसी देश में कोई किराना तथा किसी देश व ज़मीन में सोना चांदी आदि धातु, तथा रत्नादि तथा चंदन, मूंगा, लायची, बड़ी लायची, तथा मेवादि फल व पुष्पादि होते हैं-तथा वेही जाति के बीज भूमि के तासीर से पृथक् २ डौल के हुवा करते हैं। संयोग करके थोड़े २ फासले की ज़मीन की मिट्टी का रूप तथा स्वभाव भी भिन्न २ रहता है, तथा किसी ज़मीन में ज्यादा पैदावार होती है और किसी ज़मीन की तासीर से थोड़ी पैदावार हुवा करती है। उदाहरण जैसे मनुष्य हिन्दुस्थानी, काबुली, रूसी, जापानी आदि के पृथक् २ ढाल चाल रंग होते हैं। इसी प्रकार पशु पक्षी व अन्न भी वही जाति के भिन्न डौल व गुण के होते हैं। स्थान सम्बन्ध अत्यन्त बलिष्ट होता है। देखो अपने घर में निर्बल भी बली ही बना रहता है। तथा स्थान छूटने पर बली भी निर्बल सा हो जाता है। इसी

प्रकार संग कुसंग का फल भी अत्यन्त वलिष्ट है। देखो, वही पानी की बूंद कमल के पत्र पर मोती सा प्रतीत होता है और वही पानी तप्त लोहे पर झुलस कर नष्ट हो जाता है। तैसा ही जिनके निर्दई से संसर्ग हैं यथा पालतू जानवर, कुटुम्बी, जाति व नाता वाले तथा मालिक, मातहत सभी को कष्ट प्राप्त होता है। तांबा रांगे के संयोग से फूल हो जाता है और जस्ता व ताम्बा के संयोग से पीतल रूप हो जाता है। ये सब एक मात्र संयोग ही की भिन्नता व विचित्रता है। ये ही आकृति तथा शब्द नाना रूप, नानाकार हुए हैं। सूर्य्य आदि नक्षत्र तथा तत्व आदि के रूप में जो भिन्नता प्रतीत होती है केवल संयोग ही की विचित्रता है। संयोग का ही कारण है कि विश्व की सम्पूर्ण वस्तु भिन्न २ रूप, भिन्न २ गुण, भिन्न २ शक्ति की होती है।

रचना में वा पालन में दो भांति के संयोग से समस्त जगत् का कार्य्य स्वयम् हुआ करता है अर्थात् समस्त वस्तु कारण से कार्य्यरूप होते रहते हैं। सृष्टि क्रम के फैलाव का तथा सिमिटने का एक मात्र कारण संयोग ही है। समय कुसमय, रोग निरोग, बसना, उजड़ना, तरक्की तनज्जुली, मोटाई, दुबलाई, सुख दुःख, किसी मुल्क में ज्यादा ठंढ, किसी मुल्क में ज्यादा गर्मी, किसी मुल्क में बड़ी रात्रि, किसी मुल्क में बड़ा दिन, किसी में नित्य पानी बरसना व ज्यादा वर्षा से फ़सल होना, किसी में अल्प बरसना

उसी में फ़सल पैदा होना, किसी समय धातु की, किसी समय मूल की, किसी समय जीव की, ज्यादा उत्पत्ति होती है व किसी समय ज्यादा नाश होता है । संयोग ही से सूर्य्य कुहिरा से तिरोहित होजाता है तथा संयोग ही से भूकम्प होता है । सारांश यह है कि संयोग ही से उत्पत्ति हुवा करती है, संयोग ही से पोषण होता है, संयोग ही से सृष्टि क्रम का लय हुवा करता है । आकृति तथा शब्द नित्य ज्यों के त्यों ही विद्यमान रहते हैं ।

रचना व पालन में संयोग के भेद को समझिये—

(१) प्रथम रचना में दो भेद हैं ।

(क) गर्भाधान संस्कार समय में जैसा संसर्ग हो पड़ता है, जैसे खेत में बोने के समय एक ही बीज रहता है, वही खेत है, वही वक्त है, किन्तु हरएक के अंकुर के डाल, पत्ता, बाली छोटी बड़ी होती हैं ।

(ख) गर्भ के पोषण तक पश्चात् जो संसर्ग होता है उसके प्रभाव से ही हर जाति की वस्तु में एक व्यक्ति के अपेक्षा हर अवयवों में भिन्नता होती है । पोषण के समय में संसर्ग के विकार से ही अन्धा, काना, वहरा, गूंगा, छः आंगुर का व हिजड़ा आदि अनेक रोगी पैदा हुआ करते हैं ।

इस रचना संयोग को प्रारब्ध, भावी, और भाग्य कहते हैं यह अमिट है, अर्थात् इसका यत्न नहीं हो सकता। जो जिस कार्य्य करने के लिए पैदा हुआ है वैसा उसका रूप व उसके पहचान का लक्षण है। अर्थात् पुनर्जन्म आदि कुछ नहीं है केवल भय है, जैसे लड़के के रक्षा निमित्त हौवा कल्पना हुआ है।

दूसरा पालन संयोग जो-गर्भ से निकल कर मरण पर्य्यन्त जो शारीरिक व्यवसाय में प्रति क्षण सम्पर्क हुआ करते हैं, इस पालन संयोग को क्षणिक संयोग कहते हैं। इस क्षणिक संसर्ग का मनुष्य सुधार कर सकता है। और इसी क्षणिक संसर्ग के वसूल से ही मनुष्य मात्र का स्वभाव प्रतिक्षण बदला करता है। तथा जो मनुष्य क्षणिक संयोग का सुधार नहीं करता उसको कदापि सुख मिलता नहीं।

पालन संयोग में ५ प्रकार से संयोग मिलता है।

(क) स्थान यथा अपना घर, पराया घर, परदेश, मेला, सभा, रणस्थल, बाजार, कचहरी, शराबखाना, मदकखाना, मन्दिर, गिरजा इन शकलों में जो संयोग भिड़ता है वह स्थान सम्बन्ध कहा है।

(ख) सम्बन्ध, गृहस्थी, कुटुम्ब, जाति, नाता सहवास, अफसरी, मातहती आदि के सम्बन्ध को सम्बन्ध कहा है।

(ग)-समय, जाड़ा, गर्मी, वर्षा, रात, दिन, सबेरा, दुपहर, शाम तथा काल सुकाल, खुशी रंजीदगी, के वक्त को समय कहा है।

(घ)-अवस्था, लड़कई, जवानी, बुढ़ापा, रोगी, निरोगता, भूख, प्यास, काम, क्रोध, मोह, लोभ, मद, मात्सर्य आदि को अवस्था कहा है।

(ङ)-प्रयोजन (गर्ज) में जो जो संसर्ग भिड़ता है उसको प्रयोजन कहा है।

ये पांच भांति के पालन संयोग को क्षणिक संयोग कहा है। रचना के संयोग वा पालन संयोग करके प्राणी मात्र के तथा मनुष्य के स्वभाव में प्रवृत्ति के लिए प्रेरणशक्ति उदय हुवा करती है, उसी को मन कहा है। तिससे स्वे स्वे कर्म में सब प्रवृत्त होते हैं। यथा-

प्रकृतेः क्रियमाणानि गुणैः कर्माणि सर्वशः।

इसी से आप्तों ने मनुष्य में आचार विचार की सीमा किया है कि जिस क्षणिक संसर्ग करके परिणाम में दुःख हो उसका वह सुधार करे। इसी को पुरुपार्थ कहा है। बिना मन रोके अर्थात् क्षणिक संयोग के निवारण किये कदापि सुख प्राप्त नहीं होता। संसर्ग ही से मनुष्य का उत्साह संकुचित व विकाशित हुआ करता है।

इति संयोग।

अथ काल क्रम ।

जिस गति में समस्त वस्तुओं का प्रतिक्षण परिवर्तन हुआ करता है तिसको काल, समय, नियम, तथा माया कहते हैं। आप्तों ने गति ही को ईश्वरीय शक्ति निश्चय किया है। गति के सूक्ष्मता का बोध चर्म चक्षु से नहीं होता, अनुभव से होता है। १०० पुरइन के पत्ता के बंडल को सूजा से छेदते हैं तो कौन पत्ता कब छिदा लख नहीं पड़ता। तथा अंकुर वा शिशु के प्रतिक्षण का बाढ़ नहीं लख पड़ता। गति का अनुभव सब को होता है पर उस गति का रूप क्या है किसी को अनुभव नहीं होता। अब विचारिए ईश्वर सत्य व सिद्ध हुवा व गोचर है ? काल ही के प्रभाव से सृष्टि क्रम नियम रूप में स्थित है।

कालः सृजति भूतानि कालः संहरते प्रजाः।
कालः सुप्तेषु जागर्ति कालो हि दुरतिक्रमः॥
अतीताऽनागता भावा ये च वर्तन्ति साम्प्रतम्।
तान् कालनिर्मितान् बुद्ध्वा संज्ञांहातु मर्हसि॥

समस्त शकलों के वस्तु अगोचर गर्भ में स्थित रहते हैं, जिस वस्तु का जब समय होता है तब वह दृष्टिगोचर होती है। इसी प्रकार मनुष्य के भावी चिन्ह के संस्कार का जब समय आता है तब उदय हुआ करता है यह ध्रुव है। इस लिए मनुष्य का कर्तव्य है कि तृष्णा करके किसी प्रकार प्राणियों को दुःख न दें, चोरी न

करें, कृतघ्नता न करें, देखो बुरा कर्म करने से कोई भी मनुष्य सुख प्राप्त करता हो या धनी हुआ हो ऐसे पुष्टि का उदाहरण कोई नहीं देख पड़ता।

उदाहरण :-जिस २ जाति का जो जो पृथक् २ समय गर्भाधान का नियम है उसी ताव में बीज जमता है, तथा जो २ अवधि जिस २ बीज की गर्भ में पोषण नियम है उतने २ गति में वह स्थूलाकार होता है। गर्भ से दृष्टिगोचर होने के बाद जिस २ बीज की जितनी २ गति में जवानी आने का नियम है उतने २ गति में जवानी आती है, फिर शनैः २ गति ही के परिवर्तन से क्षीण होती है, अर्थात् जिस २ की जो आयु नियत है तब भर वह देख पड़ती है, फिर सूक्ष्म से सूक्ष्म रूप हो अगोचर हो जाती हैं। जैसे रत्नादि सहस्रों वर्षों में बनते हैं, सोना चांदी आदि धातु भी बहुत काल में तयार होते हैं। प्राणियों में पशु कोई ३ वर्ष में, कोई १२ महीने में, कोई ११, कोई १०, कोई ८, कोई ६, कोई ३, महीने में व्याती हैं। पक्षी इत्यादि कोई नित्य प्रति अण्डा देते हैं। कई प्रकार के कीड़े रात्र भर में करोड़ों हो जाते हैं। वनस्पतियों में भी इसी प्रकार सब नेचुरल नियम है।

स्वे स्वे कालेपि गृह्णन्ति पुष्पाणि च फलानि च।

इन सब क्रिया का नियम रूप में स्थित रहना यही गति की शक्ति प्रत्यक्ष अनुभव है। जाड़ा से गर्मी, गर्मी से वर्षा, वर्षा से फिर जाड़ा, रात्रि से दिन, दिन से र

सुबह से दुपहर, दुपहर से सांझ, नित्य यह गति नियम रूप स्थित है। जैसे २ गति का परिवर्तन होता है तैसे २ शकलों का रूप परिवर्तन होता है। वैसे ही २ शकलों की जुदी २ संज्ञा मनुष्य ने कल्पना किया है, वस्तु वही है। गति के परिवर्तन में संज्ञा का परिवर्तन कल्पना किया है यही द्वैतता का प्रपञ्च है।

वह तो नियम रूप नित्य एक सा है, मनुष्य ने मानने के अभ्यास से गतियों में नाना कल्पना किया है। अन्य प्राणी जाति गति के भेद या संज्ञा के भेद को नहीं मानते व समझते हैं।

इति काल क्रम।

अथ प्रकृति प्रकरण।

गति के नियम को प्रकृति कहा है अर्थात् जिस शकल की वस्तु में जो २ नेचुरल स्वभाव व गुण हैं तथा जो २ गति नियम हैं वैसे २ शकलों में वही नेचुरल स्वभाव व गुण व गति नियम रूप होते हैं, उदाहरण- जैसे प्राणि जातियों में, सिंह में वीरता, काले सर्प में विष, मधुमक्खी में मधु बनाने की शक्ति, बया पक्षी में मकान बनाने की, मकड़ी में जाल बुनने की, हज़ार दास्तानों में मधुर बोली बोलने की, भृङ्गी कीट में अन्य जाति के कोड़े से स्वानुरूप आकृति करके संतान बनाने की शक्ति, बाज पक्षी में हिम्मत, पतंगों का

प्रकाश में मोहित होकर जल मरना, सूअर का गलीज खाना, कई प्रकार के पशु पक्षी ऐसे हैं जो मांस नहीं खाते, न जीव मारते हैं, जिन २ प्राणियों का दांव घात तथा कपटाचार से अपनी उदर पूर्ती करने का जो स्वभाव है वही जाति प्रति होना, मनुष्य में प्रपञ्च रहना, ये सब दिन ऐसे ही आकार से अपने व्यापारों में तत्पर देख पड़ते हैं। इसी प्रकार धातु अर्थात् खनिज पदार्थ जैसे सोना, चांदी आदि धातु व अन्य मिट्टी इत्यादि ये सब दिन अपने २ रूप गुण के देख पड़ते हैं। मूल तथा बनस्पतियों में जो जिस रूप, गुण, गंध, स्वाद, तथा चाल ढाल के रहते हैं वे ज्यों के त्यों हो रहते हैं। जैसे नीम कड़वी, हल्दी पीली, गन्ना मीठा, निम्बू खट्टा, काली मिर्च, लाल मिर्च, हड़, सोंठ, पीपल, आदि के स्वाद, गुण, गंध, ज्यों के त्यों बने रहते हैं। यह भी प्रकृति का नियम है कि उत्तमोत्तम पदार्थ क्वचित् ही होते हैं। उदाहरण:-मनुष्यों में सत्यवादी, दयालु, न्यायी, रूपवान्, हाजिरजवाब, साहसी, उदार, बली, नीरोग, पारंगत विद्वान् तथा देशभक्त विरले ही होते हैं। उत्तमोत्तम बड़ा रत्न, प्रकाशमान्, सुडौल, गहरे रंग का, स्वच्छ, बेदाग विरला ही होता है। सोना भी और धातुओं से कम ही होता है। उत्तमोत्तम गुणवान्, रूपवान्, हाथी, घोड़ा, गाय, गाने वाले पक्षी क्वचित् ही होते हैं। उत्तमोत्तम वनस्पति जैसे कीमियां की पत्ती, संजीवनी अप्राप्य ही हैं।

उत्तम जो होते हैं वे पालन वाले होते हैं, उनसे समुदाय के लोग पलते हैं। जैसे एक बुद्धिमान, उत्साही, व्यवसाई और परोपकारी पुरुष कई सामान्य पुरुषों को पालन करता है। अथवा यों कहो कि जो २ विभूतिमान् सत्व हैं वे औरों के आधार हैं, जैसे सूर्य्य प्राणी मात्र के जीवन का आधार है। धर्म तत्व के विषय में जितनी धर्म पुस्तकें हैं तिनमें तीन ही विषय हैं (१) ईश्वर निश्चय, (२) सृष्टि रचना, (३) मनुष्य का धर्म। जिस करके सुख प्राप्त हो इन तीनों विषयों को मैं यहां तक में समाप्त करता हूं, तिससे आशा है विद्वानों को पूर्ण सन्तोष होगा और अद्वैत सत्य है ऐसा दृढ़ निश्चय होगा। अतएव तत्व-ज्ञान का दर्शन कराता हूं।

अथ सृष्टि क्रम समाप्त।

अथ तत्वज्ञान।

अखण्ड मण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः॥

मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चिद् यतति सिद्धये।
यततामपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्वतः॥

मनुष्य वही है जो धर्म के तत्व को समझे व सत्यासत्य का विवेचन करे। "गतिशक्ति" जो अस्तित्व है उसी को शक्ति, उसी को बीज कहा है। प्रमाण :-

यजुर्वेद अ० ३२ मंत्र ४।

एषो ह देवः प्रदिशो ऽनुसर्वाः पूर्वो हि जातः स उ गर्भे अन्तः।
स एव जातः स जनिष्यमाणः प्रत्यङ् जना तिष्ठति सर्वतो मुखः॥

अथवा यों मानो

वदन्ति तत् तत्वविदः तत्वं यज्ज्ञानमद्वयम्।
ब्रह्मेति परमात्मेति भगवानिति शब्द्यते॥

स्वच्छ बीज निरूपण ।

पीपल का बीज जो फोकलों से घिरा रहता है वह स्थूल रूप है। बीज के भीतर जो अणु कण व्याप्त हैं उन में जिस अणु कण का खण्डन नहीं हो सकता वही बीज का सार रूप है, उसी में वृक्ष का समस्त अंग स्थित है, वही शक्ति रूप और चैतन्य रूप है और अलक्ष है।

अथ स्फुरण शक्ति निरूपण।

"शब्द को ही स्फुरण भी कहा है" अर्थात् गति की अवस्था को स्फुरण कहा है। सोचिए शरीर में जो जान है वह शब्द ही है। शुषुप्ति अवस्था में जान के भिन्न न ज्ञान रहता है, न रूप है, न क्रिया है। इसी से आप्तों ने शुषुप्ति अवस्था को ईश्वर रूप कहा है। यथा जहां पर न सूर्य का प्रकाश है, न चन्द्रमा का प्रकाश है, न

अग्नि अर्थात् दीपक का प्रकाश है, न कोई वस्तु है उस अवस्था के पीछे जब स्वप्न अवस्था आती है तव वही जान, स्वप्न के नाना भांति के रूप, क्रिया युत हो देख पड़ता है। इस अनुभव से सिद्ध है कि वही जान का प्रकाश निद्रा खुलने पर जगत् रूप देख पड़ता है, अर्थात् जान का प्रकाश ही नाना शकलों में जगत् रूप हो देख पड़ता है, जैसे संयोग क्रिया से आसमान में नाना शकल के विचित्र २ रूप हो जाते हैं वैसे ही शब्द के आर्थिक अवस्था में विश्वरूप हो जाता है। इसी पर यह प्रमाण है- "एकोहम वहुस्यामा" इस से यह सिद्ध हुआ कि शब्द ही आकृति रूप हुआ है। योगियों ने इसी प्रकाश को अलौकिक प्रभा माना है और इसके परे उसके भेद के कथन में अनिर्वचनीय हो गए हैं। कारण यह है कि किसी भाषा के शब्द व्यापार में उसका भाव ठीक२ बोध कराने को अनुकूल शब्द नहीं हैं। जैसे मैथुन का सुख तथा घृत में क्या स्वाद है, उसके समझाने को अनुकूल शब्द नहीं है केवल अनुभव सिद्ध है। योगिराज इसके परे नेति २ पुकार के समाधिस्थ होकर शरीर से बेसुध और मग्न हो जाते हैं। उसी अवस्था में उनके हृदय में विश्वरूप का दर्शन होने लगता है। जैसे श्री रामचन्द्र जी व श्रीकृष्ण भगवान ने अपने मुख में ही अपनी २ माता को व अर्जुन को विश्व रूप का दर्शन कराया था। सारांश यह है कि ईश्वर दर्शन शरीर की ममता त्यागने ही से होता है। इसी अवस्था को परम

पद, परम गति, कैवल्य पद पुकारा है। सोचिए, स्वप्न का रूप जब ही प्रतीत होता है जब अपने शरीर की सुध नहीं रहती। जब तक शरीर की सुध रहती है तब तक स्वप्न नहीं होता।

अथ विराट् रूप निरूपण।

जो स्थान भांति २ के विचित्र २ शकलों से भरा है उसको ही सृष्टि कहा है। ऐसी २ अनन्त सृष्टि के रूप को विराट् शब्द से पुकारा है। यह सिद्ध कर चुके हैं कि सम्पूर्ण विश्व आकृति व शब्द मय ही है, और शब्द ही आकृति हुआ है, आकृति समुदाय ही विश्व रूप हुआ है। समझिये, जो देख पड़ता है वह सब आकृति है, जो सुन पड़ता है वह शब्द ही है। इसके परे अन्य कोई वस्तु विश्व में देख नहीं पड़ती। ये ही मुख्य दो वस्तु हैं, ये ही समस्त विश्व के उपादान कारण हैं, ये ही निमित्त कारण हैं, ये ही साधारण कारण हैं, ये ही विश्व है और ये ही जगत् स्थिति और जगत् व्यवहार के आधार हुए हैं। इनसे परे और वस्तु नहीं, और दृश्य नहीं, और आधार नहीं। तब क्या कोई विद्वान विश्व में तीसरी वस्तु सिद्ध कर सकता है ?

सारा ब्रह्माण्ड चार जाति के रूप में नाना प्रकार के विचित्र २ शकलों से भरा है।

(१) प्रथम जाति का शकल आकाशस्थ ग्रह नक्षत्रादि है।

(२) दूसरे जाति का शकल पार्थिव पदार्थ अर्थात् वस्तु है। वह वस्तु तीन जाति के नाना विचित्र २ शकलों में हैं। धातु, खनिज पदार्थ, और प्राणी। वस्तु को ही जीव और जगत् पुकारा है। वस्तु के भिन्न न जगत् है न जीव है।

संयोग घटना—सम्पूर्ण वस्तु संयोग ही से उत्पन्न होती है, सम्पूर्ण वस्तु का पोषण भी संयोग ही से होता है, और सम्पूर्ण वस्तु का नाश भी संयोग ही से होता है।

काल गति—जो नियम रूप है, तथा जिससे उलट, फेर; आना जाना व रूपान्तर होता रहता है।

पूर्वोक्त चारों प्रकार के रूप का दृश्य आकृति ही है। आकृति से भिन्न कुछ नहीं है, इन चारों प्रकार के दृश्य का लय सुषुप्ति अवस्था अथवा समाधि अवस्था में होता है और यह नियम है कि जो अन्त में रहे वही आदि है, इससे यह सिद्ध हुआ कि शब्द से उत्पत्ति, शब्द से पालन व शब्द ही में विश्व का लय होता रहता है। सम्पूर्ण वस्तु पृथ्वी से ही उत्पन्न व पृथ्वी हो में लय होती रहती है अथवा आकाश से उत्पत्ति व आकाश में ही लय होती रहती है। और यह हम पहिले ही कह चुके हैं कि आकश और पृथ्वी शब्द मय है, इससे यह सिद्ध हुआ कि यह विश्व ॐ ही का लीलास्थल है और

ॐ ही की सम्पूर्ण व्यवहार लीला है, अर्थात् ॐ मय ही सब है। अन्य कुछ नहीं है।

"सर्वम् खल्विदं ब्रह्म नेहना नास्ति किञ्चन"

ब्रह्मार्पणं ब्रह्महवि र्ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणाहुतम्।

ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्म समाधिना ॥

शब्द ॐ के अनुभव का निरूपण।

मनुष्य मात्र का मुख्य ईश्वर ॐ सिद्ध है, कारण ॐ ही शरीर का एक मात्र आधार सिद्ध है। ॐ वह शब्द नहीं है जो रूपान्तर होता रहता है यह स्फुरती वाणी प्रणव है। प्रणव को ही अनाहत शब्द माना है-

"आसीत् मही क्षितामाद्यः प्रणव छन्दसामिवः"

ऐसा लिखा है कि आकाश परमाणु स्वयम् विचरते थे, उनमें संघर्षण से प्रणव सुनाई देता था, जो अलौकिक प्रभा गति रूप से सिद्ध है। यद्यपि अन्य भाषा के सब ईश्वरीय नाम स्वर रूप ही हैं पर वे स्वयम् सिद्ध नहीं हैं, उसकी कल्पना अक्षर वर्ण के संयोग से हुई है। ॐ स्वयम् सिद्ध है। इस अनुभव से योगिराज ने ईश्वर का मुख्य नाम ॐ ही निश्चय किया है। योगिराजों ने शब्द ॐ को यों टटोल के पकड़ा है। (अ) स्वर ही ॐ रूप है। जो प्राणी मात्र के शब्द से तथा श्वास की गति से अनुभव होता है। प्रमाण-"अक्षराणामकारोस्मि" व बालक से प्रथम (अ) ही प्रगट है,

है तथा (अ) स्वर ही से अन्य स्वर व व्यञ्जन बने हैं। इसी अनुभव से (अ) ही सब भाषा के वर्णमाला में अग्र रक्खा गया है। अ, उ, म तीन अमात्रिक वर्ण का एक अक्षर गति रूप में हृदय से प्रादुर्भाव होता है और वह "ॐ" "ओम्" दो रूप से प्रतीत कराया गया है, किन्तु ॐ यह चिन्ह योगाभ्यासियों के आसन के अनुरूप कल्पना हुआ है। प्राणायाम वेला में श्वास की गति पर सुरत लगाने से स्फुरण का उदय होता है, तब प्रथम नाभि से हृदयाकाश तक "अ" उदय होता है। तथा हृदयाकाश से कंठ में वही (अ) (उ) रूप से अनुभव होता है और ब्रह्माण्ड में वही (अ) अनुस्वार विन्दु रूप हो कर लय हो जाता है, और उच्चारण क्रिया में मुख का ओष्ठ बन्द होने पर (म) रूप में समाप्त होता है। इन अनुभवों से ॐ की सिद्धी हुई है। "तज्जपस्तदर्थ भावनम्" और ॐ ही सब मंत्रों में बीज रूप से स्थित हुआ है। सब मंत्रों में ॐ प्रथम कह के पश्चात् शेष मंत्र कहे गए हैं। ॐ ही के अवलम्ब पर वेद स्वरवत् ऋचा में निर्माण हुआ है, इसी से वेद ईश्वर वाक्य मानित हुआ है। ॐ के स्वच्छ उपासी को अनहद शब्द कर्ण द्वारा स्पष्ट सुन पड़ा करता है। शब्द ॐ में अक्षर तत्व बीज अर्थात् स्वभाव शक्ति चमत्कार जल तरंगवत् व्याप्त है। जैसे जल में तरंग व्याप्त है पर वह हवा की स्पन्दता में प्रतीत होता है, वैसा ही शब्द ॐ के आर्थिक

गति में स्वभाव शक्ति चमत्कार का अनुभव होता है। उसी अवस्था के गति को स्फुरण कहा है।

स्वभाव निरूपण।

शब्द में स्वभाव यह है कि शब्द के आर्थिक गति में विकास और बिना अर्थ में संकोच है। जब इच्छा होती है तब ही प्राणी बोलते हैं। जो इच्छा है वही अर्थ है, बिना अर्थ कोई बोलता नहीं। तात्पर्य्य यह है कि शब्द आर्थिक गति में गोचर होता है बिना अर्थ अगोचर रहता है यह स्वभाव है।

शक्ति निरूपण।

विश्व की समस्त वस्तुओं में जो गति है वही वाढ़ है और वही ईश्वरीय शक्ति है। शब्द का प्रभाव उसके आर्थिक गति में बोध होता है और उसी बोली से शक्ति का प्रभाव भी मालूम पड़ता है, जैसे वकरी की बोली से शेर को उसकी निर्बलता का ज्ञान, तथा शेर की बोली से बकरी को उसकी बलवानी का बोध होता है। (२) प्राणी जाति में पृथक २ जाति की जो जाति बोली हैं उनकी बोली से उनको शक्ति का सब लक्ष लेते हैं, जैसे शेर, हाथी, घोड़ा, सर्प आदि में जैसी बलिष्ट बोली है वैसी पक्षी आदि में नहीं है। इसी प्रकार धातु के ठोंक में जैसी कड़ी कड़क है वैसी ध्वनि

काष्ट में नहीं है। काष्ट से अन्न, और अन्न से फल में ध्वनि की उत्तरोत्तर न्यूनता रहती है जिससे वे अल्प काल ही में घुन सड़ जाते हैं। जिस वस्तु में जितनी ज्यादे मजबूती रहती है वह उतनी ही ज्यादे टिकती है और फल आदि बहुत जल्द बिगड़ जाते हैं। बादल की गरज, बिजुली की तड़प, हवा की सनसनाहट, पानी की झनूकार तथा गड़गड़ाहट इन आवाजों ही से उनके पृथक २ रूप की ताक़त का बोध होता है। प्राणी जाति की जाति बोली व धातु, मूल के ध्वनि शब्द ही है। जिस शरीर में रोग होता है उसके शब्द की शक्ति घट जाती है। ताकत ज्यादे होने से ही शब्द में कड़क बढ़ती है। दूसरे, शब्द की ही शक्ति से मानुषी शब्द व्यापार में कैसी अद्भुत शक्ति उत्पन्न होती है व हुई है कि शब्द व्यापार ही में सब प्रणीत शास्त्र बने और मर्य्यादा दृढ़ हुई। राजा प्रजा में उसी शब्द व्यापार से अनुकूल व्यवहार स्थित है। शब्द व्यापार की वक्तृता से समुदाय के दिल उलट पुलट हो जाते हैं। क्या करते क्या करने लगते हैं। सारांश यह है कि मानुषी व्यापार में एक मात्र शब्द व्यापार के ही आधार से व्यवहार स्थित है। इन उदाहरणों से यह सिद्ध है कि शब्द ही शक्ति है।

चमत्कार ।

(१) ऐसी सूक्ष्म रूप गति के उदर में ऐसा भारी ब्रह्माण्ड समाया है । (२) परमाणु के उदर में विश्व समाया है । जैसे बीज के उदर में वृक्ष समाया रहता है। ऐसा शब्द का अकथनीय चमत्कार है ।

शब्द ही बोधक है तिसका निरूपण ।

प्राणी मात्र की जाति बोली से अपने २ समुदाय के आभ्यन्तरकि भाव तथा उनकी स्वस्थता व व्यग्रता का बोध हो जाता है, यथा भक्षक भक्ष्य की बोली से व भक्ष्य भक्षक की बोली से जान लेते हैं । बन्दर कौवा आदि प्राणियों के आर्त स्वर को सुन कर शीघ्र ही उनकी रक्षा के लिए एकत्रित हो जाते हैं। गौ चराने वाले की भीत वाणी (कूक) से गाय वृन्द उसकी रक्षा के हेतु चरना छोड़ कर एकत्रित हो जाती हैं-इत्यादिक उदाहरण से सिद्ध हुआ कि वाणी ॐ शक्ति रूप है, व वाणी ॐ ही बोधक रूप है और सारा ब्रह्माण्ड अक्षर मय ही है । इसी पर यह वाक्य है। "एकं ब्रह्म द्वितीयो नास्ति"

शब्द व आकृति के धर्म में ऐक्यता का निरूपण ।

विश्व के सम्पूर्ण प्रकार व जाति के पदार्थों के स्थूलाकार शरीर में प्रति अवयव के भीतर बाहर चिन्ह प्रतिचिन्ह

कदली स्तम्भवत् समाये हुए हैं, तैसा ही प्रति चिन्ह के भीतर बाहर अवकाश भी व्याप्त हुआ है; ऐसा कोई भी चिन्ह नहीं है जो अवकाश रहित हो, और आकृति के अवकाश से ही शब्द की उच्चारण क्रिया व ध्वनि प्रगट होती है, एवं आकृति में शब्द ही शक्ति रूप चिन्ह है। जिस प्रकार गुण से गुणी और गुणी से गुण की पृथकता नहीं होती, उसी प्रकार आकृति से शब्द और शब्द से आकृति की भी पृथकता नहीं होती, इनमें "धर्म वीजात् मूलम् मूलात् वीजम्" सदृश है, जैसे— बीज से वृक्ष और वृक्ष से बीज होता रहता है, वैसे ही शब्द से आकृति और आकृति से स्वर व शब्द का उदय होता रहता है। सारांश यह है कि सम्पूर्ण विश्व इन्हीं दो से व्याप्त है। इसी अनुभव को प्राप्त हो एक औलिया अथवा महापुरुष मस्त हुआ कहता है—

"जैसे देखो वैसे हम, जिधर से देखो उधर से हम।"

आकृति का लक्ष्य।

आकृति शकल को कहते हैं समस्त वस्तु की शकलों को आकृति कहा है, खुलासा यह कि मनुष्य जिस पहचान व चिन्ह से जगत् की वस्तुओं को अच्छा बुरा, बिगड़ा बना, नाम, रूप, गुण, कर्म, स्वभाव, अवस्था को जानता व निश्चय करता है तिसकी संज्ञा आकृति है, उदाहरण :— आकाशस्थ नक्षत्रादि के चिन्ह व चालन के अनुसन्धान

से, गणित विद्या व ज्योतिष शास्त्र, तथा मनुष्य के शरीरस्थ चिन्ह, रेखादि के अनुसन्धान से सामुद्रिक शास्त्र बना है; आकृति के लक्षण से तजुर्बा करके पदार्थ विद्या, भूगर्भ विद्या, रसायन शास्त्र, वैद्यक शास्त्र, बनस्पति शास्त्र, पशु पक्षी परीक्षा, रतन परीक्षा आदि नाना प्रकार की उपयोगी और उपकारी विद्याओं की रचना हुई है। आकृति ही के लक्षण से वस्तु व प्राणियों की जाति, प्रकार, नाम, रूप, गुण, अवस्था, स्वभाव, रोगी, निरोग, व्यग्रता, प्रफुल्लतादि का बोध होता है; मनुष्यों की अवस्था लड़कपन, जवानी, बुढ़ापा, बली, निर्बली, रुग्णता, आरोग्यता, कुलीनता, अकुलीनता, सभ्यता, असभ्यता, सुखी, दुखी, संकेती, आसूदगी, सुन्दर, कुरूप, धनिकता, निर्धनता, प्रसन्नता, नाराज़ी आदि आकृति ही के लक्षण से सूचित होते हैं। तथा आकृति ही के पहिचान से अपना, पराया सिद्ध होता है। आकृति लक्षण से ही मनुष्य तथा अन्य प्राणियों के गुण दोष व स्वभाव में प्रतिकूलता, काम, क्रोध, मोह, भय आदि धर्म का उदय प्रतीत होता है। आकृति चिन्ह ही के लक्षण से क्रयी विक्रयी वस्तुओं का कीमती, बेकीमती, नई, पुरानी, बनी, बिगड़ी, सड़ी, घुनी, स्वच्छ, मलिन, सुडौल, कुडौल, उत्तम, मध्यम, सुन्दर, बदसूरत, आदि का बोध होता है। आकृति लक्षण से ही पृथ्वी और समुद्र के गर्भ से नाना प्रकार के पदार्थों की खोज की जाती है; आकृति ही के लक्षण से कालज्ञान, मौसिम,

फसल की दशा, भली बुरी वस्तु, अवस्था, गुण आदि सूचित होते हैं; आकृति ही के लक्षण से संयोगज्ञान, काल ज्ञान, जीव ज्ञान और ईश्वर ज्ञान होता है। तथा आकृति ही के लक्षण से आसमानी आगन्तुक घटना बिजली, आंधी, पानी, का बोध होता है। आकृति के अनुभव से ही ईश्वर की संज्ञा, साक्षी और प्रकाशमान कल्पना हुई है, और आकाश के अनुभव से ईश्वर को व्याप्य व्यापक कहा है।

आकाश निरूपण।

ईश्वर का बड़े से बड़ा रूप आकाश है। प्रमाण (खं ब्रह्म) आकाश में जिस प्रकार पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु क्रम २ समाया है; उसी प्रकार पृथ्वी के नीचे के शेष में भी आकाश ही के आधार में क्रम २ से वायु, अग्नि, जल व्याप्त हुआ है। इससे सिद्ध होता है कि सम्पूर्ण विश्व आकाश ही के आधार में स्थित है।

उदाहरण–जैसे कि सूर्य आदि ग्रह तथा नक्षत्र आदि वायु मंडल ही में स्थित है; उसी प्रकार एक अन्योन्याश्रयी आकर्षण शक्ति से विश्व स्थित हुआ है, और आकाश नित्य व अविनाशी सिद्ध है। प्रमाण–

अविनाशं तु यद्विद्ध येन सर्व मिदं ततम्।
विनाशयति यस्यास्य न कश्चिद् कर्त्तु मर्हसि॥

अर्थात् जिस प्रकार रात्रि में सूर्य, दिन में चन्द्र व तारे, बुझ जाने से अग्नि, सूखने में जल, निस्पन्दता

में वायु, डूबने से पृथ्वी का लोप होता रहता है; ऐसे आकाश का कदापि लोप नहीं होता। नीलाई रूप आकाश की आकृति है,–शब्दगुणमाकाशम्– ये प्रमाण है; तथा साकार ही का प्रतिबिम्ब पड़ता है, जैसे सूर्य का बिम्ब जल में पड़ता है, तादृश ही आकाश का भी बिम्ब जल में प्रतीत होता है। जैसे पृथ्वी में आकर्षण शक्ति है तैसे ही आकाश में भी आकर्षण शक्ति हैं। उदाहरण-शब्द की धारणा प्राणी व मनुष्य के हृदयाकाश में व फोनोग्राफ़ में होती है।

आकाश ही संयोग क्रिया से आकृति रूप होता है। जैसे-घटाकाश, मठाकाश, और आकाशी घटना जैसे-गरजना, लपकना, व नाना रंग आंधी, पानी तथा नाना रूप के चित्र विचित्र शकलें इत्यादि। इससे आकाश का साकार होना सिद्ध है। जो आकाश को शून्य (कुछ नहीं) कहते हैं वे भ्रान्त हैं। आकाश विश्व का उपादान कारण, नियमित कारण व साधारण कारण सिद्ध है-"यथा मकड़ी व मकड़ी का जाल" सम्पूर्ण वस्तु का उसूल आकाश ही में समाता है; व आकाश ही से उदय होता है; बिना आकाश के वस्तु का आधार प्रतीत नहीं होता है। यथा विद्या की धारणा हृदयाकाश ही में समाई रहती है; इसी तरह आकाश ही से विश्व होता है व फिर गति परिवर्तन से आकाश ही में लीन हो जाता है। आकाश सब दशाओं में ज्यों का त्यों बना रहता है। खुलासा यह है कि विश्व के सम्पूर्ण प्रकार व जाति की वस्तु में आकृति व आकाश व्याप्त

फ़सल की दशा, भली बुरी वस्तु, अवस्था, गुण आदि सूचित होते हैं; आकृति ही के लक्षण से संयोगज्ञान, काल ज्ञान, जीव ज्ञान और ईश्वर ज्ञान होता है। तथा आकृति ही के लक्षण से आसमानी आगन्तुक घटना बिजली, आंधी, पानी, का बोध होता है। आकृति के अनुभव से ही ईश्वर की संज्ञा, साक्षी और प्रकाशमान कल्पना हुई है, और आकाश के अनुभव से ईश्वर को व्याप्य व्यापक कहा है।

आकाश निरूपण।

ईश्वर का बड़े से बड़ा रूप आकाश है। प्रमाण (खं ब्रह्म) आकाश में जिस प्रकार पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु क्रम २ समाया है; उसी प्रकार पृथ्वी के नीचे के शेष में भी आकाश ही के आधार में क्रम २ से वायु, अग्नि, जल व्याप्त हुआ है। इससे सिद्ध होता है कि सम्पूर्ण विश्व आकाश ही के आधार में स्थित है।

उदाहरण—जैसे कि सूर्य आदि ग्रह तथा नक्षत्र आदि वायु मंडल ही में स्थित है; उसी प्रकार एक अन्योन्याश्रयी आकर्षण शक्ति से विश्व स्थित हुआ है, और आकाश नित्य व अविनाशी सिद्ध है। प्रमाण—

अविनाशं तु यदविद्ध येन सर्व मिदं ततम्।
विनाशयति यस्यास्य न कश्चिद् कर्त्तु मर्हसि॥

अर्थात् जिस प्रकार रात्रि में सूर्य, दिन में चन्द्र व तारे, बुझ जाने में अग्नि, सूखने में जल, निस्पन्दता

में वायु, डूबने से पृथ्वी का लोप होता रहता है; ऐसे आकाश का कदापि लोप नहीं होता। नीलाई रूप आकाश की आकृति है,-शब्दगुणमाकाशम्- ये प्रमाण है; तथा साकार ही का प्रतिबिम्ब पड़ता है, जैसे सूर्य का बिम्ब जल में पड़ता है, तादृश ही आकाश का भी बिम्ब जल में प्रतीत होता है। जैसे पृथ्वी में आकर्षण शक्ति है तैसे ही आकाश में भी आकर्षण शक्ति हैं। उदाहरण-शब्द की धारणा प्राणी व मनुष्य के हृदयाकाश में व फोनोग्राफ़ में होती है।

आकाश ही संयोग क्रिया से आकृति रूप होता है। जैसे-घटाकाश, मठाकाश, और आकाशी घटना जैसे-गरजना, लपकना, व नाना रंग आंधी, पानी तथा नाना रूप के चित्र विचित्र शकलें इत्यादि। इससे आकाश का साकार होना सिद्ध है। जो आकाश को शून्य (कुछ नहीं) कहते हैं वे भ्रान्त हैं। आकाश विश्व का उपादान कारण, नियमित कारण व साधारण कारण सिद्ध है-"यथा मकड़ी व मकड़ी का जाल" सम्पूर्ण वस्तु का उसूल आकाश ही में समाता है; व आकाश ही से उदय होता है; बिना आकाश के वस्तु का आधार प्रतीत नहीं होता है। यथा विद्या की धारणा हृदयाकाश ही में समाई रहती है; इसी तरह आकाश ही से विश्व होता है व फिर गति परिवर्तन से आकाश ही में लीन हो जाता है। आकाश सब दशाओं में ज्यों का त्यों बना रहता है। खुलासा यह है कि विश्व के सम्पूर्ण प्रकार व जाति की वस्तु में आकृति व आकाश व्याप्त

है, ऐसा कोई भी चिन्ह नहीं जिसमें आकाश न हो। और मुख्य सिद्धान्त यह है कि सृष्टि क्रम का मुख्य बीज ॐ ही है। ॐ ही प्रत्यक्ष ईश्वर है; जो स्फुरण अनुभव से साक्षात्कार होता है। ईश्वर शब्द रूप है, अर्थात् अवयव युक्त नहीं है; और न उसमें नाम रूप गुण, प्रकार, जाति, कर्म, स्वभाव व अवस्था का शब्द व्यापार है, यह कल्पना मानुषी प्रपंच है जिससे उस ईश्वर का बोध करने को निराकार संज्ञा पुकारा है; और वह गति रूप है, तिससे निर्गुण, निर्विकार भी कहलाया है।

उदाहरण-जैसे समुद्र के जन्तु उसी में पैदा होते, व पुष्ट होते हैं पर समुद्र का जल उससे विकारी नहीं होता। जो विकार रूप दर्शित होता है, वह संयोग क्रिया का रूप है।

मानुष प्रपञ्च।

मानुषी रचना को प्रपञ्च कहा है। प्रपञ्च उसको कहते हैं जो रचना अनियमित हो, अनिश्चित हो, जो सदैव परिवर्तन होता रहे। एक जिसको अच्छा सिद्ध करे दूसरा उसको बुरा सिद्ध करे इसको प्रपंच माना है।

समस्त पृथक् २ जाति के जो प्राणी हैं तिनमें नेचुरल स्वे स्वे जाति की जाति बोली व जाति रचना नियम रहती है अर्थात् स्वभावजः पेट ही से उत्पन्न होती है। जैसे मधुमक्खी का शहद बनाना, मकड़ी का जाल बिनना,

आदि और सभी में स्वे स्वे जाति की रुचि मत भी सामान ही रहती है, किसी को उनका कर्म सिखाना नहीं पड़ता, जन्मते ही वे सब अपने २ कर्म में प्रवृत्त हो पड़ते हैं, किन्तु मनुष्य में जाति रचना व जाति वोली दोनों नेचुरल नियमित नहीं है सांसर्गिक होती हैं। अर्थात् मनुष्य का बालक जिस योनि में जन्मता है तैसी मादरी भाषा व जैसे उसके मा बाप के रहन सहन हैं प्रायः वही चलन सीखता है। तिससे मनुष्य के व्यक्ति २ की रुचि व मत भी पृथक् २ रहती है, इससे मनुष्य में व्यक्ति २ की जुदी २ क्रिया होती है, जुदे २ व्यसन होते हैं, इससे मनुष्य के नाना प्रकार के मार्ग रहते है तथा सभी मनुष्य अपने २ स्वभाव, व्यवसाय, रचना व चलन को अच्छा ही मानते हैं अर्थात् १ अकिल में अपने को आधे में समस्त विश्व को देखता है। मनुष्य जन्म से मरण पर्यन्त अन्य के स्वभाव व्यवसाय का अनुकरण ही करता रहता है अर्थात् सीखता ही रहता है । जो जिस २ संसर्ग में परिवर्तन होता रहता है तैसी २ रुचि व मत व्यसन व ख्याल सब वदलता रहता है, इस करके मानुषी रचना भी कोई नियम रूप में नहीं रहती। जुदे २ देश की, जुदे २ शहर की, जुदे २ कसबा की बोली, बर्ताव, मकान का बनाव, बर्तन का बनाव, गहना, कपड़ा, औजार आदि के वनाव सब भिन्न २ रूप के रहते हैं। जो मकान पहले का बना गिर पड़ता है तो उसके स्थान में वही मकान दूसरे रूप का ही बनाया जाता है। मानुषी व्यवहार

में १४७ प्रकार की भाषा की वर्णमाला केवल हिन्दुस्तान में है। एक अंगरेज़ ने सिद्ध किया है और हज़ारों भांति के धर्म अर्थात् पृथक् २ रुचि के पृथक् २ रूप में धर्म कल्पना हुए हैं।

यह रचना मानुषी है।

मिट्टी, पत्थल से मकान, खिलौना, बर्तन आदि व रंग मूल के जड़, छाल, पत्ता, फुनगी, फूल, फल आदि से नाना भांति के रंग, औषधि, कपड़ा, रस्सा आदि व काष्ठ से नाना प्रकार के काष्ठ के सामान तथा धातु सोना चांदी आदि से नाना प्रकार के आभूषण व गहना तथा अन्य धातु से वर्तन, शस्त्र, औजार आदि व रंग प्राणी के शरीर के चमड़ा, रोम, बाल, नख, दन्त, हाड़, सींग आदि से नाना प्रकार की जिन्स व कपड़ा ये सब जिन्स मानुषी रचना की पृथक् २ देश की पृथक् २ रूप की होती व रहती हैं। देखा सीखी नित्यप्रति नए २ आविष्कार होते हैं, अर्थात् पहले की रचना निकम्मी मानी जाती है और पृथक् २ भाषा में विश्व के शकलों की पहिचान की संज्ञा, उसके गुण के विवेचन की संज्ञा; उसके अवस्था के भेद की संज्ञा जो कल्पना की गई है ये सब शब्द व्यापार मानुषी रचना हैं।

मनुष्य के स्वभाव में वासना अर्थात् आधि रोग फिक्र चिन्ता अनुकरण के उसूल से हो गया है अर्थात् वासना व द्वैतता की दृढ़ भावना की जड़ केवल शब्द

व्यापार है। तिस आधि रोग के नाश के लिए मनुष्य में "धर्म" व प्रबन्ध प्रबन्धित हुआ है। तिस धर्म में भी प्रपञ्च रचना हुई है सो समझिए-जिस कर्म करके शरीर रक्षा हो वही कर्म धर्म सब ने कहा है। अर्थात् प्राणी मात्र का मुख्य धर्म शरीर रक्षा है, इसी के लिए सब कर्म किए जाते हैं यह सभी को स्वीकार होगा। जिस कर्म करके मरण पश्चात् कुटुम्बी व पुत्र कलत्र का आदर सत्कार होता है वही कर्म परमार्थिक है। जिस कर्म करके मरण पश्चात् कुटुम्बी, पुत्र, कलत्रादि को दुःख अपमान हो वही नर्क है। इस उपाय से सब ने ईश्वर स्थित किया। जो जिसकी भाषा थी, जो जिसकी रुचि थी वैसा ईश्वर की वाणी व वैसा ही ईश्वर की रुचि सबों ने स्थित किया।

हिन्दुओं के यहां संस्कृत बोली वाला ईश्वर स्थित हुआ तथा ईश्वर की यज्ञ करने की आज्ञा हुई व यज्ञ में पशु मारना धर्म हुआ। वाम मार्गियों के यहां ईश्वर की रुचि मांस मदिरा व व्यभिचार में हुई वही कर्म धर्म है। आर्य्यसमाजियों के यहां निराकार ईश्वर की रुचि वर्ण शंकर बढ़ाने की है। धूर्त्त लोगों ने ईश्वर का पण्डा बन कर धन लेना ही धर्म प्रचार समझा। अन्त्यजों के यहां भूत प्रेत ही ईश्वर रूप हुआ व सूअर मुर्गी काटना ही धर्म हो गया।

मुसल्मानों का ईश्वर अर्बी भाषा का बोलने वाला हुआ तथा गौ का मांस उसको अत्यन्त प्रिय था। अंगरे-

का ईश्वर अंगरेज़ी भाषा का बोलने वाला था तथा उस-की भी मांस खाने की रुचि थी इत्यादि पृथक् २ बोली वाला व पृथक् २ रुचि वाला सब ने ईश्वर स्थित किया। तिससे सिद्ध हुआ कि स्वार्थ-तत्परता सब धर्मों में स्थित है इत्यादि। यह तो प्रपञ्च है किन्तु सब का सामान साध्य यह है कि मोहब्बत, प्यार व प्रीति, स्नेह, कुटुम्ब से, जाति समुदाय से करना कर्तव्य है। अपने उपयोगी वस्तुओं की रक्षा (हिफ़ाजत) करना कर्तव्य है। किसी को दुःख न देना कर्तव्य है। अच्छे २ कर्म करना जिससे रिफ़:आम को सुख प्राप्त हो कर्तव्य है। इन अंगों में सब के एक तुल्य उपदेश हैं। सत्य बोलना, सन्तोष रखना, तृष्णा रोकना, आचार विचार युक्त काम करना ये सब के तुल्य साधन हैं। जेष्ठ, श्रेष्ठ, माता, पिता, गुरू, राजा की बन्दगी बजाना यह सब की नीति तुल्य है। इसी कर्तव्य का नाम मूर्तिपूजन है। इस शब्द को हिन्दुओं ने कल्पना किया है किन्तु मूर्तिपूजक सब हैं, शब्द व शैली भेद है। सारांश यह है कि प्राणी मात्र का नेचुरल धर्म मूर्तिपूजन है, इसके साध्य में ही नाना रूप की क्रिया साधना सब कर्म हैं वे ही कर्म धर्म माने गए हैं।

इति श्री हरिदास विरचितम् धर्म निर्णय ग्रंथे
सृष्टिक्रम, तत्वज्ञान, मानुष प्रपञ्च वर्णनो नाम
तृतीयो मयूखः।

मूकं करोति वाचालं पंगुं लङ्घयते गिरिम् ।
यत् कृपा त्वामहं वन्दे परमानन्दमाधवम् ॥

गुरूपदेश ।

(UNIVERSAL RELIGION)

इस शब्द का भाव यह है कि धर्म के सार तत्व को बतलाना, जो मुझे गुरू ने उपदेश किया है वह आप को भेंट करता हूं । हे शिष्य तीन मयूख के विषय को धर्म निर्णय व धर्म निरूपण तथा सृष्टि क्रम व तत्व-ज्ञान व मानुषी प्रपञ्च से सब समझाया, कि मनुष्य मात्र का मुख्य धर्म मूर्तिपूजन है और यही मुख्य अद्वैत सिद्धान्त की उपासना है और सब प्रपञ्च है। तब भी तेरी अद्यावधि द्वैत भ्रान्ति निर्मूल नहीं होती। इसका कारण केवल जन्म से मानने का जो अभ्यास दृढ़ हुआ है वही वासना है। वह वासना शब्द व्यापार करके दृढ़ होती है। इस शब्द व्यापार ने बड़े २ पारंगत विद्वानों को संशय में डाल दिया है जिससे वे उबर नहीं पाते। जिनने विचार में दृढ़ धारण किया है वही श्रेष्ठ मनुष्य है । सभी ने विचार ही को तप कहा है, विचार का अभ्यास ही पुरुषार्थ प्रयत्न है । यथा—

"ऋतम् ज्ञानेन मुक्तिः"

"बे इल्म नतवा खुदाराशनास्त"

प्रायः सभी देश में पारंगत विद्वान भी हैं किन्तु वे तत्वज्ञानी नहीं कहे जा सकते। तत्वज्ञान उसी को

प्राप्त हुआ जानो जिसकी वासना नष्ट हो गई है, जिसकी आधि रोग से मुक्त हो चुकी है, जिसके संकल्प विकल्प भस्म हो गये है, जिसको "गति" की विचित्रता देख पड़ने लगी है अर्थात् द्वैतता की दृष्टि नष्ट हो गई है, जिन्हों-ने सन्तोष का दृढ़ साधन कर लिया है और जो सत्या-वलम्बी हो गये हैं वास्तव में वही ईमान्दार हैं, सत्य-वादी हैं, व तत्वज्ञानी हैं।

प्राय: सभी देश के विद्वान, बली, धनी, गुणी अपनी २ अपेक्षा दूसरे को न्यूनाधिक देखा करते हैं। बराबर वाले के बढ़ने से संताप तथा घटने से अहंकार उत्पन्न होता है। एक फिकर का बोझा सिर से उतरने नहीं पाता दूसरा उससे अधिक बोझा सन्मुख मौजूद रहता है, तिनके क्षोभ से नितान्त दुःखी रहते हैं। इसी को बासना इसी को आधि रोग कहा है। इसी पर एक साधु कहता है—

"कोई सफ़ा न देखा दिल का"

धन, कुटुम्ब आदि से जो भाग्यवान कहे जाते हैं वह भ्रान्त है। कारण सब की स्थिति समान है, सुखी को भाग्यवान कहा है। जब सुख नहीं तब वह काहे का भाग्य-वान। इसको अच्छी तरह समझिए। इसका विषय दूसरे मयूख में द्वैतता खण्डन के प्रसंग में दे आए हैं। वासना ही से मनुष्य मनुष्य को मार डालता है और स्वयम् भी आत्महत्या कर लेता है। विद्वान भी द्वैतता के अभ्यास से नाम नामी, गुण गुणी, देह देही, धर्म धर्मी को

पृथक् २ देखते हैं यथा आकाश व शब्द, वायु व स्पर्श, सूर्य-धूप, अग्नि-गर्मी, ईश्वर-जगत्, किन्तु ये वस्तु एक हैं अर्थात् वाच्य भेद हैं, वस्तु के गुण की भी गणना करते हैं तिससे द्वैत भ्रान्ति नष्ट नहीं होती। यह सिद्ध कर चुके हैं कि शकल जो देख पड़ती है, खाई जाती है, पान की जाती है, सूंघी जाती है, स्पर्श होती है इन सब शकलों को जीव माना है। गति जो प्रति क्षण समस्त विश्व के शकलों को परिवर्तन करती है उसको शक्ति कह के, ईश्वर कह के, रूह कह के, जान कह के, प्राण कह के बोध कराया है एवम् वह गति शक्ति रूप से विश्व में स्थित है पर उसका कोई रूप नहीं है। और वह विश्व में है विश्व से भिन्न नहीं है। समस्त विश्व आकृति व शब्द मय ही है तीसरी वस्तु तो कुछ है ही नहीं। किन्तु मनुष्य ने उन दो शकलों में गति के परिवर्तन के नाना भांति के शब्द का जाल रचा है। जैसे मर्दुमशुमारी के मुहकमे की मिसलें मुरत्तिब होती हैं, जैसे मिट्टी के खिलौने की तथा सोना चांदी के गहने की नाना संज्ञा कल्पना की जाती हैं, जैसे लोहे के औज़ारों के जुदे २ नाम कल्पे जाते हैं तैसे ही मनुष्य प्रपञ्च में मनुष्य शकल को ही राजा स्थित किया, प्रजा स्थित किया, मोहकमा स्थित किया, क़ायदा स्थित किया, बुरे २ कर्म को स्थित किया, अच्छे २ कर्म को स्थित किया। उपदेश, नीति, क्रिया, साधन स्थित किया, धर्म सम्बन्ध में, व्यवहार सम्बन्ध में, प्रबन्ध सम्बन्ध में समस्त संज्ञा कल्पना किया। काहे के वास्ते, केवल शरीर रक्षा ही

निमित्त, दूसरे के निमित्त नहीं। किन्तु वह सुख तो तत्वविचार ही से प्राप्त होता है द्वैतता दृष्टि से कदापि होता नहीं। द्वैतता जो उत्पत्ति नाश, कर्ता भोक्ता, अच्छा बुरा आदि कर के सभी अद्वैतता में शांकित हो जाते हैं, तिसमें अच्छे बुरे का समाधान तो दूसरे मयूख द्वैतता के खण्डन में कह आए हैं। उत्पत्ति नाश का विषय जगत नश्वर बाद पन्ना १५ में है। कर्ता भोक्ता के शब्द को समझिए। जो मनुष्य अपने को कर्ता भोक्ता मानता है इस पर यह प्रश्न है। शरीर के भीतर जो अन्न, पानी, हवा को अपने २ स्थान में नियत करता है तथा रस, लोहू, मांस, वीर्य्य, मद, मज्जा, हड्डी, चमड़ा, रोवां आदि रूप में उसका परिवर्तन करता है, मलमूत्र अलग करता है, सब नाड़ियों में लोहू पहुंचाता है तथा मिथ्याहार व्यवहार से नाना प्रकार के रोग उत्पन्न करता है, तथा गति प्रति क्षण परिवर्तन करता है क्या वहां भी तुम्हीं सब करते हो ? और जो तुम अपने को कर्त्ता भोक्ता मानते हो, सो भी भ्रम है। क्योंकि सभी मनुष्य सुखी व निरोग होना चाहते हैं। दुखी व रोगी नहीं होना चाहते हैं। तो क्यों अपनी इच्छा के प्रतिकूल दुखी और रोगी हो जाते हैं ? नाना भाषाओं में जो २ धर्म पुस्तकें है उनमें अपने २ समझ के अनुकूल सब ने धर्मोपदेश दिया है। शैली भेद है, अर्थात् वाक्य भेद, लक्ष्य भेद में किसी भांति द्वैतता सिद्ध नहीं होती।

एवम् प्रयोजन सभी आचार्य्यों के उपदेश का यही है कि किसी उपाय से मनुष्य को सुख मिलै—यथा बालक को सिखाया जाता है तो कई प्रकार के शब्द व शैली से सिखाया जाता है, पर वे शब्द शैली वाक्य भेद हैं, लक्ष्य भेद नहीं हैं। सभी का साध्य सुख प्राप्त ही है। किन्तु वह सुख तो केवल वासना अर्थात् द्वैतता के त्याग से ही प्राप्त होता है। अद्वैत उपासना का धर्म मुख्य मूर्ति पूजन सिद्ध है। अद्वैत शब्द का भाव यह है कि समस्त विश्व की शकलें एक ही वस्तु से पैदा हुई हैं अर्थात् सब में एक ही जान है, सभी वस्तु में एक स्थित एक गति है, जिससे सब वस्तु की रक्षा सब का हित देखना मनुष्य का परम कर्तव्य है इसी को सनातन धर्म कहते हैं। और सभी धर्म में आचार विचार की सीमा वर्ण भेद के अनुसार दृढ़ हुई कि जिस में देश का काम रुकै नहीं। जैसे डाक्टरी में एक ही हथियार से गला व पैर आदि चीरे फाड़े जाते हैं, उन हथियारों में उत्तम मध्यम कौन माना जाता है। वैसे ही पेशे २ पर वर्ण भेद नियत है, किन्तु कौन वर्ण उत्तम है, कौन वर्ण नीच है इसके भेद को भी सभी आचार्य्यों ने तोड़ा है वर्ण के भेद पर धर्म मनुष्य का जुदा २ नहीं सिद्ध होता। जो जैसा उत्तम मध्यम निकृष्ट कर्म करता है, तैसे २ उसकी उत्तम मध्यम निकृष्ट श्रेणी में गणना होती चली जाती है। "क्षिप्रं हि मानुषे लोके सिद्धिर्भवति कर्मजा" जैसे ब्राह्मण, क्षत्री आदि नीच वृत्ति को ग्रहण कर लेते हैं तो उनके साथ सभी

जाति के लोग नीच का सा वर्ताव करते हैं। जाति की उच्चता व नीचता से कोई उच्च व नीच नहीं माने जाते। यह लोक संमत भी सभी देश की छोटी बड़ी जातियों में प्रचलित है, अर्थात् अच्छे खानदानी अंगरेज़ व मुसलमान भी जब अपने सजातीय को नीच वृत्ति देखते हैं तो उसके साथ खाना, पीना, उठना, बैठना इत्यादि सम्पर्क नहीं करते। तथापि अपनी २ जाति का सभी पक्षपात करते हैं। यह भी लोक संमत है कि चमार भी अगर सत्य बोलता है तो गांव में उच्च श्रेणी वाले भी पंचायत के झगड़ों में उसको बुलाते हैं, किन्तु ब्राह्मण जो नीच वृत्ति का हो जाता है उसको कोई भी नहीं पूंछता। अपनी २ जाति व पेशे को कोई बुरा नहीं समझता या मानता, किन्तु स्वार्थ तत्पर उपदेशकों ने इस तत्व को छिपा दिया है। क्योंकि उनमें खुद स्वार्थ तत्परता घुसी है-इस तत्व के समझाने से तो उनकी जीविका जाती है इसलिए नये २ शैली में अपने २ मतों की बड़ाई करने में प्रवृत्त हैं।

धर्म की मीमांसा।

धर्म कर्म दोनों वाच्य भेद हैं। धर्म कर्म का निरूपण सविस्तार दूसरे मयूख में हुआ है। मनुष्य में धर्म प्रेम व स्नेह वढ़ाने के उपाय में दृढ़ हुआ है अन्य प्रयोजन नहीं था। प्रेम व स्नेह बढ़ाने सेही मनुष्य को सुख मिलता है। तिस

धर्म में प्रवृत्ति के लिए तीन साधनाएं सभी मतावलम्बियों ने दृढ़ता के साथ स्थित की है, सन्तोष रखना, तृष्णा का रोकना, सत्य बोलना, तथा दो उपाय "आचार विचार" इन पांच अंगों के सहित धर्म सभी देशों की छोटी बड़ी जातियों में अनादि काल से सामान्य प्रवाहित है। विना इन पांचों अंगों के धारण किए मनुष्य को कदापि सुख नहीं मिल सकता। यह सार्वभौम सिद्धान्त है। सारांश यह है कि इन्हीं पांच अंगों के अवलम्ब से मनुष्य को सुख प्राप्त हो सकता है। जो मनुष्य इन अंगों को नहीं धारण करता है उनकी पाखंडी, पूजा, पाठ, जप, तप, दान, व्रत, नियम, ध्यान, तिलक, मुद्रा, गायत्री, वेद मंत्र, नमाज़, बायबिल आदि के आचरणों से कदापि सुख प्राप्त नहीं होता। जब तक मनुष्य की आधि अर्थात् फिक्र नहीं छूटती तब तक वह अपवित्र ही सिद्ध व सत्य है और उसको मरण काल में वासनाओं के अनन्त क्षोभ घेरते हैं जिसको विद्वान सभी समझते है। दुष्ट मनुष्य से सभी दुःख पाते हैं। ऐसे ही मिथ्याहार विहार से सब को रोग होता है। इससे सिद्ध है कि संसर्ग से ही सुख दुख होता है। "सुखस्य दुःखस्य न कोपिदाता" दुःसंग और मिथ्याहार विहार का निवारण करने के लिए तथा सत्संसर्ग में प्रवृत्ति करने के लिए ही सब धर्मों में आचार विचार धर्म का मुख्य अंग माना गया है। और वे ही सब देशों की छोटी बड़ी जातियों में जाति मर्य्यादा धर्म के शब्द से कहा जाता है। अर्थात्

धर्म में प्रधान अंग आचार विचार स्थित है और सब देश की छोटी बड़ी जातियों में प्रचलित है। जिस मनुष्य का जो पेशा था अथवा भक्ष अभक्ष्य था तदनुकूल उच्च नीच कर्मों के भेद से जुदो २ जातियां कल्पना हुई हैं यथा—

"चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुण कर्म विभागशः।"

और सभी जातियों ने अपने २ पेशे को ही धर्म समझ रक्खा है, क्योंकि सभी में एक मात्र आधार मूर्तिपूजन है। आचार विचार की मर्य्यादा के रक्षा के लिए बदनामी का भय व जाति दण्ड सभी में नियत है—

"स्वे स्वे कर्मण्य भिरतः संसिद्धिं लभते नरः।"
"स्वधर्मे निधनं श्रेयः पर धर्मो भयावहः।"

जातीय मर्य्यादा इस कारण सीमावद्ध हुई है कि कोई पेशा शिथिल न हो। कोई भी पेशे वाले न होने से देश का कार्य अनुकूल प्रवाह में नहीं चलता यह सार्वभौम सिद्धान्त है। सभी देश के छोटे बड़े जाति में आचार विचारहीन को तुच्छ कहते हैं, असभ्य कहते हैं। तिससे सब में आचार विचार की सीमा दृढ़ है, सिद्ध है।

अब आप लोगों को सनातन धर्म के मन्दिर का दर्शन कराता हूं तिसमें वही मूर्तिमान स्थित हुआ है। विचार दृष्टि से देखिये विद्वान लोग मूर्तिपूजन का अर्थ वागजाल के सबब समझते नहीं इसी से झटित ही कह

बैठते हैं कि हम मूर्तिपूजक नहीं हैं, किन्तु वे अवश्य हैं, तिसको विचारिए। मूर्तिपूजन के शब्द का मुख्य आशय प्रेम व स्नेह है, अन्य नहीं है। सभी प्रेम व स्नेह को ही अच्छा कर्म मानते हैं। कारण सब अपने बालकों को प्रेम स्नेह में प्रवृत्त होने की शिक्षा दिया करते हैं। सभी देश व भाषा के आचार्य्यों ने अच्छे कर्म को ही धर्म स्वीकार किया है। येही अच्छे कर्म सब देश के छोटी बड़ी जाति में समान समझे गए हैं, जो निम्न लिखित शकलों में अनादि से प्रचलित है। सभी आचार विचारवान की प्रशंसा करते हैं, आचार विचार इस शब्द का भाव केवल खाने पीने की छूत ही नहीं सार वस्तु संग कुसंग का बचाना तथा सोच समझ के काम करना, जिसमें किसी को फिर पछताना नहीं पड़ता। सभी असभ्य, दुष्ट, निर्दय व बदचलन के संग को बुरा पुकारते हैं, सभी अपनी २ शक्ति व वित्तानुसार अपने २ कुटुम्ब पालते हैं, सभी खुशी व रंजीदगी के समय बिरादरी को खिलाया करते हैं, सभी अपने से ज्येष्ठ श्रेष्ठ मा बाप व राजा गुरू को शिर झुकाते हैं; सभी अपने हितू नातेदार जान पहचान की तवाजः खातरी करते हैं, सभी आपस में प्रेम स्नेह रखते हैं, सभी दुःखी रोगी ग़रीब पर तरस करते हैं व मदद देते हैं। अपने २ गोल की जीविका के लिए सभी सिफारश करते है, जमानत देते हैं, सभी अपने साथी का पक्ष लेते हैं, सभी अकालपीड़ित के सहायवान होते हैं और सहानुभूति प्रगट करते हैं, सभी खुदगर्ज़ की निन्दा

करते हैं, सभी देश भक्ति को प्रशंसनीय समझते हैं, सभी अपने खाने पहरने व उपयोगी चीज़ों की यत्न पूर्वक रक्षा करते हैं। जो बेपरवाह होता है सभी उसको नालायक कहते हैं, सभी दूसरे को दुःख देना गुनाह मानते हैं, सभी दया, सत्य, परोपकार, सन्तोष रखना, तृष्णा रोकने को धर्म का मुख्य अंग मानते हैं, सभी ईश्वर को किसी न किसी शकल से भजते हैं, रिफःआम को सभी सबाब मानते हैं। असत्य बोलने वाले को दूसरे को दुःख देने वाले व पाखण्डी को सभी पापी मानते हैं, रुपया बढ़ने से बहुतेरे विद्या प्रचार में तथा धर्मशाला, मन्दिर, मसजिद, गिर्जा, कुवां, तालाव, सड़कों पर पेड़ लगाना, बाग़ीचा लगाना, सड़क बनाना, अस्पताल खोलना इन कामों में रुपया ख़र्च करते हैं, ग़रीब व मोहताज को अन्न वस्त्र से सभी मदद करते हैं, सभी अड़ोस पड़ोस और मुहल्ले वाले आग लगने पर या मकान गिरने पर खाना पीना सोना छोड़ के स्नेह पूर्वक दौड़ के मदद को उत्साहित होते हैं और अपने परिश्रम को न देख कर उसकी रक्षा करते हैं, मृत्यु होने पर सभी जान पहिचान के लोग आ कर सहानुभूत प्रगट करते हैं यह तो समस्त मनुष्य में व्यवहार है अब शास्त्र प्रमाण लीजिये :—

नाहं वेदै र्न तपसा न दानेन न चेज्यया।
शक्य एवं विधो द्रष्टुं दृष्टवानसि मां यथा॥
भक्त्यात्वनन्यया शक्य अहमेवं विधोऽर्जुन।
ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्वे च प्रवेष्टुं च परंतप॥

सर्व धर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ।
ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम् ॥

अर्थात् जो मनुष्य जिसके जैसे आपत्ति में काम पड़ता है वैसे ही उसके विपत्ति में भी उसको मदद मिलती है ।

कोई पण्डित मनुष्य, मनुष्य शक्ल को छोटा बड़ा गिनते नहीं कर्म व चलन को ही छोटा बड़ा गिनते हैं। इसके परे दूसरा धर्म क्या है सो सिद्ध होता नहीं। सभी देश के आचार्य्यों ने विद्या उपार्जन करके, अनुभव प्राप्त करके, धर्म पुस्तकें व नाना उपयोगी विद्यायें रची हैं कि जिससे संसार का हित हो, यही सनातनधर्म मूर्ति-मान हुआ। मनुष्य जाति मात्र में सामान नियम से स्थित है और वह मर्य्यादा जाति बदनामी के रूप में प्रत्यक्ष हुई है, क्योंकि निन्दनीय कर्म के बदनामी से सभी डरते रहते हैं। सारांश यह है कि जिसमें सुख प्राप्त हो वही कर्म धर्म कहलाता है। धर्म कर्म वाच्य भेद है लक्ष्य भेद नहीं है। हे विद्वानो ! सब के धर्मपुस्तकों का यही सार है, उनके अन्य२ वाक्यों पर दृष्टि न डालिये यथा–

यावानर्थ उदपाने सर्वतः संप्लुतोदके ।
तावान् सर्वेषु वेदेषु ब्राह्मणस्य विजानतः ॥ "गीता"

उपनिषद् कहता है–

"वाचारम्भणम् विकारो नाम धेयं मृत्तिकेत्येव सत्यम्"

एक मुसल्मान पारंगत विद्वान मुल्ला कहता है-

मनूज़े कुरआं मगज़् रा वर्दाश्तम् ।
उस्तुख्वां पेशे सगां अन्दाखतम् ॥

हे विद्वानो ! सनातनधर्म के उत्कृष्ट शक्ति को समझिए कि मूर्तिपूजा सभी जाति के प्राणियों में अनादि से धारा प्रवाहवत् चालन है अर्थात् नेचुरल है यह धर्म आधुनिक व काल्पनिक प्रबन्धित नहीं हुआ है। पर द्वैतता के अभ्यास से अच्छे २ विद्वानों को अद्यावधि धर्म नहीं चीन्ह पड़ा, क्या है ? हे विद्वानो ! मनुष्य में तो सभी देशों से सभी देशों की तारतम्य डोर तनी है, ऐसा दृढ़ सम्बन्ध होने पर मनुष्य मनुष्य को छोटा बड़ा, ऊंच नीच भेद, अवस्था भेद, देखता है यह द्वैतता है । बड़ा आश्चर्य है कि धर्म क्या वस्तु है नहीं देख पड़ता, वर्ण भेद तथा जाति भेद से धर्म दो चार नहीं होता ।

आचार्य्यों ने मूर्तिपूजन की कैसी उदार कल्पना की है तिसको विचारिए। सब से अमूल्य पदार्थ ईश्वर भक्ति को सभी ने स्वीकार किया है, उस भक्ति का रूप क्या है, तथा उपासना क्या है, वह यह है कि विश्व की समस्त शकलें जिनको वस्तु जीव के शब्द से कहा है उनकी जो यथेष्ट रक्षा करता है वही धर्मात्मा है व देश भक्त है। तथा सभी अपने उपयोगी वस्तु की हिफ़ाजत व रक्षा करते हैं वही उसका पूजन है, वही उसका भजन है, वही उसका कर्म है। अर्थात् अपने शरीर रक्षा ही के निमित्त समस्त व्यापार है । जो मनुष्य उपयोग व भोग

के सामान को जैसी उचित रक्षा करता है तैसा उसके काम पड़ता है। जैसा उनमें बे परवाही करता है तैसा ही उसके हित का साधन भ्रष्ट हो जाता है। तथा राजा के राज्य धन की जो जैसा रक्षा करता है वैसा ही वह राजा का प्यारा होता है। जैसे जो राज्य धन को ज़ाया करता है वही गुनहगार होता है। वैसा ही यह सृष्टि ईश्वरीय धन है। जो इस धन को संरक्षित रखता है वही ईश्वर का सच्चा भक्त है, वही मूर्तिपूजन है। जो इस धन को ज़ाया करता है वही पापी है। देखो मूर्तिपूजक मनुष्य ही नहीं वरन प्राणी मात्र है, जिनका समान धर्म पर लक्ष लीजिये।

प्राणी मात्र का साधारण धर्म।

समस्त प्रकार के प्राणी में तथा मनुष्य में ३० भांति की स्वभाव जन्य प्रकृति नेचुरल होती है। यही मनुष्य व प्राणी मात्र में समान धर्म है। अर्थात इन्हीं तीस प्रकार की क्रिया ही में सब जन्मते, पलते व रूपान्तर होते रहते हैं। तीस क्रिया निम्न लिखित हैं। चार भांति के शब्द व्यापार हैः-रोना, चिल्लाना, गाना, हंसना जो पृथक २ जाति की बोली में पृथक् २ रूप की रहती हैं। सब प्रकार के प्राणी इन्हीं शब्द व्यापारों से अपना आन्तरिक भाव अन्य को बोध कराते हैं। व अन्य का आप बोध करते हैं। इसके परे मनुष्य के बोल चाल का जो शब्द व्यापार वह प्रपंच है, व अनिश्चित है क्योंकि

संसर्ग जनित है अर्थात् सिखाने पढ़ाने से उत्पन्न होते हैं। सभी में १० भांति में दृष्टि ज्ञान रहता है। संयोग, वियोग, बली, निर्बल, हित, अहित, भक्ष्य, भक्षक, अन्ध्यारा, उज्यारा। इनहीं दस प्रकार की दृष्टि ज्ञान में मनुष्य ने अनंत दृष्टि मानित किया है यथा ईश्वर जीव, सतो गुण रजो गुण, तमो गुण, पुरुष, प्रकृति, सत्य असत्य, पुण्य पाप, जड़ चैतन्य, मन, बुद्धि, अहंकार, चित्त, नाम, रूप, गुण, कर्म, स्वभाव, अवस्था, अच्छा, बुरा, मेरा, तेरा, आदि ये सब प्रपंच हैं। अन्य कोई प्राणी जाति इन शब्दों के भेद को समझते मानते नहीं इसी से मनुष्य में द्वैतता व वासना उत्पत्ति हुई है। १० प्रकार की दृष्टिज्ञान को ज्ञान इन्द्रियजन्य बोध कहते हैं। इसी दश विधि ज्ञान से समस्त प्राणी अपनी २ शरीर रक्षा करते हैं। सभी में चार प्रकार के संसर्ग जन्य विकार उत्पन्न हुवा करता हैं। यथा क्रोध, प्रेम, भय, रोग, छः प्रकार के शरीर धर्म खाना, पीना, मल मूत्र का त्याग, मैथुन और निद्रा, अथवा आलस्य—छः जीव लक्षण-इच्छा, द्वेष, सुःख, दुःख, यत्न, ज्ञान, इन ३० भांति की प्राकृतिक क्रिया से ही प्राणी मात्र की उत्पत्ती, पालन, नाश, होता रहता है। यह सब के समान धर्म नियमित हैं। इनके परे जो अन्य दृष्टि व अन्य शब्द व्यापार हैं वे प्रपंच हैं। वैसा ही प्रत्यक्ष में मनुष्य व प्राणी जाति के समान व्यापार भी प्रतीत होते हैं उसको समझिए— जैसे मनुष्य कपटाचारी व व्यभिचारी होते हैं तैसे अन्य पशु व पक्षी भी हैं। जैसे कोई मनुष्य मांस नहीं खाते

वैसे प्रायः बहुत जाति के पशु पक्षी मांस भक्षी नहीं हैं। जैसे कोई मनुष्य एक नारी ब्रती रहते हैं तैसे चकई, चकवा, सारस, सर्प, सिंह हैं। जैसे मनुष्य दांवघाती होते हैं तैसे ही पशु पक्षी भी दांव घाती होते हैं व शत्रु से बदला लेते हैं। जैसे मनुष्यों में विरादरी का संम्बन्ध है वैसे पशु पक्षी भी गोल बन्द रहते हैं। जैसे स्त्री अपने पुत्रों को पालती है वैसे वे भी अपने २ पुत्रों को पालते हैं और रक्षा करते हैं। जैसे मनुष्य संचय करता है तैसे कई प्राणी भी संचय करते हैं। जैसे मधु मक्खी, चींटी, घूस, मूंस, बन्दर आदि। मनुष्यों में प्रबन्ध रहता है वैसे ही कई जातियों में जातित्व प्रबन्ध रहता है। उसके प्रतिकूल चलने वाले का वे सिर काट लेते हैं, जैसे जो मधुमक्खी किसी मलिन पदार्थ का रस लेती है उसको मार डालते हैं। जैसे मनुष्य मकान बना कर रहते हैं तैसे प्रायः चिड़िया, व पशु मकान व बिल बनाती हैं। जैसे चन्दू-चेहरा अर्थात् बया व बिलवाले जानवर। जैसे केचित् मनुष्य आश्चर्य्यवान आविष्कार करते हैं। जैसे रेडियम आदि व (एर शिप) Air Ship आदि तथा नाना भांति के वि-चित्र शस्त्र आदि रेल तार आदि तैसा ही केचित् जाति कीड़े विचित्र कार्य करती हैं। जैसे मधु मक्खी सहत बनाती है तथा भृंगी अन्य अन्य रूप के कीड़ा से स्वान रूप सन्तान बनाती हैं, तथा कई जाति के मकोड़े व पक्षी आसमानी घटना पानी आंधी इत्यादि बोध कर लेती हैं और वे अपने रक्षा का प्रबंध कर लेती हैं। ये शक्तियां मनुष्य

में कदापि नहीं हैं। जिस प्रकार अपने २ गोल व बिरादरी में कोई २ मनुष्य गुणवान्, रूपवान, शक्तिमान् होते हैं तैसे उनमें भी सभी जाति में कोई २ उत्तमोत्तम रूप गुण में प्रशंसनीय निकलते हैं। तैसे कोई २ मनुष्य तन मन धन से देश भक्त निकलता है। तैसे प्रायः बहुत जाति के पशु पक्षी चरना, खाना, छोड़ कर संकट में पड़े अपने सजातियों की रक्षा करने में तत्पर होते हैं। जैसे गाय, बैल, अपने साथियों को शेर से छुड़ा लेते हैं, "कोढ़े में" गायें रहती हैं और जब उनमें से किसी के बच्चा पैदा होने वाला होता है तब वे लोग उसके लिए जगह कर देती हैं और ऐसा बचाती हैं कि बच्चा कचरने नहीं पाता। जिस प्रकार मनुष्य सहवास संसर्ग से अन्य भाषा सीख लेता है व बोलता है, तथा क्रिया सीख लेता है व करता है, तैसा ही प्रायः बहुत जाति के पशु पक्षी भी करते हैं। सिखाने पर नूतन क्रिया व शब्द व्यापार भी सीख लेते हैं। जैसे सरकश के शेर, हाथी, घोड़ा व अन्य छोटे २ पशु पक्षी नाना कौतूहल करते हैं। तथा मदारी भालू सांप आदि का कुतूहल दिखाता है। कुत्ता बाजार से सौदा ले आता है। बन्दर मनुष्यवत् कर्म करते हैं। कबूतर डाक ढोता है। सुना है कि विलायत में कुत्तों को डिटेक्टिव पुलीस का काम सिखाया जाता है। मैना तोता मनुष्य के समान बोलते हैं, बात चीत करते हैं। तथा जिस प्रकार सिखाई भई क्रिया तथा शब्द भाषा बिना अभ्यास के पशु पक्षियों को विस्मरण हो जाता

है। तैसा ही मनुष्य की भी सिखी हुई क्रिया व पढ़ी हुई विद्या बिना अभ्यास के विस्मरण हो जाती हैं। सारांश यह है कि प्राणी मात्र का तथा मनुष्य का धर्म और व्यवसाय तुल्य है। तथा एक आकार का वृक्ष मिला है, जो जानवरों को डाली से जकड़ लेता है और खून चूस कर छोड़ देता है। यह कुदरती शक्ति का प्रभाव है कि किस२ रूप के आकार से कौन२ कार्य्य इस जगत् का होता है। चौरासी लाख शकलों से ही जगत् के सारे काम स्वयम् होते हैं। और गति शक्ति जैसी की तैसी नित्य स्थित है। इसी से सृष्टि नित्य व सत्य निर्विवाद सिद्ध है। मनुष्य में अन्य प्राणियों से विशेषता यह है, मनुष्य में नेचुरल स्वभाव है कि वह अन्य के स्वभाव व व्यवसाय का अनुकरणी होता है, उनमें जो मनन करने वाले मनुष्य होते हैं उनके मनन शक्ति से एक अद्भुत सूक्ष्म उत्पन्न होती है। तिससे वह असली हालत से बेहद अतीव तरक्की कर सकता है। यथा देवता पद को प्राप्त कर सकता है। यह अपूर्व मनन शक्ति अन्य किसी प्राणी में होती नहीं, तिससे वे अपने रक्षा ही में अनुकूल प्रबन्ध नहीं कर सकते। अन्य प्राणियों में मनुष्य से क्या विशेषता है ? अन्य प्राणी जाति में वाणी व्यक्ति व्यापार नहीं है। तिससे द्वैतता की दृष्टि उनमें नहीं, तिससे अपने अपेक्षा किसी को छोटा बड़ा, सभ्य असभ्य देखते नहीं, उनमें नाना मार्ग, नाना रुचि, नाना मति नहीं होती, उनमें वासना नहीं है, न मंसूबों की गढ़न्त होती है। वे

सदैव प्रफुल्लित चित्त रहते हैं। और अपने भर काबू वे किसी के आसृती नहीं होते तथा अपने शक्ति से ही अपनी रक्षा व पालन कर लेते हैं। उनमें घ्राण शक्ति, दृष्टि शक्ति, सीतोष्ण, भूख, प्यास, गर्मी, बरसात, जाड़ा के विकार की सहन शक्ति मनुष्य से ज्यादा होती है, उनमें अग्नि की बलिष्टता रहती है, उनमें मुक़र्रर रोग होता है, मनुष्य में रोम २ में अनन्त रोग हुवा करता है मनुष्य सदृश आसृति, दीन, फिकरी, व्यग्रित, क्षुभित वे कोई भी नहीं रहते, न तृष्णा से अपने जातीय की जान मारते हैं, न वे अपने आप से आत्महत्या करते हैं, वे पेट भरने पर आराम करते हैं, किलोल करते हैं, गाते हैं, उड़ते हैं, उनमें कोई रोगी व दुबला व क्षुभित प्रतीत होता नहीं, वे उपकार करने वाले का हित चाहते हैं। मनुष्य विश्वासघाती होता है तिस-से समस्त प्राणी मनुष्य को शत्रु देखते हैं। प्राणी मात्र के शरीर के हाड़, चाम, रोम, बाल, नख, सींग सब देश के हित में पड़ते हैं और उनमें कतिपय के मल, मूत्र भी दवा के काम आते हैं, किन्तु मनुष्य जो धर्म में स्थित नहीं है जो किसी के काम आता नहीं, उसका जन्म निरर्थक है, इसको भी सभी ने स्वीकार किया है।

हे शिष्य प्राणी मात्र के समान धर्म का प्रसंग तुझे समझाया, अब तू निश्चय कर कि मूर्ति पूजन से भिन्न अन्य दूसरा धर्म कुछ है? मूर्ति पूजा इस शब्द के अर्थ से सभी चक्कर खाते हैं कि यह तो द्वैतता की उपासना है, किन्तु द्वैत कुछ हो तब न द्वैतता की उपासना सिद्ध हो।

प्रेम व स्नेह को दृढ़ करने के निमित्त ही मन्दिर बना के उन आर्य्यों की मूर्ति स्थित हुई है जिनसे समस्त का कल्याण हुवा है । प्रेम व स्नेह बढ़ाने को इससे श्रेष्ठ तरकीब दूसरी नहीं है । विद्वान को अद्वैत शब्द का मुख्य आशय यही समझना चाहिए कि जिस धर्म को अनादि से मनुष्य मात्र करते चले आ रहे हैं । जो धर्म एक के अनुकूल हो व दूसरे के प्रतिकूल हो वह धर्म नहीं है प्रपंच है। अर्थात् मनुष्य में द्वैतता ही की दृष्टि से स्वार्थ तत्परता मिश्रित है। व्यक्ति २ को स्वप्न सृष्टि पृथक २ रूप की व क्रिया की देख पड़ा करती है, क्योंकि व्यक्ति २ की रुचि, भावना तथा संसर्ग व मार्ग भिन्न २ होते व रहते हैं, धर्म व धर्मी को जुदा २ देखते हैं यथा आकाश देख नहीं पड़ता, वायु देख नहीं पड़ता किन्तु उनके धर्म, शब्द व स्पर्श से दोनों का अनुभव होता है । ऐसा ही ईश्वर का धर्म यह विश्वरूप है वैसाही हमारा धर्म ही दो हो देख पड़ता है अर्थात् हम हैं तब देखते, सुनते हैं, हम जब बेहोशी व सुषुप्तिक अवस्था में हो जाते हैं तब तो केवल हमही रहते हैं अन्य व दूसरा कुछ नहीं रहता ।

हे विद्वानो द्वैतता के दृष्टि नष्ट करने के ही उद्योग में ज्ञान का आविष्कार हुवा है अर्थात् उसी को ज्ञान प्राप्त हुवा तू निश्चय कर जिसकी द्वैतता की दृष्टि नष्ट हो गई है। जिसकी द्वैतता की दृष्टि नष्ट नहीं हुई उसको तू कदापि ज्ञानी मत निश्चित कर ।

अद्वैतता सत्य है, द्वैतताभास सब मिथ्या है, इसी सत्यासत्य का निर्णय व विवेचन करना ही श्रेष्ट पुरुष का कर्तव्य है। असत् का जो शब्द है वह केवल द्वैत दृष्टि ही के लिये है और तो सब सत्य व नित्य है, इसी पर श्री कृष्ण का वाक्य है।

नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः ।

ईश्वर दरशन द्वैतता नष्ट होने से ही होता है और ईश्वर के जानने के लिए ही ज्ञान है, तिससे सिद्ध है द्वैतता नष्ट होने तक ही ज्ञान की आवश्यकता है, कारण फिर तो अद्वैतता सिद्ध ही है।

हे विद्वानो यह गुरूपदेश आपके सेवा में भेट करता हूं धर्म निर्णय स्वयम् कर लेंगे। अब व्यवहार से भी समझिये जिस कुटुम्ब में, गोष्टी में, नातेदारी में, जाति में, कम्पनी में महकमे में सभा व समाज में और धर्म में जहां पर द्वैतता का भेद रहता है वहां कदापि अभ्युदय होता नहीं, बिना धर्मावलम्ब हुए देश का सुधार नहीं होता यह सार्वभौम सिद्धान्त है। द्वैतता की दृष्टि का नष्ट होने ही के लिए ज्ञान है अन्य के लिए ज्ञान भी नहीं है।

हे शिष्य धर्मावलम्बी की पहचान को तू निश्चय कर, जो मनुष्य दयालु तबियत नहीं है वह कदापि धर्मावलम्बी नहीं, चाहे वह कैसा ही सभ्य चलनी के आडम्बर क्यों न धारे रहते हों ऐसा तू निश्चय कर।

श्रीमहानुभाव देशभक्ति के सेवा में धर्म निर्णय ग्रंथ भेंट करता हूं, मैं बूढ़ा ५७ वर्ष का हूं तिससे और उपाय से असमर्थ हो पड़ा हूं, मुझे ईश्वर का संकेत हुवा कि महानुभावों को समर्पण कर, तदनुसार करता हूं। अब इस ग्रंथ के प्रचार का भार आप लोगों पर है।

इति गुरूपदेश।

ग्रंथ माहात्म्य।

इस ग्रंथ का साध्य यह है कि शब्द ॐ ही सृष्टि का उपादान कारण, निमित्त कारण, समवाय कारण है और वही विश्व है, यही अद्वैत सिद्धान्त का सार है। और अद्वैत सिद्धान्त की मुख्य उपासना मूर्तिपूजन है, और ईश्वर का मुख्य नाम ॐ ही है, इसी के चिन्तवन से और इसी के जाप से मनुष्य का हृदय पवित्र हो सकता है अन्यथा नहीं।

मैं वैश्य हूं, साधारण अवस्था का हूं, अपढ़ हूं। पहले मैं व्यापार करता रहा अब मालगुज़ारी करता हूं। मुझे जब से होश आया यही स्वभावतः शौक था कि सत् क्या है, असत् क्या है, रोज़गार करता ही रहा इसका सोचना भी जारी रहा और विद्वानों का सत्कार भी करता रहा व उनका मन्तव्य भी निश्चित करता रहा, तिस असर से शिथिलता आई अर्थात् रोज़गार छोड़ दिया, इसके विचार पर बारम्बार सुरत बढ़ती गई, तिस पर प्रणव प्रचार लिखा। लेकिन वह सूक्ष्म शैली का होने

से किसी विद्वान को उसका तत्व समझ में न धसा अब समझाने की फिकर पैठी कैसे समझावें तिस फिकर में जो जो उपाय समझ में आने लगे लिखने लगा। ऐसी तीन पुस्तकें इस विषय में और लिखीं लेकिन पूर्णतया न समझा सका और यह चिंता रही कैसे समझावें परंतु कलकत्ते के कान्फ्रेंस में जाने से ज्ञान हुवा कि मनुष्य का मुख्य धर्म क्या है, छानते छानते इस धर्म-निर्णय के मन्दिर का दर्शन हुवा वही यह पुस्तक है। यह ग्रन्थ अकाट्य व अछेद्य है तथा समस्त संकल्पों विकल्पों को ध्वस्त करता है, सम्पूर्ण प्रकार के मत मतान्तरों के झगड़े को निर्मूल व निर्विवाद तथा निरुत्तर करता है जैसे तृण के ढेर को चिनगारी भस्म करती है। इसको शुरू से अखीर तक बारम्बार पढ़ के सुरत पर चढ़ा लेने से स्वयम् ही विद्वान कह उठता है "नास्ति तत्व मतः परम्" और पूर्ण सन्तोष प्राप्त होता है। हे विद्वानो! इसमें मेरी कुछ अद्भुतता नहीं अथवा करतूत नहीं है ईश्वर की इच्छा को देखें यह नियम है। जिस वस्तु का नया आविष्कार होने का जब समय प्राप्त होता है तब किसी व्यक्ति के हृदयस्थ वह सूझ दृष्टिगोचर होती है, जैसे रेल तार Airship आदि ये सिखाने से नहीं उदय हुए स्वयम् उदय हुए हैं। इनकी तरकीब शास्त्रों में नहीं है जो सिखाई जावे। इसी प्रकार इस साधारण द्वारा आज धर्म का निर्णय प्रादुर्भाव हुआ जो अनादि से स्थिर नहीं हुआ था, आज वे सब झगड़े निश्शेष होते हैं, इति ।

इस ग्रन्थ में वाच्य भेद, शब्द, अर्थ, भेद शैली दोष के अतिरिक्त तत्व के लक्ष्य पर दृष्टि कीजिए तब धर्म मन्दिर का आप को भी दर्शन होगा।

मानव धर्म।

देश हितेच्छु विद्वानों का मुख्य धर्म यही है कि देश उन्नति हेतु सर्व वर्णों को स्वे स्वे धर्म कर्म में दृढ़ता पूर्वक स्थित करें और ऐसा उपदेश करें जिससे मूर्तिपूजन के रहस्य सुगमता से सर्व साधारण के समझ में आवे। सर्व धर्म में विश्वासी हो वा विरोध व फूट फूट निर्मूल हो और मनुष्य अपने कर्तव्य को समझे कि मेरा जन्म मनुष्य में हुवा है सो देशहित के लिए हुवा है। जिस मनुष्य से किसी प्रकार देश का हित नहीं होता उसका जन्म व्यर्थ है और व्यर्थ शास्त्र पढ़ने से देश का अभ्युदय नहीं होगा उसके एवज में इतिहास सम्बन्धी कला कौशलो विद्या का प्रचार बढ़ावें। इति।

स्तुति।

आप्तों ने विराट् के रूप को इस प्रकार बोध कराया है—विश्व के समस्त शकलों के एक रूप को विराट कहते हैं। अर्थात् जिस प्रकार समस्त प्रकार के पदार्थ के शकलों के पृथक् २ अवयवों प्रति अवयवों में छोटे बड़े

अनन्त चिन्ह भीतर बाहर केला के थम्भवत् व्याप्त हैं, उसी प्रकार यह विश्व है जो नाना प्रकार चित्र विचित्र अनन्त शकलों के चिन्ह से व्याप्त है। यथा आकाशस्थ सूर्य्य आदि ग्रह व नक्षत्र तथा पार्थिव पदार्थ में क़िस्म २ के प्राणियों की शकलें धातु की शकलें मूल की शकलों व पर्वत समुद्र आदि सब उसके शकल में समाया है। इसी विश्व की शकलों से ही जगत् के सारे काम स्वयम् हुआ करते हैं, जैसे गति शक्ति गर्भ के भीतर अवयव आदि बनाती है गति की ऐसी उत्कृष्ट शक्ति का अनुभव करके स्तुति करते हैं। हे विश्व रूप विराट् तेरे गति की महिमा कहने की क्या किसी को सामर्थ्य है। सर्व भाषा के वर्णमाला में ५० अक्षर से ज्यादा की कोई वर्णमाला नहीं, इन ५० अक्षरों में मनुष्य कितनी संज्ञा कल्पना कर सकता है सो सब समझ सकते हैं। उसके गति की गणना की उपमा यदि समुद्र की रेणुका से अथवा आकाशस्थ तारों से दी जावे तो भी नेति नेति है इस लिए वे नेति नेति कह के तेरे ॐ के नाम के जप व चिंतवन में मग्न हुए हैं और कैवल्य पद को प्राप्त किया है। हे विद्वानो! जो वास्तव में अपने को पवित्र बनाना चाहते हो तो अवश्यमेव ॐ का ही चिन्तवन ॐ की ही भावना करो, इसी के जपने से मनुष्य के हृदय पवित्र हुआ करते हैं अन्य उपाय नहीं। वासना छूटने ही को मुक्त कहते हैं, वासना ॐ के भावना से ही नष्ट होती है। अन्य उपाय नहीं, नहीं, नहीं।

मैं प्रार्थना करता हूं कि जिस प्रकार तू ने धर्म निर्णय के मन्दिर का दर्शन किया वैसा ही मनुष्य में प्रेम व स्नेह बढ़ावे, और तेरी भक्ति दृढ़ करावे।

इति।

अलख एक नाम ॐ कारा। शब्द को मूल मन्त्र प्यारा॥

जो दर्शन कीन्हा चहिए तो दर्पण माजत रहिए।
जो दर्पण लग गई काई तो दर्शन किया न जाई॥

अन्धयारे दीपक चहिए तब वस्तु अगोचर पइए।
जब वस्तु अगोचर पाई तब दीपक दिया बुझाई॥

का पढ़िये का गुनिए का वेद पुराणा सुनिए।
नहिं लिखे पढ़े कुछ होई हम सहजे पावा सोई॥

वही राम हम पावा आपुहि आप बुझावा।
जो इस पद माहिं समाना सो बूझनहार सयाना॥

लाभस्तेषां जयस्तेषां कुतस्तेषां पराजयः।
हृदयस्थ स्तु यस्तेषां मंगलायतनो हरिः॥

इति श्रीहरिदास विरचिते धर्मनिर्णयग्रन्थे गुरूपदेश-
मानवधर्मग्रन्थे महात्म्य स्तुति वर्णनोनाम
चतुर्थमयूखः समाप्तः इत्यलम्।

श्री शुभम् भूयात्।

अभ्युदय
स्वधर्म
स्वदेश
प्रयाग

यदि तुम चाहहु निज कल्यान
भजहु निरन्तर एकहि ध्यान
हिन्दी हिन्दू हिन्दुस्तान

॥ श्रीः ॥

जापानका उदय.

खेमराज श्रीकृष्णदास,

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस,

बंबई.

॥ श्रीः ॥

जापानका उदय.

पण्डित गौरीशङ्कर पाठक लिखित,

वही

खेमराज श्रीकृष्णदासने

बंबई

निज "श्रीवेङ्कटेश्वर" (स्टीम्) यन्त्रालयमें

मुद्रितकर प्रसिद्ध किया।

श्रावण संवत् १९६४, सन् १९०७ ई.

॥ भूमिका ॥

जबसे जापानने रूसको युद्धक्षेत्रमें मुंहभर मिट्टी खिलायीहै तबसे पृथ्वी भरमें जापानका नाम घोषितहो रहाहै । इससे पहले कदाचित् किसीको अनुमान भी नथा कि जापानजैसा छोटासा देश महापराक्रमी और शक्तिशाली रूसको इसप्रकार पटकें लगावेगा । कदाचित् रूसकोभी युद्धके अखाडेमें आनेसे पहले यही विश्वासथा कि दो दो हाथ होतेही जापानकी हड्डियोंका चूर्ण करदेगा । परन्तु परिणाम रूसके विश्वास और समस्त संसारके अनुमानके अनुकूल न हुआ । जापानने रणक्षेत्रमें जैसा पराक्रम शूरता और बुद्धिका परिचय दिया उसे देखकर सबकी आंखें खुल गयीहैं और संसारकी दृष्टिमें जापान एक आदर्शदेश बन गयाहै । प्रश्न उत्थित होताहै कि जापानने अपनी यह उन्नति कितने दिनसे और किन किन कारणोंसे कीहै । इसपुस्तकके पढनेसे पाठकोंको इसका भली भांति ज्ञान होजावेगा । इस पुस्तकके सङ्कलन करनेमें बङ्गला मासिक पत्र "भारती" मराठी पुस्तक "जापानचीमर्दुमकी" तथा अन्यान्य गुजराती अङ्गरेजी पुस्तकोंसे आशय लियागयाहै । इन पुस्तकोंके कर्ता तथा सङ्कलनकार्यमें सहायता देनेवाले "श्रीवेङ्कटेश्वर" प्रेसके संशोधक पण्डित बालकृष्णशर्मा केलकरका मैं आभारी हूं ।

गौरीशङ्कर पाठक,

सहकारी-सम्पादक. "श्रीवेङ्कटेश्वरसमाचार"-बम्बई.

॥ श्रीः ॥

जापानका उदय.

शिक्षा ।

सुशिक्षाके विना किसी जातिकी उन्नति नहीं होती और न होसकती है। जापानकी उन्नतिका मूलकारण सुशिक्षा है, सुशिक्षाहीके कारण जापानियोंने युद्ध विग्रह, शिल्प, वाणिज्य, राजनैतिक विद्या एवम् अन्यान्य सब विषयोंमें असाधारण उन्नति लाभ कर संसार भरको चकित करदिया है। जिस जापानमें ९०० वर्ष पहले किसी साहित्यका नाम मात्र न था तथा गाने नाचने और मल्लयुद्धके सिवाय और किसी प्रकारकी शिक्षाका प्रबन्ध न था; आज उसी जापानमें कितने विदेशी युवक पहुंचकर शिक्षाके लिये लालायित होरहे हैं.क्या जापानके लिये यह कुछ कम गौरव की बात है ?

जापानियोंके प्राचीन ग्रन्थोमें वर्णित है कि कोरियाके मार्गद्वारा भारतसे जापानमें बौद्धधर्म और दर्शनोंका प्रवेश हुआ है। उसी कोरियाके मार्ग द्वारा चीनका साहित्य सबसे पहले वहां पहुंचा था।

जागीर प्रथा प्रवर्त्तनसे पहले जापानमें कई शताब्दीतक केवल चीनदेशके शास्त्र और आचारपद्धतिकी आलोचना होती थी। चीनी पुस्तकोंका ही जापानी भाषामें अनुवाद होताथा। जापानी इतिहासमें इस समयको (Translation Period) अनुवादकालके नामसे पुकारते हैं। उपरान्त सोलहवीं शताब्दीसे जापानका परिचय अमेरिकाके साथ होनेके कारण तथा छापेके अक्षरोंका आविष्कार होनेके कारण पुनरपि जापानमें शिक्षाविस्तार होना आरम्भ हुआ है। ३५० वर्ष पहले स्पेन और पुर्तगालसे जेशुइट मिशनका इस देशमें आगमन हुआ। उस समय बहुतसे लोगोंने ईसाई धर्मका अवलम्बन किया और जापानी शिक्षाकी अवज्ञा कर वैदेशिक ग्रन्थ पढनेमें दत्तचित्त हुए। जापानी सरकारको वैदेशिकजातिके संस्पर्शसे जातीय शक्तिकी शिथिलता उत्पन्न होनेकी आशङ्का हुई, अतएव स्पेन और पुर्तगालके मनुष्य वहांसे निकाल बाहर कियेगये।

उस समय केवल ओलन्दाज लोगोंको नागासाकीमें रहनेकी आज्ञा मिली। विदेशीग्रन्थोका जापानमें आना बन्द हुआ। उसी समयसे जापानके लोग

॥ श्रीः ॥

जापानका उदय.

शिक्षा।

सुशिक्षाके विना किसी जातिकी उन्नति नहीं होती और न होसकती है। जापानकी उन्नतिका मूलकारण सुशिक्षा है, सुशिक्षाहीके कारण जापानियोंने युद्ध विग्रह, शिल्प, वाणिज्य, राजनैतिक विद्या एवम् अन्यान्य सब विषयोंमें असाधारण उन्नति लाभ कर संसार भरको चकित करदिया है। जिस जापानमें ९०० वर्ष पहले किसी साहित्यका नाम मात्र न था तथा गाने नाचने और मल्लयुद्धके सिवाय और किसी प्रकारकी शिक्षाका प्रवन्ध न था; आज उसी जापानमें कितने विदेशी युवक पहुंचकर शिक्षाके लिये लालायित होरहे हैं. क्या जापानके लिये यह कछ कम गौरव की बात है ?

जापानियोंके प्राचीन ग्रन्थोंमें वर्णित है कि कोरियाके मार्गद्वारा भारतसे जापानमें बौद्धधर्म और दर्शनोंका प्रवेश हुआ है। उसी कोरियाके मार्ग द्वारा चीनका साहित्य सबसे पहले वहां पहुंचा था।

जागीर प्रथा प्रवर्त्तनसे पहले जापानमें कई शताब्दीतक केवल चीनदेशके शास्त्र और आचारपद्धतिकी आलोचना होती थी। चीनी पुस्तकोंका ही जापानी भाषामें अनुवाद होताथा। जापानी इतिहासमें इस समयको (Translation Period) अनुवादकालके नामसे पुकारते हैं। उपरान्त सोलहवीं शताब्दीसे जापानका परिचय अमेरिकाके साथ होनेके कारण तथा छापेके अक्षरोंका आविष्कार होनेके कारण पुनरपि जापानमें शिक्षाविस्तार होना आरम्भ हुआ है। ३५० वर्ष पहले स्पेन और पुर्तगालसे जेशुइट मिशनका इस देशमें आगमन हुआ। उस समय बहुतसे लोगोंने ईसाई धर्मका अवलम्बन किया और जापानी शिक्षाकी अवज्ञा कर वैदेशिक ग्रन्थ पढनेमें दत्तचित्त हुए। जापानी सरकारको वैदेशिकजातिके संस्पर्शसे जातीय शक्तिकी शिथिलता उत्पन्न होनेकी आशङ्का हुई, अतएव स्पेन और पुर्तगालके मनुष्य वहांसे निकाल बाहर कियेगये।

उस समय केवल ओलन्दाज लोगोंको नागासाकीमें रहनेकी आज्ञा मिली। विदेशीग्रन्थोका जापानमे आना बन्द हुआ। उसी समयसे जापानके लोग

आग्रहके साथ साहित्य और दर्शनकी आलोचनामें प्रवृत्त हुएहैं । जिस समय इङ्गलैण्ड अमेरिका और रूसवासीलोग धीरे धीरे इस ओर अग्रसर होरहेथे, उससमय जापानीलोगोंने भूगोल और चिकित्साशास्त्रका अध्ययन आरम्भ कियाथा ।

पन्द्रहवीं शताब्दीमें जापानमें केवल एक मात्र शिल्पस्कूल था । सोलहवीं शताब्दीमें सामुदाई जातिका "जो" नामक एक नाटक प्रकाशित हुआ । "तोकूगाला सोगुन" के समयमें जापानके अनेक स्थानोंमें गान, नृत्य, धनुर्विद्या, युयुत्सु आदि शिक्षाओंका प्रबन्ध हुआ । किन्तु इस समय युद्धविद्याके प्रति अधिकतर आग्रह प्रदर्शन करनेके कारण शिल्पविद्याकी चर्चा प्रायः स्थगितही होगयी । सिंहासनारोहणके बादही वर्तमान सम्राट्ने शिक्षाविभागके संस्कार करनेका दृढ संङ्कल्प किया । उन्होंने कहा कि पाश्चात्य जातिकी शिक्षाका प्रवर्तन कर उसी शिक्षाके बलसे उनलोगोंको दूर रक्खाजावेगा;वस्तुतः अब वैसाही हुआ । प्रायः चालीस वर्ष पहले जो राजविद्रोह हुआथा उसके उपशमित होतेही जापानीदलके दल अमेरिका और यूरुपमें जाकर भिन्न भिन्न देशीय शिल्प विज्ञान आदिकी शिक्षा ग्रहणकर अपने देशमें लौटआये और स्वदेशोन्नति स्थापन करने लगे । क्रमशः अनेक प्रकारके विद्यालय स्थापित होगये ।

३० वर्ष पहले यह कानून पास हुआथा कि ६ वर्षकी अवस्थाके प्रत्येक बालक अथवा बालिकाको विद्याभ्यासके लिये स्कूलमें अवश्यही भेजना होगा । देखते देखते इस क्षुद्र जापानके बालकोंके लिये दो सरकारी तथा दो बे सरकारी तथा बालिकाओंके लिये एक सरकारी विश्वविद्यालय स्थापित होगये । सैकडे पीछे ९१ बालिका इससमय स्कूलोंमें शिक्षा प्राप्तकरती हैं । केवल अनिवार्यकारणोंसेही दोचार लडके लडाकियोंका पढ़ना लिखना नहीं होता ।

काउण्ट ओकूमाने शिक्षासम्बन्धीय मन्तव्यमें प्रकाशित कियाहै "यद्यपि जापानने शिक्षाविषयमें असाधारण उन्नति की है तथापि चार ऐसे विषय हैं कि जो जापानियोके आशारूप शिक्षालाभमें वाधा डालते हैं । (१) जापानियोंका साहित्य दुर्बल है, चीनियोंकी सहस्रसहस्र अक्षरमाला और साहित्यका जबतक पाठ न कियाजाय, जापानियोंको स्वदेशके विषयमें कुछ ज्ञान नहीं होता । (२) जापानियोंकी लेख्य और कथ्य भाषामें उतना सामञ्जस्य नही है । (३) निजका शिल्प और विज्ञान न होनेके कारण पाश्चात्यजा-

तियोंके शास्त्रोंका अनुवाद कर पढ़ना पड़ता है। (४) नीतिशास्त्रोंका अभाव और शिन्तो, बौद्ध, ईसाई आदि भिन्न भिन्न धर्मोंका प्रचलन। यद्यपि जापानियोंको शिक्षालाभ करनेके अनेक प्रकारके सुभीते हैं, तथापि विद्याविषयमें आजभी जापान भारतवर्षके सम्मुख मस्तक ऊंचा नहीं करसकता। यद्यपि जापानी सरकार शिक्षाके लिये कलेजा तोडकर प्रयत्न कररहीहै तथापि उत्तम रीतिसे शिक्षाविस्तार करनेके लिये सर्वसाधारणकी ओरसे दो बे-सरकारी विश्वविद्यालय खुलगयेहैं। भारतवर्षमें जैसीही सरकारकी सहानुभूति और तैसाही सर्व साधारणका प्रयत्न। जापानकी तुलनासे भारतवर्षमें सरकारकी सहानुभूतिके विना केवल सर्वसाधारणहीके उद्योग और धनसे कमसे कम २० विश्वविद्यालय परिचालित होसकते हैं। जापानी लोग अपने इन विश्वविद्यालयोंद्वारा बढी सुगमतासे अनेक प्रकारकी कार्यकरी विद्याओंका प्रवर्तन करसकतेहैं। जो लोग केवल नौकरी करनेकी अभिलाषासे गवर्नमेण्ट परिचालित विश्वविद्यालयोंकी पुस्तकगतविद्याओंके पाठकरनेमें अपनी आयुका अर्धांश नष्ट कर मानवजीवन निरर्थक करतेहैं. वे यदि इसी मार्गका अवलम्बन करते हुयेभी जापानके तुल्य मान और गौरव प्राप्तकरनेकी इच्छा करें तो यह उनकी भूलही है।

भारतवर्षकी शिक्षित समाजभी थोडे ही प्रयत्नसे स्वप्रतिष्ठित विद्यालयों द्वारा नूतन शिक्षाप्रणाली (वैज्ञानिक) का प्रचार करसकता हैं। जापानका विषयविचार करनेसे सहजही समझा जासकताहै कि, धनकी अपेक्षा इसकार्यमें सर्वसाधारणके उत्साह और उद्यमकी अधिक अवश्यकता है।

जापानमें किसप्रकार वर्त्तमान शिक्षाका क्रमशः विकास होरहाहै एवम् किसप्रकार शिक्षा देनेका प्रबन्ध होरहाहै संक्षेपरूपसे उसका नीचे कुछ वर्णन करते हैं।

सन् १८७१ ईसवीतक शिक्षाविभागके मिनिस्टर कैबीनेटकी सभ्यश्रेणीमेंसे कोई एक होता था। सन् १८७३ ईसवीमें शिक्षाविषयक कानून पास हुआ। कालेज और उच्च तथा निम्न श्रेणीके विद्यालयोंका उस समय प्रवर्तन होनेलगा। स्वयम् वर्तमान सम्राट्ही इस सब कार्यके लिये विशेष अग्रगामी हुए। इस समय सरकारी शिक्षाविभागके लिये एक मिनिस्टर, एक सहकारी मिनिस्टर, साधारण (General), विशेष (Special) एवम् शिल्प (Technical) विभागके लिये स्वतन्त्र स्वतन्त्र तीन डाइरेक्टर, तथा कुछ कौन्सिली, सेक्रेटरी और इन्स्पेक्टर नियुक्त हुए। इसके अतिरिक्त निम्नविद्यालयसमूह जिलेके

शासनकर्त्ताओंके कर्तृत्वाधीनमें एवम् उच्च विश्वविद्यालय, प्रादेशिक शासनकर्ता-ओंके कर्तृत्वाधीनमें रखनेका प्रवन्ध हुआ। देशभरके सब स्कूल और कालेज शिक्षाविभागके मिनिस्टरके अधीन रक्खेगये ।

किण्डरगार्टन—समग्र जापानमें २९४ किण्डर-गार्टन हैं इनमें आजकल २३६७१ वालक बालिका पढती हैं। तीन वर्षसे लेकर पांचवर्षकी अवस्थातकके छात्र पढायेजाते हैं। इन सब पाठशालाओंके शिक्षक और शिक्षयित्री ठीक माबापके समान व्यवहार करतेहैं । यहांके लडके लडकी जिसप्रकार पाठशालाका नाम सुनकर भयभीत होजाते हैं। उनको पढनेके नामहीसे ज्वरसा चढ़ आताहै जापानमें यह दशा नहीं है।घरकी अपेक्षा स्कूलहीमें उनको अधिक आराम मालूम पडता है । वहां उनको निर्दोष गान और खेल सिखलाये जातेहैं। शिक्षक और शिक्षयित्री नाना प्रकारके आमोदजनक किस्से कहानी कहकर अनेक विषयोंकी शिक्षा देडालते हैं। अनेक समय शिक्षक- शिक्षयित्री छात्रोंके साथ घूमनेके लिये बाहर निकलते हैं । लड़के लड़कियां कतार बांधकर जातीय गीत गाते जाते हैं। यह दृश्य बड़ाही मनोहर मालूम पड़ता है । बगीचोंमें लता पता और फल फूल दिखलाकर बातकी बातमें अनेक प्रकारकी शिक्षा प्राप्त होतीहै । छोटे छोटे बालक बालिकाओंको उपदेश और आमोदके बहाने बहुतसे विषयोंका ज्ञान होजाता है ।

भारतवर्षकी तरह जापानमें पण्डितलोग मारपीट नहीं करते । प्रहारके भय-सेही प्रायः बालक लिखी पढी बातकोभी भूलजातेहैं ।

निम्न और उच्च प्राईमरी स्कूल—कानूनके अनुसार प्रत्येक पिता माताको ६ वर्षकी अवस्थामें लड़का हो चाहे लड़की स्कूलमें भेजनाही पडता है। विद्यार्थियोंको निम्न स्कूलोमें चारवर्षतक अध्ययन करना पड़ता है । साधारण गृहस्थको जीवनमें जिस जिस बातकी आवश्यकता होती है प्रायः वे सब विषय स्कूलोमें पढ़ायेजाते हैं। भारतवासीभी जापानके वेसरकारी विश्वविद्या-लयोंकी भांति अपने देशमें विश्वविद्यालय स्थापितकर भिन्न भिन्न देशोंकी शिक्षाप्रणालीकी तुलना कर एक नयी शिक्षापद्धतिका प्रचलन करसकते हैं।अत-एव जापानियोंके पाठ्यविषयोंका कुछ उल्लेख करना नितान्त अप्रासङ्गिक न होगा ।

निम्न प्राईमरी स्कूलोंमें जापानी भाषा नीति,प्रवन्ध,अङ्क, व्यायाम, चित्रविद्या Drawing) गीत और हाथसे नाना प्रकारकी वस्तु प्रस्तुत करना आदि

सिखाये जाते हैं।निम्न प्राइमरीके उपरान्त उच्च प्राइमरी स्कूलोंमें चार वर्षतक पढ़ाई होती है । उपर्युक्त विषयोंके साथ इतिहास, भूगोल एवम् सरल विज्ञानकी भी शिक्षा दीजातीहै । इनके अतिरिक्त प्रत्येक छात्रको कृषिविद्या, वाणिज्य विषयक विद्या, भिन्न भिन्न वस्तु प्रस्तुत प्रणाली और अङ्गरेजी भाषा इन चारों विषयोंमें से कोई एक अवश्य सीखना पडता है । म्युनिसिपालिटी अथवा ग्राम्य समिति एक अथवा अधिक प्राइमरी स्कूल स्थापित कर अपने अपने इलाकोंमें बालक बालिकाओंके शिक्षण का प्रबन्ध करतीहै ।

सन् १९०२ ईसवीमें जापानमें २२०३० निम्न प्राइमरी, एवम् ६९५१ उच्च प्राइमरी स्कूल थे । छोटे छोटे गांवोंमें निम्न प्राइमरी स्कूलके बालकोंको =)॥ एवम् नगरोंके विद्यार्थियोंको ।-) महीना देना पडताहै । एवम गांव और शहरके उच्च प्राइमरीके विद्यार्थियोंको क्रमसे ।≡)॥ और ॥≡) देनापडता है । शिक्षकोंको योग्यतानुसार २० शिलिंगसे १० पाउण्डतक वेतन मिलता है । दक्षताके साथ १५ वर्षतक काम करनेसे पेन्शनका अधिकारी समझा जाता है ।

मृत्युके उपरान्त भी परिवारकी सहायताके लिये कुछ कुछ पेन्शन मिलती रहती है । सन् १९०२ ईसवीमें १०२७०० मनुष्य प्राइमरी स्कूलोंमें शिक्षकता करते थे और निम्न शिक्षाके निमित्त ४४७२३६१० रुपये खर्च हुये थे ।

मध्यस्कूल—जापानमें सब मिलाकर ४० जिले हैं ।(फार्मोसा द्वीप सहित)प्रत्येक जिलेमें कमसे कम एक मध्यस्कूल है,इनके अतिरिक्त और भी कितने ही मध्य स्कूलोमें सरकारी पद्धतिके अनुसारही शिक्षा दी जातीहै और वे उसी सरकारी क्रमके अनुकूल प्रचलित होतेहैं।मध्यस्कूलमें छात्रको५वर्षतक पढ़ना पड़ताहै।इन स्कूलोंमें जापानीभाषा, चीनभाषा, और अङ्गरेजी, फरासी, अथवा जर्मनभाषा, इतिहास, भूगोल, अङ्क, प्रकृतिविज्ञान, रसायन विद्या, पदार्थविद्या, पोलिटिकल ईकानामी (Political economy) ड्राइङ्ग, व्यायाम, एवम् दैनिक क्रियाकलापमें व्यवहारोपयोगी आईन इत्यादि पढाये जातेहै । दस वर्ष पहले समग्र जापानमें ६३ मध्यस्कूल थे । १९०२ ई० में उनकी संख्या २९२ तक होगयी । उनमें ३४ वे सरकारी स्कूल थे । उसवर्ष १०२३०४ विद्यार्थी मध्यम स्कूलोंमे पढ़ते थे और मध्यस्कूलोके लिये १३८२१०० रुपया खर्च पडाथा ।

उच्च विद्यालय (High-school) ।—जो लोग कालेजके भिन्नभिन्न विभागोंमे पढ़नेकी इच्छा करतेहैं वे लोग इन स्कूलोंमें तीन वर्षतक विशेष विशेष

विषय अध्ययन करते हैं। समग्र जापानमें ८ सरकारी उच्च विद्यालय हैं। इस प्रकारके स्कूल अमेरिका अथवा यूरुपमें नहीं हैं। प्रत्येक स्कूलकी तीन शाखा हैं।

(१) आईन, साहित्य, मनोविज्ञान आदि।
(२) ऐञ्जिनियरिङ्ग, कृषिविद्या और विज्ञान।
(३) चिकित्सा विद्या।

कालेजमें इन तीन विषयोंमेंसे इच्छानुसार छात्र चाहे जौनसा विषय पढसकताहै। तीनवर्षमें एकप्रकार मोटा मोटा ज्ञान प्राप्त होजाताहै। इन स्कूलोंमें प्रत्येक छात्रको अङ्गरेजी फरासी और जर्मनी इनमेंसे कोईभी दो भाषा सीखनी पड़तीहैं। भिन्न भिन्न विदेशी भाषाओंकी शिक्षा देनेके लिये जापानमें २४ विदेशी शिक्षक हैं। सन् १९०३ ईसवीमें ४७८१ छात्र विद्याभ्यास करतेथे और उच्चविद्यालयोंके लिये ५९१३५० रुपया खर्च हुआ।

सरकारी विश्वविद्यालय-(Imperial university) ये हमारे विश्वविद्यालयोंके समान नहीं है। प्रत्येक यूनीवर्सिटीमें एक एक विभागका एकही एक कालेज है। विश्वविद्यालयके सब कालेज एकही स्थानमें अवस्थितहैं। केवल स्थानके अभावसे एक कृषिकालेजही नगरके एक कोनेमें रखागयाहै। भिन्न भिन्न विभागके कालिजोंको छोडकर विश्वविद्यालयके मध्यमें एक हाल है। उसमें भिन्न भिन्न विषयोंकी कक्षाएँ हैं।

सुशिक्षित ग्राजुएटगण (as Post graduates) वहां अनेक प्रकारके वैज्ञानिक विषयोंकी चर्चा आलोचना किया करतेहैं। जो मनुष्य कोई नया आविष्कार करताहै उसको डिग्रीभी मिलती है। सरकारी तीन विश्वविद्यालय हैं. दो बालकोंके लिये और एक बालिकाओंके लिये। बालकोंकी एक यूनीवर्सिटी किउटा नगरमें है। दूसरी दो टोकियो शहरमें है। इनके सिवाय और दो सर्वसाधारणके विश्वविद्यालय हैं। टोकियोमें आईन, साहित्य, एञ्जीनियरिङ्ग, कृषि, विज्ञान एवम् डाक्टरी कालेजभी हैं। किउटामें कृषिकालेजके अतिरिक्त और सब प्रकारके कालेज हैं।

पहले जापानके उत्तरस्थित होकाईदो द्वीपमें (Yesso Island) अल्पसंख्यांक कतिपय असभ्यजातिके मनुष्य वास करतेथे। सरकाने भद्रमनुष्योंके वासोपयोगी बनानेके लिये स्थान स्थानमें नगर निर्माण कियेहैं। छाप्पोरा इस द्वीपकी राजधानीहै। सन् १८७६ ईसवीमें सरकारने इस नगरमें इम्पिरियल

कृषिकालेज स्थापित किया। यही कालेज जापानमें प्रथम कालेज था। इसके ८।९ वर्ष उपरान्त जापानमें अन्यान्य कालेज स्थापित हुए। यूनाईटेडस्टेटके अन्तर्गत मासेचूस्टेट्स् (massachustates) कृषिकालेजके प्रेसीडेण्ट डाक्टर विलियम स्मिथ क्लार्क, छाप्पोरा कृषिकालेजके प्रथम प्रिन्सीपल होकर आयेथे।वे औरभी कई अमेरिकन प्रोफेसरोंको अपने साथ लायेथे, मिस्टर क्लार्कने जापानमें ठीक अमेरीकाकी प्रणालीपर कालेज स्थापना की।यह इम्पीरीयलकृषिकालेज ही जापानमें सर्वप्रधान कृषिकालेज है। इस समय विदेशी प्रोफेसर एकभी नहीं है।इस कालेजमें अब १५ प्रोफेसर१३सहकारी प्रोफेसर, तथा ९ व्याख्याता और एडमिनिस्ट्रेटर हैं। प्रोफेसर गण प्रायः सबही यूरोपियन और अमेरिकन यूनिवर्सिटीके शिक्षा प्राप्त हैं। १५ प्रोफेसरोंमेंसे ९ जर्मनी और अमेरीकाके वैज्ञानिक डाक्टरहैं [D.S.C.] हमारे २ भारतवासी आजकल वहां शिक्षालाभ कररहेहैं।

प्रथमतः वैदेशिक प्रोफेसरोंको लाकर ही सब कालेज खोलेगयेथे। वर्तमान समयमें जापानभरमें १० से अधिक वैदेशिक प्रोफेसर न होंगे।

डाइरेक्टर साहबने अन्यान्य देशीय कालिजोंके साथ जापानी कालिजोंकी तुलना कर इसप्रकार अपना मन्तव्य प्रकाशित किया है। The equipment of the university of Japan can fairly bear comparison with those of the famous Universities of Europe and America and the Standard of instruction is also as high.

सरकारी यूनिवर्सिटीके प्रेसिडेण्ट भिन्नभिन्न विभागीय कालिज समूहोके डाइरेक्टरोंके साथ परामर्श कर विद्यालयोंके यावतीय कार्य निर्वाह करते हैं। टोकियो विद्यालयमें १०० प्रोफेसरहैं। किउटामें इससे कुछ कम हैं इसके अतिरिक्त सहकारी प्रोफेसर और डिमोंस्ट्रेटर भी यथेष्ट हैं।

आईन एवम् डाक्टरीकालिजोंमें ४ वर्ष पढ़ना पड़ताहै। और और कालिजोंमें तीनही वर्षमें पढ़ाई समाप्त होजातीहै।

सन् १९०३ ईसवीमें कालिज विभागमें ४०७६ विद्यार्थीथे। कालिजोके लिये सरकारका उस वर्ष ३९७४५४९ रुपया व्यय हुआथा। यूनिवर्सिटी स्थापित होनेके समयसे लेकर सन् १९०३ तक ५९०० विद्यार्थियोंने ग्राजुएटकी डिगरी प्राप्त की। अब प्रतिवर्षप्रायः ९००से ऊपर विद्यार्थी यूनिवर्सिटी अर्थात् कालिज विभागके ग्राजुएटका पद प्राप्त करते हैं।

आईन कालेज-तीनवर्षतक आईन अध्ययन करनेके उपरान्त परीक्षामें उत्तीर्ण होनेसे होगाकुशीकी उपाधि मिलतीहै । भारतवर्षकी यूनिवर्सिटी परीक्षाकी भांति जापानमें सैंकडे पीछे २० । २५ ही विद्यार्थी पास नहीं होते । प्रतियोगिता परीक्षाको छोडकर सैंकडे पीछे ९९ विद्यार्थी परीक्षोत्तीर्ण होतेहैं । यदि कोई विद्यार्थी शारीरिक अस्वस्थताके कारण यथारीति कालिजमें उपस्थित न होसके तो उसको पुनरपि एकवर्ष कालिजमें उपस्थित होकर ग्राजूएट होना पडताहै ।

कालिजोंमें कार्यकारी विद्याके कारण (Practical) सब विद्यार्थियोंको अच्छीतरह ज्ञान होजाताहै । होगाकुशी होनेके उपरान्त वकालत कीजातीहै । कोई कोई होगाकुशी स्टेट परीक्षा पास करनेके उपरान्त नो-हो-गाकुशी पदको प्राप्त करतेहैं । नो-हो-गाकुशी होनेपर कोई जज और कोई राजदूतका काम करनेलगतेहैं (Diplomatic Service-Such as Consul Legation&

डाक्टरीकालिज-जापानमें ९ प्रकारके एञ्जिनियरिङ्ग कालेज हैं । यथा-(१) सिविल (civil); (२) जलसेना विभागीय (Naval); (३) मेकेनिकल (Mechanical) [४] युद्धास्त्रनिर्माणविषयक; [५] इलेक्ट्रिक (Electric) (६) स्वास्थ्यविद्याविषयक; (७) एक्सप्लोसिव (Explosive) अर्थात् गोलीबारूद निर्माणविषयक (८) रसायनविद्याविषयक और [९] खनिजाविद्याविषयक । एञ्जीनियरलोगोंको को-गाकुशीकी उपाधि मिलतीहै । जापानीलोगोंने एञ्जीनियरिङ्ग विद्यामें असाधारण नैपुण्य प्राप्त कियाहै । जापानमें एञ्जिन एवम् युद्धके जहाज आदि सब वहाँ तयार होतेहैं ।

साहित्य कालेज-यहां जपानी, चीनी, अंगरेजी, फरासी, जर्मन, साहित्य और व्याकरण जुदे जुदे देशोंका इतिहास और मनोविज्ञान आदिकी शिक्षा दीजातीहै । जो अन्तिम परीक्षामें उत्तीर्ण होता है उसको वान-गाकुशीकी उपाधि मिलती है ।

विज्ञान कालेज-इस कालेजमें अङ्क, ज्योतिषशास्त्र, प्रकृतिविज्ञान, रसायन विद्या, उद्भिद विद्या, जीवतत्त्व, (Zoology) एवम् भूतत्व विद्याकी शिक्षा दीजातीहै ।

कृषिकालेज-भारतवर्षमें कृषिकार्यके लिये अत्यन्तही उपयोगी क्षेत्र हैं ।जापान भारतवर्षसे वहुत छोटाहै, परन्तु जापानमें कृषिकार्यकी उन्नतिके लिये जिन उपायोंका अवलम्बन किया जाताहै भारतवर्ष वडा होनेपरभी यहां इसकी ओर

कुछ ध्यान नहीं है । जापानी लोग पत्थरमिली हुई मिट्टीमें यहांकी अपेक्षा तिगुना अनाज पैदा करते हैं । भारतवासी अनेक प्रकारके प्रतिबन्ध बतलाकर शिल्प वाणिज्यसे हताश हो बैठे हैं । अथच कृषिकार्यकी उन्नतिके विषयमें भी शैथिल्य ही करतेहैं । जापानमें सरकार अनेक प्रकारसे कृषिकार्यकी उन्नतिके लिये सहायता करतीहै । तीनसौ कृषितत्त्वज्ञ नाना प्रकारके उपदेश देते हुए समग्र जापानमें फिरते रहतेहैं।ये लोग भूमि और सारकी परीक्षा करदेतेहैं।वृक्षोंके रोगोंके प्रतीकार बतलादेतेहैं । प्रत्येक जिलेमें एक एक आदर्श कृषि क्षेत्र होताहै । कृषि कार्यकेलिये सरकार बेहद द्रव्यव्यय करतीहै । यह सम्भवहै कि भारतसरकार भारतवासियोंकी कृषिकार्य उन्नतिके लिये इतनी सचेष्ट नहीं होती, किन्तु यदि देशिय राजा महाराजा एवम् जमींदारलोग अपने अपने इलाकोंमें कृषिकार्यकी उन्नतिके लिये थोडा बहुत प्रयत्न करें तो एक मात्र कृषिकार्य द्वाराही अन्यदेशोंके शिल्प वाणिज्यको परास्त करसकतेहैं । हमारे देशसे अब भी जितना धान्य, सन और कपास अन्य देशोंको भेजाजाताहै वह नितान्त कम नहीं है।वैज्ञानिक प्रणाली से कृषिकार्यकी भी कुछ व्यवस्था किये जाने पर इससे भी अधिक उन्नति हो सकती है ।

जापानमें दो कृषिकालेजहैं । यह कालेज शिवपुर कृषिकालेजके समान नहीं हैं । अजस्र धन व्ययकरके भारतवर्षमें औरभी जो कालेजका प्रबन्ध होरहाहै उसमेंभी हमको सन्देहहै कि वास्तवमें कोई कार्यकरी विद्या सिखायीं जायगी अथवा नहीं । जापानके कृषिकालेजके ४ विभागहैं । (१) कृषितत्त्व (२) कृषिविषयक रासायनिकविद्या (३) वनविभागीय कृषिविद्या (४) पशुचिकित्सा । प्रथम दोविभागोंमें उत्तीर्ण होनेसे लोगाकुशीकी उपाधि मिलतीहै । स्थान स्थानमें विद्यार्थियोंकी शिक्षाके लिये प्रशस्त आबादीभूमि और बन है। एक कालेजकी आबादी भूमि (farm) एवम् बनकी पैमायश क्रमसे १५६७४ और १३०६३० एकड़ है ।

यूनिवर्सिटी कहनेसे जापानमें उल्लिखित कई एक कालिजोंसेही मतलब होता है । स्कूल समूह यूनीवर्सिटीके अन्तर्गत नहींहैं ।

नार्मलस्कूल । नार्मलस्कूल दो प्रकारके होतेहैं । निम्न और उच्च । निम्न नार्मलस्कूलमें प्राइमरी स्कूलोंके शिक्षकगण एवम् उच्चनार्मलस्कूलमें मध्य विद्यालयके शिक्षकगण अध्ययन करते हैं । पुरुषोंको चारवर्ष और स्त्रियोंको तीनवर्ष तक पढ़ना पड़ताहै । किस प्रकार शिक्षकताकाकार्य दक्षताके साथ किया

जाताहै वही यहां सिखलाया जाताहै । स्त्रियोंको अन्यान्य विषयोंके साथ सिलाई करना और भोजन बनाना एवम् नानाप्रकारके गृहकर्म्मोंकी शिक्षा दीजातीहै।प्रत्येक जिलेमेंही कमसे कम एक नार्मलस्कूलहै । लड़के और लड़कियोंकी जुदी जुदी स्वतन्त्र कक्षाएँहैं।किसी किसी जिलेमें स्कूलही स्वतन्त्र हैं । नार्मलस्कूलोंके विद्यार्थियोंका खर्च सरकारही वहन करतीहै।विद्यार्थीका पाठ समाप्त होनेपर यथोपयुक्त वेतन पर प्रायमरी स्कूलकी शिक्षकता करनेके लिये वह बाध्य है । निम्न स्कूलके छात्रगण१०वर्षतक उच्च स्कूलके ७ वर्षतक एवम् स्त्रियां ५ वर्षतक कार्य करनेके लिये प्रतिज्ञावद्ध होती हैं ।

जापानमें ५४ निम्न नार्मल स्कूल हैं । पुरुषछात्रसङ्ख्या ११९०० एवम् स्त्रीसङ्ख्या २००० है । सन् १९०२ ईसवीमें इन स्कूलोंके लिये ४९३१९६० रुपये व्यय हुएथे । उच्च नार्मलस्कूल एकमात्र टोकियोमें ही था । सन् १९०२ ईसवीमें शिवोशिमामें एक और स्थापित हुआ है । सन् १९०३ ईसवीमें दोनों उच्च नार्मलस्कूलोंके लिये सरकारनें ८८२६० रुपये व्यय किये ।

उपर्युक्त स्कूल कालिजोंके अतिरिक्त ५ डाक्टरीस्कूल एक वैदेशिक भाषाविद्यालय एक शिल्प और एक सङ्गीत विद्यालय थोडेही दिनके बीचमें स्थापित होगये हैं । विशेष विशेष और विषयोंके लिये स्वतन्त्र स्वतन्त्र स्कूल हैं । जापानमें ऐसे ५७ स्कूल हैं । उनमें बेसरकारी ४५ हैं । इन सब स्कूलोमें इससमय १४५७३ विद्यार्थी पढते हैं । सन् १९०२ में इनके निमित्त ९७९५७५ रुपये व्यय हुएथे ।

टेकनीकल् स्कूल—टेकनीकल् स्कूलोंहीके कारण जापानमें इतनी शीघ्रगतिके साथ शिल्पवाणिज्यकी उन्नति हुई है । १९०२ ईसवीमें जापानमें ३९२ टेकनीकल् स्कूल थे । और उनमे ३४६६५ विद्यार्थी पढ़ते थे । उससालमें टेकनीकल् स्कूलोंके लिये ३४२३२१० रुपये खर्च हुएथे ।

इन्हीं दोवर्षके भीतर टेकनीकल् स्कूलोंकी सङ्ख्या औरभी बढ़गयीहै । उच्च टेकनीकल् स्कूल जापानमें ७ हैं । उनमेंसे २ कृषितत्वविषयक, दो वाणिज्यविषयक, और तीन अनेक प्रकारकी वस्तु बनानेकी शिक्षा देनेकी लिये हैं । इन उच्च विद्यालयोंमें सन् १९०३ में २९७२ विद्यार्थी पढ़ते थे और १२०७२० रुपये खर्च पड़े थे । इनमेसे सकारनें ४८००० रुपयेकी सहायता कीथी ।

सन् १९०२ में उल्लिखित स्कूल कालेजोंके सिवाय और अनेक विषयोंके १४७४ स्कूलथे । ते अधिकांशभी सर्वसाधारणके प्रयास और सहायतासे

चलतेहैं । सरकारका उनसे कुछ सम्बन्ध नहींहै । १५ विद्यालय अन्धे बहरे और गूंगोंकेहैं और ५० लाईब्रेरीहैं । सारांश यहहै कि शिक्षाविस्तारके साथ साथ जापानमें सब प्रकारकी उन्नति बढ़ रहीहै । छात्रसाहाय्य समिति नामक यथेष्ट सभासमितिहैं । इन समितियोंद्वारा दरिद्र विद्यार्थियोंके अध्यनका प्रबन्ध होताहै । जब वे पढ़ लिख जातेहैं और धन उपार्जन करने लगतेहैं तो अपना ऋण चुकादेते हैं अर्थात् जिस समितिसे रुपया उधार लेकर उन्होंने विद्याभ्यास कियाहो उसको वे सबरुपया चुकादेतेहैं । कोई कोई समिति कुछ सूदभी लेतीहैं और कोई बिलकुल नहीं लेती ।

युद्धविद्याकी शिक्षाके लिये भी अनेक स्कूलहैं । कितनेही स्थानोंमें युद्ध एवम् युयुत्सु (जियुजित्सु Jiyu Jitsu) × सिखानेके क्लबहैं । कियुटानगरमें एक क्लबहै उसके मेम्बरोंकी संख्या ५५०००० है । बारी बारी से वे लोग एक सप्ताहमें २ दिन पृथक् २ दल बांधकर गोला बारूद और बन्दूक तलवार आदिसे युद्धविद्या सीखाकरतेहैं । हमारे देशके बालक धूल मिट्टीसे खेला करतेहैं, परन्तु जापानके बालकोंका खेलना औरही प्रकारका होताहै ! वे लोग दलबांधकर सेना सजाकर परेट करते हैं और जातीय सङ्गीत गाते हुए बिगुल (Bugle) बजाते हुए झण्डियोंके इशारेसे किसी निर्दिष्टस्थान पर उपस्थित होतेहैं । एक दल दूसरे दलोंपर धावा करताहै और हारजीत भी होतीहै । विजयी दल पराजित दलको कैद करदेताहै, फिर उनका नेता दूसरे दलवालों पर कृपाकर उनको मुक्तकरदेताहै । जापानके अनेक स्थानोंमें छोटे छोटे बहुतसे पहाड़हैं । एक दलपहाडके ऊपर जाकर कागजका किला प्रस्तुत करताहै दूसरा उसपर आक्रमण करताहै. पश्चात् दोनों दलोंमें घोर युद्ध होताहै । पटाखोंकी बन्दुक और बांसकी लाठियांही इनके अस्त्र शस्त्र होतेहैं । क्रमशः नीचेवाला दल ऊपरके दलको हरादेताहै और दुर्गपर अपना अधिकार जमालेता है । कभी कभी किलेमें आगभी लगादीजातीहै। प्रायः दो एक बडी उमरवाले मनुष्यभी बालकोंके युद्धका प्रबन्ध करनेके लिये उनके साथ होलेतेहैं । हमारे देशमें यदि कोई इस प्रकारका खेल खेले तो उसको दण्ड होताहै, परन्तु जापानमें छोटे छोटे बालकभी इस प्रकारके खेलोंसे कष्टसहिष्णु होजातेहैं ।

स्त्रीशिक्षा—भारतवर्षमें स्त्रीशिक्षाके विषयमें बहुतोंकी बहुतसी रायहै । कोई कहताहै स्त्रीशिक्षासे देशका उपकारहै और कोई कहताहै अपकारहै । किन्तु

× इसका कुछ विवरण आगे चलकर दियाहै ।

जापानमें स्त्रीशिक्षाने जो वहांके निवासियोंका इष्टसाधन कियाहै वह भली भांति जाना जाताहै । हमारे देशकी स्त्रियोंकी भांति वहांकी स्त्रियां अन्धकारमें आबद्ध प्राय कूपमण्डूककी भांति नहींहैं । उनके द्वारा देशका बहुतसा कार्य साधित होताहै । कितने एक स्कूलोंको केवल स्त्रियांही चलातीहैं । उनकी सभासमितिभी बहुतहैं । कितने सम्वादपत्र उनके द्वारा परिचालित होतेहैं । पोष्टआफिस, रेलवे आफिस, और सौदागरी आफिसोंमें स्त्रियां कितनी दक्षतासे काम चलाती हैं । साधारण दुकानदार प्रायः स्त्रियां हैं । पुरुषलोग कलकारखाने और अपने अफिसोंमें जातेहैं. स्त्रियां अपनी दुकानदारीका काम करतीहैं । कोईभी घड़ीभर व्यर्थ नहीं बैठी रहती । सबको अपने अपने कामकी धुन लगी रहतीहै ।

सन् १९०० ईसवीसे पहले तक स्त्रियोंके लिये कोई यूनीवर्सिटी नहीं थी, किन्तु सन् १९०० इसवीके अपरैलके महीनेमें कालेज स्थापित हुए और यूनीवर्सिटी बनगयी । सन् १९०३ ईसवीमें १२० स्त्रियां पहले पहल ग्रेजूएट हुई । १९०२ ईसवीमें जापानमें स्त्रियोंके १० उच्चस्कूल थे । (Girls High School) इन सब स्कूलोंमें उस वर्ष १७५४० बालिकाऐं पढती थीं । उस सन्में इनका व्यय कुल १९७२३९५ रुपये हुआथा ।

सन् १८७१ ईसवीमें स्त्रीशिक्षाका प्रबन्ध सबसे पहले हुआथा । उससाल शिक्षाकेलिये कितनीही स्त्रियां अमेरिका भेजी गयींथीं । वे कितनेही दिन अमेकामें रहकर विद्याभ्यास करनेके उपरान्त जापानमें लौट आयीं । इनमेंसे एक ऐडमिरल ऊरिऊ और एक मार्शलमारक्विस वियमारकी पत्नी थी ।

कुछ जापानी शिक्षिता रमणी मङ्गोलिया श्याम और चीनमें शिक्षयित्रीका काम करतीहैं । मिस यासुई नामकी एक जापानी रमणीको श्यामकी रानीने अपनी शिक्षयित्री बनायीहै । इसने इङ्गलैण्डमें शिक्षा प्राप्त कीथी ।

केवल एक टोकियो नगरमेंही बालिकाओंके डाक्टरी, जर्म्मन, टेकनीकल, कृषि, वाणिज्य, चित्र और सङ्गीत आदिके ७३ स्कूल हैं । उनमेंसे २० स्कूल केवल स्त्रियोंद्वारा परिचालित हैं । वैदेशिक मिशनरीयोनेभी टोकियो, यकोहामा, नागोइया, ओशाका, कोबे, और कियोटा तथा अन्यान्य नगरोंमें अनेक स्कूल स्थापित करदिये हैं ।

दातव्य अस्पताल जापानी स्त्रियोंकी शिक्षा विषयक समिति, (Japanese Ladies Educational Society); रोगी परिचर्य्याकी विशेष समिति (Special society for nursing the sick,) स्त्रियोंकी स्वास्थ्य विषयक समिति—

(Ladies sanitry society)मातृ पितृ हीन बालिकाओंके लिये समिति (Ladies' orphan society)शिशु सन्तान आदिके प्रतिपालन करनेकी समिति (society for nursing the infants) तथा और भी कितनी ही बडेबडे काम करनेवाली समिति केवल स्त्रियों द्वारा परिचालित होतीहैं । स्वयम् जापानकी महारानी भी कितनी ही समितियोंकी प्रेसिडेण्ट हैं ।

टोकियोंमें लार्ड बैरन आदि प्रधान प्रधान लोगोंकी स्त्रियोंके लिये एक स्वतन्त्र विद्यालय है । नोबिलवंशीय स्त्रियोंके अतिरिक्त और भले आदमियोंकी स्त्रियांभी वहां पढ़सकती हैं. यह विद्यालय स्वयम् महारानी द्वारा परिचालित होता है ।

स्कूलमें पढ़नेवाली स्त्रियां सबके सामने अनेक प्रकारकी क्रीड़ा दिखलाती हैं । महाराजके कुटम्बकी स्त्रियां भी और और स्त्रियोंके साथ क्रीड़ाक्षेत्रमें उपस्थित होती हैं । अनेक आमोदजनक क्रीड़ाओंमेंसे युद्धक्षेत्रका खेलही सर्व प्रधान लिखने योग्य है।युद्धक्षेत्रमें रक्ताक्त कलेवर घायल गिरे हुए सैन्योंके प्रति रेडक्रास सोसाइटीका क्या कर्तव्य है यह घराने घरोंकी स्त्रियां दिखलातीं हैं।युद्धमें घायाल होकर कोई सिपाही पृथ्वीपर गिरजाता है और तड़फने लगताहै।उसी समय एक पासवाली स्त्री झण्डा खड़ा कर सूचित करती है कि यहां कोई मनुष्य घायल होगया है और उसकी सेवा शुश्रुषाकी आवश्यकता है । इधर उधरकी स्त्रियां तत्काल दौड़कर वहां आपहुंचती हैं कोई पट्टी बांधती है। कोई उसकी हवा करती है, कोई औषध खिलाती है और कोई मस्तक पर बरफका पानी डालती है । आहत मनुष्यको स्त्रियां एक डोलीमें डालकर एवम् अपने कन्धों पर रखकर डेरोंमें लेजाती हैं । दूसरे मनुष्यको जिसके कम चोट लगी हो सहारा देकर धीरे धीरे सावधानीसे लिवालेजाती हैं ।

स्त्रियोंको भी अपने देशकी सेवा करनेकी कितनी लालसा रहतीहै यह इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है । आवश्यकता पड़ने पर देशरक्षक योद्धाओंकी सेवा करना मानों वे सीखरखती हैं । धन्य है जापान ! जिस देशके बालक युवा वृद्ध और रमणी सभी अपने देशकी सेवा करनेको इस भांति अपना कर्तव्य समझते हैं । वहां जो कुछ भी उन्नति हो वही थोड़ी है ।

मार्शियोनेस ओयामाने अपनी युद्ध विवरणीमें लिखाहैः—स्त्रीजातिके ऊपर जापानकी बहुतसी उन्नति निर्भर है । जिन देशोंकी राजकन्याओंको रूमालके सिवाय और जरासी चीजकाभी बोझ मालूम होताथा । जो दो चार परिचारिकाओंके बिना कभी घरसे बाहर नहीं निकलती थीं।जिनको दूध मलाई और मक्खन

से भी अरुचि मालूम होजाती थी, वही राजकन्या आज बैग (थैला) हाथमें लिये भूखी प्यासी दोदो चार चार दिनकी जगी हुई अकेली पर्वतों पर और वनों में घायल सैन्योंकी सेवा शुश्रूषाके लिये घूमती फिरती हैं।

पिताकी अपेक्षा माताके ही दोष गुणोंका सन्तानपर अधिक प्रभाव पड़ता है। मनुष्यका जो कुछ भी गुण है वह सब जापानी स्त्रियोंमें पाया जाता है। ऐसी माताओंके गर्भमें जन्म लेकर जापानी लोग स्वनाम धन्य महापुरुष क्यों नहीं गिने जावेंगे।

जापानी स्त्रियां शिल्प और चित्रविद्यामें सिद्ध हस्ता होती हैं। स्कूलमें सिखलानेके भी ये प्रधान विषय होते हैं, युद्धके समय एक उच्च स्कूलकी वालिकाओं-ने विसूचिका आक्रान्त रोगियोंके लिये १००००कमरवन्द तयार करके भेजेथे। उसके उपरान्त भी उन्होंने सैन्योंके लिये १०००० जोड़ी मोजे भेजनेका प्रबन्ध किया. जापानी स्त्रियां लक्ष्मीस्वरूप होती हैं। कोईभी वस्तु नष्ट नहीं होने देती। रसोईमें बच हुए चांवलोंको भी सुखाकर युद्धकी सहायताके लिये रख छोडती हैं.समयपर यह इतने एकत्रित होजाते हैं कि इनसे वास्तवमें वहुतसा धन वचजाता है। पाठक अनुमान कर सकते हैं कि जापानके सब घरोमें वर्षोंके सञ्चित किये चावल कितने होंगे।

गत ३० वर्षमें स्त्रीशिक्षाही क्यों प्रत्येक विषयमें जापानने जो दृष्टान्त हमारे सम्मुख उपस्थित किया है यदि इससे भी हमारी निद्रा भङ्ग न हो तो उन्नतिकी आशा रखना व्यर्थ है। जापानियोंकी लगातार उन्नति देखकर स्वयम् ही यह मनमें होतीहै कि भारतवर्ष दरिद्र है। इसी कारण भारतकी एक जाति नहीं गिनी जाती। जवतक भारतवासी राजा, प्रजा, धनी, दरिद्र स्त्री, पुरुष जन साधारण एकप्राण होकर स्वदेशके साथ प्रेम करना न सीखेंगे,जवतक वे अपनी ही स्वतन्त्र शिल्प, वाणिज्य, विज्ञान आदिकी शिक्षाका सुप्रबन्ध न करेंगे तबतक देशकी उन्नतिके पास भी न फटकेंगे। उलटा कुफल यही होता रहेगा कि कङ्गाल भारतवासी अपनी हड्डियोंको चूर कर अपने परिश्रमसे विदेशियोंको धनी करते रहेंगे। दुर्भिक्ष, अन्नकष्ट, जलकष्ट और व्याधि सदाके लिये अपना अड्डा वना लेगा। मनुष्य स्वयम् अपने स्वार्थको जितना समझता है दूसरा कौन समझेगा। क्या कोई दूसरा अपने स्वार्थकी हानि कर हमारी उन्नतिका उपाय निर्धारित करेगा? हमारे देशमें वैदेशिक गवर्नमेण्ट है उनके धर्म, समाज, आचार, रीति, नीति, पद्धति, यहांतक कि

उनके देशकी आव हवा भी हमारे देशकी आव हवासे भिन्न है। अतएव अनेक विषयोंमे मतभेद होसकता है. स्वयम् हमही लोग जिस समय अपनी दरिद्रता दूर करनेका उपाय निकालेंगे तबही हमारा कल्याण होसकता है । अन्य-देशवासी भारतवासियोंको बडी ही घृणाकी दृष्टिसे देखते हैं अतएव हमको चाहिये कि अबसे आगे उनकी दृष्टिमें घृणित न रहें । स्वयम् अपना आत्मोत्कर्ष साधन कर संसारकी दृष्टिमें प्रतिष्ठा प्राप्त करें।

दया ।

अनुकम्पा, प्रीति, औदार्य, प्राणिमात्रपर प्रेम, दया इत्यादि जापानियोंके स्वभावसिद्ध सद्गुण हैं। मनुष्यके हृदयमें जिन भावोंका होना आवश्यकीय है तथा जिन विचारोंसे महत्वकी वृद्धि होती है उनका अधिक आदर होता है। जापानियोंका सिद्धान्त है कि दयाही राजगुण है । जापानी लोग मानते हैं कि राजत्वकी शोभा दयाही है. एवम् सब गुणोंसे पहले दयाकी परम आवश्यकता है, दयासे मनुष्यके स्वभावमें उत्कृष्टता आकर उसको देवतुल्य बनादेती है। यदि दया नहीं है तो मनुष्य और पशुमें कुछ अन्तर नहीं है, अतएव सर्व प्रथम वे उन्होने दयाकीही अपने हृदयमें प्रतिष्ठा कीहै । और इसीसे उनका महत्व और औदार्य दिनदिन बढता जारहा है। राजाकी शोभा उसके मुकुट और छत्रकी अपेक्षा दयासे अधिक है, एवम् उसकी आवश्यकता राजदण्डसे बढकर है। जापानी लोगोंके विचार इस प्रकारके बनानेके लिये उन्हे शेक्स-पीयरकी आवश्यकता नहीं हुई। उपरोक्त सद्गुणोंके कारण जापानमें दंगे, फिसाद, लडाई, झगडे कम होते हैं. इससे उनको अपनी उन्नति करनेका अधिक अवसर मिलता है। जापानी पुरुषोंमें समबुद्धि और न्यायप्रीति जितनी अधिक है स्त्रियोंके स्वभावमें दयाकी उतनी ही अधिकता है।

जापानियोंके हृदयमें दयाका उपयुक्त संस्कार है। गुणकीभी यदि सीमा-अतिक्रान्त कर दीजाय तो वह अवगुणमें सम्मिलित होजाता है । अतएव अनुचित प्रकारसे दया भी कभी कभी निष्ठुरताका उदाहरण खडा करदेतीहै जापानियोंके विषयमे निम्नलिखित उक्ति उनके स्वभावका यथार्थ परिचय देतीहै।

"वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि ।
लोकोत्तराणां चेतांसि को नु विज्ञातुमर्हति ॥"

निर्बल मनुष्यको यदि किसीपर दया आवे तो उसमें वह दया होनेसे किसीको कुछ फल प्राप्त नहीं होसकता। अतएव निर्बल मनुष्यकी अपेक्षा बलवान् और वीर मनुष्यमें दयाका सञ्चार होना उनके महत्वको बढाकर परोपकार भी कर-

ताहै। इस प्रकारके मनुष्य जापानमें होते हैं। मेनसिअसने कहाहै कि, " परोपकार करनेसे संसार अपना होजाता है। जिस प्रकार पानीसे अग्नि बुझजाती है उसी प्रकार परोपकारसे सब आपत्तियां दूर होकर इहलोक और परलोक दोनोंकी भलाई होती है।परन्तु घरमें लगी हुई आग एक कटोरी भर पानीसे नहीं बुझाई जासकती। इसी प्रकार परोपकार भी पूर्ण रीतिसे करनेकी आवश्यकताहै। मेनसियसके कथनके अनुसार सहानुभूतिही परोपकारकी जडहै। परोपकारी मनुष्य दूसरेको संकटग्रस्त देखकर स्वयम् कष्टपाता है। आडमास्मिथने सहानुभूतिकी नींवपर सदाचारकी भींत खडी कीहै। आडमास्मिथके कथनसे पहिलेही मेनसियस अपने सिद्धान्तको स्थिरकर चुकाथा।इसमें कदाचित् आश्चर्य मालूम हो सकता है कि,एक देशके विद्वान्का सिद्धान्त ऐसा अभिन्न होकर एक अन्यदेशके विद्वानके सिद्धान्तसे मिलताहै।परन्तु इसमें आश्चर्यकी कुछ बात नहीं है। यथार्थबात प्रत्येक स्वच्छ वृत्तिके मनुष्यके हृदयमें एकसाही विचार पैदा करतीहै। उदारनीतिके जितने मनुष्य हैं चाहे किसी जाति एवम् देशके क्यों न हों उन सबके सिद्धान्त एकही प्रकारके होगे।स्वार्थपरायण और परोपकारी मनुष्योंके विचारोंमें निःसंदेह भेद होगा।

जापानी लोगोंका सिद्धान्तहै कि दुर्बल, शरणागत अथवा जित मनुष्यपर दया करना प्रत्येक शूरवीर मनुष्यका कर्त्तव्य है। जिन लोगोंने जापानकी चित्रकला कुछ देखी है उन्होंनें एक जापानी संन्यासीका चित्र अवश्य देखा होगा। यह संन्यासी एक वडाभारी शूर वीर और योद्धाथा।इसके भयसे शत्रुपक्षके लोग कॉपते थे। जापानकी इतिहासमें प्रसिद्ध है कि सन् ११८४ ईसवीमें जो सुमानौराकी लडाई हुई थी उसमें इस योद्धाने अपने शत्रुको पकडकर उसके हाथ पैर वांधदिये और उससे नाम पूछा। दूसरा मनुष्य भी एक वीर सन्तान था। उसने अपना नाम वतलानेसे इनकारकिया संन्यासीका नाम कुमागे था। कुमागेको उसकी युवावस्था और वीरभाव देखकर उसपर दया आयी और उसने अपने युवा शत्रुसे कहा कि तू जा अपनी माताका चित्त शान्तकर। यद्यपि तू मेरा शत्रु है परन्तु तेरे वीरभाव और तेरी निर्भय सूरतपर मुझे दया आतीहै। युवापुरुष वोला कि नहीं, मैं तुह्मारा शत्रुहूं तुमसे पराजित हुआहूं अव अपने प्राणोके भयसे दयाभिक्षाकर कायरमनुष्यकी भांति अपने प्राण वचाकर घरभागनेसे अपने माता पिताके निर्मलनाममें कलङ्क लगाना नहीं चाहता। पराजित होकर अथवा युद्धमें हारकर शत्रुकी दयासे वचे हुए प्राण फिर

इस पवित्रशरीरमें रखनेके योग्य न होंगें। यदि मैं पकडा न जाता तो निःसंदेह, अन्त-समयतक युद्धकर अपने शत्रुको पराजित करता या युद्धकरते करते अपने प्राण देदेता। अब मैं स्वयम् हारगयाहूं, शत्रुबन्धनमें पड़ाहूं। इससमय मेरी तथा मेरी जाति और मातापिताकी कीर्ति शत्रुके हाथसे मारेजानेमेंही है अतएव तुम अपने खड्गसे मेरा शिर शरीरसे अलग करदो। कुमागेने उसे बहुत समझाया और कहा कि यदि मेरे साथियोंमेंसे कोई आ जावेगा तो तेरी रक्षा कदापि न होगी। मैं मित्रभावसे तुझे समझाताहूं। अनेक तरहपर समझाने बुझानेपरभी उस युवककी समझमें कुछ न आया और अन्तमें वह मारागया। कुमागेके हृदयपर इस घटनाका इतना प्रभाव पडा कि उसी दिनसे उसने अपने अस्त्र शस्त्र त्यागदिये और संसारविरागी हो जङ्गलमें जा अपनी शेष आयु ईश्वराराधनमें बितादी।

बहुतसे मनुष्योंका यह विचार होगा कि उस युवकने वृथा अपने प्राण खोदिये। अवसर होनेपर भी उसने अपनी रक्षा क्यों नहीं की परन्तु इससे यह प्रतीत होताहै कि जापानी लोगोंमें आदिसेही प्राणोंकी अपेक्षा मानका अधिक आदरथा। अपनी जाति, देश और माता पिताके नाममें कलङ्क लगानेकी अपेक्षा अपने प्राण देदेनाही वे धर्म समझते आयेहैं।

जापानके सातसुमाजिलेमें किसीसमय ऐसा रिवाज था कि वीरश्रीकी अपेक्षा गाना बजाना और सितार तम्बूरेकी शिक्षा वहांके नवजुवकोंको दी जातीथी। गाना बजाना भी रक्तस्राव करनेवाले रणवाद्यसे सम्बन्ध रखनेवाला न था किन्तु हृदयमें प्रेमका संचार करनेवाला मञ्जुल वाद्य था। मञ्जुल वाद्य श्रवण करनेसे कैसाही शूर वीर और उत्तेजित मनुष्य क्यों न हो उसके चित्तकी वृत्ति दूसरी ओर झुकजाती है और विलासप्रियता स्वभावमें कुछ परिवर्तित होजातीहै। स्वदेशरक्षाके लिये जोश और तेजस्विताकी आवश्यकता है। विलासप्रिय होने पर मनुष्यका तेज माराजाताहै। जापानने अपने यहाँकी अनेक कुरीतियोका संशोधन कर ऐसी सब वातें निकालडालीहैं जिनसे मनुष्यके हृदयसे वीरता निकलकर कायरपना और भीरुताका आवेश हो। स्वरक्षणकेलिये व्यसनपरायण और परावलम्वी होनेकी अपेक्षा और कोई अवगुण अधिक हानिकारक नहींहै।

धैर्य।

कनफ्यूअसने कहाहै कि धैर्यके वरावर मनुष्यके द्वारा उसका कार्यसिद्ध करानेवाला और कोई सद्गुण नहीं है। कर्तव्यकर्ममें अवहेलना करनेका अर्थ धैर्य नहीं है किन्तु सहनशीलतापूर्वक मनके आवेगको रोककर सत्य न्याय और प्रमाणि-

कपनेके साथ अपनी उन्नतिकेलिये बाधा विपत्तियोंकी परवाह न कर कार्यमें तत्पर रहनेका नामही धैर्यहै । सङ्कट और दुर्धर प्रसङ्गसे व्याकुल न होना चाहिये किन्तु निष्कारण कार्याकार्यकी विवेचना न कर मृत्युके मुखमें जाना भूल है । जापानी जवानोंकी कल्पना ऐसी निर्मूल नहीं है । सत्य धर्म और देशके लिये यदि प्राणभी जायँ तो वे कुछ दुःख नहीं मानते, किन्तु निरर्थक कामके लिये निष्कारण प्राण खोना कुत्तेकी मृत्युके बराबर समझते हैं।मनुष्यशरीरमें परमात्माने जिस प्रकार बल, पराक्रम और शौर्य उत्पन्न कियाहै उसी प्रकार उनका उचित उपयोग करनेकेलिये बुद्धि दी है । बुद्धिद्वारा सत् असत्का विचार कर मनुष्य अपने पुरुषार्थका प्रयोग करनेसे सुख सम्पत्ति और कल्याण पाताहै ।

मनुष्यके चरित्रपर सत्सङ्ग और कुसङ्गका बडाप्रभाव पड़ताहै । शौर्य, धैर्य, पराक्रम निर्भीकपन, और बहादुरीकेलिये जापानके तरुण विद्यार्थी परस्पर स्पृहा करते हैं और इन गुणोंका अपने गुरुजनोंसे अनुकरण करनेकी शिक्षा पाते हैं। जिस मनुष्यमें इन गुणोंका अभाव होताहै जापानी समाजमें उसका अनादर होताहै । ऐसा मनुष्य असभ्य और दुष्ट समझाजाताहै । प्रत्येक मनुष्यको अपने सद्गुणोंपर अभिमान होताहै, परन्तु इस अभिमानसे वह अपने सहवासियोंका अनादर कर उनको तुच्छ नहीं समझता । इस अभिमानकोही मनुष्यकी उच्चवृत्तिका प्रधान कारण समझतेहैं ।

जिससमय बालक अपनी माताका स्तन परित्याग करताहै उसीसमयसे उसके कानोंमें वीरताकी कहानियां पड़तीहैं। भय क्या पदार्थहै यह जापानी बालक कभी जानताही नहीं है। रोने अथवा मचलनेका जापानी बालकोंमें स्वभावसिद्ध अभावहै यदि जापानी बालकके कहीं कुछ अधिक चोटभी लगजावे तो वह रोता नहीं है। यदि वह कुछ मुँह बिगाड़े तो उसकी माता तिरस्कारपूर्वक कहती है "छिः तूं अभीसे इस जरासी चोटके कारण इतना घबराता है । जब लड़ाईपर चढ़ेगा और तेरा हाथ अथवा पैर टूटजावेगा तो तेरी क्या दशा होगी। तू अपने शत्रुओंके हृदयको किसप्रकार वेध सकेगा । साधुरक्षण तू किस प्रकार करसकेगा" इतना कहते ही बालक अपनी छाती उभारकर अभिमानपूर्वक उछलने कूदने लगता है । कहे विना नहीं रहाजाता—जिस जापानके बालकोंको अपनी जातिकी मर्यादा रखनेके लिये कष्ट सहन करनेका इतना अभिमानहै । जिस जापानी बालकको उसके माता पिता युद्धकी कथा सुनाते सुनातेही पालतेहैं मानों प्रत्येक जापानी बालक अपने देशकी रक्षाकेलिये प्राण देनेकेलियेही पाला जाताहै, वही जापानी बालक शत्रुके लिये कितना भयङ्कर होगा ! ।

भारतवर्ष जहां बालकको शान्त रखनेकेलिये माता पिता उसके कोमलहृदयमें बालकपनसेही भयका सञ्चार करातेहैं। धनी पुरुषोंके बालकोंकी औरभी दुर्गति है। उनका ऐसी बुरीतरह लालन पालन होताहै कि बडी उमर होनेपर या तो वे बैठे बैठे खूब खा खाकर अपने स्वास्थ्यको नष्ट कर देतेहैं। अथवा उनका शरीर इतना कृश होजाताहै कि आधमील चलनेकेलिये भी पालकी या गाडी चाहिये।अतिरिक्त लालनपालनसे उनका स्वभाव भयानक क्रूर और विवेचनाशून्य होजाताहै। धनकी बहुतायतसे उनका स्वभाव एकमात्र विलासप्रियता और आलस्यमें समय काटनेका होजाताहै और अकर्मण्यकी भांति बैठे रहनेके सिवाय कुछ नहीं होता। ऐसे बालक जब अपनी युवावस्थाको पहुचेंगे तो उनसे देशकी कितनी भलाई होसकेगी यह अनुमान करनेहीसे ज्ञात होसकता है।

जापानी मातापिताकी यही चेष्टा रहतीहै कि बालकको भय क्या पदार्थ है यह मालूम भी नहो। जापानी बालकको कभी भूखके कारण रोतेभी नहीं सुना गया। माता पिता जब उसके हृदयमें कुछ दुर्बलता देखतेहैं तो कटाक्षवाक्यसे उसके कलेजेको नोंचलेतेहैं। तू जापानी बालकहै, तेरे पूर्वजोंकी मानमर्यादा तेरे हाथमें है अपने देशकी रक्षा तुझेही करनी पडेगी, इत्यादि कथनोंसे उसके दिलको बढावा दियाजाता है। जिसप्रकार सिंहनी अपने छौनेको जङ्गलमें अकेले आखेटकेलिये छोडदेतीहै और मदमत्त कुञ्जरपर उसको वार करनेका इशारा करतीहै, उसी प्रकार जापानी माता अपने दूध पीते हुए बच्चेके हृदयमें वीरताका आवेश कर नानाप्रकारने बढावे देनेवाले वाक्योंसे उसे निर्भीक करदेती हैं। रणक्षेत्रमें उसे अपनी माताके वाक्योंके स्मरणसे ऐसा संहारकारक मद चढताहै कि प्राणोंकी ममता छोडकर शत्रुदलमें अकेला जापानी सौ योद्धाओंको चीरता हुआ अपना मार्ग परिष्कार कर अन्तमें अस्थगित हस्तमें असिग्रहण किये हुए विचित्रशोभा दिखलाताहै। उनके माता पिताके निर्भय वरतावसे ऐसा सन्देह होताहै कि वास्तवमें ये उनके माता पिता हैं कि नहीं। यदि बालक शारीरिक श्रम करते करते थकभी गया हो तो वे उसे विश्राम लेनेकेलिये नहीं कहते। धूप अथवा वरसातमें बालक छत्रीके अभावसे यदि इतस्ततः करे तो कहतेहै युद्धमें तेरे लिये छत्री कौन लादेगा। इत्यादि रीतियोंसे जपानी बालक ऐसा परिश्रम और सहनशील होजाता है कि कोई कार्य उसकी साध्य शक्तिसे बाहर नहीं रहता। जापानी बालकको छोटी अवस्थासे ही इन बातोंका शिक्षण दियाजाताहै।

(१) सूर्योदयसे पहले उठना।
(२) कलेवा करनेके भरोसेपर कार्यमें विलम्ब न करना।
(३) सर्दीके दिनोमें विना कपडा पहने बाहर जाना।
(४) गरमी और बरसातमें नङ्गेपैर और विना छत्री बाहर जाना ।
(५) कभी कभी सारीरात जगना।
(६) फासी लगनेके स्थानमें जाकर मनुष्यको फांसी लगतीहुई देखना।
(७) अमावस्याकी अन्धकारमयी रात्रिमें १२ बजे स्मशानमें जाना ।
(८) जहां जानेमें भय मालूम हो वहां अवश्य जान बूझकर जाना।
(९) अपवित्र और घृणित पदार्थोका अवश्य निरीक्षण करना।

केवल इतनाही नहीं आधीरातके समय फासीलगनेके स्थानमें जाकर मृत शरीरमें कुछ चिह्न कर आना इत्यादि की शिक्षा छोटे छोटे बालकोंको दी जातीहै। यदि जापानी बालकसे कहे कि तुमारा ऐसे भयानक स्थानमें जानेसे अनिष्ट होगा तो वह त्यौरी चढाकर उत्तर देताहै मुझे इससे भी अधिक भयानक और आपत्परिपूर्ण स्थानोंमें जाना पडेगा । यदि मैं अभीसे भय करूंगा तो आगे क्या करसकूंगा ! ।

अब यहां फिर भारतवर्षीय और जापानी बालकमें थोडी तुलना कीजिये। जितनी बातोंका शिक्षण उनके माता पिता उन्हे देतेहैं हिन्दुस्थानी बालकोंको ठीक उसके विपरीत यहां दिया जाताहै। बालक यदि दैवात् जल्दी उठ वैठे तो उसको सर्दी लगनेके डरसे फिर सुलादेतेहैं। सोतेसे बालक जिससमय उठताहै माता उसी समय कलेवा कराकर उसका पेट फुटबाल बनादेतीहै। जिससे फिर दिनभर पडे रहनेके सिवाय उससे कुछ और नहीं करने बनता। सरदीके दिनोंमें बालकके शरीरपर इतने कपडे लादेजातेहैं कि उससे हाथभी नहीं हिलायाजाता और इससे उसका शरीर इतना सुकुमार होजाताहै कि थोडी ठंडी लगनेसेही सरदी, सरेखमा, खांसी इत्यादि रोग चट होजातेहैं। गरमी और बरसातमें छत्री-सहित तो दूर रहे घरसे बाहरतक निकलने नहीं देते।

राजभक्ति।

यह जगत्प्रसिद्ध विषय है कि जापानकी प्रजा अपने राजामें ईश्वरके समान भक्ति रखती है। राजाज्ञा वेदतुल्य पूज्य समझीजातीहै। यह बात नहीं है कि, जापानकी प्रजामें कई पक्ष न हों वहांभी कई दल हैं उनमें मतभेद है और उनकी कार्यवाहियोंमें भी कभी कभी परस्पर भिन्नता दिखलाई पडती है किन्तु देशहितके लिये जब राजाकी कोई विशेष आज्ञा होती है तो सब दल अभिन्नभावसे एकमत हो देशकार्यको व्यक्तिगत स्वार्थके समान अपना ही समझकर सम्पादन करतेहैं।

लार्ड कर्जनने कहा था कि, प्राच्य राज्योंमें जापानके सिवाय और किसी देशमें स्वदेशाभिमान क्या वस्तु है सो कोई जानता भी नहीं है। केवल जापानही एक ऐसा देश पृथ्वीके इस भागमें समझा जासकताहै, जिसको स्वदेशाभिमानी का शब्द शोभित होसकताहै।
(Problems of the far East Page 34.)

जापानीलोग समझतेहैं कि, राजाही स्वदेशाभिमानका मूर्तिमान् अवतारहै। उनकी समझमें स्वदेशाभिमान और राजामें एकनिष्ठ प्रेम यह दो भिन्न बातें नहींहैं। जापानियोंमें स्वराज्यनिष्ठा जाज्वल्यमान रहनेका कारण मोकाशीकी एकमात्र पद्धतिहै। जब दस अदमी एकचित्तहों तो उनमें सर्व सम्मतिसे एक मनुष्य सर्वश्रेष्ठ समझाजाताहै और अन्य सब लोग उसीके अनुरोधका अनुकरण करतेहैं। चोरोंकाभी एक राजा अथवा नायक रहता है और उसपर उसके साथियोंका पूर्ण प्रेम रहता है। जापानी लोग मोकाशी पद्धतिसेही अपने नेतामें भक्ति रखना सीखे हैं। इसी मोकाशीपद्धतिका यह प्रभाव हुआ है कि क्रमशः वह राजभक्तिमें परिवर्तित होगयी है और इस समय जैसा इस गुणका अद्वितीय उदाहरण जापानमें साधारणतः ही दिखलायी पडताहै वैसा किसी और देशमें नहीं है।

हेनेलसाहब कहतेहैं कि एक समाजको छोडकर किसी व्यक्तिविशेषपर प्रेम करना उचित नहीं है। दूसरी ओर उन्हींके जातिभाई इस गुणको भूषण मानते हैं। यह हेनेलसाहबके जातिभाई कोई साधारण मनुष्य न थे, यह एक प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ थे, इनका नाम प्रिन्स बिस्मार्क है। जहाँ मोकाशी पद्धति अधिकदिन रहीहै वहींपर राजनिष्ठामें अधिक प्रेम दिखलायी पडताहै।

अमेरिकामें ठीक इसके विपरीत सब मनुष्य एक समान श्रेणीके समझेजाते हैं। अतएव यदि वहां जापानकी स्वराजनिष्ठा मान्य न हो तो कोई आश्चर्यकी बात नहीं है। यह कोई निश्चित बात नहीं है कि सब देशोंके विचार एकही तरहके हों। एक पर्वतके एकओरके निवासियोंको जो बात न्यायकी मालूम होतीहै दूसरी ओरके मनुष्योंको वही बात अन्यायकी मालूम पडतीहै। इसका कारण क्या है? माण्टेडसाहब कहते हैं यह एक बडा गूढ और विचारणीय विषय है। फ्रान्स और स्पेनके बीचमें केवल पिरेनीज नामका एक पर्वतहै किन्तु इस थोडेसे अन्तर होनेके कारणही उनके आचार विचारमें कितना अन्तर पडगयाहै। ड्रेफसके समयमें लोगोंको इसका पूर्ण अनुभव होगयाहै। एक पहाडके बीचमें पडनेसेही जब रीति नीति आचार विचार और रहन-

सज्जनमें इतना अन्तर दिखलायी पडताहै तो वडे वडे महासागरोंके वीचमें पड अनेसे मनुष्योंमें अधिक अन्तर दिखलायी पडे तो क्या आश्चर्य है। सारांश यह है कि जापानकी स्वराजनिष्ठा यदि और लोगोंको पसन्द न हुई तो कुछ आश्चर्यकी बात नहींहै। बहुत दूर जानेकी आवश्यकता नहीं है। जिस तत्त्ववेत्ताके शिक्षणसे जापानको इतना लाभ हुआहै उसीके शिक्षणका कुछ प्रभाव चीनमें दिखलायी नहीं पडता। एक कनफ्यूशसकेही उपदेशसे चीनवासियोंने मा बाप पर प्रेम करना सीखाहै, परन्तु उसीके उस उपदेशका प्रभाव जापानपर दूसरे प्रकारसे पडकर उनको राजप्रेमानुरक्त बनादिया। जापानियोंका अपने राजापर कितना प्रेम होताहै इसकी कल्पना करनेके लिये यही समझना चाहिये कि हमलोग अपने इष्टदेवतापर जितना प्रेम और भक्ति रखतेहैं जापानीलोग अपने राजापर उससे कुछ कम प्रेम और भक्ति नहीं रखते।

अपने देशभक्त नेतापर प्रेम रखनेका एक विचित्र उदाहरण जापानके इतिहासमें उसकी कीर्तिको आजपर्यन्त उज्ज्वल कर रहाहै। जापानके इतिहासमें मिचिजेन नामका एक प्रसिद्ध पुरुष होगयाहै। लोगोंका उसपर बडाभारी प्रेम था, परन्तु उसको इतना लोकमान्य और प्रतिष्ठित होते देखकर कुछ ईर्षी और दुष्ट मनुष्योंने उसके विरुद्ध षड्यन्त्र रचना चाहा। दुष्ट और दुरात्माओंकी कमी कहीं नहीं है। नीचमनुष्य दूसरेकी योग्यतापर डाहखाकर स्वयम् अपने चरित्रमें परिवर्तन करके आत्मोत्कर्षसाधन करनेके वदले दूसरे उन्नत और उच्चमनुष्यका अनिष्ट साधन कर उसको विपत्तिमें डाल अपने समतल करनेका प्रयत्न करतेहैं। इसप्रकार मिचिजेनके भी अनेक शत्रु उत्पन्न होगयेथे। उन्होंने अपनी नीचतासे उसको देशनिकाला दिलवानेकी आज्ञा राजासे दिलवादी। परन्तु इतनेपरभी उनका समाधान नहीं हुआ। उसके कुटम्बियोंको मारवाडालनेकाभी उन्होंने प्रयत्न किया और मिचिजेनके नातेरिश्तेवाले मनुष्योंकी खोज होने लगी। तलाश करतेसमय उनको सूचना मिली कि मिचिजेनके एक छोटे वालकको गेञ्जो नामक उसके एक विश्वासपात्र नौकरने एक छोटेसे ग्राममें रखकर एकपाठशालामें उसकी शिक्षाका प्रवन्ध कर दिया है। गेञ्जो उसी पाठशालाका अध्यापक था, कुछदिन उपरान्त गेञ्ज़ोके पास सरकारी अधिकारियोंकी एक आज्ञा पहुँची कि अमुकदिन अमुकसमय उस वालकको पाठशालामें प्रस्तुत रखाजावे। गेञ्ज़ोकी मिचिजेनपर वडी भारी भक्तिथी। उसको इस शान्त और तेजस्वी वालकके प्राण वचानेकी वड़ीभारी चिन्ता हुई और विचार करनेलगा

कि इस बालकके समानही किस बालकको इसके बदलेमें अधिकारियोंके सुपुर्द करूं उसकी कक्षामें जितने बालक थे उसने एक एक कर सबकी ओर दृष्टिपात किया, परन्तु मिचिजेनके बालकके समान कोई तेजस्वी बालक उसकी दृष्टिमें नहीं आया। किं कर्तव्यविमूढ होकर उसका स्वामिनिष्ठ हृदय अत्यन्त दीन और आतुर होगया। मिचिजेनके बालकको राज्याधिकारियोंके हाथमें सौंपकर अलग हो बैठनेका निर्दयविचार एक क्षणके लिये भी उसके हृदयमें नहीं आया था। इस कृत्यके भयंकरस्मरणसे उसका देह रोमाञ्च कण्टकित होताथा, उसके हृदय की व्यथा अकथनीय थी, अपना सर्वस्व और प्राण भी उस बालकपर न्योछावर कर यदि उसके प्राण बचसकें तो उसको भी वह करनेको उद्यत था। उसके हृदयमें केवल एक यही चिन्ता लगरही थी। अपना सर्वस्व और प्राण भलेही जॉय परन्तु अपने स्वामिपुत्रके एक केशपरभी व्याघात नहीं आनी चाहिये। ईश्वर अपने भक्तोंका सङ्कट दूर करताहै। किसी मनुष्यमें जितने अधिक सत्गुण हों उसमें ईश्वरका उतनाही अंश अधिक समझना चाहिये। अध्यापक इस विचाररमें था ही कि अचानक एक बडे घरकी स्त्री अपने बालकको उस पाठशालामें लेकर उसी समय आयी। यह बालक रङ्ग रूप डील, डौल और अवस्था तथा तेजमें ठीक मिचिजेनके बालकके अनुरूप था। गेञ्जोने एक क्षणभी इसपर विचार न किया कि इतने बडे घरकी स्त्री स्वयम् अपने बालकको पाठशालामें लेकर क्यों आयी। उसने ईश्वरको धन्यवाद दिया। आगेकी बात कुछ बडी नहीं है। नियुक्त समयपर मिचिजेनके बालकको पहॅचाननेके लिये सरकारी अधिकारी उपस्थित हुए। उस समय गेञ्जोकी छाती धडकने लगी। उसने मिचिजेनका बालक कहकर उस नये बालकको सामने कर दिया। और अपने हातमें तलवारकी मूठ सम्हालली कि यदि मेरा यह कपटव्यापार प्रकट होगया तो अधिकारीके प्राण लूंगा अथवा अपने प्राण देदूंगा। गेञ्जो और सबभेदसे नितान्त अनभिज्ञथा। वह अपनेकोही स्वामिभक्त समझ रहाथा और उसको यह विश्वास था कि, मैंही अकेला मिचिजेनके पुत्रकी रक्षाका आकाङ्क्षी हूं। परन्तु दैवलीला विचित्र है, उसकी कृपासे मनुष्य मस्तकपर वज्र उपस्थित होनेपर भी रक्षा पाता है। उससमय गेञ्जोसे भी बढकर उस बालकका एक और शुभचिन्तक वहींपर उपस्थित था। वह वही राजपुरुष था जो घातकरूपसे मिचिजेनके पुत्रका वध करनेके निमित्त अन्वेषण करताहुआ आया था। जो बालक इससे पहले पाठशालाम लायागयाथा वह उसी राजपुरुषका पुत्र था। उसीने मिचिजेनके पुत्रकी

रक्षाके लिये अपने बालकको स्वयम् वध करनेके विचारसे अपनी पतिभक्ति परायणा सहधर्मिणीके साथ वहां भिजवा दिया था । इस राजपुरुषने अपने पुत्रकी ओर शान्त रूपसे निरीक्षण कर और उसके प्रत्येक अवयवको निहार कर उसीको मिचिजेनका पुत्र कहकर सङ्केत किया और अपने अन्य साथियोंको यही विश्वास दिलाया । आगे उस बालका क्या हुआ सो कहनेकी आवश्यकता नहीं है । किन्तु इतना पाठकोंको समझाना होगा कि उस बालकका नाना मिचिजेनका बडा मित्र था और उसके पिताको मिचिजेनके शत्रुओंके यहां कारणवशात् सेवावृत्ति अङ्गीकार करनी पडी थी । उस बालककी माता बडी आतुरतासे घरमें बैठी राह देखरहीथी । अपने पुत्रके प्रत्यागमनकी राह नहीं, केवल अपने पतिके मुखसे यह सम्वाद जाननेके लिये कि मिचिजेनके बालककी रक्षा होगयी और उसके बदले स्वयम् उसके पुत्रका बलिदान हुआ । घरलौटकर जिससमय उस राजपुरुषने सब वृत्तान्त अपनी पत्नीको सुनाया उसके चेहरेपर सलवटभी नहीं थी । उसने बडे अभिमानके साथ कहा कि मिचिजेनके पुत्रकी रक्षा होगयी और वह सुनकर उसकी पत्नीनें भी परम आनन्द माना । धन्य है वीरपुरुष धन्य है स्वामीच्छानुयायिनी पत्नी अपने पुत्रका बलिदान अपनेही हाथकर परोपकार करनेवाले जापानके वीरका साहस अकथनीयहै । जहांके सत्यनिष्ठ पुरुषोंके ऐसे विचार हों वे जो कुछ करें वही थोडा है ।

आज कलके लोगोंके प्राण सूखजातेहैं । कैसी भयङ्कर बात ऐसे वृत्तान्तोंको सुनकर मालूम होतीहै । दूसरेके बालककी रक्षाके निमित्त अपनीही सन्तानके कलेजेमें कटार धुसेडना कितने साहसका काम है । क्या वीरपुरुष सत्यनिष्ठ-स्वामिनिष्ठ और कर्तव्यपरायण मनुष्यके अतिरिक्त ऐसा महान कार्य किसी औरसे होसक्ताहै ?नहीं !नहीं ! परन्तु यही सच्ची प्रीतिका उदाहरण है. परोपकारके लिये अपनेही पुत्ररत्नका संहार अपने हाथोंसे करनेवालेके चरित्रको उज्ज्वल करताहुआ उसके स्वार्थत्याग और परोपकारको प्रमाणित करनेका पूर्ण प्रमाण है । ऐसेही पुरुष ईश्वरकी विभूति माननेके योग्य कहेजावें तो कुछ अत्युक्ति न होगी ।

भारतवर्षमें भी ऐसे उदारचित्त मनुष्योंकी कुछ कमी नथी । पूर्व ग्रन्थ और इतिहास देखनेसे अनेक उदाहरण पायेजाते हैं । दूरकी बात छोडकर देखो शिवाजीको औरङ्गजेबके कारगारसे मुक्त करनेके लिये हीरोजी फरजन्दने स्वयम् अपने प्राणोंको जोखममें डालना स्वीकार कियाथा । श्रीमन्त नारायण राव पेशवाके वध होनेके पहले चांपाजीने भी अपने प्राण अर्पण कियेथे ।

पाश्चात्य देशोंमें अपने मित्रके बालककी रक्षाके लिये अपने बालकका बलि-दान करना ऐसा एकभी उदाहरण नहीं पायाजाता । वहाँकी सामाजिक और गार्हस्थिक रीति नीतिही और प्रकारकी हैं । जापानी गृहस्थाश्रम पाश्चात्य देशोंसे बिलकुल भिन्न है ।

यह ऊपर कहआयेहैं कि जापानीलोग अपने माबापकी अपेक्षा राजापर अधिक प्रेम करतेहैं । वहां सर्वप्रधान राजाहीका प्रेम मानाजाता है । सानयोने जापानका एक इतिहास लिखाहै उसमें सिगमोरी नामक एक पुरुषकी बडी मार्मिक कथा लिखी है । किसी कारणसे सिगमोरीका पिता राजाके विरुद्ध होगया था । उस समय सिगमोरी बडे असामञ्जस्यमें पडा और विचार करनेलगा कि मुझे अब किसका पक्ष अवलम्बन करना चाहिये ।

यदि पिताके पक्षमें होताहूं तब तो राजद्रोहके पापका भागी होताहूं और यदि राजाका पक्ष लेताहूं तो पितृद्रोहका पातक लगताहै । यह विचार करते करते उसे बडाही शोक हुआ और ईश्वरसे प्रार्थना करने लगा कि ऐसे जीव-नसे तो मृत्युही भली है । अन्तमें उसने कहा कि राजद्रोह सबसे बुराहै, अतएव मुझे राजाकाही पक्ष लेना चाहिये, यह विचार और राजाके प्रेममें गद्गद हो उसने अपने पिताकी परवाह न कर राजाकाही पक्ष अवलम्बन किया । जापा-नमें प्रेम और कर्तव्य इन दोनोंमेंसे कर्त्तव्यकोही प्रधान मानाहै । वहांके जवां-मर्दोंमें राजद्रोह करनेका एकभी उदाहरण नहीं पायाजाता । जापानीलोग प्रेम-वश होकर अपने कर्त्तव्यको नहीं भूलते, वहां प्रेमीकी अपेक्षा कर्तव्यपरायण मनुष्यकी अधिक मर्यादा और प्रतिष्ठा मानीजाती है । यदि कोई मनुष्य अपने कर्तव्य पालनमें मा बाप, भाई बन्धु, इष्टमित्र आदि किसीके विपक्षभी कोई कार्य करे तो वे लोग उससे बुरा नहीं मानते, वरन उसकी प्रशंसा करतेहैं । जापानकी स्त्री अपने राजाको तन, मन, धन, अर्पण करनेका उपदेश अपने बालकोंको देती हैं । जापानके इतिहासमें ऐसे असंख्य उदाहरण हैं जिनमें जापानी स्त्रियोंने अपने राजाके लिये अपनी सन्तानका प्रेम छोडकर उनके बलि दियेहैं ।

जहांका राजा अपनी प्रजाका पुत्रवत् पालन करता है उसपर प्रेम रखता है और उसके दुःख सुखकी मीमान्सा करताहै, एवं जहांकी प्रजा अपने राजाके लिये अपना सर्वस्व और प्राण अर्पण करनेके लिये तयार रहतीहै, यदि ऐसे राजाको ईश्वरतुल्य मानाजाय और उसकी वाणीकी वेदतुल्य प्रतिष्ठा हो

इसमें आश्चर्य ही क्या है । पाश्चात्यराज्य इस राजा प्रजाके प्रेमसे अनभिज्ञ होनेके कारण उसकी बेकदरीही नहीं करते वरन् उसको जुलम समझते हैं ।
जापानका राजा और सरदार अच्छीतरह जानते हैं कि जिस प्रकार प्रजाका कर्तव्य राजाज्ञाका पालन करना है उसी प्रकार राजाका कर्तव्य प्रजाका पालन करना है।जापानके राजा और सरदारोंका यह विचार नहीं है कि प्रजा हमारे आधीन है, अतएव हमारा जुलम सहनेका उसका काम है अथवा हम प्रजापर जुलम करसकते हैं । जापानमें ऐसा विचार पहलेभी नहीं था और अबभी नहीं है । जापानी राजाका विश्वास होता है कि हमको तथा हमारे पूर्वजोंको ईश्वरने हमारी आश्रित प्रजाकी रक्षाकेही लिये राजगद्दी दी है । अतएव हमारा कर्तव्य प्रजाका पालन करनाही है । यही कारण है कि वहांकी प्रजा राजाको देवतुल्य मानती है ।

यहां एक उदाहरण अप्रासङ्गिक नहीं होगा । किसी बालककी सौतेली माता अपने बालकका पालन किस प्रकार करती है और अपने सोतेले बेटेका पालन किस प्रकार करतीहै यह एक विचारनेकी बात है । एक विदेशी राजा अपने विदेशी राज्यमें वहांके निवासियोंके साथ जो व्यवहार करता है और तद्देशस्थ अपने देशवासियोंके साथ जो व्यवहार करताहै वह ठीक उसी प्रकारका होता है।यह एक स्वाभाविक बात है, परन्तु मा कहनेके योग्य वही होगी। जो सौतेली होने परभी अपने सौतेले पुत्रके साथ अपने औरस पुत्रके समान व्यवहार करे।अतएव देशी हो अथवा विदेशी राजा का नाम उसीको शोभा देगा और वही राजा राजा कहने योग्य है, जो निष्पक्ष भावसे अपनी प्रजा मात्रके साथ एकसा व्यवहार करे ।शक्तिशाली और बलवान् होनेके कारण राजा अपनी प्रजापर जुलमभी कर सकता है । प्रजाकी इच्छाके विरुद्ध राजपटा प्रचीलतभी करसकता है, परन्तु राजा और प्रजामें वैमनस्य होना दोनोंके लिये अशुभसूचक है । राजा वही दयालु कहलाता है जो प्रजाकी आवश्यकताओंका विचार कर शुद्ध मनसे उसकी भलाईका आकाङ्क्षी हो । ऐसा होनेपर उसका राज्य अविचलित और प्रजाका सुख अखण्डित रहता है । निरुपाय होकर राजाज्ञा पालन करना अथवा राजदण्डके भयसे पटानुकूल चलना प्रेम नहीं कहा जासकता । राजा यदि अपने किसी स्वार्थसाधनके निमित्त प्रजाके प्रति प्रेमवत् व्यवहार प्रदर्शित करे तो वह कभी न कभी खुल जाताहै और उसका परिणाम उलटा निकलता है । जापानमें प्रजाके सुखको ही राजा अपना स्वार्थ समझता है । अतएव इस प्रकारका छल कपट वहा कुछ नहीं होता । इङ्गलैण्डके प्रख्यात वक्ता बर्कने कहा है कि पहले

जापानीलोग इङ्गलैण्डके राजाको पिशाचोंका राजा कहते थे। क्योंकि इङ्गलैण्डके लोग वहाके राजाके विरुद्ध बलवा करते थे, उसको गद्दीसे उतार देते थे और बस पडते उसको सूलीतक पर चढवा देते थे। इसी प्रकार फ्रान्सके राजाको वे गधोंका राजा कहते थे, क्यों कि उसने अपनी प्रजापर अनुचित रूपसे कर लाद रखे थे। यूरोपीय राजाओंमें वे केवल स्पेनके राजाको मनुष्योंका राजा कहते थे। क्योंकि स्पेनकी प्रजा बडे आनन्दसे अपने राजाकी आज्ञा मानती थी, यह एक पुरानी कथा है। प्रख्यात तत्त्ववेत्ता अरिस्टोटलका कथन है कि पहले राजव्यवस्था ठहरायी गयी, प्रजासंज्ञा उससे पीछे अस्तित्वमें आयी; अतएव राजव्यवस्थाके ठहराये हुए या उस राजव्यस्थाके परिचालन करनेवाली व्यक्तिके चलाये हुए नियम प्रजाको पालन करने चाहिये। इस नियमको पुष्टि करनेवाला साक्रिटीजका ऐसा मत है कि जिस राजव्यवस्थासे प्रजाको शिक्षण मिलता है; प्रजा सुखसे रहती है; एवम् उसका उत्कर्ष होता है, एसी राजव्यवस्थाका न पालना प्रजाके लिये कैसे योग्य होगा। जापानियोंमें एसे प्रकारके विचार कुछ नवीन नहीं हैं। वहां पुराकालसेही राजभक्ति एवम् प्रजावात्सल्यका प्रवाह अबाधित रूपसे वहरहा है। जापानीलोग समझते हैं कि राजव्यवस्था और कायदोंका राजा दृश्य स्वरूप होता है।

जिस देशमें राजाके लिये लोगोंकी ऐसी उदार कल्पना होतीहै वहां लोग यदि राजाके निस्सीम भक्त हों तो क्या आश्चर्य है।

स्पेन्सर साहबकी भविष्यत् वाणी है कि, राजनिष्ठा संसारमें सदा नहीं ठहरेगी। एक ऐसा समय आवेगा जब संसार भरसे राजनिष्ठाका सत्यानाश होजावेगा और प्रत्येक मनुष्य अपने ही मनके अनुसार काम करने लगेगा। किन्तु यदि यह बात मान भी ली जावे तो अभी इसमें सैंकडों वर्षका विलम्ब है।

शस्त्रका आदर।

जापानीलोगोंका विश्वास था कि जिसके हाथमें तलवार उसीके हाथमें सत्ता। हमारे यहां जैसे वालक जब पॉचवर्षका होताहै तो उसके हाथमें खिलौने दिखलायी पडते हैं तैसे ही जापानमें पांचवर्षके वालकके हाथमें एक छोटीसी असली तलवार दिखलायी पडती है। यहां जब वालक सात वर्षका होताहै तब उसके हाथमें कलम और पट्टी दीजातीहै, उसीप्रकार जब जापानी वालक सात वर्षका होताहै तो वह अपनी तलवारकी वाढको परखनेलगता है, विना परतलेमें तलवार डाले कभी वाहर नहीं निकलता। जब जापानी १९ वर्षका होताहै तब उसकी तलवार पर धार रक्खी जातीहै। उस समय तक तलवारकी धार मोटी ही रहतीहै। १९ वर्षका होनेपर कटीली तलवार कमरमें डाल और सिपाहीयाना

वर्दी पहन जिस समय वह सीना उभारकर बाहर निकलताहै तो यही मालूम होता है मानो देशरक्षा और देशसेवा के निमित्त स्वदेशको प्रखर तापसे बचाने- के निमित्त ये पौधे लगाये गयेहैं और इनकी शीतल छायामें देशवासी शान्ति पूर्वक सुखनींद सोवेंगे ।

जो जाति निःशस्त्र है, जिन्हे तलवारके नामसे भय मालूम होताहै वे तलवार बांधकर अपने देशकी रक्षा करनेवाले देशभक्त जापानियोंके हृदयका क्या भाव समझ सकतेहैं ।क्रमशः एक तलवारके टूट जानेकी आशङ्कासे सामुरायी जापानी युवक दो दो तलवारें बांधने लगते हैं। भारतवर्षके देशभक्त एक पतलासा लचलचा बेंत हाथमें लेकर घूमते हैं । उसी प्रकार जापानी देशभक्त दोदो तलवारें हाथमें लेकर घूमते हैं। आवश्यकता पर तथा देशपर विपत्ति पडने पर जापानी प्रजा अपने राजाकी सहायता करनेके योग्य है । जापानी वीर अपनी बैठक घरमें तलवारको देवताके तुल्य रखते हैं और सोते समय उसको अपने सिरहाने रखकर सोते हैं । पुरानी तलवारें बडी सावधानीसे रखी जाती हैं । यदि कोई किसीकी तलवारकी निन्दा करे तो उसमें वह मनुष्य अपनीही निन्दा समझताहै । जापानी मनुष्य अपनी सब वस्तुओंमें तलवारको सबसे अधिक सावधानीसे रखता है, प्रतिदिवस उसका एकवार खोलकर निरीक्षण करता है और उसको आदर्शतुल्य स्वच्छ रखताहै । जिसकी तलवार थोडी भी मैली या अस्वच्छ रहती हो वह मनुष्य निकम्मा समझा जाताहै ।प्रत्येक समय पास रहनेसे जापानी मनुष्यका प्रेम तल- वारमें अधिक होजाता है। प्रत्येक जापानीको अपने हथियापर अभिमान रहताहै। हमारे देशमें भी एकवार हथियारों का इससे कम महत्त्व नहीं था । अब निःशस्त्र होने पर भी पुरानी रीति नीतिका कुछ अवशिष्ट विद्यमान है। बालक जब जन्म लेता है तो भारतवर्षके अनेक प्रान्तोंमें नवप्रसूत बालकके सिरहाने तलवार रखी जातीहै । विवाहादिकोंमें भी वर तलवार बांधताहै । कहीं कहीं वरके हाथमें चाकू देदियाजाताहै, यह उसी चालका अपभ्रंश है ।

जिसप्रकार जापानकी तलवार आज प्रसिद्धहै उसीप्रकार एक समय भारत- वर्षकी तलवार भी प्रसिद्ध थी, परन्तु वह अब इतिहास और किस्से कहानीकी बातही रहगयीहै। अब भी कुछ लोगोंने शौकिया तलवार रखछोडीहै । उससे वे केवल शोभा समजतेहैं उसपर धार है या नहीं यह कोई नहीं देखता मखमलका म्यान और सौने चांदी के कामकी मूठ लगाकर रखतेहैं । शौकीन लोग रईसीकी अदामें अपने सिपाहियोंको बंधाकर एक स्वांगसा सजा- लेतेहैं । अनभिज्ञ मनुष्य कोई कोई तलवारको उलटा भी बांधलेतेहैं । परन्तु

अब कोई समझनेवाला नहीं रहा इसलिये यह दुर्दशा हुईहै । अब क्रमशः ये भी छिनती जातीहैं । महाराज छत्रपति श्रीशिवाजीकी भवानी नामकी तलवार इस समय इङ्गलैण्डमें है । यह वही अद्वितीय तलवार है, जिसने पराक्रमी शिवाजीके हाथमें सुशोभित होकर सैकडों हजारों यवनोंके मस्तक भुट्टेकी तरह धडसे काटकर फैक दियेथे। अहा! आज शिवाजीके पराक्रमका स्मरण होनेसे शरीरमें फुरहरी आतीहै उस शत्रुहृदयविदारक महाराष्ट्रवीरकी पवित्र कथासे हृदय सन्न होताहै, परन्तु ऐसे वीरोंकी अब केवल कहानी ही रहगयी है । महाराज शिवाजीका सिद्धान्तथा कि हथियारोंका उपयोग प्रतिदिन नहीं होता। समय पडनेपर वीरपुरुष पीछे नहीं हटते। बुद्धिमान् और साहसी मनुष्यसे शस्त्रका दुरुपयोग कदापि नहीं होता । पराक्रमी मनुष्यका शस्त्र दुर्बलव्यक्तिपर नहीं चलता । महाराज शिवाजीने अपने देश और धर्मकी रक्षा करनेके लिये इसी सिद्धान्तपर चलकर अपने शत्रुओंको नाक चने चबवाये थे। शिवाजीके नामसे मुसलमानोंको शीतज्वर चढ़ आताथा । इस अवसरपर शिवाजीके विषयमें इतना लिखना पाठकोंको शायद अप्रासङ्गिक मालूम हो । परन्तु जापानमें जिसप्रकार वीरपुरुष हैं उस प्रकार भारतवर्षमेंभी होचुकेहैं यही दिखलानाहै । अपने देशोद्धारकेलिये प्राण देनेवाले भारतवर्षमेंभी बहुत होगये हैं ।

उपर्युक्त वृत्तान्तसे पाठक समझगये होंगे कि पुराकालमें जापानकी शिक्षाप्रणाली कैसीथी । उसका विस्तारपूर्वक वृत्तान्त नहीं देसके हैं, किन्तु उस सबसे शिक्षाप्रणाली और वर्तमान जापानियोंके पूर्वजोंका बहुत कुछ अनुमान किया जासकता है । सबसे पहले जापानी योद्धाओंका इस शिक्षणद्वारा संस्कार कियागया था किन्तु क्रमशः उदित मार्तण्डकी किरणोंकी भांति वह स्वदेशप्रेमका प्रकाश वहांकी सर्वसाधारणके ऊपर पडता गया और उसका परिणाम यह हुआ कि आजदिन देशाभिमान और देशरक्षा करनेके विचार प्रत्येक जापानीके शरीरमें भिदगयेहैं ।

संसर्गगुणदोष ।

जिसप्रकार महामारी अथवा अन्य जघन्य रोगोंके कीटाणु संसर्गवशात् देशभरमें व्याप्त होकर घोर विषमय परिणाम उपस्थित करतेहैं । उसीप्रकार नीच, आलसी, विलासप्रिय, और दुर्वृत्तिके मनुष्योंके संसर्गसे देशभरमें ये अवगुण प्रसारित होजातेहैं । शरीरके एक अङ्गमें यदि कोई उपाधि उत्पन्न हो तो केवल उस एक अङ्गमेंही उसका फल नहीं दीखता किन्तु समस्त शरीर उसके कारण क्लेशित हो उठताहै यहांतक कि एक अङ्गकी व्याधि आवयविक संसर्गसे कभी कभी शरीरकाही नाश कर करदेतीहै । इसीप्रकार देशमें एक

सम्प्रदाय अथवा जातिकी अवनतिसे समस्त देश उस दुर्गुणके कारण अवनत होसक्ताहै।एक बुरा मनुष्य बहुतसे साधारण मनुष्योंपर अपना बुरा प्रभाव डालसकताहै। भारतवर्षमें जिस समय मुसलनानोंका पदार्पण हुआ उस समयसेही भारतवासियोंमें विलासप्रियता आदि अनेक दुर्गुणोंका सञ्चार होगया । अब अङ्गरेजोंके संसर्गसेभी आचार विचार की अविवेकता फैलती जातीहै। जिसप्रकार दुर्भाग्यवश बुरेमनुष्योंके संसर्गसे देशमें बुराइयां फैलतीहैं उसीप्रकार अच्छे मनुष्योंकाभी प्रभाव कुछ कम नहीं पडता । एक शङ्कराचार्यनेही भारतवर्षमें डूबतेहुए वैष्णवधर्मका पुनरुद्धार कर नास्तिक बौद्धोंको छिन्न भिन्न करदिया था, इसीप्रकार जापानी योद्धाओंके उठतेहुए उत्साह और साहसका प्रभाव वहांकी सर्वसाधारणपर ऐसा पडा कि प्रत्येक मनुष्य अपनेको देशरक्षक समझने लगा।

जापानकी इस उन्नतिके और कारणोंमेंसे वहांके जवांमर्दोंका शिक्षण भी एक प्रधानकारण है। इन देशहितैषियों की संख्या कुछ अधिक न थी, परन्तु इनके स्वार्थरहित आचरणोंकी विस्तृत सुगन्धिने वहांके निवासियोंको मस्त करदिया और होते होते प्रत्येक मनुष्य उनका अनुकरण करनेको लालायित हो उठा ।

नाटकगृह, व्याख्यान मन्दिर, उपन्यास, सार्वजनिक महोत्सव, मेले, तमाशे और मित्रमण्डलीके जलसोंका प्रभाव देशवासियोंके चित्त और चरित्रपर बडा भारी पडताहै। इनक भले और बुरे होनेसे रुचिमें विकार और शुद्धिका सञ्चार होताहै। मनमें विकार उत्पन्न करनेवाले दृश्य और अभिनयोंका अवलोकन झूठे सच्चे निरुद्देश अथवा सिद्धान्तरहित उपन्यासोंका पाठ दुर्वृत्तिवाले मनुष्योंकी मण्डलीमें बैठना आदि मनुष्यके हृदयको दुर्बल कर उसको अधः पतनके मार्गमें लेजाताहै, इसीप्रकार उत्तमोत्तम व्याख्यानोंका सुनना शिक्षापूर्ण उपन्यासोंका पढना और उत्तमचरित्रवाले मनुष्योंके साथ बैठने उठने आदिसे मनुष्य उन्नतहृदय होकर और अनेकोंपर अपना प्रभाव डालताहै।

जापानी किसान जब दिनभर परिश्रमकर सन्ध्यासमय अपने घर लौटताहै और अपने कुटुम्बी और बाल बच्चोंको लेकर अघानेके चारोंओर तापने बैठताहै उससमय यह देशके आधारस्तम्भ अपने बालकोंको स्वदेशभक्तिका शिक्षण देताहै अधिकांश समय देशभक्तोंके गुणगान करनेमें बिताते हैं।वहांके किसानभी राजनैतिक विषयोंसे अनभिज्ञ नहीं रहते। सन्ध्यासमय जब सब मनुष्य अपने कामधन्धों से छुट्टी पातेहैं तो राजनैतिक चर्चाही वहांकी गपशपोंका प्रधान विषय होताहै। ऐसा वहां कदाचितही कोई मनुष्य निकलेगा जिसे राजनैतिक विषयोंसे पूर्ण अभि-

ज्ञता न हो घरकी स्त्रियां भी अपने अवकाशके समयमें इन्हींकी बातें किया करती हैं।छोटे छोटे बच्चोंकी तोतली जीभसे भी युद्धके समय रूसका जिकर सुनाई पडता था। बालक रातदिन जो कुछ सुनता है, वही कहने लगताहै, जो कछ देखता है। उसीका अनुकरण करने लगताहै। पुस्तकोंकी शिक्षा तो पीछेकी बात है। बालककी प्रथम शिक्षा उसके सामनेके दृश्य और वार्ताओंसे होतीहै। जिस समय जन्मसेही राजनीति और देशभक्तिका जिकर सुनायी पडताहै उस समय बडे होनेपर उनके कैसे विचार होंगे सो सहजही जाने जासकते हैं। जापानी विद्यार्थी अभिमानके मूर्त्तिमान् स्वरूप होतेहैं। आजकल जापानके जो मानसिक, नैतिक, राजकीय, औद्योगिक, एवम् और और जो उत्कर्ष हुएहैं उस सबका कारण वहांके बालकोंको आरम्भसे ही उत्तम शिक्षाका मिलना है। जापानी चाहे कोईसा भी कार्य करनेवाला हो, किसान, हो चाहे जापानी राज-कर्मचारी हो अथवा अध्यापक कारीगर हो चाहे और कोई उद्योग करनेवाला प्रत्येकके हृदयमें स्वदेशभक्ति, स्वदेशाभिमान, पूर्वजोंकी कीर्त्ति और अपना कर्त्तव्य पूर्णरीतिसे जागृत रहताहै।

स्वदेशभक्त महापुरुष अपने उत्कर्षके लिये एक निदान स्थिर करलेते हैं और उसीके अनुसार मरणपर्यन्त कार्यक्षेत्रमें प्रवृत्त रहते हैं। ऐसा करनेसेही राष्ट्रकी उन्नति होतीहै। इसके सिवाय वहांके मनुष्योंको घोडागाडीमें बैठनेकी उत्तमोत्तम वस्त्राभूषण धारण करनेकी और अपने नौकर चाकरों पर हुकुमत जताकर बड-पन्न पानेकी स्पृहा नहीं होती। वहांके मनुष्य तो प्रतिष्ठाके अभिलाषी हैं। देशके अगुवा बनकर देशके लिये आत्मसमर्पण कर अपना नाम करनेकी चेष्टा करतेहैं।

मेथ्यू आरनाल्डने धर्मकी व्याख्या इस प्रकार कीहै। मनोविकारको प्रबन्ध कर मनुष्यको सन्मार्ग पर लानेवाला जो रास्ता है, उसीका नाम धर्म है। यदि यह व्याख्याही धर्मकी असली परिभाषा समझी जावे तो जापानी युवकोंको जो शिक्षण मिलता है वही सच्चा धर्म कहनेके योग्यहै। अपने प्राणोंकी ममता छोडकर अपने आत्मस्वार्थके सिरमें लात मार परस्पर द्वेषको भूलकर जापानी लोग केवल अपने देशकी भलाई करनेके लिये उन्मत्तवत् प्रयास करते हैं। इससे बढकर और कौनसा धर्मकार्य होसकताहै।

जापानी युवापुरुषके शिक्षणमें यदि कोई विद्यार्थी अल्पबुद्धि भीहो तो उसकी कुछ परवा नहीं कीजाती किन्तु उसके सत्शील होने न होनेकी ओर तीव्र दृष्टि रखीजातीहै। यदि कोई विद्यार्थी बडा बुद्धिमान् हो और विद्याभ्यास में

पूर्ण तथा निपुण होजावे किन्तु नीतिभ्रष्ट हो तो उसकी कुशाग्रबुद्धि और विद्याभ्यासको तीन कौडीका समझते हैं। जापानी अध्यापक अपने छात्रोंको इस दृष्टिसे शिक्षा नहीं देते कि वे कालान्तरमें कुछ पढ लिखकर क्लार्क होजावे अथवा येनकेन प्रकार अपनी उदरपूर्णाकर देशकी मनुष्यसंख्यामें अपनी गणना करा कर अन्तमें पशुवत् निरुपयोगी होकर मरजावें। देशका सुधार उनकी दृष्टिमें सर्व प्रधान रहता है। अत एव छात्रके आचरणोंमें इसके विपरीत यदि कुछ भी दिखलायी पडे तो वे उसको मेटनेकी सर्व प्रथम चेष्टा करते हैं। सेवावृत्तिकर अपना पेट पालन करलेना। जापानियोंका लक्ष्य वहीं रहता। प्रत्येक मनुष्यके हृदयमें कुछ न कुछ उन्नत अभिलाषा रहतीहै और उसीसे वह अपना नाम करने तथा देशोपकार करनेकी इच्छा रखताहै। यह बात नहीं है कि जापानमें विद्वानकी प्रतिष्ठा न होती हो किन्तु परोपकार रहित देशसेवा विहीन केवल शब्द पाण्डित्यको वे निरर्थक समझतेहैं। तलवारका अधिक प्रेम होने के कारण जापानियोंकी झुकावट मरदानगीकी ओर अधिक है। समराङ्गणमें शत्रुका माथा चूर करनेके लिये हृदयको उत्साहित करनेवाला यदि कोई शास्त्र हो तो वे उसकी ज्यादा कदर करते हैं।

जापानी विद्यार्थियोंको सुन्दर लिपि नीतिशास्त्र और भूगोल इतिहासके अतिरिक्त लकडी, पटा, बिनौट, धनुर्विद्या अश्वारोहण, भाला बरछी चलाना, कवाइद करना, सैन्यरचना व्यूरचना, और जियुजित्सु अथवा यवर आदिकीभी शिक्षा दीजाती है। जापानी वर्णमालाके अक्षर एक प्रकारके छोटे छोटे चित्रसे रहते हैं और उनके लेखमें एक प्रकारका सौन्दर्यसा आजाता है। उपर्युक्त जियुजित्सु अथवा यवरविद्याका विवरण करना आवश्यक है किन्तु इसके लिये कोई विशेष शब्द नहीं दे सकते। हम तो कहांसे देंगे! अभीतक अङ्गरेजी भाषामें भी इसके लिये कोई शब्द नहीं निकला। जियुजित्सु एक प्रकारकी कला है परन्तु उसका प्रयोग क्याहै सो सर्वजगत् और महत्वाकाङ्क्षा रखनेवाले अङ्गरेजोंके हाथभी नहीं पडा। इतनाही मालूम हुआहै कि जियुजित्सु उसकलाका नाम है जिससे एक निःशस्त्र मनुष्य अपने एक सशस्त्र आक्रमणकारीके वारको वचाकर उसके शरीरपर स्वयम् ऐसा वार करे कि फिर वह और दूसरा हाथ चलानेके लिये असमर्थ होजावे। जियुजित्सु केवल मल्लविद्या अथवा दावपेचही नहीं है क्यों कि मल्लविद्या में शक्तिकी आवश्यकता रहती है। एक अशक्त मनुष्य अपने वलवान् शत्रुको नहीं जीत सकता किन्तु इस जापानी कलासे एक साधारण शक्तिवाला मनुष्य अपनेसे अठगुने मनुष्यको वेवश करसकता है। इससे

शत्रु जानसे नहीं मरता किन्तु लाचार चित्त होकर भूतलशायी होना पड़ता है। मल्लविद्या अथवा दाँवपेच और विन्नौट आदिसे इसका कुछ भी सम्बन्ध नहीं है। यह एक विद्याही स्वतन्त्र है।

पाठक कदाचित् ऐसा समझतेहों कि हम इस जियुजित्सुकलाका पूरा विवरण-कर सकतेहैं परन्तु यह बात नहीं है। अभीतक अंग्रेजलोगोंकोभी इसके विषयमें केवल इतनाही मालूमहै। आलफ्रेड स्टेड साहब फरमातेहैं कि अब इंङ्गलैण्ड और जापानका मेल होनेके कारण जापानी लोग हमको यह विद्या सिखलानेके लिये उद्यत्त हैं। हमें केवल इतनाही प्रश्न होताहै कि, अङ्गरेजलोग सीख क्यों नहीं लेते ?

वहांके अध्यापक छात्रोंको केवल परीक्षामें उत्तीर्ण करादेनाही अपना कर्तव्य नहीं समझते किन्तु भविष्यतमें उनके जीवन, रहन, सहन, आचरण और विचारोंके विषयमें वे प्रधानतः अपनी ही जिम्मेदारी समझते हैं। जिस राष्ट्रके अध्यापक और गुरुओंका अपने विद्यार्थियोंके विषयमें ऐसा विचार है उन्होंने निःसन्देह अपने मस्तकपर एक बडाभारी भार लेरखाहै। ऐसे विचारवान् शिक्षकसे शिक्षालाभ कर जापानी युवक कितना उदारचित्त होसकताहै यह सहजही अनुमान किया जासकताहै। मनुष्य कितनाही विद्वान् हो और कितनाही तीव्रबुद्धि हो परन्तु जबतक उस विद्याका प्रभाव उसके हृदयपर न पडे और उसका वह उचित उपयोग न करे सब निरर्थक ही है। सन्तान कैसीही विद्वान् और बुद्धिमान् क्यों न हो यदि वह अपनी माताके दुःखसे दुःखी न हो और उसकी सेवा न करे तो कहना होगा कि माताने ऐसी सन्तानको वृथाही जन्म दिया। यही विचार कर जापानीलोग अपनी मातृभूमिके लिये सब तरह अपना आत्मस्वार्थविसर्जन करनेकेलिये उद्यत रहते हैं। जापानी विद्यार्थी अपने गुरुको किरायेका टट्टू समझ उसपर सवारी नहीं लेते किन्तु वे अपने मातापितासे भी उनका मान अधिक करतेहैं और बडे प्रेम-पूर्वक उनकी आज्ञा पालन कर उन्हीको अपने जीवनका संस्कार कर्ता मानते

हैं। इसीप्रकार वहांके गुरु अपना कर्तव्य समझ सन्तानवत् प्रेमपूर्वक उनको शिक्षा देतेहैं।

पुराकालमें भी जापानी अध्यापक देशभक्त और स्वतन्त्र प्रकृतिके होतेथे एवम् विद्यार्थियोंको निःस्सीमदेशभक्तिकी शिक्षा देनेमें उनको किसी प्रकारका प्रतिबन्ध न था। इतना ही नहीं निराश्रय और अनाथ बालकोंका पुत्रवत् पालन-कर उनकोभी वे लोग सुधारनेको अपना कर्तव्य समझते थे। माहवारी फीस देकर विद्या सीखाना" उनलोगोंका सिद्धान्त न था। वे समझते थे कि, द्रव्यके रूपसे ज्ञानका मूल्य कभी नहीं होसकता। गुरु और शिष्यका एक बड़ा अक-थनीय सम्बन्ध है। महाराज छत्रपति शिवजीके गुरु श्रीरामदास ने जो उपदेश उनको किया था क्या उसका भी कुछ मूल्य होसकता है। पाश्चात्य रीति नीति और प्रथाके अनुसार जैसा रुक्ष और निरपेक्षवर्ताव स्कूलमास्टर और स्कूल-विद्यार्थियोंमें होताहै उसमें गुरु शिष्यभावकी छाया भी नहीं दिखलायी पड़ती। स्कूलोंमें जाकर विद्यार्थियोंमें कितने ही अवगुण उत्पन्न होजाते हैं कहीं कहीं चरित्र दोष भी दिखलायी पड़ने लगता है। इससे उनका जीवन भर नष्ट होजाताहै इस विषयमें अधिक कुछ नहीं कहनाहै। पाठ यदि याद न हो तो उसका दण्डस्वरूप जो जुरवाना कियाजाताहै वह एक बहुतही बुरी प्रथा है इसका अर्थ यह है कि बालक यदि किसी धनवान् का पुत्र है अथवा उसको पैसेकी कमी नहीं है तो वह बड़ी आसानीसे अपना पाठ न याद करनेके बदले जुरवा-ना देसकता है। दूसरी बात यह है कि यदि बालक के पास जुरवाना देनेके लिये दाम नहीं हैं और किसी समय उसे पाठ भी याद नहीं हुआ तो मानों अपने माता पितासे छुपाकर येन केन प्रकार जुरवाना देनेके लिये उसे चुराकर जुरवानेके पैसे हस्तगत करनेको उत्तेजित किया जाताहै।

परमात्माकी कृपासे कुछ दिनसे स्वयमृही विद्यार्थियोंके हृदयमें एक प्रकार देश भक्तिका सञ्चारहुआहै परन्तु बडी बुरी तरहसे उनको दण्डितकर उनके हृदयको इस गुणसे रहित रखनेके लिये प्रयास कियाजाताहै। यह कितनी कठोरताका कार्य है। जिस स्कूलमें विद्याभ्यास करनेके लिये विद्यार्थीको

स्वदेशी आन्दोलन, स्वदेशभक्तिसे वञ्चित रहना होगा जिस स्कूलमें स्वदेशी कार्योंसे जुदे रहनेकी शिक्षा मिलेगी उस स्कूलका पढा हुआ विद्यार्थी किसकामका होगा । बाल्यावस्थाही बालकोंके हृदय क्षेत्रमें उत्तमोत्तम फलप्रद शिक्षारूपी बीजोंके आरोपण करनेका समय होताहै । इस समय जो शिक्षा उनको मिलेगी वही उनके भविष्यत् जीवनको परिचालित कर उनके सुख दुःखका मार्ग दिखलावेगी । स्वदेशी आन्दोलन और स्वदेशी कार्योंमें सम्मिलित न होनेका जो शिक्षण विद्यार्थियोंको देकर उनके हृदयको दुर्बल रखनेका प्रयास कियाजाताहै यह सर्वथा अयोग्य कार्य है । उपर्युक्त सब वृत्तान्तसे पाठक जानसकेंगे कि जापानी शिक्षाप्रणालीका भारतवर्षकी वर्तमान स्कूलशिक्षासे कितनी भिन्नहै ।

जापानके प्रत्येक जवान मर्दमें आत्मसंयमनका गुण पायाजाताहै । एक ओर धैर्य साहस और दूसरी ओर शिष्टाचार सम्पन्नता, सौजन्य, आदि गुणोंका जापानी युवकोंको अभ्यास करना पडताहै । इसका परिणाम यह हुआ कि आत्मसंयमन एक राष्ट्रीय गुण होगयाहै । स्वयम् चाहे कितनाही कष्ट पालें परन्तु निरर्थक अपने द्वारा किसी दूसरेको कष्ट न हो यह जापानी पुरुषोंमें एक स्वभावसिद्ध बात होगयीहै । छोटी अवस्थासे आत्मसंयमन करनेका अभ्यास बालक और बालिकाओंको पहले भी कराया जाता था और अब भी कराया जाताहै । पाश्चात्य लोग कहतेहैं कि इससे उनका हृदय कठोर होनेकी सम्भावनाकी जासकती है ।

जापानियोंकी इन रीतियोंको पाश्चात्य लोग निर्दयता कहतेहैं किन्तु यह उनकी भूलहै । जापानकी ओर देखनेके समय अपना चश्मा उतारकर यदि वे लोग जापानी चश्मा लगावेंगे तो उनको जापानकी यथार्थ बातोंका यथार्थ ज्ञान होगा । यदि प्राच्य और पाश्चात्य राज्योंकी तुलना कीजावेगी तो पाश्चात्यकी अपेक्षा प्राच्य राज्योंमेंही आत्मसंयमनका अधिक गुण दिखलायी पडेगा । पाश्चात्य देशमें भीतर कम और ऊपरि दिखावट ज्यादा यही प्रथाहै । यद्यपि वे लोग आत्मसंयमनको हृदयके कठोर करनेवाला बतलाते हैं । किन्तु वास्तवमें यह हृदयको कोमल करनेवालाहै । जापानी जवान मर्द ऐसा विचार

करतेहैं कि अपने चेहरेसे अपने हृदयका भाव प्रकाशित होना जनानापनहै । चहरे पर अपनी हृदयकी छटाका दिखलायी पडना औरतोंकासा कामहै । अपने चेहरे पर दुःसुखकी बिलकुल झलाक न दिखलायी पडे यही जवामर्दीका लक्षणहै । अपने हृदयको इतना ढीला रखना जिससे हृदयका भाव चेहरे पर दिखलायी देने लगे तो फिर धैर्य कहां रहा । असली बलवान पुरुष वहीहैं जिसका अपने मनके ऊपर पूरा शासनहै । जापानमें ऐसा कोई मनुष्य दिखलायी न पडेगा जो दस आदमियोंके सामने फुलवासे बालकको गोदमें लेकर उसपर लाडप्यार करताहो । सबके सामने अपनी स्त्रीका हस्तचुम्बन अथवा कपोल चुम्बनकी पाश्चात्य प्रथा जापानमें अभीतक नहीं पहुंचीहै । क्या वहांके मनुष्योंको अपनी सन्तान अथवा अपनी पत्नीसे प्रेम नहीं होता । नहीं यह बात कदापि नहींहै किन्तु वृथा और निर्लज्ज दिखावटको वे लोग पसन्द नहीं करते वे इसको स्त्रैणपन और दुर्बलता कहतेहैं । पाश्चत्य देशोंकी भांति वहां स्त्रियोंका आधिपत्यभी इतना नहींहै । अमेरिकामें पुरुष सैकडों मनुष्योंके सम्मुख अपनी स्त्रीका चुम्बन भी लेतेहैं और एकान्तमें मारतेभीहैं । परन्तु यह प्रथा जापानमें बिलकुल नहीं देख पडेगी ।

अभी थोडे दिनका जिकरहै अमेरिकामें एक मुकदमा हुआ था । एक पतिभक्तास्त्रीने अपने पतिके ऊपर खुली अदालतमें नालिश की थी । दावा यह था कि मेरे पतिने कुछ कालसे मेरा चुम्बन लेना छोडदियाहै । क्या सुन्दर सभ्यताहै जो हो इस समय हमको किसीपर कटाक्ष या आक्षेप नहीं करता है । यहां केवल इतनाही दिखलानाहै कि जापानमें ऐसी सब कुप्रथाओंका चलन बिलकुल नहीं है । वे लोग ऐसे व्यवहार और बरतावोंको जनानापन और निर्लज्जता कहते हैं । चाहे सभ्य अमरीका और यूरुपवाले प्राच्य देशवासियोंको मूर्ख असभ्य क्रूर कठोर प्रेमशून्य वा कुछ भी कहें परन्तु ऐसी सभ्यता उन्हीको मुबारिक रहे । सन् १८९४ ई० में चीन और जापानयुद्धका सूत्रपात हुआथा । उस समय किसी एक ग्रामसे एक जापानी सेना युद्धपर चढाईकरने वालीथी । उस

सेनाके योद्धाओंको विदाई देनेके लिये रेलस्टेशन पर सहस्रों मनुष्य एकत्रित हुए थे। वहां स्त्री और पुरुष सभीका समुदाय था। उनमें किसीका पिता था किसीकी माता थी किसीके भाई वहन थे और किसीकी पत्नी और प्रेमपात्रा भी थीं। उसी ग्राममें एक अमरीकन मनुष्य रहता था। उसको बडा कुतूहल उत्पन्न हुआ और यह देखनेकी अभिलाषासे कि देखें जापानी लोग विदाईके समय किस प्रकार अपने बन्धु बान्धव और इष्टमित्र तथा कटुम्बीयोंसे बिछुडते समय अश्रुपात करतेहैं वह स्टेशन पर गया। परन्तु वहां जो दृश्य उसने देखा उससे उसके विस्मयका ठिकाना न रहा। वह विचारा जिस आशासे वहां आया था उसके पूर्ण होनेका कोई भी लक्षण न था। न किसीकी आंखोंमें आंसू थे न किसीके मुख मण्डल पर उदासी थी। रेलकी सीटी हुई तब भी कुछ नहीं गाडी चलदी तव भी कुछ नहीं न किसीने रूमाल उडाया न किसीने किसीसे "विजयी हो" "शीघ्र लौटो" आदि शद्ब कहे शान्त और गम्भीर भावसे उन्होंने उनसे अभिवादन कर विदाई दी। अमेरीकन महाशय भी शान्त और गम्भीर भावसे अपने घर लौटे। चाहे वे जापानियोंको प्रेमशून्य समझें परन्तु जापानीलोग वास्तवमें प्रेमशून्य नहीं हैं। उनके हृदयमें प्रेम है उसको प्रकाश्य भावसे दस आदमियोंके सम्मुख प्रकट कर कातर होनेको वे निर्लज्जता और हृदयकी दुर्बलता कहते हैं। जिसप्रकार एक क्षुद्रनदी वृष्टिके प्रभावसे वेगपूर्वक वहती है और वडा कलकल शब्द करती है,उस प्रकार गम्भीर नदीका प्रवाह नहीं होता। वाहरी दिखावट जितनी देखनेमें मालूम होती है उसका वास्तवमें वैसा रूप नहीं होता इसीप्रकार असली प्रेम हृदयके अन्तरालमेंही रहता है, जो वाहरी दिखावट होतीहै वह असली प्रेमही नहीं। यदि किसी जापानी स्त्रीका वालक वीमार होताहै तो वह रात दिन जागकर भी उसकी सेवा सुश्रूषामें कभी नहीं करती एवम् किसीके माता पिताके रोगी होनेपर भी वह अपने सव काम धन्धोंको छोडकर उनकी सेवामें त्रुटि नहीं करता किन्तु दुर्दैव वशात् यदि उसे उनका वियोग देखना पडे तो उसके चेहरेपर कुछ उदासीके सिवाय और शोकके कुछ लक्षण

करतेहैं कि अपने चेहरेसे अपने हृदयका भाव प्रकाशित होना जनानापनहै । चहरे पर अपनी हृदयकी छटाका दिखलायी पडना औरतोंकासा कामहै। अपने चेहरे पर दःसुखकी बिलकुल झलाक न दिखलायी पडे यही जवामर्दीका लक्षणहै । अपने हृदयको इतना ढीला रखना जिससे हृदयका भाव चेहरे पर दिखलायी देने लगे तो फिर धैर्य कहां रहा । असली बलवान पुरुष वहीहैं जिसका अपने मनके ऊपर पूरा शासनहै । जापानमें ऐसा कोई मनुष्य दिखलायी न पडेगा जो दस आदमियोंके सामने फुलवासे बालकको गोदमें लेकर उसपर लाडप्यार करताहो । सबके सामने अपनी स्त्रीका हस्तचुम्बन अथवा कपोल चुम्बनकी पाश्चात्य प्रथा जापानमें अभीतक नहीं पहुंचीहै । क्या वहांके मनुष्योंको अपनी सन्तान अथवा अपनी पत्नीसे प्रेम नहीं होता । नहीं यह बात कदापि नहींहै किन्तु वृथा और निर्लज्ज दिखावटको वे लोग पसन्द नहीं करते वे इसको स्त्रैणपन और दुर्बलता कहतेहैं । पाश्चत्य देशोंकी भांति वहां स्त्रियोंका आधिपत्यभी इतना नहींहै । अमेरिकामें पुरुष सैकडों मनुष्योंके सम्मुख अपनी स्त्रीका चुम्बन भी लेतेहैं और एकान्तमें मारतेभीहैं । परन्तु यह प्रथा जापानमें बिलकुल नहीं देख पडेगी ।

अभी थोडे दिनका जिकरहै अमेरिकामें एक मुकदमा हुआ था । एक पतिभक्तास्त्रीने अपने पतिके ऊपर खुली अदालतमें नालिश की थी । दावा यह था कि मेरे पतिने कुछ कालसे मेरा चुम्बन लेना छोडदियाहै । क्या सुन्दर सभ्यताहै जो हो इस समय हमको किसीपर कटाक्ष या आक्षेप नहीं करता है । यहां केवल इतनाही दिखलानाहै कि जापानमें ऐसी सब कुप्रथाओंका चलन बिलकुल नहीं है । वे लोग ऐसे व्यवहार और बरतावोंको जनानापन और निर्लज्जता कहते हैं । चाहे सभ्य अमरीका और यूरुपवाले प्राच्य देशवासियोंको मूर्ख असभ्य क्रूर कठोर प्रेमशून्य वा कुछ भी कहें परन्तु ऐसी सभ्यता उन्हीको मुबारिक रहे । सन् १८९४ ई० में चीन और जापानयुद्धका सूत्रपात हुआथा । उस समय किसी एक ग्रामसे एक जापानी सेना युद्धपर चढाईकरने वालीथी । उस

सेनाके योद्धाओंको विदाई देनेके लिये रेलस्टेशन पर सहस्रों मनुष्य एकत्रित हुए थे। वहां स्त्री और पुरुष सभीका समुदाय था। उनमें किसीका पिता था किसीकी माता थी किसीके भाई वहन थे और किसीकी पत्नी और प्रेमपात्रा भी थी। उसी ग्राममें एक अमरीकन मनुष्य रहता था। उसको वडा कुतूहल उत्पन्न हुआ और यह देखनेकी अभिलाषासे कि देखें जापानी लोग विदाईके समय किस प्रकार अपने बन्धु वान्धव और इष्टमित्र तथा कुटुम्बीयोंसे बिछुडते समय अश्रुपात करतेहें वह स्टेशन पर गया। परन्तु वहां जो दृश्य उसने देखा उससे उसके विस्मयका ठिकाना न रहा। वह विचारा जिस आशासे वहां आया था उसके पूर्ण होनेका कोई भी लक्षण न था। न किसीकी आंखोंमें आंसू थे न किसीके मुख मण्डल पर उदासी थी। रेलकी सीटी हुई तव भी कुछ नहीं गाडी चलदी तव भी कुछ नहीं न किसीने रूमाल उडाया न किसीने किसीसे "विजयी हो" "शीघ्र लौटो" आदि शब्द कहे शान्त और गम्भीर भावसे उन्होंने उनसे अभिवादन कर विदाई दी। अमेरीकन महाशय भी शान्त और गम्भीर भावसे अपने घर लौटे। चाहे वे जापानियोंको प्रेमशून्य समझें परन्तु जापानीलोग वास्तवमें प्रेमशून्य नहीं हैं। उनके हृदयमें प्रेम है उसको प्रकाश्य भावसे दस आदमियोंके सम्मुख प्रकट कर कातर होनेको वे निर्लज्जता और हृदयकी दुर्बलता कहते हैं। जिसप्रकार एक क्षुद्रनदी वृष्टिके प्रभावसे वेगपूर्वक वहती है और वडा कलकल शब्द करती है, उस प्रकार गम्भीर नदीका प्रवाह नहीं होता। वाहरी दिखावट जितनी देखनेमें मालूम होती है उसका वास्तवमें वैसा रूप नहीं होता इसीप्रकार असली प्रेम हृदयके अन्तरालमेंही रहता है, जो वाहरी दिखावट होतीहै वह असली प्रेमही नहीं। यदि किसी जापानी स्त्रीका वालक वीमार होताहै तो वह रात दिन जागकर भी उसकी सेवा सुश्रूषामें कभी नहीं करती एवम् किसीके माता पिताके रोगी होनेपर भी वह अपने सव काम धन्धोंको छोडकर उनकी सेवामें त्रुटि नहीं करता किन्तु दुर्दैव वशात् यदि उसे उनका वियोग देखना पडे तो उसके चेहरेपर कुछ उदासीके सिवाय और शोकके कुछ लक्षण

दिखलायी नहीं पडेंगे । इससे यह स्पष्ट प्रतीत होताहै कि जापानीलोग कर्तव्य परायण पूर्णरूपसे हैं । प्रेमकीभी उनके स्वभावमें कमी नहीं है किन्तु जितना कुछ प्रेम है सब सच्चा और भीतर बाहरसे एकसा है इसीप्रकार शोककोभी वह अपने हृदयसे बाहर निकालना अच्छा नहीं समझते । झूंठा हर्ष वा शोक दिखलानेको वे धोखादेना कहते हैं । शोक न होनेपर भी वनावटी शोक प्रकाशित करना एवम् हर्ष न रहनेपर भी बनावटी हर्ष दिखलोनकी चाल उन लोगोंमें नहीं है । धर्म सम्बन्धी विषयोंमे भी उनका यही सिद्धान्त है । थोडेसे ज्ञानसे अधिक अहङ्कार दिखलानेकी रिवाज जो पाश्चात्य लोगोंमें है वह जापानियोंमें नहीं है ।

किसी एक जापानी मनुष्यको ईश्वरकी बडी भक्ति थी । कुछ काल उपरान्त उसको भगवत्कृपाका कुछ परिचय मिला और उसका मन इतना उछ्रिंखल हुआ कि अपने हृदयके भावको सबलोगोंपर प्रकाशित करनेको वह उद्यत हुआ । किन्तु फिर उसने कुछ विचार कर अपनी दिनचर्याकी पुस्तकमें इस प्रकार नोट किया "प्रेम विचारोसे यदि तेरा अन्तःकरण उच्छ्रिंखल हुआ है तो कुछ ठहर, उस अन्तःकरणको दाबकर रख सुविचारका अंकुर अभी तेरे हृदयक्षेत्रमें बहुत बढनेवाला है उसकी पूर्णावस्था होनेतक उसको प्रकट न कर एकान्तमें शान्त रूपसे उसे अपने अन्तःकरणमें ठहरने दे छेडछाड करनेसे उसका नाश होजावेगा" ।

इस तरुण मनुष्यके विचारोंका बहुत कुछ अनुकरण हमलोगोंको करना चाहिये । अपने अन्तःकरणमें प्रत्येक प्रकरण सम्बन्धी जिन कल्पनाओंका उदय होताहै पूर्ण परिपक्व होनेसे पहले उनके प्रकाशित होनेसे उनका महत्व कम होजाताहै । धार्मिक राजकीय और सामाजिक चाहे जैसे कार्य हों क्षुद्र हृदय और उच्छ्रिंखल प्रकृतिके मनुष्योंसे उसमें बाधा पडजाती है । इसके अनेक उदाहरण इस राजनैतिक आन्दोलनके समय भारतवर्षमें दीख पड हैं । गम्भीर और परिपक्व बुद्धिके मनुष्योंने एक कार्यको जितनी उन्नत दशापर पहुँचादिया है उस वने वनाये उत्तम कार्यको इनलोगोंने बाधा पहुंचाई है ।

तात्पर्य इस सबका यहीहै कि सावधानीसे सचेत और धीर होकर किसी कार्यको करनेसे उसका परिणाम सफल होता है किन्तु अदूरदर्शिता और अविचारसे जो उत्तम कार्य कियाजायगा और जिस समय वह सफलताके मार्गपर पडेगा उस समय उच्छृंखलता करनेसे उसके परिणामके सफल होनेमें अवश्य बाधा पडेगी ।

और कारणोंके अतिरिक्त जापानकी उन्नतिका प्रधान कारण यह है कि राजा और प्रजाका एक उद्देश और एक ही सिद्धान्तहै सन् १८९० ई० में जापानके नरेशने एक घोषणापत्र प्रकाशित किया था यह घोषणापत्र जापानी भाषामें छपा हुआ और २ चित्रोंके साथ दीवार पर टँकारहताहै और इसका मर्म बडे यत्नके साथ विद्यार्थीयोंके हृदयमें अंकित करदिया जाताहै घोषणापत्र यह है:—बडे यत्नके साथ विद्याभ्यास करो तथा शिल्प विज्ञानकी ओर अपने पूरा ध्यान दो अपनी नैतिक और मानसिक वृत्तियोंका विकाशकरो इसके अतिरिक्त देशके कल्याणकी ओरसे अपना ध्यान न हटाना सर्वदा देशके कानून और शासनको मान्य समझकर चलना आवश्यकता होनेपर वीरके समान देश सेवाके निमित्त अपने जीवनकी आहूति देनेको प्रस्तुत रहना इसप्रकार पृथ्वी और स्वर्गके महिमा पूर्ण सम्राटके सिंहासनको गौरवान्वित करने तथा उसकी श्री और ऐश्वर्य रक्षा और वृद्धिके लिये सहायता देना । इष्ट देवके मन्त्रके समान जापानी छात्र इस कल्याणकारी और ऋद्धि सिद्धिदाता राजाके उपदेशको हृदयङ्गमकर उसीके अनुसार चलतेहैं।परस्पर प्रेम सहानुभूति कर्तव्य पालनज्ञान राजाज्ञा मानना स्वदेश सेवा जाति और देशाभिमान दुःखितोंपर दया निर्भीकता साहस आत्मोत्कर्षकी अभिलाषा और सच्चरित्रता आदिगुण जापानके बालकोंक हृदयमें उनके माता पिता और गुरु द्वारा भलीभांती प्रविष्ट कर दिये जातेहैं । जिस जापान देशमें विद्यार्थीयोंको इस प्रकार शिक्षा दीजातीहैं और स्वातन्त्र्य महत्वका वीज उनके उपजाऊ हृदयमें वपनकर राजाकी सच्ची उत्तेजना पूर्ण और उत्साह प्रद वाणीसे प्रेम पूर्वक सींचा जाताहै उस देशकी सन्तान यदि रूसके समान महावली शत्रुको भी लथेडकर उसके अङ्ग २ को छिन्नभिन्न करदे तो कोई आश्चर्यकी बात नहीं है ।

शक्ति और वस्तु है एवं साहस और वस्तु है रूसकी कुत्सित शासनप्रणालीसे वहांकी प्रजाका उत्साह चकना चूर होगया है हृदय बुझगया है और अत्याचार सहन करत२साहस नष्ट भ्रष्ट होगया ऐसी जातिके योद्धा युद्धक्षेत्रमें जाकर जापानके समान स्वतन्त्र देशके योद्धाओंके सामने कब ठहर सकते हैं जिनके हृदयमें देश भक्ति कूट २ कर भरीहैं राज्यका प्रेम उनके रोम २ में घुसरहाहै ।

पोर्ट आर्थरके दुर्ग में जिस समय जापानियोंने रूसी सनाको घेरकर उनको दस महीनेतक उसीमें बन्दरखा था उस समय उनकी बडी भारी दुर्गति होगई थी।रूससे उनको छुडानेके लिये बडी२सेनाओंने आकारभी उनको नहीं छुडापाया। उस समय किलेमें १८००० रोगी और घायल मनुष्य थे उनमेंसे सौ २ और डेढ २ सौ की प्रतिदिन मृत्यु संख्या होती थी कपडेके अभावसे जहाजोंके पाल फाड २ कर घायल मनुष्योंके पट्टियॉ बांधी जाती थीं भोजनकी सामग्री भी निवट गईथी अन्तमें रूसी लोगोनें तोप खींचनेके लिये एक हजार घोडे अपने पास रखकर बाकी सब मार खाये कितनी भयंकर बात है । इस समय हमें युद्धका विवरण नहीं लिखना है अतएव इस विषयको यहीं छोडतेहैं किन्तु उसका परिणाम सूचित करना आवश्यकीय मालूम होताहै ।

परिणाम यह हुआ कि जापानने पोर्ट आर्थर लेलिया और ५९ किले ५४ बडी तोप १४१ मझोली तोप ३४३ छोटी तोप ३५००० बन्दूक ८२०००गोली २२५०००० कार्तूस लगमग ८१० मन वारूद और ६० टारपीडो आदि उनक हाथ लगे ।

जापानने युद्धके समय अनेक अवसरोंपर रूसके अच्छी तरह दांत खट्टे किये थे। हिन्दुस्थानमें जैसे क्षत्री अथवा राजपूतोंकी एक लडनेवाली जाति है उसी प्रकार जापानमें सामुराई नामकी एक जाति है जापानियोंके जलसेना नायक एडमीरेल टोगोका इसी जातिमें जन्म हुआ था टोगो बचपनसेही कष्ट सहिष्णु-धीर वीर और साहसी था रूस जापान युद्धमें जापानकी विजयका अधिकांश महत्व एडमीरेल टोगोको प्राप्तहुआ है सन् १८९४ ई. में जब चीन और जापा-

नेमें युद्ध हुआ था उसमें पहिलाहाथ टोगोका ही दिखलाई पड़ा। वह नानिवा नामक एक लडाईके जहाजका अधिपति था वह जहाज चीनी समुद्रमें फिरता २ कुआगसी नामके एक चीनी जहाजके पास पहुंचा यह इंगलैण्डका एक व्यापारी जहाज था चीन सरकारने उसको भाडे लेकर लशकर लाने लजानेके काम पर नियुक्त किया था जिससमय कुआंगसी टोगोके नानिवाजहाजके पास पहुंचा उस समय उसमें चीनकी सेनाथी टोगोने जहाजी झंडे द्वारा उसको ठहरनेका संकेत किया और एक आदमी द्वारा कहलाभेजा कि, तुम हमारे पीछे २ चुप चाप जापान चले चलो टोगोकी आज्ञानुसार अंग्रेजी अफसर तैयार होगये किन्तु चीनी सेनाके अफसरको यह बात पसन्द न हुई। और उसने अंग्रेजी अफसरको हटाकर जहाजको पूर्णतः अपने स्वाधीन कर-लिया। टोगोने फिर कहला भेजा कि इसका परिणाम भयंकर होगा किन्तु उसकी बात न मानी गयी एडमिरल टोगोने एकदम टारपीडो छोडकर इस जहाजको डुबा दिया। चीनयुद्ध इसप्रकार टोगोसेही आरम्भ हुआ था। चीन युद्धमें टोगोका नाम पीछे अधिक नहीं आया उसका कारण यह है कि उससमय टोगो एक साधारण अफसर था। किन्तु रूस जापानके युद्धमें टोगोका नाम संसार भरमें प्रसिद्ध होगया है। जिस समय जापानका अन्तिम खलीता रूसके पास गया जबहीसे जापान सरकारने टोगोको धावा करनेके लिये बिलकुल तैयार रहनेकी आज्ञा देदी युद्धकी घोषणा होतेही एडमिरल टोगोने जो असीम वीरताका परिचय दिया है उसे पाठक रूस जापानके युद्धके वृत्तान्तमें पढ़चुके होंगे। एक एडमिरल टोगोही नहीं प्रत्येकसेनाके अफसरसे लेकर छोटेसे छोटे सिपाही और कुली पर्यन्तने जापानका गौरव भलीभांति बढ़ायाहै।

किसी देश जाति अथवा व्यक्ति विशेषको अपनी उन्नतिके उपाय सोचनेसे पहले अपनी अवनतिके कारणोंपर ध्यान देना चाहिये पाठक भलीभांति

सकेंगे कि जो कारण जापानके उदय होनेके हैं उन्हीं कारणोंका अभाव भारतके अस्तहोनेका कारणहै। जिस देशके मनुष्य अपने कर्तव्योंको नहीं समझते अपने जीवनके लक्ष्यके विषयमें कुछ निर्धारित नहीं करते एवम् अपनी अवनतिके कारण और उन्नतिके उपायोंकी ओर ध्यान नहीं देते उनको अपनी गिरीहुई दशाके सम्भालनेमें कदापि सफलता नहीं होती। संसारमें सबही अपना गौरव मान और प्रतिष्ठा चाहतेहैं किन्तु केवल इच्छा करनेसेही इच्छित पदार्थ हस्तगत नहीं होजाता इच्छा करनेके साथही उसके तद्रूप उद्योग और अध्यवसायकी आवश्यकताहै जापानियोंमें जो गुण स्वभाव सिद्ध प्रतीत होतेहैं ठीक उनके विपरीत अवगुण हिन्दुस्थानियोंमें पाये जातेहैं।जापानीलोग मिहनती होतेहैं किन्तु हिन्दुस्थानियोंमें आजकल आलस्यकी अधिकता पायीजातिहै।भारतवर्षमें मनुष्योंकी ४ श्रेणीहैं एक तो इतने दरिद्री और दुखीहैं कि उनको देशकी दशा सुधारनेकी बात दूर रहे अपनी दशा सुधारना और अपना तथा स्त्री और सन्तानका पेट पालन करनाभी दुःसाध्य होरहाहै ऐसे भाग्य हीन मनुष्योंकी कमी नहीं है। प्रत्येक नगर ग्राममें यदि दृष्टि डालकर देखाजाय तो ऐसे मनुष्योंकी संख्यासे कलजा फटताहै। भारतवर्षकी सामाजिक दशामें बाहरी निरर्थक आडम्बर दिखलाना बहुत बढगयाहै और अनेक कुरीतियोंके कारण सांसारिक व्ययकी अधिकतासे बाहरी दिखावटको बनाये रखनेके लिये आधे भूखे पेट रहकर आजन्म दारिद्र्य भोगते हैं दूसरी श्रेणीके मनुष्य इससे भी अधिक हैं और उनकी दशा अधिकतर शोचनीय है। ये उस श्रेणीके लोग हैं कि जिनको अकालपर अकाल सहते हुए वर्षों बीतगये। दयार्द्रचित्त पाठक! जरा भारतवर्षके देहातमें जाइये और कङ्गाल किसानोंकी दशाका अवलोकन कीजिये। भूमिकर इतना अधिक बढ गयाहै कि अच्छी उपज होनेपरभी उनके पास कुछ नहीं बचपाता। उपरान्त खेतमें उपज हो चाहे न हो जमीन्दार जूता बजाकर घरके बरतन भांडे भी बिकवाकर बाकी वसूल करलेते हैं। बौहरे लोग जिनके कर्जमें किसान नांकतक डूबे रहते

है खड़ा हुआ खेतका खेत कुर्क करवालेते हैं। इनलोगोंका जन्म मिहनत करत वीत जाताहै परन्तु औरतके पैरमें कांसीका छल्ला तक नजर नहीं आता इनका सर्वस्व केवल एक मिट्टीकी हंडिया और काठकी कटौठीही रहतीहै। और जब अकाल पडजाताहै तो सहस्रों मनुष्य नामधारी नर पशु चौपायोंकी भांति जङ्गल और सडकोंमें मरजाते हैं। इनलोगोंके मवेशी इतने मरगये हैं और कटगये हैं तथा अबभी सहस्रों प्रतिदिन कटते चले जाते हैं जिससे हल-जोतने और कूआ चलानेकेलिये इनको सुलभ मूल्यमें मिलना कठिन होगयाहै। सिवाय ज्वार बाजरे या बेझरकी रूखी रोटीके इनलोगोंको कुछ खानेको नहीं मिलता। यही पेटभर मिलजाना मानो इनके लिये महोत्सव है। प्रतिवर्षमें प्लेग इन मलिन मनुष्योंका कितना सफाया कर जाताहै इसका कुछ हिसावही नहीं।इन मिहनती मनुष्योंका इस प्रकार नाशहोनेसे भारतवर्षकी बडी क्षति होरही है।य मनुष्य स्वयम् सूखी रोटी खाकर रातदिनके तन तोड परिश्रमसे अनाज पैदाकर हमलोगोंको देते हैं और स्वयम आजन्म कष्ट पाते रहते हैं।इस अनाजको हमलोग अपनी सजावट और आडम्बरके लिये विदेशी निरर्थक वस्तुओंके वदले विदेश भेजदेते हैं कितने दुःखकी बात है।

तीसरी श्रेणीके मनुष्य महा भयङ्करहैं। हमें इनको मनुष्य कहते भी सङ्कोच होताहै। ये वे धनीलोग हैं जो मिथ्या आहारविहारमें मस्त होकर देशकी दशा पर तनक भी ध्यान नहीं देते। विलासप्रियता और दुर्व्यसनोंके इतने वशी भूत होरहेहैं कि इस संसारको नर्क बनाकर दूसरे संसारकेलिये नर्कका मार्ग परिष्कार कर रहे हैं। इनकी भी संख्या भारतवर्षमें कमनहींहै। घृणित आचरणोंके मनुष्योंका अधिक विवरण लिखनेकी इच्छा नहीं होती।

चौथी श्रेणीकेही मनुष्य मनुष्यके नामको चरितार्थ कररहे हैं। ये वे मनुष्य हैं जो आत्मस्वार्थ परित्यागकर एवम् सहस्रों बाधाविपत्तिया सहकर तन मन धनसे देशसेवामें तत्परहैं।

इनकी संख्या दिनों दिन वृद्धिपर है। इससमय इन्हींलोगोंके हाथमें भारतवर्ष की उन्नति है। ईश्वरसे प्रार्थना है कि भारतवासियों के हृदयमेंभी जापानके समान देशभक्ति,राजभक्ति, परस्परप्रेम, सौहार्द. सहानुभूति, शूरता, वीरता, और पराक्रमदे जिससे राजा और प्रजा सबका उपकार हो।

समाप्त।

॥ श्रीः ॥

आनन्दमठ ।

खेमराज श्रीकृष्णदास,
"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-प्रेस
बंबई.

Printed at the "Shri Venkateshwar" Steam Press, Bombay.

॥ श्रीः ॥

आनन्दमठ।

स्वर्गीय राय बङ्किमचन्द्र चट्टोपाध्याय बहादुर विरचित

बङ्गला उपन्यासका

हिन्दी अनुवाद।

श्रीनगर (पुर्नियां) के राजा कमलानन्द सिंहजी

अनुवादित।

और

सेठ खेमराज श्रीकृष्णदास द्वारा

बम्बई

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम-प्रेसमें मुद्रित होकर

प्रकाशित।

सम्वत् १९६४, सन् १९०७.

Printed at the "Shri Venkateshwar" Steam Press, Bombay.

श्रीमान् महाराजा कमलानन्दसिंहजी।

प्राक्कथन।

जिस समय बङ्गसाहित्यके अमर गद्य कवि श्रीयुक्त बङ्किमचन्द्र चट्टोपाध्यायने आनन्दमठ लिखा था, उस समय कौन जानता था कि समय पाकर यह बङ्गालकीही नहीं, हिन्दुस्थानी मात्रका मार्गदर्शक और सचमुचही आनन्दमठ हो रहेगा। "सुजलां सुफलां मलयज शीतलां शस्य श्यामलां मातरम्" आश्वास वाणीसे भारतवासियोंको समझावेगा कि भय क्या है, सम्पूर्ण अभावोंकी पूर्ति शस्य श्यामला भारतभूमिसेही होगी। किन्तु बङ्किम बाबू इस बातको उसी समय जान गये थे। उन्होंने कहा था "देखना पचीस वर्षमें यह वन्देमातरम् क्या करता है। भारतके प्रत्येक गांवमें वन्देमातरम् सुनाई पड़ेगा।" बात वही होरही है। आज भारतका एकभी अभागा गांव नहीं होगा जहां आनन्दमठके "वन्देमातरम्" मन्त्रकी पवित्र ध्वनि न पहुँची हो। आज भारतके घर घर मातृ मन्त्रका प्रचार हो रहा है।

बङ्किमचन्द्र वन्देमातरमके सृष्टिकर्ता नहीं हैं। उनके पहले भी यह मन्त्र विद्यमान था। देशोपकारी साधु मण्डलीमें किसी समय इसका खूब आदर था। इसे भक्ति धर्मका स्वरूप मिला था। कहा जाता है कि विन्ध्याचलके किसी सन्यासीने बङ्किमबाबूको इस मन्त्रकी दीक्षा दी थी। बङ्किमबाबू इसे संसारमें प्रचलित करनेवाले हैं। वन्देमातरम किसी खास सम्प्रदायका मन्त्र नहीं है। जो जननी जन्मभूमिको स्वर्गादपि गरीयसी समझकर इसपर भक्ति श्रद्धा रखता है वन्देमातरम उसीका आराध्य मन्त्र है। यद्यपि वन्देमातरम् मन्त्र सभी देशवासियोंका आराध्य मन्त्र होसकता है, परन्तु वन्देमातरम गीतमें जो कुछ कहा गया है वह केवल भारतवासियोंकेही लिये विशेषकर लागू होसकता है। हमारे देशमें 'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी'का सिद्धान्त आजका नहीं है, किन्तु सैकड़ों वर्षसे भारतवासी इसका महत्व, इसका स्वरूप भूल गये थे। बङ्किम बाबूने इसका जैसा रूप, जैसा रस, जैसा ज्ञान, जैसा शौर्य, जैसा ऐश्वर्य देखा है, इसमें जैसी कैवल्यदायिनी शक्तिका समावेश अनुभव किया है, वैसा सैकड़ों वर्षसे भारतवासी नहीं कर रहे थे। वे इसमें केवल धातु, पत्थर, कोयला, मिट्टी देख रहे थे किन्तु बङ्किम बाबूने सुझाया है कि इसमें सर्वस्व समाया हुआ है। वह मातृस्वरूप है सम्पूर्ण ऋद्धियोंकी आधार कमला है। इसके "सप्त (त्रिंशत) कोटि कण्ठ कलकलनि नाद कराले द्विसप्त (द्विविंशत) कोटि भुजैर्धृत खर करवाले।" में जातीयता और एकताका भाव कूट कूटकर भरा हुआ है।

जिस आनन्दमठमे ऐसे पवित्र वन्देमातरमका कीर्तन हुआ है उस आनन्दमठका घर घर प्रचार होना चाहिये। इसी लिये उसका हिन्दी अनुवाद हमने अपने पाठकोंको भेंटमे देना विचारा। हिन्दीसाहित्यके सम्माननीय, गौरवस्थल, प्रसिद्धहितैषी, उन्नायक और सहायक कवि तथा लेखक साहित्य सरोज श्रीनगर (पुर्नियां) नरेश श्रीमान राजा कमलानन्दसिंहजी बहादुरने इसका अनुवाद हमारे पास भेजकर इसके छापनेका स्वत्व हमे प्रदान किया। इस लिये इसके अनुवाद करानेकी हमे कुछ भी चिन्ता नहीं करनी पड़ी। इसके लिये हम श्रीमान राजासाहबके कृतज्ञ हैं। हिन्दीवालोंके लिये यह

प्राक्कथन।

जिस समय बङ्गसाहित्यके अमर गद्य कवि श्रीयुक्त बङ्किमचन्द्र चट्टोपाध्यायने आनन्दमठ लिखा था, उस समय कौन जानता था कि समय पाकर यह बङ्गालीकी नहीं, हिन्दुस्थानी मात्रका मार्गदर्शक और सचमुचही आनन्दमठ हो रहेगा। "सुजला सुफलां मलयज शीतलांशस्य श्यामलां मातरम्की" आश्वास वाणीसे भारतवासियोंको समझावेगा कि भय क्या है, सम्पूर्ण अभावोंकी पूर्ति शस्य श्यामला भारतभूमिसेही होगी। किन्तु बङ्किम बाबू इस बातको उसी समय जान गये थे। उन्होंने कहा था "देखना पचीस वर्षमें यह वन्देमातरम् क्या करता है। भारतके प्रत्येक गांवमें वन्देमातरम् सुनाई पड़ेगा।" बात वही होरही है। आज भारतका एकभी अभागा गांव नहीं होगा जहां आनन्दमठके "वन्देमातरम्" मन्त्रकी पवित्र ध्वनि न पहुंची हो। आज भारतके घर घर मातृ मन्त्रका प्रचार हो रहा है।

बङ्किमचन्द्र वन्देमातरम्के सृष्टिकर्ता नहीं है। उनके पहले भी यह मन्त्र विद्यमान था। देशोपकारी साधु मण्डलीमें किसी समय इसका खूब आदर था। इसे भक्ति धर्मका स्वरूप मिला था। कहा जाता है कि विन्ध्याचलके किसी सन्यासीने बङ्किमबाबूको इस मन्त्रकी दीक्षा दी थी। बङ्किमबाबू इसे संसारमें प्रचलित करनेवाले है। वन्देमातरम किसी खास सम्प्रदायका मन्त्र नहीं है। जो जननी जन्मभूमिको स्वर्गादपि गरीयसी समझकर इसपर भक्ति श्रद्धा रखता है वन्देमातरम् उसीका आराध्य मन्त्र है। यद्यपि वन्देमातरम मन्त्र सभी देशवासियोंका आराध्य मन्त्र होसकता है, परन्तु वन्देमातरम् गीतमें जो कुछ कहा गया है वह केवल भारतवासियोंकेही लिये विशेषकर लागू होसकता है। हमारे देशमें "जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी"का सिद्धान्त आजका नहींहै, किन्तु सैकड़ों वर्षसे भारतवासी इसका महत्व, इसका स्वरूप भूल गये थे। बङ्किम बाबूने इसका जैसा रूप, जैसा रस, जैसा ज्ञान, जैसा शौर्य, जैसा ऐश्वर्य देखा है, इसमें जैसी कैवल्यदायिनी शक्तिका समावेश अनुभव किया है, वैसा सैकड़ों वर्षसे भारतवासी नहीं कर रहे थे। वे इसमें केवल धातु, पत्थर, कोयला, मिट्टी देख रहे थे किन्तु बङ्किम बाबूने सुझाया है कि इसमें सर्वस्व समाया हुआ है। वह मातृस्वरूप है सम्पूर्ण ऋद्धियोंकी आधार कमला है। इसके "सप्त (त्रिंशत्) कोटि कण्ठ कलकलनि नाद कराले द्विसप्त (द्वित्रिंशत) कोटि भुजैर्धृत खर करवाले।" मे जातीयता और एकताका भाव कूट कूटकर भरा हुआ है।

जिस आनन्दमठमें ऐसे पवित्र वन्देमातरम्का कीर्तन हुआ है उस आनन्दमठका घर घर प्रचार होना चाहिये। इसी लिये इसका हिन्दी अनुवाद हमने अपने पाठकोंको भेटमें देना विचारा। हिन्दीसाहित्यके सम्माननीय, गौरवस्थल, प्रसिद्धहितैषी, उन्नायक और सहायक कवि तथा लेखक साहित्य सरोज श्रीनगर (पुर्नियां) नरेश श्रीमान राजा कमलानन्दसिंहजी बहादुरने इसका अनुवाद हमारे पास भेजकर इसके छापनेका स्वत्व हमें प्रदान किया। इस लिये इसके अनुवाद करानेकी हमें कुछ भी चिन्ता नहीं करनी पड़ी। इसके लिये हम श्रीमान राजासाहबके कृतज्ञ हैं। हिन्दीवालोंके लिये यह

थोड़े आनन्द और अभिमानकी बात नहीं है कि श्रीमान जैसे नरेश अपनी रियासतका कार्य करते रहनेपर भी हिन्दीकी सेवा और सहायता केवल स्वयं परिश्रम ही नहीं किन्तु धन दान और आदर सत्कार आदिके द्वारा भी किया करते हैं। बन्देमातरम्का प्रचार पहले विन्ध्याचलसे हुआ था इससे भरोसा है. "जगदीश" की कृपासे इस पुस्तक द्वारा विशेष कर प्रसुप्त युक्तप्रदेशमें सञ्जीवनी शक्तिका सञ्चार होगा।

बम्बई,
वैशाख शुक्ल १५ सं० १९६४

खेमराज श्रीकृष्णदास,
मालिक "श्रीवेङ्कटेश्वरसमाचार"

उपक्रमणिका।

बड़ा विस्तृत वन है, जिसमें अधिकांश साखूके अतिरिक्त और भी अनेक प्रकारके वृक्ष सुशोभित हैं। इन वृक्षोंके फूल और पत्तोंके आपसमें मिल जानेसे वे मानो अभेद्य छिद्रविहीन पल्लवोंके अनन्त समुद्रकी भांति प्रतीत होते हैं और वायु-द्वारा तरङ्गोंपर तरङ्ग लेते तथा लहराते हुए कोसोंतक चले गये हैं। नीचेभी भयानक अन्धकार है। दोपहरमें भी सूर्य भगवानका स्वच्छ प्रकाश नहीं आता। उसमें कभी कोई मनुष्य प्रवेश नहीं करता केवल वनके पशु पक्षियोंकी चिल्लाहट और पत्तोंकी खड़खड़ाहटको छोड़कर और कोई दूसरा शब्द सुनाई नहीं पड़ता।

एक तो ऐसा विस्तृत निबिड़ अन्धकारमय वन, दूसरे दोपहर रात भयङ्कर अन्धकार वनके बाहर भी अँधियाला है। कुछ देखा नहीं जाता है। वनके भीतरका अन्धकार तो मानो भूगर्भके अन्धकारकी भांति है। पशु पक्षी आज सब एकदम चुप चाप हैं। कितनेही लाख कितनेही करोड़ पशु पक्षी कीट पतङ्ग आदि इस वनमें बसते हैं परन्तु इस समय इनमेंसे कोई भी किसी प्रकारका शब्द नहीं करता है। उस अन्धकारका अनुभव भी होसकता है, परन्तु शब्दमयी पृथ्वीकी वह निस्तब्धता अनुभवके बाहर है। उस आनन्दवनके बीचमें उस अँधेरी रातमें उस अनुभवके बाहर निस्तब्धतामें एक शब्द हुआ ' मेरी मनोकामना क्या सिद्ध नहीं होगी ?

इस शब्दके बाद फिर वह अरण्य निस्तब्धतामें डूब गया। उस समय कौन कहसकता था कि इस जङ्गलमें मनुष्य शब्द सुना गया था! कुछ काल उपरान्त फिर शब्द हुआ, फिर उस निस्तब्धताको मथकर मनुष्य कण्ठ ध्वनित हुआ—"मेरी मनोकामना क्या सिद्ध नहीं होगी ?'

इसी भांति तीनबार वह अन्धकारका समुद्र आन्दोलित हुआ। तब उत्तर मिला—"तुम्हारा प्रण क्या है ?" प्रत्युत्तर हुआ—"प्रण मेरा जीवन सर्व्वस्व।" फिर प्रति शब्द हुआ—"जीवन तुच्छ है। उसे सब कोई त्याग सकता है"।—"और क्या है जो दे सकते हैं।" तब उत्तर हुआ—"भक्ति।"

थोड़े आनन्द और अभिमानकी बात नही है कि श्रीमान जैसे नरेश अपनी रियासतका कार्य करते रहनेपर भी हिन्दीकी सेवा और सहायता केवल स्वयं परिश्रम ही नही किन्तु धन दान और आदर सत्कार आदिके द्वारा भी किया करते हैं। बन्देमातरम्का प्रचार पहले विन्ध्याचलसे हुआ था इससे भरोसा है. " जगदीश " की कृपासे इस पुस्तक द्वारा विशेष कर प्रसुप्त युक्तप्रदेशमें सञ्जीवनी शक्तिका सञ्चार होगा।

बम्बई,
बैशाख शुक्ल १५ सं० १९६४

खेमराज श्रीकृष्णदास,
मालिक "श्रीवेङ्कटेश्वरसमाचार"

उपक्रमणिका।

बड़ा विस्तृत वनहै, जिसमें अधिकांश साखूके अतिरिक्त और भी अनेक प्रकारके वृक्ष सुशोभित है। इन वृक्षोंके फूल और पत्तोंके आपसमें मिल जानेसे वे मानो अभेद्य छिद्रविहीन पल्लवोंके अनन्त समुद्रकी भांति प्रतीत होते है और वायु-द्वारा तरङ्गोंपर तरङ्ग लेते तथा लहराते हुए कोसोंतक चले गये हैं। नीचेभी भयानक अन्धकार है। दोपहरमें भी सूर्य भगवानका स्वच्छ प्रकाश नहीं आता। उसमें कभी कोई मनुष्य प्रवेश नही करता, केवल वनके पशु पक्षियोंकी चिल्लाहट और पत्तोंकी खड़खड़ाहटको छोड़कर और कोई दूसरा शब्द सुनाई नही पड़ता।

एक तो ऐसा विस्तृत निविड़ अन्धकारमय वन, दूसरे दोपहर रात भयङ्कर अन्धकार वनके बाहर भी अँधियाला है। कुछ देखा नही जाता है। वनके भीतरका अन्धकार तो मानो भूगर्भके अन्धकारकी भांति है। पशु पक्षी आज सब एकदम चुप चाप हैं। कितनेही लाख कितनेही करोड़ पशु पक्षी कीट पतङ्ग आदि उस वनमें बसते है, परन्तु इस समय उनमेसे कोई भी किसी प्रकारका शब्द नहीं करता है। उस अन्धकारका अनुभव भी होसकता है, परन्तु शब्दमयी पृथ्वीकी वह निस्तब्धता अनुभवके बाहर है। उस आनन्दवनके बीचमें उस अँधेरी रातमें उस अनुभवके बाहर निस्तब्धतामे एक शब्द हुआ " मेरी मनोकामना क्या सिद्ध नही होगी ?"

इस शब्दके बाद फिर वह अरण्य निस्तब्धतामे डूब गया। उस समय कौन कहसकता था कि इस जङ्गलमें मनुष्य शब्द सुना गया था। कुछ काल उपरान्त फिर शब्द हुआ, फिर उस निस्तब्धताको मथकर मनुष्य कण्ठ ध्वनित हुआ–' मेरी मनोकामना क्या सिद्ध नहीं होगी ?"

इसी भांति तीनबार वह अन्धकारका समुद्र आन्दोलित हुआ। तब उत्तर मिला–"तुम्हारा प्रण क्या है ?" प्रत्युत्तर हुआ–" प्रण मेरा जीवन सर्व्वस्व।" फिर प्रति शब्द हुआ–"जीवन तुच्छ है। उसे सब कोई त्याग सकता है"।–" और क्या है जो दे सकते है।" तब उत्तर हुआ–"भक्ति।"

वन्देमातरम् ।

इस पुस्तकमें असली गीतका केवल हिन्दी अनुवाद आया है, इस लिये बङ्किम बाबूके असली वन्देमातरम् गीतको यहांपर देते हैं ।

वन्देमातरम् ।

सुजलां सुफलां मलयज शीतलां,
सस्यश्यामलां मातरम् ॥
शुभ्र ज्योत्स्ना पुलकित यामिनीम्,
फुल्ल कुसमित द्रुमदल शोभिनीम्,
सुहासिनीं सुमधुर भाषिणीं,
सुखदां वरदां मातरम् ॥
सप्त (त्रिशत) कोटिकण्ठ कल कलनिनाद कराले,
द्विसप्त (द्वित्रिशत) कोटि भुजैर्धृत खर करवाले,
के बले मातुमि अबले !
बहु बल धारिणीं नमामि तारिणीम्,
रिपुदल वारिणीं मातरम् । वन्देमातरम् ॥
तुमि विद्या तुमि धर्म तुमि हृदि तुमि मर्म,
त्वंहि प्राणाः शरीरे,
बाहुते तुमि मा शक्ति हृदये तुमि मा भक्ति ॥
तोमारइ प्रतिमा गडि मन्दिरे मन्दिरे ।
त्वंहि दुर्गादश प्रहरण धारिणी,
कमला कमल दल विहारिणी,
बानी विद्या दायिनी नमामित्वां ।
नमामि कमलां अमलां अतुलां,
सुजलां सुफलां मातरम् । वन्देमातरम् ॥
श्यामलां सरलां सुस्मितां भूषिताम,
धरणी भरणीं मातरम् ॥
वन्देमातरम् ॥

॥ श्रीः ॥

आनन्दमठ

प्रथम परिच्छेद ।

ग्यारहसौ छिहत्तर साल (११७६) के ग्रीष्म कालमें एक दिन पदचिह्न गांवमें सूर्य भगवान्की किरणोंका उत्ताप बड़ाही प्रबल था। गांव घरोंसे परिपूर्ण है। परन्तु कोई कोई मनुष्य दिखाई नहीं पड़ता। बाजार में कतारबन्दी दूकाने, और हाट की छपरियां, बस्ती में सैकड़ों मिट्टीके घर और उनके बीचबीच में छोटी बड़ी इमारतें आज सब सन्नाटेमें छायेहुए हैं। बाजार की दूकाने बन्द हैं। दूकानदार कहां भागा है कुछ पता नहीं। आज हाट का दिन है, हाट नहीं लगा। भिक्षा का दिन है भिक्षुकगण बाहर नहीं होते। दाताओंने भी अपना दान बन्द करदिया है। व्यापारी अपना व्यापार छोड़ अपने बच्चे को गोदीमें ले रोरहे हैं। जुलाहे कपड़ा बुनना छोड़ घरमें पड़े रोरहे हैं। अध्यापकों ने अपनी पाठशाला बन्द करदी है। जान पड़ता है कि दूध पीनेवाले बच्चों को भी रोने का साहस नहीं पड़ता है। सरकारी सड़कों पर आदमी देखनेमें नहीं आते पोखरोंमें नहानेवाले नहीं देख पड़ते. अपने घरके दरवाजेपर मनुष्य भी दिखाई नहीं देते। वृक्षोंपर पक्षी नहीं देख पड़ते। केवल श्मशान में सियार और कूकर खेलकूद मचारहे हैं। एक बड़ीभारी इमारतमें जिसके बड़े बड़े गोल २ खम्भे दूर से दिखाई देतेथे और वह उस गृहारण्यमें शैल शिखर सदृश शोभा पाताथा (शोभाही क्या ? दरवाजे बन्द है। मनुष्य समागम शून्य, शब्द हीन, मानो वायुको भी समाने में विघ्न मालूम होता है और उसके भीतर दिन दो पहरको भी अँधियारा है) उस अँधियारेमें रातके खिले हुए दो फूलोंकी भांति एक दम्पति चिन्ताकुल बैठे हैं। उनके सामने मन्वन्तर होनेवाला है।

११७४ साल में फसिल अच्छी नहीं हुई। लोगों को क्लेश हुआ पर राजाने अपना पावना पाई पाई लेलिया मालगुजारी बेबाक देकर दरिद्रोंने एक शाम खाकर प्राण बचाये। ११७५ साल के वर्षाकाल में अच्छी वृष्टि हुई सब यही विचारने लगे कि दैवने अबकी कृपा की। आनन्दसे ग्वाले आदि सब गीत गानेलगे। गृहस्थोंकी स्त्रियां अपने स्वामी को गहने के लिये दिक करनेलगीं। अकस्मात् आश्विन महीने में देवता विमुख हुए अतः आश्विन तथा कार्तिक मे एक बूंद भी पानी न बरसा। खेतोंमें धान एकदम सूखके घास हो गये। जिसको एक दो बिगहा उपजा भी उसको राजा के आदमियों ने सेनाकेलिये खरीदकर रख छोड़ा। अस्तु. रैयत लोग कुछ खाने नहीं पाये। पहिले उन्होंने एक सन्ध्या उपवास तब एक सन्ध्या अधपेटा खाना तिसके अनन्तर दोनों सन्ध्या उपवास करना आरम्भ किया। रब्बी की फसिल जो किञ्चित् हुई भी वह किसीके खानेभरको पर्याप्त न हुई। परन्तु महम्मद रेजाखां सरकारी तहसीलदार ने उस समय अपने मालिक के कृपापात्र होने की अभिलाषा से

एकाएकी मालगुजारी में सैकड़े पीछे दस रुपये बढ़ादिये । बङ्ग देशमें रोनेका कोला- हल मचगया । वहां के निवासियों ने पहिले भीख मांगना आरम्भ किया इसके अन- न्तर भीख भी कौन देता है सबोंने उपवास करना आरम्भ किया और ऐसा करने से वे लोग तब बीमार होनेलगे । गौ बेचडाली । बैल बेचडाले । हल बेचडाला । बीजके अन्न खा गये । घर, फुलवारी, बगीचा, जोतजमा प्रभृति सब बेच डाले । हाय ! तब लड़की बेचना आरम्भ किया । इसके अनन्तर लड़का, अन्त में स्त्री भी बेच डाली । लड़का, लड़की, स्त्रियों का खरीदनेवाला कौन हो ? सब बेचनाही चाहते हैं कोई खरीदनेवाला नही । अन्नके अभावसे पेढ़ के पत्ते खानेलगे । घास खाना आरम्भ किया । डाल खाना आरम्भ किया । छोटेजात के लोग और वनचर इतर- जातीय कुत्ता, बिल्ली, चूहा आदि खानेलगे । बहुत जो भागगये वे लोग विदेश में अनाहार से मरे जो नहीं भागे वे उपवास और अखाद्य खाकर रोगी हो प्राण त्यागने लगे । रोगने अवसर पाया, ज्वर, हैज़ा, क्षयी, माता आदिने अपना अधिकार फैलाया, माता (शीतला) का प्रादुर्भाव अधिकहुआ । घर में आदमी मरनेलगे । कौन किसको जल देगा और कौन किसकी शुश्रूषा करेगा कोई किसीकी चिकित्सा नहीं करता। कोई किसीको देखने नही जाता, मरनेपर कोई किसीको फेंकता तक नहीं अत्यन्त सुन्दर शरीर इमारतों में पड़ा सड़ाकरता है । माता के एक बेर प्रवेश करतेही उस घर के वासी सब लोग रोगी छोड़कर बाहर भागजातेथे ।

महेन्द्रसिंह पदचिह्न गांव में बडे धनवान है परन्तु आज धनी और दरिद्रियों का एकही भाव है । ऐसे दुःख के समय में व्याधिग्रस्त हो उन के इष्ट, मित्र बन्धुबान्धव, दासी, दास आदि सभी चलेगये । कोई मरगये । कोई भाग गये । इतने बड़े परिवार में अब वह स्वयं और उनकी स्त्री तथा एक अबोध कन्यामात्र, है उन्हीं लोगों के विषय में कहचुकाहूँ ।

उनकी स्त्री कल्याणी चिन्ता छोड़ गोशालामें जा अपने से गाय दुह और दूध गरमकर कन्या को पिला गौओं को घास दे आई । लौट आने पर महेन्द्र बोले "इस- रीतिसे कितनेदिन चलेंगे" ? कल्याणी बोली "बहुत अधिक दिन नही जितने दिन चलें उतनेदिन चलाऊंगी" उसके अनन्तर आप लड़की को लेके नगरमें ले जाइयेगा । महेन्द्र–यदि नगरही में जानाहै तो तुम्हें इतना कष्ट क्यों दें । चलो । अभी चलेचलें ।

इसके अनन्तर दोनों में अनेक तर्क हुए ।

क–नगर में जाने से कोई विशेष उपकार होगा ?

म–प्रायः वह स्थान भी ऐसाही जनशून्य हुआ होगा ।

क–यदि ऐसाही वहांहो तो मुर्शिदाबाद, काशिमबाजार या कलकत्ते जानेसे प्राणरक्षा होगी । अब यह स्थान सर्वथा त्यागनाही उचित है ।

म–यह घर बहुत कालसे पुरुषानुक्रम सञ्चित धनोंसे परिपूर्ण है । जानेसे तो यह सब लुट जायगा ।

क–लुटेरों के आनेसे क्या हम दो आदमी रक्षा करसकेंगे ? प्राण नहीं रहनेसे धनही कौन भोगेगा । चलिये, यह सब वन्दकरके जांय । यदि बचेंगे तो फेर आकर भोग करेंगे ।

म-तुम रास्ते में पैदल चलसकोगी ? कहार तो सब मरगये। बैल है तो गाड़ीवान नहीं, गाड़ीवान हैं तो बैल नहीं।

क-मैं पैदल रास्ता चलसकूंगी आप चिन्ता न करें कल्याणीने अपने मनमें स्थिर किया कि, न हो तो रास्तेमें मरकर पड़रहूँगी। तब भी ये दोनों तो बचजायंगे।

दूसरे दिन प्रातः होतेही दोनों स्त्री पुरुष कुछ धन साथले घरका दरवाजा बन्द-कर गौओंको खोलकर छोड़ और कन्याको गोदीमें ले राजधानी की ओर बिदा हुए। यात्राके समय महेन्द्र बोले "पथ बड़ाही दुर्गम है। सब स्थानों पर लुटेरे डकैत फिरते हैं खाली हाथ जाना अच्छा नहीं" ये कह महेन्द्र घर आकर बन्दूक गोली बारूद साथ ले गये। यह देख कल्याणी बोली "यदि आपने अस्त्रकी बात याद दिलायी तो एक बेर आप कृपाकरके सुकुमारीको जरा पकड़िये मैं भी हथियार ले आती हूँ" यह कह कल्याणी कन्याको महेन्द्रकी गोदीमें दे आप घरमें चली गई। यह देख महेन्द्र बोले तुम अब कौन हथियार लोगी ? कल्याणीने घरसे आकर एक छोटीसी डिबिया अपने कपड़ेमें छिपाकर बांधलिया। विपत्कालमें क्या होते क्या हो ऐसा विचार कल्याणीने पूर्वही विष संग्रह कर रक्खा था।

जेठका महीना है प्रचण्ड धूपसे पृथ्वी अग्निमय होगई है। वायु भी आगके समान बहरहा है। आकाश तो मानों तपे हुए चँदवेके ऐसा मालूम होता है। रास्ते की धूल भी चिनगारीकी तरह मालूम पड़ती है। कल्याणीको पसीने आने लगे। वह कभी बबूलके छायेमें कभी खजूरके साये में बैठ बैठ कर सूखे। पोखरोंका कादो से मिला जल पीकर बड़े कष्ट से रास्ता चलने लगी। कन्या महेन्द्र की गोदी में है। और वह कभी २ उसे हवा करते हैं। एक बेर एक घने हरेपत्तों से सुशोभित फूल फल वाली लतासे वेष्टित वृक्ष की छाया में बैठ इन दोनों ने विश्राम किया। महेन्द्र कल्याणी की श्रमसहिष्णुता देख चकित हुए। और अपना कपड़ा पासवाले गड्हे से भिगोकर पानी ला अपने और कल्याणी के हाथ मुँहपर छिड़का। कल्याणी थोड़ी ठंढी तो हुई परन्तु भूख से दोनों बड़े अकुला उठे थे। वे लोग अपनी भूख प्यास सहसकते थे पर कन्या भूख प्यास नहीं सहसकती थी। इसलिये वे लोग फिर रास्ता चलने लगे। उस आग के समुद्र को तैर कर वे दोनों सन्ध्या के पूर्व एक चट्टी में पहुँचे। महेन्द्र के जीमें बड़ीही आशा थी कि चट्टी में पहुँचकर वह स्त्री और कन्या को ठंढा पानी और प्राण रक्षा के लिये भोजन देसकेंगे। परन्तु हाय ! चट्टी में तो एक मनुष्य भी नहीं है। बड़े बड़े घर खाली पड़े हैं। आदमी सब भाग गये। महेन्द्र इधर उधर देख स्त्री और कन्या को एक घरमें रख बाहर आके खूब जोर से पुकारने लगे। परन्तु कहीं से कुछ उत्तर नहीं मिला। तब महेन्द्र कल्याणी से बोले-"किञ्चित् साहस करके यहां अकेली रहो देखें यदि दीन-दयालु श्रीकृष्णचन्द्र की दया हुई और इस प्रान्त में जो गौ होगी तो मैं दूध अवश्य लाऊँगा" यह कहकर महेन्द्र मिट्टी का एक घड़ा जो वहां बहुत से पड़े थे लेकर बाहर निकले।

दूसरा परिच्छेद।

महेन्द्र चले गये। कल्याणी अकेली कन्या को लिये उस जनशून्य स्थान में अर्थात् उस अँधियाली झोपड़ी में चारोंओर देखनेलगी। और मनहीमन बड़ाही भय खानेलगी। कोई कहीं नहीं है मनुष्यमात्र का शब्द नहीं पाया जाता है केवल कुत्ते गीदड़ों की चिल्लाहट सुनाई देती है।

वह सोचनेलगी "क्यों उन (महेन्द्र) को जाने दिया। न होता तो और थोड़ी देर भूख प्यास सहते"।

कल्याणी ने विचार किया कि चारोंओर दरवाजा बन्दकर बैठूं परन्तु एक भी दरवाजे में किवाड़ न थे। इसी भांति चारोंओर देखते देखते सामने के एक दरवाजे पर कल्याणी ने एक छायासी देखी। आदमीकासा चेहरा मालूम होता है पर आदमी मालूम नहीं होता बड़ाही सूखा दुबला खूब कालारङ्ग नङ्गा विकटाकार मनुष्य ऐसा कोई वस्तु दरवाजेपर आके खड़ा हुआ। थोड़े काल के अनन्तर ऐसा मालूम पड़ा कि उस छायाने एक हाथ उठाया। अस्थिचर्म्मावशिष्ट अत्यन्त लम्बा सूखे हाथों की सूखी अंगुलियोंसे उसने मानों इशारे से किसी को बुलाया। कल्याणीका प्राण सूख गया। तब वैसाही एक और छाया सूखी काली लम्बी नंगी प्रथम छाया के पास आ खड़ी हुई। इसके अनन्तर फिर एक आई तब फिर एक ऐसी कितनीही आई और चुपचाप धीरे धीरे उस घरमें पैठने लगी। वह अँधियारा घर रात को श्मशानसा भयङ्कर हो उठा। उसके अन्तर प्रेत सदृश वे मूर्त्तियां कल्याणी और उस की कन्या को घेर के खड़ीहुई। कल्याणी मूर्च्छिता होगई। उन काले दुबले मनुष्यों ने तब कल्याणी और उसकी कन्या को पकड़के उठाया और घरके बाहर का मैदान पारहो एक वनमें प्रवेश किया। कुछ देर के अनन्तर महेन्द्र घड़े में दूध ले उस स्थान पर पहुँचे तो देखा कि, कोई कहीं नही है। पहिले इधर उधर खोजकर पीछे कन्या का नाम ले अन्त में स्त्री का नाम ले बहुत पुकारा परन्तु कोई उत्तर अथवा कोई पता नहीं पाया।

तीसरा परिच्छेद।

जिसवनमें लुटेरोंने कल्याणी को रक्खाथा वह वन बड़ाही सुन्दरथा। ज्योति नही है शोभा देखकर आनन्द लाभ करै वैसा आंखवालाभी कोई नहीं है। इसीसे दरिद्रके हृदय के अन्तर्गत सौंदर्यसी वह वनकी शोभाभी अदृष्ट रही।

देशमें खानेको रहै अथवा न रहै। वनमें फूल है फल है और फूलोंकी सुगन्ध फलने से उस अँधियारे में भी मानों प्रकाश जान पड़ता है। (अर्थात्—लोग उसमें आनन्दसे जासकते थे)।

वनके एक साफ और मुलायम घासों से ढके हुए स्थानपर लुटेरों ने कल्याणी और उस की कन्या को रक्खा। वे लोग उन दोनों को घेर कर बैठगये और तब बकवाद करने लगे कि, इन दोनों को लेके क्या करना चाहिये। कल्याणी के ऊपर जो कुछ जेवर था उसको वे लोग पहिलेही लेचुके थे। और एक दल उसके बांटने में बड़ा दत्तचित्त था। गहने बिलकुल बँटने के अनन्तर एक लुटेरा उसमें से बोलउठा "हम लोग सोना चांदी लेकर क्या करेंगे। एक गहने के बदले कोई एक मुट्ठी

चावल हमें दे। भूख से प्राण जाता है आज खाली पेड़ के पत्ते खाये हैं"। एक के यह बात बोलतेही सब कोई हल्ला मचाने लगे "चावल दो, चावल दो, भूख से प्राण जाता है सोना चांदी नहीं चाहिये" उन लोगों का सरदार उन लोगों को चुप कराना चाहता है। परन्तु कोई चुप नहीं होता धीरे धीरे ऊँची नीची बात गाली फजीहत होनेलगी। अन्त में मार होने का उपक्रम हुआ। जिनको जो गहने बांट में मिले थे वे उन्हीं को सरदार पर फेंककर मारने लगे। सरदार ने भी दो एक को मारा तबतो सब लुटेरों ने मिलकर अपने सरदार को खूब मारना आरम्भ किया। सरदार तो भूख के मारे कमजोर और दुबलाथाही। एक दो चोट खातेही गिरकर मरगया। तब उन भूखे क्रोधभरे ज्ञानशून्य लुटेरों के बीच में से एक बोला "गीदड़, कुत्तेके मांस तो बहुत खाये हैं तो भी भूख से प्राण जाता है आओ आज इसी सरदार को खांय" यह सुन सबों ने "जयकाली"! कह बड़ा कोलाहल मचाया। "जयकाली ! आज नरमांस खांयगे" यह कह उन काले सूखे शरीरवाले प्रेत की ऐसी मूर्त्तियोंने ही, ही, कर और ताली बजा बजाकर हँस हँस नाचना आरम्भ किया। सरदारके शरीरको पकानेके लिये एक आदमी ने आग बारना आरम्भ किया।

सूखी लता, लकड़ी, घास, आदि ढेरकर चकमकसे शोलेमें आग बार उन घास और लकड़ियोंकी ढेरीको जला दिया। यों कुछ कुछ आगके जलनेसे पासवाले आम, कटहल, नीबू, इमली, ताल और खजूर आदि वृक्षोंके हरे हरे पल्लवोंकी पंक्तियां थोड़ी थोड़ी दिखाई पड़ने लगी। कही पत्ता जलने लगा कही घास साफ साफ मालूम होने लगी। कहीं ऑधियारा और भी अधिक होगया। आग के खूब बल उठनेसे एक आदमी मुरदेका पाँव पकड़ घसीटता हुआ आग में फेकने चला। तब एक बोल उठा "रहो ठहरो! यदि महामांस ही खाके आज प्राणरक्षा करना होगा तो इस बूढ़े का मुखा मांस क्यों खांय? आज जो लूटके लाये हैं उसी को खांयगे। आओ उस कोमल बालिका को पकाके खांय"।

और एक बोला "अरे बाबा! जो हो, पकाओ अब भूख सही नहीं जाती" तब तो सबकोई बड़े लालची होके जहां कल्याणी कन्या को लेकर सोई थी उधर भी देखने लगे देखा कि वह स्थान खाली है। कन्या भी नहीं है, माता भी नही है। डकैतों के झगड़े के समय का सुयोग पा कल्याणी कन्या को गोदी में ले स्तनपान कराती हुई जङ्गलमें भाग गई। शिकार भागा है, जान कर प्रेतमूर्त्ति डकैतों के दल मारो, मारो. चिल्लाते हुए चारो ओर दौड़े। अवस्था विशेष से मनुष्य भी हिंसक जन्तु सा होजाता है।

चौथा परिच्छेद।

वन बड़ा अँधेरा है। कल्याणी उसमें रास्ता नही पाती, वृक्ष, लता और कांटोंके सघन गुथे रहने से एक तो रास्ता ही नहीं है दूसरे फेर अँधेरी रात! वृक्ष-लता और कांटे को अलग करती हुई कल्याणी जङ्गल में घुसने लगी कन्या के शरीरमें कांटों के गड़नेसे वह बीच बीच में रोनेलगी। यह सुन लुटेरे और भी चीत्कार करने लगे। कल्याणीका शरीर इसीभाँति लोहू लोहुवान होनेपर भी उसने बहुत दूर वन में प्रवेश किया।

थोड़े कालके उपरान्त चन्द्रोदय हुआ। इतने काल तक कल्याणी ... कुछ भरोसा था कि इस अँधेरे में डकैत उस को नहीं देखसकेंगे। और थोड़ी देर ढूँढ़ कर छोड़देंगे। परन्तु चन्द्रमा के उदय होतेही वह भरोसा चला गया। चन्द्रने आकाश में उदित हो बनके ऊपर अपनी चांदनी फैला दी। वन के भीतर का अन्धकार ज्योतिसे परिपूर्ण और स्वच्छ हो गया। बीच बीच में वन के भीतर चांदनी के प्रवेश करने से ऐसा जान पड़ताथा मानो वह छेदसे उस बनको झांक रही है चन्द्रमा जितना ऊंचा होने लगा वनके भीतर चांदनी उतनीही प्रवेश करनेलगी और अँधियारा भी वनमें छिपने लगा। कल्याणीभी कन्याको लिये घने वनके भीतर छिपने लगी, तब लुटेरे और भी कोलाहल कर चारों ओर से दौड़कर आनेलगे। इससे कन्या और भी डर पाकर जोरसे रोनेलगी ऐसी अवस्था देख हताश हो कल्याणी ने और भागनेका उद्योग न किया एक भारी पेड़के नीचे कांटा शून्य घासवाले स्थानपर कन्या को गोदीमें ले वह केवल पुकारने लगी कि "कहां है वह जिनको मैं नित्य पूजा करती हूँ नित्य नमस्कार करती हूँ जिनके भरोसे वनके भीतर भी प्रवेश करसकी हूं, हाय! ऐसे दीनदयाल भक्तन तापहारी मधुसूदन आप कहां हैं?"।

उस समय कल्याणी एक तो भय दूसरे भक्तिकी दृढ़ता तीसरे भूख और प्यास से धीरे २ वाह्य ज्ञानशून्य आन्तरिक चैतन्यमयी हो सुनने लगी कि "आकाश में स्वर्गीय स्वर से गीत होरहा है"।

"हरे मुरारे मधुकैटभारे गोपाल गोविंद मुकुन्द शौरे"

कल्याणी ने बाल्यावस्था ही से पुराणोंमें सुना था कि देवर्षि नारद आकाश मार्ग में वीणाबजा के हरिनाम गातेहुए पृथ्वी में घूमा करते हैं। उस के मन में वही कल्पना उठने लगी वह मन हीं मन देखनेलगी कि सफेद (श्वेत) शरीर श्वेत केश श्वेत मोछ, श्वेत वसनवाले महादेहधारी महामुनि चन्द्रचन्द्रिका प्रदीप्त नीलाकाश में वीणा हाथ में लिये गा रहे हैं।

"हरे मुरारे मधुकैटभारे गोपाल गोविद मुकुन्द शौरे"

धीरे २ वह गीत पास सुनाई देनेलगा। तब कल्याणी और भी स्पष्ट सुनने लगी।

"हरे मुरारे मधुकैटभारे गोपाल गोविद मुकुन्द शौरे"

क्रमशः और निकट और स्पष्ट "हरे मुरारे मधुकैटभारे, गोपाल गोविंद मुकुन्द शौरे"

अन्त में कल्याणी के शिरपर वन को गुंजाता हुआ वह गीत सुनाई पड़ा।

"हरे मुरारे मधुकैटभारे गोपाल गोविंद मुकुन्द शौरे"

कल्याणीने तब आंख खोली। खोलते ही सामने उस वन का अँधियारा मिला हुआ धुंधरी चांदनी में वही श्वेतकेश श्वेत वसनवाले महातेजधारी श्वेतमूर्ति देखने में आई। संज्ञा पाते ही कल्याणी के मन में प्रणाम करनेकी इच्छा हुई। परन्तु प्रणाम नहीं कर सकी शिर झुकाते ही एकाएक अचेत हो पृथ्वीपर गिर पड़ी।

पांचवां परिच्छेद।

उसी वनके खूब लम्बे चौड़े स्थान पर टूटे फूटे पत्थरों से घिरा हुआ एक भारी मठ था। उस मन्दिर की सब इमारतें दो महली थीं। बीच २ में बहुत से देवमन्दिर थे और सामने नाचघर भी था। प्रायः सभी मकान दीवारोंसे घिरे थे। और बाहर में वन के पेड़ोंसे इस भांति ढकेहुये थे कि दिन में खूब निकटसे भी किसी को ज्ञात नहीं होता कि यहां पक्की इमारत है। वे सब मकान अनेक स्थानों में टूटेहुए थे परन्तु दिन को देखने से जान पड़ता था कि वे सब टूटे स्थान हाल: हीमें मरम्मत हुए हैं। देखने ही से बोध होता है कि इस अगम्य सघन वन में मनुष्य रहा करते हैं।

उस मन्दिरके एक कमरे में एक बड़ी धूनी जल रही थी और उसी कमरे के भीतर कल्याणी ने होश होने के अनन्तर पाहिले ही अपने सामने वही श्वेत शरीर और स्वच्छ वसनवाले महापुरुष को देखा कल्याणी चकितहो एकटक देखने लगी। अभीतक उसको कुछ पहिलेकी बात स्मरण नहीं होती थी यह देख वह महापुरुष बोले "मा! यह देवताका स्थान है। शङ्का न करो। थोड़ा सा दूध है, पीओ, तब तुम से बातैं करूँगा"। कल्याणीने पाहिले कुछ नही समझा। अस्तु कुछ कालके अनन्तर धीरे धीरे चित्त स्थिर होने से उस ने उस महापुरुष को साष्टाङ्ग प्रणाम किया। उस महापुरुष ने मङ्गलमय आशीर्वाद दे घरसे सुन्दर मिट्टीके बरतनमें दूध ला, उसी आग में जो वहां सुलग रही थी गरम कर कल्याणी को दिया और बोले "मा! कुछ आप पीओ और कुछ कन्या को पिलाओ तब मैं बातें करूंगा" कल्याणी खुशी से कन्या को दूध पिलाने लगी। और वह महापुरुष "जबतक हम न आवें चिन्ता नहीं करना" कह के मन्दिर के बाहर गये। बाहर से कुछ काल के बाद लौटआने पर देखा कि कल्याणी कन्या को दूध पिला चुकी है परन्तु आप ने कुछ नही पीया। दूध जैसा था प्रायः वैसाही पड़ाहै केवल थोड़ासा घटाहै तब वह महापुरुष बोले "तुम ने अभी तक दूध नहीं पीया है। मैं फिर बाहर जाता हूँ और जबतक तुम दूध न पीओ गी मैं लौट न आऊँगा"। वह महात्मा बाहर जाते हैं देख कल्याणी ने फेर उन को प्रणाम कर हाथ जोड़ खड़ी हुई। वनवासी बोले "क्या कहोगी?" तब कल्याणी बोली "मुझे दूध पीने की आज्ञा न दीजिये कोई बाधा है। मैं दूध न पीऊँगी" उस महापुरुष ने फिर बड़े. करुणस्वर से कहा "क्या बाधा है? मुझे कहो मै वन वासी ब्रह्मचारी हूं तुम मेरी कन्या तुल्य हो ऐसी कौन सी बात है जो मुझे न कहो गी। मैं जब वन से तुमको अज्ञानावस्था में उठालाया था तभी तुम भूख प्यास से अत्यन्त कातर जान पड़ती थी। नहीं खाने पीने से कैसे बचोगी"। कल्याणी तब गद्गद स्वर से आंख में आँसू भर के बोली "आप देवता है, आप को कहूँगी। मेरे स्वामी अभी तक निराहार हैं उन का दर्शन अथवा उन के खाने का संवाद नहीं पानेसे मै कैसे खाऊँगी"?।

ब्रह्मचारी ने पूछा "तुम्हारे स्वामी कहां हैं" ? कल्याणी बोली "सो मैं नहीं जानती। उनको दूध खोजने के लिये बाहर जाने के अनन्तर लुटेरे मुझे पकड़ लाये"। ब्रह्मचारी ने तब एक एक प्रश्न कर कल्याणी और उस के स्वामी का सब वृत्तान्त जान लिया। कल्याणी ने स्वामी का नाम नहीं कहा। और वह कह भी नहीं सकती थी परन्तु परिचय के अनन्तर ब्रह्मचारी सब बूझ गये और बोले "तुम्हीं महेन्द्र की स्त्री हो"

कल्याणी चुप चाप सिर झुका उस आग में जिस में दूध गरम होता था, लकड़ी देने लगी। तब ब्रह्मचारीजी बोले "तुम मेरी बात मानो, दूध पीओ, मैं तुम्हारे स्वामी का संवाद लाताहूँ। यदि तुम दूध न पीओगी तो मैं न जाऊँगा"।

कल्याणी बोली "यहां थोड़ा पानी मिलेगा ? ब्रह्मचारी ने जलका घड़ा दिखा दिया"। कल्याणी के चुल्लू मे ब्रह्मचारी ने जल भरदिया। कल्याणी उस जल को ब्रह्मचारी के पांव पास ले जाकर बोली 'आप इस मे अपना पद धूर देदीजिये" ब्रह्मचारी के अँगूठे से जल छूने के अनन्तर कल्याणी वह जल पी गई और बोली कि "मैं ने अमृत पीया है, और कुछ खाने को न कहिये। स्वामी का संवाद नहीं पाने से मैं कुछ नहीं खाऊंगी"।

तब ब्रह्मचारी जी बोले "तुम निर्भय होकर इस देवालय में रहो मैं तुम्हारे स्वामी के खोज में जाताहूँ"।

छठां परिच्छेद।

रात बहुत थी। चन्द्रमा ठीक आकाशके बीचो बीच मानो सिर के ऊपर थे। पूर्णिमा नहीं थी जो चांदनी तेज होगी। एक बड़ा भारी लम्बा चौड़ा मैदान है, उस अन्धकार की छायायुक्त बड़ी धुँधली ज्योति पड़ती थी। उस प्रकाश से मैदान का इस पार उस पार उस में क्या है देखा नही जाता था। वह अपार मैदान बिलकुल जन शून्य था। मानो वह डर का घर ही जान पड़ता था। उसी मैदान हो के मुर्शिदाबाद से कलकत्ते जाने का रास्ता था।सड़क के किनारे में एक छोटीसी पहाड़ी थी और उस के ऊपर आम प्रभृति अनेक प्रकार के वृक्ष लगे थे। पेड़ों की फुनगियां चन्द्रमा के प्रकाश से चमक कर थर थर कांप रहीं थी (और उनकी छाया भी काले पत्थरों पर थर थर कांप रही थी) ब्रह्मचारी उसी पहाड़ की चोटी पर चढ़, चुप चाप खड़े हो कुछ सुनने लगे। क्या सुनने लगे सो हम अभी नहीं कहसकते। उस बड़े भारी मैदान में पेड़ों के पत्तोंकी खड़खड़ाहट छोड़ और कुछ सुनाई नहीं पड़ता था। एक तरफ पहाड़ और उसकी तराई मे वड़ा जंगल, ऊपर पहाड़ और नीचे सरकारी सड़क और बीच में वह जंगल था। वहां क्या संशय हुआ यह कह नहीं सकते। परन्तु ब्रह्मचारीने उधरही उस घने जंगलमें प्रवेशकर देखा कि उस के बीच पेड़ों के नीचे अँधियारे में एक पांती से बहुत से मनुष्य बैठे हैं। वे लोग, काले, हथियार बन्द और दीर्घाकार हैं। उन लोगो के चोखे शान दिये हुये हथियार सब पेड़ों के बीच बीच में झलमला रहे हैं। इस तरह सजे हुये सौ, दोसौ मनुष्य बैठे होंगे। परन्तु कोई बात भी नहीं बोलता। ब्रह्मचारी ने धीरे धीरे जाके क्या एक सङ्केत किया कि जिससे न कोई उठा न बोला और किसी ने किसी प्रकार

का शब्द भी न किया। उसअँधेरे में सब के सामने वह सब के मुँह देखते हुए चले गये। जैसे किसी को ढूँढ़ रहे हैं पर पाते नहीं खोजते खोजते एक को पहचान उस का सिर पकड़ कर इशारा किया और वह संकेत समझ उठ खड़ा हुआ। और ब्रह्मचारी के पीछे पीछे चला। ब्रह्मचारी उसको दूर ले जा खड़े हुए, वह पुरुष जवान बड़ा ही काला, खूब बलवान् और सुन्दर था उसका मुँह दाढी मूछोंसे ढका हुआ था वह गेरुआ पहिरे हुए और चन्दन लगाये हुए था। ब्रह्मचारी उस से बोले "भवानन्द! महेन्द्रसिंह का कोई सम्वाद जानते हो"? भवानन्द बोला "महेन्द्रसिंह आज भोर अपनी स्त्री और कन्या को ले घर छोड़ मुर्शिदाबाद की ओर जा रहे थे चट्टी में"–इतना बोलते ही ब्रह्मचारी बोले "चट्टी में जो हुआ है मैं जानता हूँ किसने किया"?।

भवानन्द–गांवके आदमियों ने। अभी सब गांव के हरवाहे आदि पेट के लिये डकैत हो गये है। आज कल कौन डकैत नही है? हम लोगोंने भी तो आज लूटही कर खाया है। कोतवाल साहब का दोसौ मन चावल चला जाता था सो लेकर वैष्णवों के भोग में लगा दिया।

ब्रह्मचारी–हँसके बोले "चोरों के हाथोंसे तो मैंने उसकी स्त्री और कन्या को उबारा है औरअभी उन दोनों को मठमें रख आया हूँ तुम्हारे ऊपर यह काम सौंपता हूं कि महेन्द्र को खोज उस की स्त्री और कन्या को उसे सौंप दो जीवानन्द के रहने से यहां के काम का उद्धार होगा"।

भवानन्द ने स्वीकार किया। और तब ब्रह्मचारी दूसरे स्थान को चले गये।

सातवां परिच्छेद।

चट्टीमें बैठने से कोई काम सिद्ध होने की सम्भावना नही बरन् राजनगरमें जाकर राजा के अमलों की सहायता से अपनी स्त्री और कन्या का खोज करसकूंगा यह विचार, महेन्द्र सिंह उसी ओर चले कुछ दूर जातेही सड़कपर देखा कि, बैल गाड़ियों को घेरे हुए बहुत से सिपाही जा रहे है।

राजनगर अथवा नगर किसे कहते हैं उसकी व्याख्या यहां करनी उचित है। ११७६ सालमें वीर भूमि प्रभृति देश अङ्गरेजों की मातहत नही हुआ था। अङ्गरेज़ तब बंगाल के दीवान थे। वे लोग वङ्गदेश का खजाना अदा करलेते थे, परन्तु तब तक वङ्गालियों के धन और प्राण की रक्षा का कोई अधिकार उन को नहीं था। उस समय रुपया लेने का अधिकार तो अङ्गरेजों को और धन ग्रहण रक्षा का भार पापी नराधम विश्वासघातक मनुष्य कुलकलंक मीरजाफर के ऊपर था। मीरजाफर अपनीही रक्षा नहीं करसका था तब वङ्गालियोंकी रक्षा कैसे करसकता।

वह चंडू मदक पीके सदा सोया करैं और अङ्गरेज रुपया अदाकर डिसप्याच लिखा करैं, बङ्गाली रोया करैं और सत्यानाश में मिलाकरै, वङ्गदेश के लिये तो यही साधारण नियम था। परन्तु वीरभूमि प्रदेशो के लिये कुछ अलग प्रबन्ध था। वीरभूमि का इलाका वीर भूमिके राजा के अधीन था और वे लोग पहिले स्वाधीन थे परन्तु जिस समय की यह घटना है उस समय मुर्शिदाबाद के अधीन हुये थे।

पहिले वीरभूमि में हिंदू राजा थे परन्तु इस समयका राजा मुसलमान है। जिस समय की यह कथाहै उसके पहिलेका राजा अलीवर्दीखां शिराजुद्दौला की सहायता

महेंद्र चकित हुए परंतु विना कुछ बोले भवानन्द के कथनानुसार काम किया। अँधेरे में गाड़ी के पहिये के पास थोड़ा हटके हाथ में बँधी डोरी को पहिये के ऊपर रख दिया। पहिये में घिस जाने से वह डोरी धीरे धीरे कट गई और उस के अनंतर इसी रीति पांवका भी बंधन काट डाला। इसी भांति बंधन मुक्त हो भवानन्द के सलाह से चुप चाप गाड़ी पर पड़े रहे और भवानन्द ने भी इसी प्रकार अपना बन्धन काट डाला। परंतु दोनों चुपकी साधें रहे। वनके किनारे सड़क के पास जिस स्थान पर ब्रह्मचारी खड़े चारों ओर देख रहे थे। उसी सड़क से इन लोगोंके जाने का रास्ता था। सिपाही लोगों ने उस पहाड के पास पहुँच ते ही देखा कि पहाड के टीला पर एक आदमी खड़ा है चन्द्रमा के प्रकाश में उसका काला शरीर देख हवलदार बोला "ओ! एक साला यहां भी खड़ा है उसे भी बोझ उठा ने के लिये पकड़ो" तब एक सिपाही उसे पकड़ ने को गया। सिपाही पकड़ ने को जा रहा है पर वह मनुष्य स्थिर खडा है। सिपाही उसे पकड हवलदार के पास ले आये, तो भी वह कुछ नहीं बोला। हवलदार ने हुक्म दिया "इस के शिरपर गट्ठर रक्खो" सिपाही ने उसके सिर पर मोट रख दिया और उसने उस में भी नाहीं न किया। उस के अनन्तर हवलदार फिर गाड़ी के पीछे चलने लगे। उसी समय अकस्मात् एक पिस्तौल की आवाज हुई और तुरन्त हवलदार साहब सिर से घायल हो पृथ्वी पर गिर कर मर गये। "इसी ने हवलदार को मारा है" यह कह एक सिपाही ने उस मोटिये का हाथ पकड़ा। मोटिये के हाथ में उस समय भी पिस्तौल था। उसने सिर पर से गट्ठर फेक पिस्तौल को उलटा कर सिपाही के सिर पर मारा। सिपाही को लगते ही वह मर गया। उसी समय हरिहरि शब्द करते हुए दोसौ अस्त्रधारी पुरुषों ने सिपाहियों को घेर लिया। सिपाही लोग सेनापति साहब के हुक्म की प्रतीक्षा कर रहे थे। साहब ने "डकैती हुआ है" जान गाड़ी के पास लाइन बांधने की आज्ञा दी। विपद काल में अंगरेजों की निशा टूट जाती है। हुक्म पाते ही सिपाही चौकोने आकार में व्यूह बांध सामने खड़े होगये और सेनापति की दूसरी आज्ञा पाते ही उन लोगो ने बन्दूक उठायी। उसी समय साहब के कमर से अकस्मात् उनकी तलवार किसी ने लेली और तुरंत उसी से उनका शिर काट डाला। साहब का शिर कटते ही वह घोडे से गिर गये। और फायर का हुक्म नही दे सके। सबों ने देखा कि एक व्यक्ति हाथ में तलवार लिये गाड़ी पर खड़ा हो, "हरि हरि शब्द कहता हुआ सिपाहियों को मारो २ पुकार रहा है," यह वही भवानन्द है।

अकस्मात् मालिक का शिर कटा देख और रक्षा के लिये कोई आज्ञा देने वाला नहीं, सोच सिपाहियों की बुद्धि थोडे काल के लिये हत हो गई और सब चेष्टा रहित हो गये। इसी अवसरमें तेजस्वी डाकुओं ने उन में से बहुतों को मार बहुतों को घायल कर गाड़ी के पास आ सब रुपया ले लिया। सिपाही लोग हार कर जी छोड भाग गये।

सिपाहियों के भाग जाने के वाद, जो टीले पर खडा था और लड़ाई के अन्त में प्रधान अध्यक्षता का भागी था। वह भवानन्द के पास आया और दोनों ने

आपस में आलिङ्गन किया। तब भवानन्द बोले "भाई जीवानन्द ! आप ने व्रत, सार्थक ग्रहण किया है"।

जीवानन्द बोले "भवानन्द आप का नाम सार्थक हो"। लूटे हुए धन को ठीक स्थान पर लेजाने के लिये जीवानन्द नियुक्त हुए। और अपने साथियों के संग जलदी उस स्थान को छोड दूसरी जगह चल दिये। भवानन्द वहां अकेले खड़े रहे।

नवां परिच्छेद।

महेन्द्र गाड़ी पर से उतर एक सिपाही का हथियार छीन लड़ाई में सहायता करना चाहते थे परन्तु उसी समय उन्हें स्पष्ट जान पड़ा कि ये लोग डाकू हैं और धन लेने ही के लिये इन लोगों ने सिपाहियों पर हमला किया है डाकुओं की सहायता करने से उन लोगों के दुराचार के भागी होना होगा, ये बिचार महेन्द्र लड़ाई के खेत से अलग जा खड़े होगये।

लड़ाई हो चुकने पर महेन्द्र तलवार ले, उस स्थान को छोड चलने को थे कि इतने मे भवानन्द इन के पास आ खड़े हुये। महेन्द्र ने उन से पूछा "महाशय ! आप कौन है"?

भवानन्द-बोले तुम को इस से प्रयोजन क्या है?।

महेन्द्र-मुझे कुछ प्रयोजन है। आज आप से मैंने विशेष उपकार पाया है।

भवावन्द-तुम को जो इस बात का ज्ञान है। सो तो मुझे बूझ नहीं पड़ता। तुम हाथ में हथियार लिये अलग खड़े थे न ! जमींदार के लड़के दूध घी खाने में खूब पेटू होते हैं परन्तु कार्य के समय उल्लू।

भवानन्द की बातें समाप्त होते न होते महेन्द्र घृणा से बोल उठे "डकैती करना तो कुकर्म है"।

भवानन्द बोले "डकैती ही की हो तो क्या हम लोगों ने तुम्हारा कुछ उपकार किया है न और कुछ करने की इच्छा भी रखते है"।

महेन्द्र-तुम लोगों ने तो मेरा कुछ उपकार अवश्य किया है, परन्तु और क्या उपकार करोगे? और डकैतों से इतना उपकार के बदले कुछ नहीं पाना ही अच्छा है।

भवानन्द-उपकार मानो या न मानो तुम्हारी इच्छा है यदि जी चाहे तो मेरे संग चलो मैं तुमको तुम्हारी स्त्री और कन्या से भेट करादूँगा।

महेन्द्र-फिर क खड़े हुए और बोले "सो क्या"?

भवानन्द कुछ उत्तर न दे आगे बढ़े। महेन्द्र ने देखा अब कोई उपाय नहीं। भवानंद के साथ चल पड़े और मन में बिचारने लगे कि येलोग किस प्रकारके डाकू है।

दशवां परिच्छेद।

उस चांदनी रातमें दोनों चुप चाप उस मैदान को पार हो चलने लगे। महेन्द्र शोकाकुल और चकित हो अहंकार से चले जाते थे, परन्तु भवानन्द ने अकस्मात् अपनी दूसरी मूर्ति धारण की। वह धीर प्रकृति संन्यासी मूर्ति, वह रणनिपुण वीरमूर्ति और वह गोरे सेनापति की मुण्डघातिनी मूर्ति और इस समय महेन्द्र को, गर्वसे तिरस्कार करने वाली मूर्ति अब नहीं है। जान पड़ता है कि चांदनी भरी हुई

इस शान्तिमयी पृथ्वी को वन पहाड़ मैदान नद नदी की शोभा देख उन का चित्त खिल उठा। समुद्र मानों चन्द्रोदय से हँस पड़ा है। भवानन्द ने हास्यमुख और प्रियभाषिणी मूर्ति धारण की और बात करने को बड़े ही व्यग्र हुए। उनके बात करने के अनेक चेष्टा करने पर भी महेन्द्र ने इस ओर कुछ ध्यान न दिया तब भवानन्द निरुपाय हो आपही आप गीत गाने लगे।

"वन्दन करौं सदा जननी को। शोभित सुजल सुफल सों शीतल
मलयानिलसों जुड़वत जीको। सुन्दर हरित सस्य सों पूरित
हरित हरित तिमि ठानत हीको" ॥

महेन्द्र गीत को सुन कुछ विस्मित हुए और उन के समझ में कुछ नहीं आया कि "शोभित सुजल सुफल सों शीतल मलयानिल सों जुड़वत जीको" ऐसी माता कौन है।

उन ने भवानन्द से पूछा माता कौन है?

भवानन्द बिना कुछ उत्तर दिये ही फेर गाने लगे।

विमल चांदनी निशि लहराती, प्रफुलित सुन्दर लता सुहाती,
मधुर वचन हँसि वदन लखाती, सुखवरदायिनि हैं सबही को
(वन्दन करौं सदा जननी को)

महेन्द्र–यह तो माता नहीं है यह तो देश है।

भवानन्द–हम लोग दूसरी मा को नहीं मानते–"जननी जन्मभूमिस्च स्वर्गादपि गरीयसी"। हम लोगों की माता हम लोगों को जन्मभूमि ही है। हम लोगों को "शोभित सुजल सुफल सों शीतल मलयानिल सों जुड़वत जीको" और पूरित हरित सस्य सो, छोड़ के और कोई मा बाप स्त्री पुत्र भाई बन्धु घर द्वार बाग बगीचा कुछ भी नहीं है। अब तो महेन्द्र बूझगये और बोले "अच्छा तब फेर गाओ"

भवानन्द ने फेर गाना आरम्भ किया।

वन्दन करौं सदा जननी को। शोभित सुजल सुफल सो शीतल
मलयानिल सों जुड़वत जीको। सुन्दर हरित सस्य सो पूरित
हरित हरित तिमि ठानत हीको॥ (वन्दन करौ०)

विमल चांदनी निशि लहराती, प्रफुलित सुन्दर लता सुहाती,
मधुर बचन हँसि वदन लखाती सुख वरदायिनि है सबही को॥
(वन्दन करौ०)

होत शब्द सप्त कोटि कण्ठ को उच्च महाविकराल, द्विसप्त कोटि भुज
रन में धारत सान भरे करवाल प्रबला मातु तुही सब सो है
कहै कौन अबला ऐसी को (वन्दन करौ०)

बहु बल धारति, शत्रु विदारति, भक्तन तारति, सखदै नीको,
तू विद्या हिय धर्म्म मर्म्म तू जानत जगत प्रान तोही को
(वन्दन करौं०)

शक्ति तुही है वीर भुजन में। भक्ति तुही है तिमि सज्जन में,
रचत मूर्त्ति तुअ माति भजन में। दुर्गा दश कर धरति असी को।
(वन्दन करौं०)

कमला तू है कमल विहारिनि। वाणी तू है विद्या कारिनि।
तू है माता निज जन तारिनि। नमहु सदा इमि दुख दमनी को॥
(वन्दन करौं०)
जैकमला अमला अतुला जै। जै जै सुजल सुफल माताजै।
धीभूषित श्यामा सरलाजै। यशगावो माता धरनीको।
(वन्दन करौं०)

महेन्द्रने देखा कि डाकू गीत गातें गाते रोने लगा तब महेन्द्र ने आश्चर्यसे पूछा "तुम लोग कौन हो"?

भवानन्द–हमलोग सन्तान है।

महेन्द्र–सन्तान क्या? किस की सन्तान?

भ० नं०–मा की सन्तान।

महेन्द्र–अच्छा! सन्तान भी कभी चोरी डकैती कर मा की पूजा करती है? यह कैसी मातृभक्ति है?

भवानन्द–हमलोग चोरी डकैती नहीं करते।

महेन्द्र–अभी तो तुम लोगोंने गाड़ी को लूटाहै।

भवानन्द–यह क्या चोरी डकैती है किसका रुपया लूटा है?

महेन्द्र–राजा का।

भ०नं०–राजा का? यह सब रुपया लेने का उसको अधिकार क्या है?

महेन्द्र–राजा का राजसत्त्व।

भ०नं०–जो राजा राजपालन नहीं कर सकता वह राजा काहे का।

महेन्द्र–जान पड़ता है तुम लोग किसी दिन सिपाहियों की तोपों के आगे पड़कर मरजाओगे।

भ०नं०–बहुत साले सिपाहियों को देख चुके है। आज भी तो देखा है।

महेन्द्र–अभी भली भांते से नहीं देखा है कोई दिन देखो गे।

भ०नं०–देंखे हीं गे तो क्या एक बेर छोड़ के दो बेर तो मरनाही नहीं है।

महेन्द्र–तो इच्छा कर ऐसे मरने से लाभ क्या?

भ०नं०–महेन्द्रसिंह! हम इतने दिन जानते थे कि तुम वीर पुरुष हो परन्तु जैसे सबहै वैसेही आज तुमको भी जाना। तुम भी केवल पेटू हो। देखो, सांप पृथ्वी में छातीके बल चलता है उसकी अपेक्षा अधम जीव मुझे देखने मे नही आता परन्तु उस केऊपर भी पांव देने से वह भी फन काढ़ काटने दौड़ता है तुम्हारा धैर्य क्या किसी भांति नष्ट नहीं होगा? देखो, मगध, मिथिला, काशी, काञ्ची, दिल्ली, काश्मीर प्रभृति किन देशों में ऐसी दुर्दशा है? किस देश के मनुष्य अन्नके अभाव से घास, पत्ता, कांटा, वनलता, सियार, कुत्ते मुरदे आदि खाते है? किस देश के मनुष्यों को सन्दूक रुपया रख के घर में देवमूर्त्ति रख के, दास दासी स्त्री पुत्र कन्या परिवार रख के, और यहां तक कि स्त्रियों को अपने गर्भ में संतान रख के भी शान्ति नहीं होती? किस देश में पेट चीर के लड़के निकाले जाते हैं? सब देशों में राजा के संग प्रजा का पालन करने का सम्बन्ध है। हम लोगों का राजा कहां पालन करता ह। धर्म गया, जाति गई, मान गया, कुल गया। और अब प्राण जाने पर ह नशे बाज मतवाले मुसलमानों को नहीं भगाने से हिन्दुओं का हिन्दूपन कभी नहीं रहेगा।

महेन्द्र–भगाओ गे कैसे ?

भवानन्द–मारके।

महेन्द्र–तुम क्या अकेले एक ही चपत में मारकर भगाओगे ?

भवानन्द–ने गाया "होत शब्द सप्तकोटि कण्ठ को उच्च महा विकराल, द्वि सप्तकोटि भुजरण में धारत शान भरे करवाल, कहै कौन अवला ऐसी को" ।

महेन्द्र–परन्तु देखते हैं तुम अकेले हो।

भवानन्द–अभी तो तुम ने दो सौ आदमी देखाहै।

महेन्द्र–वे लोग क्या सब कोई सन्तान हैं ?

भ० नं०–हां ! सब कोई संतान है। ऐसे एक हजार क्रमशः और भी जमा होंगे

महेन्द्र—मानो कि दश बीस हजार जमा हुए इस से क्या मुसलमानों का राज्य नष्ट होगा ?

भवानन्द–पलासी में अंगरेजों की कितनी सेना थी ?

महेन्द्र–अंगरेजों से बंगाली ?

भ० नं०–नहीं तो क्या शारीरिकशक्ति से कितना कार्य होगा ? देह में बल रहने से क्या गोला जोर से चलता है।

महेन्द्र–अच्छा तब अंगरेज और मुसलमानों में इतना भेद क्यों है ?

भ०नं०–सुनो, एक तो प्राण जाने से भी अंगरेज रण से नहीं भागते दूसरे अंगरेजों का हठ बड़ा है। जिस कार्य में वे लोग लगते हैं उसको सिद्ध कर ही छोडते हैं। मुसलमानों मे आलस्य भरा हुआ है। रुपये के लोभ से सिपाई लोग प्राण दिये फिरते है। तब भी वे लोग अपनी तनख्वाह नहीं पाते। और सब से बढ़ के तो साहब है, सो मुसलमानों में नहीं है। तोप का गोला एक स्थान में छोड दस स्थान में नहीं गिरेगा इस लिये एक गोले के गिरने से दो सौ के भागने का प्रयोजन कुछ नहीं है। परन्तु तोप का एक गोला भी गिरा तो मुसलमान अपने लड़के बूढ़े, बच्चे समेत भाग जाते हैं परन्तु हजारों गोलों के गिरने से एक भी अंगरेज नहीं भागता।

महेन्द्र–तुम लोगों में क्या यह सब गुण हैं ?

भ०नं०–नहीं, परन्तु गुण पेड़ से नहीं गिरता है अभ्यास करने से होता है

महेन्द्र–तुम लोग अभ्यास करते हो ? ।

भवानन्द–देखते नहीं हो। हम लोग संन्यासी हैं। हम लोगों का संन्यास अभ्यास ही के लिये है। अभ्यास सम्पूर्ण और कार्य उद्धार होने से हम लोग फेर गृहस्थ होंगे। हम लोगों को भी स्त्री पुत्र कन्या आदि सभी कुछ है।

महेन्द्र–तुम लोगों ने तो सब त्याग कियाहै परन्तु क्या मायाजाल काट चुके हो ? ।

भवानन्द–सन्तान को मिथ्या नहीं कहना चाहिये। और तुम्हारे सामने मैं झूंठी बड़ाई नहीं करूंगा। मायाजाल कौन काट सकता है। जो कहता है कि मैं ने माया काटी है उसे या तो माया कभी थी ही नहीं अथवा वह झूँठी बड़ाई करता है। हम लोग तो माया को नहीं काट सके हैं। हम लोग तो अपना व्रत पालन करते है। तुम सन्तान होओगे ? ।

महेन्द्र–मैं अपनी स्त्री और कन्या का संवाद बिना पाये कुछ नहीं कह सकता।

भवानन्द–तब चलो, तुम अपनी स्त्री और कन्या को देखोगे, यह कह दोनों चलने लगे भवानन्द फेर (वन्दन करौं सदा जननी को) गाने लगे।

महेन्द्र का गला अच्छा सुरीला था और उन को कुछ कुछ संगीत में भी अनुराग था इसलिये वह भी भवानन्द के साथ गाने लगे। गाते गाते उन के भी आंखों में आंसू भर आया। तब महेन्द्र बोले "यदि स्त्री और कन्या त्यागना न पड़े तो मैं भी यह व्रत ग्रहण करूंगा।

भवानन्द–जो यह व्रत ग्रहण करता है उस को स्त्री कन्या आदि त्यागना पड़ता है। यदि तुम यह व्रत ग्रहण करो तो तुम को स्त्री और कन्या से भेट नहीं होगी। उन लोगों की रक्षा के लिये अच्छा बन्दोबस्त किया जायगा। व्रत सफल हुए बिना उन लोगों का मुख दर्शन निषेध है।

महेन्द्र–मैं यह व्रत ग्रहण नही करूंगा।

ग्यारहवां परिच्छेद।

भोर हुआ। जो मनुष्यहीन वन इतने कालतक अंधकार और शब्दहीन था। इस समय प्रकाशमय और पक्षियो की मधुरध्वनि से आनन्दमय होगया है। उस आनन्दमय प्रभातमें आनन्दवन के बीच आनन्दमठ में सत्यानन्द ब्रह्मचारी मृगछाले पर बैठे सन्ध्या कर रहे हैं। जीवानन्द उन के पास बैठे हुए है इतने में भवानन्द भी महेन्द्रसिंह को लिये वहां आ पहुँचे। ब्रह्मचारी चुप चाप सध्या कर‑ने लगे। किसी को कुछ बोलने का साहस न हुआ. संध्या समाप्त होने पर जीवानन्द और भवानन्द दोनों ने उन को प्रणाम किया और चरण रज ले नम्रता पूर्वक बैठ गये।

तब सत्यानन्द भवानन्द को इशारे से बाहर ले गये। दोनों मे क्या कथा हुई सो हम लोग नहीं जानते। परन्तु थोड़े काल के अनन्तर दोनों मन्दिर में फेर लौटआये। और ब्रह्मचारी ने करुणायुक्त मधुरवाणी से महेन्द्र से कहा "बाबा! तुम्हारे दुःख से मैं अत्यन्त दुःखी हूं केवल उसी दीनबन्धु की दया से कल रात तुम्हारे स्त्री और कन्याको मैं उद्धार कर सकाहूँ" यह कह ब्रह्मचारी ने कल्याणीका सब वृत्तान्त वर्णन किया। और बोले "चलो, वे लोग जहां है तुमको भी वहां हीं ले जायँ" यह कह, ब्रह्मचारी ने महेन्द्रको अपने पीछे ले उस देवालय मे प्रवेश किया। प्रवेश करतेही महेन्द्र को एक ऊंचा लम्बा चौड़ा महल देख पड़ा। उस अरुणोदय की लाली मिश्रित प्रातः काल में जब कि पासवाले वन भी सूर्यके किरणोसे हीरेकी भांति चमक रहे थे,उस लम्बे चौड़े मकान से तब भी थोड़ा थोड़ा अँधियारा ही था। उस घर में क्या है पहले महेन्द्रको कुछ देखने में नहीं आया। परन्तु थोड़ी देर के अनन्तर उनको एक बड़ी भारी शंख चक्र गदा पद्मधारी चतुर्भुज मूर्त्ति, जिनके हृदय मे कौस्तुभमणि शोभा पा रहाहै और सामने सुदर्शनचक्र घूम रहा है स्थापित देख पड़ी महेन्द्रने और देखा कि मधुकैटभ स्वरूप दो विशाल शिरकटी मूर्तियां मानो लोहू में डूबीहुई चित्रित हो सामने रक्खी हैं।

वाम भाग में मुक्तकेशी शतदल कमलों की माला से सुशोभित भयभीता लक्ष्मी खड़ी हैं। दक्षिण भाग में वीणापुस्तक हांथ में लिये मूर्तिमान राग रागिनियों से वेष्टित श्री सरस्वती खड़ी हैं। सबके ऊपर विष्णु के शिर पर एक ऊंचा मञ्चहै तिस पर एक मोहिनी मूर्ति विराज रही है। वह लक्ष्मी सरस्वती से अधिक सुन्दरी है। और उन दोनों से उन का ऐस्वर्य भी बढ़के है। देव, दानव, गन्धर्व, किन्नर, यक्ष लोग सब उन की पूजा कर रहे हैं। ब्रह्मचारी ने खूब गम्भीर और डरी आवाज से महेन्द्र को पूछा "सब दिखाई देती है?

महेन्द्र–हां देती है।

ब्रह्मचारी–ऊपर में क्या है? देखचुके हैं?

महेन्द्र–हां देख चुकाहूं। ये कौन हैं?

ब्रह्मचारी–माता।

महेन्द्र–माता कौन?

ब्रह्मचारी–हमलोग जिनके सन्तान है।

महेन्द्र–वह कौन हैं?

ब्रह्मचारी–समय होनेसे पहचानोंगे अभी बोलो कहो "वन्दन करौं सदा जननीको" अभी और देखोगे–चलो,

तब ब्रह्मचारी महेन्द्र को दूसरे कमरे में ले गये। वहां महेन्द्रने एक अद्भुत सर्वाङ्गसुन्दरी सब अलंकारोंसे भूषिता जगद्धात्री मूर्त्ति देखी और बोले "यह कौन हैं"?

ब्रह्मचारी–माता जैसी थी।

महेन्द्र–सो क्या?

ब्रह्मचारी–इन्हीं ने हाथी, गैंड़े, सिंह, बनैले, पशुओ को दमन कर उन सबोंके रहने के स्थान में अपना पद्मासन स्थापित किया था। यही सर्वालङ्कार भूषिता हास्य-मयी सुन्दरी थी। यही प्रातः सूर्य के ऐसी वर्णवाली सब ऐश्वर्यों का समूह हैं। इनको प्रणाम करो।

महेन्द्र के भक्तिभावसे जगद्धात्रीरूपा मातृ भूमिको प्रणाम करने के अनन्तर ब्रह्मचारी ने उनको एक अँधेरा सुरङ्ग देखाकर कहा "इसके भीतर चलो"।

ब्रह्मचारी अपने ही आगे बढ़े। महेन्द्र भी डरते हुए उनके पीछे पीछे चले पृथ्वी के भीतर उस अँधियारी कोठरी में न जानें कहां से थोड़ा थोड़ा प्रकाश आता था। महेन्द्रने उसी धुँधली ज्योति में एक काली मूर्त्ति देखी।

ब्रह्मचारी–देखो माता जैसी हुई है।

महेन्द्र डरते हुए बोले–काली।

ब्रह्मचारी–हां काली, अन्धकार से ढकी हुई कालिमामयी है। सब कुछ लुट गया है इसी से नग्ना है आजकल देश में सब जगह श्मशान ही है इसी से माता ने-भी कङ्कालमाला धारण किया है। यहां तक कि शिवको अपने पाव के नीचे दलित करती है "हाय मातः"। ब्रह्मचारी के आंखो से आंसू की धारा बहने लगी।

महेन्द्रने पूछा हाथमें खड्ग और खप्पर क्यो हैं?

ब्रह्मचारी–हमलोग सन्तान है। माता के हाथ में अस्त्र दिया है। बोलो (वन्दन करौं सदा जननीको) महेन्द्रने "बन्दन करौं सदा जननी को" कह के काली को प्रणाम किया।

तब ब्रह्मचारी बोले "इस राह से आओ" यह कह, वे दोनों दूसरे सुरंग से ऊपर चढ़ने लगे। अकस्मात् उन लोगों को प्रातः काल के सूर्य भगवान् की किरण दीखने लगे और पक्षी चारोंओर गा उठे। उन दोनों ने देखा कि एक संगमर्मर के लम्बे चौड़े मन्दिर में सोने की बनीहुई दशभुजी मूर्ति प्रातः काल के किरणों से ज्योतिर्मयी हो जगमगा रहीहै।

ब्रह्मचारी प्रणाम कर बोले यह देखो। माता जैसी होगी दसो भुजा अनेक प्रकारके अस्त्र और शस्त्र और शक्तियों से सुशोभित हो दशों दिशा में फैली हुई है। पांवसे शत्रु को मर्दन कर रही है। सिंह ऐसा वीर भी इन के चरण की आधीनता स्वीकार कर पदाश्रित हो शत्रुओं को मारने में नियुक्त है। दिक् भुजा-कहते २ सत्यानन्द ब्रह्मचारी गद्गदकण्ठ हो रोनेलगे। दिक्भुजा नाना अस्त्रधारिणी, शत्रुमर्दिनी वीरेन्द्रपृष्ठविहारिणी माता के दक्षिण भाग में यह देखो भाग्यरूपा लक्ष्मी हैं। वामभाग में विद्याविज्ञानदायिनी सरस्वती विराज रही हैं। साथ में बलरूपी कार्तिकेय और विघ्ननाशकर्ता कार्यसिद्धरूपी गणेश विराज रहे हैं। आओ हम दोनों मिलके माता को प्रणाम करें"।

तब दोनों ने हाथ जोड़ ऊँचे स्वरसे एक सङ्ग "सर्वमङ्गलमाङ्गल्ये शिवेसर्वार्थसाधिके। शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोस्तु ते" यह पढ़ प्रणाम किया। दोनों के भक्तिभावसे प्रणाम करने के अनन्तर महेन्द्र बोले "माताके इस रूप का दर्शन कब पावेंगे"?

ब्रह्मचारी-जब माता की सब सन्तान उन को मा कहकर पुकारेगी उसी दिन ये प्रसन्न होगी

महेन्द्र एकाएक पूछ बैठे 'मेरी स्त्री और कन्या कहां हैं"?

ब्रह्मचारी- देखोगे चलो।

महेन्द्र-उन दोनों को केवल एक वेर देखके विदा कर दूँगा।

ब्रह्मचारी-विदा क्यों करोगे?

महेन्द्र-मैं इस महामन्त्र को ग्रहण करूंगा।

ब्रह्मचारी-कहां विदा करोगे?

महेन्द्र-थोड़ा विचार, बोले "हम को घर नहीं है। कोई स्थान भी नहीं है। इस महामारी में स्थान कहां पावेंगे"।

ब्रह्मचारी-जिस राहसे यहां आये हो उसी राह से मन्दिर के बाहर जाओ। मन्दिर के द्वारपर तुम को अपनी स्त्री और कन्या से भेंट होगी। कल्याणी अभी तक भूखी है। उसको पहिले भोजन करा के तब तुम्हारी जो इच्छा हो सो करना। अभी हम लोगों में से किसीकी भेंट नही होगी। यदि तुम्हारा ऐसा मन रहेगा तो उचित समय में हम तुमसे मिलेंगे।

इस के अनन्तर अचानक किसी दूसरे मार्ग से ब्रह्मचारी अन्तर्धान हो गये और महेन्द्र ने उनके बताये हुए स्थान में जाकर देखा कि कल्याणी कन्या को लिये नाट्यशाला में बैठी है।

सत्यानन्द ब्रह्मचारी महेन्द्र से विदा हो दूसरे सुरंग से नीचे उतर पृथ्वी के भीतर एक जनशून्य कमरें में पहुँचे वहाँ भवानन्द और जीवानन्द रुपया गिन गिन कर थाक लगा रहे थे। उस घरमें ढेर के ढेर हीरा, मोती, सोना, चांदी, मूँगा,

आदि सजाये पड़े थे। सत्यानन्द उस कमरे में पहुँचते ही बोले "जीवानन्द ! महेन्द्र आवेगा उसके आने से सन्तान का बहुत उपकार होगा। क्योंकि ऐसा होने से उस के कई पुरुषों का बटोरा हुआ धन सब माता की सेवा में लगेगा। परन्तु जब तक वह मन, वचन कर्म से माता का भक्त न बनै तब तक उसे ग्रहण न करो, तुम लोगों का कार्य समाप्त होने पर समय समय उसकी खोज अवश्य लेते रहना। और ठीक समय होने से उसको भी विष्णुमण्डप में उपस्थित करना और समय हो चाहे असमय हो उन लोगों की प्राणरक्षा करना क्योंकि जैसा दुष्टका शासन संतान का धर्म है वैसेही शिष्ट की रक्षा भी उनका धर्म है।

बारहवां परिच्छेद।

अनेक कष्ट सहने के अनन्तर महेन्द्र और कल्याणीमें भेट हुई कल्याणी फूट फूट कर रोने लगी। महेन्द्र भी रोये आंसू बन्द करने के लिये जितना वे आंखैं पोंछते रहे। उतने अधिक आंसू और बहते थे थोड़ी देर के बाद कल्याणी ने रोना बन्द कर के खाने की बात छेड़ी। ब्रह्मचारी का नौकर खाने की वस्तु सब रख गयाथा। कल्याणीने महेन्द्र को खाने को कहा। उस अकाल के समय में अन्न मिलने की तो कोई संभावनाही नहीं थी। परन्तु देश में जो कुछ मिलता था सन्तानो के लिये वह सब अत्यन्त सुलभ था। वह वन साधारण मनुष्य के लिये अगम्य था इसीलिये वनवासी लोग जो जहां फल-मूल पाते थे तोड़ के खाते थे परन्तु इस अगम्य वनका फल किसी को नहीं मिलता था इसी हेतु ब्रह्मचारी का नौकर बहुत सा वनफल और थोड़ासा दूध वहां लाने में समर्थ हुआ था। ब्रह्मचारीजीकी सम्पत्ति केवल कई एक गौ थी। कल्याणी के अनुरोध से महेन्द्र ने कुछ भोजन किया और इसके अनन्तर जो बाकी बचा था उसमें से कल्याणी ने भी एकान्त में बैठ के कुछ खाया। और कन्या को भी थोड़ा दूध पिलाया। और दूसरी बेर पिलाने को थोड़ा दूध रखदिया। इसके अनन्तर दोनों नींद से व्याकुल हुए। और सोकर अपनी थकावट दूर की। सोके उठनेके अनन्तर दोनों विचार करने लगे कि, अब कहां जायँ।

कल्याणी बोली "घरमें विपद जान घर छोड़ कर बाहर आये थे अभी जान पड़ता है कि, घरसे बाहरही विपद अधिक है इससे चलिये लौटकर घरही चलैं" महेन्द्र की भी यही इच्छा थी कि, कल्याणीको घरमे रख किसी उपाय से घर द्वार ठीक कर इस सुन्दर मातृसेवामें लगैं इसलिये वह भी शीघ्र सम्मत हुए और दोनों विश्राम कर कन्याको ले पद चिह्न की ओर बिदा हुये। परन्तु पदचिह्न जानेका मार्ग वे लोग इस दुर्गम वन में ठीक नहीं करसके। उन लोगोने विचार किया था कि, वनसे बाहर होतेही सड़क मिलेगी परन्तु वनसे बाहर होनेका मार्गही मिलना कठिन हो गया दोनों बहुत काल तक उस वनमें भटकते रहे। परन्तु बेर बेर घूमकर उसी मंदिरहीमें लौट आने लगे। बाहर होनेका कोई उपाय नहीं। "सामने एक अपरचित वैष्णव भेषधारी ब्रह्मचारी खड़ा हो हँसरहा है" देख महेन्द्र क्रुद्ध हो बोले गोसाई। हँसते क्यों हो?

गोसाईं–बोले "तुम दोनों इस वनमें किस भांति आये हो ?

महेन्द्र–जिस भांति हो यहां तो अब आचुके।

गोसाईं–जब आचुके तो बाहर क्यों नहीं जासक्ते ? यह कह ब्रह्मचारी और हँसने लगे।

महेन्द्र-रुष्ट हो बोले "तुम जो हँसते हो तो क्या तुम यहांसे बाहर होसकते हो?"

वैष्णव बोले "मेरे साथ आओ राह दिखा देता हूँ। तुम लोगोंने निश्चय किसी संन्यासी ब्रह्मचारी के साथ प्रवेश किया होगा नहीं तो इस मठ में आने जाने की राह किसी को ज्ञात नहीं है।" यह सुन महेन्द्र बोले "आप क्या सन्तान हैं?"

वैष्णव-हां? मैं सन्तान हूँ। हमारे साथ आओ तुमको राह दिखानेही के लिये मैं यहां खड़ा हूं।

महेन्द्र-आपका नाम क्या?

वैष्णव-मेरा नाम धीरानन्द गोस्वामी।

यह कह धीरानन्द बड़े कठिन मार्ग से उन दोनों को वन के बाहर कर आप अकेले वन में लौट आये। उन दोनों के आनन्द वन से बाहर होने के अनन्तर और कुछ दूर चलने से उन लोगों को हरे वृक्षों से सुशोभित एक मैदान मिला। उसके एक ओर वन के किनारे सरकारी सड़क थी वन के बीच हो के एक छोटीसी नदी कल कल शब्द करती हुई बह रही थी। उसका जल बड़ाही सुन्दर सुस्वाद और देखने में यमुनासा काला था। हरे हरे अनेक प्रकारके वृक्ष, उस के दोनो किनारोंमें उसकी छाया कर रहे थे। अनेक प्रकार के पक्षी उन पेड़ों पर बैठे अपनी अपनी बोलियां बोल रहेथे वह शब्द बड़ाही मधुर था। नदी के मधुर शब्द के संग वह शब्द भी मिलता था। कल्याणी का मन भी जान पड़ता है कि, उस की छाया के साथ मिल गया। वह नदी के किनारे एक वृक्ष के नीचे बैठ गई और महेन्द्र को भी पास बैठाया। स्वामी के बैठने पर उनकी गोदी से कन्या को अपनी गोदी में ले और उनका हाथ पकड़ वह थोड़ी देर चुप चाप बैठी रही। उसके अनन्तर बोली "आपको आज मैं बड़ा उदास देखती हूं, जो विपत्ति थी उससे तो अब उद्धार पाया तब शोच काहे का"?

महेन्द्र-तब एक लम्बी सांस ले बोले "मैं अब अपने में नहीं हू क्या करूँगा सो जान नहीं पडता,'

कल्याणी-क्यों?

महेन्द्र-तुम्हारे खो जाने के अनन्तर हमारे ऊपर जो घटनायें हुई सो सुनो यह कह, महेन्द्र ने जो जो हुआथा सो विस्तार पूर्वक वर्णन किया।

कल्याणी-मेरे ऊपर भी बहुत दुःख और विपत्ति पड़ी आप सो सब सुनके क्या करेंगे। इतने दुःख पर भी मुझे न जाने कैसे नींद आई और कल्ह रातमें सोगई। सोतेही स्वप्न देखने लगी (कौन पुण्य फल से ऐसा स्वप्न देखा सो मैं नहीं जानती पर मैने देखा है) कि, मैं एक अपूर्व स्थान में गई हूँ वहां मिट्टी नहीं है, वह केवल ज्योतिमय है अत्यन्त शीतल, शरद्काल के आकाश के ऐसा स्वच्छ और अत्यन्त मनोहर ज्योति है। वहां मनुष्य नही हैं। केवल ज्योतिर्मयी मूर्तियां है। वहां कोई शब्द नही होता केवल बहुत दूर में ऐसा जान पड़ा कि, गाने बजाने का कुछ कुछ साधारण शब्द होरहा है। सर्वदा नाना भांति के नये फूले हुए लाखों भाँति के फूलों का सुगन्ध फैलरहा है। वहां सबके ऊपर सबके देखने योग्य एक स्थान में मैंने देखा कि, कोई एक मूर्ति स्थापित है मानो नीलपर्वत अग्नि प्रज्वलित हो मन्द मन्द बल रहा है शिरपर उनके एक बहुत बड़ा अग्निमय मुकुट है और उनकी चार भुजाये है। उन के दोनों भाग में कौन हैं, सो मैं नहीं पहचान-

सकी परन्तु बोध हुआ कि, दो स्त्री मूर्ति हैं ऐसा रूप इतनी ज्योति इतना सौरभ है कि मैं उसे देखते ही व्याकुल होने लगी और देख नही सकी। परन्तु जान पड़ा कि, उस चतुर्भुज मूर्ति के सामने (यद्यपि चतुर्दिशा मेघाच्छन्न होने के कारण प्रकाश खूब नहीं निकला था धुंधला दिखाई देता था) अत्यन्त खिन्न रूपवती मर्मपीड़िता ज्योतिर्मयी मानो कोई एक और स्त्रीमूर्ति खड़ी रो रही है। मुझे भी मानों सुगंधित मंद वायु ने उड़ाके उसी चतुर्भुज मूर्ति के सिंहासन के नीचे ले आया और मुझे देखतेही मानों वह मेघमंडिता क्षीण कलेवरा स्त्री बोली "यही वह है इसी के लिये महेन्द्र मेरी गोदी में नही आता" उसके अनन्तर मानों स्पष्ट मधुर वंशी-ध्वनि सा शब्द हुआ। उस चतुर्भुज मूर्ति ने मानों मुझ से कहा "तुम स्वामी को छोड़ मेरे पास आओ यही तुम लोगों की मा है। तुम्हारा स्वामी इनकी सेवा करेंगे तुम अपने स्वामी के पास रहने से इनकी सेवा नहीं होगी, तुम चली आओ। मानो मैं भी रोके बोली "स्वामी को छोड़ किस भांति आऊंगी?" तब फिर वंशी ध्वनि हुई "मैं स्वामी माता पिता पुत्र कन्या सभी हूं मेरे पास आओ," मैंने इसका उत्तर क्या दिया सो स्मरण नहीं है परन्तु मेरी निद्रा भंग होगई, यह कह कल्याणी चुप होगई। महेन्द्र चकित हो डरकर मूर्ति के समान ठिठक गये। वृक्षों पर दाहियल सीटी भर रही थी पपीहा पिउ कहां २ कह, घोर शब्द मचा रहा था और अनेक प्रकार के पक्षी अपनी अपनी बोली बोल मनुष्यों के हृदय को आनन्द देरहेथे। नीचे वह नदी मधुर शब्द कररही थी। बीच बीच में कहीं सूर्य्य की किरण पड़ने से उसका जल चांदी सा चमक रहा था। वन फूलों के सुगन्ध को मन्द मन्द वायु चारों ओर फैलारहा था। नीले पहाड़ की पंक्तियां दिखाई देती थी। ऐसे रमणीय स्थान पर वे दोनों बहुत देरतक मुग्ध हो चुपचाप बैठे रहे कुछ काल के अनन्तर कल्याणी फिर बोली " आप क्या विचार रहे हैं" ?

महेन्द्र क्या करेंगे इसी विचार मे हैं। स्वप्न केवल डरानेवाला है। मनमें अपनेही से उत्पन्न हो अपनेही से नाश होता है। मानो वह जीवन का जल बिन्दु है चलो अब घर चलें।

कल्याणी–आपको परमेश्वर जहां आज्ञा देते हैं आप वहांही जाइये, यह कह कल्याणी ने कन्या को महेन्द्र की गोदी मे दिया।

महेन्द्र ने कन्या को गोदी में ले पूछा "और तुम कहां जावोगी?" कल्याणी दोनों हाथोंसे आंखों को मूंद, शिर थाम के बोली "मुझे भी ईश्वर ने जहां जाने कहा है मै भी वहीं जाऊंगी"

महेन्द्र चमक उठे और बोले सो कहां, कैसे?

कल्याणी ने विषकी डिबिया दिखाई।

महेन्द्र चकित हो बोले "सो क्या बिष खावोगी"?

कल्याणी "खाने की इच्छा की थी, परन्तु"–इतना कह, कल्याणी चुपचापहो विचार ने लगी।

महेन्द्र अचम्भे हो अपनी स्त्री के मुँह की ओर देखने लगे। एक एक पल उनको वर्षसा मालूम होने लगा। कल्याणी ने अपनी बात में इति नही लगाई देख महेन्द्र ने पूछा "परंतु कह, और क्या कहती थी"

कल्याणी–खाने की इच्छा थी परन्तु आप को और सुकुमारी को छोड़ वैकुण्ठ में भी जाने की इच्छा नहीं होती मैं नही मरूंगी, यह कह कल्याणी ने विष की डिबिया पृथ्वी पर रखदी । और दोनों आपस में अनेक प्रकार की बात चीत करने लगे । बात चीत करते करते दोनों का ध्यान दूसरी ओर चला गया । और इसी अवसर में कन्या ने खेलते खेलते विष की डिबिया उठाली जिसको दोनों में से किसी ने भी न देखा ।

सुकुमारी ने समझा कि, यह एक अच्छे खेलकी वस्तु है, डिबिया को ले खेलने लगी । कभी एक हाथ से पकड दूसरे से थपड़ावै कभी दोनों हाथ से खींचा करै कभी पृथ्वी पर पटकं, इसीभांति करते करते डिबिया खुलगई । और विषकी गोली गिरपडी । पिता के कपडे पर एक छोटीसी गोली गिरपडी है देख सुकुमारी ने जाना कि, यह भी कोई खेलने की वस्तु है और वह डिबिया फेंक उस गोलीही को उठा लिया । न जानैं सुकुमारी ने डिबिया को मुँह में क्यों नही लिया परन्तु गोली के बेर कुछ भी विलम्ब नहीं किया "प्राप्तमात्रेण भोक्तव्यम्" । सुकुमारी के गोली मुँहमें देतेही उसकी मा की दृष्टि उस पर पड़ी "क्या खाया रे सत्यानाश हुआ" यह कह कल्याणी ने कन्या के मुँह में अँगुली दिया और तब दोनों ने देखा कि, विष की डिबिया खाली है । सुकुमारी को शुरू में दो एक दांत हुए थे उसने उसको भी नया एक खेल समझा । दांत पर दांत बैठा माको देख, वह हँसने लगी, परन्तु इतने में विष का स्वाद खराब लगतेही कन्या ने मुख खोल दिया और कल्याणी ने गोली बाहर फेंक दी । कन्या रोने लगी । कल्याणी गोली बाहर कर नदी से आंचल भिगा कन्या के मुँह में जल देने लगी और, अत्यन्त कातर हो महेन्द्र से पूछा "क्या कुछ पेटमें गयाहै" बाप मा के मन में आगे अशुभही की शंका होती है । जहाँ प्रेम अधिक है तहां भयही प्रबल होता है । महेन्द्र ने पहिले कभी नहीं देखा था कि, गोली कितनी बड़ी थो । परन्तु कल्याणी के पूछने पर गोली बहुत देर हाथ में ले बोले "जान पड़ता है की, बहुत खागई है"

कल्याणी को यह ठीक विश्वास हुआ । वह भी बहुत देरतक हाथ में गोली ले परीक्षा करने लगी । इतने में कन्या जो दो एक बूँट घोंटचुकी थी उसके प्रभाव से कुछ विकृत होने लगी । छट पट करते करते और रोते रोते अंत मे अचेत होगई । तब कल्याणी स्वामी से बोली " अब देखते क्या है । परमेश्वर की आज्ञानुसार सुकुमारी जिस राह में चली है मुझे भी उसी राह जाना होगा" । यह कह कल्याणी विषकी गोली तुरत खागई ।

महेन्द्र रोतेहुए बोले "कल्याणी ! तुमने यह क्या किया" ?

कल्याणी कुछ उत्तर न देकर स्वामी का चरण धूर शिरमे ले बोली "प्रभु बात में बात बढ़ेगी मै चलती हूं ।

महेन्द्र–"कल्याणी तुमने क्या किया" कह डाढ़ मारकर रोनेलगे ।

कल्याणी अत्यन्त क्षीणस्वर से बोलने लगी "मैने अच्छा किया एक मामूली स्त्री के हेतु आप कदापि देवता के कार्य में आलस्य न करें । देखिये मैं देववाक्य लंघन करने लगी इसी से मेरी बेटी चलीगई और अब अवहेला करने से कदाचित् आपको भी खो बैठूंगी" ।

महेन्द्र ने रो के कहा "तुमको कहीं रख आते और हमलोगों का कार्य सिद्ध होनेसे फिर से तुम्हारे साथ घर में सुखी होते। कल्याणी ! तुम मेरी सर्वस्व हो जिस हाथ से मैं बलपूर्बक तरवार धरता उसी हाथको तुमने काट दिया। तुम्हारे बिना मैं कुछ नहीं हूँ"

कल्याणी–कहां मुझे लेजाते ? स्थान कहां है ? किसके घरमें स्थान है ? राहमें कहां जाने योग्य है कहां से जाइयेगा ? मैं आप के गले की बोझथी। मरी सो अच्छा हुआ। मुझे आशीर्वाद दीजिये कि, जिसमें मैं उस ज्योतिर्मय लोक में जा के फिर आपका दर्शन पाऊं"

यह कह कल्याणी ने फेर स्वामी का चरण रज शिरपर लेलिया। महेन्द्र कुछ उत्तर नहीं देखके और फिर रोने लगे। कल्याणी फिर अत्यन्त क्षीण मधुर और स्नेह मय स्वरसे बोली देववाक्य उल्लंघन करने का सामर्थ्य किसको है। मुझे जब परमेश्वर ने बुलाया तब मैं क्या रहसकती हूँ यदि मैं अपने से नहीं मरती तो दूसरा मुझे कोई अवश्य मारता। मैं ने मरके अच्छा किया। आपने जो व्रत ग्रहण किया है उसको काय मन वाक्यं से सिद्ध कीजिये। उसी में पुण्य होगा। और मुझे भी स्वर्ग होगा दोनों आदमी अनन्त स्वंर्ग भोग करेंगे"।

इतने में सुकुमारी दो एक बेर दूध वमन कर सँभल गई उसके पेट में इतना विष नहीं गया था जिसमें उसका प्राण नाश हो परन्तु महेन्द्र का चित्त उस ओर नहीं था। वह कन्या को कल्याणी की गोदी में रख दोनों को गाढ़आलिंगन कररोने लगे।

वन से मेघगर्जन सदृस गम्भीर शब्द सुनाई पड़ने लगा।

"हरे मुरारे मधुकैटभारे गोपाल गोविंद मुकुन्द शौरे"

तब कल्याणी मधुर क्षीणस्वर से पुकारने लगी "हरे मुरारे मधुकैटभारे" और महेन्द्र से कहा बोलिये "हरे मुरारे मधुकैटभारे"

वन से निकला हुआ मधुर स्वर और कल्याणी के मधुर स्वर से मुग्ध हो संकट में केवल ईश्वर सहाय है, यह विचार महेन्द्र भी पुकारने लगे "हरे मुरारे मधुकैटभारे" तब तो चारो ओर नदी के मानो कल कल शब्द से भी "हरे मुरारे मधुकैट भारे" की ध्वनि होने लगी। मानों वृक्षों पर के पक्षी भी "हरे मुरारे मधुकैटभारे" पुकारने लगे। वन में भी मानो उन दोनों के संग एक स्वर से "हरे मुरारेमधुकैटभारे" का शब्द सुनाई पड़ने लगा। कल्याणी का स्वर क्रमशः क्षीण होनेलगा 'तब भी वह "हरे मुरारे मधु कैटभारे" पुकार रही थी। क्रमशः कण्ठ निस्तब्ध होगया। कल्याणी के मुँह में और शब्द नहीं है आंखें झँपगई। शरीर ठण्ढाहोगया, देख महेन्द्र ने समझा कल्याणी "हरेमुरारे मधुकैटभारे" बोलती बोलती वैकुण्ठ को चलीगई। तब वह पगले की भाँति ऊँचे स्वरसे वन को कँपाते पशुपक्षियो को डराते हुए "हरे मुरारे मधुकैटभारे" पुकारने लगे। उसीसमय न जानें पीछे से किसने आके महेन्द्र को गाढ़ालिङ्गन किया और वैसाही ऊंचे स्वर से "हरे मुरारे मधुकैटभारे" पुकारने लगा। तब वे दोनो उसी अनन्त भगवान की महिमा से उस अनन्त वन में उस अनन्तपथगामिनी के देह के सम्मुख अनन्त भगवान का नाम लेने लगे। पशु पक्षी सब चुप है और पृथ्वी अपूर्व शोभामयी है। उस अन्तिमगीत के लिये वह उपयुक्त मन्दिर है सत्यानन्द महेन्द्र को गोदी मे ले बैठगये।

तेरहवां परिच्छेद।

इधर राजधानी की सड़कों पर बड़ा हलचल पड़गया। खबर उड़ी कि,राज सरकार से खजाना कलकत्ते जा रहा था सन्यासियों ने उसे लूट लिया। अतएव राजाज्ञानुसार सिपाही लोग चारों ओर सन्यासियों को पकड़ने के लिये दौड़ने लगे। उस दुर्भिक्षपीड़ित देश में उस समय असल सन्यासी बहुत नहीं थे; क्योंकि वे लोग भीख मांग के अपना गुजर करते थे और उस समय लोग अपनेही खाने को मरते थे तो सन्यासियों को कौन भीख देता? इसलिये जो लोग वस्तुतः सन्यासी थे वे लोग काशी, प्रयाग आदि तीर्थस्थान में भाग गये थे। केवल सन्तानही इच्छानुसार सन्यासियों का भेष धारण करते और प्रयोजन पड़ने पर उसे त्याग भी देते थे. उस समय गोलमाल के कारण बहुतों ने सन्यासियों का भेष त्याग दिया था. अतएव सरकार के लालची नोकर ने सन्न्यासियो के बदले गृहस्थोंका घर लूट थोड़े ही लाभ मे सन्तोष किया करते थे। केवल सत्यानन्द कभी गेरुआ वस्त्र नही त्यागते थे।

उस काली,तरङ्गलेनेवाली छोटी नदी के किनारे सरकारी सड़क के पास पेड़के नीचे कल्याणी पड़ी थी, महेन्द्र और सत्यानन्द परस्पर आलिंगन करते हुए आंख डबडबाये परमेश्वर को पुकार रहे थे उसी काल में सिपाहियों के साथ एक मुसलमान जमादार वहाँ पहुँचा और तुरत सत्यानन्द के गले पर हाथ रख बोला "यही सन्यासी है" और एक सिपाही ने संन्यासी का साथी जरूर सन्न्यासी होगा यह विचार महेन्द्र को भी वैसाही पकड़ा और एक आदमी घास पर कल्याणी का मृत शरीर धरने जाता था परन्तु उसे जानपड़ा कि, यह स्त्री का मुरदा है इसी से उसे नहीं छुआ। और इसी हेतु से लड़की को भी छोड़दिया। इस के अनन्तर वे लोग बिना वाक्यव्यय के दोनों को बाँध के लेचले। कल्याणी का मृत शरीर और उस की अबोध कन्या बिना रक्षक के उस वृक्ष के नीचे पड़ी रही।

महेन्द्र तो पहिले शोक से भरे और ईश्वर के प्रेम में उन्मत्त हो ज्ञानशून्य थे। क्या हुआ और क्या हो रहा है कुछ भी नहीं समझ सके और इसी से बांधने में कोई आपत्ति नहीं की. परन्तु दो चार डेग आगे चलते ही उन को जान पड़ा, कि सिपाही लोग उन दोनों को बांध के लिये जाते हैं। कल्याणी का मृतशरीर पडा है दाह नहीं हुआ कन्या भी पडी है और इस समय उन दोनों को वनजन्तु खा सक्ता है; यह विचार महेन्द्र ने दोनो हाथो से जोरकर एक झटके में बंधनकी रस्सी तोड जमादारको एक ही लात मे गिरा सिपाही पर हमलाकर ने जाते थे कि, इतने में और तीन सिपाहियो ने तीनो ओर से उन्हे पकडकर काबू किया। तब तो महेन्द्र दुःख से कातर हो सत्यानन्द ब्रह्मचारी से बोले "आप की थोडी सहायता मिल ने ही से मैं इन पांचों दुष्टो को मार सकता" सत्यानन्द बोले "हमारे इस बुड्ढे शरीर में बलही क्या है? मै जिन्हें पुकार रहा था उन को छोड़ मुझे और कुछ बल नही है। तुम जो अवश्य होगा उसके विरुद्ध काम कभी मत करो। हम दोनों इन पांचो को हरा नहीं सकते; चलो देखें, ये लोग कहां ले जाते हैं "परमेश्वर सब रक्षा करेंगे" उस के अनन्तर उन दोनों ने छुटकारे का कोई उपाय नहीं किया और सिपाही के पीछे २ चलनेलगे। कुछ दूर जा सत्यानन्द ने सिपाहियों से पूछा "बाबा! हम लोग हरिनाम लिया करते हैं हरिनाम लेने में भी कुछ बाधाहै?" जमादार सत्यानन्द को सीधा जान बोला "तुम

हरिनाम लो मना नहीं करेंगे तुम बुड्ढे ब्रह्मचारी हो जान पड़ता है तुम्हारी रिहाई होगी लेकिन् यह बदमाश फांसी पड़ेगा" तब ब्रह्मचारी मधुर स्वर से कहने लगे।

"धीरसमीरे तटिनी तीरे वसति वने वर नारी।
न कुरु धनुर्धर गमन विलम्बन अति विधुरा सुकुमारी" ॥
इत्यादि—

राजधानी पहुँच कर वे दोनों कोतवाल के सामने किये गये। कोतवाल ने राज दरबार में इत्तिला दे ब्रह्मचारी और महेन्द्र को उस समय कारागार (जेहल) में रक्खा। यह जेहल बड़ा ही भयानक था जो उस में जाता सो उस से प्रायः बाहर नहीं होता, क्योंकि उस समय कोई बिचार करनेवाला तो था ही नहीं और न वह अङ्गरेजों का जेहल था न उस समय अङ्गरेजों का न्याय था। अभी नियम है उस समय अनियम था तब के समय से अभी के समय की तुलना कीजिये।

चौदहवां परिच्छेद।

सूर्य भगवान् अस्ताचल को गये जान रजनी देवी अपनी ताराओंकी फौज लिये अपना अधिकार जमाने को पहुँची। रातहुई। कारागार में बन्द सत्यानन्द महेन्द्र से बोले "आज बड़ा आनन्द का दिन है; क्योंकि हमलोग कारावद्ध हुये हैं कहो "हरे मुरारे" महेन्द्र ने बहुत करुणा स्वर से "हरे मुरारे" कहा।

सत्यानन्द—कातर क्यों हो बाबा! तुम यह महाव्रत ग्रहण करने से तो स्त्री और कन्या को अवश्य त्याग देते और तो कोई सम्बन्ध नहीं रहता।

महेन्द्र—त्यागना एक अलग बात है और यम के दण्ड में पड़ना एक दूसरी बात है जिस शक्ति से मै यह व्रत ग्रहण करता वह शक्ति मेरी स्त्री और कन्या के संग चलीगई।

स० नं०—शक्ति होगी मैं शक्ति दूंगा। महामन्त्र से दीक्षित हो महामन्त्र ग्रहण करो।

महेन्द्र रुष्ट हो बोले मेरी स्त्री और कन्या को गीदड़ कुत्ते खाते होंगे मुझ से व्रत की कथा मत कहिये।

स० नं०—उस के लिये तुम चिन्ता मतकरो सन्तानों ने तुम्हारी स्त्री का अग्नि संस्कार किया है और कन्या को उचित स्थान पर रख आया है।

महेन्द चकित हुए परन्तु उतना विश्वास नहीं किया और बोले "आपने कैसे जाना? आप तो बराबर मेरे साथ है"

स० नं०—हमलोग महाव्रत से दीक्षित हैं देव हम लोगों पर दया करते हैं आजकी रात तुम को समाचार मिलेगा और आजही की रात तुम कारागार से मुक्तिलाभ करोगे।

महेन्द्र कुछ नहीं बोले इससे सत्यानन्द ने समझा कि, इन को विश्वास नहीं होता है। तब सत्यानन्द बोले "विश्वास नहीं हो तो परीक्षा कर के देखो" यह कह सत्यानन्द कारागार के द्वार तक आये और क्या किया सो महेन्द्र अन्धेरे में देख नहीं सके। परन्तु यह भलीभांति समझा कि, उनने किसी से कुछ बात नहीं की। सत्यानन्द फिर आ महेन्द्र से बोले क्या परीक्षा चाहते हो तुम अभी इस कारागृहसे छुट्टी पावोगे यह बात पूरी होतीही थी, कि एक व्यक्ति घर के भीतर आके बोला "महेन्द्रसिंह किसका नाम है"?

महेन्द्र—मेरा नाम है।

आगन्तुक-तुम्हारी रिहाई हुई तुम बाहर जा सकते हो। महेन्द्र पहिले विस्मित हुए पछि मनमें मिथ्या जाना परीक्षा के लिए बाहर हुए परन्तु किसी ने उन्हें नहीं रोका वह सरकारी सड़क तक चले गए। इसी अवसर में आगंतुक सत्यानन्द से बोला "महाराज आप क्यों नहीं जाते? मै आपही के लिए आयाहूं।

सत्यानंद---तुम क्या धीरानंद हो?।

धीरानंद--जी हां।

सत्यानंद---पहरेवाले क्योंकर हुए?

धी०नं०-भवानंदने मुझे भेजा है। मैं नगर मे पहुँचा "आप लोग इस कारागार में हैं" यह सुन यहां आया और भांग मे कुछ धतूरा मिला खांसाहब को जो पहरा दे रहे थे पिलाया वे नशे में पडे पृथ्वी पर सो रहे हैं मैं उन्ही की वर्दी पेटी पगड़ी बरछा आदि सभी कुछ लगाये हुआहूँ।

स०न०-तुम उनको पहने हुए नगर के बाहर हो जाओ। मैं इस भांति नही जाऊंगा।

धी०नं०-क्यों? सो क्यों?।

स०नं०-आज संतानकी परिक्षा है।

महेन्द्र को फेर फिर आये देख सत्यानंद बोले "फेर फिरे क्यों"?

महेन्द्र-आप निश्चय सिद्ध हैं, मैं आपका साथ नहीं छोडूंगा।

स०नं०-अच्छा तब रहो। दोनों आदमी आज रात दूसरे उपाय से छूटेंगे।

धीरानंद बाहर गये। सत्यानंद और महेन्द्र जेहलखाने में पड़े रहे।

पन्द्रहवां परिच्छेद।

ब्रह्मचारी का गीत बहुतो ने सुना। उन बहुत लोगो में एक जीवानंद भी थे। पाठकोंको स्मरण होगा कि, जीवानंद को महेन्द्र के अनुवर्त्ती होने का आदेश था। जीवानंद एक स्त्री को जो सात दिन से अनाहार सड़क के किनारे पड़ी थी, देखा और उसीके लिए उन को वहां दो दंड बिलम्ब करना पड़ा। उस स्त्रीको मरने से बचा और उसे कृत्रिम अवाच्य कहते (क्योंकि बिलम्बकी अपराधिनी वही थी) जीवानंद आगे चले जाते थे कि, उन ने देखा कि उन के प्रभु को मुसलमान पकड़े लिए जाते हैं। जीवानंद महाप्रभु सत्यानंद का सङ्केत समझते थे।

"धीर समीरे तटिनीतीरे वसति बनेवरनारी"

क्या नदी के किनारे एक कोई क्षुधापीड़ित स्त्री पड़ी है? यह बिचार जीवानन्द नदी के किनारे किनारे चलने लगे। वे देख चुके थे कि, महाप्रभु सत्यानन्द ब्रह्मचारी को मुसलमान पकड़े लिये जारहे हैं। ऐसे स्थल में ब्रह्मचारी का उद्धार करना ही उन को प्रथम उचित था, परन्तु जीवानन्द ने बिचार किया और मनही मन बोले कि, "इस सङ्केत का सो अर्थ नहीं है उन की प्राणरक्षा से बढ़ के उन के आदेश का पालना है"। सब से पहिले मैं उन का यही उपदेश सीख चुका हूँ इससे मैं उनकी आज्ञा ही पालन करूंगा।

जीवानन्द फिर नदी के किनारे २ चलने लगे कुछ दूर जा पेड़ के नीचे एक स्त्रीका मृत शरीर और जीवित एक शिशु कन्या को देखा। पाठकोंको स्मरण होगा

कि, जीवानन्दने महेन्द्र की स्त्री और कन्या को कभी नहीं देखा था, परन्तु मनमें कहने लगे कि, प्रायः येही दोनों महेन्द्र की स्त्री और कन्या हैं क्योंकि महाप्रभु के सङ्ग महेन्द्र को जाते देखा है, जो हो पहिले इन दोनों की रक्षा के लिये प्रबन्ध होना चाहिये नहीं तो बन जन्तु खा जायँगे। माता तो मरगई। कन्या जीवित है। भवानन्द इसी स्थान के निकट में कहीं हैं वे स्त्री के दाहादि कर्म करेंगे, यह विचार जीवानन्द बालिका को गोदी में ले बिदाहुए।

कन्या को गोदी में ले जीवानन्द गोस्वामी ने उस सघन वन में प्रवेश किया और उसके पार हो एक छोटे से गांव में पहुँचे। गांव का नाम भैरवीपुर था, परन्तु लोग उसे भरुईपुर कहते थे, उस गांव में थोड़े सामान्य लोग बसते थे उस के पास कोई बड़ा गांव नहीं था और गांव के पार होतेही बन आरम्भ होता था। चारोंओर बन और बीच में यह छोटासा गांव कोमल घासों से भराहुआ गौओं के चरने के लिये मैदान, हरे हरे पल्लवों से सुशोभित आम, कटहल, जामुन आदि के बगीचे, बीच बीच में निर्मल जल से भरा हुआ पोखर जिसमें नाना भांति के जल पक्षी बिहार कर रहेहैं, किनारेमें मयूर आदि पक्षी अपनी अपनी सुहावनी बोली बोल रहे हैं इत्यादि देखने में बड़ाही सुंदर था सबके घर की आंगन में गाएँ रहती थीं और घर के भीतर अन्न रखने के लिये मिट्टी की कोठियां भी थी। इस दुर्भिक्ष के समय में धान नहीं है परन्तु किसी के घर में मैने का पिंजरा टँगा है, किसी की भीत में चित्र लिखा हुआ है किसीके द्वार पर तरकारी का खेत है। यद्यपि सब दुर्भिक्ष पीड़ित दुबले और सन्तापित हैं तथापि उस गांव के लोग औरों की अपेक्षा कुछ सुखी मालूम होते हैं। जंगल में मनुष्यों के खाने योग्य अनेक प्रकार के पदार्थ उपजते हैं। इसी हेतु उस गांव के लोगों ने बनसे खाद्य बटोर कर अपनी प्राणरक्षा की थी।

एक बड़े भारी आम के बगीचे में गृहस्थ का एक छोटा सा वासस्थान है उस के चारों भीठे पर चार घर हैं पर उसकी चारोंओर मिट्टी की चाहार दीवाली हैं उस गृह के मालिक को गाय, बकरी, सुग्गा, मैना और मयूर आदि जो गृहस्थों के घर में रहने चाहिएँ सब कुछ हैं। बाहर में धान रखने का खलिहान अँगने में गुलाब बेली आदि फूलों के पेड़ भी है, परन्तु इस साल उनमें फूल नहीं फूले। सब घरों के बरामदे पर एक २ चरखा रक्खाहुआहै, परन्तु उन घरों में कोई आदमी नहीं। जीवानन्द ने कन्या को लिये उस मकान मे प्रवेश किया।

घर के भीतर प्रवेश करतेही जीवानन्द एक बरण्डे पर बैठ एक चरखा ले भन भनाने लगे। उस छोटी बालिका ने चरखे का शब्द कभी नहीं सुना था और जब से मातृ हीना हुई तब से बराबर रोती थी तिस परचरखे का शब्द सुन और रोने लगी तब घर के भीतर से एक सत्रह अठारह बरस की स्त्री निकली वह बाहर होतेही हाथ की एक अँगुली गाल पर रख गला टेढ़ा कर आश्चर्य से खड़ी हो बोली "ऐं यह क्या? भैया चरखा क्यों कातते हो? कन्या कहां से पाई? तुमने क्या फिर विवाह किया है? यह क्या तुम्हारी लड़कीहै"?

जीवानन्द कन्या को उस युवती की गोदी में दे उसे प्यारकी एक कोमल थप्पड़ लगाई और बोले "पगली? हमको लडकी? तूने क्या हमें साधारण समझ लिया"?। घर में दूध है?

युवती–हां दूध क्यों नहीं है ? तुम पीओगे ?

जीवानन्द–हां पीऊंगा।

यह सुन वह युवती झटपट दूध गरम करने गई तबतक जीवानन्द ने फिर चरखा कातना आरम्भ किया। लड़कीने उस युवती की गोदीमें रोना बंद करदिया। कह नही सकते, परन्तु समझ में आता कि उस लड़की ने उस चारु नेत्रा कोमलांगी युवती को अपनी माता समझीथी। जान पड़ता है चूल्हे की गरम आंच लगी होगी इसी से वह कन्या फिर एक बार रोई। रोना सुनते ही जीवानन्द बोले अरी नीमी ! अरी मुँहझौंसी ! अरी बनरी ! तेरा अभीतक दूध गरम करना नहीं हुआ" ?।

नीमी बोली "हुआ" यह कह जीवानन्द के आगे दूध पत्थर की कटोरी में ढार लाई। जीवानन्द कृत्रिम क्रोध प्रकाशित कर बोले "जी चाहता है कि यह गरम दूध तुम्हारे ही देह पर ढालदूं तू समझती थी कि मैं पीऊंगा ? क्यों ?

नीमी—तब कौन पीएगा ?

जी० नं०–यह लड़की पीएगी देखती नहीं है ? इस कन्या को पिला।

नीमी तब पलथी मार बैठी और लड़की को गोदी में सुला सुतुही से दूध पिलाने लगी। सहसा उसकी आंखों से कई एक बूंद आंसू टपक पड़े उसके एक लड़का होकर मरगया था यह सुतुही उसी की थी, नीमी तुरत आंसू पोछ हँसते हँसते बोली " हां भैया ! यह किस की लड़की है" ?

जीवानन्द–इस से तुझे क्या ?

नीमी–लड़की मुझे दोगे ?

जीवानन्द–लड़की लेकर क्या करेगी ?

नीमी–में दूध पिलाऊंगी। पोसूँगी, यह कहते कहते नीमी की आंखों में आंसू भरआने लगे। वह उसे बारम्बार पोछती थी और हँसती थी।

जी० नं० –तू लड़की लेकर क्या करेगी ! तुझे बहुत से लड़की लड़के होंगे।

नीमी–अच्छा, जो होने को होगा सो होगा। अभी लड़की मुझे दो इस के अनन्तर इच्छा हो तो ले जाना।

जीवानन्द–अच्छा; ले। अच्छी तरह रखना मै बीच २ में आके देख जाऊंगा यह कायस्थ की लडकी है। मैं अभी जाताहू।

नीमी–सो क्या भैया ! कुछ खाओगे नही ? देर तो बहुत हुई मेरे शिर का शपथ कुछ खाओ।

जी० नं०–तुम्हारे शिर का शपथ कैसे खांय ? यह तो बहन हम से नही होगा शपथ छोड के थोड़ा भात ला दो।

यह सुन नीमी गोद मे लडकी को लिये भात परोसने गई। और थोडी देर के अनन्तर जीवानन्द के आगे चौका ठीक कर उत्तम चावल का कुन्द की भांति स्वच्छ भात और अनेक प्रकार के व्यंजन ले आई। जीवानन्द खाने बैठे और बोले "निमाई ! बहन ! कौन कहता है जो दुर्भिक्ष है। तुमलोगों के गांवमें तो जान पड़ता है दुर्भिक्ष हुआही नहीं क्यों ?

निमाई–दुर्भिक्ष क्यों नहीं होगा बडा भारी दुर्भिक्ष है परन्तु हम लोग दो आदमी है जो कुछ घर में है उसी से कुछ और लोगों को देके हम दोनों भी खाते

हैं हम लोगों के गांव में पानी हुआ था स्मरण नहीं है ? तुम जो कह गये थे कि वन में भी वर्षा होती है उसी से हम लोगों के गांव में कुछ धान हुआ था। और सब लोग नगर में जा बेच आये परन्तु हमलोगों ने नहीं बेचा।

जीवानन्द-बहनोई कहां हैं ?

नीमी-शिरनीचा कर धीरे से बोली "दो तीन सेर चावल ले न जाने कहां गये हैं जान पड़ता है किसी ने मांगा है"।

जीवानन्द के भाग्य में ऐसा आहार बहुत दिनों से प्राप्त नही हुआ था इसीसे वे कथा में समय नष्ट नहीं करके चुपचाप अतिशीघ्र सब सामग्री खा गये।

निमाई ने केवल अपने और अपने स्वामी के योग्य पाक किया था अपना हिस्सा वह पहिले भाई को देचुकी थी अब थारी खाली देख अप्रतिभ हो स्वामी का हिस्सा भी लाके भाई की थारी में रखदिया। जीवानन्द वह भी बिना शिर उठाये सब कुछ भक्षण करगये। तब निमाई बोली-भैया और कुछ खाओगे ?

जीवानन्द ने उत्तर दिया और क्या है ? निमाई बोली एक पका कटहल यह कह वह कटहल ले आई बिना कोई आपत्ति किये श्री जीवानन्द गोस्वामी महाशय उसे भी उदरस्थ कर गये । तब निमाई हँसके बोली भैया! अब और कुछ नहीं है।

जीवानन्द-अच्छा और किसी दूसरे दिन आके खायंगे।

अगत्या निमाई मुँह धोने का जल ढालने लगी और बोली भैया! मेरी एक बात मानोगे ?

जीवनन्द—क्या ?

निमाई-मेरे शिर का शपथ।

जी०नं०-क्या कहना है सो कह!

निमाई-बात मानोगे ?

जी०-क्या बात, आगे बोल।

नि०-दुहाई-मेरा मरा मुँह देखो।

जी०नं०-तेरा मरा मुँह भी देखूँ, तू दुहाई भी दे, परन्तु क्या बात है सो तो बोल?

निमाई एक हाथ से अपने दूसरे हाथ की अंगुली दबा शिर नीचे कर एक बेर जीवानन्द की ओर देख फिर नीचे देखने लगी. और अन्त में बोली "एक बेर बहूको बुलाऊं" ?

जीवानन्द यह सुनतेही झारी उठा निमाई को मारने को उद्यतहुए और बोले मेरी लड़की फेर दे, मैं तेरा चावल दाल आदि सब दूसरे दिन आके फेर दूंगा तू पगली है, बनरी है, जो बात कहने की नहीं वही मुझे कहती है"।

निमाई—अच्छा मै बनरी हूं, पगलीहूं, परन्तु एक बेर बहूको बुलाऊं ?

जीवानन्द-"मैं जाताहूं" कह धड़धड़ाते हुए बाहर जाने लगे। निमाई किवाड़ बन्द कर उस में अपनी पीट लगा द्वार रोक खड़ी हुई और बोली "पहिले मुझे मारदो तब जाना।बहू के साथ भेंट नहीं करने से मैं जाने नहीं दूंगी"।

जी०नं०--तू जानती नहीं है ? मैं कितने मनुष्यों का वध करचुकाहूं।

यह सुन निमाई क्रोध से बोली "वाह बड़ी कीर्त्तिकी" तुम स्त्री त्याग करोगे नर हत्या करोगे इस से क्या मैं डर जाऊंगी ? तुम जिस पिताके पुत्र हो मैं भी उसी की पुत्री हूं। मनुष्य मारने से यदि कीर्त्तिलाभ होती है तो मुझे मारके कीर्त्तिलाभ करो।

जीवानन्द हँस के बोले "अच्छा बुला ला" कौनसी पापिष्ठा को बुलाने चाहती है ! बुला ला परन्तु देख यदि ऐसी बात फिर बोलेगी तो तुझे कुछ कहूं या नही पर उस को मूँड मुड़ाकर गधेपर चढ़ा गांव से अवश्यही निकाल दूंगा।

निमाई मनहीं मन बोली "ऐसा करने से मेरे प्राणको छुट्टी मिलेगी" और हँसती हँसती बाहर गई और पासवाली एक कुटीमें घुसी उस कुटी में सैकड़ों गांठें लगे-हुए कपड़े पहिने रूखे केशवाली एक युवती बैठी हुई चरखा कात रही थी। निमाई जातेही बोली "बहू ! जलदी जलदी"

उस युवती ने उत्तर दिया. जलदी क्यों ? क्या ननदोई ने तुम्हें मारा है ? उसी घाव में क्या तेल लगा देना होगा ?

निमाई--अवश्य कुछ इसी के लग ढग तेल घर में है। उस युवती ने तेल का बर-तन निकाला निमाई उस वर्त्तन से तेल ले झट पट उस स्त्री के शिर में लगाने लगी। और एक प्रकार से केश भी बांध दिया। उस के अनन्तर उस को एक ठुनका मार बोली "तेरा वह ढाके का कपड़ा कहां है"? वह युवती थोड़ा भैचक सा बोली तू क्या पगली हुई है? । निमाई ने एक कोमल मुष्टिप्रहार किया और बोली साड़ी निकाल।

कौतुक देखने को उस युवती ने साडी निकाली; क्योंकि इस दुःख के दिन में भी कौतुक देखने की वृत्ति उसके हृदय से लोप नहीं हुई थी। उसके नवीन वयस की नवीन यौवन की फुल्ल कमल सदृश अकथनीय सुन्दरता आहार और वेष विन्यास विहीन होने पर भी उस के शरीर में विद्युत का सा चाञ्चल्य था; नयनोंमें कटाक्ष अधरों में हँसी, और हृदय में धैर्य थे। आहार नहीं तब भी शरीर लावण्यमय था, वेष विन्यास नही तब भी सुन्दरताकी छटा छटकी थी, जैसे मेघ में दामिनी, मन में प्रतिभा, जगत के शब्दों में संगीत और मरण में सुख है वैसेही उस रूपराशि में न जाने क्या एक अनिर्वचनीय वस्तु थी। उसके शरीरमें अनिर्वचनीय सुन्दरता हृदयमें अनिर्वचनीय उन्नत भाव प्रीति और भक्ति थी। उसने मन में हँसते हँसते ढाकेकी साड़ी निकाली और बोली क्योंरी नीमी ! अब क्या होगा ?

निमाई बोली "तुम पहिनोगी" वह बोली "मेरे पेन्हने से क्या होगा" ? तब निमाई ने उस के कमनीय कण्ठ में अपने कोमल बांहको रख कहा भैया आये हैं। तुम्हें बुलाते हैं। वह बोली मुझें बुलाते हैं तो चलो। ऐसेही चलें ढाकेकी साडी क्यों ? यह सुन निमाईने उसके गालमें एककोमल थप्पड़ मारा तब उसने निमाईको धक्कादे कुटी के बाहरकर बोली "चल यहीं गुदड़ी पहने उन्हे देख आवे" उसने किसी प्रकार वह कपडा नहीं पहिरा। अगत्या निमाई स्वीकृत हुई और उसको अपने बंगले घरके द्वारतक ला उसे भीतर भेज आप द्वारबंद कर वहीं खड़ीरही।

सोलहवां परिच्छेद।

इस स्त्री का वयस प्रायः पच्चीस वर्षका था परन्तु वह देखने में निमाईसे अधिक

बयसकी नहीं जान पड़ती थी। मैला फटा हुआ कपड़ा पहिने उसके उस घर में प्रवेश करतेही जान पड़ा मानो उस घरमें प्रकाश हो गया। पत्तों से ढकी किसी वृक्षमें बहुतसी कलियाँ थी अकस्मात मानो वे सब खिलगईं और जानपडा कि मानो कहीं गुलाब जलका करावा वन्द था किसी ने उसे खोलडाला। मानो किसीने आग में धूप डालदी। वह युवती घरमें घुस इधर उधर स्वामी को खोजने लगी। पहिले नहीं देख सकी परन्तु फिर देखा कि अँगने में छोटे वृक्षकी डालपर अपना शिर रक्खे जीवानन्द खड़े रो रहे हैं। उस स्त्रीने उनके पास जा उनका हाथ पकड़ा यह कदापि नहीं कह सकते कि उस स्त्रीकी आंखोंमें आंसू नहीं आये। जगदीश्वर जाने उसके नेत्र में जो स्रोत उमड़ा था वह बहने से जीवानन्दको भी बहाले जाता परन्तु उसे बहने नहीं दिया। जीवानन्द का हाथ पकड़े वह बोली "छी रोइये मत" मैं जानतीहूं आप मेरे लिये रोरहे हैं परन्तु मेरे लिये मत रोइये। आपने जिस रीतिसे मुझे रक्खा है मैं उसी में आनन्द हूं"।

जीवानन्द शिर उठा आंसू पोंछ उस स्त्रीसे बोले "शान्ति! तुमको ऐसा मैला फटा वस्त्र क्यो? तुमको तो खाने पहननेका अभाव नहीं है"

शान्ति-आपका धन आपहीके लिये है। रुपया लेकर क्या करना होताहै सो मैं नहीं जानती जब आप आवेंगे और फिर मुझे ग्रहण करेंगे तब-

जीवानन्द-ग्रहण करेंगे? क्या शान्ति? तुम्हारा त्याग मैंने कब किया?

शान्ति-त्याग नहीं अर्थात् जब आपका व्रत समाप्त होगा और आप मेरा प्यार करेंगे।

बात पूरी नहीं होने पाई कि जीवानन्द शांति का गाढ़ालिङ्गन कर और उसके कांधेपर अपना शिर रख बहुत देरतक चुपरहे। अन्तमें दीर्घ निश्वास ले बोले "क्यों भेट की"।

शान्ति—क्यों की? आपही ने तो अपना व्रतभङ्ग किया।

जी० नं०-व्रतभङ्ग हुआ तो क्या उस का प्रायश्चित्त भी तो है। उसके लिये इतनी चिन्ता नहीं है परन्तु तुम को तो देखके यहां से लौटा नहीं जाता। इसी हेतु मैंने निमाई से कहा था कि मैं भेट नहीं करूँगा। तुमको देख के मैं फिर लौट नहीं सकता हूँ। निकती पर एक ओर धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, सारी पृथिवी और होम व्रत यज्ञ आदि सब कुछ और दूसरी ओर अकेली तुमको रख के तौलने से मैं नहीं जानता कि कौन सा पलड़ा भारी होगा। देश तो शान्ति तुम्हीं हो देश लेके हम क्या करेंगे इसदेश में थोड़ीही भूमि पानेसे तुम्हारे संग में मैं स्वर्ग बना सकता हूँ मुझे देश से कार्य क्या? जो तुम्हारी ऐसी स्त्री को पाके त्याग करते हैं उनके ऐसे दुखी संसार में कौन हैं? जो तुम्हारे अङ्ग में सैकड़ों गांठवाला कपड़ा देखताहै उससे बढ़कर भाग्यहीन इस देश में दूसरा कौन है? देश के लोगों का दुःख है जो तुम्हारी ऐसी स्त्रीका त्याग करते हैं। मेरे सब धर्मोंकी सहाय तुम्ही हो तो धर्मका जब त्याग किया तब उसके आगे फिर सनातनधर्म क्या? किसधर्म के हेतु मैं बन्दूक उठाये देश देश वन वनमें भ्रमणकर प्राणियों की हत्याकर पाप का भार उठारहा हूं। यह पृथिवी सन्तानों की आधीन होगी कि नहीं सो मैं नहीं जानता परन्तु

तुम तो मेरी अधीना हो, मेरे लिये पृथिवीसे बड़ी हो, मेरा स्वर्ग हो। चलो, घर चलो, मैं अब यहांसे लौटकर नहीं जाऊंगा।

शान्ति कुछ कालतक बोल नहीं सकी। उसके अनन्तर बोली, "छी! आप वीर हैं, मुझे बड़ा आनन्द है कि मैं वीरपत्नी हूँ और इसीसे मैं सुखी हूँ। आप क्या एक अधम स्त्रीके हेतु अपना वीरधर्म त्यागेंगे? आप मुझे मत प्यार कीजिये, मैं ऐसा सुख नहीं चाहती; परन्तु आप वीरधर्म मत त्यागिये। हां और एक बात है; जानेके पहले अवश्य कह जाइये कि इस व्रतभङ्गका प्रायश्चित्त क्या है।"

जी० न०-प्रायश्चित्त थोड़ा है; दान उपवास, बस और क्या हो?

शान्ति मुसकुराकर बोली "प्रायश्चित्त क्या है, सो मैं जानती हूं; परन्तु एक अपराधका जो प्रायश्चित्त है, क्या सौ अपराधोंका भी वही प्रायश्चित्त है? जीवानन्द विस्मित और दुःखित होकर बोले "ये सब बातें क्यों?"

शान्ति-मेरी प्रार्थना यह है कि मुझसे फिर बिना भेंट किये आप प्रायश्चित्त मत कीजिये।

जीवानन्द हँसकर बोले "इस विषयमें तुम निश्चिन्त रहो; तुमसे बिना भेंट किये मैं नहीं मरूंगा और मरनेके लिये इतनी जल्दी भी नही है। मै यहां नहीं रहूंगा; परन्तु भलीभांति तुमको देखने नहीं पाया है, एक दिन अवश्य देखूंगा। एक दिन हम लोगोंकी मनोकामना अवश्य सफल होगी। मैं अभी चलता हूं, परन्तु मेरा एक अनुरोध अवश्य मानो, इस वेषको त्यागो और मेरे पैत्रिक डीहपर जाकर रहो।"

शान्ति-अभी आप कहां जायेंगे?

जीवानन्द-अभी ब्रह्मचारी जीके अनुसन्धानको मठमें जाऊंगा। वे जिस भावसे नगरमे गये है उससे मै कुछ चिन्तित हुआ हूं। मन्दिरमें उनका अनुसन्धनान न पानेसे नगरमे जाऊंगा।

सत्रहवां परिच्छेद।

भवानन्द मन्दिरके भीतर हरिगुण गान करते थे। उसी समय धीरानन्द मलिन मुख किये उनके पास आये। भवानन्दने पूछा "गुसाईंजी! मुख भारी क्यों है?"

धी०न०-कुछ बखेड़ासा जान पड़ता है। कलके कामोंके कारण मुसलमान लोग गेरुए वस्त्र वालोंको देखतेही पकड़ते हैं। दूसरे सन्तानोंमेंसे प्रायः सबोंने गेरुआ वस्त्र त्याग दिया है; केवल महाप्रभु सत्यानन्द गेरुआ पहने नगरकी ओर गये हैं। यदि वे मुसलमानोंके हाथ पकडे जायं तो असम्भवही क्या है।

भ०न०-उनको कैद कर सके ऐसा मुसलमान वीरभूममें कोई नहीं है, तथापि मैं एकवार नगरमें चक्कर लगा आता हूं; तबतक आप मठकी रक्षा कीजिये।

यह कहतेहुए भवानन्दने एक निर्जन कमरेमें जाकर एक बड़े सन्दूकसे बहुतसे कपड़े बाहर किये, सहसा भवानन्दका रूपान्तर हुआ, गेरुए वस्त्रोंके बदले चूड़ीदार पायजामा अचकन, चोगा, सिरमें अम्मामा और सुन्दर मुँहपर त्रिपुण्ड्रादि चिह्नोंके ठिकाने घुंघराले काले बाल, दाढ़ी और मूछ अपूर्व शोभा पाने लगी। उनको उस समय देखनेसे जान पड़ता था कि ये कोई मुगल जातिके युवा पुरुष हैं।

भवानन्द इसी प्रकार मुगलका वेष धारण कर सशस्त्र मठसे बाहर हुए; वहांसे एक कोसपर दो पहाड़ थे, व बहुत छोटे छोटे थे और उनके ऊपर जंगल भी था।

उन्हीं दोनों पहाड़ोंके बीचमें एक एकान्त स्थान था । वहीं सन्तानोंका अस्तबल था जहां बहुतसे घोड़े थे । वहां जाकर भवानन्दने उनमेंसे एक घोड़ा खोला और सवार होकर वे नगरकी ओर बड़े वेगसे चले ।

जाते जाते सहसा उनकी गति रुक गयी । उस सड़कके किनारे कलकलाती हुई एक नदीके तटपर बादलसे गिरी हुई बिजलीकी भांति एक पड़ी हुई स्त्री उनको देख पड़ी और जान पड़ा कि उसमें कोई जीवनका लक्षण नहीं है । विषकी एक डिबिया वहां खाली पड़ी हुई देखकर वे दुःखित, चकित और भीत हुए । जीवानन्दकी भांति भवानन्दनेभी महेन्द्रकी स्त्री और कन्याको नहीं देखा था । जीवानन्दने स्त्री और कन्या देखकर जिन कारणोंसे सन्देह किया था कि ये महेन्द्रकी हो सकती हैं, भवानन्दके सम्मुख वे सब कारण नहीं थे । उन्होंने महेन्द्र और ब्रह्मचारीको कैदी बन कर जाते नहीं देखा था और कन्या भी वहां नहीं थी । केवल डिबिया देखकर समझा कि कोई स्त्री विष खाकर मरी है । भवानन्द उस मुरदेके पास अपने गालपर हाथ रखकर बैठे और बहुत देरतक विचारते रहे; उसके सिर, हाथ, पांव और बगलोंमें हाथ देकर देखा और अनेक प्रकारकी गुप्त परीक्षाएँ भी की । उसके अनन्तर अपने जीमें कहा कि अभी समय है, परन्तु जिलाकर क्या करूंगा । इसी भांति भवानन्द बहुत काल तक चिन्ता कर वनसे एक वृक्षके बहुतसे पत्ते ले आये । पत्तोंको हाथोंसे मलकर उन्होंने रस निकाला तथा अँगुलियोंसे मुरदेके ओंठ और लगे हुए दांतोंको अलग कर उसके मुँहमें डाल दिया । आंख, नाक, कान आदिमें भी कुछ कुछ डालकर शेष रस वे उसकी देहमें लगाने लगे । वारवार ऐसाही करते और बीच बीचमें नाकके पास हाथ लेजाते हुए देखने लगे कि श्वास चलते है वा नहीं । समझ पड़ा कि यत्न विफल नहीं होते हैं । इसीभांति बहुत देरतक यत्न और परीक्षा करते करते भवानन्दका मुख प्रसन्न हुआ, उनकी अँगुलीमें श्वासका कुछ प्रवाह जान पड़ा । तब वे और भी रस लगाने लगे । धीरे धीरे श्वास प्रबल हुए । तब परीक्षा कर भवानन्दने देखा कि नाड़ीकी भी गति हुई है । अन्तमें पूर्व दिशामें अरुणोदय होनेकी भांति कल्याणी क्रमशः आंख खोलने लगी । बस भवानन्द उस अर्द्ध जीविता स्त्रीको घोड़ेपर लादकर वेगसे घोड़ा दौड़ाते हुए नगरमें गये ।

अठारहवां परिच्छेद ।

सन्ध्यासे पहले सम्पूर्ण सन्तान सम्प्रदायमें यह बात फैल गयी कि सत्यानन्द ब्रह्मचारी और महेन्द्र दोनों पकड़े गये हैं और मुसलमानोंके कैदी बनकर नगरमें कैद हुए है । तब तो एक एक दो दो दस दस सौ सौ सन्तान आ आकर देवालयकी चारों ओरके वनमें इकट्ठे होने लगे । सब सशस्त्र थे । सबकी आखोंमें रोषाग्नि, मुखमें दम्भ, ओठोंमें प्रतिज्ञा थी । पहले सौ, तब हजार, आगे दो हजार, इसी प्रकारसे मनुष्योंकी संख्या बढ़ने लगी । तब भवानन्द मन्दिरके द्वार पर हाथमें तलवार लिये खड़े होकर उच्चस्वरसे बोलने लगे, "हमलोगोंने बहुत दिनोंसे विचार किया था कि पक्षीके घोंसलेकी भांति इस यवनपुरीको ध्वंस कर अजय नदीके जलमें फेक देंगे, इन शूकरोंकी बिलोंको आगसे जलाकर माता वसुमतीको फिर पवित्र करेंगे । भाइयो ! आज वह दिन आ पहुँचा है । हम लोगोंके गुरुके भी परमगुरु जो अत्यन्त ज्ञानमय, सर्वदा शुद्धाचार लोकहितैषी और देशहितैषी हैं और जिन्होंने

सन्तानधर्मके पुनः प्रचारके लिये प्राण तक देनेकी प्रतिज्ञा की है, जिनको हमलोग साक्षात् विष्णु स्वरूप जानते हैं और जो हमलोगोंकी मुक्तिके एक मात्र उपाय हैं, वेही महाप्रभु आज मुसलमानोंके कारागारमें कैदी हुए हैं। हमलोगोंकी तलवारें क्या घिस गयीं है? (हाथ उठाकर) इन भुजाओंमें क्या बल नहीं है? (छाती ठोककर) इस हृदयमें क्या साहस नहीं है? भाइयो! गाओ "हरेमुरारे मधुकैटभारे।" जिन्होंने मधुकैटभका नाश किया है, हिरण्यकाशिपु, कंस, दन्तवक्र शिशुपाल प्रभृति दुर्जेय असुरोंका संहार किया है, जिनके चक्रके घोर घर्घर शब्दसे स्वयं मृत्युञ्जय महादेव भी भीत हुए थे, जो अजेय और समरमें जयदाता हैं, उन्हीं देवोंके देव भगवान् वासुदेवके हमलोग उपासक हैं और उन्हींकी कृपासे हमलोगोंकी भुजाओंमे अमोघ बल है। वे इच्छामय हैं, उनकी इच्छा होनेहीसे हमलोगोंको रणमें जय लाभ अवश्य होगा। अतएव भाइयो! चलो, उस यवनपुरीको ध्वंस कर धूलमें मिला दें, चलो, उन शूकरोंके निवासोंको अग्नि संस्कार कर अजयनदीके जलमे फेक दें; उन पक्षियोंके घोसलोंको उजाड़कर हवामें उड़ा दें; बोलो, "हरे मुरारे मधुकैटभारे।" यह सुनकर उस वनमें महा भयङ्कर स्वरसे सहस्रों कण्ठोंने एक साथ शब्द किया "हरे मुरारे मधुकैटभारे।" हजारों तलवारें योद्धाओंकी कमरोंमें झनझनाने लगीं, हजारों बरछियोंकी नोकें ऊपर आकाशमे उठीं, ताल मारनेका महाघोर शब्द होने लगा, हजारों ढालें योद्धाओंकी पीठोंपर खड़खड़ाने लगीं, महा कोलाहलसे डरकर वनके जन्तु वन छोड़कर भागने लगे। पक्षियोंने भी डरकर चहचहाते हुए आकाशको उड़ना आरम्भ किया। उसी समय विजयके सैकड़ों नगाड़े एकसङ्ग बोलने लगे। तब फिर "हरे मुरारे मधुकैटभारे" बोलते हुए सन्तान श्रेणबिद्ध होकर उस बनसे निकलने लगे। गम्भीरतासे धीरे धीरे चलते और उच्चस्वरसे हरिगुण गान करते हुए उस अन्धेरी रात्रिमें नगरकी ओर जाने लगे। उस समय केवल वस्त्रोंकी मरमराहट और शस्त्रोंकी झनझनाहट तथा कण्ठोंकी कलकलाहट और बीच बीचमें कृष्ण नामकी जय जयकार छोड़कर और कुछ सुनाई नहीं देता था। कभी धीर, कभी गम्भीर, कभी सरोष, कभी सतेज होती हुई सन्तानोंकी सेनाने नगरमें पहुँच कर लूटमार आरम्भ की। अकस्मात् यह वज्राघात होते देख कर नगरवासी कुछ ठीक नहीं कर सकें कि-कहां भागें। नगररक्षक बुद्धि खोकर निश्चेष्ट हो रहे।

सन्तानोंने पहले जेलखानेको तोड़ कर पहरेदारोंको मारा तथा सत्यानन्द और महेन्द्रको छुड़ाकर आनन्दसे हाथ उठा उठाकर नाचना आरम्भ किया। उस समय हरिनामका बड़ा भारी कोलाहल होने लगा। आगे सत्यानन्द और महेन्द्रके मुक्त होने पर वे मुसलमानोंके घरोंको ढूँढ़ ढूँढ़ कर आगसे जलाने लगे, परन्तु इन सब कार्योंमें उनलोगोंका बहुत समय नष्ट हुआ जितनेमें नगरका राजा आसदुलजमान् बहादुर नगरके सैनिकोंको इकट्ठा कर और तोप, गोले, बन्दूक आदि अस्त्र ले कर शत्रुसेनाके सन्मुख हुए। सन्तानोंके अस्त्र केवल ढाल, तलवार और भाले थे; तोप बन्दूक देखकर वे कुछ डर गये। तोपोंके गोलोसे असंख्य सन्तान मरने लगे, यह देखकर सत्यानन्द बोले अब लौट चलो, निरर्थक वैष्णव बध करानेका कुछ प्रयोजन नहीं है। तब पराजित सन्तानोंने मलिन मुखसे नगर छोड़कर फिर वनमें प्रवेश किया।

उन्नीसवां परिच्छेद।

जीवानन्दके चले जानेके पश्चात् शान्ति निमाईके पास बरण्डेमें जहां वह बालिकाको गोदोमें लिये बैठी हुई थी जा कर बैठी। शान्तिकी आंखोंमें अब आंसू नहीं थे,

वह आंखें पोंछकर अपना मुँह साफ कर चुकी थी किन्तु चिन्ताका चिह्न नहीं मिटा सकी थी। उसको गम्भीर चिन्तायुक्त और अलमनी बैठी देखकर निमाई उसके मनका हाल समझ गयी और बोली "भला किसी भांति भेंट तो हुई।" शान्तिने उसका कुछ उत्तर नहीं दिया; उसको चुप चाप बैठी देख कर निमाई समझ गयी कि शान्ति अपने मनकी बात कुछ नहीं कहेगी। वह जानती थी कि शान्ति अपने मनकी बात कहना नहीं चाहती। अतएव उसने दूसरी बात छेड़ी। निमाई बोली "देख तो बहू! छोरी कैसी है?

शान्ति-छोरी कहांसे पायी? तेरे यह कब हुई?

निमाई-कटे घावमें नमक क्यो डालती है? तेरी मति ठिकाने है कि नहीं? यह तो भैयाकी लड़की है।

निमाईनेशान्तिको रिसानेके लिये यह बात नहीं कही थी। "भैयाकी लड़की" के अर्थ भाईके पाससे मिली हुई लड़की थी; परन्तु शान्तिने सो नहीं समझा, वह मनमें बोली "जान पड़ता है निमाई मुझे लजानेकी चेष्टा कर रही है।" अतएव उसने उत्तर दिया "मैंने छोरीकी माताकी बात पूछी है, पिताके विषयमें नही।" निमाई उचित उत्तर पाके लजा कर बोली "किसकी लड़की है सो क्या जाने बहन! भैया कहांसे उठा लाये सो पूछनेका अवसर नहीं मिला। अभी इस दुर्भिक्षके समयमें कितनेही मनुष्य अपनी सन्तानोंको रास्ते घाटोंमे फेंक दिया करते हैं। क्या तुझे स्मरण नहीं है, हमी लोगोंके पास कितनेही लोग लड़की लड़के बेचने आये थे; परन्तु दूसरेकी सन्तानोंको कौन खरीदे? निमाईकी आंखोंमें फिर उसी तरह आंसु भर आये, परन्तु वह उसे रोक कर बोलने लगी "इस लड़कीको अच्छी मोटी ताटी और बड़ी सुन्दरी देख भैयासे मांग लिया है।"

उसके अनन्तर निमाई और शान्तिने बहुत देर तक आपसमें अनेक प्रकारकी बातें कीं। इतनेमे निमाईका स्वामी घर लौट आया; उसे देख कर शान्ति अपनी कुटीमें चली गयी। कुटीमें जा किवाड़ बन्दकर चूल्हेसे बहुतसी राख निकाली और बाकी राख पर अपने लिये जो भात रांधा था सो फेंक दिया। उसके अनन्तर खड़ी हो बहुत देर तक चिन्ता कर आपही आप बोली "इतने दिन जो मनमे विचार किया था सो आज करूंगी। जिस आशासे इतने दिन उसे नहीं किया था सो आज सफल हुई है! सफल? अथवा निष्फल? यह जीवन अब निष्फल है। जो संकल्प किया है सो अवश्य करूंगी, एक बेरके लिये जो प्रायश्चित है सौ बेरके लिये भी वही है।"

यह विचार कर शान्तिने भात चूल्हेमें फेंक दिया और वनसे वनफल तोड़ ला कर अन्नके बदले फलही खाया। उसके अनन्तर उस ढाकेकी साड़ीको जिसके लिये निमाईने उतना आग्रह किया था किनारी फाड़ कर भली भांति गेरुएमें रँगा। कपड़ेको रँगने और सुखानेमें सन्ध्या हो गयी। सन्ध्या होतेही शान्ति किवाड़ बन्द कर अत्यन्त आश्चर्ययुक्त कार्य करनेमें प्रवृत्त हुई। सिरकी एड़ी पर्यन्त गिरने वाली रूखी केशराशिका कुछ अंश कैचीसे काट कर अलग रखा; जो केश बच गये उसे गूँथ कर जटा तैयार की। वे रूक्ष केश अपूर्व विन्याससे जटारूपमें परिणत हुए। उसके अनन्तर उस गेरुए वस्त्रका आधा फाड़कर लँगोटा बनाया और उसे अपने अङ्गमें लपेट कर बाकी आधेसे अपनी छाती ढांका। घरमें एक छोटासा दर्पण था; बहुत दिनके अनन्तर शान्तिने उसे

निकाल कर स्वरूप देखा और कहा "हाय! क्या करनेको थी और क्या कर रही हूँ।" तब आइना फेंक कर पड़े हुए कटे केशोंकी दाढ़ी और मूछ बनायी। वह चन्द्रसम मुख पलभरमें दाढ़ी और मूछोंसे अपूर्व शोभा पाने लगा। उसके अनन्तर घरसे एक बड़ी मृग-छाला निकाल कर कण्ठमें बांधा और जांघ पर्यन्त शरीरको ढांक लिया। यदि कोई कवि उस रूपको देखता तो शंका करने लगता। उस नवीन "कृष्णत्वचं ग्रन्थिमती दधाना" को देख कर मन्मथका विनाश होना तो दूर रहे कदाचित उसके पुनर्जीवनकी प्राप्ति होती। इसी भांति वह नवीन संन्यासी बनकर उस घरमें धीरे धीरे टहलने और चारों ओर देखने लगी। भलीभांति देख भालकर कि कोई नहीं है अत्यन्त गुप्त रीतिसे रक्षित एक सन्दूक खोलकर एक गँठरी उसने निकाली। उसमें जो वस्तु थी (उसमें केवल पोथियां ही थीं) सो पृथिवी पर रखकर वह विचारने लगी कि इनसे क्या करूं? सङ्गमें ले जानेसे क्या होगा? इतना बोझ कैसे उठाऊंगी अथवा रखनेहीसे क्या लाभ होगा? रखनेका प्रयोजन ही क्या? समझ चुकी कि अब ज्ञानमें सुख नहीं है; ये सब भस्मही भस्म हैं, भस्मका भस्मही होना चाहिये, यह कहकर शान्तिने उन सब ग्रन्थोंको एक एककर जलतीहुई आग में फेंक दिया। काव्य, अलंकार, न्याय, व्याकरण तथा और जो जो ग्रन्थ थे सोतो कह नहीं सकते, किन्तु क्षण भरमें सब जल कर भस्म हो गये। रात दो पहर होतेही उसी संन्यासी भेषमें शान्तिने घरका दरवाजा खोला और अकेली उस अँधेरेमें उस सघन वनके भीतर प्रवेश किया। ग्रामवासियोंने उस रात एक अपूर्व गीत सुना।

गीत।

नहीं मनोरथ घर रहनेका, कहलाके अबला नारी। रण जय गाओ सब जुड़ि आओ, करो युद्धकी तैयारी॥ कौन तुम्हारा? कहांसे आये? किसके हो? क्या कहलाओ?। चढ़ घोड़े पर बांध अस्त्र मैं लड़न चली मत लौटाओ॥ हरि हरि कह तज मोह प्राणका समर करूंगी अति भारी। नहीं मनोरथ घर रहने का०॥

कहां चला प्रिय प्राण हमारा, मुझे छोड़के मत जाना। महानादसे विजय दुन्दुभी, बजना। यह मनमाना है घोड़े उड़े देख जी उमगा, युद्ध कामना है भारी। नहीं मनोरथ घर रहने का, कहलाके अबला नारी।

बीसवां परिच्छेद।

दूसरे दिन मठके भीतर सन्तानोंके तीनो मुखिया भग्नोत्साह होकर आपसमें बात कर रहे थे।

जीवानन्दने सत्यानन्दसे पूछा "महाराज! देवता हमलोगोंपर इतने अप्रसन्न क्यों है? किस अपराधसे हमलोग मुसल्मानोंसे हारे?"

सत्यानन्द बोले "देवता अप्रसन्न नहीं हैं। युद्धमे जय और पराजय दोनों हैं। उस दिन हमलोग जयी हुए थे, इसबार पराजित हुए। अन्तमें जयी होंगे। मुझे पूरा भरोसा है कि जिन्होंने हमलोगोंपर इतने दिन दया की है वे शंख, चक्र, गदा, पद्मधारी भगवान् हमलोगो पर फिर दया करेंगे। उनके चरणकमलोंको स्पर्श कर जिस महाव्रतमें हमलोग व्रती हुए हैं वह व्रत हमलोगोंको अवश्य पालन करना होगा; इससे विमुख होनेसे हमलोगोंको अनन्त नरक भोगना पड़ेगा। हमलोगोंके भविष्य मङ्गलके विषयमें मुझे कुछ भी सन्देह नहीं है। परन्तु दैवानुग्रहके सम्मुख पौरुष भी

अत्यावश्यक है। हमलोगोंकी पराजयका मुख्य कारण यह है कि हमलोग निरस्त्र हैं। गोले, गोली, तोप और बन्दूकोंके सम्मुख हमलोगोंकी लाठी, सोंटे, बरछी और तलवार क्या काम करेगी ? अतएव हमलोगोंको ऐसा करना उचित है कि इन सब महान अस्त्रोंका अभाव न रहे. इस बार इस पौरुषका अभावही पराजित होनेका एक मात्र कारण है।

जीवानन्द— यह अत्यन्त कठिन कर्म है।

सत्यानन्द–जीवानन्द! कठिन कर्म? सन्तान होकर तुमने ऐसी बात उच्चारण की? सन्तानोंके लिये कौन काम कठिन है ?

जीवानन्द–कैसे उनका संग्रह करूंगा सो आज्ञा दीजिये।

स०न०–संग्रहके निमित्त मै आजही रात तीर्थ यात्रा करूंगा। जितने दिन लौट नही आऊँ उतने दिन तुम लोग किसी काममें हस्तक्षेप न करना; परन्तु सन्तानोंमें एकताकी अवश्य रक्षा करना और माताके अर्थ रणमें विजय पानेके लिये धनका भण्डार पूर्ण करना; यही भार तुम दोनोंके ऊपर रहा।

भवानन्द बोले "तीर्थयात्रा कर ये सब कैसे संग्रह करेंगे? गोले, गोली, तोप और बन्दूक खरीद खरीद कर भेजनेसे बड़ा गोलमाल होगा। और इतने मिलेहींगे कहां? बेचेहीगा कौन? और लावेहीगा कौन?"

सत्यानन्द–खरीद कर हमलोग कार्य निर्वाह नहीं कर सकेंगे । हम कारीगर भेजेंगे, यहां सब तैयार कराना होगा।

जीवानन्द–क्या इसी आनन्दमठमें ?

स०न०–नही। इसका उपाय हम बहुत दिनोंसे कर रहे हैं। ईश्वरने आज उसका सुभीता कर दिया है। तुम लोग कहते थे कि भगवान् प्रतिकूल हैं; परन्तु हमें अनुकूल प्रतीत होते हैं।

भवानन्द–कारखाना कहां होगा ?

सत्यानन्द–पदचिह्नमें।

जीवानन्द–वहां ? वहां कैसे होगा ?

सत्यानन्द–नही तो महेन्द्रसिंहको महाव्रत ग्रहण करानेमे मैंने इतना प्रयत्न क्यों किया है ?

भ०न०–क्या महेन्द्र व्रत ग्रहण कर चुके ?

स० न०–किया है नहीं, किन्तु करेगा, आज ही उसको दीक्षित करेंगे।

जी०न०–महेन्द्रसिंहको व्रत ग्रहण करानेका जो प्रयत्न हुआ सो हमलोगोंने नहीं देखा। उसकी स्त्री और कन्याकी क्या व्यवस्था हुई ? उसने उनलोगोंको कहां रखा है? मैं नदीके किनारेसे एक कन्याको उठाकर अपनी बहनके पास रख आया हूं। उस कन्याके पास एक सुन्दरी स्त्री मरी पड़ी थी। वेही तो महेन्द्रकी स्त्री और कन्या नहीं हैं ?

स०न०–हां वेही महेन्द्रकी स्त्री और कन्या हैं।

भवानन्द इतना सुनतेही चौंक पड़े और समझ गये कि जिस स्त्रीको हमने औषधके बलसे पुनर्जीवित किया है वही महेन्द्रकी स्त्री कल्याणी है। परन्तु इस समय वह बात प्रकाशित करना अनावश्यक समझा।

जीवानन्द बोले "महेन्द्रकी स्त्री कैसे मरी ?"

सत्यानन्द–विष खाकर ।

जी०न–विष क्यों खाया ?

स०न०–भगवान्ने उसे प्राणत्याग करनेको स्वप्नमें आदेश किया था ।

जी०न०–वह स्वप्नादेश क्या सन्तानोंहीके कार्योद्धारके निमित्त हुआ था ?

सत्यानन्द—महेन्द्रसे तो ऐसाही सुना, अब सन्ध्या हुई, मै सायंकृत्य करनेको जाता हूं । इसके अनन्तर नवीन सन्तानोंको दीक्षित करनेमें प्रवृत्त होऊंगा ।

भ०न०–सन्तानोंको ? क्यों ? क्या महेन्द्रको छोड़कर और भी कोई नैष्ठिक आपसे दीक्षित होनेकी स्पर्धा रखता है ?

सत्यानन्द–हां ! एक और नवीन पुरुष है । मैंने उसे पहले कभी नहीं देखा था । वह प्रथम आजही मेरे पास आया है । वह अत्यन्त तरुण वयसका युवा पुरुष है । मैं उसके भाव, भङ्गी और कथावार्तासे अत्यन्त सन्तुष्ट हुआ हूं । उसको सन्तानोंके कार्य सिखानेका भार जीवानन्दके ऊपर रहा । क्योंकि जीवानन्द लोगोंके चित्ताकर्षणमें बड़ा दक्ष है । मै जाता हूं । परन्तु तुम लोगोको एक उपदेश देना बाकी है।उसे खूब मन लगाकर सुनो । तब दोनोने हाथ जोड़ निवेदन किया " आदेश हो।"

सत्यानन्द बोले "तुम दोनों यदि कोई अपराध कर चुके हो अथवा मेरे लौट आनेके पूर्व करोगे तो उसका प्रायश्चित्त अभी मत करना; मेरे आने पर प्रायश्चित्त अवश्य करना होगा ।"

यह कहकर सत्यानन्द वहां से चले गये । भवानन्द और जीवानन्द दोनों एक दूसरेके मुख ताकने लगे ।

भवानन्द बोले " क्या तुम पर ?"

जी० न०–कदाचित इसीसे कि बहनके घरमें महेन्द्रकी कन्याको रखने गया था।

भवानन्द–इसमें दोष क्या ? यह तो निषिद्ध नहीं है । क्या ब्राह्मणीसे भी भेंट की थी ?

जीवानन्द–जान पड़ता है गुरुजीने यही समझा होगा ।

इक्कीसवां परिच्छेद ।

सायंकृत्य समाप्त करके सत्यानन्दजीने महेन्द्रको बुलाकर कहा "तुम्हारी कन्या जीवित है ।"

महेन्द्र–कहां महाराज !

सत्या०–तुम मुझे महाराज क्यो कहते हो ?

महे०–सब कहते हैं, इसीसे। मन्दिरके अधिकारियोंको राज सम्बोधन करना चाहिये । मेरी कन्या कहां है महाराज !

सत्या०–यह जाननेके पूर्व तुमको एक बातका उत्तर देना होगा । तुम सन्तानधर्म ग्रहण करोगे ?

महे०–हां ! मैने मनमें यही निश्चय किया है ।

सत्या०–तब यह जानना मत चाहो कि कन्या कहां है ।

महेन्द्र–क्यों महाराज !

सत्या०—जो यह व्रत ग्रहण करता है उसको स्त्रीपुत्र कन्या और स्वजनोंके साथ सम्बन्ध नहीं रखना चाहिये । स्त्री पुत्र कन्यांके मुख देखनेसे भी प्रायश्चित्त

करना होता है। जितने दिन सन्तानोंकी मनोकामना सिद्ध नहीं होगी उतने दिन तुम कन्याका मुंह देखने नहीं पाओगे। अतएव यदि सन्तानधर्म ग्रहण करना मनमें स्थिर हुआ हो तो कन्याका पता जानना वृथा है। देखने तो पाओगे नहीं।

महेन्द्र–प्रभु ऐसा कठिन नियम क्यों?

सत्या०--सन्तानोंका काम बड़ा कठिन है। जो सर्वत्यागी है उसको छोड़कर दूसरा कोई इस कार्यके योग्य नहीं है। मायाजालमें जिसका चित्त बँधा रहता है वह डोरीमें बँधे हुए गुड्डीकी भांति पृथ्वीसे कभी स्वर्गको नहीं जा सकता है।

महेन्द्र--महाराज! मैं यह बात भली भांति नहीं समझ सका। जो स्त्री और पुत्रादिके मुँह देखता है वह क्या किसी भारी कामका अधिकारी नहीं हो सकता?

सत्या०- - स्त्रीपुत्रके मुँह देखतेही हमलोग दैवकार्यको भूल जाते हैं। यह साधारण मनुष्योंका स्वभाव है। इसलिये सन्तानधर्मका नियम यह है कि जिस दिन प्रयोजन होगा उसी दिन सन्तानोंको प्राणत्याग करना होगा। कन्याके मुंहका स्मरण होनेसे तुम क्या उसे छोड़कर मर सकोगे?

महेन्द्र—कन्याको न देखनेसे ही क्या उसे भूल जाऊंगा?

सत्या०–न भूल सको तो यह व्रत ग्रहण मत करो।

महेन्द्र--सन्तान मात्रनेही क्या इसी भांति स्त्री पुत्रादिको भूलकर व्रतग्रहण किया है? तब तो सन्तानोंकी संख्या बहुत कम होगी?

सत्या०–सन्तान दो प्रकारके हैं। दीक्षित और अदीक्षित। जो लोग अदीक्षित हैं वे लोग संसारी अथवा भिखारी हैं। वे लोग केवल युद्धके समय आकर लूटका भाग अथवा और कुछ पुरस्कार पाते और चले जाते हैं। जो लोग दीक्षित हैं वे सर्वत्यागी हैं और वेही सम्प्रदायके कर्ता है। तुमको अदीक्षित सन्तान होनेका अनुरोध मैं नहीं करता। युद्धके लिये ऐसे लठैत बहुत हैं। दीक्षित न होनेसे तुम सम्प्रदायके किसी काममें हाथ नहीं दे सकोगे।

महे०—दीक्षा क्या? दीक्षित क्यों हूंगा? मैं तो पहले ही मन्त्र ग्रहण चुका हूं।

सत्या०—वह मन्त्र त्याग करना होगा। मुझसे फिर मन्त्र ग्रहण करना होगा

महे०–मन्त्र त्याग कैसे करूंगा?

सत्या—मैं वह पद्धति कह देता हूं।

महे०–नया मन्त्र क्यों लेना होगा?

सत्या०–सन्तान वैष्णव हैं।

महे०-यह नहीं समझ सकताहूं कि सन्तान वैष्णव क्यों है? वैष्णवोंका तो अहिंसाही परम धर्म है।

सत्या०–वह चैतन्य देवका वैष्णव धर्म है। नास्तिक बौद्ध धर्मके अनुकरणसे जो अप्राकृत वैष्णवता उत्पन्न हुई थी उसीका यह लक्षण है। सच्चे वैष्णवधर्मका लक्षण दुष्टोंका दमन और पृथ्वीका उद्धार करना है। क्योंकि विष्णु ही संसारके पालनकर्ता है और उन्होंने दस बेर शरीर धारण कर पृथ्वीका उद्धार किया है। केशी, हिरण्यकशिपु, मधुकैटभ, मुर तथा नरकप्रभृति दैत्योंको और रावण, कंस शिशुपाल प्रभृति राजाओंको उन्होंने युद्धमें नाश किया है। वेही जीतनेवाले और विजय देनेवाले हैं। वेही सन्तानोंके उद्धारकर्ता और इष्ट देवता हैं। चैतन्यदेवका वैष्णव धर्म असल

वैष्णव धर्म नहीं है। वह अर्थ धर्ममात्र है। चैतन्यदेवके विष्णु केवल प्रेममय हैं, परन्तु भगवान् केवल प्रेममय नही है। वे अनन्त शक्तिमय भी हैं। चैतन्यदेव के विष्णु केवल प्रेममय और सन्तानोंके विष्णु केवल शक्तिमय हैं। सो हम दोनों वैष्णव हैं; परन्तु दोनों ही अर्ध वैष्णव हैं। बात समझमें आयी?

महे०—नहीं! यह तो एक प्रकारकी नयीसी बात सुनाई देती है। कासिमबाजारमें एक पादरीके संग मेरी भेट हुई थी। वह भी इसी भांतिकी बातें कहता था। अर्थात् ईश्वर प्रेममय है। तुम लोग यीशूका प्रेम करो। यह भी तो उसी भांतिकी कथा हुई।

सत्या०—जिस भांतिकी बाते मेरे चौदहों पुरखे समझते आये उसी भांतिकी कथासे मैं तुम्हें समझाता हूं। ईश्वर त्रिगुणात्मक है सो तो तुमने सुना है?

महे०—हां! सत्व, रज, तम ये तीनों गुण।

सत्या०—अच्छा, इन तीनों गुणोंकी उपासना तो पृथक पृथक होनी चाहिये न? सत्व गुणसे उनकी दया दाक्षिण्यादिकी उत्पत्ति है। सो उसकी उपासना भक्ति द्वारा करनी चाहिये। चैतन्य सम्प्रदाय वाले उसीकी उपासना करते हैं। रजोगुणसे उनकी शक्तिकी उत्पत्ति है। सो उसकी उपासना युद्ध द्वारा, देवद्वेषियोंका नाश द्वारा होती है। हमलोग वही करते है। और तमोगुणसे भगवान्ने साकार होकर इच्छाक्रमसे चतुर्भुजादि रूप धारण किया है। फूल माला चन्दनादि नैवेद्य द्वारा उस गुणकी पूजा करनी चाहिये। सर्वसाधारण वही किया करते हैं। अब समझा?

महे०—समझा, बोध होता है कि सन्तान उपासक सम्प्रदाय मात्र हैं।

सत्या०—हां! ठीक! सोही! हमलोग कभी राज्य नहीं चाहते हैं। ये मुसलमान लोग भगवानके विद्वेषी हैं। इसीसे उनका केवल संहार करना चाहते हैं।

बाईसवां परिच्छेद।

यह कहकर सत्यानन्दने महेन्द्रको संग लिया और उस मठके देवालयमें प्रवेश किया। जहां वह अपूर्व शोभामय विराट् चतुर्भुज मूर्ति विराज रही थी उस समय वहांकी शोभा अपार थी। रत्न और अनेक सोने चांदीसे खचित वह मन्दिर झाड़ फानूसोंसे जगमगा रहा था। उस पर्वताकार सजे हुए मान्दिरको ढेरके ढेर फूल सुगन्धित करते हुए शोभा दे रहे थे। धूपोंकी सुगन्धसे मान्दिर और भी आमोदित हो रहा था। भांति भांतिकी फूलमाला तथा पताकाओंसे सुसज्जित वह मन्दिर मानों गोलोक वैकुण्ठका नमूना हो रहा था। वहां मन्दिरमें बैठा एक मनुष्य मन्द मन्द स्वरसे "हरे मुरारे" गान कर रहा था। सत्यानन्दजीके मन्दिरके भीतर पांव रखतेही उसने उठकर प्रणाम किया।

सत्या०—तुम दीक्षित होगे?

मनुष्य—मुझे शरणमें लीजिये।

सत्यानन्दने तब महेन्द्र और उस युवकको सम्बोधन कर कहा "तुम दोनों यथाविधि स्नान, उपवास और संयमसे शुद्ध तो हो चुके हो न? दोनोंने उत्तर दिया "हां"।

सत्या—तुम दोनों यहां भगवान्के सम्मुख प्रतिज्ञा करो कि सन्तानधर्मके सब नियमोंका पालन करेंगे।

दोनों—करेंगे।

सत्या०-जितने दिन माताका उद्धार न हो उतने दिन गृहधर्म परित्याग करोगे?

दोनों-करेंगे।

सत्या०-माता पिताको त्याग करोगे?

दोनों-करेंगे।

सत्या०-भाई बहनको?

दोनों-त्याग करेंगे।

सत्या०-स्त्री और पुत्रको?

दोनों-त्याग करेंगे।

सत्या०-आत्मीय स्वजन दास दासियोंको?

दोनों-सबको त्याग किया।

सत्या०-धन, सम्पद और भोग?

दोनों-उन्हें भी तज चुके।

सत्या०-इन्द्रियोंको जय करोगे? स्त्रियोंके संग एक आसन पर कभी नहीं बैठोगे?

दोनों-नहीं बैठेंगे। इन्द्रिय जय करेंगे।

सत्या०-भगवान्‌के सम्मुख प्रतिज्ञा करो कि अपने लिये अथवा अपने स्वजनोंके हेतु कभी धन उपार्जन नहीं करोगे और जो कुछ धन उपार्जन करोगे सो सब वैष्णव भण्डारमें ला भरोगे?

दोनों-भरेंगे।

सत्या०-सन्तानधर्मके हेतु अपने हाथ अस्त्र लेकर युद्ध करोगे?

दोनों-करेंगे।

सत्या०-रणसे भागोगे नहीं?

दोनों-नहीं। यदि प्रतिज्ञा भङ्ग होगी तो जलती: चितामें प्रवेशकर अथवा विष खाकर प्राणत्याग करेंगे।

सत्या०-हां! और एक बात जातिकी है। तुम किस जातिके हो? महेन्द्रको तो जानता हूं; वह कायस्थ है, पर दूसरेकी क्या जाति है?

दूसरेने कहा "मैं ब्राह्मणकुमार हूं।"

सत्या०-अच्छा तुम लोग जातिका मिथ्या अभिमान त्याग सकोगे? सब सन्तान एक हैं। इस महाव्रतमें ब्राह्मण और शूद्रका विचार नहीं है। तुमलोग क्या कहते हो?

दोनों-हम लोगभी वह विचार नहीं करेंगे। हम लोग सब कोई एक माताकी सन्तान है।

सत्या०-अब तुम लोगोंको दीक्षित करूंगा। तुम लोगोंने जो सब प्रतिज्ञाएं की हैं उनको कभी भङ्ग न करना। दैत्यारि मुरारि स्वयं इसके साक्षी हैं। यह ठीक जानो कि जो भगवान् रावण, कंस, हिरण्यकशिपु, जरासन्ध, शिशुपाल प्रभृतिके विनाशके कारण हैं, जो सर्व अन्तर्यामी, सर्वजयी, सर्वशक्तिमान और सर्व नियन्ता है और जो इन्द्रके वज्रमें तथा बिल्लीके नखमें समान रूपसे रहते हैं वेही प्रतिज्ञा भङ्गकारीको नाशकर अत्यन्त नरकमें प्रेरण करेंगे।

दोनों-तथास्तु।

स०न०-तुम लोग गाओ "वन्दन करो सदा जननीको।" दोनोंने तब उस निर्जन मन्दिरमें माताके स्तोत्रको गाया और उसके अनन्तर ब्रह्मचारीने उन दोनोंको यथाविधि दीक्षित किया।

तेईसवां परिच्छेद।

दीक्षा समाप्त होनेके अनन्तर सत्यानन्द महेन्द्रको एक एकान्त स्थानमें ले गये, दोनोके बैठने पर सत्यानन्दने कहा-"देखो बेटा! तुमने जो यह महाव्रत ग्रहण किया इससे मुझे बोध होता है कि भगवान् हमलोगों पर सदय हैं। तुम्हारे द्वारा माताके बड़े बड़े कार्य सम्पादित होंगे। तुम मेरे आदेशको यत्नसे सुनो, तुमको भवानन्द अथवा जीवानन्दकी भांति वनोंमें फिरते हुए युद्ध करनेको मैं नहीं कहता, तुमको पदचिह्नमें लौट जाना और अपने घरहीमें रहकर सन्तान धर्मका पालन करना होगा।"

यह सुनकर महेन्द्र विस्मित और अप्रसन्न हुए, परन्तु कुछ न बोले, ब्रह्मचारी फिर कहने लगे।

"अभी हम लोगोंको आश्रय नहीं है। ऐसा स्थान नहीं है कि किसी प्रबल सेनाके घेर लेनेसे हम अपना आहार संग्रह कर निश्चिन्त और निर्विघ्न रूपसे द्वार बन्द-कर दस दिन भी रह सकें। हम लोगोंको किला नहीं है। तुम्हारी बड़ी भारी महल है और उस गांवमें तुम्हारा पूर्ण अधिकार भी है। मेरी इच्छा यह है कि वहीं एक किला बनावें पदचिह्नको चारों ओरसे खाई और उच्च सुदृढ़ दिवालसे घेरकर और घाटी बैठा कर खाईके पुल पर तोप रख देनेसे अच्छा किला तैयार हो जायगा। तुम घर जाकर रहो, क्रमशः दो हजार सन्तान वीर वहां उपस्थित होंगे। तुम उन लोगोंके द्वारा किला, घाटी, बांध आदि बनानेका कार्य करवाना और वहां एक लोहेका घर बनवाना। वही सन्तानोंका धनागार होगा। मै सोनेसे भरे हुए सन्दूक एक एक कर तुम्हारे पास भेजूंगा। तुम उसी धनसे कार्य करना। मैं अनेक स्थानोंसे निपुण कारीगर मँगाता हूं, उनके आनेसे तुम पदचिह्नमें कारखाना जारी करना। वहाँ तोप गोले, बारूद बन्दूक सब तैयार करवाना। मै इसीसे तुम्हे घर जानेको कहता हूँ।"

महेन्द्रने स्वीकार किया।

चौबीसवाँ परिच्छेद।

महेन्द्रके सत्यानन्द ब्रह्मचारीकी पदवन्दना कर चले जानेके अनन्तर उस दिन उस दूसरे शिष्यने जो उनके संग दीक्षित हुआ था, आकर सत्यानन्दको प्रणाम किया। सत्यानन्दने आशीर्वाद दे करकृष्णाजिन पर बैठनेको आदेश किया और कुछदेर इधर उधरकी बातोंके उपरान्त सत्यानन्दजी बोले" श्रीकृष्णमें तुम्हारी गाढ़ी भक्ति है न?"

शिष्य-कैसे कहूं? मैं जिसको भक्ति जानता हूं वह कदाचित छल अथवा आत्मप्रतारणा हो।

स०न०-सन्तुष्ट हो बोले "अच्छी विवेचना की है। ऐसा अनुष्ठान करना कि जिसमें भक्ति दिन दिन घनी हो। मै आशीर्वाद करता हूं, तुम्हारा यत्न सफल होगा;

क्योंकि तुम्हारी अवस्था अभी बहुत नवीन है। अच्छा कहो तो तुम्हे क्या कहकर पुकारेंगे? सो तो अभी पूछाही नहीं है।"

नवीन सन्तानने कहा "आपकी जो रुचि हो। मैं वैष्णवोंका दासानुदास हूं।"

स०न०-तुम्हारी नवीन अवस्था देखकर तुम्हे नवीनानन्द कहनेकी इच्छा होती है। इससे तुम यही नाम ग्रहण करो। परन्तु यह पूछता हूं कि तुम्हारा पहले क्या नाम था। यदि कहनेमें कोई बाधा हो तथापि कहो। मुझसे कहनेसे दूसरेको कदापि ज्ञात नहीं होगा। सन्तान धर्मका नियम यही है कि जो अवाच्य हो वह भी गुरुके निकट कहे। कहनेसे कोई हानि नहीं है।

शिष्य-मेरा नाम शान्तिराम देवशर्मा है।

स०न०-तेरा नाम शान्तिमणि पापिष्ठा है-यह कहकर सत्यानन्दने शिष्यकी काली घुंघराली डेढ़ हाथ लम्बी दाढ़ीको बायें हाथसे पकड़कर खींचा। नकली दाढ़ी तुरतही गिरपड़ी।

सत्यानन्द बोले-बेटी! छी! मेरे संग प्रतारणा! और यदि मुझेही ठगोगी तो इस अवस्थामें डेढ़ हाथ लम्बी दाढ़ी क्यों? यदि दाढी छोटी भी होता तो कण्ठस्वर और कटाक्ष, इस बुड्ढेसे कैसे छुपाती? यदि मैं ऐसाही निर्बोध होता तो इतने बड़े कार्यमें कभी हाथ नहीं देता।

निर्लज्जा शान्ति तब थोड़ी देर तक हाथोंसे आँखोंको ढांककर सिर नीचे किये बैठी रही। उसके कुछ अनन्तर हाथ नीचे कर और वृद्ध ब्रह्मचारीके ऊपर अपना तीक्ष्ण कटाक्ष चला कर बोली "प्रभु! मैंने दोषही क्या किया है? स्त्रियोंके हाथोंमें क्या कभी बल नहीं होता?

स०न०--गायके खुरमें जैसा जल।

शान्ति-सन्तानोंके बाहुबलकी परीक्षा आप कभी किया करते हैं?

स०न०--करता हूं।

यह कह कर सत्यानन्द एक फौलादका धनुष और एक लोहेका तार लाये और बोले "सन्तानोंको इस धनुष पर इस लोहेके तारको लगाकर गुण-चढ़ाना पड़ता है। गुण चढ़ाते चढ़ाते धनुष ऊपर उठ कर गुण चढ़ाने वालेको दूर फेंक देता है। जो कोई इस धनुषमें गुण चढ़ावे वही सच्चा बलवान है।"

शान्ति धनुष और तारकी अच्छी रीतिसे परीक्षा कर बोली "सब सन्तान क्या इस परीक्षामें उत्तीर्ण हुए हैं?"

सत्या०--नहीं। इससे उनलोगोंके केवल बलका अनुमान करता हूँ।

शान्ति-क्या कोई इस परीक्षामें उत्तीर्ण नहीं हुआ है?

सत्या०--केवल दो आदमी।

शान्ति-क्या कहनेमें कुछ निषेध है कि वे कौन कौन हैं?

सत्या०-निषेध कुछ नहीं है-एक तो मैंही हूँ।

शान्ति-और दूसरा?

सत्या० -जीवानन्द।

शान्तिने धनुष और तार लिया और बिना प्रयास गुण चढ़ा कर धनुषको सत्यानन्दके पांवके पास फेंक दिया। सत्यानन्द चकित हो स्तब्ध हो गये। कुछ

कालके अनन्तर वे बोले "यह क्या! तुम देवी हो या मानवी?" शान्तिने हाथ जोड़ कर कहा "मैं एक सामान्य स्त्री हूं; परन्तु मैं ब्रह्मचारिणी हूं"।

सत्या०-इससे क्या? तुम क्या बालविधवा हो? नहीं। बालविधवाओंका तो इतना बल नहीं होता; क्योंकि वे एकाहारी होती हैं।

शान्ति-मैं सधवा हूं।

सत्या०-तुम्हारा स्वामी निरुद्दिष्ट है?

शान्ति-नहीं! उद्दिष्ट है। उन्हींकी खोजमें मैं यहां आयी हूं। अकस्मात् वर्षाके पीछेकी धूपकी भांति सत्यानन्दकी स्मृतिने चित्तको प्रकाशित किया। वे बोले "स्मरण हुआ, जीवानन्दकी स्त्रीका नाम शान्ति है। तुम क्या जीवानन्दकी ब्राह्मणी हो? इस बेर नवीनानन्दने अपनी जटासे मुँह छिपाया। मानो हाथियोंके शुंड कमलों पर टूटे। सत्यानन्दने कहा "क्यों पापाचार करने आयी हो?"

यह सुन कर शान्तिने एकाएक जटाको पीठ पर बिखराया और मुँह उठाकर कहा;

"पापाचरण क्या? प्रभु! स्त्रीका स्वामीकी अनुगामिनी होना क्या पापाचरण है? सन्तान धर्म यदि इसे पापाचरण कहे तो वह धर्म नहीं, अधर्म है। मैं उनकी सह-धर्मिणी हूं और वे धर्माचरणमें प्रवृत्त हैं। मैं भी उनके साथ धर्म करनेको आयी हूं।"

सत्यानन्द शान्तिकी तेजभरी वाणी सुन और उसकी लम्बी गरदन, ऊंची छाती, काँपते हुए ओंठ और उज्ज्वल परन्तु आंसूसे भरी हुई आंखोंको देख कर अत्यन्त सन्तुष्ट हुए और बोले "तुम सती हो। परन्तु बेटी! स्त्री केवल गृहधर्ममेंही सहधर्मिणी है। वीर धर्ममें नहीं।

शान्ति-कौन महावीर विना पत्नीके वीर हुए हैं! सीताके न रहनेसे क्या राम वीर होते? अर्जुनके कितने विवाह थे, गणना तो कीजिये। भीमका जितना बल था उतनी पत्नियां थीं। कितना कहूं? और आपसे कहना ही क्यों पड़ेगा?

सत्या०-बात सच है, परन्तु रणक्षेत्रमे कौन वीर पत्नीको संग लेकर जाता है?

शान्ति-अर्जुनने जब आकाशमें रहकर यादवी सेनासे युद्ध किया था तब उनके रथको किसने चलाया था? द्रौपदीके सङ्गमें न रहनेसे पाण्डव क्या कुरुक्षेत्रमें युद्ध करते?

सत्या०-यह सब ठीक है. परन्तु सामान्य मनुष्योंके मनको स्त्री आसक्त और कार्यसे अलग कर देती है। इसीसे सन्तानोंका व्रतही यह है कि रमणियोंके संग एक आसन पर नहीं बैठे। जीवानन्द मेरा दाहिना हाथ है। तू मेरा दाहिना हाथ तोड़नेको आयी है?

शान्ति-मैं आपके दाहिने हाथका बल बढ़ाने आयी हूं। मैं ब्रह्मचारिणी हूं और प्रभुके आगे ब्रह्मचारिणी ही रहूगी। मैं केवल धर्माचरणके हेतुही आयी हूं। मैं स्वामीको देखने नहीं आयी हूँ। मै विरहव्यथासे विह्वल नहीं हूं। स्वामीकी धर्मच्युतिके भयसे मैं दुखी हूं। वर्षाके विना बड़से बड़ा वृक्ष भी सूख जाता है। मै उस वृक्षमूलमें जल बरसानेको आयी हूँ। आप निश्चिन्त रहिये।

सत्या०-सो क्या? महान् महीरुहको भी अनावृष्टिका भय है? जीवानन्दकी धर्मच्युति हुई है?

शान्ति-जो हुआ है वह फिर हो सकता है।

सत्या०-क्या हुआ है ? क्या जीवानन्द धर्मच्युत हुआ है ? क्या हिमालय गुहामें डूब गया है ?

शान्ति-केवल सहधर्मिणीकी सहायताके बिना ।

सत्या०-क्या कहती हो ? मुझसे तो कुछ समझा नहीं जाता है ।

शान्ति-कल दोपहरको उन्होंने मुझसे भेंट की थी । व्रत भङ्ग हुआ है ।

बस, इतना सुनतेही वे बूढ़े, पके केश वाले जटाधारी ब्रह्मचारी आंख मूंद कर रोने लगे । इससे पहले सत्यानन्दको किसीने रोते नहीं देखा था ।

शान्ति बोली "महाराज ! आंखोंमें आंसू क्यों ?

सत्या०-प्रायश्चित क्या है जानती हो ?

शान्ति--जानती हूं । आत्महत्या ।

सत्या०-इसीसे जीवानन्दके शोकसे रोता हूं ।

शांति-मैं भी इसीसे आयी हूं । मैं इस लिये आयी हूँ कि जीवानन्द न मरे ।

सत्या०-बेटी ! तेरा अभीष्ट सिद्ध हो । मैं तेरा सब अपराध माफ करता हूँ । मैंने तेरे आशयको नहीं समझा था । इसीसे तिरस्कार किया था । मै क्या समझूं ? मैं तो वनचर ब्रह्मचारी मात्र हूँ । स्त्रियोंकी बुद्धि कैसे पाऊं ? जीवानन्द निश्चय मरेगा । मैंभी नहीं बचा सकूँगा । तू भी नहीं बचा सकेगी । जीवानन्द मेरे प्राणोंसे भी प्यारा है । देख, दाहिना हाथ नष्ट होनेसे मैं देवकार्य नहीं कर सकूंगा । जितने दिन हो सके जीवानन्दको बचाना । उसीके संग रहकर अपना ब्रह्मचर्य भी पालन करना । तू मेरी प्रिय शिष्या हुई । सन्तान मात्र ही मेरे आनन्द है, इसीसे सन्तान आनन्द नाम धारण करते हैं । इस 'आनंदमठ'में तू भी आनन्द नाम धारण कर । तेरा नाम "नवीनानन्द हुआ ।"

शान्ति०-आनन्दमठमें मै क्या रहने पाऊंगी ?

सत्या ०--अब और कहां जाओगी ?

शान्ति०-उसके अनन्तर ?

सत्या०-माता भगवतीकी भांति तेरे माथेमें आग जलती है । सन्तान सम्प्रदायको क्यों दाह करोगी ? यह कह कर सत्यानन्दने शान्तिको आशीर्वाद दे बिदा किया ।

शान्तिने मनमें कहा "सुनो तो भला बुड्ढेकी बात ! मेरे सिरमें आग है ! मैं दिखाऊंगी कि मैं "करमजरी" हूं वा तेरी मां "करमजरी" है ।

परन्तु यथार्थमें सत्यानन्दका वह अभिप्राय नहीं था । उन्होंने नेत्रोंके कटाक्ष हीके विषयमें कहा था । परन्तु ऐसा भी कहीं बूढ़ापेमें बच्चोंको कहा जाता है !

पच्चीसवां परिच्छेद ।

उस रात शान्तिने मठमें रहनेका आदेश पाया था । इससे वह कोठरी ढूँढ़ने लगी । बहुत घर खाली पड़े थे । गोवर्द्धन नामका एक छोटा सन्तान दीया हाथ में लिये उसको घर दिखलाने लगा । शान्तिको कोई भी कमरा पसन्द नहीं आया । हताश होकर गोवर्द्धन शान्तिको सत्यानन्दके निकट लेजाने लगा ।

शान्ति बोली "भाई सन्तान ! इधर कई एक कमरे हैं वे तो देखेही नही गये ।"

गोवर्द्धन–ठीक वे सब तो अच्छे कमरे हैं। परन्तु उनमें लोग हैं।

शान्ति०–कौन हैं ?

गोवर्द्धन–बड़े बड़े सेनापति।

शान्ति०–बड़े बड़े सेनापति कौन ?

गोवर्द्धन–भवानन्द, जीवानन्द, धीरानन्द, ज्ञानानन्द, इत्यादि। यह आनन्दमठ आनन्दमय है।

शान्ति०–चलो, एकबेर देख तो लें वे कैसे हैं।

गोवर्द्धन पहले शान्तिको धीरानन्दके कमरेमें ले गया। धीरानन्द, महाभारतके द्रोणपर्वमें एकाग्र मन होकर पढ़ रहे थे कि अभिमन्युने किस प्रकारसे सप्तरथियोंसे युद्ध किया था। वे कुछ नहीं बोले। शान्ति बिना कुछ बोले वहांसे चल पड़ी।

उसके अनन्तर शान्तिने भवानन्दके कमरेमें प्रवेश किया। भवानन्द उस समय ऊर्द्ध्वदृष्टि होकर एक मुँहके सोचमें पड़े हुए थे। किसका मुँह था सो तो नहीं जानते;परन्तु वे सोच रहे थे कि मुँह अत्यन्त सुन्दर है। काले चिकने सुगन्धित केश आकर्ण नयनोंके ऊपर बिखरे हुए हैं। बीचमें सुन्दर उज्ज्वल प्रशस्त ललाट पर मृत्युकी भयङ्कर छाया झलक रही है। मानों वहां मृत्यु और मृत्युञ्जय द्वन्द्वयुद्ध कर रहे हैं। आंखें मुदी हुई है। भौंहें स्थिर, ओंठ नीले, गाल पाण्डु वर्ण, नाक ठण्डी, छाती ऊंची और कपड़ेको वायु उड़ा रही है। उसके अनन्तर जैसे शरदके स्वच्छ नीलाकाशमें चन्द्रमा क्रमशः मेघमालाको सुशोभितकर अपना सौन्दर्य विकाश करता है और जैसे भोरके सूर्य ढेहूके समान मेघमालाको क्रमशः सुनहला बनाकर और दशों दिशाओंमें प्रकाश भरकर उदय होते तथा सब प्राणियोंको सुखी करते है वैसे ही उस मरे शरीरमें जीवनकी शोभा संचार हो रही है। अहा ! कैसी शोभा है ! भवानन्द यही भावना कर रहे थे। वे भी कुछ नहीं बोले। कल्याणीके रूपसे उनका हृदय व्यथित हुआ था। इससे शान्तिके रूपको उन्होंने नहीं देखा। शान्ति तब दूसरे घरमें गयी और गोवर्द्धनसे पूछा "यह कमरा किसका है?"

गोव०–जीवानन्द महाराजका है।

शांति०–वे कौन ? किसीको तो यहां नहीं देखता हूं।

गोव०–कहीं गये होंगे, अभी आवेंगे।

शांति०–यह कमरा सबसे अच्छा है।

गोव०–परन्तु इस कमरेमें तो रहने नहीं पाओगे।

शांति०–क्यों ?

गोव०–जीवानन्द महाराज यहां रहते हैं।

शांति०–वे कोई दूसरा कमरा ढूंढ लेंगे।

गोव०–ऐसा कहीं हो सकता है ? जो इस कमरेमें रहते हैं उनको एक प्रकारसे मालिक ही कहना चाहिये। वे जो करते हैं सोही होता है।

शांति०–अच्छा तुम जाओ, मुझे जगह नहीं मिलेगी तो पेड़के नीचे रहूंगा, यह कहकर गोवर्द्धनको बिदाकर शांति उस घरके भीतर चली गयी और वहां जीवानन्दके कृष्णाजिनको बिछाकर सो गयी।

कुछ कालके अनन्तर जीवानन्द लौट आये । उस टिम टिमाते हुए छोटे दीयेकी धीमी ज्योतिमें वे नहीं देख सके कि मृगचर्मपर कोई सोया हुआ है । वे उसपर बैठने लगे । बैठनेके समय शान्तिके घुटनों पर ज्यों बैठने लगे त्यों घुटनोंने सहसा ऊंचा होकर जीवानन्दको गिरा दिया । जीवानन्दको कुछ चोट भी लगी । वे उठकर क्रुद्ध हो बोले " तू कौन है ? बड़ा बेहया जान पड़ता है !

शान्ति–बेहया मैं हूँ कि तुम ? मनुष्यका घुटना क्या बैठनेका स्थान है ?

जीवानन्द–यह कौन जानता था कि तुम मेरे घरमे चोरीसे सोये हो ।

शांति०–तुम्हारा घर कैसा ?

जीवा०–तो किसका घर ?

शांति० मेरा घर ।

जीवा०–वाह ! बहुत अच्छा ! अजी कौन हो ?

शांति–तुम्हारा बहनोई ।

जीवा०–बहनोई तुम नहीं, जान पड़ता है कि मैं तुम्हारा हूँ । तुम्हारे गलेके स्वरसे कुछ कुछ मेरी स्त्रीका स्वर मिलता है ।

शान्ति–अनेक दिन तुम्हारी स्त्रीसे मेरा एकान्त प्रणय था; इसीसे बोध होता है कि मेरे गलेका स्वर उससे एक भांतिका हो गया होगा ।

जीवा०–अजी ! तुम तो अब बड़ी लम्बी लम्बी बातें हाँकने लगे । यदि मठके भीतर नहीं रहते तो तुम्हारे दांत तोड़ देते ।

शान्ति–ढेर ऐसे दांत तोड़ने वाले होते हैं । कल राजनगरमें कितने दांत तोड़ आये हो सो हिसाब दे सकते हो ? बात बढ़ानेका प्रयोजन नहीं, मैं अभी सोता हूँ । तुम सन्तान लोग दुम दबा कर अपनी अपनी स्त्रियोंके आंचलोंमें जाकर छुपो ।

अब तो जीवानन्द बड़े संकटमें पड़े । मठके भीतर सन्तानोंमें परस्पर मारपीट करना सत्यानन्दका निषेध था; परन्तु यह तो बहुत बढ़कर बोलता जाता है । इससे एक दो घूँसा न देना भी अनुचित है । उनका समूचा शरीर क्रोधसे जलने लगा; परन्तु बीच बीचमें कण्ठस्वर अत्यन्त ही मधुर मालूम होता था; मानो जान पड़ता था कि कोई स्वर्गद्वार खोल कर बुला रहा था और कहता था कि उस स्थानमें पहुँचतेही मार लगेगी । जीवानन्दको न उठनेकी इच्छा होती थी और वे न बैठ सकते थे । बड़े संकटमें पड़कर बोले,–

"महाशय ! यह कमरा मेरा है; इसका भोग और अधिकार मैं चिरकालसे करता आया हूँ, आप बाहर चले जाइये ।"

शान्ति–यह घर मेरा है । मै आधी घड़ीसे भोग और अधिकार कर रहा हूं; आपही बाहर निकल जाइये ।

जीवा०—मठके भीतर मार दंगा करना मना है, इसलिये लात मार कर नरककुण्डमें अब तक तुम्हे नहीं फेक दिया है । अभी मैं महाराजकी आज्ञा ले तुम्हें निकाल बाहर करता हूँ ।

शांति–मैं महाराजकी अनुमति ला तुम्हेंही अभी निकाल बाहर करूंगा ।

जीवा०—तब तो यह घर तुम्हारा हुआ । अच्छा तो मैं इसकी जिज्ञासा महाराजसे कर आता हूँ । पहले यह तो कहो कि तुम्हारा नाम क्या है ।

शान्ति—मेरा नाम है नवीनानन्द गोस्वामी। तुह्मारा नाम?

जीवा०-मेरा नाम जीवानन्द गोस्वामी।

शान्ति-तुह्मारा ही नाम जीवानन्द गोस्वामी है? इसीसे ऐसा!

जीवा०-कैसा?

शान्ति-लोग कहते हैं, मैं क्या करूं?

जीवा०-लोग क्या कहते हैं?

शान्ति-सो मुझको कहनेमें डरही क्या है? लोग कहते हैं कि जीवानन्दजी वज्रमूर्ख हैं।

जीवा०-वज्रमूर्ख! और क्या कहते हैं?

शान्ति-बड़ी मोटी बुद्धिवाले हैं।

जीवा०-और क्या कहते हैं?

शान्ति-युद्धमें बड़े ही कायर हैं।

जीवानन्दका शरीर क्रोधसे थर थर कांपने लगा। वे बोले "और कुछ कहनेको है!"

शान्ति-बहुत बात कहनेको है। निमाई नामकी आपकी एक बहन है।

जीवा०-तुम बड़े ही निर्लज्ज मालूम होते हो।

शान्ति-तुम भी बड़े ही भुच्चे मालूम होते हो।

जीवा०-मूर्ख, नास्तिक, विधर्मी, भण्ड, पामर!

शान्ति-तुम, य हाय, वाया वोवीच तुरबु विरच शातष्ठ टिष्ठ स्यादान्तोठौ।

जीवा०-निकल यहांसे पाजी! नहीं तो तेरी दाढ़ी उखाड़ लूँगा।

इतना सुनतेही शान्ति भयभीत हुई। दाढ़ी पकड़नेसे बड़ा कठिन होगा; नकली केश गिर पड़ेगा, यह विचारकर शान्ति बकवाद छोड़ कर भागनेको उद्यत हुई।

जीवानन्द भी उसके पीछे पीछे दौड़े; मनमें यही इच्छा थी कि इस भण्डको मठके बाहर जातेही दो चार धमाके लगाऊँगा। शान्ति कैसी ही हो, पर स्त्री थी; दौड़नेका अभ्यास नहीं था। और जीवानन्द इन कार्योंमें अत्यन्त सुशिक्षित थे। जलदीही शान्तिको पकड़ लिया और गिराकर मारनेके विचारसे अपने दाँव पर लाने लगे। परन्तु छूते ही जीवानन्दने चौंककर छोड़ दिया। उनके छोड़तेही शान्तिने अपनी बाहोंसे जीवानन्दके गलेको जकड़कर पकड़ा।

जीवानन्द बोले—"यह क्या, तुम अबला हो। छोड़ो छोड़ो।" परन्तु शान्तिने उनकी बात पर ध्यान नहीं दिया। वह जोरसे चिल्लाने लगी "अरे अरे! हाय! हाय! दौड़ो, दौड़ो, एक गुंसाई बलपूर्वक एक स्त्रीका सतीत्व नष्ट कर रहा है।"

जीवानन्द उसके मुँहको हाथसे बन्दकर बोले "सर्वनाश! सर्वनाश! ऐसी भी बात कोई बोलता है! छोड़ो, छोड़ो, मेरी हार हुई, मुझे छोड़ो।"

शान्ति क्यों छोड़ने गयी? वह चिल्लाने लगी। शान्तिसे जोर कर छूट जाना सहज न जानकर जीवानन्द हाथ जोड़कर बोले "मैं तुम्हारे पांव पड़ता हूँ; मुझे छोड़ दो। इतनेमें जङ्गल स्त्रीके आर्तनादसे गूंज उठा।

यह सुनकर कि स्त्रीपर अत्याचार हो रहा है, मठके गुंसाई लोग हाथमें दीया और लाठी सोंटा लिये बाहर निकले। जीवानन्द डरसे थर थर कांपने लगे। शान्ति बोली "इतना कांपते क्यों हो? तुम तो बड़े भीरु हो जी, इसपर भी लोग तुम्हें क्यों महावीर कहते हैं?"

गुंसाई लोगोंको दीया लेकर निकट आते देखकर जीवानन्द दीनतासे बोले "मैं अत्यन्त कादर हूँ, तुम मुझे छोड़ दो, मैं भागूँ।"

शान्ति--जोरसे छुड़ाकर चले जाओ।

जीवानन्द लाजसे यह स्वीकार नहीं कर सके कि वे स्त्रीसे अपनेको छुड़ा नहीं सकते। वे बोले "तुम बड़ी पापिनी हो।" अब तो शान्ति अपना कटाक्ष चलाकर और मुसकुरा कर बोली "प्यारे! मैं तुम्हारे प्रेममें फँसी हुई हूँ और तुम्हारी होनेहीको यहां आयी हूँ, मुझे ग्रहण करना स्वीकार करो तो मैं छोड़ देती हूँ।"

जीवा०—पापिनी दूर हो, पापिनी दूर हो, ऐसी बात मुझे सुनना भी नहीं चाहिये।

शान्ति--मैं पापिनी हूँ, इसमें सन्देह क्या? पापिनी न होनेसे स्त्री होकर पुरुषसे प्रेमकी भिक्षा क्यों करने आती? मेरी बात रखो तो मैं छोड़ देती हूँ।

जीवा०—छी छी छी! मैं ब्रह्मचारी हूँ। मुझे ऐसी बात मत कहो; तुम मेरी—जीवानन्द जो बात कहने लगे थे उससे शान्ति भयभीत होकर बोली "चुप, चुप, मै शान्ति हूँ। यह कहकर उसने जीवानन्दको छोड़ दिया और उनका चरणधूल सिर पर लेकर तथा हाथ जोड़ कर वह बोली "प्रभु! दोष मनमें मत गिनो। परन्तु हां! पुरुषोंके प्रेमपर धिक्कार है! मुझे पहचान ही नहीं सके।"

अब तो जीवानन्दके चित्तमें सब बातें झलकने लगीं। शान्तिको छोड़कर दूसरा कौन ऐसा काम करेगा? शान्तिको छोड़कर ऐसा रहस्य कौन जानता है? शान्तिको छोड़कर किसकी बांहमें इतना बल है?—यह सब विचारकर जीवानन्द लज्जित और साथ ही आनन्दित होकर कुछ बोलना चाहते थे, परन्तु अवकाश नहीं मिला। गुंसाई लोग समीप आ चुके थे। धीरानन्द सबके आगे थे। उन्होंने उसी समय जीवानन्दसे पूछा "कैसा गोलमाल है?"

जीवानन्द इस बातको विचारकर कि क्या उत्तर दूं बड़े सङ्कटमें पड़े। उसी समय शान्तिने चुपके उनके कानमें कहा "क्यों मैं बोल दूँ कि तुमने मुझको पकड़ा था" और मुसकुराया; आगे धीरानन्दको उत्तर दिया,—

कोई स्त्री यह कह कर चिल्ला रही थी कि मेरा सतीत्व नष्ट किया; मेरा सतीत्व नष्ट किया। परन्तु यहां जीवानन्द महाराजने ढूंढ़ा है, मैंने भी बहुत ढूँढ़ा है; कहीं कुछ पता नहीं लगा। आप लोग कृपा कर उस वनमें देखिये, उधरसे एकबार शब्द सुनाई दिया था।"

शान्तिने गुंसाइयोंको उस वनका बड़ा घना स्थान दिखाया। यह देखकर जीवानन्दने शान्तिसे चुपके कहा,—

"वैष्णव लोगोंको दुःख देनेसे तुम्हे क्या फल होगा? उस वनमें जानेसे उनको बाघ मार डाले वा सांप डँस ले तो आश्चर्य नहीं।

शान्ति-जब वैष्णवोंको स्त्रीका नाम सुन पड़ा है तब वे बिना कष्ट पाये कभी नहीं फिरेंगे। अच्छा मै उन लोगोंको फिराती हूं। यह कहकर शान्तिने गुंसाइयोंसे पुकार कर कहा;-

"आप लोग किञ्चित सावधान रहियेगा। क्या जाने यह भौतिक माया भी हो सकती है।" यह सुनकर एक गुंसाईने कहा "यही सम्भव है; नहीं तो यहां स्त्री कहांसे आवेगी?" सब गुंसाइयोंने इसी मतका अनुमोदन किया और भौतिक माया स्थिर कर वे लौटे। जीवानन्दने शान्तिसे कहा "आओ हम लोग यहां बैठें; सब समाचार ब्योरेवार मुझसे कहो। तुम यहां क्यों आयी? कैसे आयी? यह वेष क्यों? और इतना ढोंग बनाना कहांसे सीखा?" शान्ति बोली "मैं क्यों आयी?-आप हीके लिये आयी हूँ। कैसे आयी, चलकर आयी हूं। यह वेष क्यों? मेरी इच्छा। और इतना ढोंग कहांसे सीखा? एक पुरुषसे सीखा। मै सब बातें खोलकर कहूँगी; परन्तु इस वनमे बैठकर क्यो? चलिये आपकी कुञ्जमे चलें।"

जीवा०-मेरी कुञ्ज कहां है?

शान्ति—मठमें।

जीवा०-वहां स्त्रियोंका जाना मना है।

शान्ति-मैं क्या स्त्री हूं?

जीवा०-मै महाराजके नियमका उल्लंघन नहीं करूंगा।

शान्ति०-मेरे ऊपर महाराजकी आज्ञा है। कुञ्ज हीमें चलिये; सब कहूंगी; विशेष घरके भीतर न जानेसे मैं दाढ़ी नहीं खोलूंगी और दाढ़ी न खोलनेसे आप इस अभागे मुहको नही पहचान सकेंगे। छीः! पुरुष भी ऐसे होते है?

इति प्रथम खण्ड समाप्त

द्वितीय खण्ड।

प्रथम परिच्छेद।

ईश्वरकी कृपासे ११७६का साल अब समाप्त हुआ। बङ्गालकी जनसंख्याके छः आने मनुष्योंको (न जाने कितने करोड़ थे) यमपुरीमें भेज कर वह दुःखदायी वर्ष भी कालके कराल गालमें जा घुसा। ७७ सालमें ईश्वरने दया की। पानी अच्छा बरसा, पृथ्वी अन्नोंसे हरी भरी दीखने लगी, जो लोग अकालसे बचे थे उन्होंने पेट भरकर खाया। बहुतेरे तो अनाहार वा अल्पाहारसे रोगी हो गये थे; पूरा आहार वे सह नहीं सके जिससे वे भी मरे। पृथ्वी तो हरी हुई; परन्तु लोग नहीं; गांवके गांव खाली दिखाई देने लगे। घर गिरकर मवेशियोंकी विश्राम भूमि और भूत प्रेतोंके अड्डे हो गये थे। गावोंके उपजाऊ खेत भी जङ्गली अथवा ऊसरके समान छूछे होकर पड़े रहे। समूचा देश जङ्गल हो गया। जहां लहलहाते हुए हरे भरे अनाजोंकी खेती हुआ करती जहां लाखों मवेशियां चरा करतीं और जहांके बगीचे एक समय ग्राम्य युवक युवतियोंकी क्रीड़ाभूमि थे वहां घोर जङ्गल छा गया। देखते देखते तीन वर्ष बीत गये; परन्तु जङ्गल बढ़ता ही गया। जो सब स्थान मनुष्योंके सुखके स्थान थे वहां मनुष्योंके खानेवाले बाघ हरिणोंके पीछे दौड़ने लगे। जहां सुन्दरियां लाल पैरोंसे पैजनियोंकी मधुर झनकार किया करती थीं और अपनी सङ्गिनियोंके सङ्ग व्यङ्ग करती हुई कहकहा मचाया करती थीं वहां अब रीछनी अपनी माद बनाकर बच्चोंको पाला पोषा करती है। जहां छोटे छोटे छोकरे अपनी स्वाभाविक चपलतासे सायङ्कालकी खिली हुई चमेलीके समान प्रफुल्लित होकर मनमाना आनन्द उल्लास मचाते हुए जी भरकर हँसते गाते थे वहां आज झुण्डके झुण्ड बनेले मतवाले हाथी वृक्षकी पांतियोंको बिगाड़ रहे हैं। जहां दुर्गोत्सव होते थे वहां गीदड़ोंने गड्ढे किये हैं। जहां ठाकुरजी हिण्डोले पर चढ़ते थे वहां उल्लुओंने अपने अड्डे जमाये हैं। नाट्य मन्दिरमें विषैले सांप दिनहीको बेंग ढूंढ़ते हुए फिर रहे हैं। बङ्गालमें अन्न उपजे हैं, परन्तु खानेको लोग नहीं, बेचनेवाले बहुत हैं, परन्तु खरीदनेवाला कोई नहीं। गृहस्थ लोग खेती कर सकते थे; परन्तु रुपया नहीं मिला, वे जमीन्दारकी मालगुजारी नही दे सके जिससे जमीन्दार भी राजाकी मालगुजारी नही दे सके। मालगुजारी न पानेसे राजा जमीन्दारी छीनने लगे. सर्वस्व हर जानेसे जमीन्दार दरिद्र होने लगे। यद्यपि पृथिवी सुप्रसविनी हुई तथापि धन नहीं मिला। किसीके घरमें धन नहीं रहा. लूट खसोटके दिन आये, चोर और डकैतोंने सिर उठाया। साधु सज्जन भले आदमी घरमें जा छिपे।

इधर सन्तान सम्प्रदाय वाले फूल चन्दन और तुलसीकी मालासे भक्तिके साथ श्री भगवान विष्णुके चरण कमलोंकी पूजा किया करते और जिसके घरमें बन्दूक और पिस्तौल मिलती छीन लाते। भवानन्दने यही कह दिया था कि भाइयो! यदि एकके घरमें हीरा मोती मानिक मिले और दूसरेके घरमें एक टूटी फूटी बन्दूक मिले तो हीरा मोती मानिक छोड़ कर उस टूटी बन्दूकको ही उठा लाना।

सन्तान लोग गांव गांवमें भेदिये भेजने लगे। यदि वे किसी गांवमें कहीं वहूक देखते तो वहां जाकर गांव वालोंसे कहते "भाइयो! विष्णु पूजा करोगे?" यह कहकर बीस पचीस आदमी इकट्ठे करते और मुसलमानोंके गांवमें जाकर उनके घरोंमें आग लगा देते। मुसलमान तो अपने प्राण बचानेको घवड़ा उठते। इधर सन्तान लोग उनका सब कुछ लूटकर नये विष्णु भक्तोंमें बांट देते। लूटका माल पा कर गांवके लोगोंके सन्तुष्ट होने पर सन्तान उन लोगोंको विष्णु मंदिरमें ले आते और मूर्तिके चरण धुला कर सन्तान बनाते। यों लोगोंको विश्वास हो गया कि सन्तान होनेमें बड़ा लाभ है।

विशेष मुसलमानी राज्यकी अराजकता और कुशासन प्रणालीसे सब लोग मुसलमानोंसे चिढ़ गये थे। और हिन्दू धर्मका विनाश देखकर बहुत हिन्दू उसके स्थापनके हेतु बड़े उत्सुक हो रहे थे। इसीसे दिनों दिन सन्तानोंकी संख्या बढ़ने लगी। प्रति दिन सैकड़ों मनुष्य आकर भवानन्द और जीवानन्दके चरणों पर पड़कर सन्तानोंके दलमें नियुक्त होने लगे। वे जहां राजाके आदमियोंको पाते पकड़ कर मारपीट करते और कभी कभी उनका प्राणघात भी करते तथा जहां सरकारी खजाना पाते लूट लाते। मुसलमानोंके गांवमें जाते ही उसे लूटते और आगसे जला देते।

अन्तमें नगरके शासनकर्ता महाराजकी निद्रा भङ्ग हुई। सन्तानोंको दबानेके हेतु वे बहुत सेना भेजने लगे; परन्तु सन्तान सहजमें क्यों दबें? अब तो वे दलबद्ध हथियारबन्द तथा बड़े वीर हो उठे थे। उनके साहसके सामने मुसलमानोंकी सेना बढ़नेका साहस नहीं कर सकती थी। और यदि कभी बढ़ती भी तो सन्तान बड़े पराक्रमसे उनपर टूट पड़ते और उनका नाश कर भगवद्भजन किया करते, यदि कभी किसी सन्तानके दलको मुसलमान हरा भी देते तो उसी क्षण न जानें कहांसे दूसरा सन्तानदल आ पड़ता और उन मुसलमानोंके सिर काट कर हरि नाम लेता चला जाता। महाराज असदउलजमान बड़े सङ्कटमें पड़े। उन्होंने बहुतसे गोले, बारूद तोप, हाथी, घोड़े भेजे, परन्तु किसी भांति सन्तानोंके "जय जगदीश हरे" शब्दको रोक नहीं सके। उनको राज्यच्युत होनेकी आशङ्का होने लगी।

तब उन्होंने दुखी होकर अङ्गरेजोंको चिट्ठी लिखी कि वे किसी भांति सरकारी मालगुजारी वसूल नहीं कर सकते और न भेज सकते हैं। यदि आप लोग रक्षा करें तो मैं मालगुजारी वसूल कर सकूँगा, नहीं तो आप ही आकर वसूल कर लेवें। अङ्गरेज पहलेहीसे आप कुछ कुछ वसूल करते थे। परन्तु अब उन लोगोंका भी यत्न विफल होने लगा था। इसी समय इतिहास विख्यात भारतीय अंगरेजकुलदिवाकर "वारेन हेष्टिङ्गस" साहब भारतवर्षके गवर्नर जनरल हुए थे और कलकत्तेमें बैठे एक दृढ़ लोहेकी जञ्जीरकी कल्पना कर अपने मनमें विचार करने लगे थे कि इसी जञ्जीरसे भारतवर्षको समुद्र और टापुओं समेत भली भांति जकड़ूँगा ईश्वरने भी एक दिन सिंहासन पर बैठकर अवश्य "तथास्तु" कहा था। परन्तु वह दिन अभी दूर है; आज तो सन्तानोंके भयानक हरिध्वनिसे "वारेन हेष्टिङ्गस" कांप उठे हैं।

"वारेन हेष्टिङ्गस"ने पहले पुलिस द्वारा विद्रोह दबानेकी चेष्टा की। परन्तु पुलिसवालोंकी तब ऐसी दशा हुई थी कि वे एक वृद्धा स्त्रीको भी हरिनाम लेते सुनकर वहांसे भाग जाते थे। इसीसे निरुपाय होकर "वारेन हेष्टिङ्गस" ने कैप्टेन टामस नामक एक दक्ष सैनिकके सङ्ग कम्पनीकी सेना बागियोंके दबानेको वीरभूमिकी ओर भेजी। कैप्टेन टामस (Captain Thomas) वीरभूमि पहुँचकर बागियोंके दबानेका अच्छा बन्दोबस्त करने लगे। उन्होने पहले राजा और जमीन्दारोंकी फौजोंको मँगाकर कम्पनीके सुशिक्षित और सुशस्त्रयुक्त बड़ी बलवान् देशी और विदेशी फौजोंके संग मिलाया। उन मिलित सैन्योंको कई दलोंमें विभागकर उन अलग अलग दलोंकी अफसरीमें अच्छे अच्छे योद्धाओंको भरती किया। इसके अनन्तर उन सब अफसरोंको इलाके बांट दिये और कह दिया कि तुम फलाने प्रान्तमें जाकर आधे तिलके समान भूमिको भी बिना ढूंढ़े मत छोड़ना, जहां बागी मिलें वहीं चींटीके समान उनको मार डालना। कम्पनीके फौजोंमेंसे कोई गांजा कोई रम पीकर बन्दूकमें संगीन लगाये बागियोंको मारने दौड़ा। परन्तु सन्तान अभी असंख्य और अजय हो गये थे। कैप्टेन टामसकी सेना उन लोगोंके हाथसे ऐसी कटने लगी कि जैसे किसानोंके हाथसे धान। हरिध्वनिसे कैप्टेन साहबके कान बहरे हो गये। इसी भांति ११०० शताब्दीमें वीरभूमिमें सन्तान नामकी कीर्ति फैलने लगी।

दूसरा परिच्छेद।

उस समय कम्पनीकी रेशमकी कोठियां बहुत थीं। रेशमकी एक कोठी शिवग्राममें भी थी। डिनवार्थ साहब उस कोठीके अध्यक्ष थे। उस समय कोठीकी रक्षा करनेकी अत्यन्त उत्तम व्यवस्था थी। इसीसे डिनवार्थ साहब किसी प्रकारसे प्राण बचा सके थे; परन्तु अपनी स्त्री और कन्याओंको कलकत्ते भेज दिया था। वे सन्तानोंसे बहुत सताये गये थे। इसी अवसरमें उस प्रदेशमें कैप्टेन टामस साहबने फौजोंके दो चार दल लेकर पदार्पण किया था। सन्तानोंका उत्साह देख कर उस समय बहुतसे गुण्डे, डोम, चमार इत्यादि छोटी छोटी जातियोंके मनुष्य लूट करनेमें बड़े उत्साही हुए थे। कैप्टेन साहबकी रसद पर उन लोगोंने हमला किया, सेनाके हेतु बढ़िया मैदा, घी, चावल, दाल प्रभृति गाड़ियोंमें लद कर जा रहे थे। उनको देखकर वे छोटे लोग लोभ नहीं सम्भाल सके। उन लोगोंने गाड़ियों पर हमला किया। परन्तु कैप्टेन साहबके सिपाहियोंकी संगीनोंसे दो चार चोटोंका अनुभव कर वे भाग गये। कैप्टेन टामसने उसी क्षण कलकत्तेमें रिपोर्ट भेजी कि आज मैंने १५७ सिपाहियोंसे १४७०० बागियोंको हराया है। बागियोंकी ओरके २१५३ मनुष्य मरे, १२३३ मनुष्य घायल हुए और सात मनुष्य पकड़े गये। केवल अन्तिम बात ही सत्य थी।

कैप्टेन टामसने मानों ब्लेनहेम अथवा वाटरलूके युद्धमें जयलाभ किया था। ऐसा ही विचार कर बड़े अहङ्कारसे अपनी दाढ़ी और मूछोंको फटकारते हुए निर्भय होकर वे सब स्थानोंमें जाने लगे और डिनवार्थ साहबसे भी विद्रोह शान्त होनेका सम्वाद देकर कहा कि अब आप अपनी स्त्री पुत्र, कन्या आदिको कलकत्तेसे बुलाइये। डिनवार्थ साहब बोले "सो होगा, आप दस दिन यहां रहिये। देश और भी शान्त हो, तब स्त्री पुत्रादिको बुला लूँगा।" डिनवार्थ साहबके यहां अच्छी अच्छी मुरगी और भेड़

पली थीं और पनीर भी अच्छा था। बहुत प्रकारके बनैले पक्षी उसकी टेबुलकी शोभा बढ़ाया करते थे और दाढ़ीवाला बबुरची भी मानों दूसरा राजा नल था। फिर कैप्टेन साहबको वहां रहनेमें उज्र क्या था? सो विना कुछ कहे वे वहां रहने लगे।

इधर भवानन्द मारे क्रोधके दांत पीस रहे थे। मनमें यही विचारते थे कि कब इस कैप्टेनका सिर काट कर दूसरे शम्बरारिकी उपाधि धारण करूंगा। उस समय तक सन्तानोंको विदित नहीं था कि अंगरेज भारतवर्षके उद्धारके लिये आये हैं। इस बातको वे विचारे कैसे समझते? कैप्टेन टामसके समयके अङ्गरेज भी यह बात नहीं जानतेथे। केवल ईश्वरके ही मनमें यह बात थी। भवानन्द विचारते थे कि इस असुर वंशका एकही दिनमें नाश करूंगा। जब सब इकट्ठे हों और कुछ कम सावधान हों तब। अभी हम लोगोंके लिये थोड़ा अलग रहना अच्छा है।

अतएव वे लोग उस समय थोड़ा अलग रहे और कैप्टेन टामस साहबने निष्कण्टक हो दूसरे नल राजाका गुण ग्रहण करनेमें मन लगाया।

साहब बहादुरको शिकार खेलना अच्छा लगता था। बीच बीचमें वे शिवग्रामके पासवाले जङ्गलोंमें शिकार खेलने जाते थे। कैप्टेन साहब डिनबार्थ साहबके सङ्ग बहुत शिकारियोंको लेकर शिकार खेलने निकले। वस्तुतः कैप्टेन टामस बड़े साहसी थे, अंगरेजीके वीरोंमें भी उनका जोड़ा मिलना कठिन था। उस घने वनमें भरना, बाघ, भालू आदि बड़े बड़े भयानक जन्तु वास करते थे। शिकारी लोग वनमें बहुत दूरतक जाकर और नहीं जा सके। उन लोगोंने कहा कि और रास्ता नहीं है; हम लोग नहीं जा सकेंगे। डिनबार्थ साहब उस जंगलमें एक बेर ऐसे भयानक बाघसे बचे थे कि वे भी आगे जानेसे अनिच्छुक हुए। सब लोगोंने फिरना चाहा, परन्तु कैप्टेन टामस साहबने कहा "तुम लोग लौट जाओ; परन्तु मैं नहीं लौटूंगा।" यह कह कर कैप्टेन साहबने घने वनमें प्रवेश किया।

सत्यही जङ्गलमें रास्ता नहीं था। घोड़ा जा नहीं सका। साहब घोड़ेको छोड़कर पैदलही बन्दूक कन्धे पर धरे वनमें घुसे और इधर उधर बाघ ढूँढने लगे; परन्तु बाघ नहीं मिला। फिर मिला क्या? उन्होंने क्या देखा? एक पेड़के नीचे खिले हुए सुन्दर फूलोंवाली लताओंसे घिरा हुआ वह क्या बैठा है? बाघ है क्या? नहीं नहीं बाघ नहीं, एक नवीन सन्यासीने अपने रूपसे उस वनको प्रकाशित किया है। वे खिले हुए फूल मानों उस सुन्दर शरीरके छूनेसे और भी सुगन्ध युक्त हुए हैं। कैप्टेन साहब पहले तो चकित हुए; परन्तु थोड़ीही देरमें उनको बड़ा क्रोध हुआ। कैप्टेन साहब देशभाषा भली भांति जानते थे। बोले,-

"टुम कौन है?"

संन्यासी—मैं संन्यासी हूँ।

कैप्टेन—टुम Rebel (बागी) है।

संन्यासी—सो क्या?

कैप्टेन—हम टुमे गोली भड़के माड़ेगा।

संन्यासी—मारो।

कैप्टेन साहब विचार ही रहे थे "बन्दूक चलाऊं या नहीं" कि अकस्मात् उस नवीन संन्यासीने बिजलीकी भांति उनके ऊपर टूट कर हाथसे बन्दूक छीन ली।

संन्यासीने आगे अपनी छातीपरसे मृगचर्म खोल डाला। एक झटकेसे, दाढ़ी मूंछ जटा प्रभृति सब खोल कर फेंक दी। उसी समय कैप्टेन साहबको एक अपूर्व स्त्री मूर्ति देख पड़ी। सुन्दरीने हँसते हँसते कहा "साहब! स्त्री हूँ; किसीको नहीं मारती हूं। तुमसे एक बात पूछती हूँ। कहो तो सही, लड़ाई हिन्दू और मुसलमानोंमें होती है। बीचमें तुम क्यों आये हो? अपने घर लौट जाओ।"

साहब-टुम कौन?

शान्ति-देखते नहीं मैं सन्यासिनी हूँ। जिन लोगोंके सङ्ग लड़ाई करने आये हो, उन्हींमेंसे एककी स्त्री हूं।

साहब-टुम हमारा गड़में रहेगा?

शान्ति-क्या तुम्हारी रखेली बन कर?

साहब-स्त्रीके ऐसा रह सकता है, लेकिन साडी नहीं होगा!

शान्ति-मै भी एक बात पूछती हूं। मेरे घरमें एक सफेद बन्दर था, थोड़े दिन हुए वह मर गया है। पिंजरा खाली है। कमरमें जञ्जीर लगा दूँगी। तुम उस पिंजरेमें रहोगे? हम लोगोंके बगीचेमें बढ़िया बढ़िया मीठे केले फलते हैं।

साहब-टुम बड़ा Spirited woman (तेजस्वनी स्त्री) है। टुमाड़ा Courage (साहस) से मैं खुश हूं। टुम मेड़ा गड़ चलो। टुमाड़ा सोआमी जुड्डमें मड़ेगा। टब टुमाड़ा क्या होगा?

शान्ति-अच्छा फिर हमारी तुमारी यही ठहरी कि—युद्ध तो दो चार दिन होगा-यदि तुम जीतो और मै बची रही तो तुम्हारी उपपत्नी होना स्वीकार है। और यदि हम जीते तो तुम मेरे पिंजरेमें बन्दर बनकर बैठ बैठे केले खाया करना।

साहब-केला खानेमें अट्टा होते हैं। अबी हैं?

शान्ति--ले, तेरी बन्दूक ले, ऐसे बनेली जातिके सङ्ग भी कोई बात करता है?

शान्ति बन्दूक फेंककर हँसती हँसती चली गयी।

तीसरा परिच्छेद।

शान्ति साहबको छोड़कर हरिणीकी भांति वनमें न जानें कहां चली गयी। साहबने कुछ कालके अनन्तर सुना कि कोई स्त्री गा रही है;-

यह जोवन जल तरङ्ग को रोकि है?

हरे मुरारे! हरे मुरारे!

फिर न जानें कहां सारङ्गीके मधुर स्वरसे वही बजा,-

यह जोवन जल तरङ्ग को रोकि है?

हरे मुरारे! हरे मुरारे!

और उसीके संग एक पुरुष कण्ठने भी मिलकर वही गाया-

यह जोवन जल तरङ्ग को रोकि है? हरे मुरारे! हरे मुरारे!

तीनों स्वरोंने एक होकर अपने गानसे वनके सब वृक्षों और लताओंको कँपा दिया। शान्ति गाती गाती चली-

यह जोवन जल तरङ्ग को रोकि है? हरे मुरारे! हरे मुरारे!

जलमें हुआ तुफान । भरी नाव मेरी नई सुखसे, धेरे हैं मांझी डाड़ ।

हरे मुरारे ! हरे मुरारे !

तोड़ि बालुका बांध पूरिके इच्छा निज मन मानी चला वेगसे को; अटके है गङ्गाज्वारका पानी !

हरे मुरारे ! हरे मुरारे !

सारंगीमें भी यही बज रहा था ।

चला वेगसे को अटके है गङ्गाज्वारका पानी ! हरे मुरारे ! हरे मुरारे !

जहां बड़ा सघन वन था, जिसके भीतर क्या था सो बाहरसे कुछ भी देखा नहीं जाता था। वहीं शान्तिने प्रवेश किया। वहाँ उन वृक्षोंकी डालियों और पत्तोंसे छिपी हुई एक छोटीसी कुटी थी । उसके सब बन्धन लताओंके, छावनी पत्तोंकी और गच लकड़ीकी थी जो मिट्टीसे पाटी हुई थी । उसके भीतर लताओंके बने हुए द्वारको खोलकर शान्तिने प्रवेश किया । वहां जीवानन्द बैठे सारङ्गी बजा रहे थे ।

शान्तिको देखकर जीवानन्दने पूछा—

"इतने दिनके पीछे गङ्गाज्वारका पानी वेगसे चला है क्या ?"

शान्तिने हँसकर उत्तर दिया "छोटी छोटी नदी नालोंको डुबाकर क्या कभी गङ्गाज्वारका पानी वेगसे चलता है ?"

जीवानन्द दुःखित होकर बोले "देखो शान्ति ! एक दिन मेरा व्रत भङ्ग होनेके कारण मेरा प्राण तो उत्सर्ग होही चुका है । जो पाप है उसका तो प्रायश्चित्त कभीको किया होता, केवल तुम्हारेही अनुरोधसे अभीतक नहीं किया है। परन्तु एक महावीर युद्ध होनेमें अब विलम्ब नहीं है । उस युद्ध क्षेत्रमे मुझे अवश्य वह प्रायश्चित्त करना होगा। यह प्राण परित्याग करना ही होगा। मेरे मरनेके दिनतक ही क्या तुम ब्रह्मचर्य-"

शान्तिबोली-" मैं आपकी धर्मपत्नी हूँ, सहधर्मिणी हूं और धर्ममें सहायता देनेवाली हूँ। आपने बड़ा भारी व्रत ग्रहण किया है। उसी धर्ममें सहायता करनेके लियेही मै घर छोड़ कर आयी हूं । घर छोड़कर वनमें रहती हूँ कि दोनो जने एक सङ्ग रहकर धर्माचरण करें। मैं आपके धर्मकी वृद्धि करूगी, मै धर्मपत्नी होकर क्यों आपके धर्ममें विघ्न डालूंगी ? विवाह इसकाल और परकाल दोनोंके लिये है। इसकालके लिये जो विवाह है सो तो आप जानतेही है कि हम दोनोंका नहीं हुआ । हम दोनोंका विवाह केवल परकालहीके लिये है। परकालमे दूना फल फलेगा । हाय नाथ ! आप मेरे गुरु है, मैं क्या आपको धर्म सिखाऊंगी ? आप वीर हैं। मैं क्या आपको वीरव्रत सिखाऊँगी ?

जीवानन्द आनन्दसे विह्वल हो कर बोले "तुम तो सिखा चुकी; मै भी सीख चुका। तुम स्त्रियोंमें धन्य हो।"

शान्ति आनन्दसे बोलने लगी "और देखो गुसाई जी ! इसकालमें भी क्या हम दोनोंका विवाह निष्फल है ? आप हमको प्यार करते हैं, मै आपको प्यार करती हूं, इसकी अपेक्षा और भारी फल क्या है कहिये ।"

"वन्दन करौ सदा जननीको" तब दोनोने एकस्वरसे गला मिलाकर "वन्दन करो सदा जननीको" गाया। गाते गाते दोनोंने रो दिया ।

चौथा परिच्छेद।

भवानन्द गोस्वामी एक दिन राजनगरमें पहुँचे वे चौड़ी सड़क छोड़कर एक अँधेरी गलीके भीतर घुसे। गलीके दोनों किनारे ऊँचे मकानोंकी कतार खड़ी थी। सूर्यदेव केवल मध्याह्न ही कालमें उस गलीकी एक वेर झांकी लिया करते थे और तबसे अन्धकारका ही अधिकार बराबर रहा करता था। गलीके पासवाले एक दोमञ्जिले मकानमे भवानन्दने प्रवेश किया। नीचेकी एक कोठरीमें जहां एक अधेड़ स्त्री रसोई बना रही थी जाकर भवानन्द महाप्रभुने दर्शन दिया। स्त्री अधेड़, मोटी, गोल मोल और काली कोयल थी। ठेंटी (१) पहने, गुधना गुधे, सिरकी मांगपर केशोंका चूड़ाकार जूड़ा बांधे वह अपनी शोभा बढ़ा रही थी। हांड़ीके कोरमें भात हलोड़नेकी लकड़ी ठनठन बोल रही थी। लट फड़फड़ उड़ रहे थे। भनभन करके वह स्त्री आपही आप कुछ बड़बड़ा रही है और उसके मुखभङ्गीसे सिरका जूड़ा भांति भांतिसे कभी इधर कभी उधर लटकता हुआ विकशित हो रहा था। ऐसे समयमें भवानन्द महाप्रभुने उस घरमें प्रवेश किया। वे बोले "नानी! प्रणाम।"

नानी भवानन्दको देखकर व्यग्रतासे झटपट अपना कपड़ा सम्भालने लगी। सिरकी मोहन चूड़ा खोल डालनेकी इच्छा थी, परन्तु हो नही सका, क्योंकि हाथ सकड़ी थे। वह अधखुली कोमल केशराशि–हाय! तिस पर पूजाकालमें मौलसरीका गिरा हुआ फूल ज्योंका त्यों रह गया था–उस केशपाशको उसने अपने आंचलसे ढांकनेकी चेष्टा की; परन्तु कृतकार्य नहीं हुई। क्योंकि पहना हुआ कपड़ा केवल पांच हाथका था। वह विचारा पांच हाथ कपड़ा एक तो स्थूल पेटमें लिपट करही प्रायः समाप्त हो चुका था। तिसपर लाज रखनेके लिये अत्यन्त भारग्रस्त हृदयमण्डलका परदा करना आवश्यकही था। अन्तमे गलेके पास तक जाकर वस्त्रने इस्तीफा दे दिया था। वड़े कष्टसे कानतक पहुंचकर उसने साफ कह दिया और आगे नही जा सकता। अगत्या अत्यन्त लज्जावती गौरी ठकुरानीने उस ढीठ आंचलको कानके निकट पकड़ रखा। और भविष्यमें आठ हाथ कपड़ा मोल लेनेकी दृढ़ प्रतिज्ञा कर कहा,–

"कौन गुसाईं महाराज! आओ, आओ। मुझे प्रणाम क्यों भैया!"

भवा०–तुम नानी जो हो।

गौरी–आदरसे चाहे जो कहो; तुम गुसाईं लोग! अरे बाबा! देवता! अच्छा किया तो किया। जीते रहो। और प्रणाम करो तो कर भी सकते हो, कुछ हो, मैं वयसमें तो बड़ी हूँ।

भवानन्दकी अपेक्षा गौरीदेवी महाशया पचीस वर्षकी बड़ी थी। परन्तु सुचतुर भवानन्दने उत्तर दिया।

"यह क्या कहती हो नानी! तुम्हे रसिक देखकर नानी कहता हूँ। (२) नहीं तो जब हिसाब हुआ था तब तुम हमसे छः बरसकी छोटी हुई थी। क्या यह बात स्मरण नही है! सुनो हम वैष्णवोंको सब तरहका अधिकार होता है। मेरे मनमें यही इच्छा है कि मठके सब ब्रह्मचारियोंसे कह कर तुमसे हम सगाई कर लें। यही बात कहने यहां आये।"

---

(१) बंग देशकी विधवाओंके पहरनेके वस्त्र विशेषको कहते है।

(२) बङ्गदेशमें नानीसे इस तरहकी हँसी तहरीर करनेका व्यवहार है।

गौरी—छी! यह कैसी बात है? ऐसी बात क्या कहना चाहिये! मैं विधवा जो हूं।

भवा—तब सगाई होगी क्या?

गौरी—जो जानो सो करो भैया! तुम लोग पण्डित हो; हम स्त्रियां क्या समझेंगी? अच्छा कब होगी?

भवानन्दने अत्यन्त कष्टसे हँसी रोक कर कहा "एक बेर उस ब्रह्मचारीसे भेंट होने पर कहूंगा। हां और वह कैसी है?"

गौरी दुखी हुई। उसने मनमें सन्देह किया कि सगाईकी बात फिर तो झूठी जान पड़ती है। और कहा "रहेगी कैसी? जैसी रहती है!"

भवा—तुम एक बेर जाकर देख आओ कि वह कैसी है और कह दो कि मैं आया हूं; भेट करूंगा।

गौरीदेवी भात हलोड़नेकी लकड़ी रखकर और हाथ धोकर बड़ी बड़ी ऊंची सीढ़ियोंको तय करती हुई दोमञ्जिले पर चली एक कमरेमें फटी चटाई पर बैठी हुई एक अपूर्व सुन्दरी थी, परन्तु उसके सौन्दर्यकी गाढ़तर छायाही झलकती थी। अपने दोनों तटोंको बहानेवाली स्वच्छ जलकी बड़ी बड़ी तरङ्गे लेनेवाली नदीके हृदयमें मध्याह्नके समयके मेघकी अत्यन्त सघन छायाकी भांति वह किस वस्तु की छाया है? नदीके हृदयमें तरङ्गे उठ रही हैं, तटोंपर प्रफुल्लित वृक्ष वायुके झोकोंसे हिल रहे हैं तथा पुष्प भारसे झुक रहे हैं और उन वृक्षोंके बीचमें कहीं कहीं ऊंचे ऊंचे मकान भी शोभित हो रहे हैं, नावोंके डाड़ोंके चलनेसे जल उथल पथल हो रहा है। यद्यपि मध्याह्न काल है तथापि मेघकी भांति सघन काली छायासे सब शोभा ही काली हो रही है। उस सुन्दरीकी भी वही दशा थी। पहलेकी भांति सुन्दर चिकनी चञ्चल और घनी चोटियां, पहिलेकी भांति चौड़े माथे पर पहलेकी भांति अपूर्व तुलिका द्वारा रचित भ्रूधनुष; पहलेकी भांति विशाल सरस और काली आंखें—सभी हैं; केवल उतना कटाक्ष नहीं, उतनी चञ्चलता नही; पर नम्रता उस समयसे भी अधिक है, अधरमें भी पूर्ववत राग रङ्ग है; हृदय पूर्ववत पूर्णतासे ढल ढल कर रहा है, बाहें पूर्ववत वनलताको लजाने वाली कोमलतासे भरी हुई है; परन्तु आज वह कान्ति नहीं है; वह रस नहीं है, सारांश यह कि वह यौवन नहीं है। है केवल वह सौन्दर्य और वह माधुर्य और उसमें सम्मिलित हुआ है धैर्य और गाम्भीर्य। उसे पहले देखनेसे बोध होता था कि वह मनुष्यलोककी अनुपम सुन्दरी है। परन्तु अब देखनेसे वह देवलोककी शापग्रस्ता देवीकी भांति बोध होती थी। चारों ओर हरताल लगी हुई पोथियां पड़ी थीं, दीवालमें हरिनामकी माला लटक रही थी और बीच बीचमें जगन्नाथ, बलराम, सुभद्राका चित्र तथा कालीयदमन, नवनारीकुञ्जर, वस्त्रहरण, गोवर्द्धनधारण प्रभृति ब्रजलीलाओंके चित्र लटककर उसकी शोभा बढ़ा रहे थे। चित्रोंके नीचे यह लिखा था "चित्र या चरित्र?" उसी कमरेमें भवानन्दने प्रवेश किया।

भवा—क्यों, कल्याणी! शारीरिककुशल है तो?

कल्याणी—यह प्रश्न क्या आप नही त्यागेंगे? मेरे शारीरिक कुशलसे आपका और मेरा लाभ ही क्या है?

भवा—जो जिस पेड़को रोपता है, वह उसमें रोज पानी भी देता है। पेड़ बढ़नेहीसे उसको आनन्द होता है। तुम्हारे मरे हुए शरीरमें मैंने जीवन रोपण किया था, वह बढ़ रहा है या नहीं सो क्यों नहीं पूछूंगा?

कल्याणी-क्या विषवृक्षका भी क्षय होता है?

भवा-जीवन क्या विष है?

कल्याणी-सो न होनेसे अमृतपान कर मैं उसका नाश करना क्यों चाहती थी?

भवा-यह बात बहुत दिनसे मैं पूछना चाहता था, परन्तु साहस नहीं हुआ था; किसने तुम्हारे जीवनको विषमय किया था?

कल्याणीने स्थिरचित्त होकर उत्तर दिया "मेरा जीवन किसीने विषमय नहीं किया था, जीवन तो विषमय है ही। मेरा जीवन विषमय है, आपका जीवन विषमय है; सबका जीवन विषमय है।"

भवा-ठीक कल्याणी! मेरा जीवन विषमय है; जिस दिनसे—तुम्हारा व्याकरण समाप्त हुआ?

कल्याणी-सब समाप्त हुआ। केवल स्त्रीत्व समाप्त नहीं हुआ है।

भवा-अमरकोष?

क-स्वर्गवर्ग नहीं समझ सकी, आप समझ सकते है?

भवा-जो आप ही आप नहीं समझ सकतीं उसे मैं समझा नहीं सकता। साहित्य पढ़लेकी भांति पढ़ती हो?

क-पूर्वापर नहीं समझतीं, सो कुमारसम्भव छोड़कर हितोपदेश पढ़ती हूं।

भ-क्यों कल्याणी?

क-क्योंकि कुमारसम्भव देवचरित्र है, हितोपदेश पशुचरित्र है।

भवा-देवचरित्र छोड़ कर पशुचरित्रमें ऐसा अनुराग क्यों!

क-ईश्वरेच्छा—महाराज! मेरे पतिका सम्वाद क्या है?

भवा-हर घड़ी वह सम्वाद क्यों पूछती हो? वे तो तुम्हारे लिये मानो मरे हुए हैं।

क-मै उनके लिये मानों मरी हुई हूँ न कि वे मेरे लिये।

भवा-तुम तो इस लिये मरी थी कि वे तुम्हारे लिये मृतसमान हों। बारम्बार यही बात क्यों?

क-मरनेसे क्या सम्बन्ध छूटता है। वे कैसे है?

भवा-अच्छे है?

क-कहां हैं? पदचिह्नमें?

भवा-वहीं हैं।

क-क्या काम करते हैं?

भवा-जो करते थे। किला बनवाना, हथियार बनवाना, उनके बनाये हुए अस्त्रशस्त्रोंसे ही हजारों सन्तान सुसज्जित हुए हैं। उनकी कृपासे तोप, बन्दूक, गोले, गोली, बारूदकी हमलोगोंको कमी नहीं है। सन्तानोंमें वेही सबसे बड़े हैं। वे हम लोगोंका बड़ा उपकार करते हैं। वे हमलोगोंके दाहिने हाथ है।

क-यदि मै प्राण त्याग नहीं करती तो क्या इतना होता? जिसके हृदयमें कीच भरी हुई है, घड़ा बँधा हुआ है, वह क्या भवसागर पार हो सकता है? जिसके पांवमें लोहेकी जञ्जीर है वह क्या दौड़ सकता है? सन्यासी! तुमने मेरे इस अधम जीवनको क्यों बचाया था?

भवा—स्त्री सहधर्म्मिणी और धर्ममें सहायता देनेवाली है।

क—छोटे छोटे धर्ममें। परन्तु बड़े बड़े धर्ममें कण्टक है; मैंने विषरूप कण्टक द्वारा उनके अधर्म कण्टकका उद्धार किया था। छीः! धिक्कार है! दुराचार! पामर ब्रह्मचारी! यह प्राण तुमने क्यों बचाया?

भवा--अच्छा मैंने जो दिया है वह मानों मेरेही पास रहा। कल्याणी! मैंने जो प्राण तुम्हे दिया है वह मुझे तुम फेर दे सकती हो?

क--आपको ज्ञात है कि मेरी सुकुमारी कैसी है?

भवा०--बहुत दिनोंसे उसका सम्वाद नहीं पाया है। जीवानन्द बहुत दिनोंसे उधर नहीं गये।

क—वह सम्वाद मुझे ला दे सकते हो? स्वामीही मेरे छोड़ने योग्य हैं, परन्तु जब मैं बच गयी तब कन्याको क्यों त्यागूं? अब भी सुकुमारीको पानेसे इस जीवनमें कुछ सुख मिल सकता है। मेरे हेतु क्या आप इतना कष्ट स्वीकार करेंगे?

भवा०--करूंगा। कल्याणी! मैं अवश्य करूंगा। तुम्हारी कन्याको ला दूंगा; परन्तु उसके अनन्तर।

क—उसके अनन्तर क्या?

भवा०--स्वामी?

क—मैंने इच्छापूर्वक त्याग किया है।

भवा०--और यदि उनका व्रत पूरा हो तब?

क—तब उन्हींकी होऊंगी; क्या वे जानते है कि मै जीती हूं?

भवा०--नही।

क--आपके सङ्ग उनकी क्या भेट नहीं होती है?

भवा— होती है।

क—मेरे विषयमें कुछ नहीं कहते हैं?

भवा०--नही! जो स्त्री मर गयी है उसके सङ्ग स्वामीका सम्बन्धही क्या हो?

क—आप यह क्या कहते हैं?

भवा०—तुम फिर विवाह कर सकती हो। तुम्हारा पुनर्जन्म हुआ है।

क--मेरी कन्या ला दो।

भवा०—ला दूंगा। तुम अब विवाह कर सकती हो?

क--तुम्हारे साथ क्या?

भवा०--विवाह करोगी?

क--तुम्हारे संग क्या?

भवा०--यदि ऐसा ही हो।

क—तब सन्तान धर्म कहां रहेगा?

भवा०--अतल जलमें।

क--महाव्रत! और यह भवानन्द नाम।

भवा०- सब कुछ गम्भीर जलमें डूब जायगा।

क--किस लिये सब कुछ जलमें डुबाओगे?

भवा०--तुम्हारे लिये। देखो, मनुष्य हो, ऋषि हो, सिद्ध हो अथवा देवता हो सबोंकाही चित्त अवश है। सन्तानधर्म मेरा प्राण है। परन्तु आज मैं पहले पहल कहता हूं कि तुम मेरी प्राणाधिक हो। जिस दिन तुम्हें प्राण दान किया था उसी दिनसे तुम्हारे पांवतले बिक गया हूं। मैं नहीं जानता था कि संसारमें ऐसी भी रूपराशि है। यह जाननेसे कि ऐसी रूपराशि कभी देखूंगा मैं कभी सन्तानधर्म ग्रहण नहीं करता। यह धर्म इस रूपअग्निमें पड़कर भस्म हो रहा है। धर्म जल गया है। प्राण अभी है। आज चार वर्षसे प्राण भी जल रहा है। अब नहीं रह सकता। जलाओ कल्याणी! जलाओ! होने दो ज्वाला! परन्तु जो वस्तु जलनेकी सो अब नहीं रही। प्राण जाता है। चार वर्ष सहा, अब नहीं सह सकता हूं। तुम मेरी होगी?

क--तुम्हारे ही मुँहसे सुना है कि सन्तान धर्मका यह एक नियम है कि जो इन्द्रियवश होता है उसका प्रायश्चित्त मृत्यु है। क्या यह सत्य है?

भवा०--हां यह बात सत्य है।

क--सो तुम्हारा प्रायश्चित्त मृत्यु है।

भवा०--मेरा एक मृत्युही प्रायश्चित्त है।

क--मैं तुम्हारी मनोकामना सिद्ध करूँगी तो तुम मरोगे?

भवा०--निश्चय मरूंगा।

क--और यदि मनोकामना सिद्ध नहीं करूंगी?

भवा०तथापि मरना ही मेरा प्रायश्चित्त है। क्योंकि मेरा मन इन्द्रियके वश हुआ है।

क--मैं तुम्हारी मनोकामना सिद्ध नहीं करूंगी। तुम कब मरोगे?

भवा०--अबकी होनेवाली लड़ाईमें।

क-तब तुम विदा हो। मेरी कन्याको क्या यहां भेज दोगे?

भवानन्दने आंखोंमें आंसू भर कर कहा "हां भेज दूंगा।" मेरे मरजाने पर तुम मुझे स्मरण रखोगी?

कल्याणी बोली "हा रखूंगी। पदच्युत विधर्मी जानकर स्मरण रखूंगी।"

भवानन्द चले गये। कल्याणी पुस्तक पढ़ने लगी।

पांचवां परिच्छेद।

भवानन्द चिन्ता करते करते मठकी ओर जाने लगे। जाते जाते रात हो गयी। सड़क पर अकेलेही जाते थे, वनमें भी अकेलेही जा घुसे। परन्तु वनमें देखा कि कोई दूसरा मनुष्य उनके आगे आगे जा रहा है। भवानन्दने पूछा "अजी! जाते कौन हो?'

आगे जाने वाले मनुष्यने जवाब दिया "यदि ऐसा ही पूछना जानते हो तो मैं उत्तर देता हूं-मैं पथिक हूं।"

भवा-"वन्दन करो"

आगे जानेवाला मनुष्य-"सदाजननीको"

भवा--मैं भवानन्द गोस्वामी हूं।

आगे जानेवाला-मैं धीरानन्द हूं।

भवा--आप कहां गये थे?

धीरा—आपहीकी खोजमें।
भवा—क्यों ?
धीरा—एक बात कहनेको।
भवा—कौन बात।
धीरा—निर्जनमें कहूंगा।
भवा—यहीं कहो न ? यह तो अत्यन्त निर्जन स्थान है।
धीरा—आप नगरमें गये थे न ?
भवा—हां !
धीरा—गौरी देवीके घरमें न ?
भवा—तुम भी नगरमें गये थे क्या ?
धीरा—वहां एक परमसुन्दरी युवती रहती है न ?
भवानन्द—भयभीत और चकित हो बोले—"यह सब बात क्या है !
धीरा—आपने उसके संग भेंट की है न।
भवा—तब ! उसके अनन्तर ?
धीरा—आप उस स्त्री पर अतिशय अनुरक्त है ?

भवा—[कुछ चिन्ताकर] धीरानन्द ! तुमने क्यों इतना पीछा किया ? देखो धीरानन्द तुम जो कहते हो वह सब सत्य है। तुमको छोड़ कर और कितने मनुष्य यह बात जानते हैं ?

धीरा—और कोई नहीं जानता।
भवा—तब तो तुम्हारा प्राण लेनेहीसे मैं कलङ्कसे छूट सकता हूं।
धीरा—हां छूट सकते हो।

भवा—तब आओ इस निर्जन स्थानमें दोनों युद्ध करे। या तो मैं तुम्हें मार कर निष्कण्टक होऊँ और नहीं तो तुम्ही मुझे मार कर मेरा दुःख दूर करो। हथियार है ?

धीरा—है। भला खाली हाथ किसकी सामर्थ्य है जो ये सब बातें तुमसे कहे ! युद्ध करनेमें यदि तुम्हारी इच्छा हो तो मैं अवश्य करूंगा। यद्यपि सन्तानसे सन्तानका विरोध होना निषिद्ध है, परन्तु आत्मरक्षाके हेतु किसीके साथ विरोध निषिद्ध नहीं है। हां जो कहनेको मैं तुमको खोजता था वह सब सुनकर युद्ध करना अच्छा होगा न ?

भवा—हानि ही क्या ? बोलो।

भवानन्दने तलवार खोलकर धीरानन्दके कन्धे पर रखा कि धीरानन्द कहीं भाग न जाय।

धीरा—मैं यही कहता था कि तुम कल्याणीसे विवाह करो।
भवा—तुम यह भी जानते हो कि वह कल्याणी है ?
धीरा—क्यों नहीं विवाह करते ?
भवा—उसका तो स्वामी है।
धीरा—वैष्णवोंकी प्रथाके अनुसार विवाह हो सकता है।

भवा—वह शिखाशून्य वैरागियोंका। सन्तानोंका नहो। सन्तानोंका तो विवाह ही नहीं है।

धीरा–सन्तान धर्म क्या छोड़ने योग्य नहीं है ? छी छी ! तुम्हारा तो प्राण जाता है। आह ! आह !! छोड़ो मेरा कन्धा कट जो गया ? सत्यही अब धीरानन्दके कन्धेसे रक्त गिर रहा था।

भवा–तुम किस अभिप्रायसे मुझे अधर्मकी ओर प्रवृत्त कराने आये हो ? इसमें अवश्य कोई तुम्हारा स्वार्थ है।

धीरा–वह भी बोलनेकी इच्छा है। तलवार जोरसे मत दबाओ, मैं कहता हूं। इस सन्तान धर्मसे तो अब मेरा सर्वाङ्ग शिथिल हो गया है। इसीसे मैं इसे त्यागकर स्त्री पुत्रोंके मुँह देखता हुआ दिन बितानेको बड़ाही व्यग्र हुआ हूं। मैं यह सन्तानधर्म त्याग करूंगा। परन्तु मुझे क्या घर जाकर निश्शङ्क रहनेका कोई उपाय है ? विद्रोही कह कर मुझे बहुत लोग जानते हैं। घरमें जाकर बैठते ही या तो राजकर्मचारी मेरा सिर काट ले जायँगे और नही तो विश्वासघाती कह कर सन्तान मुझे मार डालेंगे। इसीसे तुम्हें मैं अपने मतमें लाना चाहता हूं।

भवा–क्यों, मुझे क्यों ?

धीरा–यही तो बात है। सन्तानसेना तुम्हारी आज्ञाधीन है और सत्यानन्द भी अभी यहां नहीं हैं। तुम्हीं इसके परिचालक हो। तुम इस सेनाको लेकर युद्ध करो, मुझे दृढ़ विश्वास है कि तुम्हारी जय होगी और युद्ध जीतकर तुम अपने नामसे राज्य स्थापन क्यों नहीं करते ? सेना तो तुम्हारी आज्ञाकारी है। तुम राजा होओ, कल्याणी तुम्हारी मन्दोदरी होवे और मैं तुम्हारा अनुचर होकर स्त्री और पुत्रोंके मुँह देखता हुआ दिन काटूं तथा तुमको आशीर्वाद देता रहूं। बस सन्तानधर्मको अनन्त जलमें डुबा डालो। भवानन्दने आहिस्तेसे धीरानन्दके कन्धेपरसे तलवार हटा ली और कहा 'धीरानन्द ! आओ युद्ध करो। मैं तुम्हें बध करूंगा। मैं इन्द्रियके वश होकर रहूंगा। परन्तु मैं विश्वासघातक नहीं हूं। तुमने मुझे विश्वासघातक होनेका परामर्श दिया है। तुम आप भी विश्वासघातक हो, तुम्हें मारनेसे ब्रह्महत्या नहीं होगी । मैं तुम्हें मारूंगा।" बात पूरी होते न होते धीरानन्द जोरसे दौड़कर भागे। परन्तु भवानन्द उनके पीछे नहीं दौड़े। वे उस समय कुछ कालतक दूसरे विचारमें थे । जब इधर ध्यान देकर धीरानन्दको खोजने लगे तब उन्हें नहीं पाया।

छठा परिच्छेद।

भवानन्दने मठमें न जाकर सघन वनमें प्रवेश किया। उस वनके एक स्थानमें एक पुराना खँडहर था। टूटी हुई ईंटोंके ऊपर बहुतसी लता और कांटोंके पेड़ बढ़े पड़े थे। वहां लाखों सांपोंका वास था। उसी टूटे फूटे मकानमें और स्थानोंकी अपेक्षा एक जगह कुछ साफ थी। भवानन्द वहीं जाकर बैठे और चिन्ता करने लगे।

रात बड़ी अँधेरी थी और वह बड़ा भारी वन बिलकुल मनुष्यशून्य था। वह वन ही सघन वृक्ष और लताओंसे दुर्गम बनकर पशुओंके भी जाने आनेमें कष्टदायी था। और उस जनशून्य स्थानका गाढ़ा अन्धकार भी दुर्भेद्य था। चारों ओर सन्नाटा छाया हुआ था, केवल कभी कभी दूरपर बाघोंका गरजना, सांपोंकी फुफकार और दूसरे वनपशु-ओंकाकभी भूखसे कभी भयसे और कभी खेलकूदसे मचाते रहनेका भयानक शोर

सुनाई देता था। कभी कभी पेड़ोंपर पक्षियोंका पंख फड़फड़ाना, बड़े बड़े पक्षियोंका विकट नाद भी सुनाई देताथा। उसी जनशून्य अन्धकारमें उस खँडहर पर भवानन्द शिरपर हाथ धरके चिन्ता कररहे हैं। निश्चल निर्भय और श्वासशून्य हो अत्यन्त गाढ़ चिन्तामें डूबे हुए हैं। मनमें यही विचारते थे कि "जो भावी है वह अवश्य होगा मैं मानों भागीरथी जलतरङ्गमें क्षुद्र हाथोंके ऐसा इंद्रिय स्रोतमें फँसगया यही मुझे दुःख है। एक पलमें देहका नाश होसकता है। और देहके नाशहीसे इंद्रियका नाश होता है। मैं उसी इंद्रियके वशीभूत हुआ हूँ। मेरा मरनाही शुभ है। ओ "धर्मत्यागी"। छी छी। मैं मरूंगा।" उसी समय एक उल्लूक उनके शिरपर उडके गम्भीर स्वरसे बोल उठा। भवानन्द तब तो जोरसे बोलनेलगे। "वह कैसा शब्द है? मानो यमराज मुझे चुपचाप कानमें कहके बुला रहे हैं। मै नहीं जानता किसने शब्द किया, पुण्यमयी अनन्त तुम शब्दमयी हो परन्तु तुम्हारे शब्दका मर्म तो नहीं बूझ सकता हूँ। मुझे धर्ममें मति दो पापसे निवृत्ति करो। धर्ममें "हे गुरु देव! जिससे धर्ममें मेरी मति रहे"

उसी समय उस भयंकर वनके बीचसे मधुर परञ्च मर्मभेदी मनुष्य कण्ठस्वर सुनाई दिया मानो किसीने कहा "तुम्हारी मति धर्ममें रहेगी। आशीर्वाद किया"

भवानन्दको रोमांच हो आया और वे बोलने लगे? यह "क्या यह गुरुदेवका कण्ठस्वर है। महाराज आप कहां हैं इस समय दासको दर्शन नहीं दिया, न किसीने उत्तर दिया भवानन्द बारम्बार पुकारने लगे परन्तु उत्तर नहीं मिला। इधर उधर खोज ढूँढ़ की। परन्तु वहां कहीं कुछ नहीं।

जिससमय रातके बीत जानेपर प्रातः सूर्य उदयहो उस महानिविड़वनके हरे हरे पत्तोंपर अपने उज्ज्वल किरणोंको फैलारहे थे। भवानन्द उस समय मठमें आप उपस्थित हुए "हरे मुरारे हरे मुरारे" उनके सुननेमें आया वे चीन्ह गये कि सत्यानन्द का कण्ठस्वर है। और समझा कि प्रभु फिर लौट आये हैं।

सातवां परिच्छेद।

जीवानन्दके कुटीसे बाहर होनेके बाद शांति देवी फेर सारंगी ले कोमल स्वरसे गानेलगी।

"प्रलयपयोधिजले धृतवानसि वेदम्।
विहितवहित्रचरित्रमखेदम्॥
केशव धृतमीनशरीर
जय जगदीश हरे"

जयदेव गोस्वामी विरचित यह मधुर स्तोत्र जब शान्तिदेवीके कण्ठसे बाहर हो और राग ताल स्वरसे सम्पूर्ण हो उस अनन्त वनमें अनन्त निस्तब्धताको नाशकर वर्षाकालकी उमड़ी हुई नदीकी मलयानिल सञ्चारित तरङ्गों की भांति मनोहर बोध होनेलगा। तब उसने फेर गाया।

"निन्दसि यज्ञविधेरहहश्रुतिजातम्।
सदयहृदयदर्शितपशुघातम्।
केशवधृतबुद्धशरीर
जय जगदीशहरे"

उसी समय बाहरसे न जाने किसीने अत्यन्त गंभीर मेघगर्जनके समान सुरमें गाया।

"म्लेच्छनिवहनिधने कलयसि करवालम्
धूमकेतुमिव किमपि करालम्।
केशव धृतकल्किशरीर"
जय जगदीशहरे

शांति गला चीह्ल गई "रहो निपूती के बेटे बूढे वयसमें तुम स्त्रीके सङ्ग गाने आयेहो। रहो मैं मजा चखाती हूँ।" यह कह वह सारङ्गीके तारोंको कुछ और ऊँचेमें मिला और अपने गलेको भी कुछ ऊचाकर गानेलगी।

"वेदानुद्धरते जगन्निवहते भूगोलमुद्बिभ्रते।
दैत्यं दारयते बलिछलयते क्षत्रक्षयंकुर्वते॥
पौलस्त्यं जयते हलं कलयते कारुण्यमातन्वते
म्लेच्छान् मूर्छयते दशाकृतिकृते कृष्णाय तुभ्यं नमः।"

यह गाते गाते उस ऊंचे ताल, ऊंचे स्वर और उस आकाशभेदी तानको छोड़ शांतिने–गाया।

"श्रितकमलाकुचमण्डलधृतकुण्डल
कलितललितवनमाल
जय जय देव हरे"।

बाहरसे जो साथमें गा रहाथा उसने आपही आप गाया।

"दिनमणिमंडल मंडन भवखंडन ए मुनिजनमानसहंस"

शांतिने भक्तिपूर्वक प्रणामकर सत्यानन्दके चरणरजको ग्रहण किया और बोली "प्रभो! मैंने कौनसा पुण्य किया है जो आपके चरणकमल का दर्शन इस स्थानमें पाती हूँ। आज्ञा कीजिये मुझे क्या करना होगा?" यह कह शांतिने फेर सारङ्गीमें सुर दे गाया।

"तवचरणेप्रणता वयमिति भावए कुरुकुशलं प्रणतेषु"

सत्यानंद बोले "मा! तेरा कुशलही होगा।

शांति—कैसे महाराज! आपकी तो आज्ञा है कि मेरा वैधव्यही होगा।

सत्या०–तुम्हें मैंने पहिले नहीं पहचानाथा। मा! रस्से का जोर विना बूझे मैंने खैंचाहै। तुम मेरी अपेक्षा अधिक ज्ञानी हो, इसका उपाय तुम करो। जीवानन्दको मत कहो जो मैं यह सब जानता हूँ। तुम्हारे प्रलोभनसे वह अपनी प्राण रक्षा कर-सकते है। और इतने दिन कररहे है। ऐसा होनेसे मेरा कार्य उद्धार हो सकेगा।

उस बड़े बड़े खिले नीलकमलसदृश नेत्रों में, आषाढ़में चमकनेवाली विद्युल्-ताके समान कोपका भयंकर कटाक्ष हुआ। शांति बोली 'क्या महाराज! क्या कह-तेहो? मैं और मेरा स्वामी दोनों एक आत्माहै। जो जो बातें आपसे हुई है सब कहूगी। मरना हो वह मरेगे मेरी हानिही क्या? मैं भी तो सङ्गही मरूंगी। उनको स्वर्ग होगा। क्या आपके मनमें है कि मुझे स्वर्ग न हो"

सत्यानंद--मैंने कभी हार नहीं मानाथा आज तुमसे परास्त हुए। मैं तुम्हारा पुत्र हूं सन्तानको प्यार करो। जीवानन्दको बचाओ। अपनाभी प्राणरक्षा करो। मेरा कार्य उद्धार होगा।

शांति बोली, मानो बिजली हँस पड़ी "मेरे स्वामीका धर्म मेरे स्वामीके हाथमें है। मैं उनको धर्मसे हटानेवालीकौन हूँ। इहकालमें स्त्रीका देवता पति है। परन्तु परकालमें सबका देवता धर्म है मेरे निकट मेरे पति बड़े हैं उनकी अपेक्षा मेरा धर्म बड़ा है। उससे बढके मेरे लिये मेरे स्वामीका धर्म है। मुझे जिस दिन इच्छा मैं अपने धर्मको छोड़ सकती हूँ परन्तु मैं अपने स्वामीके धर्मको छुड़ानेवाली कौन हूँ? महाराज! तुम्हारे बातोंसे यदि मेरे स्वामीका मरना होगा तो वह मरेंगे। मैं बाधा नहीं डालूंगी।

सत्यानन्दने तब दीर्घ निश्वास त्यागकर कहा "माता! इस घोरव्रतमें बलिदान हुई है। हमलोग सब कोईको बलि पडना होगा। मैं मरूंगा, जीवानन्द, भवानन्द आदि सब मरेंगे बोध होताहै माता तू मरेगी। परन्तु देखो कार्य करके मरना चाहिये बिना कार्य किये मरना क्या अच्छा है? मैने केवल देशहीको मा कहाहै और किसी को नही क्योंकि उस सुजला सुफला पृथिवीको छोड़ और कोई दूसरी मा नहीं है। और आज तुम्हें मा कहा है तुम मा होके सन्तानोंका कार्य कीजियो जिसमें कार्योद्धार हो सो करो जीवानन्दकी प्राणरक्षा कीजियो अपनी प्राणरक्षा कीजियो" यह कह सत्यानन्द "हरे मुरारे मधुकैटभारे" गाते चले गये।

आठवां परिच्छेद।

क्रमशः सन्तान सम्प्रदाय में यह बात फैल गई कि, सत्यानन्द आये हैं। सन्तानों से कुछ बातें करेंगे इसीसे उनने सबको बुलायाहै। अब तो दलके दल सन्तानगण अजयके किनारे आके इकट्ठे होनेलगे। चांदनी रातमें अजय नदीके वालुकामय किनारेके पास बड़े वनमें आम, कटहल, ताल, तेतर, वेल, वड़, पीपर सीमर, आदि वृक्षोंके सघन जङ्गलमें दसहजार सन्तान इकट्ठे हुए। और आपसमें एक दूसरेके मुँहसे सत्यानन्दकी अवाई सुनकर बड़ा शोर गुल करने लगे। सत्यानन्द कहां किस हेतुसे गयेथे यह साधारण लोग नहीं जानते थे, यही किम्वदती थी कि, वह सन्तानोंकी मङ्गल कामना हेतु हिमालयमें तप करने गये थे। आज सब कोई काना फूसी करने लगे कि "महाराज का तप सिद्ध हुआ हम लोगोंका राज्य होगा।" इतने में तो और भी कोलाहल होनेलगा कोई चिल्लाया "मारो, मारो, मुसलमानोंको मारो" कोई बोला "जय जय महाराजकी जय" किसीने गाया "हरे मुरारे, मधुकैटभारे, वन्दनकरो सदा जननीको" किसीने कहा "भाई! ऐसा दिनभी क्या कभी होगा जो हम लोग अपने धनका आपही भोग करेंगे। दश हजार मनुष्योंकी कण्ठध्वनि, मन्द, सुगन्ध पवनसे डोलते हुए पल्लवोंका मर्मर शब्द, वालू बहनेवाली नदीके मन्द मन्द तरतर शब्द, नील आकाशमें चन्द्र तारा और श्वेत मेघराशि, हरी पृथिवी पर हरेवन। स्वच्छ नदी, सफेद वालू, फूले फूल और बीच बीचमें 'वन्दन करो' इत्यादिकी ध्वनि। ऐसे अवसरमें सत्यानन्द उन सन्तान मण्डलीके बीचमें आके खड़े हुए। उन्हें देखतेही उन दसहजार सन्तानोंका शिर वृक्षोंके बीच बीचमें पड़ेहुए चन्द्रकिरण में दीप्त होकर हरीघासपर गिरगये। सत्यानन्द अत्यन्त ऊंचे स्वरसे डब डबाई हुई आँखोंसे दोनों बांह ऊंचाकर बोले--

"शंख, चक्र, गदा, पद्मधारी, वनमाली, वैकुंठनाथ, जिनने केशीको मधुमुर नरक इत्यादि राक्षसोंको मारा है जो जगत्के पालनकर्त्ता है वह तुम लोगोको पालन करेंगे। वह तुम लोगोंके बाँहमें बलदे हृदयमें भक्ति दे, धर्ममें मति दे । तुम लोग उनकी महिमाका गान करो"

यह सुनतेही दस हजार कंठोंसे ऊंचे स्वरसे गीत होने लगा।

"जय जगदीश हरे।

"मलयपयोधिजले धृतवानसि वेदम्।

विहितवहित्रचरित्रमखेदम्॥

केशव धृतमीनशरीर

जय जगदीश हरे"

सत्यानन्द उन लोगोको फेर आशीर्वाद कर बोले "हे सन्तानगण! तुम लोगों से मुझे आज एक विशेष बात कहनाहै। टामस नामका एक विधर्म्मी दुष्टने अनेक सन्तानोंको नष्ट किया है आज रात हमलोग उसको सेना समेत मारडालेंगे। यही ईश्वरकी आज्ञा है तुम लोग क्या कहते हो?" विकट हरिध्वनिने वनकी निस्तब्धताको भंग किया। "अभी मारेंगे, वे लोग कहां हैं बतला दोगे? चलो। मारो, मारो, शत्रुओंको मारो" इत्यादि शब्द दूरके पहाड़ोंमें प्रतिध्वनित हुआ। तब सत्यानंद फिर बोले, "इसीसे हम लोगोंको थोड़ा धैर्य धरना होगा। शत्रुओंको तोप है। तोप विना हम लोगोंको युद्ध करना सम्भव नहीं है विशेष वे लोग बड़ेवीर जाति है। पदचिह्नके किलासे १७ तोपें आरही हैं। तोपके पहुँचतेही हम लोग युद्धके लिये यात्रा करेंगे। यह देखो भोर होता जाता है। चारघड़ी दिन उठतेही—यह क्या—," गुडुम्, गुडुम् गुम्—अकस्मात् उस बड़े वनमें तोपोंकी आवाज होने लगी। तोपें अङ्गरेजोंकी थीं। जालमें फँसे मछलियोंके ऐसा काप्टेन टामस सन्तान सम्प्रदाय को इस आम्रवनमें घेरके मारनेका उद्योग कियेहुए है।

नवां परिच्छेद।

अड़रड़ धांय अड़रड़ धांय, अङ्गरेजोंकी तोपें गरज उठीं। उस महाविस्तार वनमें वनको कँपाते हुए "अड़रधांय २" प्रतिध्वनि हुआ। अजय (नदी) के घुमावमें घूम घूमकर वह ध्वनि दूरके आकाशसे प्रतिक्षिप्त हुई। "अड़रधांय"। अजयके अनेक दूरके वनमें भी वह शब्द गूँजने लगा। "अड़रधांय"। सत्यानन्दने हुक्म दिया कि तुम लोग देखो तो ये तोपें कैसी हैं। कैएक सन्तान उसी क्षण घोड़ेपर सवार हो दौड़े। परन्तु उन लोगोंके वनके बाहर कुछ दूर जातेही उन लोगोंपर सावन महीनेकी झरी ऐसी गोले गोलियोंकी वर्षा होनेलगी और वे लोग घोड़े समेत घायल हो सबके सब खेत रहे। सत्यानन्द दूरसे यह देख रहे थे। बोले "ऊंचे पेड़ पर चढ़के देखो तो क्या है!" परन्तु उनके हुक्मके पहिलेही जीवानन्द पेड़पर चढ़के उस प्रातः किरणमें देखरहे थे और उनने सबसे ऊँचे डाल परसे पुकार के कहा "तोप अङ्गरेजोंका है"।

सत्या०—पैदल सिपाही है या घोड़सवार है?

जीवा०—दोनों है।

सत्या०-कितने ?

जीवा०-ठीक नहीं कर सकते हैं अभी भी वनके आड़से बाहर होरहे हैं।

सत्या०-गोरे हैं ? या केवल काले सिपाही ?

जीवा०-गोरे हैं।

सत्या०--तुम पेड़परसे उतरो।

जीवानन्द पेड परसे उतरे।

सत्यानन्द बोले "दसहजार सन्तान उपस्थितहैं। देखो तुम क्या कर सकतेहो। तुम आज सेनापति हुए" जीवानन्द अस्त्र शस्त्रसे सुसज्जित हो कूदके घोड़े पर चढ़े। एक वेर नवीनानन्द गोस्वामीकी ओर दृष्टि करके आंखके इशारेसे क्या कहा और नवीनानन्दने भी क्या उत्तर दिया सो किसीने नहीं समझा। खाली उन्हीं दोनों आदमीने अपने अपने मनमें समझा कि प्रायः जन्मभरके लिये यही शेष विदाईहै। तव नवीनानन्द दहिना हाथ उठाकर सबसे कहा "भाइयो आओ, इस समय सब कोई गाओ "जय जगदीश हरे" इतना सुनतेही दसहजार सन्तानोंने एक स्वरसे वन, नदी, और आकाशको प्रतिध्वनित करतेहुए और तोपोंके शब्दको डुवाते हुए हजारों हाथ उठाके गाया।

"जय जगदीश हरे
म्लेच्छनिवहनिधने कलयासि करवालम्
धूमकेतुमिव किमपि करालम्।
केशव धृतकल्किशरीर
जय जगदीशहरे"

उसी समय अङ्गरेजोंके गोलोंकीवृष्टि वनके बीच सन्तान सम्प्रदायके ऊपर होने लगी। गाते २ कोई छिन्न मस्तक कोई छिन्न बाहु कोई छिन्न हृदय हो पृथिवीमें गिरने लगे "जय जगदीश हरे" गीत समाप्त होते होतेही सब कोई एकदम चुप होगये वह सघनवन, वह नदीकी वालुकामय किनार और वह चिर एकान्त एकदम शब्द शून्य होगया। खाली भयंकर तोपोंकी ध्वनि और दूरमें गोरे लोगोंके अस्त्रोंके शब्द और उसकी प्रतिध्वनि सुनाई देतीथी।

इतनेमें सत्यानन्दने उस घोर निस्तब्धताको भयंकर करके खूब ऊंचे स्वरसे कहा "जगदीश्वर तुम लोगों पर कृपा करेंगे। तोप कितनी दूरपर है ?"

पेड के ऊपरसे एकने उत्तर दिया, "इस वन के बहुत निकट है। बीचमे केवल एक छोटा मैदान व्यवधान है" सत्यानन्द बोले "तुम कौनहो ?"

ऊपरसे उत्तर आया "मै नवीनानन्दहूँ"

तब सत्यानन्द बोले "तुम लोग दशहजार सन्तान हो आज तुम्हीं लोगोंकी जीत होगी। तोप छीन लो "इतना सुनतेही सबके आगे घोड़े पर सवार जीवानन्द बोले "आओ" वे दशहजार सन्तान कोई घोड़े पर कोई पैदल बडे वेगसे जीवानन्दके पीछे चले। पैदलोंके कन्धेपर बन्दूक कमरमें तलवार और हाथमें बल्लम थे। वनसे बाहर होतेही उस असंख्य गोलोंकी वृष्टिसे [illegible] ने लगे अनेक सन्तानोंने विना युद्ध प्राण त्याग कर भूमिमे [illegible] से कहा 'जीवानन्द निरर्थक प्राणहत्यासे प्रयोजन क[illegible]

जीवानन्दने फिर कर देखा कि भवानन्द है और बोले "क्या करनेको कहतेहो ?"

भवा०-वनके भीतर वृक्षोंके सहारे अपनी प्राणरक्षा करो तोपके सम्मुख विना तोप के इस खुले मैदानमें सन्तान सेना एक घड़ी नहीं ठहरेगी। परन्तु झाड़ीके भीतरसे बहुत देर तक युद्ध किया जा सकता है।

जीवा० -तुमने ठीक कहा है। परन्तु प्रभुकी आज्ञाहै कि तोप छीन लेना चाहिये। इससे तोप छीनने जाऊँगा।

भवा०-किसकी सामर्थ्य है तोप छीने। परन्तु यदि जानाही होगा तो तुम निवृत्तहो मै जाताहूं।

जीवा०-सो नहीं होगा भवानन्द ! सो नहीं आज मेरे मरनेका दिनहै।

भवा०-आज मेरे मरनेका दिन है।

जीवा०-मुझे प्रायश्चित्त करना होगा।

भवा०-तुम निष्पाप हो तुमको प्रायश्चित्त नहीं होसकता मेरा चित्त कलुषित है। मुझेही मरना होगा। तुम रहो. मैं जाताहूँ।

जीवा०-भवानन्द ! तुम्हारा क्या पाप है सो हम नहीं जानते। परन्तु तुम्हारे कहनेसे संतानोंका कार्य उद्धार होगा। मैं जाताहूँ।

भवा०-(थोड़ी देर चुपहोकर) मरनेका प्रयोजन है आजही मरेंगे। जिस दिन मरनेका प्रयोजन पड़ेगा उसी दिन मरेंगे मृत्युके लिये फिर कालाकाल बिचार क्या?

जीवा०-तव देर क्यो ?

इतना सुनतेही भवानन्द सबके आगे हुए। ढेरीके गोले सन्तानोंपर गिरके उनलोगोंको खण्ड पहण्ड कर रहा है किसीको फाड़ डालता है किसीको एकदम उड़ा देता है और किसीको उलटा फेंकदेता है। तिसपरसे बंदूकधारी शत्रुके सिपाहियोंका अव्यर्थ निशाना कतारके कतार सन्तान सेनाको भूमिमें गिरारहा है. इसी समय भवानन्द बोले "उसी तरङ्गमें आज सन्तानोको कूदना होगा। भाई कौन सकोगे? आओ इस समय सब कोई "वन्दन करो सदा जननीको" गाओ। यह सुनतेही खूब ऊँचे स्वरसे मेघमल्हारागमें सन्तान सेनाके हजारो कण्ठने तोपके तालमें "बन्दन करो सदा जननीको" गाया।

दशवां परिच्छेद।

वे दसहजार सन्तान "वन्दन करो सदा जननीको" गाते गाते भालेको ऊँचाकरके बड़े वेगसे तोपोंपर आक्रमण कर गोलोंकी वर्षासे खण्ड विखण्ड विदीर्ण हो तितर बितर हो गये, तौ भी उन्होंने पीठ नहीं दिखायी। उसी समय कैप्टेन टामसकी आज्ञासे सिपाहियोके एक दलने वन्दूकमें सङ्गीन चढ़ाकर बड़े साहससे सन्तानोंके दाहिने भाग पर आक्रमण किया। यो दोनों ओरसे दबाये जाकर सन्तान एकदम निराश होगये। पल पलमें सैकड़ो सन्तान विनाश होने लगे। यह देखकर जीवानन्दने कहा "भवानन्द ! तुम्हारीही बात ठीक है। और वैष्णव ध्वंस करनेका प्रयोजन नहीं है। धीरे धीरे फिरो।"

भवा०-अब कैसे फिरोगे ? इस समय जो फिरेगा वही मरेगा।

जीवा०–केवल सामने और दाहिनी ओरसेही आक्रमण हो रहा है। बायीं ओर कोई नहीं है, चलो क्रमसे बांई ओरसे घूमकर निकल जाय।

भवा०–निकलकर कहां जाओगे? उधर तो अजय नदी है; वर्षाकी बाढ़से वह बड़ी वेगवती बनी है। क्या तुम अङ्गरेजोंके गोलोंसे बचाकर सन्तानोंको अजयके जलमें डुबा मारोगे?

जीवा०–मुझे याद आता है कि अजयके ऊपर एक पुल है।

भवा०–दस हजार सन्तानोंको उस एकही पुलपरसे लेजानेमें वहां इतनी भीड़ होगी कि एकही तोपके दागनेसे बिना प्रयास समूची सन्तान सेनाका नाश होजायगा।

जीवा०–एक काम करो। थोड़ी सेना तुम अपने साथ रखो। इस युद्धमें तुमने जैसा साहस और चातुरी दिखायी है उससे तुम्हारा असाध्य कुछ नहीं है। तुम इन थोड़ेसे सन्तानोंको लेकर सम्मुख भागकी रक्षा करो और मैं तुम्हारी सेनाकी आड़से बाकी सन्तानोंको पुल पार कर ले जाऊं। तुम्हारे संग जो लोग रहेंगे वे अवश्यही नष्ट होंगे। पर मेरे सङ्ग जो रहेगे वे बचानेसे बच भी सकते हैं।

भवा०–अच्छा मैं सो ही करता हूँ।

इसके बाद भवानन्दने दो हजार सन्तानोंको लेकर "वन्दन करो" गीतको खूब जोरसे गाते हुए बड़े उत्साहसे अँगरेजोकी गोलन्दाज सेना पर आक्रमण किया। वहां बड़ा भयंकर युद्ध होने लगा। परन्तु तोपोंके सामने यह छोटीसी सन्तान सेना कबतक ठहर सकती थी? जैसे किसान खेतमें धान काटते है वैसेही उन लोगोंको गोलन्दाजोंने भूमि पर गिराना आरंभ किया।

इसी अवसरमें जीवानन्द बाकी सन्तान सेनाका मुँह फिराकर उस बनकी बांई ओरसे धीरे धीरे चलने लगे। कैप्टेन टामस और एक लेफ्टनेन्ट वाट्सनने दूरसे देखा कि सन्तानोंका एक दल धीरे धीरे भाग रहा है। तब उन दोनोंने अङ्गरेजोंके सिपाहियोंका एकदल और मुसलमानी सिपाहियोका एकदल लेकर जीवानन्दका धावा किया।

कैप्टेन टामसने जब देखा कि सन्तान सेनाका प्रधान भाग भाग रहा है, तब कैप्टेन "हे" नामक एक सहयोगीसे कहा "मै दो चार सौ सिपाही लेकर इस सामनेके इन तितर बितर बने हुए विद्रोहियोंका नाश करता हूँ। तुम बाकी सैन्यों समेत तोपोंको लेकर उन भागनेवालोंका धावा करो। बांई ओरसे लेफ्टनेण्ट वाटसन जाते हैं, दाहिनी ओरसे तुम जाओ। और सुनो, उनके आगे जाकर पुलका मुँह बन्द करना होगा। ऐसा करलेने पर वे तीनों ओरसे घिर जायँगे और उनको हम जालमें फँसी हुई मछलियोंकी भांति मार सकेंगे। वे बड़े तेज चलने वाले देशी फौज वाले है और भागनेहीमें बड़े तेज हैं; इससे तुम उन लोगोंको सहजमें पकड़ नहीं सकोगे। तुम सवारोंसे कहो कि वे कुछ तिरछी राहसे घूम कर छिपे छिपे पुलके सामने खड़ा हो जावे; तभी काम पूरा होगा"। कैप्टेनने वैसाही किया।

"अतिदर्पेहता लंका।" कैप्टेन टामसने सन्तानोंपर अत्यन्त घृणा दिखाकर केवल दोसौ पैदल सिपाहियोंको भवानन्दसे लड़नेके लिये रख छोड़कर सारी सेना "हे" के साथ भेज दी। बुद्धिमान् भवानन्दने जब देखा कि अङ्गरेजोंकी सब तोप चली गयी

और सेना भी प्रायः सब विदा होगयी तथा शेष लोग सहजहीमें मारे जा सकते है तब उन्होने अपने बचे हुए वीरोंको बुलाकर उनसे कहा "इनमेंसे हरेक आदमीको मारकर हमें जीवानन्दकी मदद पर जाना है। सो एक वेर तुमलोग कहो "जय जगदीश हरे।" तब वे बचे हुए थोड़ेसे सन्तान "जय जगदीश हरे" कहतेहुए बाजोंकी भांति कैप्टेन टामस पर टूट पड़े। उस हमलेका धक्का तिलङ्गे और सिपाहियोंसे नही सहा गया। वे सबके सब मारे गये। भवानन्दने तब आप जाकर कैप्टेन टामसके केश पकड़े कैप्टेन अन्ततक लड़ रहा था। भवानन्द बोले "काप्टेन साहब! तुम्हें नही मारूंगा। अङ्गरेज हम लोगोंके शत्रु नहीं है। क्यों तुम मुसलमानोंकी सहायता करने आये हो? तुमको प्राणदान देता हूँ। किन्तु इस समय तुम हमारे कैदी हो।" कैप्टेन टामसने उस समय भवानन्दको मारनेके लिये एक सङ्गीन लगी हुई बन्दूक उठानेकी चेष्टा की, परन्तु भवानन्दने ऐसे जोरसे पकड़ लिया था कि कैप्टेन साहब हिल नहीं सके। तब भवानन्दने अपनी मातहतोंको हुकुम दिया "इसको बांधो।" दो तीन सन्तानोंने कैप्टेन टामसको बांधा। भवानन्दने कहा इसको एक घोड़ेपर उठाकर चलो, अब हम जीवानन्दकी मदद पर चले। तब वह छोटीसी सेना कैप्टेन टामसको घोड़ेपर बांधकर "वन्दन करो" गाते गाते लेफ्टनेण्ट वाटसनको मारने दौड़ी। जीवानन्दकी सन्तान सेना हतोत्साहित होकर भागना चाहती थी। जीवानन्द और धीरानन्दने उसको बड़े बड़े प्रयत्नोंसे समझाकर स्थिर रखा था। परन्तु वे सबको रख नहीं सके थे। कितनोंने भागकर आमके वनकी शरण ली थी। बाकीको जीवानन्द और धीरानन्द पुलकी ओर ले चले। परन्तु वहां तो "हे" और "वाटसन" ने उनको दोनो ओरसे घेर लिया। हां! अब रक्षाका कोई उपाय नहीं रहा!

ग्यारहवां परिच्छेद।

इसी समय टामस साहबकी तोपें दाहिनी ओरको आ पहुँचीं। तब सन्तान एक दम छिन्न भिन्न होने लगे। किसीके बचनेकी कोई आशा नहीं रही। जो जहां था वह वहींसे भागनेलगा। जीवानन्द और धीरानन्द उनको इकट्ठा रखनेकी अनेक चेष्टा करके भी किसी भांति कृतकार्य नहीं हो सके; उसी समय बड़े जोरसे यह आवाज सुनाई दी, "पुल पर जाओ, पुल पर जाओ; पुलपरसे उस पार चले जाओ। नहीं तो अजय नदीमें डूब मरोगे। अंगरेजोंकी सेनाकी ओर मुँह किये धीरे धीरे पुलपर चले जाओ।"

जीवानन्दने सामने भवानन्दको देखा। भवानन्द बोले—'जीवानन्द! सबको पुल पर ले जाओ; नहीं तो और रक्षा नहीं है।" तब आहिस्ते आहिस्ते पीछे हटती हुई सन्तानसेना पुल पार करने लगी। परन्तु पुलपर अनेक सन्तानोंके एकही समय चढ़ते ही अङ्गरेजकी तोपको सुभीता मिला। वह फेकती हुई पुलको मानों बुहारने लगी। सन्तान दलके दल मरने लगे। अब भवानन्द, जीवानन्द और धीरानन्द मिल गयेथे। उन्होंने देखा कि एकही तोपके भयानक उत्पातसे सन्तानोंका नाश होरहा है। भवानन्द बोले "जीवानन्द! धीरानन्द! चलो हम अपनी २ तलवारोंके बलसे इस तोपको दखलमें करलें।" बस तलवार चलाते हुए उन तीनोंने तोपके पास पहुँचकर गोलन्दाजोंको मारा। यह देखकर और भी बहुत सन्तान उनकी सहा-

यतामें पहुँचे । तोप भवानन्दके दखलमें आगयी, उसको दखलमें करके भवानन्द उसके ऊपर जा बैठे और ताली बजाते हुए कहने लगे—"कहो, वन्दन करो सदा जननीको ।" सबोंने "वन्दन करो" गाया ।

भवानन्दने कहा—"जीवानन्द ! कहो तो अब तोपको घुमाकर इन दुष्टोंको भुन डालें । सन्तानोंने तोपको पकड़कर घुमाया । तोप मानो वैष्णवोंके कानोंमें बड़े जोरसे हरि हरि शब्द करने लगी । भवानन्दने तोपको खींच लेजाकर पुलके सामने रखा और कहा—" तुम दोनों सन्तानोंके कतारबन्दी कर पुलके पार ले जाओ । मैं अकेला उसकी रक्षा करूँगा । तोप चलानेके लिये केवल थोड़े गोलन्दाज मेरे पास रख जाओ । " बीस चुने हुए सन्तान भवानन्दके पास रहे ।

अब असंख्य सन्तान जीवानन्द और धीरानन्दकी आज्ञासे पुल पार कर कतार बन्दीसे दूसरे पार जाने लगे । भवानन्द अकेले उन बीस सन्तानोंकी सहायतासे तोप दाग दाग कर बहुत सिपाहियोंको मारने लगे । परन्तु मुसलमान सेना ज्वारकी तरंगोंकी भांति एकके ऊपर दूसरी, तीसरी,चौथी आती हुई भवानन्दको घेरने लगी । और मानों उनको व्याकुल कर डुबाने लगी । सन्तान निर्भय, अश्रान्त और अटल थे । बार बार तोप दागते हुए वे कितनेही मुसलमानोंको मारने लगे । मुसलमान सेना वायुके झोंके खातीहुई तरङ्गोंके थपेड़ोंकी भांति उनपर टूट टूट कर हमला करने लगी । परन्तु वे बीस सन्तान तोपसे पुलका मुँह बन्द किये हुए थे । वे मारनेसे भी नहीं मरते थे । मुसलमान पुलपर जा नहीं सके । वे बीस वीर जितने योग्य लड़ाके नहीं थे, उतने प्राणोंसे निडर होकर मानों अमर थे । इस अवसरमें दलके दल सन्तान दूसरे पार पहुँच गये और थोड़ी देर पुलकी रक्षा करनेसेही सब सन्तान सेना पुलके पार चली जाती कि इतनेमें न जानें कहांसे नयी नयी तोपे गरज उठी । अड़रर धम् धम् धम् । दोनों दलवाले थोड़ी देर लड़ाई बन्द रखकर देखने लगे कि ये तोपें कहांसे गर्ज रही हैं । उन लोगोने देखा कि वनके भीतरसे कई एक तोपें देशी गोलंदाजोंसे चलाई जाती हुई निकल रही हैं । बाहर निकलतेही वे सतरह भयंकर तोपें अपने सतरहों मुखोंसे धुआं उगलते हुए "हे" साहबके दलपर आग बरसाने लगी । भयानक शब्दसे वन, नदी, पहाड़ आदि सब गूँजउठे । समूचे दिनकी लड़ाईसे थकी हुई मुसलमान सेना डरसे कांप उठी । उस अग्निकी वृष्टिसे तैलंगी मुसलमानी और हिन्दुस्थानी सेना सब भागनेलगी, केवल थोड़े गोरे खड़े खड़े मरने लगे ।

भवानन्द पहले तमाशा देख रहे थे; आगे बोले "भाइयो ! मुसलमान भाग रहे हैं; चलो एक बेर उन लोगों पर हमला करें ।" तब चींटी दलके समान सन्तानोंके दल नये उत्साहसे उत्साहित होकर फिर पुलके इस पार आ गये और मुसलमानों पर हमला करनेको दौड़े । वे अचानक मुसलमानों पर जा गिरे । मुसलमानोंको लड़नेका और अवसर नहीं मिला । पुण्यवती भागीरथी जैसे अहंकारी विशाल पर्वताकार मत्त मातंगको बहा ले गयी थी वैसे ही सन्तानसेना मुसलमानोंको बहा ले चली । मुसलमानोंने देखा कि पीछे भवानन्दकी पैदल सेना है और सामने महेन्द्रकी तोपें है । साहबका सत्यानाश होनेको उपस्थित हुआ । उनका बल, वीर्य, साहस, पुरुषार्थ, कौशल शिक्षा, अहंकार सब उड़ गया । बादशाही, देशी, विलायती, काले गोरे सब सैन्य मर मर कर पृथ्वी पर गिरने लगे । विधर्मियोंके दलने

पीठ दिखाई "मारो मारो" कहते हुए जीवानन्द, भवानन्द और धीरानन्द विधर्मी सेनाके पीछे दौड़े। उन लोगोंकी तोपोंको सन्तानोंने छीन लिया। बहुत अङ्गरेज और देशी सिपाही मारे गये। अब यह देखकर कि सत्यानाश हुआ कैप्टेन 'हे' और वाटसनने भवानन्दके पास कहला भेजा कि "हम सब कोई तुमलोगोंके हाथ कैदी होते हैं; और प्राण मत लो।" यह सुनकर जीवानन्दने भवानन्दके मुँहकी ओर देखा। भवानन्दने अपने मनमें कहा "यह नहीं हो सकता, मुझे तो आज मरना है। प्रकाशमें भवानन्द हाथ उठाकर ऊंचे स्वरसे हरिनाम उच्चारते हुए बोले "मारो, मारो"। अब तो एक भी प्राणी नहीं बचा। अन्तमें एक जगह बीस तीस गोरे इकट्ठे होकर आप ही आप आत्मसमर्पण करनेकी इच्छासे बड़ी भयङ्कर लड़ाई लड़ने लगे। जीवानन्द बोले "भवानन्द! लड़ाईमें हम लोगोंकी जीत हुई। इनके एक गोरेको छोड़ कर और कोई जीता नहीं है। सो बस करो उन लोगोंको प्राण दान देकर चलो, हम लौट चलें।

भवानन्द बोले "एक भी मनुष्यके जीते रहते भवानन्द नहीं लौटेगा। जीवानन्द तुमसे मै शपथ उठाकर कहता हूँ कि मैं अकेलाही इन कईएक अङ्गरेजोंको मार गिराता हूँ, तुम अलग खड़ा होकर देखो।

कैप्टेन टामस घोड़े पर बँधे हुए थे। भवानन्दने हुकुम दिया "उसको सामने रक्खो, पहले यह दुष्ट मरेगा तब मैं मरूगा।"

कैप्टेन टामस बँगला समझता था। वह सुनकर उसने उन अङ्गरेजोंसे कहा कि "मैं तो मरही चुका हूँ, इङ्गलैंडके पुराने नामकी तुम लोग रक्षा करना। तुम लोगोंको ईसा मसीहका शपथ है पहले मुझे मारो, तब इस बागी विधर्मी काफरको मारो।"

धमसे एक आवाज हुई। कैप्टेन टामसके शिरमें गोली लगी, लगतेही उसने प्राण त्याग किया। एक आइरिशमैनने टामस साहबको निशाना कर गोली चलायी थी।

भवानन्दने तब पुकार कर कहा "मेरा ब्रह्मास्त्र खाली गया, कौन ऐसा भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव है जो इस समय मेरी रक्षा करेगा। यह देखो चोट खाये हुए बाघके समान गोरे मेरे ऊपर टूट पड़े है। मै मरने आया हूँ। मेरे सङ्ग मरनेकी इच्छा क्या किसी सन्तानको है?"

पहले धीरानन्द आगे बढ़े, पीछे जीवानन्द और उनके साथ साथ १०। १५। २०। २५। ५० सन्तान और भी आगे हुए।

भवानन्द धीरानन्दको देखकर बोले—"क्या तुम भी मेरे सङ्ग मरने आये हो?"

धीरा०—क्यों? मरनेमें किसीका इजारा है क्या? यह कहते कहते! धीरानन्दने एक गोरेको घायल किया।

भवा०—सो नहीं। परन्तु मरनेसे तो स्त्री पुत्रोंके मुँह देखते हुए दिन नहीं बिता सकोगे।

धीरा०—कलकी बात कहते हो? अभी तक नहीं समझा है, इतना कहते कहते धीरानन्दने उस घायल गोरेको मारडाला।

तब चारों आदमी ब्रह्मचारीजीको प्रणामकर विदा हुए। इसी अवसरमें दूसरेकी आंख बचाकर इशारेसे महेन्द्रको ठहरनेके लिये कहा। बाकी तीनों चले गये। महेन्द्र रहे। सत्यानन्दने महेन्द्रसे कहा "तुम सब आदमियोंने विष्णुमन्दिरमें शपथ उठाकर सन्तान धर्म ग्रहण किया था। भवानन्द और जीवानन्द दोनोंने प्रतिज्ञाभङ्ग किया है। भवानन्दने तो आज अपना स्वीकृत प्रायश्चित्त किया। मुझे यही डर है कि न जानें जीवानन्द भी किस दिन प्रायश्चित करनेमें अपना शरीर विसर्जन कर बैठेगा। परन्तु एक भरोसा है। किसी गुप्त हेतुसे वह अभी नहीं मर सकेगा। एक तुमने ही प्रतिज्ञा रक्षाकी है। इतने दिनों पर सन्तानोंका कार्य उद्धार हुआ। प्रतिज्ञा यही थी कि जितने दिन सन्तानोंका कार्य उद्धार न हो, उतने दिन तुम अपनी स्त्री और कन्याका मुँह नहीं देखोगे। अब कार्य उद्धार हुआ। अब फिर संसारी हो सकते हो।"

महेन्द्रकी आंखोंसे दरदर आंसुओंकी धारा बहने लगी। वे बोले "प्रभु! क्या लेकर संसारी होऊंगा? स्त्रीने तो आत्मघात किया और यह नही जानता कि कन्या कहां है आपने कहा है कि वह जीती है। बस केवल इतना ही जानता हूँ और कुछ नहीं।"

ठीक सामने शिर पर पेड़की डालपर बैठे हुए किसीने कहा "मैं जानता हूँ कि कन्या कहां है।" महेन्द्रने शिर ऊँचाकर पूछा "तुम कौन हो?"

सत्यानन्द कुछ रुष्ट हो कर और शिर उठाकर बोले "नवीनानन्द, ! मैंने तुम्हें विदा किया था, तुम अभीतक यहां क्यों हो?"शान्ति पेड़के ऊपरसे बोली "प्रभु, स्वर्ग और मृत्यु लोकमें आपका अधिकार है। पेड़की डालियों पर क्या?"

यह कहकर धमसे शान्ति नीचे कूद पड़ी। सत्यानन्द महेन्द्रसे बोले "ये नवीनानन्द गोस्वामी हैं, ये बड़े पवित्र चतुर और मेरे शिष्य ह। येही तुम्हारी कन्याका पता बता देंगे यह कहकर सत्यानन्दने शान्तिसे कुछ संकेत किया। शान्ति संकेतको समझकर और प्रणामकर वहां विदा होती थी कि इतनेमें महेन्द्रने उससे पूछा "तुम्हारे साथ फिर कहां भेंट होगी?"

शान्ति—"मेरे आश्रममें आना।"यह कहकर शान्ति चली।

तब महेन्द्र भी ब्रह्मचारीकी चरण वन्दना कर विदा हुए और शान्तिके सङ्ग उसके आश्रम पर पहुँचे। उस समय रात हो गयी थी; तथापि शान्ति विना आराम कियेही नगरकी ओर चली।

सबके चले जानेके बाद ब्रह्मचारी अकेले पृथ्वी पर सोकर और मिट्टीपर ही शिर रख कर मनही मन जगदीश्वरका ध्यान करने लगे। रात बीत गयी; भोर हुआ। इसी समय न जानें किसने आकर उनका शिर छूआ और कहा "मैं आया हूं।"

ब्रह्मचारी उठतेही चौंककर बड़ी व्यग्रतासे बोले "आप आये क्यों? आगन्तुक बोला "दिन पूरा होगया।" ब्रह्मचारी बोले "हे प्रभो! आज क्षमा कीजिये। आगामी माघी पूर्णिमाके दिन मैं आपकी आज्ञा पालन करूँगा।"

तेरहवां परिच्छेद।

उस रात्रिको वीरभूमि हरिध्वनिसे गूँज उठा। दलके दल सन्तान जहां तहां ऊंचे स्वरसे कोई "वन्दन करो" कोई "जगदीशहरे" गाते हुए घूमने लगे;

कोई शत्रुसेनाके अस्त्र, कोई वस्त्र लूटने लगा। कोई मुरदोंके मुखों पर लात मारता था, कोई और और अनेक अत्याचार करता था। कोई गांवकी ओर तथा कोई नगरकी ओर दौड़ता और रास्तेमें जो गृहस्थ अथवा पथिक मिलता उसे पकड़कर कहता कि "बन्दन करो" कहो, नहीं तो मारडालूँगा कोई हलवाईकी दूकान लूटकर खाता था। कोई ग्वालेके घरमें जाकर मटका मटकियोंको फोड़ता तथा दूध दही ढकोलता था। कोई उन्मत्त हो कहने लगता "अरे देखो हम ब्रजके गोप अब पहुंचे हैं; गोपियां कहां हैं?" उस एकही रातमें गांव गांव, नगर नगरमें महा कोलाहल मच गया कि मुसलमान हार गये। इस देशमें अब फेर हिन्दूकाही राज्य हुआ। आओ, सब कोई जी खोलकर हरि हरि कहें। गांवके लोग तो मुसलमानको देखतेही मार भगाने दौड़ते थे। कोई कोई रातके समय दलबद्ध होकर मुसलमानोंके मुहल्लेमें जाते और उनके घरमें आग लगाकर लूटते थे। बहुत मुसलमान मारे गये, बहुतेरे दाढ़ी कटाकर और शरीरमें मट्टी लेपकर हरिनाम लेने लगे। पूंछने पर वे कहते थे "मै हिन्दू हूं।"

दलके दल मुसलमान नगरकी ओर दौड़े। जहाँ महाराज वीरभूमाधिपति असदुलजमान बहादुर राजसिंहासन पर सुखसे बैठे थे वहीं यह भयङ्कर राज्यध्वंस सूचक वार्ता पहुँची। तब राज्यके लोग बड़ी व्यग्रतासे चारों ओर दौड़े। राजाके बचे हुए सिपाहियोंने तैयार होकर नगरकी रक्षाके हेतु मोरचा बांधा। राजनगरके किलेकी घाटियोंमें कमरोंमें मुहल्लोंमे सिपाही हथियार बांधकर खूब सावधानीके साथ द्वार रक्षा करनेको भरती हुए। राजधानीके सब आदमी रात भर जागकर अब यही चिन्ता करने लगे "आवै संन्यासी आवै भगवती करै हिन्दुओंके भाग्यमें वह दिन फिर आवै।" मुसलमान कहने लगे "अल्लाहो अकबर इतने दिनों पर कुरान शरीफ एकदम झूठा हुआ। अरे हम लोग तो पांचों वक्त नमाज पढ़ते हैं, तिसपर भी इन तिलक वाले हिन्दुओंपर फतह नहीं पा सके। दुनियांकी सारी बाते सब झूँठी हैं।" इसी भांति कोई रोकर और कोई हँस कर बड़ी व्यग्रतासे रात बिताने लगे।

ये सब बातें कल्याणीके भी कानोंतक पहुँचीं। ये तो बालक, वृद्ध, युवा, स्त्री, पुरुष किसीसे भी छिपी नहीं थीं। कल्याणीने मनही मन कहा "जय जगदीश्वर! आज तुम्हारा कार्य सिद्ध हुआ। आज मैं भी स्वामीदर्शनके लिये विदा होऊँगी। हे मधुसूदन! आज मेरे सहाय हो।"

दोपहर रातको कल्याणी अपनी सेज छोड़कर उठी। अकेली खिड़की खोल कर इधर उधर देखा और कहीं किसीको न देखकर चुपचाप आहिस्ते आहिस्ते गौरीदेवीके घरसे सड़कपर निकल पड़ी। अपने मनमे इष्ट देवताको नाम लेकर बोली "हे प्रभो! ऐसा कीजिये कि आज उनसे पद चिह्नमें भेंट अवश्य हो।"

कल्याणी नगरकी घाटीपर आकर खड़ी हुई। पहरेवालेने पूँछा "कौन जाता है?" कल्याणी डरकर कँपते हुए स्वरसे बोली "मै औरत हूँ" पहरेवालेने कहा "जानेका हुकम नहीं है।" यह बात दफादारके कानमें पहुँची। वह बोला 'बाहर जाना मना नहीं है; भीतर आना मना है।' यह सुनकर पहरेवालेने कल्याणीसे कहा "माई! जाओ, जाना मना नहीं है। लेकिन आजकी रात्रि बड़ी माफतकी है।

न जानें तुमपर क्या बीतेगा। डकैतके हाथ भी पड़ सकती हो गड्ढेमें भी गिरकर मर सकती हो। आज रात माई ! तुम बाहर मत जाओ।"

कल्याणी बोली "बाबा ! मैं भिखारिण हूँ मेरे पास एक फूटी कौड़ी भी नहीं है। मुझे डकैत कुछ नहीं कहेंगे।"

पहरेवालेने कहा "उमर है माई ! रूप है। दुनियामें वही तो धन है; कहीं हमी डकैत बन जावें।"

कल्याणीने जाना कि विपद गहरी है। बिना कुछ कहे आहिस्ते आहिस्ते घाटी पार करके वह चली। पहरेवालेने जाना कि माईने रसिकता नहीं समझी; तब दुःखी मनसे गांजेका दम लगाकर झिंझिट खम्माजसे सोरीमियांका टप्पा गाना शुरू किया। कल्याणी चली गयी।

उस रात रास्तेमें दलके दल मनुष्योंमेसे कोई "मारो मारो" पुकार रहा था; कोई "भागो भागो" चिल्ला रहा था, कोई रो रहा था; कोई हँस रहा था। जो जिसे देखता वही उसे पकड़ने दौड़ता था। कल्याणी बड़ी दिक्कतमें पड़ी। किसीसे कुछ पूछने योग्य नहीं था। सब लड़नेको तैयार थे। छिप छिपकर रास्ता चलना पड़ता था। इसी भांति छिप छिप कर जाते जाते वह कुछ प्रचण्ड उन्मत्त विद्रोहियोंके हाथमें पड़ी। वे भयङ्कर चिल्लाहटके साथ उसे पकड़नेको दौड़े। कल्याणी तब घबड़ाकर बड़े जोरसे भागती हुई बनमें घुसी! वहां भी दो चार बदमाशोंने उसका पीछा किया। एकने लपककर उसका आंचल पकड़ लिया और कहा "क्यों प्यारी अब!" इसी समय एक दूसरेने आकर उस अत्याचारीके शिरपर एक लाठी मारी। वह घायल होकर पीछे हट गया। यह दूसरा संन्यासी वेषमें कृष्णाजिनसे हृदय बांधे हुए था। अवस्था बहुत थोड़ी थी। उसने कल्याणीसे कहा "तुम डरो मत; मेरे साथ आओ; कहां जाओगी?" कल्याणी बोली "पदचिह्न जाऊँगी।"

आगन्तुकने आश्चर्यसे चमककर कहा "पदचिह्न जाओगी?" यह कहकर वह कल्याणीके दोनों कन्धोंपर हाथ रखकर उसके मुँहकी ओर उस अन्धेरेमें बड़े ध्यानसे देखने लगा।

कल्याणी अचानक पुरुषके स्पर्शसे रोमाञ्चित भीत क्षुब्ध विस्मित और अश्रुपूरित हुई है। ऐसी सामर्थ्य नहीं थी कि भाग जाती। वह बहुत डर गयी थी। परीक्षा पूरी होनेपर आगन्तुक बोला "हरे मुरारे, मैंने तुझे पहचाना; तूही मुँहझौंसी कल्याणी है।" कल्याणीने डरके साथ पूँछा "आप कौन हैं?"

आगन्तुक बोला "मैं तेरा दासानुदास हूँ। सुन्दरी! मुझपर प्रसन्न होजा।

कल्याणी बड़ी फुर्त्तीसे वहांसे हटकर गरजके साथ बोली "योंही अपमान करनेके लिये क्या आपने मेरी रक्षा की? देखती हूँ वेश ब्रह्मचारीका है। ब्रह्मचारियोंका यही धर्म है? आज मैं निस्सहाय हूँ; नहीं तो तुम्हारे मुँहमें लात मारती।"

ब्रह्मचारी बोले "अयि स्मितवदने! मैं बहुत दिनोंसे तुम्हारे इस सुन्दर शरीरके स्पर्शकी कामना करता हूँ।" यह कहकर ब्रह्मचारीने फुर्त्तीके साथ दौड़कर कल्याणीको पकड़ा और गहरा आलिङ्गन किया। तब कल्याणी खिलखिलाकर हँस पड़ी और बोली "अय अभाग्य बदन! तू तो पहले कहती कि तेरी भी मेरीसी दशा है।"

शान्ति–क्यों बहन महेन्द्रके खोजमें चली हो?

कल्याणी–देखती हूं कि तुम सब जानती हो तुम कौन हो?।

शान्ति–मैं ब्रह्मचारी हूँ, सन्तानोंका एक सेनापति और बड़ा वीरपुरुष हूँ। मैं सब जानता हूँ। सिपाही और सन्तानोंके अत्याचारसे तुम आज पदचिह्न नहीं जा सकोगी।

कल्याणी रोने लगी। शान्ति भौंह चढ़ाकर बोली "डरती क्यों हो? हम नयनबाणसे हजारों शत्रु जीतनेका दावा रखनेवाली हैं चलो, पदचिह्न चलें।" कल्याणीने ऐसी बुद्धिमती स्त्रीकी सहायता पाकर मानो हाथ उठाकर स्वर्ग पालिया। बोली "तुम जहां ले जाओगी मैं वहीं जाऊँगी। शान्ति तब उसे साथ लेकर वनकी ओर चली।"

चौदहवां परिच्छेद।

जब शान्ति अपनी कुटी छोड़कर उस गहरी रातके समय नगरकी ओर बिदा होती थी तब जीवानन्द आश्रममें उपस्थित थे। शान्तिने जीवानन्दसे कहा "मैं नगरको जाती हूं, महेन्द्रकी स्त्रीको लेती आऊँगी। आप महेन्द्रसे कह दीजियेगा कि उसकी स्त्री जीती है।"

जीवानन्द भवानन्दसे कल्याणीकी जीवनरक्षाका वृत्तान्त सब सुन चुके थे और सर्वस्थान व्यापिनी शान्तिसे उसके अबके वासस्थानकी बात भी जान चुके थे। इसीसे वे क्रम क्रम ये सब बातें महेन्द्रको सुनाने लगे। महेन्द्रने पहले तो विश्वास नहीं किया; किन्तु अन्तमें आनन्दसे विह्वल बन मुग्धप्राय होगये। उस रातके बीतने पर भोर होतेही शान्तिकी सहायतासे महेन्द्रके संग कल्याणीकी भेंट हुई। उस निस्तब्ध वनमें और सघन साखूके वृक्षोंकी पंक्तियोंकी अँधेरी छायामें पशु पक्षियोंके सोकर जाग उठनेसे पहिलेही उन दोनोंकी भेंट हुई। नीले आकाशमें छिटे हुए मलिन किरणवाले तारोंकी पंक्तियां निश्चल वायुरहित साखूके वृक्ष राजि दूरपर किसी पत्थरोंसे टकराती तथा मधुर शब्द करतीहुई छोटी नदीकी कलकलाहट और पूर्व दिशामें उदय होती हुई ऊषाकी ज्योति देखनेसे आनन्दित कोयलोंकी बोली उन दोनोंके सम्मिलनकी साक्षी थी।

दिनका एक पहर हुआ। जीवानन्द और शान्ति आकर वहां दिखाई दिये। कल्याणी शान्तिसे बोली "मैं अब सोऊँगी। आठ पहरके बीच मैं बैठी नहीं दो रात सोया नहीं स्वामीजी मैं जाता हूँ।"

कल्याणी मुसुकाई। जीवानन्द महेन्द्रके मुँहकी ओर देखकर बोले "यह भार मेरे ऊपर है। आप दोनो पदचिह्न जाइए। वहीं कन्या मिलेगी।"

जीवानन्द निमाईके पाससे कन्याको लानेके लिये भरूईपुर चले। किन्तु वह कार्य सीधा नहीं था।

कन्या देनेकी बात सुनतेही निमाईने पहिले थूँक घोंटी। एक बेर इधर उधर देखा. एकदम उसके होंठ और नाक फूले, अन्तमें वह रोनेलगी और बोली "मैं लड़की नहीं दूँगी।"

निमाईके अपने गोल गोल हाथोंकी उलटी पीठसे आखोंपर घुमा घुमाकर आंसू पोंछलेनेके पीछे उससे जीवानन्द बोले बहन ! इतनी रोती क्यों हो ? यहांसे कोई बड़ी दूर भी तो नहीं है । उनके मकानमें बीच बीचमें जाकर तू लड़कीको देख भी आयगी तो हानिही क्या होगी ? ”

निमाई होठ फुलाकर बोली “अच्छा, तुम लोगोंकी कन्या है तो तुम लोग ले न जाओ ? हमको क्या ! यह कहती हुई निमाई क्रोधके साथ सुकुमारीको लायी और धमसे जीवानन्दके आगे फेंक करके पैर पसारकर रोने बैठी । सो उस समय जीवानन्द बिना और कुछ कहे इधर उधरकी वे मतलबकी बात कहने लगे । परन्तु निमाईका क्रोध शान्त नहीं हुआ । वह सुकुमारीके कपड़ोकी गठरी, गहने, बाक्स, मुड़बँधना और खेलनेकी पुतली आदि सब लाकर जीवानन्दके आगे धमाधम् फेकने लगी । सुकुमारी उन सबको आप सहेजने लगी और निमाईसे पूँछने लगी “क्यो अम्मा ! कहां जाऊँगी अम्मा । ” निमाईसे और सहा नहीं गया । वह तब “सू” को गोदीमें लेकर रोती रोती चली ।

पन्द्रहवां परिच्छेद ।

पद चिह्नके नये दुर्गमें आज महेन्द्र, कल्याणी, जीवानन्द, शान्ति, निमाई, निमाईका स्वामी और सुकुमारी सुखसे एक सङ्ग मिले हुए हैं । शान्ति नवीनानन्दके वेषमें आयी थी । वह जिस रात कल्याणीको अपनी कुटीमें लायी थी उस रात उसने कल्याणीसे मना कर दिया था कि अपने पतिसे मत कहना कि नवीनानन्द स्त्री है । एक दिन कल्याणीने उसको अन्दर बुला भेजा । नवीनानन्दने महलके भीतर प्रवेश किया । उसने नौकरोंका मना नहीं माना ।

शान्तिने जाकर कल्याणीसे पूछा “ क्यों बुलाया है ? ”

कल्याणी—पुरुष बनकर कितने दिन रहोगी ? भेंट नहीं होती, बात भी नहीं कर सकती हूँ । मेरे पतिके निकट तुम्हे प्रगट होना होगा ।

नवीनानन्द बड़ी चिन्तामें पड़े । बड़ी देरतक मौन साधे रहे । कुछ बात नहीं बोले । अन्तमे उसने कहा “उसमें बहुत विघ्न है कल्याणी ! ” ।

दोनोमें उसी विषयकी बातचीत होने लगी । इधर जिन नौकरोंने नवीनानन्दको अन्दर जानेसे रोका था उन्होने महेन्द्रसे कहा कि “ नवीनानन्द जबरदस्ती भीतर महलमें चले गये है । मना करनेपर उन्होने नहीं माना । आश्चर्य्य मानकर महेन्द्र भीतर गये । कल्याणीके सोनेके कमरेमें जाकर उन्होंने देखा कि नवीनानन्द घरमे खड़ा है और कल्याणी उसके शरीरपर हाथ देकर उसकी बाघछालाकी गांठ खोल रही है। महेन्द्रको आश्चर्य्यका पार न रहा और वे बड़े रुष्ट हुए । नवीनानन्दने उनको देखकर हँसता हुआ कहा “ क्यों गुसांईजी ! सन्तान होकर सन्तानपर अविश्वास कैसा ?”

महेन्द्र बोले “ भवानन्द ठाकुर क्या विश्वासी थे ? ” । नवीनानन्दने भृकुटी चढ़ाकर कहा “क्या कल्याणी भवानन्दकी बाघछाला खोल देती थी ? ” यह कहती हुई शान्तिने कल्याणीका हाथ दबाकर कपड़ा और बाघछाला खोलने नहीं दी।

महेन्द्र—इसका क्या अर्थ है ?

नवीनानन्द—इसका अर्थ यह है कि मुझे अविश्वास करसकते हैं; किन्तु कल्याणीको कैसे अविश्वास करते हैं ?

अब तो महेन्द्र बड़े लज्जित हुए। वे बोले "कहां कैसे अविश्वास

नवीना-नहीं तो मेरे पीछे पीछे अन्दर कैसे घुस आये?

महेन्द्र-कल्याणीसे मुझे कुछ बात करनी थी, इसीसे आया हूँ।

नवीना-"यदि यही हो तो अभी जाइये। कल्याणीसे मुझे भी कुछ बात करनी है। आप हट जाइये। मैं पहले बात कर लूं। यह आपका मकान है; यहां आप हरदम आ सकते हैं। मैं तो कठिनाईसे एक बेर आया हूं।" महेन्द्र मूक हो गये, कुछ समझ नहीं सके। वे सोचने लगे कि, ये सब बातें तो अपराधीकीसी नहीं है। कल्याण का भी भाव विचित्र जँच रहा है। वह भी तो अविश्वासिनीकीसी भाग नहीं गयी। डरीभी नहीं, लज्जिता भी नहीं हुई। उलटे वह मुसकुरा रही है। और कल्याणी जिसने अनायास ही उस वृक्षके नीचे विष खाया था क्या कभी अपराधिनी हो सकती है? महेन्द्र यही सब विचार रहे थे कि इतनेमें अभागिनी शान्तिने महेन्द्रकी दुरावस्था देखकर कुछ मुसकुराहटके साथ कल्याणीपर एक तीक्ष्ण कटाक्ष चलाया। अकस्मात् परदा हट गया। अन्धकार दूर हुआ। महेन्द्रने समझा कि यह कटाक्ष तो स्त्रीका सा है। साहस करके नबीनानन्दकी दाढ़ी पकड़कर एक झटका दिया। नकली दाढ़ी गिर पड़ी। उसी समय अवसर जानकर कल्याणीने भी बाघछालाकी गांठ खोलदी। बाघछाला गिर पड़ी। पकड़ी जाकर शान्ति नीचे मुँह किये खड़ी रही।

महेन्द्र तब शान्तिसे पूँछा "तुम कौन हो?

शान्ति-श्रीमान् नवीनानन्द गोस्वामी।

महेद्र-वह तो धोखेबाजी है। तुम स्त्री हो।

शांति-अब सो ही सही।

महेन्द्र-अब एक बात पूँछता हूँ। तुम स्त्री होकर जीवानन्द महाराजका हरदम सहवास क्यों करती हो।

शांति-वह बात यदि नहीं कहू तो हानिही क्या?

महेन्द्र-जीवानन्द महाराज क्या यह जानते हैं कि तुम स्त्री हो?

शान्ति-जानते हैं।

यह सुनकर विशुद्ध आत्मा महेन्द्र बड़े विमर्ष हुए। कल्याणीसे आगे और रहा नहीं गया, वह बोली "यह जीवानन्द गोस्वामीकी धर्मपत्नी शान्ति देवी है।

पलभरके लिये महेन्द्रका मुँह प्रफुल्ल हुआ। फिर उस मुँहको अन्धकारने ढांक लिया। कल्याणी समझ गयी और बोली यह ब्रह्मचारिणी है।"

महेन्द्र दुःखी चित्तसे बोले "होने दो ब्रह्मचारिणी, प्रायश्चित्त है। तब शान्तिकी ओर देखकर वे बोले "क्या आप जानती है कि प्रायश्चित्त क्या है?

शान्ति बोली "प्रायश्चित्त मृत्यु है! सो कौन सन्तान नहीं जानता? आगामी माघीपूर्णिमाके दिन वह प्रायश्चित्त होगा, यही निश्चय हुआ है। आप निश्चिन्त रहिये।

यह कहकर शान्ति वहांसे चलीगयी। महेन्द्र और कल्याणी वज्राहतके समान खड़े रहे।

सोलहवां परिच्छेद।

वीरभूम मुसलमानोंके हाथसे निकल गया है। किन्तु कोई मुसलमान इस बातको नहीं मानता है वे कहते हैं कि "कई एक लुटेरे बड़ी आफत मचा रहे हैं। अब हम शीघ्रही उनको दबानेका बन्दोबस्त करते हैं।" ऐसेही न जाने कितने दिन बीते; परन्तु उस समय भगवानकी प्रेरणासे कलकत्तेमें वारनहेस्टिंग (गवरनरजनरल) बड़े लाट हुए। वे अपने मानको मुसलमानोंकी भांति भुलाने वाले आदमी नहीं थे। उनसे वैसी विधा रहनेसे आज दिन भारतवर्षमें बृटिश साम्राज्य कैसे जमता? वीरभूम का शासन करनेको बिना बिलम्ब नयी सेना लेकर दूसरे सेनापति उडसाहब वहां उपस्थित हुए।

उडने देखा कि यह योरोपीय युद्ध नहीं है। शत्रुओंके पास किला नहीं है। सेना-नहीं है। नगर नहीं है। राजधानी नहीं, परन्तु सब उनके अधीन है। जिस दिन किसी स्थानमें अङ्गरेजी सेनाका शिविर लगता है केवल उसी दिनके लिये वह स्थान अङ्गरेजोंके अधीन होता है। आगे उसके दूसरेही दिन बृटिश सेनाके चलेजातेही तुरंत "वन्दन करो" का गीत होने लगता है उड साहबको कुछ पता नहीं लगता कि वे लोग चीटियोंकी तरह कहांसे किसी रात आकर अंगरेजोंके अधिकारमें आये हुए गावको उसे जला जाते हैं अथवा कहीं अङ्गरेजी सेना पातेही उसे उसी क्षण मार डालते हैं।

पता लगाते लगाते उड साहबने जाना कि पदचिह्नमें वे लोग किला बनाकर यहीं अपने धन और हथियारोंकी रक्षा करते हैं। अतएव साहबने निश्चय किया कि किलेको दखलमें करनाही ठीक है।

गुप्तदूतके द्वारा वह सम्वाद लेने लगा कि पद चिह्नमें कितने सन्तान रहते हैं जो सम्वाद मिला उससे उसने एकाएक किले पर हमला करना ठीक नहीं समझा किन्तु मनमें एक अपूर्व कौशल सोचा।

माघी पूर्णिमा शीघ्र आनेवाली है साहबके शिविरके थोड़ीही दूरपर केन्दुबिल्ल ग्राममें गोस्वामियोंका मेला होनेवाला है। इस बेर मेलेमें बड़ी धूम होगी। साधारण रीतिसे इस मेलेमें लाख आदमी इकट्ठे होते हैं। इस बेर वैष्णवोंका राज्य हुआ है। सो उन्होंने मेलेमें जाकर धूमधाम करना निश्चय किया है। जितने सन्तान हैं सबोंको पूर्णिमाके दिन केन्दुबिल्लमें समागम होनेकी सम्भावना है। मेजर उडने विवेचनाकी कि पदचिह्नके सब रक्षक लोग भी मेलेमें आवेंगे और उसी समय हम अचानक पदचिह्न जाकर किलेको दखलमें कर लेंगे।

इसी अभिप्रायसे मेजर उडने प्रचार किया कि हम मेलेके दिन केन्दुबिल्ल पर हमला करेंगे। एक जगह सब वैष्णवोंको पाकर एकही दिनमें हम शत्रुओंको निर्मूल करेंगे, तथा वैष्णवोंका मेला होने नहीं देंगे।

यह खबर गांव गांवमें फैल गयी। बस जहां जितने सन्तान सम्प्रदाय वाले मनुष्य थे सर्व तत्क्षण ही अस्त्र ग्रहण कर मेलेकी रक्षा करनेको केन्दुबिल्लकी ओर दौड़े। सबही सन्तान माघीपूर्णिमाके दिन केन्दुबिल्लमें इकट्ठे हुए। मेजर उडने जैसा विचारा

था सो ठीक हुआ। अङ्गरेजोंके सौभाग्यसे महेन्द्रने भी इस फन्देमें पांव डाला। वे पदचिह्नके दुर्गमे बहुत थोड़ी सेना रखकर अधिक सेनाके साथ केन्दुविल्वकी ओर अग्रसर हुए।

यह सब बात होनेसे पहलेही जीवानन्द और शान्ति पदचिह्नसे बाहर निकल चुके थे। उस समय युद्धकी कोई बात नहीं थी उन लोगोंकी इच्छा भी तब लड़ाई करनेकी नही थी। उनकी इच्छा थी कि माघीपूर्णिमाके पुण्यदिनको शुभमुहूर्तमें कविराज जयदेव गोस्वामीके तीर्थ पर अजयनदीके पवित्रजलमें प्राण विसर्जन कर प्रतिज्ञाभंगरूपी महापापका प्रायश्चित्त करेंगे। परन्तु रास्तेमें जाते जाते उन दोनोंने सुना कि केन्दुविल्वमें इकट्ठे हुए सन्तानोंके संग राजसैनिकोंका बड़ा भारी युद्ध होगा। तब जीवानन्द बोले "अब युद्धहीमें मरेंगे, शीघ्रचलो।"

वे दोनों शीघ्र चलने लगे। रास्ता एक जगह एक टीलेके ऊपर होकर गया है। वहां उस टीलेके ऊपर चढ़कर वीर उस दम्पतिको नीचे कुछ दूरपर अङ्गरेजका शिविर देखनेमें आया। शान्ति बोली "मरनेकी बात अभी रह" कहिये "वन्दन करो।"

सत्रहवां परिच्छेद।

इसके बाद दोनोंने कानों कान कुछ सलाहकी और जीवानन्द एक वनमें घुस कर छिप रहे। शान्ति एक दूसरे वनमें जाकर एक अपूर्व लीलामें प्रवृत्त हुई। शान्ति मरने जाती थी; परन्तु उसने ठीक किया था कि, मृत्युकालमें वह अपनी स्त्री वेष धरेगी। महेन्द्रने कहा कि उसकी यह पुरुषवेष धोखे बाजीकी थी, धोखे-बाजी करते करते मरना अच्छा नहीं है। यह विचारकर शान्ति अपने शृङ्गारकी पिटारी संगमें लेती आयी थी। उस पिटारीमें उसकी साज बाजकी सब सामग्री रहती थी। अब नवीनानन्द उस पिटारीको खोलकर वेष बदलनेमे प्रवृत्त हुआ।

उस कालके प्रचलित रीत्यनुसार फरफराते घुँघुराले काले लटोंके गुच्छोंसे शान्तिने अपने मुखचन्दको ढांककर कत्थेका सुथरा टीका लगाया और एकतारा हाथमें लेकर वह वैष्णवीवेषमें अंगरेजोंके शिविरमे उपस्थित हुई. देखतेही भौंरोंके समान काली दाढ़ी वाले बड़े उन्मत्त हो उठे। किसीने टप्पा, किसीने गजल, किसी ने श्यामा विषयक और किसीने कृष्ण विषयक गीत गवाकर सुने। किसीने चांवल दिये, किसीने दाल दी। किसीने मिठाई दी। किसीने पैसे दिये। किसीने चुवन्नी दी। अब वैष्णवी शिविरकी अवस्था भली भांति अपनी आंखोंसे देखती हुई जा रही है। उसे जाते देख सिपाहियोंने पूंछा "फिर कब आओगी?" वैष्णवी बोली "सो नहीं कह सकती; मेरा घर बहुत दूर है।" सिपाहियोंने पूछा "कितनी दूर?" वैष्णवी बोली "पदचिह्नमें मेरा घर है।" कुछ दिन पहले मेजर "टड" पदचिह्नकी कुछ खबर ले रहे थे, यह बात एक सिपाहीको मालूम थी। पदचिह्नकी बात सुनतेही वह सिपाही वैष्णवीको बुलाकर कप्तान साहबके पास ले गया। कप्तान साहब उसे मेजर टडके पास ले गये मेजर साहबके पास जाकर वैष्णवी मधुर हँसी हँसती मर्म्मभेदी कटाक्ष द्वारा टड साहबके शिरको चकराती तथा खंजरी बजाती हुई गाने लगी। "म्लेच्छनिवहनिधने कलयसि करवालम्

उड साहबने पूछा "टोमरा मकान कहा वीवी।"

वैष्णवी-हम लोग वीवी नहीं हैं; वैष्णवी हैं। घर पदचिन्हमें है।

उड-Well that is Padsin Padsin is it हुआ एक टो गर है?

वैष्णवी-घर? वहुत घर है।

उड-गर नहीं, गर नहीं-गड़-गढ़-

शान्ति-साहब तुमारे मनकी वात समझ गयी, गढ़?

उड-Yes Yes (इयस् इयस्) गर-गर, हाये?

शान्ति-हां गढ़ है। वड़ा भारी किला है।

उड-केट्टा आडमी?

शान्ति-गढ़मे कितने लोग रहते हैं? चालीस पचास हजार।

उड-Nonsense. (नान्सेन्स) एक टोकेलछेमें डो चाड़ हजाड़ रहे सक्टा है। हुआंपर अबी है इया निकलगया?

शान्ति-और निकलेगा कहां?

उड-मेलामें केथा बोलटा है-किण्डेल?

शान्ति-केन्दुली-केन्दुलीके मेलेमें वे लोग नहीं जायँगे।

उड-टोम कब आया है हुआंसे?

शान्ति-कल आयी हूँ साहब।

उड-वो लोग आड निकल गया होगा।

शान्ति-मनमें विचारती थी कि "साहब तुम्हारे वापके श्राद्धका भोज यदि मैंने नहीं खाया तो मेरा वैष्णवी बननाही वृथा है। मैं देखूगी कि तुम्हारा शिर गीदड़ कितनी देरमें खायँगे।" प्रकाश्यमें बोली "साहब वो हो सकता है; आज वाहर निकल गये हों तो असंभव नहीं इतनी खबर मैं नहीं रखती। बोलते बोलते गला सूखगया। पैसा, चुवन्नी कुछ दो। मैं उठकर चली जाऊं और अच्छी तरह बखशीश दो तो न हो परसों आकर खबर दे जाऊंगी।"

उड साहबने उसी काल झन्नसे नगद एक रुपया फेंक दिया और बोले "परसूं नहीं बीबी।"

शान्ति धतेरीको। वैष्णवी कह। बीबी क्या?

उड-परसू नहीं आड रातको हमको खबड़ मिलना चाहिए।

शान्ति-बन्दूक शिरतले दबाकर शराब उड़ाकर और कडुआ तेल नाकमें देकर सो रहो। आज मैं दश कोस रास्ता जाऊंगी और लौट आऊंगी और इनको लादूँगी हरामजादा कहींका।

उड-हड़ामजाडा किसको कहटा है।

शान्ति-जो बड़ा बीर हो भारी जनरैल होता है।

उड-Great General हाम होसकटा है; क्लाइवके माफिक। लेकिन हमको आज खबड़ मिलना चाहिये। सौ डुपया वकशीस डेगे।

शान्ति-सौ दो या हजार दो। बीस कोस इन दो पांवोंसे तय नहीं होगा।

उड-घोड़े पड़।

शान्ति–घोड़ा चढ़ना जानती तो तुम्हारे तम्बूमें एकतारा बजाकर भला भिक्षा मांगती।

उड–गोदीमे ले जायगा।

शान्ति–गोदीमें बैठाकर ले जाओगे? मुझे क्या लज्जा नहीं है?

उड–क्या मुशकिल पान सौ रुपिया देंगे।

शान्ति कौन जायगी? तुम आपही जाओगे क्या?

उड–साहबने तब अँगुली दिखाकर इशारेसे सामने खड़े हुए लिण्डले नामक एक जवानसे कहा–"Lindlay will you go? (लिण्डले तुम जाओगे?) लिण्डलेने शान्तिके रूप और यौवनको देखकर कहा "Most gladly. (बड़े आनन्द पूर्वक।)"

अब एक भारी अरबी घोड़ा कसकर लाया गया और लिण्डले तैयार होकर शान्तिको पकड़कर उस पर चढ़ाने लगा।

शान्ति बोली "छी! इतने लोगोके बीचमे? हमें क्या कुछ भी लाज नही है। पहिले चलो छावनी पार हो जायँ।"

लिण्डले घोड़ेपर चढ़कर घोड़ेको आहिस्ते आहिस्ते लेजाने लगा और शान्ति उसके पीछे पीछे पैदल चली। इसी भांति वे दोनों खीमेके बाहर आये।

खीमेके बाहर होतेही सूनसान मैदानमें शान्ति लिण्डलेके पांवपर पांव देकर एक छलांगसे घोड़ेपर चढ़ बैठी। लिण्डलेने हँसकर कहा "तुम तो पक्की सवारहो।"

शान्ति बोली "हम लोग ऐसे पक्के सवार हैं कि तुमारे साथ चढ़नेमें लाज लगती है। छी रकाबमें पांव देकर घोड़े पर चढ़ना।

एक बेर अपनी बड़ाईके लिये लिण्डलेने रकाबसे पांव निकाल लिये शान्तिने उस निर्बोध अंगरेजको गलेमें हाथ देकर घोड़े परसे गिरा दिया। तब शान्ति अच्छी रीतिसे घोड़े पर अपना आसन जमाकर और अपने पांवोंके कडोंसे एँड़ा लगाती हुई हवाके समान वेगसे अरबीको दौड़ा ले चली। शान्ति चार वर्ष सन्तान सैन्योंके संग रहकर घोड़ेपर चढ़ना सीख गयी थी। यदि न सीखती तो क्या जीवानन्दके संग एकट्ठे रह सकती? लिण्डलेका पांव टूट गया। वह वहीं पड़ा रहा और शान्ति वायुवेगसे घोड़ेको उड़ा ले गयी।

जिस वनमे जीवानन्द छिपे थे उसी वनमें शान्ति जा पहुँची और उनको सर्व वृत्तान्त कह सुनाया।

जीवानन्द बोले "तब मैं शीघ्र जाकर महेन्द्रको सावधान करता हूं। तुम केन्दुविल्वमे जाकर सत्यानन्दको खबर दो। तुम घोड़े पर जाओ जिसमें प्रभु शीघ्र संवाद पावें।" तब दोनों दोनो ओर दौड़े। अवश्यही शान्ति फिर नवीनानन्द हुई

अठारहवां परिच्छेद।

उड पक्का अंगरेज था। स्थान स्थानपर उसके आदमी पहरेपर थे। तुरन्तही उसके यहां खबर आयी कि वैष्णवीने लिण्डलेको गिरा दिया और आप घोड़े पर चढ़कर न जाने कहां चली गयी। सुनतेही मेजर उड बोले–

An imp of Satan Strike the tents.

(शैतानकी मूर्ति थी, खीमा हटाओ) बस ठक ठक खटाखट खूंटों पर मळट पड़ने लगे। आकाशमें शोभायमान अमरावतीकी भांति वह वस्त्र नगरी अन्तर्हित हुई। सब चीजें मालगाड़ियों पर लादी गयी। सिपाही हिन्दू मुसलमान, मदरासी गोरखे सब बंदूक कन्धेपर ले मसमसाहटसे चलने लगे। आदमियोंमेंसे और कोई कोई घोड़े पर और कोई पैदल निदा हुए। तोपोंकी गाड़ियां भी घड़ घड़ाती हुई चलीं।

इधर महेन्द्र सन्तानोंकी सेना संग लेकर केन्दुबिल्लकी ओर अग्रसर हो रहे थे। उस दिनके पहरको महेन्द्रने विचारा कि अब दिन ढलना चाहता है, पड़ाव डालना चाहिये।

उस समय पड़ाव डालना उचित बोध हुआ। वैष्णवोंके खीमे नहीं थे। पेड़के नीचे टाट अथवा गुदरियां बिछा बिछा कर वे सोया करते थे और भगवत्चरणामृत पान कर रात बिताते थे। जितनी भूख बांकी रहती थी स्वप्नमें वैष्णवी महारानीका अधरामृत पानकर पूर्ण कर लेते थे। वहां एक अच्छा बगीचा था आम, कटहल आदि सब प्रकारके भले बुरे वृक्ष उस बगीचेमें थे। महेन्द्रने हुक्म दिया "यहीं पड़ाव डालो"। उसीके निकट एक पहाड़ था। वह कहीं ऊंचा कहीं नीचा बड़ाही खानड़ था महेन्द्रने एक बेर सोचा कि, इस पहाड़ पर पड़ाव डालना ठीक है। परन्तु पहिले उन्होंने आप उस स्थानको देखलेना अच्छा समझा।

यह विचारकर महेन्द्र घोड़ेपर चढ़े और आहिस्ते आहिस्ते पर्वतकी चोटीपर चढ़ने लगे, उनके कुछ दूर चढ़तेही एक युवा योद्धाने वैष्णव सेनाके बीचमें आकर कहा "चलो पर्वत पर चढ़ो।" पास जो लोग थे वे विस्मित होकर बोले "क्यों?"

योद्धा एक चट्टान पर चढ़कर बोला "चलो, इस चांदनी रातमें इस पर्वतकी चोटी पर वसन्तके नये नये फूलोंकी सुगन्ध लेते लेते आज हम लोगोंको शत्रुओंके विरुद्ध युद्ध करना पड़ेगा। सन्तानोंने देखा कि यह योद्धा सेनापति जीवानन्द है।

तब "हरे मुरारे" का उच्च शब्द करती हुई सन्तानसेना भालोंकी टेकसे ऊपर कूदी और जीवानन्दके पीछे फुर्तीसे पहाड़की चोटीपर चढ़ने लगी। एकने कसा हुआ घोडा लाकर जीवानन्दको दिया। दूरसे देखकर महेन्द्र चकित हुए। उन्होंने विचारा कि यह क्या हुआ? बिना कहे ये लोग क्यों आते है?।

बस महेन्द्र घोडेका मुँह फेरकर और उसकी पीठपर चाबुककी चोटोंसे धुँआ उड़ाकर पहाड़से उतरने लगे। सन्तान सेनाके आगे जीवानन्दको देखकर वे बोले "यह कैसा आनन्द है?"

जीवानन्द हँसकर बोले "आज बडा आनन्द है।" पहाडके उस पार टड़ साहब है; जो पहिले पहाड़पर चढ़ेगा उसीकी जीत होगी।

आगे जीवानन्दने सन्तान सेनासे पुकार करके कहा "तुम पहचानते हो? मैं जीवानन्द गोस्वामी हूँ। मैने अजयके किनारे हजारों अङ्गरेजोंका वध किया था।

महाभयंकर घोर गर्जनसे पहाड वन मैदान कन्दरा आदि सबको गुंजाकर यह शब्द हुआ "हम पहचानते हैं तुम जीवानन्द गोस्वामी हो"।

जीवा०-कहो "हरे मुरारे।"

पहाड़, वन, कन्दरा और मैदानमें हजारों कण्ठोसे उड़ने लगा "हरे मुरारे।"

जीवा-पहाड़के उस पार शत्रु है। आज इस नीलाम्बरी निशाके सन्मुख सन्तान युद्ध करेंगे। जल्दी चलो; जो पहले चोटीपर चढ़ेगा वही जीतेगा। कहो "वन्दन करो सदा जननीको।"

तब पहाड़, गुहा, वन, मैदान सबको गुंजाते हुए "वन्दन करो" गीत होने लगा। धीरे धीरे सन्तान सेना पहाड़की चोटीपर चढ़ने लगी। परन्तु उन लोगोने डरकर देखा कि महेन्द्रसिंह बड़ी फुर्त्तीसे पहाड़के नीचे उतरते हुए तुरही बजारहे हैं। देखतेही देखते पहाड़की चोटीपर उस स्वच्छ नोलाकाशमें तोपोंकी पंक्ति सहित अङ्गरेजोंकी गोलन्दाज सेना सुशोभित हुई। वैष्णवी सेनाने बड़े जोरसे गाया।"

"शक्ति तुही है वीर भुजनमें। भक्ति तुही है तिमि सज्जनमे॥
तू विद्या हिय धर्म्म मर्म्म तू। जानत जगत प्राण तूहीको॥

परन्तु अंगरेजोंकी तोपोंके अड़रड़ धुम अड़ररड़ धुम शब्दसे वह महागीत वह गया सैकड़ों सन्तान वीर हत और आहत होकर घोड़ों और हथियारों समेत पहाड़के ऊपर समान भूमिपर सोगयी। फिर भी अड़ररअरड़ धुमसे दधीचकी अस्थिकी हँसी उड़ाकर और समुद्रकी तरङ्गको तुच्छकर हँसुएके आगे पके धानके समान तोपें सन्तान सेनाको काटने लगीं। सन्तानसेना इन तोपोंसे खण्ड विखण्ड होकर पृथ्वीपर लोटने लगी। जीवानन्द तथा महेन्द्र वृथा यत्न करने लगे। गिरते हुए ढोकोंके समान सन्तानोंकी सेना उस पहाड़परसे नीचे लुढ़कने लगी। पता भी नहीं लगा कौन कहां भागता है। यह दशा देखकर सबोंका नाश करनेको हुर्रे हुर्रे कहती हुई गोरी पलटन पहाड़के नीचे उतरी सङ्गीन ऊँचाकर बड़ी फुर्त्तीके साथ बड़ी पहाड़ी नदीके झरनेकी भांति दुर्दमनीय अलंघ्य और अजेय बृटिश सेना भागती हुई सन्तान सेनाके पीछे दौड़ी। जीवानन्द केवल एक वेर महेन्द्रसे भेट होने पर बोले "आजही अन्त है आओ यहीं मरें।"

महेन्द्र बोले-"मरनेसे यदि रणमें विजय होती तो मरते, निरर्थक मरना वीरोंका धर्म नहीं है।"

जीवा०-"मैं वृथाही मरूंगा। भला युद्धमें तो मरूंगा।

यह कहकर जीवानन्दने पीछे फिरकर और जोरसे चिल्लाकर कहा "कौन हरिनाम लेता हुआ मरना चाहता है? वह मेरे संग आवे।"

बहुत लोग आगे बढ़े। परन्तु जीवानन्दने कहा यों नहीं हरिका नाम लेकर शपथ उठाओ कि जीते जी नहीं फिरेंगे।

जो लोग आगे बढ़े थे वे पीछे हटे तब तो जीवानन्दने फिर चिल्लाकर कहा।

"कोई नहीं आवेगा ? तब मैं अकेलाही चलता हूं।" जीवानन्द घोड़ेपर खड़े हो बहुत पीछे ठहरे हुए महेन्द्रसे चिल्लाकर कहा "भाई! नवीनानन्दसे कहना कि मैं विदा हुआ लोकान्तरमें भेंट होगी।

यह कहकर वीर पुरुषने उस लौहवृष्टिमें बड़ी तेजीसे घोड़ेको बढ़ाया। बायें हाथमें भाला और दहिनेमें बन्दूक थी तथा मुँहसे "हरेमुरारे, हरे मुरारे, हरे मुरारे" की आवाज निकल रही थी, युद्ध करनेकी सम्भावना नहीं; इस साहससे कुछ फल भी नहीं; तथापि " हरे मुरारे, हरे मुरारे " गाते, गाते जीवानन्दने शत्रुओंके व्यूहमें प्रवेश किया।

भागते हुए सन्तानोंसे महेन्द्रने चिल्लाकर कहा "देखो, एक बेर तुम लोग फिर कर जीवानन्द गोस्वामीको देखो, देखनेसे मरोगे नहीं।"

कई एक सन्तानोंने फिरकर जीवानन्दकी अमानुषी कीर्ति देखी। देखतेही पहिले चकित हुए और तब वे बोल उठे "जीवानन्द मरना जानता है और हम मरना नही जानते ? चलो जीवानन्दके संग हम भी बैकुण्ठको जायँ।"

यह बात सुनकर और कई एक सन्तान फिरे। उनकी देखादेखी और भी कई लौटे। ऐसेही इन लोगोंको भी देखकर और भी कई लौटे। बडा भारी गोलमाल होने लगा। जीवानन्द शत्रुके बीचमें घुस चुके थे। सन्तानोंको वे नहीं दीखते थे।

इधर लडाईके समूचे खेतमें सन्तानोंने देखा कि कितने सन्तान और लौट रहे है। सबोने बिचारा कि सन्तानोंकी जीत हुई है। सन्तान बैरियोंको भगा ले जा रहे हैं। बस समूची सन्तानसेना मारो, मारो, शब्द करती हुई लौटकर अङ्गरेजी सेना पर टूट पडी।

अङ्गरेजोंकी सेनामें भी एक बड़ी भारी हडबडी मँची थी। कि देशी सिपाही लडाईसे जी हटाकर दोनों ओर भाग रहे थे। गोरे भी पीठ दिखाकर संगीन खडा किये खीमेंकी ओर दौड रहे थे। इधर उधर आख फेरकर महेन्द्रने देखा कि पर्वतकी चोटी पर अगणित सन्तानसेना दिखाई पडती है। वे वीर दर्पसे उतर कर अंगरेजी सेना पर आक्रमण कर रहे है। तब उन्होने चिल्ला करके सन्तानोसे कहा,—

"सन्तानो! वह देखो, पहाडकी चोटी पर प्रभु सत्यानन्द गोस्वामीकी ध्वजा दिखाई पडती है। आज स्वयं मुरारि मधुकैटभ निषूदन कंसकेशी बिनाशन अवतीर्ण हुए हैं। लाखों सन्तान पहाड पर हैं। कहो हरे मुरारे। हरे मुरारे। उठो, मुसलमानोंकी छाती और पीठ दबाकर मारो। लाखों सन्तान पहाड पर हैं।"

तब हरे मुरारेकी भयंकरध्वनिसे पहाड कन्दरा, वन, प्रान्त मथे जाने लगे। सन्तानोंने मा भैः मा भैः शब्द करते हुए, अपने सुन्दर तान और स्वरसम्मिलित बाजोंकी गड़गड़ाहट और अस्त्रोंकी झनझनाहटसे सब जीवोंको विमोहित किया। फुर्तीसे महेन्द्रकी सेना भी पहाड़ पर चढ़ने लगी। पहाड़में टक्कर खाकरके निकलते हुए झरनेकी भांति राजाकी सेना चंचल हुई, चौंकी और डरी। इसी समय पचीस हजार सन्तान सेना लेकर सत्यानन्द ब्रह्मचारी पहाड़की चोटी परसे समुद्रके झरनेके समान उन वैरियों पर जा पड़े। बड़ा भयंकर संग्राम हुआ।

जैसे दो पत्थरोंकी रगड़से छोटी मक्खी पिस जाती है वैसेही दो सन्तान सेनाओंकी रगड़से राजाकी वह बड़ी भारी सेना पहाड़के ऊपरके समान भूमिपर भी एकदम पिसमरी।

वारन् हेष्टिंगके निकट खबर ले जानेको एक भी आदमी नहीं बचा।

उन्नीसवां परिच्छेद।

पूर्णिमाकी रात्रि है। वह भयानक युद्धक्षेत्र अब नीरव है। वह घोड़ोंका तड़ातड़ दौड़ना बन्दूकोंका दनादन छूटना, तोपोंका धमाधम शब्द होना, चारों ओर फैलनेवाला महाकोलाहल तथा धूमधाम की ध्वनि अब कुछ नहीं है। सब चुपचाप है। कोई हुर्रे नहीं कहता, कोई हरि ध्वनि भी नहीं करता अब शब्द करने वालोंमें केवल सियार, कुत्ते और गिद्ध वहां आनन्दकी लड़ाई कर रहे हैं। सबसे बढ़कर कभी कभी घायलोंकी हृदय विदारने वाले क्लेशकी पुकार मचरही है। इनमेंसे किसीका हाथ कट गया है। किसीका शिर फट गया है। किसीका पांव टूट गया है। किसीकी पसलीमें छेद हुआ है। कोई घोड़ेके नीचे पड़ा है। किसीके ऊपर मुर्दोंका ढेर लगा हुआ है। कोई मा, मा, चिल्ला रहा है। कोई बाप बाप पुकार रहा है। कोई पानी मांगता है कोई मृत्युको बुलाता है। हा, कैसा भयानक दृश्य है। बङ्गाली, हिन्दुस्थानी, अंगरेज, मुसलमान, सब एक संग आपसमें एक दूसरेसे लिपटे हुए हैं जीते, मुरदे, आदमी, घोड़े सब कसाकसी एकदूसरेसे सटे हुए चंडमुण्ड हो पड़े हुए हैं। उस माघी पूर्णिमाके भयानक जाड़े और उज्ज्वल चांदनीमें वह रणभूमि अत्यन्त भयंकर दिखाई देती थी। वहां आनेका किसीको साहस नहीं होता था।

यद्यपि किसीको साहस नहीं होता था तथापि उस रात्रिमें एक स्त्री उस अगम्य युद्ध क्षेत्रमें विचर रही थी। एक मशाल हाथमें लेकर वह मुरदोंकी ढेरीमें न जाने क्या ढूँढरही थी। प्रत्येक मुरदेके पास मशाल ले जाकर उसका मुँह देखती तथा फिर दूसरे मुरदेके पास मशाल लेजाती थी। कहीं किसी घायल मुरदेको घोड़ेके नीचे दबा हुआ देखनेसे वह युवती मशालको भूमिपर रख उस मनुष्य शरीरको उस दबावसे उद्धार करती थी। इसके बाद जब देखती थी कि जिसे वह ढूँढ़ती है सो वह

नहीं है तब फिर मशाल लेकर वहांसे हट जाती थी। ऐसेही ढूँढ़ती ढूँढ़ती वह वह युवती समूचे मदानमे घूमी। जिसे ढूँढ़ती थी सो कहा नहीं मिला। तब वह मशाल फेंककर उस मुरदोंसे लदी तथा लोहूसे भरी हुई भूमिपर लोटती हुई रोने लगी वह शान्तिथी; जीवानन्दके शरीरको ढूँढ़ती थी।

शान्ति लोटती हुई रो रही थी। ऐसे समयमें एक अत्यन्त मधुर करुणा मयी ध्वनि उसके कानोंमें पहुँची। कोई मानो कह रहा है "माता उठ, रो मत" शान्तिने फिर कर देखा कि चांदनीमें सामने एक अपूर्व दीर्घाकार जटाजूटधारी महापुरुष खड़े है।

शान्ति उठ खड़ी हुई। जो आये थे वे बोले माता रो मत। जीवानन्दका शरीर मैं ढूढ़े देता हूँ। तू मेरे संग आ।"

तब वे महापुरुष शान्तिको उस युद्ध क्षेत्रके बीचमें ले गये। वहां बहुतसे मुरदे नीचे ऊपर ढेर पड़े हुए थे। शान्ति उन सब मुरदोंको हटा नहीं सकी थी। उन मुरदोंके ढेरको अलगकर उन महाबलवान् महापुरुषने एक मुरदेको बाहर किया। शान्तिने पहचाना कि वही जीवानन्दका शरीर है। सर्व्वाङ्ग कट कुटकर लोहूसे भरे हुए हैं। शान्ति साधारण स्त्रीकी भांति चिल्लाकर रोने लगी।

वे महापुरुष फिर बोले "माता! रो मत क्या जीवानन्द मरगया है? स्थिर हो उसके शरीरकी परीक्षा करके देख तो पहले नाड़ी देख।

शान्तिने मुरदेकी नाड़ी देखी। कुछ भी गति नहीं थी। उन महापुरुषने कहा "छातीमें हाथ देकर देख।" जहां हृत्पिंड (कलेजा) है वहीं हाथ देकर शान्तिने देखा। कुछ भी गति नहीं; सब शरीर ठंडा होगया था। उस महापुरुषने फिर कहा "नाकके पास हाथ देकर देख तो सही, कुछ निश्वास बहता है कि नहीं?" शान्तिने देखा कि कुछ भी नहीं बहता। उन महापुरुषने फिर कहा "फिर देख मुंहमें अंगुली देकर देख; कुछ भी गरमी है कि नहीं?"। शान्तिने अंगुली देकर देखा, और कहा समझ नहीं सकती हूं।" शान्ति आशासे मोहित हो गयी थी।

महापुरुषने बांये हाथसे जीवानन्दकी देहको छुआ। और कहा तू डरसे हतास हो गयी है; इससे समझ नहीं सकती हो ऐसा जान पड़ता है कि शरीरमें कुछ गरमी अब भी है फिर देखो तो।"

शान्तिने फिर नाड़ी देखी यह जान पड़ा कि कुछ गति है। विस्मित होकर कलेजेके ऊपर उसने हाथ रखा। बोध हुआ कि वह भी कुछ धक धक कर रहा है। मुँहके भीतर भी थोड़ी गरमी जॅची। शान्तिने चकित होकर कहा "प्राण पहलेसे था या अभी आया है?

वे महापुरुष बोले "ऐसा भी कहीं होता है माता तू इनको उठाकर पोखरे तक ले जा सकेगी? मै वैद्य हू; इनकी दवा करूंगा।"

शान्ति विना प्रयास जीवानन्दको उठाकर पोखरेकी ओर ले चली। वैद्यने कहा कि तू इनको पोखरेमें ले जाकर सब लोहू धो डाल उतनेमें मैं औषध लेकर आता हूं।"

शान्तिने जीवानन्दको पोखरेके किनारे लेजाकर लोहू धो डाला। इतनेमें वैद्यने वनकी लताओंके पत्तोंका लेप लाकर उसके सब घावोंमें लगा दिया। आगे जीवानन्दके सब अङ्गोंमें हाथ फेर दिया। तब जीवानन्द एक दीर्घ निश्वास छोड़कर उठ बैठे। शान्तिके मुँहकी ओर देखकर बोले "लड़ाईमें किसकी जीत हुई?"

शान्ति बोली "आपहीकी जीत हुई। इस महात्माको प्रणाम कीजिये, तब दोनोंने देखा कि कोई नहीं है। सो किससे प्रणाम करते? समीपमें विजयी सन्तानोंका महा कोलाहल सुनाई पड़ता था; परन्तु शान्ति अथवा जीवानन्द कोई नहीं उठे। उस पूर्णचन्द्रकी किरणमें स्वच्छ पोखरेकी सीढ़ीपर वे बैठे रहे। जीवानन्दका शरीर औषधके गुणसे बहुत थोड़े समयमें आरोग्य हुआ। वे बोले "शान्ति उस वैद्यकी औषधका गुण आश्चर्यजनक है। मेरे शरीरमें अब किसी तरहकी पीड़ा या थकावट नहीं है। अब कहां जाओगी, चलो वह सुनो; सन्तानसेनाके जयोत्सवका कोलाहल सुनाई पड़ता है।"

शान्ति—अब वहां नहीं माताके कार्य्यका उद्धार हो गया। यह देश सन्तानोंका हो गया। हम राज्यका हिस्सा नहीं चाहते। फिर हम वहां क्या करने जायँगे।

जीवा०—जो राज्य छीन लिया जा चुका है उसे अपने बाहुबलसे रखना होगा।

शान्ति—रखनेके लिये महेन्द्र हैं। सत्यानन्द स्वयं हैं। तुम तो प्रायश्चित्त कर सन्तान धर्म्मके हेतु देह त्याग चुके थे। अब फिरसे पाये हुए इस शरीरपर सन्तानोंका और कोई अधिकार नहीं रहा है। सन्तानोंके लिये हम मर गये हैं। अभी हम लोगोंको देखनेसे सन्तान कहेंगे कि जीवानन्द लड़ाईके समय प्रायश्चित्तके डरसे छिपा हुआ था। अब जीत होनेसे राज्यका हिस्सा लेनेको आया है।

जीवा—शान्ति यह क्या? बदनामीके भयसे अपना कार्य्य छोड़ेंगे। माताकी सेवा करना मेरा काम है। कोई चाहे जो जीमें आवे सो कहे; परन्तु मैं माताकी सेवा ही करूंगा।

शान्ति—अब आपका अधिकार उसमें नहीं है। क्योंकि आपके शरीरका माताकी सेवाके हेतु एक बेर त्याग होचुका है। यदि फिर माताकी सेवाहीमें लगे तो प्रायश्चित्त ही क्या हुआ? मातृसेवासे वर्जित रहनाही इस प्रायश्चित्तका मुख्य उद्देश्य है। नहीं तो केवल तुच्छ प्राणका त्यागना क्या कोई बड़ा काम है।

जीवा०—शान्ति! तुम्हीं ठीक समझ री हो। मैं इस प्रायश्चित्तको अधूरा नहीं रखूंगा। परन्तु सन्तानधर्ममें मुझे सुख है। उस सुखसे मैं अपनेको वञ्चित करूंगा। अच्छा, जायँगे कहां? माताकी सेवा त्यागकर घरमें तो सुख भोगना बन नहीं पड़े

शान्ति–क्या मैं वही कहती हूँ ? छी, हम गृही नहीं हैं ऐसेही दोनों जने संन्यासी बने रहेंगे; ब्रह्मचर्यका पालन करेंगे । चलो, अब हम देश विदेशोंमें घूम घूम कर तीर्थोंका दर्शन करें ।

जीवा०–इसके अन्तर ?

शान्ति–उसके अन्तर हिमालय पर एक कुटी बनाकर दोनों जने देवताकी आराधना करेंगे । जिससे माताका मङ्गल होगा वही वरदान मांगेगे ।

बस वे उठे और एक दूसरेका हाथ पकड़ कर उस चांदनी रातमें इस अनन्त संसारमें अन्तर्हित हो गये । हाय ! माता अब क्या फिर वे आवेंगे । जीवानन्दके समान पुत्र और शान्तिके समान कन्या क्या फिर भी तू अपने गर्भमें धारण करेंगी ?

बीसवां परिच्छेद ।

सत्यानन्द महाराज बिना कुछ किसीसे कहे लड़ाईके खेतसे आनन्दमठमें चले आये । वहां उस गहरी रातमें विष्णुमण्डपमें बैठे बैठे ध्यान कररहेथे कि इतनेमें वेही महापुरुष वैद्यने वहां आकर दर्शन दिया । देखतेही सत्यानन्दने उठकर प्रणाम किया ।

महापुरुष–सत्यानन्द ! आज माघी पूर्णिमा है ।

सत्या०–चलिये । मैं तैयार हूं । परन्तु हे महात्मन् ! मेरा एक संशय छुड़ा दीजिये । मैंने जिस मुहूर्तमें लड़ाई जीतकर आर्यधर्मको निष्कंटक किया उसी काल मेरे ऊपर सब छोड़नेकी आज्ञा क्यों हुई ?

महापु०–तुम्हारा कार्य सिद्ध हुआ । मुसलमान ध्वंस हुए । अब तुम्हारा कोई कार्य नहीं रहा है । अनर्थक प्राणिहत्याका प्रयोजन नहीं है ।

सत्या०–मुसलमान राज्य ध्वंस तो हुआ, परन्तु हिन्दूराज्य तो स्थापित नहीं हुआ । अब भी कलकत्तेमें अंगरेज प्रबल हैं ।

म० पु०–हिन्दू राज्य अभी स्थापित नहीं होगा । तुम्हारे रहनेसे अब बिना कारण नरहत्या होगी । सोच लो ।

इतना सुनतेही सत्यानन्द बड़ी गहरी मर्म्मपीड़ासे दुःखी हुए और बोले "हे प्रभो ! यदि हिन्दूराज्य स्थापित नहीं होगा तो राजा कौन होगा ? फिर क्या मुसलमानही राजा होंगे ?"

म० पु०–नहीं, अब अंगरेज राजा होंगे ।

सत्यानन्दकी दोनों आंखोंसे जलधारा बहने लगी । वे ऊपर बिराजती हुई मातृरूपा जन्म भूमिकी प्रतिमाकी ओर फिर हाथ जोड़कर आंसूसे रुके हुए कण्ठस्वरसे बोलने लगे "हाय मा ! मै तुम्हारा उद्धार नहीं करसका । अब फिर तुम म्लेच्छोंके हाथमें पड़ोगी ! सन्तानका अपराध मत गिनो । हाय मां, आज लड़ाईके खेतमें मेरी मृत्यु क्यों नहीं हुई ।"

महापुरुष बोले-सत्यानन्द ! दुखी मत हो। जो होगा सो अच्छाही होगा। अंगरेजोंके राजा न होनेसे आर्यधर्मका फिर उद्धार होनेकी सम्भावना नहीं है। महापुरुषोंने जैसा समझा है वैसाही मैं भी इस बातको समझता हूं। मन लगाकर सुनो; एक निकृष्ट लौकिकधर्म आजकल चल गया है। उसके प्रभावसे प्रकृत आर्यधर्म (म्लेच्छ लोग जिसे हिन्दूधर्म कहते हैं) लोप हो गया है. असल हिन्दूधर्म ज्ञानात्मक है; कर्म्मात्मक नहीं। वह ज्ञान दो प्रकारका है, बहिर्विषयक और अन्तर्विषयक. अन्तर्विषयक जो ज्ञान है वही आर्यधर्मका प्रधान अंश है। परन्तु बहिर्विषयक, ज्ञान पहले उत्पन्न न होनेसे अन्तर्विषयक ज्ञान जन्मनेकी सम्भावना नहीं है। स्थूल क्या है सो न जाननेसे सूक्ष्म क्या है सो कोई नहीं जान सकता। इस देशमें अब अनेक दिनोंसे बहिर्विषयक ज्ञान लोप होगया है। अतएव प्रकृत आर्यधर्म भी लोप होगया है। आर्यधर्मका फिरसे उद्धार करनेके लिये पहिले बहिर्विषयक ज्ञानका फिर प्रचार करना आवश्यक है। इन दिनों इस देशमें बहिर्विषयक ज्ञान नहीं रहा है और ऐसा मनुष्य भी नहीं है जो उसे सिखावे हम लोग लोकशिक्षामें सुयोग्य नहीं हैं। अतएव भिन्न भिन्न देशोंसे बहिर्विषयक ज्ञान लाना होगा। अंगरेज बहिर्विषयक ज्ञानमें बड़े चतुर हैं लोकशिक्षामें बड़े योग्य हैं। अस्तु, हम लोग अंगरेजोंको राजा बनावेंगे। अंगरेजी शिक्षासे इस देशके मनुष्य बहिस्तत्त्वमें सुशिक्षित होकर अन्तस्तत्त्वको समझनेमें समर्थ होंगे। उस समय आर्यधर्मके प्रचारमे और विघ्न नहीं रहेगा। तब प्रकृत धर्म आपही फिरसे चमक उठेगा। जितने दिन यह नहीं होगा अर्थात् जितने दिन हिन्दू फिर ज्ञानवान्, बलवान् और गुणवान् नहीं होंगे उतने दिन अंगरेजोंका [illegible] अक्षय रहेगा। अंगरेजोके राज्यमें प्रजा सुखी होगी। विना विघ्न धर्माचरण [illegible] अस्तु; बुद्धिमान् अंगरेजोंके संग युद्ध करना छोड़कर हमारे संग चलो।"

सत्या०-हे महात्माजी ! यदि अंगरेजोंको राजा बनानाही आपका आ[illegible] और यदि इस समय अंगरेजी राज्य ही इस देशके लिये मंगलप्रद है तो हम[illegible] इस कठोर युद्धकार्यमें क्यों नियुक्त किया था ?

महा० पु०-"अंगरेज अभी व्यापारी हैं; केवल धन संग्रहहीमें उनका मन है। वे राज्यशासनका भार लेना नहीं चाहते। इस सन्तान विद्रोहके हेतु वे राज्यशासन का भार ग्रहण करनेको लाचार होंगे। क्योंकि राज्यशासन न करनेसे धनसंग्रह नहीं होगा। अंगरेजोंको राज्य शासनमें दत्तचित्त करनेके लियेही सन्तानविद्रोह उपस्थित हुआ। अब चलो, ज्ञान लाभ करके तुम स्वयं सब बात समझ जाओगे।"

सत्या-हे महात्माजी ! मुझे ज्ञान लाभ करनेकी आकांक्षा नहीं है। ज्ञानसे मुझे प्रयोजन नहीं है। मैं जिस व्रतमें व्रती हुआ हूं वही पालन करूंगा। आशीर्वाद दीजिये कि मेरी मातृभक्ति अचला हो।

महा० पु०-तुम्हारा व्रत सफल हुआ है । तुमने माताका मंगल साधन किया है । अंगरेजोका राज्य स्थापित किया है । अब तुम युद्ध विग्रह त्याग करो कि लोग खेती और गृहस्थीमें मन लगावें, पृथ्वी शस्यशालिनी हो और देशकी श्रीवृद्धि हो ।

सत्यानन्दकी आंखोंसे अग्निकेकण निकलने लगे । वे बोले, "शत्रुशोणितसे सींच कर माता वसुन्धराको शस्यशालिनी करूँगा । "

म० पु०-शत्रु कौन है ? शत्रु तो अब नहीं रहे हैं । अंगरेज तो मित्र राजा हैं । और ऐसी शक्ति भी किसीमें नहीं है । कि अंगरेजके सङ्ग युद्धमें अन्तमें जय प्राप्तकरें ।

सत्या०-शक्ति नही होगी तो यहीं इस मातृ प्रतिमाके सम्मुख देहको त्यागूंगा ।

म० पु०-अज्ञानमें पड़कर ? चलो ज्ञान लाभ करोगे, चलो हिमालयके शिखर पर मातृ मंदिर है । वहीं मातृमूर्त्ति दिखाऊंगा ।

यह कहकर महापुरुषने सत्यानन्दका हाथ पकड़ लिया । अहा ! कैसी अपूर्व शोभा हुई । उस गम्भीर विष्णु मंदिरमें बिराट चतुर्भुजीमूर्तिके सम्मुख धीमी ज्योति में वे दोनों पूर्ण पुरुष मूर्तियां सुशोभित हैं । एकने दूसरेका हाथ कपड़ा है । किसने किसको पकड़ा है ? ज्ञानने भक्तिको पकड़ा है । धर्मने कर्मको पकड़ा है, विसर्जनने प्रतिष्ठाको पकड़ा है । कल्याणीने शांतिको पकड़ा है । सत्यानन्द शान्ति है और वह महापुरुष कल्याणी है । सत्यानन्द प्रतिष्ठा है और महापुरुष विसर्जन है । विसर्जन प्रतिष्ठाको लेकर चला गया ।

इति आनन्दमठ समाप्त ।

ऊप

कार्य न

स

हुआ । ३

म०

कारण न

पुस्तक मिलनेका पता-

खेमराज श्रीकृष्णदास,

"श्रीवेङ्कटेश्वर" (स्टीम्) यन्त्रालय-बंबई.

महा० पु०-तुम्हारा व्रत सफल हुआ है। तुमने माताका मंगल साधन किया है। अंगरेजोंका राज्य स्थापित किया है। अब तुम युद्ध विग्रह त्याग करो कि लोग खेती और गृहस्थीमें मन लगावें, पृथ्वी शस्यशालिनी हो और देशकी श्रीवृद्धि हो।

सत्यानन्दकी आंखोंसे अग्निकेकण निकलने लगे। वे बोले, "शत्रुशोणितसे सींच कर माता वसुन्धराको शस्यशालिनी करूंगा।"

म० पु०-शत्रु कौन है? शत्रु तो अब नहीं रहे हैं। अंगरेज तो मित्र राजा हैं। और ऐसी शक्ति भी किसीमें नहीं है। कि अंगरेजके सङ्ग युद्ध मे अन्तमें जय प्राप्तकरें।

सत्या०-शक्ति नही होगी तो यहीं इस मातृप्रतिमाके सम्मुख देहको त्यागूंगा।

म० पु०-अज्ञानमें पड़कर? चलो ज्ञान लाभ करोगे, चलो हिमालयके शिखर पर मातृ मंदिर है। वहीं मातृमूर्त्ति दिखाऊंगा।

यह कहकर महापुरुषने सत्यानन्दका हाथ पकड़ लिया। अहा! कैसी अपूर्व शोभा हुई। उस गम्भीर विष्णु मंदिरमें विराट चतुर्भुजीमूर्तिके सम्मुख धीमी ज्योति में वे दोनो पूर्ण पुरुष मूर्तियां सुशोभित है। एकने दूसरेका हाथ कपड़ा है। किसने किसको पकड़ा है? ज्ञानने भक्तिको पकड़ा है। धर्मने कर्मको पकड़ा है, विसर्जनने प्रतिष्ठाको पकड़ा है। कल्याणीने शांतिको पकड़ा है। सत्यानन्द शान्ति है और वह महापुरुष कल्याणी है। सत्यानन्द प्रतिष्ठा है और महापुरुष विसर्जन है। विसर्जन प्रतिष्ठाको लेकर चला गया।

इति आनन्दमठ समाप्त।

कप
र
कार्य न
स
हुआ। ३
म०
कारण न
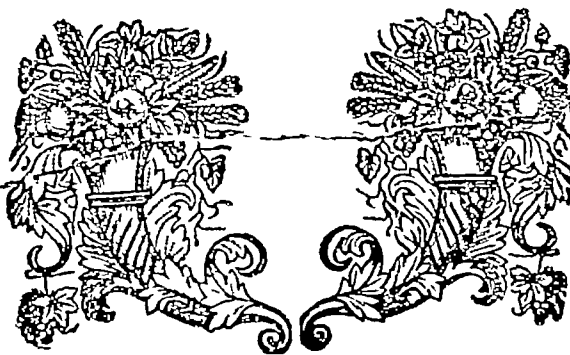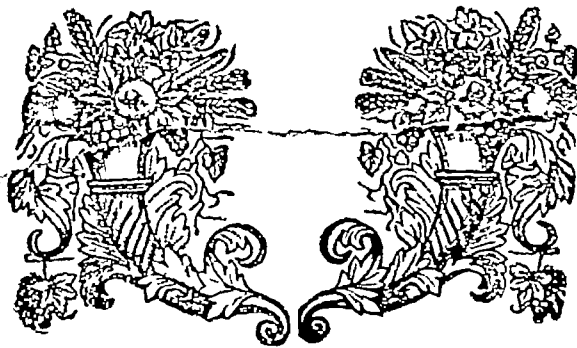
पुस्तक मिलनेका पता-

खेमराज श्रीकृष्णदास,

"श्रीवेङ्कटेश्वर" (स्टीम्) यन्त्रालय-बंबई.

॥ श्रीः ॥

देशकी बात ।

बङ्गला 'देशेर कथा' का अनुवाद ।

खेमराज श्रीकृष्णदास,

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम प्रेस—बंबई.

श्रीः ।

देशकी बात ।

बङ्गला 'देशेर कथा' का अनुवाद ।

कलकत्ता प्रवासी, भिवानी निवासी-
"सुदर्शन" सम्पादक
"स्वर्गीय" पण्डित माधवप्रसाद मिश्र
और
"श्रीवेङ्कटेश्वर समाचार" के भूतपूर्व सम्पादक
श्रीयुक्त बाबू अमृतलालजी चक्रवर्ती
द्वारा अनुवादित ।

जिसको
"श्रीवेङ्कटेश्वरसमाचार" व "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम प्रेसके स्वामी
खेमराज श्रीकृष्णदासजीने
सबके हितार्थ
स्वीय यन्त्रालयमे मुद्रितकर प्रकाशित किया ।
बम्बई.

श्रीः ।

देशकी बात ।

बङ्गला 'देशेर कथा' का अनुवाद ।

कलकत्ता प्रवासी, भिवानी निवासी-

"सुदर्शन" सम्पादक

"स्वर्गीय" पण्डित माधवप्रसाद मिश्र

और

"श्रीवेङ्कटेश्वर समाचार" के भूतपूर्व सम्पादक

श्रीयुक्त बाबू अमृतलालजी चक्रवर्ती

द्वारा अनुवादित ।

जिसको

"श्रीवेङ्कटेश्वरसमाचार" व "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम प्रेसके स्वामी

खेमराज श्रीकृष्णदासजीने

सबके हितार्थ

स्वीय यन्त्रालयमें मुद्रितकर प्रकाशित किया ।

बम्बई.

समर्पण ।

हिन्दी साहित्य सभा' 'सावित्री पाठशाला' आदिके
सभापति, 'पिञ्जरापोलके सम्पादक, वङ्ग धर्म्म
मण्डल और 'मारवाड़ी एसोसियेशन' आदिके
सहकारी सम्पादक, श्रीयुक्त गणेशदासजी
जयरामके फार्मके अधिकारी ।

कलकत्ता प्रवासी, भिवानी निवासी,

श्रीयुक्त सेठ फूलचन्दजी हलवासियेके

कर कमलमें

यह

देशकी बात

बन्धुत्व और स्नेहका चिह्न स्वरुप

अनुवादक द्वारा

सादर समर्पित हुई ।

मुखबन्ध ।
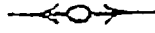
" पाठकगण ! निज हृदय थामकर पढ़ो देश अपनेकी बात ।
निर्दयतासे हुआ जिस तरह पुण्यभूमि भारतका घात ॥
शोक सिन्धुमें डूब न रहना रखना मनमें भारी धीर ।
बड़ी वीर जननीका जाया हरै सदा जो उसकी पीर ॥ "

पं० राधाकृष्ण मिश्र ।

"देशकी बात" बङ्गलाकी "देशेरकथा" का अनुवाद है। जिस समय यह पुस्तक बङ्गलामें लिखी गयी थी उससमय बङ्गालके टुकड़े नहीं हुए थे, " स्वदेशी " आन्दोलनका विचार भी लोगोंके जीमें नहीं आया था। लार्ड कर्जनके कुचक्रपूर्ण शासनसे लोग शङ्कित होचुके थे, पर उनकी मोहमयी निद्रा तबतक भी टूटने नहीं पायी थी। बङ्गालके शिक्षित लोग आमोद प्रमोदमें लग रहे थे और कितनेही सौन्दर्य–उपासक 'मूकाभिनय' का अपूर्व कौतुक कर कृत्रिम रमणीयताका बाजार खोल रहे थे। उपन्यास और नाटकोंमें शृङ्गाररसकी प्रधानता होरही थी और बङ्गालके बहुतसे बड़े आदमियोंका समय इसीके आकलनमें पूरा होता था। यह किसीको ध्यान भी न था कि उनके देशकी कैसी शोच्य दशा होरही है और आगे कैसा परिवर्तन होने वाला है।

ऐसे समयमें एक महाराष्ट्र ब्राह्मण कुमार कलकत्तेकी गलियोंमें घूम घूम कर उत्तेजक और मर्मस्पर्शी शब्दोंमें देशकी बात कहता फिरता था। कभी वह भारतवर्षकी राजधानी कलकत्तेको जगानेके लिये महाराष्ट्र केसरी छत्रपति महाराज शिवाजीकी जयजयकार करता। कभी राजभक्त यशोलिप्सु बड़े आदमियोंसे निराश हो दिनभर परिश्रम करनेके पश्चात् रातको ' छात्रसम्मिलनी ' में युवक मण्डलीके समक्ष एक एक बजेतक वक्तृता देकर समझाता कि " प्रत्येक देशकी उन्नति वहांकी युवक मण्डलीपर निर्भर है। जिस देशके युवा विलासी वा कायर होते हैं उसका अधःपतन अनिवार्य है और जहांके युवक कर्तव्यपरायण वा वीर होते हैं उसकी उन्नतिके मार्गको कोई रोक नहीं सकता।"

कभी वह बड़े बाजारके बुद्धिभ्रष्ट लोगोंकी बुद्धि सुधारनेके लिये " बुद्धिमार्जिनी सभा " बनाता और कभी वह मधुर भाषी उपदेशकोंको " स्वदेश वस्तु-प्रचार " पर भाषण करनेके लिये निमन्त्रित करता। दुःखकी बात यह थी कि उसके पास धन न था तथापि वह अपने उत्साहको कम नहीं होने देता था। सभाओंके लिये जब कभी उसे धनकी आवश्यकता होती वह अपने परिश्रम लब्ध धनसे निज कुटुम्बका भरण पोषण करनेके बाद कुछ बचाये रखता और अधिककी आवश्यकता होनेपर कलकत्तेके श्रीमदान्ध लोगोंके द्वारपर उपस्थित होनेमें भी उसे द्विधा न होती। सहायता न मिलनेसे उसे कुछ दुःख नहीं होता, क्योंकि वह जानता था

कि लोग उसके उद्देश्यकी महिमा नहीं समझते और जरासी अनुकूलता मिलनेपर वह खिल उठता था कारण कि यह उसके निकट देशके पुनरुत्थानका लक्षण था। अच्छी तरह हिन्दी न आनेपर भी वह "हिन्दी साहित्य सभा" में "जापानकी जागृती" के विषयपर हिन्दी निबन्ध पढ़ता और अपने पवित्र उद्देश्यको व्यापक बनानेके लिये उक्त विषयपर पुनः पुनः तर्क वितर्क करता। वह एक ऐसे देशी पत्रका सम्पादक था जिसके चारों ओर सम्पादकोंकी दला दली और सामाजिक कलह विद्यमान था पर वह महानुभाव-"पद्मपत्रमिवाम्भसा"-सबसे अलग रहता था।

दिनमें वह उस कार्यको करता, जिसपर उसके कुटुम्बका पालन निर्भर था और रातके कई घण्टे उसके युवकवृन्दके उद्बोधनमे खर्च होते। उससे शेष समय जो मिलता उसमें सोनेके सिवाय ऐसे ग्रन्थ लिखता जिनके प्रचारसे उसके उद्देश्यका प्रचार होता। ऐसी कठिन अवस्थामें जब वह अपनी पुस्तकको लेकर श्रीयुत बाबू रूडमलजी गोइनकाके उस स्थानमें पहुँचा जो विद्वानोंके अलभ्य दर्शन करानेके लिये बड़े बाजारहीमें नही कलकत्ते भरमें केन्द्र होरहा है तो मुझे मालूम हुआ कि उसकी पुस्तकका नाम "देशेरकथा" और उनका नाम-"श्रीयुक्त पण्डित सखाराम गणेश देउस्कर हैं"।

देउस्कर महाशयके ग्रन्थको अवलोकन कर मैंने कहा,-"क्या आप इस पुस्तकसे लाभवान् होना चाहते हैं? अभी इस देशका ऐसा सौभाग्य कहां जो ऐसे ग्रन्थोंका लोग आदर करे और लेखकोंको धनका लाभ हो?"

उत्तरमें उन्होंने कहा-"यह ठीक है, मैंने धन-प्राप्तिकी इच्छासे यह पुस्तक नही लिखी है। यदि धनका लोभ होता कोई चटकीला उपन्यास लिखता। मेरा उद्देश्य यह है कि देशकी दुर्दशाका लोगोंको किसीतरह ज्ञान होजाय और परम्परासे सर्व साधारणमें यह बातें फैल जायँ। धन प्राप्तिकी इससे कोई आशा नहीं है। अभी तो लागतभी वसूल नही हुई है। इसके दूसरे संस्करणकी तो आशा दुराशा मात्र है।"

'बाबू रूडमडलजीने, उन्हें धैर्य्य देकर कहा-इससे आप यशस्वी तो होवेहींगे और काल पाकर इसका आदर भी होगा।"

उसी समय उक्त दोनों महोदयोने हिन्दी भाषामे इसके अनुवाद करनेका अनुरोध किया और मैने उसका लग्न लगाया। इसके दो एक अंशोका कलकत्तेके मासिकपत्र "वैश्योपकारक" में अनुवाद प्रकाशभी करवाया, किन्तु पूरा ग्रन्थ प्रकाशित न होसका।

इसी बीचमें प्रसिद्ध हिन्दीपत्रोंके सम्पादक, सन्मित्र बाबू अमृतलालजी चक्रवर्तीने "श्रीवेङ्कटेश्वरसमाचार" के सम्पादकीय कार्यको ग्रहणकर इस पुस्तकको उपहारमें देना चाहा जिसे मैंने सहर्ष स्वीकार कर लिया।

देखतेही देखते हवा बदल गयी। जिस पुस्तककी लागततकके वसूल होनेमें ग्रन्थकारको और मुझे आशङ्का थी उसकी थोड़ेही दिनोंमें हाथोहाथ सब प्रतिय

बटगयीं बङ्गालके टुकड़े होतेही वहां स्वदेशी आन्दोलन उपस्थित हुआ। जिसमें इस पुस्तकके प्रदीप्त वाक्योंनेभी अपना प्रभाव दिखलाया। यह कहना तो छोटे मुँह बड़ी बात समझी जायगी कि स्वदेशी आन्दोलन इसी पुस्तकका फल है, पर इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस आन्दोलनकी प्रज्वलित वह्निमें इसने घृताहुति कासा काम अवश्य किया। बरीसालके वीर स्वदेशहितैषी बाबू अश्विनीकुमार-दत्तने अपनी कालीघाटवाली वक्तृतामें कहा था कि "इतने दिनतक सरस्वतीकी आराधना करनेपरभी बङ्गालियोंको मातृभाषामें वैसा उपयोगी ग्रन्थ लिखना न आया जैसा एक परिणामदर्शी महाराष्ट्र युवाने लिख दिखलाया! बङ्गालियो! इस ग्रन्थ (देशेरकथा) को पढ़ो और अपने देशकी अवस्था और निज कर्तव्यका विचार करो।"

बाबू अश्विनीकुमार दत्तने जो बात बङ्गालियोंको सम्बोधन करके कही थी उसे मैं समस्त भारतवासियोंको सम्बोधन करके कहता हूँ कि "भाइयो! "देशकी बात' पढ़ो और अपने देशकी अवस्था और निज कर्तव्यको विचारो।"

यह अनुवाद प्रथम संस्करणसे आरम्भ हुआ था। परन्तु इसी बीचमें पुस्तकका तीसरा सस्करण हो चुका था। देवस्कर महोदयके कथनानुसार तीसरी बारके छापेके अनुसार इसमें सब बातें घटा बढ़ा दी गयीं किन्तु आज मुझे उनसे विदित हुआ कि तीसरे सस्करणकी भी सब पुस्तकें हो चुकीं चतुर्थ सस्करण हो रहा है जो शीघ्रही प्रकाशित होने वाला है। उसमें भी कई बातें घटाने बढ़ानेके योग्य हैं। यदि अन्तिम प्रूफ तक चतुर्थ संस्करण नहीं मिला इससे इसके दूसरे संस्करणमें उनका समावेश किया जायगा।

इस अनुवादका आरम्भ मैंने किया था, परन्तु पूरा किया है सुगृहीत नाम श्रीयुत बाबू अमृतलालजी चक्रवर्तीने। चक्रवर्तीजीके अनुवादकी सुन्दरताके विषयमें कुछ कहना सूर्यको दीपक दिखाना है। कारण बङ्गलाके लिये वे बङ्गाली हैं और हिन्दीके लिये हिन्दुस्तानी। बङ्गाली होने पर भी उन्होंने हिन्दीके अनेक प्रसिद्ध पत्रोंका योग्यतासे सम्पादन किया है और "हिन्दी बङ्गवासी' जैसे पत्रकी अपूर्व सृष्टिकर दिखायी चक्रवर्तीजी किसी कारण "वेङ्कटेश्वरसमाचार' की सम्पादकताको छोड़कर अब स्वदेशको चले गये हैं, पर उनके कार्यका फल यह "देशकी बात विद्यमान है जो सदैव उनकी सम्पादकताके समयका स्मारक रहेगी।

मेरे विचारमें यह पुस्तक स्वजातीय विद्यालयोंमें पढ़ाने और विद्यार्थियोंको उपहारमें देने योग्य है। जो लोग अपने देशको जागृत करना चाहते हैं उन्हें तब तक सन्तोष करना न चाहिये जब तक वे प्रत्येक विद्यार्थीके हाथमें "देशकी बात" को न देखलें। राजभक्तिकी ध्वजा उड़ानेवाले कुछ लोगोंने आज कल यह भी हल्ला मचा दिया है कि विद्यार्थियोंको राजनीतिके चक्करसे अलग रखना चाहिये। उनके प्रबोधके लिए इस पुस्तकके आगे "विद्यार्थी और राजनीति" इस निबन्धको युक्त कर दिया है।

मेरी बड़ी अभिलाषा थी कि मैं इस पुस्तकके साथ श्रद्धेय मित्र पण्डित सखारामजीका चित्र और चरित्र प्रकाश करता परन्तु उन्होंने ऐसा करनेसे मुझे

मना किया और कहा कि "मैंने ऐसा क्या कार्य किया है ? जितना समय आप मेरी निस्सार जीवनीके लिखनेमें लगाया चाहते हैं उतना समय किसी और देशहितैषी पुरुषकी जीवनी लिखनेमें लगावें, अगर आप मेरा चरित्र वा चित्र प्रकाश करेंगे मुझे कष्ट होगा।"

कौन कहता है, कि भारतवर्षमें स्वार्थत्याग और कार्यतत्परताका आदर्श नहीं है। यदि किसीको देशहितैषिताका आदर्श देखना हो तो वह उन युवा महाराष्ट्रोंकी कार्यावलीका निरीक्षण करें, जो, उक्त महोदयकी तरह जन्मभूमिसे कोसों दूर रहकर प्रवासमें उन कार्योंको कर रहे है जिन्हें दूसरे प्रान्तके बड़े बड़े नेता अपने घर परभी नहीं कर सकते। यह जो कलकत्तेमें छत्रपति महाराज शिवाजीके महोत्सवकी विलक्षण प्रतिष्ठा होरही है, और पुण्यश्लोक पण्डित बालगङ्गाधर तिलकके झण्डेके नीचे सहस्रों वङ्गालीयुवक जीवन समर्पण करनेको सन्नद्ध हो रहे हैं, इसका मूल कारण क्या है ? कतिपय स्वदेश व्रतपरायण महाराष्ट्र युवक। ये लोग न धन चाहते हैं न यश चाहते हैं केवल यही चाहते है कि छत्रपतिके जिस बीजमन्त्रको " माननीयो मनीषिणाम् " महात्मा तिलकने परिष्कृत किया है उसके महत्त्वको लोग भलीभांति समझ जायँ। इस समय स्वदेशीका बाजार गर्म होरहा है और अनेक धनवान लोगोंकीभी इच्छा होती है कि वे देशहितको खरीद कर इस विषयमेंभी धनवान कहलावें। उनमें यदि कोई पुण्यवान हो तो उनसे मेरा अनुरोध है कि वे पण्डित सखारामजी जैसे साहित्यसेवी, और कर्तव्यनिष्ठ पुरुषोंकी सेवा करें जिससे उनकी चमत्कृत प्रतिभा और कार्यतत्परताके अनेक ऐसे सुफल देखनेमें आवें और इसके साथही वे प्रवासी महाराष्ट्र विद्यार्थियोंकी यह समझ कर सहायता करें कि इस देशकी सेवा करनेमें वे वैसेही चतुर और योग्य होते हैं जैसा कि जापानी अपने देशकी सेवामें।

"श्रीवेङ्कटेश्वर समाचार" के स्वामी श्रीयुक्त सेठ खेमराजजीका धन्यवाद है जो इस दुस्समयमें ऐसी पवित्र पुस्तकोंके प्रचारसे हिन्दीके पाठकोंमें राजनैतिक विषयोंका प्रसार करनेमें अग्रसर हो रहे है आशा है कि उत्तरोत्तर वे ऐसीही उपयोगी पुस्तकोंका उपहार दिया करेंगे।

बसन्तपञ्चमी स० १९६२
कोठी सेठ गणेशदासजी
जयराम-कलकत्ता।

माधवप्रसाद मिश्र।

दुःखकी बात है कि मिश्रजी इस पुस्तकको प्रकाशित देख प्रसन्न न होसके। इसके पहलेही वे स्वर्गवासी होगये। तथापि उनके इस प्रयत्नसे यदि हिन्दी प्रेमी लाभ उठावेंगे तो अवश्यही उनके आत्माको सन्तोष होगा।

खेमराज श्रीकृष्णदास,

॥ श्रीः ॥

देशकीबात।

हमारा देश।

समुद्रकी करधनी पहनी तथा हिमालयके मुकुटसे सुहावनी भारतभूमिका विस्तार १३८८९७२ वर्गमील है. जिसमे ७९३९७२ वर्गमील पर अङ्गरेजोका खास अधिकार है। यह अंश बृटिश भारत कहा जाता है। सरकारी कागजोमें ब्रह्मदेश और बलूचिस्थानभी बृटिश भारतमे गिने जाते हैं। ब्रह्मदेशकी माप १६८५५० वर्गमील है। बृटिश बलूचिस्थानका आकार २२४०० वर्गमीलसे अधिक नहीं है। भारतवर्षमें सब मिलाकर २१३ कर देनेवाले रजवाडे हैं। जिनमेसे मध्यभारतमे छोटे और बड़े सब मिलाकर ८० हैं, राजपूतानेमे २०, पञ्जाबमे ३४, मध्यप्रदेशमे १५, मन्द्राजमे ५, बम्बईमे २०, युक्तप्रदेशमे २, कश्मीरसे १, मैसूरमें ८, हैदराबादमे १९, और बडौदेमे ६ कर देनेवाले हैं. देशी रजवाडोकी माप सब मिलाकर ५९५००० वर्गमील है।

इस समय भारतवर्षमें कुल २८४२३४७०० मनुष्य हैं। यह संख्या सारी पृथ्वीके मनुष्योंकी प्रायः पांचवां भाग है। उक्तप्राय २८॥ करोड मनुष्योमे २२१०५३१३२ अङ्गरेजी अधिकारके भारतवर्षमे रहते हैं और बाकी ६३१८१५७० देशीय हिन्दू और मुसलमान नरेशोके राज्योमे। ब्रह्मदेश और बृटिश बलूचिस्थानकी मनुष्य संख्या १००३२००० है। भारतमें २०७१४७०२६ हिन्दू, ६२१०००००० मुसल्मान, और १६८००० यूरोपियन रहते हैं। बृटिश भारतमे हिन्दू और मुसल्मानोंकी संख्या २२०९२८१०० है। जिनमेसे २११२२४४९०० पुरुष और १०८७६२२०० स्त्रियाँ हैं। * इन २२ करोड १ लाखसे कुछ अधिक हिन्दू और मुसल्मानोंके सुख और दुःखकी बातेही इस छोटीसी पुस्तकमें बड़ेही संक्षेपमे कही गई हैं।

---

* सम्पूर्ण भारतमे हिन्दुओंकी संख्या २०७१४७०२६ है। जिनमेसे १०५१८८९५५ पुरुष और १०१९५८०७१ स्त्रियाँ हैं। इनमेसे देशीय कर देनेवाले रजवाड़ोमे ४८५८५७३८ हिन्दू रहते हैं। मुसल्मानोकी संख्या ६२४५८०७७ है। जिनमें ३२२५७६१० पुरुष और ३०२००४६७ स्त्रियाँ हैं। इनमेसे ३३९४४६ ब्रह्मदेशके और ८६५३५०० बृटिश बलूचि... सहित देशीय रजवाड़ोंमे गिने गये हैं। ... ९१८८००० रहते हैं। ... संख्या प्रायः ... है जिनमेसे ब्रह्मदेश... ४०५० (... १९०१) ... है। ... एक ... है।

नीति माननेवालोके नेत्रोंमें अङ्गरेजोंके बहुतेरे गुण अवश्यही भले नही सूचित होते हैं, किन्तु कोईभी इस बातको अस्वीकार नहीं कर सकता कि, पराये राज्यको जीतने और अपने राज्यको स्थिर रखनेके लिये उन गुणोंके विना चलही नही सकताहै । अङ्गरेजोंके सहारे यदि हम उन गुणोंको पाजावे तो ससारमे ऐसा कामही नहीं रहेगा जिसे भारतवर्षके ३० करोड बुद्धिमान परिश्रमी और सदाचारी मनुष्योंका किया न हो सकेगा । अङ्गरेज गुरुकी पाठशालामें परतन्त्रता भूख और बेइज्जती सहते हुएभी यदि हम उनकी दीहुई अच्छी शिक्षाओंको ले सकेंगे, यदि सुयोग्यगुरुके योग्य चेला होनेका परिचय देसकेंगे तो इतने क्लेशोंको सहकर गुरुकुलमें रहनेका सुफल हमको मिल जायगा । उदारचरित्र वाले अङ्गरेजभी अपने शिष्योंकी योग्यताको देखकर प्रसन्न होंगे ।

उदार मनवाले ग्लेडष्टोन कहा करते थे,—

"The worst thing you can do to a nation is to flatter it."

अर्थात् खुशामद करनेसे किसी जातिकी जितनी हानि होती है उतनी और किसी कामसे नहीं होती है ।

हमें अङ्गरेज जातिके केवल गुणोंको कहकरही चुप होना नहीं चाहिये । अङ्गरेजोंके चरित्रमें गुणोंकी भाँति कई बडे २ दोषभी विद्यमानहैं उनके छल, स्वार्थ, घमण्ड और भिन्न जातियोंपर नफरत आदि दोष सभी स्थानोंमें कहे जाते हैं । अँगरेजी चरित्रके इन सब दोषों से भी हमको थोडा लाभ नहीं हुआ है, उनके इन दोषोंके कारण भारतवासियोंको अपने समाजकी स्वतन्त्रता और धर्मकी विशेषता बनाये रखनेमें बडी भारी सहायता मिलती है । जीती गई हुई जातिके लिये जीतनेवालोंसे एकबारही मिलमिलाकर एक होजाना कदापि भला नहीं है । इतिहासके पढनेवाले भली भाँति जानते हैं कि, अकबरके समयमें मुसल्मानोंके साथ हिन्दुओंके विवाहका सम्बन्ध बडे भारी गम्भीर राजपूत जातिकी कैसी बडी अवनति हुईथी । पहले पहल बहुतेरे लोगोंने सोचा था कि अंगरेजोंके साथ रोटी बेटीका सम्बन्ध होनेसे हिन्दू बडा भारी लाभ उठावेंगे, बहुतेरे नकलके फकीर सुधारक इस चालको जारी करनेके लिये उद्योग लग गये थे, किन्तु अब समझ बूझकर उनकी आँखे खुलने लगीं हैं । इस बातके समझानेका प्रयोजन नहीं है कि, अंगरेजों को भिन्न जातियोंपर बडी भारी नफरत रखते देखकर उनकी बुद्धि ठिकानेपर आई है । जब औरंगजेब भिन्न धर्मवालोंको सताने लगाथा तब उन दिनोंके हिन्दू मुसल्मानी रीति नीतियोंपर चिढते हुए अपने धर्मके कट्टर होगये थे तथा स्थान स्थानपर बलात्कार पर हिन्दू राज्य बनानेका प्रयत्न करने लगे थे । इन दिनों अंगरेजोंके घमण्ड, स्वार्थ और देशियोंपरकी नफरतको देखकर क्रमश. हिन्दू और मुसल्मानोंके सीधी दशा बदलने लगीहै । यद्यपि अंगरेज भारतवासियोंके धर्मपर हाथ नहीं डालते हैं, किन्तु बहुतेरे भारतवासियोंका उनके [illegible] पर देखनी पडती है । [illegible] हाट, पथ घाट, सभी ठौरोंमें [illegible] भारतवासी [illegible] देखते रहते हैं । [illegible] इतिहासमें इसका [illegible] । [illegible] दिखाई [illegible] । [illegible] रीति, [illegible], [illegible] और भारतवा-

सियोंका पहले जितना अनुराग था अब वैसा नही देखनेमे आता है । उसका उल्टा भावही बहुधा आजकल दिखाई देताहै । अङ्गरेज जातिके चरित्रके जिन दोषोंकी बात पहले कही गई है उनसेही यह परिवर्त्तनसे घटित होरहा है ।

योंहीं अङ्गरेजोंके गुण और दोषोसे हमारे जातीय जीवनके नये नये परिवर्त्तनोकी सूचना हुई है अङ्गरेजोका ससर्ग कर यह प्राचीन बुद्धिमती जाति बुढापेको छोडकर क्रमशः युवा अवस्थाके हटे बलको पानेके लिये अग्रसर हो रही हैं । इस बडे भारी भारतवर्षमें पश्चिमी शिक्षा और सभ्यताकी टक्करसे सर्वत्र नये जीवनका सचार होरहाहै । एक ओर बडी बडी चाह और एक दूसरेसे टक्कर और दूसरी ओर दरिद्रता नयराश और मनकी चञ्चलता; एक ओर ज्ञानके विस्तारसे बुरे बुरे सस्कारोंकी जडका कटना दूसरी ओर धर्मविश्वास घटजानेसे सहनशीलताकी कमी, एक ओर समाचार पत्र पुस्तकप्रकाश तथा सभा आदिकी प्रतिष्ठासे स्वदेशके हितके लिये देशवासियोंका दत्ताचित्त होना, दूसरी ओर मतभेद तथा सुयोग्य राह दिखानेवालेके रहनेसे मनकी वह इच्छा पूरी न होना—इत्यादि बातोसे भारतवर्षकी जगौनी सूचित हो रहीहै ।

भारतकी समाजोमें पश्चिमी सभ्यतासे टक्कर खा खाकर उक्त प्रकारसे जिस परिवर्तनकी सूचना हुई है, अङ्गरेजोंकी भाँति हृदयवान सुसभ्य जातिके दोष और गुणोको देखदेखकर भारतवासी जो नई जाति शिक्षा पा रहेहैं वह अबतक एशियाके किसीभी देशके भाग्यमे सघटित नहीं हुई थी । बडे भारी एशियाखण्डमे जापानको छोडकर आज कल भारतवर्षही नया जीवन लाभ करनेके विषयमे सबसे बढा हुआ है । पूर्वीय भूमिमे यही सुसभ्य अङ्गरेज जातिकी बडी भारी अटल कीर्त्ति है । जिन्होंने पश्चिमी समाजसे गुलामीकी रीति उठाई दीथी यह बडा भारी गौरव उन्हींके योग्य है । प्रायः ७० वर्ष पहले उदार मनवाले मेकाले साहबने भारतीय समाजोंमें नये जीवनकी ऐसी सूचनाकी सम्भावनाका अनुभवकर घमण्डके साथ कहाथा ।

We are free, we are civilised, to little purpose, if we grudge to any portion of the human race an equal measure of freedom and civilisation. Are we to keep the people of India ignorant in order that we may keep them submissive? or do we think that we can give them knowledge without awakening ambition? Or do we mean to awaken ambition and to provide it with no legitimate vent? who will answer any of these questions, in the affermative?.........I have no fears. The path of duty is plain before us and it is also the path of wisdom, of national prosperity, national honor,.... ...It may be that the public mind of India may expand under our system till it has outgrown the system,.........they may in some future age demand European institutions. Whether such a day will ever come I know not But never will I attempt or retard it. Whenever it comes it will be the proudest day in English history. It would indeed be a title to glory all ourown.

हम यदि मनुष्य समाजके किसी अंगको अपनी स्वत्वता और स्वतन्त्रताके बराबर अधिकारो के देनेसे हिचके तो हमने व्यर्थही सभ्यता और स्वतन्त्रता पाई है । भारतवासियोंको सदैव नौकरोंकी भांति अपना आज्ञाधीन बनाये रखनेके लियेही क्या हमको उन्हे अज्ञानके अंधेरेमे डबो रखना चाहिये ? अथवा क्या यही हमारा अभिप्राय होना चाहिये ? कि हम उनको ज्ञान की रोशनी देंगे, पर उनका ज्ञान बढनेके साथ साथ उनके मनमे बडी २ चाह उठने नही देंगे ? किम्वा यह हमारे जीकी इच्छा है कि उनके मनमे बडी बडी चाह आ जानेपरभी न्यायके साथ उनको पूरा होने नहीं देंगे ? कौन इन प्रश्नोमेंसे एककेभी उत्तरमें हाँ कह सकता है ...... इस विषयमे मेरे जीमें कोईभी शंका नहीं उठती है । हमारे कर्तव्यका सीधा पथ सामने पडा हुआहै । यह पथही जातीय ज्ञान, जातीय उन्नति तथा जातीय सम्मानके लिये खुला हुआ है । कदाचित् हमारी जारी की हुई शिक्षाप्रणालीके फलसे क्रमशः सर्व साधारण भारत-वासियोंके चित्तका ऐसा विकास संघटित होगा कि, वे इस चालसे प्रसन्न नहीं रह सकेंगे ।— कदाचित् भविष्यत्में वे पूरी यूरोपीय शासनप्रणाली जारी करवाना चाहेंगे । मैं नहीं जानता कि वह दिन कभी आवेगा कि नहीं, किन्तु मैं वैसे दिनके आनेमे कभी बाधा नहीं डालूंगा. अथवा ऐसा प्रयत्न नहीं करूंगा कि भारतमें वह दिन कभी न आवे । जिस दिन सच मुचही भारतकी वह दशा आजावेगी वह दिन इग्लैण्डके इतिहासमे सबसे बढकर गौरवका गिना जावेगा । वास्तवमे हमही उस बडे भारी गौरवके पूरे अधिकारी होंगे ।

यह बडी भारी बात उदार मनवाले तेजस्वी अंगरेजहीके योग्य है । भारतके समाजोंमे नया जीवन आनेके विषयमे मेकाले साहबकी वह भविष्यवाणी इतने दिनोंके बाद पूरी हुई है । बहुत दिनोंसे सोते हुए भारतवासी अज्ञान और आलस्यको छोडकर पश्चिमी ज्ञानकी रोशनीसे खिले हुए कर्त्तव्यपथमे अग्रसर होनेकी योग्यता अब पागये हैं । भारतवर्षमें जिस दिन जातीय महासभाकी प्रतिष्टा हुई उसी दिन पहले पहल उस योग्यताका परिचय मिला ।

जातीय महासभा कांग्रेसके जन्म लेनेके पीछे भारतवर्षके भिन्न भिन्न प्रान्तवासी लिखे पढे लोगोंमे एक दूसरे पर सहानुभूति बढने लगी है । भारतकी भलाई बुराईके सम्बन्धमे मत मतान्तर या झगडा दूर होताहुआ उनमे एकता आने लगीहै । कांग्रेसके ढगसे शिल्पप्रदर्शिनी प्रान्तीय सभा आदि नई नई सभा समितीयाँ जन्म लेने लगी हैं । कायस्थ, जैनी, वैश्य आदि सम्प्रदायवाले अपनी सामाजिक उन्नतिके लिये सभाएं बनाने लगे हैं । मुसल्मानोंकी शिक्षा समितिभी कांग्रेसके फलोंमेसे है । एक जातीय महासभाके प्रभावसे सम्पूर्ण भारतके लिखे पढे लोगोंमे धर्मोंके नये नये प्रचार बढने लगे है । यही भारतमे अंगरेजी शासनका स्वादिष्ट फल है, एल्फिन्स्टन, केनिङ, रिपन आदि उदार शासन कर्त्ताओंकी यह अटल कीर्ति है । कोईभी इसे मिटा नहीं सकता है ।

प्रकारसे प्यारा होता । किन्तु दुर्भाग्यसे वैसा नहीं हुआ । भूतपूर्व गवर्नर जनरल लार्ड लिटन बहादुरने अपने एक गुप्त मन्तव्य पत्रमे लिखा था,-

"No sooner was the act passed than the Government began to devise means for practically avoiding the fulfilment of it."

अर्थात् इस कानूनके बनते न बनते (भारतवर्षीय) गवर्नमेण्ट उसके अनुसार चलनेकी दिक्कतसे बचनेका उपाय करने लगी ।

पार्लियामेण्टकी उक्त विधिकी आज्ञाके योग्य भारतवासियोंको बडेसे बडे सरकारी कामोंमें भरती करनेका अधिकार दे दियाथा । इस विषयमे लिटन महाशयने औरभी लिखाथा,-पार्लियामेण्टने भारतवासियोको जो अधिकार दियाहै उसको व्यर्थ करनेके लिये हमको कुटिल पथकी शरण लेना पडी है ।

We have had to choose between prohibiting them and cheating them, and *we have chosen the least straight forward course.*

अर्थात् खुलाखुली भारतवासियोंको सरकारी नौकरियोंपर नियुक्त करनेमें बाधा देने व उनको धोखा देनेके सिवाय हमारे लिये उन्हें रोकनेका कोई दूसरा उपाय नहीं था । इन दोनोंमेसे हमने पिछले कुटिल उपायकोही अच्छा विचारा ।

इतना करकर लार्ड लिटन बहादुरने उदाहरण भाँति सिविलसर्विस परीक्षार्थी हिन्दुस्थानी युवाओकी अवस्था घटानेवाले नियमकी बात लिखी है । दुःख इतनाही है कि भारतीय अँगरेजी शासनके इतिहासमें इस प्रकार दृष्टान्त कम नहीं हैं ।

सन् १८६९ ई० में ड्यूक आफ् आर्जिलने इन सब बातोंको सुझानेमे कहाथा,-

We have not fulfilled our duty or the promises and engagements which we have made.

अर्थात् हमने (भारतवर्षके बारेमें अपने कर्त्तव्यका पालन नहीं किया है, हमने जिन प्रतिज्ञाओको कियाथा उनको भग कियाहै ।)

सन् १८५८ ईसवीमें महारानीने विज्ञापनके द्वारा जो प्रतिज्ञाए कीथीं और सन् १८३३ ई० में पार्लियामेण्टने जो आज्ञा दी थी उनका पालन न होते रहनेके विषयमें जब सन् १८८३ इसवीमें लार्ड नार्थब्रुक महाशयने अभियोग कियाथा तब भारतके पूर्व स्टेटसेक्रेटरी उसे विना कुछभी लजाये सबलोगोंके सामने यह कहकर टाल दियाथा कि इसका नाम Political hypocrisy अर्थात् राजनीतिक छल है । सन् १८७५ ई० में उन्हीं नामी राजकर्मचारीने कहाथा,-

India must be bled अर्थात् भारतवासियोका खून निकालनाही पडेगा ।

यों एक ओरसे पार्लियामेण्ट और बृटिश जातिके उदार पुरुष भारतवासियोंकी उन्नतिका पथ साफ करनेकी आज्ञा देते जातेथे । और दूसरी ओर बहुतेरे कुटिल मनवाले तथा अनुचित शक्तिके चाहनेवाले राजकर्मचारी भारतवासियोंकी उन्नतिके पथमे बडे बड़े प्रयत्नोंसे काटे

बिछानेको लगे हुए थे। इसी कारणसे भारतवासी अंग्रेजी शासनमें आशानुरूप सुख और सौभाग्य पा नहींसके। वे उस अधिकारसे वञ्चित रहे, जो बृटिश प्रजाकी अपनी वस्तु है। नीतिके समझनेवाले दूरदर्शी पुरुषोंने यह बात बहुत पहलेसे ही जान लिया था कि भारतमें बृटिश शासनके अच्छे फलों अर्थात् शान्तिका स्थापन होना न्याययुक्त विचार जारी होना तथा ज्ञानका विस्तार होना—इन बातोंके साथही साथ बुरी नीतिवाले राजकर्मचारियोंके बुरे वर्त्तावोंसे प्रजाकी तन्दुरुस्ती बिगडेगी, उम्मद जाती रहेगी तथा चरित्रकी अवनति होने लगेगी।

The consequence of the conquest of India by British arms would be in place of raising, to debase the whole people —Sir Thomas Munro

अर्थात् बृटिश जातिके द्वारा भारतवर्षके जीतलिये जानेके फलसे सम्पूर्ण भारतवासियोंकी उन्नतिके बदले अवनति होगी।

सर टामस मनरो साहबकी यह भविष्यवाणी बहुतकुछ सच निकल पड़ी। भूतपूर्व गवर्नरजनरल सर जान शोर महोदयने कहा था,—

There is reason to conclude that the benifits are more than counterbalanced by evils inseparable from the system of a remote foreign dominion.

अर्थात् यह सिद्धान्त करनेका बड़ा भारी कारण है कि, अङ्गरेजी शासनमें भारतवासियोंके उपकारके बदले अपकारही अधिक हो रहा है। दूर बैठे शासन करनेसे ऐसा अपकार बिना हुए नहीं रह सकता है।

मिस्टर मेरिडिथ टॉनसेरण्डकी बनाई हुई Europe and Asia अर्थात् यूरोप और एशिया नामक पुस्तकमें नीचे लिखा हुवा मन्तव्य देखनेमें आता है,

It is the active classes who have to be considered, and to them our rule is not, and can not be a rule without prodigious draw backs ... . The greatest one of all, is the loss of the interestingness of life. It would be hard to explain to average Englishman how interesting Indian life must have been before our advent, how completely open was every career to the bold, the enterprising or the ambitious . ... Life was full of dramatic changes. I firmly believe that to the immense majority of the active classes of India the old time was a happy time.

प्रकारसे प्यारा होता । किन्तु दुर्भाग्यसे वैसा नहीं हुआ । भूतपूर्व गवर्नर जनरल लार्ड लिटन बहादुरने अपने एक गुप्त मन्तव्य पत्रमे लिखा था,–

"No sooner was the act passed than the Government began to devise means for practically avoiding the fulfilment of it."

अर्थात् इस कानूनके बनते न बनते (भारतवर्षीय) गवर्नमेण्ट उसके अनुसार चलनेकी दिक्कतसे बचनेका उपाय करने लगी ।

पार्लियामेण्टकी उक्त विधिकी आज्ञाके योग्य भारतवासियोंको बडेसे बडे सरकारी कामोंमें भरती करनेका अधिकार दे दियाथा । इस विषयमें लिटन महाशयने औरभी लिखाथा,– पार्लियामेण्टने भारतवासियोको जो अधिकार दियाहै उसको व्यर्थ करनेके लिये हमको कुटिल पथकी शरण लेना पडी है ।

We have had to choose between prohibiting them and cheating them, and *we have chosen the least straight forward course.*

अर्थात् खुलाखुली भारतवासियोंको सरकारी नौकरियोंपर नियुक्त करनेमें बाधा देने व उनको धोखा देनेके सिवाय हमारे लिये उन्हें रोकनेका कोई दूसरा उपाय नहीं था । इन दोनोंमेंसे हमने पिछले कुटिल उपायकोही अच्छा विचारा ।

इतना करकर लार्ड लिटन बहादुरने उदाहरण भाँति सिविलसर्विस परीक्षार्थी हिन्दुस्थानी युवाओकी अवस्था घटानेवाले नियमकी बात लिखी है । दुःख इतनाही है कि भारतीय अँगरेजी शासनके इतिहासमें इस प्रकार दृष्टान्त कम नही हैं ।

सन् १८६९ ई॰ मे ड्यूक आफ् आर्जिलने इन सब बातोको सुझानेमे कहाथा,–

We have not fulfilled our duty or the promises and engagements which we have made.

अर्थात् हमने (भारतवर्षके बारेमें अपने कर्त्तव्यका पालन नहीं किया है, हमने जिन प्रतिज्ञाओको कियाथा उनको भंग कियाहै ।)

सन् १८५८ ईसवीमें महारानीने विज्ञापनके द्वारा जो प्रतिज्ञाए कीथी और सन् १८३३ ई॰ में पार्लियामेण्टने जो आज्ञा दी थी उनका पालन न होते रहनेके विषयमें जब सन् १८८३ इसवीमें लार्ड नार्थब्रुक महाशयने अभियोग कियाथा तब भारतके पूर्व स्टेटसेक्रेटरी उसे विना कुछभी लजाये सबलोगोंके सामने यह कहकर टाल दियाथा कि इसका नाम Political hypocrisy अर्थात् राजनीतिक छल है । सन् १८७५ ई॰ में उन्ही नामी राजकर्मचारीने कहाथा,–

India must be bled अर्थात् भारतवासियोंका खून निकालनाही पडेगा ।

यों एक ओरसे पार्लियामेण्ट और वृटिश जातिके उदार पुरुष भारतवासियोकी उन्नतिका पथ साफ करनेकी आज्ञा देते जातेथे । और दूसरी ओर बहुतेरे कुटिल मनवाले तथा अनुचित शक्तिके चाहनेवाले राजकर्मचारी भारतवासियोकी उन्नतिके पथमे बड़े बड़े प्रयत्नोंसे काटे

बिछानेको लगे हुए थे । इसी कारणसे भारतवासी अंग्रेजी शासनमे आशानुरूप सुख और सौभाग्य पा नहींसके । वे उस अधिकारसे वञ्चित रहे, जो वृटिश प्रजाकी अपनी वस्तु है । नीतिके समझनेवाले दूरदर्शी पुरुषोने यह बात बहुत पहलेसे ही जान लिया था कि भारतमें वृटिश शासनके अच्छे फलो अर्थात् शान्तिका स्थापन होना न्याययुक्त विचार जारी होना तथा ज्ञानका विस्तार होना–इन बातोंके साथही साथ बुरी नीतिवाले राजकर्मचारियोंके बुरे वर्त्तावोंसे प्रजाकी तन्दुरुस्ती बिगडेगी, सम्पद जाती रहेगी तथा चरित्रकी अवनति होने लगेगी ।

The consequence of the conquest of India by British arms would be in place of raising, to debase the whole people –Sir Thomas Munro

अर्थात् वृटिश जातिके द्वारा भारतवर्षके जीतलिये जानेके फलसे सम्पूर्ण भारतवासियोंकी उन्नतिके बदले अवनति होगी ।

सर टामस मनरो साहबकी यह भविष्यवाणी बहुतकुछ सच निकल पड़ी । भूतपूर्व गवर्नरजनरल सर जान शोर महोदयने कहा था,–

There is reason to conclude that the benifits are more than counterbalanced by evils inseparable from the system of a remote foreign dominion.

अर्थात् यह सिद्धान्त करनेका बडा भारी कारण है कि, अङ्गरेजी शासनमे भारतवासियोके उपकारके बदले अपकारही अधिक हो रहा है । दूर बैठे शासन करनेसे ऐसा अपकार बिना हुए नही रह सकता है ।

मिस्टर मेरिडिथ टौनसेरण्डकी बनाई हुई Europe and Asia अर्थात् यूरोप और एशिया नामक पुस्तकमे नीचे लिखा हुवा मन्तव्य देखनेमें आता है,

It is the active clssses who have to be considered, and to them our rule is not, and can not be a rule without prodigious draw backs ... . The greatest one of all, is the loss of the interestingness of life. It would be hard to explain to average Englishman how interesting Indian life must have been before our advent, how completely open was every career to the bold, the enterprising or the ambitious ..... Life was full of dramatic changes. I firmly believe that to the immense majority of the active classes of India the old time was a happy time.

अर्थात् भारतके मेहनती मनुष्योंकी उन्नतिके विषयमें हमारा शासन बडी बडी विपदोंसे भरा हुआहै । हमारे शासनमें यह विपद टल नही सकती है । अङ्गरेजी शासनमें उनके जीवनसे रसीली घटनाओंकी विचित्रता जाती रही है यही उनकी सबसे बढकर गहरी हानि है । हमारे आनेसे पहले भारतवासियोंका जविन कैसी मन बहलानेवाली विचित्रताओंसे भरा हुआ था. साहसी, उत्साही तथा बडी बडी आशाओवाले

लोगोंके लिये हरेक विषयमें मनमानी सफलता पाना कैसा सहजथा वह आज अंगरेजोंको समझना कठिन है। भारतवासियोंका जीवन उन दिनों नाटककी भाँति बहुतेरी घटनाओंसे भरा हुआ था और नित्य नये नये परिवर्त्तनोंसे सुहावना था। मेरा पक्का विश्वास है कि भारतमें अंगरेजोके आनेसे पहले यदि सब न भी हो तो कमसे कम मेहनती भारतवासियोंमेसे अधिकांशका जीवन बडेही सुखसे कटता था।

ऐसा नहीं कि इन दिनोंमें सरकारी कर्मचारी किसी बातको समझते न हो। भारतके भूतपूर्व लार्ड ज्यार्ज हैमिल्टनने मानलिया है,—

"Our Government will never be popular in India"
"Our Government never can be popular in India"
(The Times 16-6-99)

अर्थात् हमारी गवर्नमेण्ट भारतमे लोगोंके लिये कभी प्यारी नही होगी, वह कभी प्यारी हो नहीं सकती।

भारतीय प्रजाके भाग्य विधाताके मुखसे ऐसी निर्दयी बातके सुननेसे हृदयमे बड़ा भारी डर समा जाता है।

जिन सब दोषोसे दूषित होनेके कारण अगरेजी शासननीति भारतकी प्रजामे अवनति ला रही है, उनको दूर न करनेसे अगरेजी शासन इस देशके लोगोको सुखी नहीं बना सकेगा। इसलिये अगरेजी शासनरीतिके दोप और गुण तथा उनसे उपजनेवाले भले और बुरे फलोकी बात भली भाँति विचारना चाहिये। इन सब बातोकी आलोचना विना किये दोष कदापि सुधर नही सकते।

देशकी दशा।

दुःखसे आँखे हैं भरी आती। कहते छाती है फटी जाती॥

अगरेज लोग तीन प्रकारकी लडाइयोसे भारतको जीतकर बिना बखेडा उसका शासन कर रहे हैं, जिनमेसे पहली लडाईको हम हाथावाहीं कह सकते हैं। राजनीतिके कुटिल कौशलसे तथा नये नये अस्त्र शस्त्रोकी जोरसे अगरेजोने इस देशमें जो प्रभाव जमाया है वह इसप्रकार लडाईका फल है। प्राचीन कालसे अगरेजोके आनेके समयतक इसी प्रकारका सग्रामही राज्य पानेका इस देशमे एकही उपाय गिना जाता था। देशवासियोकी भुजाओंका बल बिगडजानेसे अथवा दब जानेसेही इतने दिनोतक विजय पानेवाले प्रसन्न होते थे। इसीसे इस प्रकारकी लडाईका नाम हाथाबाही रक्खा है। इसे शरीरकी लडाई कहनेसेभी अनुचित न होगा।

अगरेजोके इस देशमें पधारनेके पीछेही भारतवासियोंको और एक नई लडाईका परिचय होने लगा। इस लडाईमें भिडाये जाकर उन्होने अपना धन बल खो दिया। पाठक समझ गये होंगे कि हम इस मिसमें वाणिज्यकी लडाईकी बात कह रहे हैं। बणिकराज अगरेजोसे

वाणिज्यकी लडाई लडते हुए हम कैसी विपदसे आ फँसे हैं सो बहुतेरो को मालूम है सौ वर्ष पहले जो भारतवर्ष अनगिनती शिल्पवस्तुओंका सबसे बढकर उपजानेवाला था, एशिया और यूरोपकी दूकानोकी कतार जिसकी शिल्पवस्तुओंसे सदैव भरी पूरी रहकर विदेशियोमे अचरज और डाह उभारती थी, उसी भारतके निवासी अब छोटेसे छोटे सुई सूत और खिलोनेसे लेकर यन्त्रों और सवारियोंकी वस्तुओं तक जीवनयात्रा और समाज यात्राके निर्वाहकी हरेक वस्तुके लिये बडेही दुखियेकी भाँति पराये मुँहकी ओर ताकनेको लाचार हुए हैं। इस देशमे अब अगरेजी शासन जम चुकाहै, भारतवासियोंकी भुजाओंका बल और अस्त्रोंका बल घटजानेके साथ साथ देशमें शांति विराजनेसे अगरेजोंकी हाथावाही अब रुक गई है, किन्तु उनकी वाणिज्यकी लडाई अभीतक नहीं रुकी है, कभी रुकेगी कि नही सो भगवान्ही जानता होगा। रेलगाडी, तार, जहाज और विनारोक ठोककी वाणिज्य नीति इस लडाईके सबसे बडे अस्त्र शस्त्र हैं। प्रबल राजशक्तिकी सहायता पाकर गोरे वणिक् इस लडाईके लडाके हैं। दुर्बल भारतवासियोंका धन लूटना और भारतके शिल्प और वाणिज्यकी जान मारना इस लडाईका सबसे बढकर लक्ष्य यह है। इस लड़ाईसें दिनपर दिन हमारे धनका बल बिगड रहा है। दुर्भिक्ष हमारे घर अहर्निश बना हुआ है। देशभक्त कविने ठीकही कहाहैः—

पर शिल्प लिया निज अन्न दिया। पर स्वर्णको ले दुरभिक्ष लिया॥

हिन्दुस्थानके दुर्भिक्षके इतिहासपर ध्यानदेनेसे भली भाँति जान पडता है कि दुर्भिक्षसे दिन दिनपर हमारा सम्बन्ध कैसा घना होता जाता है। अगरेजी इतिहासमेही ऐसा लिखा हुआ है कि बीती हुई अठारहवीं सदींमें भारतवर्षके सर्वत्रही ऐसी दशाथी कि मानो वहाँ कोई राजा नही था। उन सौ वर्षोंके बीचमे भारतपर चारसे अधिकवार दुर्भिक्षकी चढाई नही हुई थी। उसका जोरभी एकही प्रांतमें दिखाई देताथा। १९ वीं सदीमें इस देशमे अगरेजी शासनका विस्तार क्रमशः बढगयाहै। दुर्भाग्यवश उसके साथही साथ दुर्भिक्ष राक्षसभी अपनी प्रभुता फैलानेमें समर्थ हुआहै। बीती हुई सदीके पहले भागमें अर्थात् १८०१ ई० से १८२५ ई० तक सम्पूर्ण अंग्रेजी भारतके १० लाख मनुष्योंने दुर्भिक्षके मारे भूखों प्राण छोडे हैं। उसके दूसरे भागमें ५ लाख मनुष्य दुर्भिक्षके गालमे जामरे। गई सदीके तीसरे भागमें सिपाहियोंने गदर किया और अतमें सारे भारतवर्षपर अंग्रेजी शासन जम गया। तीसरे भागके उन २५ वर्षोंमें दुर्भिक्षनेभी अपना अधिकार इस देशपर और भी मजबूत करलिया। सरकारी रिपोर्टसे जान पडताहै कि सन् १८५० ई०से सन् १८७५ ई०तक अगरेजी भारतमे छः बार दुर्भिक्ष हुआ। जिससे भूखसे छटपटाकर ५० लाख भारतवासी इस लोकसे कूच करगये।

उन्नीसवीं सदीके अन्तिम भागका दुर्भिक्षवृत्तान्त इससे कही बढकर शोक उपजानेवाला है। इन अन्तिम २५ वर्षोंमें इस देशमें १८ बार दुर्भिक्षकी बडीही प्रचण्ड अग्नि जल उठी, इस महाअग्निमें प्रायः २ करोड २६० लाख महाप्राण स्वाहा होगये। इनमेंसे केवल अन्तिम दसवर्षोंमेंही १ करोड ९० लाख भारतवासी अन्नके विना हाहाकार करते हुए बडी भारी यन्त्रणासे छटपटाकर

प्राण छोड चुके। इस हृदयविदारी दुर्घटनाका वृत्तान्त कहनेमे दुर्भिक्षके मारेहुए अभागोंको पुकारकर उदारचित्तवाले विलियम् डिग्वी महाशयने गहरे खेदके साथ कहाहै,—

You have died. You have died uselessly.

अर्थात् तुम मरे। तुम व्यर्थही मरे।

सब लोग यही समझते हैं कि युद्धसे बढकर और किसी विषयमे अधिक लोग नहीं मरते। किन्तु हिन्दुस्थानी दुर्भिक्षके वृत्तान्तको पढनेसे लोगोंके इस विश्वासकी भूल सिद्ध होजाती है। डिग्वी महाशयने दिखा दिया है कि १७९३ ई०से उन्हीं सौ ईसवीतक १ सो ७ वर्षोंमे पृथ्वी भरमे जितनी लडाइयाँ हुई हैं उनसे सब मिलाकर ५० लाखसे अधिक मनुष्य नहीं मरे। किन्तु उसी समयके बीचमे एक भारतहीमें ३ करोड २५ लाख मनुष्योंने भूँखो प्राण छोडे हैं। चारेके विना जितनी गाय भैंसे आदिका महानाश होचुका है उनकी संख्याही नहीं हो सकती है. साराश यह है कि, भारतका दुर्भिक्ष सब लोगोंकी डरावनेवाली भयावनी लडाईसेभी भयानक है।

पाठक पूछ सकते हैं कि अंगरेजी वाणिज्यसे हिन्दुस्थानी दुर्भिक्षका सबन्ध क्या है? इन्द्रमहाराज जल नही बरसाते तो खेतका अनाज जल जाता हैं. दैवकोप होनेसे अकाल नही रुकसकता जो लोग ऐसा सोचते हैं उनको इस विषयका भेद मालूम नही है। इस बडे भारी देश भारतवर्षमें कभी एकही समय सर्वत्र सूखा नही होता—और कुछ न होतो गत दो हजार वर्षोंके बीचमे कभी ऐसी अनहोनी बात किसीने यहा होते नही देखी। हिन्दुस्थानके एक भागमे सूखा होनेसे भी दूसरे भागोंमे कभी अच्छी वर्षाकी कमी नही होती. अच्छी वृष्टि होनेसे भारतकी चौथाई भूमिमेही इतना अन्न उपजता है कि जिससे अकालके मारे भूखण्डवालोंका भूखोसे मरना सहज हीमे रुकसकता है। देशभरमे सर्वत्र रेल बन जानेसे एक प्रान्तका अन्न दूसरे प्रान्तमें लेजानाभी कोई बडी बात नही है। राजकर्म्मचारी लोग कहते है कि, दुर्भिक्षकी दशामे एक स्थानका अन्न थोडे समयमें लेजानेके सुभीतेके लिये ही बडा खर्च उठाकर तथा हानि सहकर रेल बनाई गई है। दुःखकी बात यह है कि इतनेपरभी भारतमे दुर्भिक्ष राक्षसका प्रभाव दिन पर दिन भारतमे बढता जाता है।

असली बात यह है कि, फसलोंकी कमी भारतके दुर्भिक्षका कारण नहीं है। पृथ्वीमें ऐसे देश अनेक हैं जहा निवासियोंकी संख्याके विचारसे अन्न उपजानेकी भूमिकी नाप बहुत थोडी है। इगलैण्डमेंही खेतीके योग्य भूमि बहुत थोडी है। वहा जितने अन्नकी उपज होती है उससे इगलैण्डके निवासी ९१ दिनोंसे अधिक पेट भरनेका अवकाश नहीं पाते। तिसपरभी वर्षके शेष २७४ दिन वे भूखों नही काटते। जर्म्मनीकी दशाभी बहुत कुछ ऐसीही है। वहांके लोगोंको यदि अपने देशके अन्नसेही जीना पडे तो वर्षमे १०२ दिन उनको खानेको न मिले। हालैण्ड अमेरिका आदि देशोमें भी समय समय पर सूखेके कारण खेतीमे विघ्न आ पडता है। तिस परभी ऐसा सुना नही जाता कि वहां कभी दुर्भिक्ष हुआ हो।

सो ऐसा विचारना ठीक नही हैं कि अन्नकी कमी होनेसेही दुर्भिक्ष होगा। दैवी विडम्बनासे अन्नकी कमी होनेकी सम्भावना होनेसेही सभ्य जातिया दूर देशोंसे अन्न मँगाकर अपनी कमी भर

लेती है। हमारे हिन्दुस्थानसेही प्रतिवर्ष साढे सोलह करोड रुपयेके गेहूं चावल आदि समुद्र पारकर विदेशोंमें वहांवालोंकी भूख बुझानेके लिये जाते हैं। यूरोपके निवासी हजारों कोश दूरसे अन्न मँगाकर सुख और आनन्दसे दिन काटते हैं और भारतकी सन्तान घरकी बगलमें हरे भरे खेतोंके रहते भी दलके दल भूखों मरते हैं।

भारतवासियोके धनका बल घट जानाही इस देशमें बार बार अकाल पडनेका प्रधान कारण है। भारतमें अन्नकी कमीसे धनकी कमी कहीं बढकरहै। अंग्रेजोके साथ बाणिज्यकी लडाई लडते लडते हम इतने धनहीन होगये हैं कि, किसी वर्ष एकाएक दैवी कोपसे यदि खेतोंमें अन्न नहीं उपजता तो हमारी दुर्दशाका पार नही रहता। देशके शिल्प और वाणिज्यके बिगडनेसे इस समय खेतीके भरोसेही सैकडे ८५ आदमियोको अपना गुजारा करना पडता है। सूखेसे खेती बिगडजाती है तो लोगोंके जीनेका कोई भी उपाय नही रहजाताहै। किसी और स्थानसे अन्न मोल लेनेके लिये जितने धनका प्रयोजन है वह बहुतेरोंसे पास नहीं है। देशवासीके पास यदि अन्न खरीदनेयोग्य धन रहता तो कठोर दुर्भिक्षके दिनोंभी हमारे देशसे लाखोमन गेहू चावल आदि विदेशोंमें क्यों चलेजाते? लोगोमें यदि चावल खरीदनेकी सामर्थ्य रहती तो दुर्भिक्षके दिनों कभी सरकारी कृपा चाहनेवालोंकी सख्या इतनी अधिक नही होती। पहले देशमें शिल्प और वाणिज्यकी अच्छी दशा रहनेसे लोगोंके धन पानेके पथ खुले हुएथे, धन पानेका उपाय बहुत था। उन दिनों किसानोकी सख्या और इससे खेतीके योग्य भूमी किसानोंके देखे अधिक थी। जिससे खेतीके कामसेभी किसानोको बहुत धन मिलताथा। इन सब कारणोंसे उनदिनों देशमें अकाल पडताभी था तो उसका फल इन दिनोंकी भाँति भयावना नहीं होता था। आजदिन अंग्रेजोंके साथ वाणिज्यकी लडाई लडकर विपदग्रस्त होते हुए लोगोंके धनका बल दिनपर दिन जितना जितना घटता जाता है उतनाही उतना दुर्भिक्षका भयानकपन क्रमशः बढता जाता है। सो भारतमे धनकी कमी दूर होनेसेही अन्नकी कमीभी नहीं रहेगी। सन् १८८० ई० में अर्लक्रोमर महाशयने सरकारी आज्ञासे भारतवासियोंकी आमदनीका पता लगाकर निश्चय किया था कि हरेक भारतवासीकी लगभग आमदनी वार्षिक केवल २७) रुपया हैं। उससमय पारसीप्रवर श्रीमान् दादाभाई नौरोजी महाशयने सिद्धकरदियाथा कि नही. भारतके अंग्रेजी राज्यमें हरेक बसनेवालेकी वार्षिक आमदनी लगभग २०) रुपयेसे अधिक नहीं है। इसके पीछे और एकबात लार्ड डफरिनकी आज्ञासे इसदेशके निवासियोंकी धनसम्बन्धी दशाका पता लगाया था। किन्तु दुःखके साथ कहना पडता है कि, लोगोंकी बारबार प्रार्थना करने पर भी उस अनुसन्धान के वृत्तान्त और फल इसदेशके किसी भी मनुष्यको जताये नहीं गये थे। कुछदिन हुए मि० डिग्बीमहाशयके प्रयत्नसे उसका कुछ अश प्रकाश हुआ है। उससे इस देशके लोगोंकी दुर्दशाका जो भयावना चित्र देखनेमें आया है, उसके पढनेसे किसी भी समझदार मनुष्यसे आँसुओंका रोकना बन नही पडता। उसे जाने दीजिये गत सन् १९०१ ई०के मार्च मासमें लार्ड कर्जन बहादूरने वक्तृता देते देते कहाथा कि गत१०वर्षोंमें दुर्भिक्ष आदिसे उपजी हुई बडी बडी हानियोंके हो जाने पर भी इन दिनों भारतके अगरेजी राज्यकी हरेक प्रजाकी वार्षिक आमदनी लगभग ३० रुपयेसे कम नहीं है. किन्तु डिग्बीमहाशयने बडे बडे प्रयत्नोंसे उनकी इसरायको

आलोचना करके समझा दिया है कि, सरकारी हिसाबमें बडी भारी भूल है। मि० डिग्बीके हिसाबसे अब भारतके अगरेजी राज्यमें हरेक भारतवासीकी वार्षिक आमदनी यदि बहुत हो तो केवल १८||–) आनेहैं।

इस आमदनीका अधिकांशही खेतीसे उपजता है. इसका प्रायः सातवाँ भाग सरकारी मालगुजारी देनेमे खर्च होजाताहै। अपनी अपनी आमदनीके हिसाबसे इगलैण्डवासियोंको हरपौण्ड आमदनी पीछे १ शिलिंग पेन्श अर्थात् १।) रुपया और भारतवासियोको उनमेसे हरेककी वार्षिक आमदनी ३०) मान लेनेपर २ शिलिंग ४ पेन्श अर्थात् १।।।) टैक्स देना पडता है। यह चाहे जो हो, मि० डिग्बीके हिसाबसे इस देशके धनी, दरिद्र बालक और वृद्ध सभोकी आमदनी टैक्सको छोडकर फीमनुष्य लगभग १५–१६) रुपयोसे अधिक नही है। सचित धनका हिसाब लगाकर उन्होने दिखाया है कि, भारतवासियोका सचित धन नगद रुपया और गहने आदि मिलाकर फी आदमी लगभग केवल १४) रुपयाहैं।

इस हिसाबके साथ शिल्प और वाणिज्यसे बढे चढे हुए पश्चिमी देशोके निवासियोंकी आमदनी को मिलाइये।

देश	वार्षिकआमदनी फी आदमी	देश	वार्षिकआमदनी फी आदमी
रूस	११ पौण्ड	जर्मनी	२२ पौण्ड
इटली	१२ "	कनाडा	२६ "
आस्ट्रिया	१५ "	फ्रास	२७ "
स्पेन	१६ "	बेलजियम	२८ "
स्वीजरलेण्ड	१९ "	अमेरिका	३९ "
नारवे	२० "	आस्ट्रेलिया	४० "
हालैण्ड	२२ "	स्काटलैण्ड	४५ "

इगलैंडके हरेक निवासीकी वार्षिक आमदनी लगभग ४२ पौण्ड और सचित धनकी आमदनी लगभग ३०० पौण्ड है। हमारे देशके १५) रुपये विलायती एक पौण्डके बराबर हैं। उक्त आमदनीके साथ मिलानेसे लार्ड कर्जन बहादुरके हिसाबके अनुसार यदि हरेक भारतवासीकी आमदनी ३०) रुपयाही मानली जावे तो वह कूडा करकटही जानपडेगी। अवश्य यह बात मान लेते हैं कि पश्चिमी देशोंकी भाँति इस देशमें जीविका निर्वाह करनेका व्यय अधिक नहीं है, किन्तु यह बातभी बिना माने रहा नहीं जाता कि, भारतवासियोंकी इस समयकी आमदनी सुखसे जीविका निर्वाह करने योग्य नही है।

सन् १८८० ई० में प्रसिद्ध इतिहास लिखनेवाले डाक्टर हण्टरने बर्निहम् शहरमे वक्तृता देते कहाथा कि भारतवर्षमें ४ करोड मनुष्य आधे भोजनसे जीवन काटते हैं। जिस समय साहबने इस बातको कहाथा उस समय हिन्दुस्थानकी मनुष्य सख्या २० करोडसेभी कमथी। बगालके पूर्व छोटे लाट सर चार्लस् एलियट बहादुरने युक्तप्रदेशके जब बन्दोबस्तके अफसर थे तब उन्होंने देशवासियोंकी दशाका पता लगाकर कहाथा,–

"I do not hesitate to say that half our agricultural population never know from year's end to end what it is to have their fully satisfied."

अर्थात् भारतके अंग्रेजी राज्यके किसानोंमेंसे आधे लोग वर्षभरमें एक दिनभी भरपेट नहीं खाने पाते। पूरी भूख बुझानेके आनन्दको लेनेका अवसर उनको कभी नही मिलता।

भारतके अगरेजी राज्यमें प्रायः २० करोड मनुष्य खेतीसे अपना निर्वाह करते हैं। सर चार्लस् एलियटकी बातसे इन २० करोड मनुष्योंमें १० करोड सदैव आधे भोजनसे गुजारा करतेहैं। एलियट महाशयने जब इस रायको जाहिर कियाथा तब इस देशमे २० करोड किसान लोग नही थे, पर इलाहाबादके आधे सरकारी समाजपत्र पायोनियरने सन् १८९३ ई० के मई महीनेमें हिन्दुस्थानी दरिद्रताके विषयमें जो बात लिखी है उससे सिद्ध होताहै कि भारतमें १० करोड प्रजा निश्चयही आधे भोजनसे दिन काटतीहै। उक्त पत्रकी बात यह है,–

Nearly one hundred millions of people in British India are living in extreme poverty

अर्थात् भारतके अंग्रेजी राज्यके प्रायः १० करोड निवासी वडी भारी दरिद्रतासे दिन गँवाते हैं।

जिन लोगोंमें ऐसी भारी दरिद्रता सतानेके लिये उपस्थित हैं उनमें आपही आप रोग आजाते हैं। भारतके अंग्रेजी राज्यमेंभी नित्य नये नये रोग दिखाई दे रहे हैं। भारतवासियोंके शरीर क्रमशः बिमारियोंके घर बनते जाते हैं। विज्ञ चिकित्सकमात्रही मानतेहैं कि प्लेग आदि महामारियां अन्नकष्ट और दरिद्रतासे उपजतीहैं। जिन देशोंमें लोगोंको स्वास्थ्य बढानेवाले भोजन और स्वास्थ्य बनाये रखनेकी दूसरी सामग्रियाँ इकट्ठी करनेमें धनकी कमी नहीं होती वहां प्लेग आदिका जोर दिखाई नही देता। कुछ काल पहले यूरोपमे बारबार प्लेग आदिका प्रभाव होता था जिससे हजारों नर नारी प्राण दे देतेथे। किन्तु शिल्प और वाणिज्यके सहारे जब पश्चिमी भूमिसे दारिद्रताका अन्त हुआ तबसे फिर वहाँ प्लेग आदिनेभी बिदा ले ली। साराश यह है कि लोगोमें धनका बल जितना बढता रहता है महामारीका प्रभाव भी उतनाही घटता रहता है।

दरिद्रताके कारण दिनपर दिन भारतमें ज्वरका प्रभावभी बढ रहाहै। सरकारी मेडिकल रिपोर्टसे जाना जाता है,–

Fever is a euphemism for insufficient food, scanty clothing and unfit dwellings

अर्थात् पुष्टभोजन और यथेष्ठ कपडोंकी कमी तथा स्वास्थ्य बिगाडने वाले स्थानमें रहनाही ज्वरके सबसे बढकर कारण हैं।

प्रतिवर्ष भारतमे कमसे कम ५ करोड मनुष्य ज्वरसे तडपते रहते हैं जिनमेंसे ५० लाख इस लोकसे कूच करजाते हैं। १० वर्षपहले ज्वरसे मरनेवालोंकी सख्या अबसे प्रायः १५ लाख कमथी। भारतवासियोंके भोजन और कपडोका दुःख कितना अधिक होरहाहै वह इस दुर्घटनासेभी सब लोग समझ सकेंगे।

धनकी कमी, भोजनकी कमी तथा बिमारियोंकी बढतीके साथ साथ भारतवासियोंकी आयुभी घट रही हैं। इगलैण्डके निवासियोंके जीवित रहनेके दिन लगभग ४० वर्ष निश्चय हो चुकेहैं।

भारतवासियोकी आयुका काल आजकल डिग्बी महाशयके हिसाबसे लगभग तेईसवर्षसे अधिक नही है। माननीय अध्यापक श्रीयुत गोपाल कृष्ण गोखलेने बडे लाटकी कौन्सिलमे वक्तृता देते समय सरकारी रिपोर्टकेसहारे दिखादियाथा कि गत २० वर्षसे भारतवासियोंकी मृत्युसख्या क्रमशः बढ रहीहै। सन् १८८५ ई० मे भारतके अगरेजी राज्यमेभी हजार लगभग २३ मनुष्य मरतेथे। आगे फी हजार २६ मरने लगे। सन् १८८९ मे २८ मरे। सन् १८९२ ई० मे ३२। सन् १८९४ मे ३५ और सन् १८९७ मे ३६।

भारतके अगरेजी राज्यमे प्रजा दिन परदिन कैसी उखड रहीहै वह नीचेके हिसाबको देखनेसे निश्चय हो जायगा,—

सन् १८७० ई० में	मनुष्यसख्या	१८५५३७८५९
सन् १८८१ ”	”	१९८७९०८५३
सन् १८९१ ”	”	२२११७२९५२
सन् १९०१ ”	”	२३१०८५१३१

इस हिसावके साथ नीचेकी बातोंको मिलाइये। इगलेण्डके युक्त राज्य और आस्ट्रेलियामे प्रतिवर्ष फी सहस्र लगभग २८ मनुष्य बढते हैं। तथा इटाली ३५ और जर्मनीमे ३६ उन देशोमें मनुष्योंके बढनेमे एक बडी भारी बाधा है। हमारे भारतमें प्रत्येक नर नारी विवाह कर गृहस्थीका आनन्द भोगते हैं। वहाँ सो बात नही है। वहाँ न सब पुरुषोंको विवाह करनेकी इच्छाहै और न सब स्त्रियोको गर्भसे रहने और बच्चोके पालनेके क्लेशको उठाना मजूर है। तिसपरभी वहाँ मनुष्यसख्याकी यह बडी भारी वृद्धि होती है। सन् १८९४ ई० में भारतकी गवर्नमेन्टने अनुमान कियाथा कि उसके राज्यकी प्रजाकी दशाके अनुसार प्रतिवर्षकी सहस्र लगभग दशसे पन्द्रह तक मनुष्य सख्या बढेगी, यह अनुमान कुछ अनुचितभी नहीथा. क्योंकि जहाँ लडाई झगडा नही है, जहाँके लोग विवाहके सुखको भोगना चाहतेहैं तथा जो देश शातिके सुखसे भरा हुआ तथा उपजाऊ भूमिसे सुहावना है वहाँ वास्तवमें भी सैकडे प्रतिवर्ष डेढके हिसाबसे मनुष्योका बढना बहुत अधिक नहीहै। इस हिसाबसे भारतके अगरेजी राज्यमें सन् १९०१ ई०में मनुष्यसख्या २८ करोड २१ लाख ६९ हजार ८८६ होनी चाहिये थी. किन्तु बास्तवमे ऐसा न होकर उक्त सन्की मर्दुमशुमारीके अनुसार भारतके अगरेजी राज्यकी उक्त हिसाबसे ५ करोड १० लाख ९४ हजार ७५४ कम हुई। सन् १८८१ ई० में जब मर्दुमशुमारी हुईथी तब ब्रह्मदेश भारतके अगरेजी राज्यमें शामिल नही हुआथा ब्रह्मदेशकी मनुष्यसंख्या ९२। सवा बानवे लाख है। इस सख्याको घटा देनेसे सन् १८९१ ई०और सन् १९०१ ई० की वृटिश भारतीय लोकसख्या औरभी कम होजायगी।

सारे भारतकी मनुष्यसंख्या गत १०वर्षोंमें सैकडे लगभग २॥ मनुष्यके हिसाबसे बढीहै। इसके पूर्वके दश वर्षोंमें अर्थात् सन् १८८१ई०से सन्१८९१ई०तक भारतके केवल अगरेजी राज्यमेंही मनुष्य सख्या सैकडे सवाग्यारह मनुष्यके हिसाबसे बढीथी। देशीराज्योमें मनुष्योंकी वृद्धि इससे कही अधिक हुईथी। बंगालमें मनुष्य सख्याकी वृद्धिभी गत तीसवर्षोंमे बहुत घटगई है। इससमयके बीचमें वृद्धि यों हुई है,—पहले दसवर्षोंमें फी सैकडे साढेग्यारह मनुष्य, दूसरे दसवर्षोंमें फी सैकडे सवा-

सात मनुष्य और तीसरे दसवर्षोंमे फी सैकडे पांचही मनुष्य अर्थात् बगालमें तीस वर्षोंमे वृद्धि आधी होगई है ।

केवल मनुष्यही दिन पर दिन भारतमे नहीं घट रहेहै, पलुवे चौपायोकी सख्याभी क्रमशः घट रही है । आस्ट्रेलियामे मनुष्योंकी सख्या केवल ४० लाखही है, किन्तु वहा पलुवे चौपायोकी सख्या ११ करोड ३५॥ लाखसेभी अधिक है । इस हिसाबके अनुसार भारतवर्षकी भाँति बडी भारी खेती और बडी भारी मनुष्य सख्याके देशमें पलुवे चौपायोकी सख्या २६ हजार २८० करोड होनी चाहिये थी । किन्तु भारतके सम्पूर्ण अग्रेजी राज्यमे अब गौ, भेड, भैंसे, घोडे, खच्चर, बकरे आदि सब मिलाकर १० करोड पलुवे पशुओंसे अधिक विद्यमान नही हैं । गत दसवर्षकी सरकारी रिपोर्टके देखनेसे स्पष्ट होजाताहै कि भारतमे पलुवे और खेतीके योग्य पशु क्रमशः घटते जातेहै । धनकी कमीसे जैसे जैसे खेती करने योग्य पशु घट रहेहैं वैसेही वैसे जोतने योग्य भूमि घट रहीहै, तथा उसकी उन्नतिभी कम होरही है । भारतके अगरेजी राज्यमें गेहू, ईख, कपास, पटसन, नील और सरसोंकी खेती गत दसवर्षोंसे घट रहीहै । सन् १८९१ ई० से ईखकी खेती घट रही है । सन् १८९३ ई० से कपास और सरसोकी खेती घट रहीहै । आज कल हिन्दुस्थानसे जितनी रुई प्रति वर्ष विदेशोंमें जातीहै उसके पांचमेंसे चारभाग देशीय राज्योंमें उपजती है । सन् १८९०। ९१ ई० मे भारतके अंग्रेजी राज्यमें सब मिलाकर ५८३ करोड २३ लाख ९० हजार बीघा भूमि जोती गईथी । सन् १८९९ ई० मे जुती हुई भूमि ५९९ करोड ४६ लाख ६१ हजार थी, इसमेंसे ब्रह्मदेश, सिंध, आसाम, कुरग आदि देशोंमें १ करोड ६० लाख २० हजार बीघा नई भूमिमे खेती हुई । इस नई भूमिको छोडनेसे भारतके अगरेजी राज्यके पुराने प्रान्तोंमें गत दशवर्षोंमे ९७ लाख ८० हजार बीघा जमीन घट गईहै । अर्थात् उतनी भूमि खेतीके अयोग्य होगईहै । उस बातको माननीय अध्यापक गोखलेने सिद्ध करदियाहै ।

मि० डिग्बी कहते हैं कि सन् १८८२ ई० के पीछे भारतके अगरेजी राज्यमें ४ करोड ८० लाख बीघा जमीन बढीहै । तिसपरभी भारतकी खेतीकी आमदनी बीस वर्ष पहलेकी आमदनीसे इससमय ६४ करोड ११ लाख ६५ हजार ४३८ रुपया घट गईहै । लोगोंमे यदि पहलेकी भाँति धनका बल रहता, यदि प्रति वर्ष खोद डालकर जमीनको उपजाये बनाये रखनेकी सामर्थ्य रखते तो खेतीके योग्य भूमि यो बिगडकर कामके बाहर नहीं होजाती ।

सन् १८९४ ई०मे मि०सेमूयल स्मिथने विलायतकी पार्लियामेण्ट महासभामे वक्तृता करते २ कहाथा,—हिन्दुस्थानकी आमदनीपर लगेहुए टिक्सकी फेहरिस्तको देखनेसे जानपडताहै कि वहाँ हरसात मनुष्योंमें केवल एकहीकी आमदनी वर्षमें ५००) रुपया है । स्मिथ महाशयको यदि मालूम रहता कि इस देशमे महसूल लगानेवाले एसेसर लोग सरकारकी आमदनी बढाकर अपना पाया बढा लेनेके लिये कितनेही थोडी आमदनी वालेसेभी अनुचित रीतिपर आमदनी महसूल वसूल करनेका प्रयत्न करतेहैं । इस बातको जाननेसे वे कहतेहैं कि भारतवर्षके हर हजार मनुष्योमे केवल एकहीकी आमदनी वार्षिक ५००) रुपया है एक इसी बातसे निश्चय होजायगा कि भारतमें धनियोकी सख्या कितनी कमहै ।

भारतवासियोकी बढती हुई दरिद्रताको समझनेके लिये पार्लियामेण्टके एक सभासद मि० जे. सेमूल महाशयके सग्रह किये हुए एक हिसाब पर ध्यान देना पडता है। सन् १८८४ ई० मे मि० सेमूलने भारतवर्षके धनियोकी सख्या यो दिखाई थी:–

संख्या	पाया	वार्षिक आमदनी
१००००)	राजा–महाराजा जमींदार आदि	५००००)
७५०००)	व्यौपारी महाजन आदि	१००००)
७५००००)	दूकानदार आदि	१०००)

इन ८ लाख ३५ हजार मनुष्योंकी कुल आमदनी २ सौ करोड रुपया है।

इन सब धनवान मनुष्योमेसे अधिक लोग देशी राज्यो के निवासी हैं। २०० राजा जमीदार ओर महाजन भारतके बृटिश राज्यमे बसते हैं। उनकी वार्षिक आमदनी के विषयमे डिग्बी महाशयने दिखाया है कि, हरेककी लगभग केवल १८) रुपया ९ आना है। इसमेंसे बडे आदमियोकी (अर्थात् जिनकी आमदनी वार्षिक एक हजार रुपया हैं) आमदनीको छोड़देनेसे भारतकी साधारण प्रजाकी आमदनी मनुष्यपीछे १८ रुपया ९ आनेसे बहुत कम होगी इस बातको किसीके समझनेमे कठिनाई नही होगी।

इस मिसमे टिक्सकी बातको कुछ खुलासेमे विचारना चाहिये। इसके पहले कहा गयाहै कि हरेक भारतवासीको लगभग २ रुपया ७ आना प्रतिवर्ष टिक्स देना पडताहै। यह अवश्यही सरकारकी ओरकी बातहे, किन्तु इस २ रुपये ७ आनेमे कई छोटे मोटे टिक्सोका हिसाब नहीं जोडा गयाहै। गत नवम्बर महीनेमे विलायतमे वक्तृता देतेसमय श्रीमान् रमेशचन्द्र-दत्तने समझा दियाथा कि भारतके अंगरेजी राज्यमे हरेक मनुष्यको प्रतिवर्ष सब मिलाकर साढ़ेतीन रुपया टिक्स देना पडताहै। इगलेण्डमें इतनीही आमदनीके लोगोंसे एक रुपया बाराआनेसे अधिक टिक्स नहीं लिया जाता। इतनी थोडी आमदनी रखनेवालोको यदि इतना अधिक टिक्स देनापडे तो आपही आप हरेक देशकी प्रजापर अन्नकष्ट आजाताहै।

आसामके पूर्व चीफ कामिश्नर काटन साहबने अपनी न्यूइंडिया नामक पुस्तकमे लिखाहै,–

The resources of India will vie with those of America itself The dimensions of Indian trade are already enormous and yet *no country is more poor* than this.

अर्थात् भारतकी खानि बन और खेतीसे उपजीहुई सम्पत्ति अमेरिकासेभी अधिकहै। यहॉका वाणिज्यभी बहुतहै। तिसपरभी भारतसे बढकर दरिद्रदेश पृथ्वीमें दूसरा नहीहै।

भारतभूमिके रत्नोसे भरी पूरी होनेपरभी उसकी सतानको क्यों गहरी दरिद्रता झेलनी पडतीहै। उसे समझानेमें डिग्बीसाहबने कहाहै,–

Because among other things we have destroyed native industries, and, besides, have taken from India since 1834-35 (according to a calculation made by that sane and moderate (Journel, *Economist* two years ago in 1898)

MORE THAN TEN THOUSAND MILLIONS OF RUPEES.

India, on the other hand, has entirely lost her much more than ten thousand millions, this, with interest, and if circulated in the ordinary way among her people, at 5 P. C interest value only, would, by this time, have been of the value at least of

FIFTY THOUSAND MILLIONS OF RUPEES.

अर्थात् भारतवासियोंको दरिद्रताके और और कारणोमें दो बहुत बडे हैं। जिनमेंसे पहला हिन्दुस्थानी शिल्पका बिगडना और दूसरा धनका निकाला जानाहै। हम अंग्रेजोने भारतके शिल्पकी जड काटीहै और (सन् १८३४–३५ ई० से सन् १८९८ ई० तक इकॉनमिक पत्रके हिसाबसे) एक हजार करोड रुपये भारतवासियोंसे निकाल लिये हैं। ये हजार करोड रुपये यदि भारतमेंही रहते तो वार्षिक सैकडे ५) रुपये सूदपर हिन्दुस्थानी कारीगर और किसानोंको उधार दिये जासकते जिससे अबतक वे रुपये सूदसहित कमसे कम पचास हजार करोड बनजाते।

इसके उपरान्त इसदेशमे विलायती महाजनोंके कितनेही सैकडो करोड रुपये लगे हुए हैं, जिसके सूद और नफेके हिस्सेके इतने रुपये परदेश जा चुके हैं कि पता लगाना कठिन है। प्लासीकी लडाईके पीछे सन् १८६४ ई० तक विलायतमे प्रायः एक हजार करोड रुपये भेजे जा चुके हैं। आजकल इस देशसे इतने रुपये विदेश चले जा रहेहैं कि हिसाब लगानेसे बुद्धि ठिकाने पहुँच जातीहै। इस विषयका भेद जाननेवाले लोग कहा करते हैं कि मालगुजारी और विलायती महाजनोका नफा दोनो मिलाकर इस देशसे प्रतिवर्ष पाचसौ करोड रुपये विदेश निकल जातेहैं। जिस देशसे प्रतिवर्ष इस प्रकार सैकडों धाराओंमें पानीकी तरह रुपये निकलते चले जातेहैं उस देशके दश करोड मनुष्योका आधा पेट काटकर जीवित रहनेमे लाचार होना आश्चर्यही क्या अथवा उस देशके लोगोंपर सदैव अकाल क्यो नहीं पडा रहेगा! अध्यापक सिलीने अपने एक्सपैन्शन आफ इगलेण्ड नामक पुस्तकमें भारतके दरिद्र लोगोंकी दुर्दशाको देखकर लिखा है–

Their susceptibilities dulled and their very wishes crushed out by want.

अर्थात् उनके समझनेकी शक्ति कमजोर हो गईहै और उनकी इच्छाओंतक अभावोंकी सख्तीसे पिसगई! श्रीमान् लालमोहन घोषने कांग्रेसके गत उन्नीसवे अधिवेशनमे कहाथा कि–मुगल और मरहट्टोंके गिरनेके दिनो इस देशके लाखो मनुष्य भीतरी लडाइयोसे और प्रबल राजशक्तिके स्थिर न होनेके कारण भांति भातिके झगडोसे मरजाते थे और अब लाखों मनुष्य भूखो मर रहे हैं। वास्तवमे साधारण लोगोंके लिये उन दिनो और इन दिनोंमे कुछ भी भेद सघटित नही हुआ है उनकी बातको सुनिये–

We cannot forget that there is another side of the balance sheet. After all it makes but little difference whether millions of lives are lost on account of war and anarchy or whether the same result is brought about by famine and starvation.

मनकी अधोगति।

नीति शास्त्रके जाननेवालोंने कहा है,–

बुभुक्षितः किं न करोति पापम् । क्षीणा जना निष्करुणा भवन्ति ॥

भारतके अंगरेजी राज्यकी प्रजा दिन पर दिन जैसे भुक्कड बनते जाते हैं, वाहियात भोजन खाते और हदसे ज्यादा मेहनत करते हुए क्रमशः जैसे कमजोर होते और बुद्धिको बिसारते जाते हैं उससे उनकी धर्म्मनीतिकी उन्नति होते रहनेकी कोई आशाकरनी मानो पागलपन है, पर तौभी इतना बडे भारी सुखका विषय है कि पूर्व कालके ऋषियोंके अपार पुण्यके बलसे अब भी भारत वासियोमे इतना सात्विकी भाव दिखाई देताहै जो पृथ्वीके किसीभी देशके निवासियोमे दिखाई नही देता है ।

पश्चिमी देशवासियोंके अपराधोके साथ मिलानेसे जान पडताहै कि भारत वासियोंके अपराध बहुत थोडे होते हैं, फिर इस देशके अपराध पश्चिमी देशोके अपराधोकी भाति पिशाचोके जैसे भयावने नहीं होते । धनी देश इगलैण्डमे चोरीके अपराध भारतवर्षको चोरीके अपराधोसे पचगुने होते है । नरहत्या आदि भयावने अपराधोपर कालेपानीकी सजा पाकर जो लोग अण्डामन टापूमे भेजे जाते हैं उनकेभी मुखोंकी शोभाको देखकर आश्चर्य्य मानते हुए नामी चार्लस डारवीन साहबने कहा था कि उनके मुखोपर मानसिक बडाईकी शोभा दिखाई देती है । (Such noble looking persons) उन्होंने और भी लिखा है,–

These men are quiet and well conducted, from their outward conduct, their *cleanliness* and faithful observance of their strange religious rites it is impossible to look at them with the same eyes as on our wretched convicts,–Voyage Round the world P P 484.

जिस देशके निकाले हुए कैदियोंमेभी ऐसी अच्छी नीति दिखाई दे उस देशके लोगोंमे नीतिका ज्ञान और चरित्रका बल कितना अधिक है सो सहजहीमे अनुमान किया जा सकता है । (१) वास्तवमें स्वभावहीसे धार्म्मिक भारतवासी यदि भूख और कमजोरीसे पार पाजावेगे तो उनमें चरित्रका बल निस्सन्देह बहुत अधिक बढेगा ।

---

(१) दुःखकी बात यह है कि आजकलके बहुतेरे लोग इस बातको मानना नहीं चाहते नेशनल कांग्रेसके दशवे अधिवेशनके सभापति मिष्टर वेब महाशयके आग्रहसे सग्रह कीहुई और बम्बईके श्रीमान् हरिश्चन्द्र आनन्दरावके प्रयत्नसे प्रकाश की हुई The People of India नामक पुस्तकमे भारतवासियोंके नीतिके ज्ञान और चरित्रके बलपर प्रायः ७५ अलग अलग सम्प्रदायोंके नामी नामी युरोपीयनोंकी राय उठाई गई है । उसके सातवे पृष्ठसे यहा तीन् राय उठायी जाती हैं,–

Their whole social system postulates an exceptional integrity, *W C Benett.* I find among my acquaintances who have long resided.

दरिद्रता बहुतेरी अनर्थोंकी उपजानेवाली है। दरिद्रताकी दशामे मनुष्यके मनकी वृत्तियाँ ओछी होजाती है समाजमे मिल जुलकर एक शक्तिकी दशामें रहना भूल जाते हैं। वीरताके घटजानेसे मनमे ईर्षा बढती रहती है। भोजनका दुःख अधिक आपडनेसे ओछाई, झूठ, ठगाई आदि दोष बढजाते हैं। बुद्धिकी वृत्तियॉ अच्छी खिलने नही पातीं सो विज्ञानशास्त्र सम्बन्धी तथा दर्शनशास्त्रसम्बन्धी तत्वोंका निकालना बन नहीं पडता, अध्यापक हैसलीप्लिट रोमानेस आदि पश्चिमी देशोंके बडे २ विद्वानोंने ऐसीही सम्मति दी है। बडे भारी विज्ञ श्रीमान् दादाभाई नवरोजीने अपने Moral Poverty of India नामक प्रसिद्ध लेखमे कहाहै,–

For the same cause of the deplorable drain besides the material exhaustion of India the *moral loss* to her is no less sad and lamentable. With material wealth go also the wisdom and experience of the country.

इसका भावार्थ यह है कि अगरेजोंकी धन लूटनेकी नीतिके लिये भारतवर्षकी केवल धनही लूटनही गई है धन लूटजानेसे अतमे देशवासीकी अच्छी नीतिकी जो हानि हुई है वहभी कोई ऐसे वैसे दुःखकी बात नहीं है। हरेक देशमे जबकभी धन जाता रहताहै तब साथही देशवासियोंका ज्ञान और दूरदर्शिता चली जातीहै।

और एकलेखमें उन्होंने कहाहै,–

All the talent and nobility of the intellect and soul which Nature gives to every country is to India a *lost treasure*. There is thus a triple evil- loss of wealth, wisdom and work to India under the present system of administration

अर्थात् प्रकृति सब देशोंके लोगोंको आपही आप जो बुद्धि और मनकी बडाई देदेती है वह भारतवासियोंके लिये किसी और के हाथमें धन रहनेकी भाँति होगई है। आजकलके सरकारी शासननीतिकी बुराईके लिये भारतके धनका बल ज्ञानका बल और कार्यकी योग्य यह तीनों प्रकारकी शक्तियाँ साथही जाती रहती हैं।

बूढे नवरोजीकी इन खेदभरी बातोंके पढनेसे कौन कहेगा कि सर टमसमनरोकी भविष्यत् वाणी (चौदहवॉ पृष्ठ देखिये) नहीं फलीहै। अगरेजलोग यदि मुगलोंकी भाँति भारतवर्षको अपने रहनेका देश बना लेते तो भारतवासियोको इस प्रकार वाणिज्यकी लडाईमें भिडाकर अपना

–in India that after travelling over Europe they have reason to think more highly of the natives of india every day *General J. briggs* I should say that the *morality* among the higher classes of the Hindus was of a high Standard and among the middling and lower classes remarkably so, there is less of immorality than you would see in many countries in Europe -*Sir G. b. clerk G C S I*

उस पुस्तककी और और रायें भी इनसे भारतवासियोकी कम प्रशसा सूचक नही हैं।

सब मालमता खोने नहीं पाता । यदि भारतवर्षमे अगरेजोंका शासन सज्जनताके अनुकूल होता तो उसे लोग बहुतही अधिक चाहते ।

धनका बल, बुद्धिका बल और कार्य्य करनेकी योग्यता बिगड जाने अग्रेजी भारतीय राज्यकी प्रजा ऐसी भयावनी दशामे आगयी है कि देशीय राज्योंकी प्रजा उनसे बहुतेरी दशाओमे अच्छी हालतमे हैं । मि० डिगबी कहते हैं:—

The feudatory states are greedy absorbers of the precious metals. The people in them are more prosperous than are the people of British provinces.

अर्थात् देशीय राज्योकी प्रजा विदेशोसे आनेवाले हीरे आदिके बडे भारी खरीद दार हैं । वह अंगरेजी भारतीय राज्यकी प्रजासे कही अच्छी दशामे रहतीहै ।

मि०दादाभाई नौरोजी भारतके भिन्न देशी रजवाडोमे अनेक दिनोतक रहकर जो जानकारी प्राप्त कर चुकेहैं वह साधारण नही है । उन्होने भी डिगबी महाशयकी उस बातका समर्थन किया है । वे कहते हैं कि वाणिज्यमे बहुत बढी चढी हुई बम्बई नगरीमे करोडो रुपयेका वाणिज्य होताहै । किन्तु इस वाणिज्यमें देशियोकी पूजी १० करोड रुपयेसे अधिक नही है । इस दश करोड रुपयेका अधिक भाग देशीय राज्योकी प्रजाका है । अगरेजी भारतीय राज्यकी प्रजाके धनकी दशा ऐसी है कि उससे वाणिज्यके लिये पूजी सग्रह करना सम्भव नही है ।

देशी राज्योकी प्रजाकी दशाके सम्बन्धमे इगलैण्डकी ईष्ट इण्डिया ऐसोसियेशन्मे वक्तृता करते समय डाक्टर लिटनरने कहाथा:—

The joyous laughter of freemen you hear in the Native states- you do not hear it in our territory. I am very sorry to say so but the truth is this- that our greater or more foreign civilization is of a crushing kind In a native state a man feels he has his own Raja, there is something to look to, men may rise not only in their own states but there are also openings in them for natives of every part of India.

अर्थात् देशीय राज्योंकी स्वाधीन प्रजाके मुखसे आनन्द उछालनेवाली जैसी मधुर हँसी निकलती है वह हमारे शानी अगरेजोंके भारतीय राज्यमें कभी सुननेमें नही आती. बडेही दुःखसे मुझे यह बात कहनी पडती है, किन्तु सत्य बात तो कहनी ही पडेगी । असली बात यह है कि, हमारी बडी भारी तथा निरी विदेशी सभ्यता भारत वासियोका सर्वनाश कर रही है । देशीय राज्यकी प्रजा इस बातका गौरव रखती है कि उसका अपना राजा है और वहां उनमें आशा उभारनेको कुछ है । अवश्य यह बात नहीं है कि मनुष्य केवल अपने ही राज्यमे उन्नति कर सकता है,— देशीय राज्योंमें भारतवर्षके अन्य प्रान्तोके लोगोंके लिये भी उन्नतिका पथ खुला हुआ है ।

पच्छिमी सभ्यताके धौले उजालेसे भरे हुए अगरेजी भारत राज्यमे काली प्रजाके लिये उन्नति का पथ देशी राज्यकी भांति खुला हुआ नही है देशीय शिल्प और वाणिज्य की उन्नति करना तो

अलग रहा विदेशी राजकर्मचारियोंने सोच समझकर मालगुजारीके सबन्धमें भी ऐसी कडा कडा की है कि, जिससे खेतीसे मिलनेवाले धनके द्वारा लोगोंकी दशा सुधरकर उन्नति न हो सके स्वार्थसे भरी हुई व्यवस्थाका समर्थन करनेके लिये भांति भातिकी कल्पित युक्तियोंको दिखाकर मन्द्राजकी रेविन्यू बोर्डके एक पूर्व प्रवीण सभासदने अन्तमें स्पष्ट बातोंमें कबूल किया है कि,–

The quality of condition in respect of wealth in land ; this general distribution of the soil among a yeomanry therefore, if it be not most adapted to agricultural improvement, is best adapted to attain improvement in the state of property, manners, and institutions, which prevail in India; and it will be found still more adapted to the situation of the country, governed by a few strangers, where *pride, high ideas, and ambitious thoughts must be stifled.* It is very proper that in England a good share of the produce of the earth should be appropriated to support certain families in affluence to produce senators, sages and heroes for the service and defence of the state or in other words, that great part of the rent should go to an opulent nobility and gentry who are to serve their country in parliament, in the army and navy, in the department of science and liberal professions The leisure independence and high ideas which the enjoyment of this rent affords has enabled them to raise, Britain to the pinnacle of glory. Long may they enjoy it:–but in India, that haughty spirit, independence and deep thought which the possession of great wealth sometimes gives, ought to be suppressed They are directly adverse to our power and interest . ..We do not want generals, states men, and legislators, we want industrious husband-men.

Considering politically, therefore, the general distribution of land among a number of small proprietors, who cannot easily combine against government, is an object of importance

If the ryot is put on such a footing, that their lands are saleable, and they ought to pay whether they cultivate or no , the revenue will be secure, Fifth Report of select committee of Parliament on the affairs of the E I Co. P P 990-91 Appdx.

लार्ड बेण्टिङ्क जिस समय मन्द्राजके गवर्नर थे तब वहाकी बोर्ड आफ रेविन्यूके सभासद मि० थैकरेने जमीनके बन्दोबस्तकी व्यवस्था निश्चय करनेमें जमीन्दारी बन्दोबस्तकी रीतिके विरुद्ध उक्त बातें कही थी। गवर्नमेण्ट और किसान इन दोनोंके मध्यस्थित प्रभावी मनुष्य मडली को मिटा देनेके प्रयोजनको सिद्ध करनेके लिये उन्होंने उक्त युक्तियें दिखाई थी उनकी गतोक्त सम्मार्थ यों है–देशकी आम किसानोंको सब जमीन बाट देनेका प्रबन्ध करनेसे खेतीकी विशेष

उन्नति होनेका सुभीता चाहे न हो कि, भारतकी वर्त्तमान दशा और रीतिके योग्य उन्नति बहुत कुछ होगी जब कि, थोडेसे विदेशियोंकी बडाई साबित रखनेके लिये इस देशके लोगोंकी आत्समर्य्यादा उच्च भाव और यश पानेकी कामनाको ताडटनेका बडा भारी प्रयोजन जँच रहा है तब जमीनके विषयमें उक्त प्रकारका बन्दोवस्त करना ही ठीक है इगलण्डकी भांति देशमें राज्यकी रक्षा और सेवाके लिये ऐसा प्रबन्ध होना चाहिये कि, राजनीतिज्ञ युद्धकुशल तथा सुपण्डित विद्वान जन बढे और इसी उद्देश्यको सिद्ध करनेके लिये वहांके इज्जतदार परिवारोंको भूमिसे मिलनेवाली सम्पदाका अधिक भाग देनेका प्रबन्ध करना सर्वथा उचित है। इन धनी और अच्छे घरके लोगोंको जब पार्लिमेण्ट महासभामें तथा स्थलसना और जलसेनाकी अफसरीमें रहकर अथवा सज्जनकी भांति जीविका पातेहुए विज्ञानकी चर्चामें नियुक्त रहकर देशकी सेवा करनी होगी तब भूमिकी पैदावारका बहुत अधिक अंश उनको देनेकी व्यवस्था करनी चाहिये। इस प्रकार भूमिकी पैदावारका बडा भारी भाग पाते हुए खाने पीनेकी चिन्तासे बचे रहकर वे जैसे स्वाधीन चित्तवाले होगये हैं तथा जैसी बडी बडी बातोंको सोचने लगे हैं उसीसे अगरेजोंकी जाति आज दिन गौरवके उच्च शिखरपर चढनेको समर्थ हुई है यही प्रार्थना है कि, अगरेजोंकी जाति सदैव ऐसे ही गौरवके शीर्ष स्थान पर बनी रहे। किन्तु भारतवर्षके लिये ऐसा प्रबन्ध होना कभी ठीक नहीं है। सम्पद और खुशहालीसे मनुष्योंके चित्तमें जैसी घनी तेजी स्वतन्त्रता और बडी बडी बातोंके सोचनेकी शक्ति आजाती है उसे भारतवर्षके लोगोंमे नही आने देना चाहिये। भारतवासियोंमें वैसे गुणोंके आने देनेसे हमारी प्रभुता बिगड जायगी तथा हमारे स्वार्थमे चोट लगेगी। हम नही चाहते कि, भारतवासियोंमें विज्ञ राजनीतिक तथा विज्ञ व्यवस्थापक कोई होने पावे हम केवल यही चाहते है कि, भारतवर्ष मेहनती किसान बन जावे।

जमीनके छोटे छोटे टुकडोंके रखनेवाले किसान एकाएक गवर्नमेण्टके विरुद्ध इकट्ठे नहीं होसकते। इस लिये किसीको जमीन्दार बनने न देकर सम्पूर्ण भारतवासियोंमें जमीनके छोटे छोटे टुकडोंको बाँट देनाही अच्छी राजनीति है इससे नियमित रूपसे मालगुजारी वसूल करनेमें कुछ कठिनाई तो होगी किन्तु मालगुजारी ज्यो ही बाकी पडेगी त्यो ही जमीन बेच ली जायगी किसान खेतको जोते वा नहीं उसे मालगुजारी देनी ही पडेगी—ऐसा नियम करनेसे मालगुजारी बाकी पडनेका भयभी नही रहेगा।

उन्नीसवी सदीके आरम्भमे मि० थैकारेने जैसी स्पष्ट बातोंमे अपने चित्तको उघारा था वैसा करना इस बीसवीं सदीके आरम्भमें किसी भी राजकर्मचारीके लिये सम्भव नही है किन्तु इससे यह बात भी कही नही जा सकती है कि, राजकर्म्मचारियोंमेंसे बहुतेरोंके हृदयमे अब तक भी वैसी ही इच्छा नहीं बनीहुई है सन् १८८१ई०मे पश्चिमोत्तर प्रदेश की सीतापुर कमिश्नरीके कायम मुकाम कमिश्नर मि० एच० एस० बायने इङ्गित किया था,—

For some reason it is not desired for the present that the standard of comfort should be very materially raised

अर्थात् किसी विशेष कारणसे इस समय प्रजामे सुख और खुशहालीको बढते देना ठीक नहीं है।

मि० डिगवी कहते हैं कि, भारतके प्रत्येक वडे लाट, लाट, छोटे लाट चीफ कमिश्नर तथा उनके मातहत कर्मचारी लोग जिस प्रकारसे कार्य्य करते हैं उससे निश्चय होता है कि वे मि० थैकारेकी कुटिल नीतिका अनुसरण करते है। उनके कार्य्यका फल यही हुआ है कि, भारतवासियोमें आज कल सामाजिक मानसिक तथा जातीय अवनति आगई है । उन्होंने और भी कहा है कि, मि० थैकारे और उनके अनुयायी राजकर्मचारियोंके इस देशके निवासियोंको निरे किसान बना देनेका प्रयत्न करते रहनेसे ही अगरेजोंके भारत राज्यवासियोको युद्धकुशल सेनापति, विज्ञ राजनीतिक विज्ञ व्यवस्थापक आदि बननेका अवकाश नही मिला है । नही तो मुगलोंके राज्यकालमे जिस समाजमे धुरन्धर राजकार्य्य कुशल पुरुषरत्न जन्मे थे उस समाजमें अगरेजी अमल्दारीके समय प्रायः जो हुक्मकी लकीरके फकीरोको छोडकर अच्छे लोग क्यो पैदा हो रहे हैं? अङ्गरेजी अमल्दारीमे सर सालार जङ्ग, सर टी माधवराव, सर दिनकर राव, सर के० शेषाद्रि अय्यर जम्बूके दीवान कृपाराम, अलवरके पण्डित मनफल, कोटाके फैज अली खा, कोल्हापुरके माधवराव बारवी आदिसरीखे पेंचीली राजनीतिके धुरन्धर पुरुष भी क्यों देखनमे नहीं आते? देशी रजवाडोंके न रहनेसे उन पुरुषरत्नोंको कदाचित् कभी देखनेका अवकाश नही मिलता। यदि ये लोग भी अगरेजी राज्यकी प्रजा होते तो कदाचित् उनको हदसे हद डिप्टी, मैजिस्ट्रेट बनकर जीवनको काटना पडता ।

आज कलके राजकर्मचारी लोग कहा करते हैं कि, हम हिन्दुस्थानके निवासी राजकार्य्यके अयोग्य उच्च ज्ञान लाभ करनेके अयोग्य तथा तोतेकी भांति रटनेकी पण्डिताई छांटनेवाले किन्तु पचास वर्ष पहले हमारी योग्यताके विषयमें पार्लिमेण्ट द्वारा गढी हुई अनुसन्धान कमिटीके सामने इजहार देते समय मि० राबर्ट रिकार्डसने कहाथा,—

The improvements introduced by Europeans are limited in comparison with what might be the case if the natives of India were sufficiently encouraged, but in their state of extreme poverty and almost slavery, it is not reasonable to expect that any great improvement can flow from them One of the greatest improvements, however, of which the mind of man is susceptible, has been made by Natives from their own exclusive exertions. The acquirements of knowledge, and particularly of the English language, and English literature.... ...is quite astonishing. It may even be questioned whether so great a progress in the attainment of knowledge has ever been made under like circumstances in any of the countries of Europe. (2n. 2807).

अर्थात् भारतवासियोंको अपने देशकी उन्नति करनेका पूरा अवसर तथा उत्साह देनेसे भारत वर्षकी जो उन्नति होती उसके देखे भारतमे अगरेजोके द्वारा कीहुई ज्ञान और विज्ञानकी उन्नति कुछ भी नहीं है। भारतवासियोकी वर्त्तमान दरिद्र और गुलामीकी भाति दशामें उनसे किसी भी प्रकारकी वडी उन्नतिकी आशा नही की जा सकती है। मनुष्य अपनी बुद्धिसे जितनी उन्नतिया कर सकता उनमेसे एक उन्नति भारत वासियोंने केवल अपनेही प्रयत्नसे करली है। ज्ञानका

बंगाल और बम्बईके विद्यार्थियोंके पढनेजाने की राह बन्द कर दी गई है यह सब देखने सुननेसे मिष्टर थैकारेकी बात (२३ पृष्ठमें) और लार्ड लिटनकी बात (६ पृष्ठमें) बार बार भारतवासियोंके मनमें आवे तो विचित्र नहीं ।

नीचेके हिसाबको देखनेसे मालूम हो जायगा कि, भारतवर्षके अंग्रेजी राज्यकी प्रजा अपनी होशयारी दिखानेका कितना मौका पाती हैं ।

महकमा	वेतन	विदेशी	देशी
सर्वे (पैमाईश)	३००) से २२०० तक	१३०	२
	१६०) से ३०० तक	३५	१०
सरकारी तार	५००)	५१	१
इण्डो	५००) से अधिक	१३	—
टँकसाल	५००)	६	—
डाक	५००) से अधिक	९	१
जिओलोजी सर्वे	५००)	१८	२
विदेशी राज्य	५००)	११९	३
मालगुजारी	५००)	४५	१४
और और कई	५००)	२२	—

ऊपरके हिसाबसे मालूम हो जाता है कि, इण्डिया गवर्नमेण्टकी मातहतमें बडी तनख्वाहोंकी जो नौकरियां हैं वे गोरे कर्म्मचारियोंको कैसी कसरतसे मिली हुई हैं इनके उपरान्त प्रान्तीय गवर्नमेण्टकी मातहतके सब महकमोंमे बडी बडी नौकरियोंपर विदेशियोंकी सख्याही अधिक पाई जाती है ।

गत सन् १८९८ ई० मे हिन्दुस्थानके एक मुल्की काममेंही सब मिलाकर ८००० विदेशी गोरे बडी बडीं वेतनोंकी नौकरियों पर विराजमान थे । उनको वार्षिक ८ करोड रुपये दिये जाते थे । इस समय उनकी सख्या और वेतन उससे कहीं अधिक होगई है । जगी महकमोंका खर्च इससे अलग है ।

इसप्रकार बर्त्तावसे एक ओर तो देशका अपारिमित धन विदेशियोंके हाथमे चला जाता है (१) और दूसरी ओर देशवासियोंके लिये बुद्धिका विकास करने तथा उन्नति लाभ कर विज्ञ होनेकी राह रुक रही है और साथही साथ काम करनेका उत्साह भी घटता जाताहै । एकही दृष्टान्तसे निश्चय हो जायगा कि, इससे देशको कितनी हानि पहुँच रहीहै तथा कैसी तेजीसे

१ इस देशमें एक सिविलियनका पालन करनेमें लगभग १७०० भारतवासियोंकी वार्षिक आमदनी खप जाती है । इसके भविष्य फलके विषयमें एक हृदयवान् अंगरेजने लिखाहैः— There is a constant drawing away of the wealth of India to England as Englishmen grow *fat* on accumulations made in India while the India remains as lean as ever.—Mr. R. N. crust.

भारतवासियोंकी मनकी शक्ति घटती जाती है मान लीजिये कि, यदि आज भारतवासी किसीभी प्रकारसे पूंजी इकट्ठी कर केवल अपनीही निगहबानीमें एक बडी रेलवे खोलना चाहेंगे तो क्या केवल जानकार और कार्य्यकुशल देशी मनुष्योंके बिना उनको अपने सङ्कल्पको त्यागना नही पडेगा ? सरकारी रेलवे महकमेको बडी बडी नौकरियोंमें यदि इस देशके लोगभी लिये जाते यदि अपने देशमें रेल बनाने और चलानेका सुभीता उनको कर दिया जाता तो क्या उनको अपना वह सङ्कल्प त्यागना पडता ? सची बात यह है कि गवर्नमेण्टने इन सब बातोमें देशवासियोंके जानकार होनेकी राह रोक रखी है, हरेक महकूमेमें हमारी उन्नतिका उपाय बन्द कर रखा है। इससे हमारे जीमें बडी बडी आशाएँ जमने तक नहीं पाती हैं जिससे हमारे धन और मनका बल दिन पर दिन घट रहाहै।

इन्ही सब कारणोसे माननीय श्रीयुक्त गोखले महाशयने सरकार हिन्दकी कानूनसभामें कहा था कि पृथ्वीभरके इतिहासमें न इन दिनोंके और पुराने जमानेके किसीभी राज्यने परतन्त्र जातिपर ऐसी निर्दयताका वर्त्ताव किया देशवासियोंके बडी बडी सरकारी नौकरियोंके पानेकी राह इस प्रकारसे रोक देनेका प्रयत्न इससे पहले कहीं भी देखा नही गया था। मि० आर० एन० कष्ट नामक एक पेन्शन्आफ्ता सिविलियनने कहा है,–

Akber made fuller use of the subject races, we make none; it is the Jealousy of the middle class Briton, the hungry sect, that wants his salary, that shuts out all native aspirations:—linguistic and oriental Essays.

अर्थात् अकबरने अपने सरकारी कामोंमें देशियोको लेनेमें कमी नहीं कीथी; किन्तु हम ऐसा नही करते। पराई उन्नतिसे न चीढनेवाले मझले दर्जेके अगरेज और भूखे स्काच लोगोंको अपना पेट भरना है, इसलिये वे देशियोंकी आशा पूरी होने नही देते।

जो लोग बडी बडी सरकारी नोकरियोंमे जीवन बितानेका सुभीता पाते हैं उनकी जानकारीसे हरेक देशमें जातीय ज्ञानवृद्धिकी सहायता होतीहै। किंतु दुर्दैवके वशमे पडे हुए भारतवासियोंके बडेही क्लेशसे इकट्ठे किये हुए धनको भोगते हुए जो आठ हजार गोरे जीवन भर पलते हैं उनके ज्ञान और जानकारीसे भारतवासी रत्तीभर लाभ उठाते हैं कि नही सो समझमें नहीं आता क्योंकि जब वे पकी उमरमें सरकारी कामसे विदा लेलेते हैं और समाजके लोग उनके बहुत दिनोंसे इकट्ठे किये हुए ज्ञानसे लाभ उठानेकी आशा करने लगतेहैं तब वे पेन्शन लेकर अपने देशको चले जाते हैं और वहा ऐस अशरतमें डूब जाते हैं। जिस देशकी कृपासे उनकी दरिद्रता मिटकर उनके हाथमें धनका ढेर लगजाता है उस देशके विषयमें वे स्वप्नमेंभी नही सोचते कि उनको कोई कर्त्तव्य है। इस देशमें रहते समयभी उनमेंसे प्राय: सभी लोग इस देशवासियोंसे मिलना जुलना अपने मानका बिगडना विचारा करते हैं। सो सदैव इन लोगोंको अपने शरीरके लोहूसे पालते रहनेपरभी भारतवासी इनसे अपनी जातीय ज्ञान वृद्धिके विषयमें कुछभी कहने योग्य सहायता नहीं पाते। केवल मिष्टर ह्यूम, काटन डिगबी थरबरन आदि दो चार महाशय इस प्रकार घटनाका उल्टा काम करते देखे जाते हैं और इनके उपरान्त कई महानुभव अंगरेज

ऐसेभी हैं कि भारतवर्षमें कभी न आकरभी भारतवासियोंके दुःख और दरिद्रताकी आलोचन करनेमें आग्रह दिखाते रहते हैं। इन दोनों प्रकारके सज्जनही हमारे धन्यवादके पात्र हैं।

भारतके राज्यशासन विभागके वडे वडे पदोंपर यदि अनेक हिन्दुस्थानी सज्जन नियुक्त किये जाते, तो वे जीवनभर राजकार्य्य कर जो कार्य्यकुशलता बहुदर्शिता तथा देशकी दशाके विषयमें जानकारी लाभ कर सकते देशके नवयुवक लोग उसके फलभागी होसकते। वृद्धोंके सारे जीवनमें लाभ किया हुआ ज्ञान भांति भांतिके उपायोंसे आगेके लोगोंमें फैल सकता। हरेक देशमें ही इस प्रकारसे समाजमें ज्ञान और बहुदर्शिताकी वृद्धि हुआ करती है। किन्तु दुर्भाग्यवश हमारी गवर्नमेण्टकी वर्त्तमान राज्यशासन रीतिके दोषसे हिन्दुस्थान समाज में इस प्रकारसे ज्ञान फैलनेका पथ रुका हुआ है।

इस देशके लिखे पढे लोग छोटी क्लर्की करते हुएही बूढे होनेको लाचार होते हैं। वे अपनी कार्य्यकुशलता और बुद्धिमत्ताको दिखानेका उचित अवकाश नहीं पाते। ऐसी दशामें यह आशाही नहीं की जासकती कि देशके युवालोग केवल पोथियोंमें पढीहुई विद्याके सहारे अच्छे ज्ञानको पावे तथा काम काजमें प्रवीणता दिखावे। विशेषकर जिस देशके विद्यालयोंमें तेजस्विता और कामकाजमें धीरज सिखानेका अच्छा उपाय नहीं है, जहांके लोगोंको केवल क्लर्क और मालगुजारी, विचार, इजीनियरिंग और डाक्टरी महकमोंके नीचे दर्जेके कारिन्दे बनानेके लियेही शिक्षाविभागकी ओरसे प्रयत्न किया जाता है उस देशके युवाओंको यदि अयोग्य होनेकी निन्दा सहनी पडे तो यह कहनेकी इच्छा होतीहै कि री धरती तू फटकर इस देशके लोगोंको ग्रसले। मि० दादाभाई नौरोजीने बडेही दुःखके साथ भारतके स्टेटसेक्रेटरी महाशयसे कहाथा,—

The young man has no place in his country.

अर्थात् भारतके नवयुवाओंके लिये उनके अपने देशमें कोई स्थान नहींहै।

इस प्रकारसे एक ओर गवर्नमेण्टकी कृपा, पदोन्नति, स्वदेश सेवाके कार्य्योंकी शिक्षा और बहुदर्शित्व लाभका सुभीता न रहने और दूसरी ओर बडी भारी दरिद्रतासे पिसते रहनेसे भारतके निवासियोंका चरित्र सम्बन्धी गौरवभी दिन पर दिन घटता जाताहै। खेदकी बात यह है कि इतने परभी इस विषयमें गवर्नमेण्ट प्रजाकी सहायता करनेमे ध्यान नहीं देती। सन १८९८ ई० मे देशवासियोंकी पदोन्नतिके विषयमे जैसी दशाथी आजतक उसका कुछभी अन्तर नहीं हुआहै। गत दसवर्षोंमें गोरे कर्म्मचारियोंकी संख्याही बढीहै तथा उनके लिये बट्टेसे उपजनेवाले नुक्साननको भरदेनेकी व्यवस्था हुईहै। और साथही यहभी देखनेमें आताहै कि मासिक ५०) रुपयेकी नौकरियोंसेभी काले आदमियोंको दूर रखनेका प्रयत्न होनेलगाहै। चीजोंका मूल्य बढजानेके इन कठोर दिनोंमे मासिक ५०) रुपयाही भारतवासियोंके घोर परिश्रम और योग्यताकी अन्तिम पुरस्कार निर्दिष्ट हुआहै। यदि इस विचित्र सुभीताके होतेहुएभी हमारे आगेके लोगोंका ज्ञानबल चरित्रबल और कार्य्यकुशलता न बढ़े तो ...र कैसे बढ़े!

दूरदर्शी अंगरेज कर्म्मचारियोंनेभी इन बातोंको अस्वीकार नहीं कियाहै । सरहेनरी प्रीचीने सबसे पहले इस विषयमें अपना मत ऊपरके कर्त्तारोंको सुनायाथा । उन्होंने कहाथा;–

We place the European beyond the reach of temptation. To the Native, a man whose ancestors perhaps bore high command, we assign some ministerial office, with a poor stipend of twenty or thirty rupees a month. Then we pronounce that the Indians are corrupt.

अर्थात् हम गोरोंको मोटी तनख्वाह देकर उनको लोभमें पड़नेसे बचा लेतेहैं किन्तु जिन हिन्दुस्थानियोंके पुरखोंका कदाचित् पहले बडाभारी प्रभाव रहा होगा उनको हम २० । ३० रुपयेकी छोटी नौकरीमें नियुक्त करतेहैं और आगे कहतेहैं कि हिन्दुस्थानी लोग घूस लेनेवालेहैं ।

आजकल Discontented B As कहतेहुए राजकर्म्मचारी लोग देशके लिखेपढ़े लोगोंपर कटाक्ष करनेलगेहैं, किन्तु कर्नेल वाकार नामक एक राजकर्म्मचारीने बहुत पहले कर्त्तारोंको सुनादियाथा कि क्यों असन्तोष बिना उपजे नहीं रहेगा । उनका कहना यहहै,–

It is vain to expect that men will ever be satisfied with merely having their property secured, while all the paths of honourable ambition are shut against them This mortifying exclusion stifles talents, humbles family pride, and depresses all but the weak and worthless. By the higher classes of society it is considered as a severe injustice So long as this source of hostility remains, the British administration will always be regarded as imposing a yoke.

अर्थात् यह आशा करना व्यर्थहै कि लोगोंकी गौरव बढानेवाली ऊंची आशाको रोककर केवल उनके धन प्राणको निरापद करदेनेसेही वे प्रसन्न रहेंगे । सब अच्छेअच्छे कामोंसे हिन्दुस्थानियोंको अलग रखकर उनके जीते जो धक्का पहुचाया जारहाहै उससे उनकी प्रतिभा बिगड रहीहै, वंशमर्य्यादा घट रहीहै तथा निरेदुर्बल और निकम्मोंको छोडकर और सभोंको हतोत्साह होना पडताहै । ऊंचे दर्जेके लोग इसे बडीभारी अन्याय विचार रहेहैं । जितने दिन उनके साथ ऐसी शत्रुता बनारखी जायगी उतने दिन बृटिश शासन उनको दुःसह प्रतीत होतारहेगा ।

वाकर महाशय यह बातभी कहनेसे नहीं भूलेहै कि अधिकांश गोरे कर्मचारी ।

Often undervalue the qualifications of the Natives from the motives of prejudice or interest.

अर्थात् दुराग्रह अथवा स्वार्थके वशमें होकर भारतवासियोंके गुणोंको अङ्गीकार नहीं मानना चाहते । अगरेजी भारतराज्यके कर्मचारियोंकी अनुचित शक्ति पानेकी अभिलाषा और भारतवासियोंके असन्तोषकी बातको जानकर सन् १८३३ ई० में पार्लिमेन्ट महासभा बडीबडी नौकरियोंपर भारतवासियोंके नियुक्त होनेके विषयमें एक आज्ञाका प्रचार हुआथा । वह [illegible] कर्त्तव्य माननेवाले अगरेजोंसे कैसे टाली गई है उसका प्रमाण बार्डलिटन महाशयने दिखाया गयाहै ।

सरकार प्रजाको ओछा समझे तो उसके चरित्रकी नीति कैसी बिगड जातीहै सो विलप्रचर सरटामस मनरोके नीचे लिखेहुए मन्तव्यको ध्यानसे पढनेसे जान पडताहै,–

We profess to seek their improvement, but propose means the most adverse to success. The advocates of improvement do not seem to have perceived the great spring on which it depends, * * * * but they are ardent in their zeal for enlightening them by the general diffusion of knowledge.

No conceit more wild and absurd than this was ever engendered in the darkest ages; for what is in every age and in every country the great stimulus to the pursuit of knowledge, but the prospect of fame, or wealth or power? .. Our books alone will do little or nothing; dry simple literature will never improve the character of a nation. To produce this effect, it must open the road to wealth and honour and public employment. Without the prospect of such reward no attainments in science will raise the character of a people.

This is true of every nation as well as of India; it is true of our own. Let Britain be subjected by a foreign power tomorrow, let the people be excluded from all share in the government, from public honours, from every office of high trust or emolument and let them in every situation be considered as unworthy of trust, and all their knowledge and all their literature, sacred, and profane, would not save them from becoming, in another generation or two a low-minded, deceitful and dishonest race. * * * In proportion as we exclude them from higher offices and a share in the management of public affairs, we lessen their interest in the concerns of community and degrade their character.

अर्थात् हम अगरेज लोग मुहसे तो कहा करतेहैं कि हम भारतवासियोंकी उन्नति चाहतेहैं, किन्तु काम ऐसा करतेहैं कि जिससे उनकी उन्नति कोसों भागजावे। जो मूल वस्तु उन्नतिके प्राण स्वरूपहै, वह उन्नति उन्नति बकनेवाले महाशयोंकी जानी हुई नहीं प्रतित होती, प्रजाके ऊपर न उनका प्रेमहै और न विश्वासहै, किन्तु उन्नतिके नामसे लोगोमें ज्ञानकी रोशनी फैलानेके लिये वे धूमधाम किया करतेहैं।

गहरी असभ्यताके दिनोंमेभी इससे बढकर विचित्र और युक्तिविरुद्ध सम्पति प्रगट कर कोईभी अपने जीमें अहकार मान नहीं सका था। धन यश शक्ति अथवा बडी बडी नौकरी पानेकी आशाको छोडकर किसीभी देशमें किसीभी समय में कब सब लोगोंकी ज्ञानकी रोशनीमें जानेकी इच्छा उभर सकी है?

केवल अगरेजी पुस्तकोंके पढनेसे कोई फल नहीं होगा। केवल नीरस साहित्यकी चर्चा करके कभी किसीभी जातिके चरित्रकी उन्नति नही होती। लोगोमें चरित्रका वल बढानाहो तो

मान और बडी बडी नौकरियोंके पानेका पथ साफ करना होता है। इस प्रकार पुरस्कार पानेकी आशा न रहनेसे ज्ञान और विज्ञानकी बडी भारी चर्चासेभी किसीभी जातिके चरित्रकी उन्नति नही हो सकती है। और और देशोंकी भांति भारतवर्षपर यह बात घटित होती है।

यहांतक कि हमारे अपने विषयमेभी यह बात घटती है। इगलैण्डही यदि कल पराये शासनके वशमे आजावे यदि अंगरेज लोग सरकारी कामकाजसे सरकारी सम्मान और बडी बडी नौकरियों से तथा नफेके कामोंसे वञ्चित किये जावें यदि हरेक विषयमे उनको विश्वासके अयोग्य समझकर हिकारत दिखाई जावे तो उनका ज्ञानविज्ञान और साहित्य जितनाही निर्दोष क्योंनहो वे उनको अधःपतनसे बचा नही सकेंगे। एकही दो पुश्तोंमें उनकी जाति नीच धोखेबाज और दुष्ट बन जायगी।

सारांश यह है कि बडी बडी नौकरियो और सरकारी कामोंसे हम जितनेही भारतवासियोको वञ्चित करेंगे उतनीही उनकी दृष्टि समाजकी भलाई बुराई सोचनेसे दूर रहेगी, उतनीही उनके चरित्रबलकी हानि होगी।

बुद्धिके विकाशका अवकाश न पानेसे भारतवासी जो हानि उठारहे हैं उसका स्मरण करके ही सर हेनरी काटन लिखते हैं,–

It is not a spectacle which is likely to reconcile an Indian patriot to the loss of the subtle and refined Oriental arts, the very secrets of which has passed away, to the loss of innumerable weavers.. ..... or to the loss of that constructive genius and mechanical ability which designed the canal system of Upper India and the Taj at agra.

अर्थात् हमारे शासनसे इस देशकी उन नफीस और बढियां पूर्वी कारीगरियां ध्वस होगईहैं जिनकी विद्यातकको भूल जानेसे अगणित जुलाहे बिगड गये ... उस बनावटी विद्या तथा शिल्पकी योग्यता जातीरही जिससे उत्तर भारतकी नहर तथा आगरेके ताजकी कल्पना हुईथी। किसीभी देशभक्त भारतवासीको इस हानिके विचारसे जीमें सन्तोष नही आसकताहै।

हृदयवान मेरिडिथ टौनसेण्ड महाशयने अपने " एशिया और युरोप " नामक ग्रन्थमें इस विषयका उल्लेखकर कहाहै?–

One of these (prodigious drawbacks of British rule), of which they are fully conscious, is the gradual decay of much of which they were proud, the slow death...........of Indian culture, Indian military spirit Architecture, engineering, literary skill are all perishing out, so perishing that Anglo—Indians doubt whether Indians have the capacity to be architects, though they built Benares or engineers though they dug the artificial lakes of Tanjore or poets, though the people sit for hours or days listening to rhapsodists as they recite poem, which move them as Tenny... certainly does not our common people.

अगरेजी शासनमें भारतकी बडीभारी बडाई प्रकट करनेवाले शिल्पज्ञान और वीरत्वका क्रमशः नष्टहोना विशेष उल्लेखयोग्य घटताहै। भारतकी गृह निर्माण विद्या, पुल आदि निर्माण विद्या, साहित्य रचनेकी विद्या आदि क्रमशः नष्ट होरहीहै। अब ऐसी दशा आपडीहै कि भारतमे रहनेवाले अगरेज लोग यह अनुभवभी नही करना चाहते कि भारतवासियोंको इन सब विषयमे योग्यता दिखानेकी शक्तिहै। किन्तु भारतहीके गृहनिर्माण विद्याके जाननेवालोने बनारसकी भांति सुन्दर नगरको निर्माण कियाथा, इस देशकेही इञ्जीनियरोंने तञ्जोरकी नकली झीलोको बनाया था, भारतके कवियोने ऐसी कवितारची है कि जिन्हे अबतकभी लोग बहुत देरतक वा बहुत दिनोतक सुनकर नहीं थकते। इगलैण्डके कविवर टेनिसन अपनी कवितासे सर्वसाधारण जिस प्रकार मोह लेनेमे समर्थ हुएहैं यहाके कविलोग अपने देशवासियोको उससे कहीं अधिक मोहनेमे समर्थ हुएहैं।

यो अगरेजोंका साथ होनेसे हमारी शिल्पबुद्धि प्रकाशका राह रुक गईहै, कार्य्यकुशलता प्रकटकी राह तग होगई है, शक्तिको काममे लानेका स्वाभाविक अवसर जाता रहाहै और दारिद्रता रोग शोक कुचिन्ता आदिकी वृद्धि हुईहै जिससे हमारे मनकी बडी भारी हानि हुईहै। इसके उपरान्त अगरेजी चरित्रका दोषभी हममे आकर हमारे मनके बलको बहुत अधिक घटा दियाहै।

सत्तरहवी सदीके आरम्भमे पहले पहल अंगरेजोसे भारतवासियोका सम्बन्ध हुआ। पहली मुलाकातके पीछेही भारतवासियोंने अगरेजोंकी जो मूर्ति देखी उसका पता रेवरेण्ड एण्डरसनकी बनाई हुई इग्लिश इन वेष्टरन इण्डिया नामक पुस्तकमें यो मिलताहैः—

As the number of adventurers increased, the reputation of the English did not improve. Too many committed deeds of violence and dishonesty. We can show that even the commanders of vessels belonging to the company dit not hesitate to perpetrate robberies on the high seas or on shore, when they stood in no fear of retaliation. * * *

Hindoos and Mussulmans considered the English a set of cow-eaters, and fire-drinkers, vile brutes, who would cheat their own fathers.

If a native dealer was offered much less for his articles than the price which he had named, he would be apt to say—What! dost thou think me a Christian, that I would go about to deceive thee?

अर्थात् भारतमें दुस्साहस अंग्रेजोकी संख्या ज्यों ज्यो बढने लगी वैसेही वैसे अगरेजोंकी नामवरी नहीं बढसकी। उनमेंसे बहुतेरे अत्याचार और बेईमानीके काम करतेथे। बाधापानेका भय न रहनेसे कम्पनीके जहाजोके कप्तानोतक जलमे और जमीनपर लूट खसोट मचानेसे नही हिचकते थे। हिन्दू और मुसल्मान लोग अगरेजोंको गौखोर, शराबी तथा अपने बापतकको धोखा देनेवाले नीच जानवर मानते थे।

उन दिनोके महाराष्ट्रीय कवि मुक्तेश्वरके (जिनका जन्म सन् १६०९ ई० मे हुआथा) काव्यमेंभी अंगरेजी चरित्रका ऐसाही वर्णन देखनेमे आताहै। वेही अगरेज जब भारतवासियोके शासनका भार पागये तब नीतिकी खोखली बातोसे घमण्डके विज्ञापनोको प्रगट करतेहुए इस देशके लोगोमे आश्चर्य उभारनेका प्रयत्न करनेलगे। किन्तु दुरन्देशलोग उसी समय समझसकेथे कि अगरेजोंके साथ हेलमेल बढ़नेका सुभीता होतेही उनके ससर्गके बुरे प्रभावसे इस देशके लोगोंका चरित्र बिगड जायगा। लार्ड टेनमौथने (सर जानशोरने) इगलैण्डके कर्त्तारोको स्पष्ट बातोंमे समझादियाथा कि भारतमे अधिक युरोपीयनका जानाआना तथा जानपहचान होनेसे भारतीय समाजोके चरित्रका बल तथा उनपर भारतवासियोकी श्रद्धा घट जायगी। उनकी बाते ये हैं,-

There is one general consequence which I should think likely to result from a general influx of Europeans into the interior of the country and their intercourse with the natives, that without elevating the character of the Natives, it would have a tendency to depreciate their estimate of the general European character.

उन्नीसवी सदीके आरम्भमे ईष्ट इण्डिया कम्पनीके कर्त्तारोंके हृदयमेंभी यह भय बहुत अधिक होगयाथा। भारतके कारीगरोंके बनाये हुए बहुतेरे जहाज अठारहवी सदीमें इंगलैंड जाया आया करते थे। इस देशके लैस्कार लोग उन जहाजोको चलाते थे। सो इगलैंडके सर्व साधारण लोगोंसे उनकी खुलाखुली जान पहचान होनेकी राह खुली हुई थी। सो विलायती सभ्यताका जो मोहमें डालनेवाला चटकीला आदर्श इस देशके लोगोको दिखाकर अगरेजोके प्रधानलोग अपने ऊपर उनकी श्रद्धा उभारना चाहते थे उस जान पहचानसे उसके व्यर्थ होनेकी सम्भावनाथी। इस विचारसे कम्पनीके डिरेक्टरोको बहुतही घबराना पडा था। इससे पार पाने—अगरेजी चरित्रकी नामवरीको भारतवासियोंके चित्तमें जमाये रखनेके लिये अन्तमें उनको भारतीय लैस्कारोंका इगलैंड जाना बन्द करना पडा। इस विषयमे उनकी बात यों हैं:-

But this is not all The native sailors of India, who are chiefly mohamedans, are to the disgrace of our national morals, on their arrival here, led to scenes which soon divest them of the respect and awe they had entertained in India for the European character: they are robbed of their little property and left to wander, ragged and destitute in the streets...The contemptuous reports which they disseminate on their return, cannot fail to have a very unfavourable influence upon the minds of our Asiatic subjects whose reverence for our character, which has hitherto contributed to maintain our supremacy in the East, (a reverence in part inspired by what they have at a distance seen among a comparatively small society, mostly of better ranks, in India) will be gradually changed for most degrading

conceptions; and if an indignant apprehension of having hitherto rated us too highly or respected us too much, should once possess them, the effects of it may prove extremely detrimental.—Supplement to the Fourth Report E. I. Co.

अर्थात् भारतके मल्लाहोंका जहाज चलानेके काममे निकाल बाहर करनेका केवल यही कारण नहीं है। हम अंग्रेजोंके जातीय चरित्रके कलङ्क तथा धर्म्म और नीतिज्ञानका न रहनाभी ऐसा करनेका कारणहै। हमारे लिये लज्जाकी बात होनेसेभी यह सचहै कि जो मुसलमान मल्लाहलोग इस देश (इंगलेण्डमें) आतेहैं वे बहुतही कुत्सित दृश्य देखतेहैं। भारतमें रहते समय युरोपीयनोंके चरित्रपर उनके जीमें जो श्रद्धा और सम्मान उपजताहै वह यहां आते आतेही बिगड जाताहै। उनके पास जो थोडा बहुत धन रहताहै उसे यहांके लोग लूट लेतेहैं और उन अभागोंके कपडे लत्तेके बिना कहीं शरण न पाकर सडकोंपर मारा मारा घूमना पड़ताहै। आगे वे अपने देशमें जाकर इस कुत्सित बातको सबको सामने कहतेहैं। ऐसे कलङ्ककी बात प्रगट होनेसे हमारी एशियावासी प्रजाके चित्तमें हमारे बारेमे बुरा खयाल पैदा बिना हुए नहीं रहसकता। हमारे जातीय चरित्रकी बडाईका विश्वास उनके जीमे जम जानेसेही उस देशमे शासनका कार्य्य करना हमारे लिये सहज होगयाहै। वहां उस दूरदेशमे जो थोड़ेसे अच्छे कुलके अंगरेज गये हैं उनको देखनेमें हमपर भारतवासियोंकी श्रद्धा हुईहै। वह श्रद्धा यदि यहांसे लौटे हुए मल्लाहोंकी बातोंसे बिगडजाय, यदि वहांके लोगोंको यह मालूम होजाय कि हम बुरे लोग हैं तो उसका फल बहुतही बुरा होगा।

कर्त्ताओंका अभिप्राय चाहे जो हो, इसमें सन्देह नहीहै कि उनकी इस सावधानीसे धार्मिक भारतवासियोंका एक विशेष लाभ हुआहै। अंगरेजी चरित्रकी बुराइयोंको यों न छुपानेसे भारतवासियोंकी धर्म्मनीतिकी बडीभारी अवनति होती।नकलके प्रेमी दुर्बलचित्तके भारतवासियोंके सामने वैसा नीच आदर्श विद्यमान रहनेसे इस देशके हिन्दू तथा मुसल्मान समाजोंका सात्विकी भाव बहुत कुछ घटजाता। कम्पनीके डिरेक्टर लोग उस हानिकी राहको रोककर भारतवासियोंके कृतज्ञताभाजन हुएहैं।

आनन्दकी बातहै कि इगलैण्डका धन बढ़नेके साथ साथ अंगरेजी चरित्रकी यह ओछाई कुछ घटगईहै। इस समय हरेक अंग्रेजकी वार्षिक आमदनी लगभग ६३० है, प्रत्येकका इकट्ठा किया हुआ धन लगभग ४५००) रुपया है। सो दरिद्रताके कडे धक्केसे अंगरेजोंको पहलेकी भांति बात बातमें नीचता झूठ और कुचरित्रताकी शरण लेनी नही पडती। इसके उपरान्त शिक्षा बढनेकाभी कुछ अच्छा फल हुआहै। सुनाजाताहै,—

हमारे देशके जो लोग अंगरेजी समाजका हाल नहीं जानते उनके जीमे यह विश्वास है कि उस समाजमें कुनीतिका बडा भारी प्रभाव है। किन्तु यह ठीक नहींहै। उस समाजकी नीतिकी पवित्रता तथा आदर्शकी श्रेष्ठता बहुत बडी है। यदि ऐसा नहीं होता तो अंगरेजी समाज इतनी शक्तिशाली कैसे होती? जहां शक्तिहै उसके पीछे निश्चयही नीतिसम्बन्धी श्रेष्ठता विद्यमान है।

सभीलोग जानते हैं कि हमारे देशमे भलीभांति पैककर माल भेजनेसेभी रेलपर उसके आधेकी चोरी होजातीहै । किन्तु इगलैंडमें विना कुञ्जी लगाये वाक्स भेजनेपरभी चोरी होते नहीं देखाहै । ष्टेशनमें मालके बारेमें कुलियो तथा बाबुओंसे कुछभी झगडना नही पडता । कोई माल तौलनेकोभी नही कहता (१) आप यदि कहें कि मेरा माल विना तोले जाने लायक नहीं है तो वजन कराले सकते हैं, नहीं तो विना छेड छाड अपने मालको ले जाइये । कही टिकट नही देखा जाता । बहुतेरे स्थानोंमें ट्रामगाडीपरभी टिकट देनेका नियम नही है कडक्टरको पैसे देतेही काम होजाता है । सञ्जीवनी २६ चैत्र १३०९ ।

यह बात यदि सत्यहो तो इससे बढकर सुखकी वात और क्या हो सकतीहै ? अगरेज इस समय हमारे राजा हैं, बहुतेरी बातोंमे उनको आदर्श मानकर हमको चलना पडताहै । अगरेजो का चरित्र जितनाही अच्छा होगा उतनाही हमारी भाति अनुकरणप्रेमी प्रजाके लिये मगल होगा । अगरेज जितनेही अधिक न्यायी होंगे उतनेही बृटिश प्रजाके अधिकार और सुख तथा सौभाग्य हमको प्राप्त होंगे ।

कम्पनीने जिस भयसे इस देशके मलाहोका इगलैंडजाना रोक दिया वह भय एकबारही दूर नहीं हुआ । अगरेजोंने तो भारतमें अपनी नामवरी स्थिर रखनेके लिये मलाहोंकी जीविका बिगाडी किन्तु उनका अभीष्ट सिद्ध नही हुआ लार्ड टेनमौथका परामर्श न माने जानेपर दलके दल अंगरेज इस देशमे आने लगे जिससे अगरेजी चारित्रका वह अश भारतवासियोंकी आखोंके सामने आगे जिसे दूर रखनेके लिये कर्त्तारोंने मलाहोंके भोजनमे धूल डाली। स्वर्गवासी दीनबन्धु मित्रकी वनायी हुई नीलदर्पण नामक बगला पुस्तकको पढनेसे अगरेजी चारित्रका वह अश पाठकोंके नेत्रोंके सामने आ पडेगा ।

अंगरेजी चारित्रके इस कुत्सित अगके साथ सम्बन्ध होनेसे हमारे देशवासियोका चरित्र कितना बिगड सकताहै सो बङ्गालके नीलवाले साहबोंके देशी गुमाश्ते तथा दूसरे कारिन्दोंके चरित्रकी आलोचना करनेसे मालूम होताहै । राजाकी जातिसे अच्छा वर्त्ताव पानेसे प्रजाका चरित्र कैसा अच्छा होताहै तथा उनसे बुरा वर्त्ताव पाते रहनेसे प्रजा कैसी खुशामदी होजाती है और उसके भले गुणोंका कैसा सत्यानाश होजाता है सो इतिहासोंमे सैकडो स्थानोमे स्पष्टरूपसे मालूम होजाताहै । उक्त कारणसे भारतवासियोंके विशेषकर वङ्गदेशवासियोंके मानसिक बलकी कैसी हानि हुई है सो विस्तृत आलोचना न करनेसेभी अनुभव होसकताहै ।

नीलवाले साहबोंके अत्याचारोंको रोकनेमे विलायतके कर्त्तारोंने बङ्गालियोंके सामनेसे अङ्गरेजी चारित्रके कुत्सित अंगको क्रमशः हटाकर अलग किया । सात्विकी प्रकृतिवाली बङ्गाली जातिकी नरककी दुर्गन्ध सूंघनेसे रक्षा हो गयी । आगे सब लोगोंकी पूजनीया महारानी विक्टोरियाके शासनका दिन आया, उच्चकुलके उदार अङ्गरेजोंके पधारनेसे देशकी नीति बिगाडनेवाला प्रवाह बहुत कुछ घटगया । किन्तु अधिक दिन बुरा सग पानेसे पीछे अच्छा सग मिलनेपरभी लोगोंका बिगडा हुआ चरित्र शीघ्र सुधर नहीं सकताहै । हमारी दशा इस समय बहुत कुछ ऐसीही है ।

---

१ समयकी अल्पता और कामकी अधिकाई ही क्या इसका कारण नही है ?

वङ्ग विभागकका नैतिक कुफल।

लार्ड कर्जनने वङ्गविभाग सम्बन्धी सरकारी मन्तव्यके उपसंहारमें कहा है कि बंगालके टुकडे करनेका मुख्य उद्देश्य यही है कि पूर्व और उत्तर बंगालकी प्रजाके साथ सरकारका—अथवा यों कहिये कि अफसरोंका घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित हो। क्योंकि शासक और अधीन प्रजाके बीचमें जितनी ही अधिक घनिष्ठता होगी उतनाही अच्छी तरह शासनकार्य चल सकेगा। इससे प्रजाकी भलाई होतीहै, उसके सुख समृद्धि और उन्नतिका मार्ग साफ हो जाताहै। इसमें सन्देह नहीं कि एक प्रकारसे लार्ड कर्जनका कहना सत्यहै। प्रकृतिपुञ्जकी जितनीही निकटता होगी उतनी ही शासन कार्यमें अफसरोंको सुविधा होगी और इस प्रकारसे देशका अधिक शोषण होगा किन्तु इससे प्रजाके सुखसमृद्धिकी वृद्धि होनेकी सम्भावना कहांहै? शास्त्रकारोंका कथनहै कि जिसप्रकार अतिवृष्टि अथवा अनावृष्टि हानिकारीहै उसी प्रकार राजाका बहुत दूररहना अथवा बिलकुलही समीप रहना दोनों प्रजाके लिये अमंगलका कारणहैं। हमें यह स्वीकार करना चाहिये कि स्वदेशी और स्वधर्मी राजाकी घनिष्ठतासे प्रजाकी भलाई होसकतीहै, किन्तु भारतवर्षके समान विषम—दशा-ग्रस्त पराधीन देशमें राजाप्रजाकी घनिष्ठतासे भलाईकी अपेक्षा प्रजाकी बुराईकीही अधिक सम्भावनाहै। इस प्रकारकी घनिष्ठतासे धार्मिक और सामाजिक विप्लवोंकी उत्पत्ति होतीहै। यदि हमारे राजाकी जाति कृस्तान और यूरोपियन न होती तो लार्डकर्जनकी कही हुई घनिष्ठतासे प्रजाका कई अंशोंमें मङ्गल होभी सकताथा, परन्तु इस बातको पाश्चिमी विद्वानोंनेभी स्वीकार कियाहै कि हिन्दुस्थानियोंके समान पूर्वीजातियोंके लिये कृस्तान यूरोपियन लोगोंका संसर्ग भयानक अनिष्टकारीहै। माननीय मिस्टर हाल्ट मेकेञ्जीने कहाहै,—

The longer we have had these districts, the more apparently do lying and litigation prevail, the more are morals vitiated, the more are rights involved in doubt, the more are foundations of Society shaken.

जिन प्रदेशोंमें जितनेही अधिक समयसे हम शासन करते आरहेहैं उन प्रदेशोंके लोग उतनेही अधिक झूठे और मुकद्दमेबाज बनते जारहेहैं। लोगोंका नैतिक अधःपतन हुआहै, निश्चित विषयोंमेंभी सन्देह सवार होगया है। समष्टिरूपमें कहा जासकताहै कि उनके, समाजकी मजबूत दीवालतक हिलगयीहै।

कप्तान वेस्ट मेकट साहब कहते है,—

I have no hesitation in affirming that in the Hindu and Mussalman cities removed from European intercourse, there is much less depravity than there in Calcutta, Madras and Bombay where Europeans chiefly congregate.

हम इस वातको स्वीकार करनेमे जरामी नही हिचकते कि कलकत्ता वम्बई मदरास आदि जिन नगरोमें अधिक गोरे रहते है उनकी अपेक्षा गोरोसे शून्य हिन्दू अथवा मुसलमानोंके प्रधान स्थानोमें सत्यताका व्यभिचार सचाईका पीछालेकर बहुत कमदेखनेमे आता है ।

सरजान शोरका कथनहै;——

It has been observed as a general truth that the more connection the natives have had with the English, the more immoral and the worse in every respect they become.

यह सत्य कथन एक प्रकारसे सर्वजन स्वीकृतहै कि अगरेजोंके साथ भारतवासियोका संवन्ध ज्यों ज्यो घनिष्ठ होता जाताहै त्यों त्यो भारतवासियोके चरित्र और अन्य सव विषयोमें दिनो दिन अवनति और अपकर्ष सङ्घटित होरहाहै ।

इन वातोसे यही सिद्ध होताहै कि अगरेज लोग जितनेही दूरसे हमारा शासनकरें उतनाही हमारे लिये अच्छाहै । यही कारणहै कि अफसरोंको पूर्व और उत्तर वगालके साथ सरकारका सवन्ध अधिक घनिष्ठ करते देख देशके धर्मप्राण, समाजनिष्ठ और नीतिप्रिय पुरुषोंके हृदयमे आतङ्कका सञ्चार हुआ । जिस घनिष्ठतासे समाजकी शृखला नष्टहो, धर्मसंसारमें विप्लव उपस्थित हो, और नैतिक अधःपतनका मार्ग चौडा हो उस घनिष्ठताको कोई भी स्वदेशहितैषी पुरुष पसन्द नहीं कर सकता ।

मानसिक अवनतिके अन्यान्य कारण ।

इस वातको सभी स्वीकार करेंगे कि किसी पिछले पृष्ठमें अग्रेजोके कुछ जातीय दोषोका वर्णन हुआ है ।उन दोषोंमेंसे हम लोगोंमें अग्रेजोकी सगतिसे विलासप्रियता, अहकार, आत्मसुख-परायणता आदि दोष आगये हैं।अग्रेजोंके वनाये हुए आईन कानूनोके दोषसे इस देशकी अदालतें मिथ्याचारकी रगस्थली हो रही हैं । पुराने जमानेमे पञ्चायतोके विचारके कारण इस प्रकार मिथ्याचारका प्रचार नही था । पञ्चायतके पञ्च उस मामलेके जानकार होते थे इस लिये एक ओर तो पञ्चायतके सामने झूठी वात कहकर छूट जाना तथा समाजमे अपनी सम्मान रक्षा करना सहज साध्य नही था, दूसरी ओर वालकी खाल निकालनेवाले आईनी दाव पेचके सहारे सच्ची वातकी अवहेलना नहीं हो सकती थी । अव देशके सभी प्रान्तोमें पश्चिमी ढङ्गकी अदालतें हो जानेसे इस देशमें मिथ्याचारने अपना अधिकार जमा लिया है ।

अङ्गरेजोंके प्रेस्टिज तथा सम्मानके फेरमें पड़कर भारतवासियोंकी धर्म्मबुद्धिमे द्विविधा पैठ गयीहै । देशमें गोरोकी सख्या वढती रहनेके कारण अनेक प्रकारसे उनके साथ देशियोंके सङ्घ-र्षकी सम्भावना भी वढ रही है । भारतवासी रातदिन देखरहेहैं कि इस सघर्षसे राजजातिकी सम्मानरक्षाके छलसे हमारे न्यायविचारकी नासिका पथ पदपदमें रूँधता जारहाहै, सत्यके विधानका उल्लघन होरहाहै, और धर्म घायल होरहाहै । पापी गोरे अपराधीकी रक्षाके लिये हाईकोर्टके प्रधानविचारपतिभी कभीकभी अधर्मको आश्रय देनेमे रञ्चकभी सङ्कोच नही करतेहैं । इसप्रकार जो सत्य मार्गका उल्लघन करतेहै । उनकी सदैव तरक्की होती और आदर वढताहै ।

इस बातका उदाहरण लोगोंको नवाखाली और छपराके पेनल प्रसङ्गमे अच्छी तरह देखनेको मिलाहै। लोग समाचार पत्रोंमे पढतेही हैं कि केपकालोनी, नेटाल आदि अङ्गरेजी उपनिवेशोंमे भारतवर्षके प्रतिष्ठित पुरुषभी सडकोंकी फुटपाथसे नहीं चलने पाते, गाडियोंपर चढकर चलनेमें उन्हें दण्ड मिलताहै। भारतवासी नित्य यहभी देखतेहैं कि अङ्गरेजोंके धर्मोपदेशक जिस प्रकार आग्रहके साथ भारतवासियोंको शिक्षा देतेहैं कि मनुष्यमात्र भाई भाई हैं और ईश्वर सबका पिताहै। उसीप्रकार अपने जातिभाइयोंको उपदेश करनेमे शताश आग्रहभी दिखालाते कि नेटिव (देशी) लोगोंके साथ समता भ्रातृभाव रखना चाहिये। सभी बुद्धिमान इस बातको स्वीकार करेंगे कि सर्वदा सर्वत्र इसप्रकार विषम व्यवहार और दृश्य देखते रहनेसे अनुकरणप्रिय पराधीन जातिकी धार्मिक आस्था बढती नहीं है और उनका चरित्रभी उन्नति नहीं करताहै। बङ्गाली भाषाके अच्छे कवि और चिन्ताशील लेखक श्रीयुक्त रवीन्द्रनाथ ठाकुरने इस बातको अच्छी तरह दिखलायाहै कि अङ्गरेजोंके इन चरित्र दोषोंके सश्रवसे हम लोगोंके चरित्रकी कैसी अवनति होरहीहै,—

हम इस बातको लेकर भयानक चिन्तामे चूरहोनेकी आवश्यकता नहीं देखतेहै कि अङ्गरेजोंके इन विषम व्यवहारोंसे हम लोगोंके शिक्षादाताओंका क्या इष्ट अथवा अनिष्ट होरहाहै। तब भयका कारण यही है कि हमारे मनसे दृढ धर्मके प्रति विश्वास शिथिल और सत्यताका आदर्श विकृत होता जारहाहै। हमभी प्रयोजनको सबसे ऊंचा स्थान देनेको उद्यत हुएहैं। हमभी समझतेहैं कि पोलिटिकल उद्देश्य साधनमे धर्मबुद्धिमे द्विविधा उत्पन्नकरना अनावश्यकहै। जो शिक्षा अपमानके द्वारा हड्डी, मांस और रक्तमे प्रवेश करतीहै, उस शिक्षाके हाथसे अपनी रक्षा किसतरह करेंगे। अतएव हमारी इच्छा हो अथवा न हो, विलायत हमें पकडकर जैसी शिक्षा देरहाहै उसे तो निगलनाही पडेगा।

हमने आजकल केवल राजकीय स्वार्थपरताकोही सभ्यताका एकमात्र मुकुटमणि समझ लियाहै। दुकानदारीकी झुठाई विदेशके दृष्टान्तसे दिनोंदिन ग्रहण करते जारहेहैं। हमने मनुष्यत्वकी अपेक्षा धनको बडा और मगल व्रताचरणकी अपेक्षा क्षमताको श्रेष्ठ समझ रखाहै। इसीसे हमारे देशमें अबतक जो स्वाभाविक नियमसे देशहितके काम घर घर होतेथे वे एकदम बन्दसे होगयेहैं। लडकपनसे विदेशियोंको एकमात्र गुरु माननेका अभ्यास होजानेके कारण उनकी बातको वेदवाक्य कहते हुए स्वजातियोंके प्रति श्रद्धाविहीन होरहेहैं। (बगदर्शन १३०१ सम्वत् बगाली)

यह बात किसीसे छिपी हुई नहीं है कि मादक सेवनसे किस प्रकार मानसिक शक्तिका ह्रास होताहै, चारित्रबल किसप्रकार क्षीण होताहै; तौभी धनके लोभमें पडकर हमारी सरकार देशवासियोंको नशेबाज बनानेके लिये प्राणपणसे प्रयत्न करतीहै। अफीमकी खेतीमें इस देशके निवासियोंका विशेष अनुराग कभीभी नहीं था, उलटा इस विषयमे अनेक लोग यथोचित उदासीनताही दिखा-तेथे। किन्तु सरकारने दरिद्र किसानोंको रुपये देकर तथा दूसरे लालच दिखाकर मुग्ध करलिया और इस प्रकार हम लोगोंको अफीमकी खेती करनेमे प्रवृत्त कियाहै। बङ्गालके भूतपूर्व छोटे लाट सरसिसिलविडनने विलायतकी फाइनेन्स कमीटीके सामने गवाही देनेके समय स्पष्ट कहा-था कि,—

The Government would probably not be deterred from adopting such a course by any considerations as to the deleterious effect which opium might produce on the people to whom it was sold.

अर्थात् सरकार इस आशकासे इस लाभजनक व्यवसायको कभी छोड नहीं सकती कि अफीमका सेवन करनेसे प्रजाका चरित्र बल नष्ट होवेगा। कहना नहीं होगा कि यदि सरकार गोरे सिविलियन लोगोंके लालनपालनमें अन्धाधुन्ध धन खर्चकरके सरकारी खजाना खाली न कर डाले तो सरकारको ऐसी वाहियात नीतिकी पृष्ठ पोषकता न करनी पडे।

किसानोंको रुपये देकरही सरकार चुप नहीं होती। इस देशके जवानोंको अफीमची बनानेके लिये भयानक निन्दनीय उपायकाभी सहारा लिया गयाहै। ब्रह्मदेशके भूतपूर्व असिष्टेण्ट कमिश्नर मि० हाइण्डका कथनहै,—

Organised efforts are made by Bengal agents to introduce the use of the drug, and create a test for it among the rising generation.

एजेण्ट नियुक्तकरके अफीमका प्रचार बढानेके लिये ब्रह्मदेशमे यथेष्ट प्रयत्न हुएथे। जिससे जवान लोगोंका प्रेम अफीमसे बढे इसके लिये नियमानुसार प्रयत्न किये गयेथे।

हाइण्ड साहबने इस प्रयत्नका परिचय इसप्रकार दियाहै "पहले गांव गांवमे अफीमकी दूकाने खोली गयीं। इसके पीछे देहातके जवान लोगोंको बुलाकर उन्हें मुफ्तमे अफीम बांटी जानेकी व्यवस्था हुई जब कुछ दिनोंके बाद उन अभागोंको अफीम खानेका अभ्यास होगया तब थोडे मूल्यमें उनके हाथ इस विषकी बिक्री होने लगी। फिर क्रमानुसार ज्यों ज्यों वे नशेखोर होते गये त्यों त्यों अफीमका मूल्यभी बढाया जानेलगा। इसप्रकार कुछ दिनोंके बीचमे देशके अनेक स्थानोंमें अफीमका प्रचार बढ गया। देहातवासी अफीमखोर होकर पशुओंके समान अधम होगये।

जो शराब इस देशके मनुष्योंके लिये "अपेय" और "अस्पृश्य" थी, उसकी वेगवती धारामें भारतीय समाज बहता जा रहाहै। जैसे घृणित उपायोंके द्वारा इस देशमे अफीमका प्रचार बढ़ाया गया वैसेही शराबकी बिक्री बढानेके लियेभी पहले ऐसेही निन्दनीय उपायोंका अवलम्ब लिया गयाथा। सर सिसिल विडनने विलायतमे जाकर इस बातको प्रकाशित किया है। हर साल शराबकी बिक्री न बढा सकनेपर कलेक्टर और डिपुटी कलेक्टर लोगोंका खुल्लमखुल्ला तिरस्कार किया जाताथा। इन बातोंका प्रमाण बङ्गालके रेविन्यू बोर्डकी पुरानी रिपोर्टोंको पढनेसे मिल सकताहै। राजकर बढानेकी आशासे अधिकारियोंने पञ्जाबमें शराबका प्रचार बढानेके विषयमे ऐसा आग्रह प्रकाश कियाथा कि उससे उलटा फल उत्पन्न हुआ। बहुतसे स्थान शराबके विषम परिणामसे मनुष्योंसे खाली होगये, जिससे सरकारी कर घटगया। इस विषयमें उस समयके पञ्जाबी छोटे लाट सरमेकलियडकी उक्ति इस प्रकारहे,—

In the Nerbudda territories I have known whole district depopulated in consequence of the action of our spirit contractors They used to send people all over the country to seduce these poor

simple folk and utterly demoralise them. They got on their books, and after being sold out of house and home, they absconded in thousands.

इस समयभी आबकारी विभागकी आमदनी बढानेके लिये भारतीय समाजका चरित्रबल हरण करनेके लिये अधिकारियोंकी ओरसे प्रयत्नोंमे कमी नहीं की जातीहै । सरकारी रिपोर्टोंको देखने से मालूम होताहै कि नशीली चीजोंकी बिक्री प्रतिवर्ष बढती जा रहीहै । सन् १८७४ ईस्वीमे नशीली चीजोंकी बिक्रीसे सरकारको २ करोड ३३ लाख २२ हजार रुपयोंका लाभ हुआथा । १८८३ ईस्वीमे उसका परिमाण बढकर ४ करोड २६ लाख रुपये होगये । सन् १८९५ ईस्वी मे आबकारी विभागकी आमदनी ६ करोड १७ लाख १० हजार रुपये हुईथी । इतनी बढ जानेपरभी अभी उसकी बाढ़ रुकी नहीं है । सुरसाके समान बढते हुए उसका परिमाण सन् १९०३ ईस्वीमें ७ करोड ८३ लाख ६५ हजार होगयाथा ! हिसाब लगानेसे मालूम होताहै कि प्रत्येक भारतवासीसे सरकारने नशीली चिजोंके बदले साढे पांच आनेका लाभ उठायाथा ! इससे बढकर और क्षोभका विषय और कौन हो सकताहै कि आबकारीकी आमदनी बढानेके लिये कर्तृपक्षकी ओरसे जैसे उपाय किये जातेहै वैसे उपाय देशमे सुशिक्षा फैलानेके लिये नहीं किये जाते ! सुसभ्य अगरेजोंकी इस विषम कार्यप्रणालीका फल कैसा भयानक हुआहै, उसे मिस्टर कष्ट साहबके शब्दोंमें नीचे प्रकाशित करतेहैं,—

As to the demoralising effect of our control on the character of the native, we have presented to us the most fearful corroboration of what was asserted by Shore, and reiterated by Campbell ..In the course of comparatively few years we succeed in destroying whatever of truthfulness and honour they have by nature, and substituting in its place habits of trickery, chicanery, and falsehood. Every native will tell you that it is impossible, nowadays, to find an honest man...Our whole System of law and government and education tends to make the natives clever, irreligious, litigious scamps No man can trust another. Formerly a verbal promise was as good as a bond. Then bonds became necessary. Now bonds go for nothing and no prudent banker will lend money without recieving landed property in pledge ... ...

You are only to compare our new provinces with our old. From the recently acquired Punjaub where the people have had little of your law and government, and education, are comparatively truthful and honest, the population becomes worse and worse, as you descend lower and lower, to your old possessions of Calcutta and Madras.

सर जान शोर और केम्बल महोदयकी यह भविष्यद्वाणी सफल हुईहै कि अगरेजोंने भारतवर्षमे जिस शासननीतिका अवलम्बन कररखाहै, उससे देश वासियोका चारित्र दिनोंदिन हीन होगा ।

लावृत थोडे दिनोके बीचमेही वृटिश शासनमे भारतवासियोकी स्वाभाविक सत्यप्रियता और
ुताका अपहरण हुआहै । प्रवञ्चना, कपटप्रियता, और झुठाईने भारतवासियोंके समाजमें
ाप स्थान करलियाहै । प्रत्येक भारतवासी अब कहताहै, आजकलके दिनोमे अच्छे मनुष्योंका
ा जाना असभवहै । हमलोगोके आईन, शासन और शिक्षानें भारतवासियोंको धूर्त, अधा-
क और मामलेबाज वनादियाहै । इस समय कोई किसी पर विश्वास नहीं करता । पहले
ानेमें लोगोंके मुँहकी बात दलीलके समान अटल समझी जाती थी, पीछे दलीलही विश्वासका
ार हुई । अब तो दलील परभी किसीको विश्वास नही है । कोईभी बुद्धिमान मनुष्य अब
वर सपत्ति बन्धक किये विना रुपये उधार देनेमे अग्रसर नही होता । जिन स्थानोंमे अगरेजी
सन और शिक्षाने अबतक जड नही पकडीहै उन स्थानोंमें साधुता और सत्यप्रियताका निद-
अबभी पाया जाताहै । नये जीते हुए पजाब देशके साथ बगाल तथा मदरास प्रदेशके
ासियोकी तुलना करनेसे यह बात समझमें आजावेगी ।

हाय! कहातो सुसभ्य अगरेजोके ससर्गसे भारतवासियोका चरित्र दिनोदिन उन्नत होना चाहिये
, कहा क्रमश: वह अवनतिको प्राप्त होरहाहै । यह थोडे शोककी बात नही है कि बहुकाली-
मुसलमानी शासनमेंभी भारतवासियोकी जैसी चारित्र सम्बन्धी अवनति नहीं हुईथी, वैसी थोडे
नोंके अगरेजी शासनमें हुईहै । इसमें सन्देह नही कि यदि अगरेजोंकी वर्तमान दोषोंसे भरीहुई
सननीतिका परिवर्तन नहीं होगा तो इस चारित्र्य अवनतिका स्रोत घटनेके बदले दिनोंदिन
शाली होता जायगा ।

जातीय निन्दा ।

भारतवासियोंके जातीयचरित्रकी अवनति होनेके एक और कारणके विषयमे नेशनल कांग्रेसके
वें अधिवेशनके सभापति मिस्टर आलफ्रेड वेब महोदयने आलोचना कीहै । उनका कथनहै,—

It is my growing conviction that disastrous consequences must
sooner or later result from persistent vilification of Indian character
...... I know how such vilification has worked in us, at times
turning our better natures into gall, and being responsible for many
hideous passage in our history......... Subject peoples are
normally sensitive to the feeling towards them of theirs rulers.

हमारा विश्वास दिनोदिन दृढ होता जा रहाहै कि भारतवासियोके चरित्रके अवनत कुत्साका
मय फल शीघ्र हो अथवा विलम्ब एक दिन अवश्यही फलेगा । इस प्रकारके कुत्सासे हम
गोंका (आयरिश लोगोंका) कैसा अनिष्ट हुआहै उसे हम जानतेहैं । उससे हमारे अनेक
ुण नष्ट हुएहैं । इस प्रकारके निन्दावादसे हमारे जातीय इतिहासमें अनेक घटनाओंने
त्स भाव धारण कियाहै । राजाकी जातिकी कीहुई निन्दास्तुतिसे पराधीन जातिके चरित्रमे
जमेंही परिवर्तन उपस्थित होसकताहै ।

महाभारतकी कथामे वर्णित है कि कर्णको वलहीन करनेके लिये उसके सारथी—पाण्डवहितैषी,
नरेश शल्यने—उसकी बहुत निन्दा कीथी। राजाकी जातिवालोंके मुँहसे रातदिन अपनी निन्दा

simple folk and utterly demoralise them. They got on their books, and after being sold out of house and home, they absconded in thousands.

इस समयभी आबकारी विभागकी आमदनी बढानेके लिये भारतीय समाजका चरित्रबल हरण करनेके लिये अधिकारियोंकी ओरसे प्रयत्नोमे कमी नही की जातीहै । सरकारी रिपोर्टोको देखने से माल्म होताहै कि नशीली चीजोकी बिक्री प्रतिवर्ष बढ़ती जा रहीहै । सन् १८७४ ईस्वीमे नशीली चीजोकी बिक्रीसे सरकारको २ करोड ३३ लाख २२ हजार रुपयोका लाभ हुआथा। १८८३ ईस्वीमे उसका परिमाण बढकर ४ करोड २६ लाख रुपये होगये । सन् १८९५ ईस्वी मे आबकारी विभागकी आमदनी ६ करोड १७ लाख १० हजार रुपये हुईथी । इतनी बढ जानेपरभी अभी उसकी बाढ रुकी नहीं है । सुरसाके समान बढते हुए उसका परिमाण सन् १९०३ ईस्वीमें ७ करोड ८३ लाख ६५ हजार होगयाथा। हिसाब लगानेसे माल्म होताहै कि प्रत्येक भारतवासीसे सरकारने नशीली चिजोके बदले साढे पाच आनेका लाभ उठायाथा। इससे बढकर और क्षोभका विषय और कौन हो सकताहै कि आबकारीकी आमदनी बढानेके लिये कर्तृपक्षकी ओरसे जैसे उपाय किये जातेहै वैसे उपाय देशमे सुशिक्षा फैलानेके लिये नही किये जाते । सुसभ्य अंगरेजोकी इस विषम कार्यप्रणालीका फल कैसा भयानक हुआहै, उसे मिस्टर कष्ट साहबके शब्दोंमें नीचे प्रकाशित करतेहैं,–

As to the demoralising effect of our control on the character of the native, we have presented to us the most fearful corroboration of what was asserted by Shore, and reiterated by Campbell.. .In the course of comparatively few years we succeed in destroying whatever of truthfulness and honour they have by nature, and substituting in its place habits of trickery, chicanery, and falsehood. Every native will tell you that it is impossible, nowadays, to find an honest man.. Our whole System of law and government and education tends to make the natives clever, irreligious, litigious scamps. No man can trust another. Formerly a verbal promise was as good as a bond. Then bonds became necessary. Now bonds go for nothing and no prudent banker will lend money without recieving landed property in pledge ... ...

You are only to compare our new provinces with our old. From the recently acquired Punjaub where the people have had little of your law and government, and education, are comparatively truthful and honest, the population becomes worse and worse, as you descend lower and lower, to your old possessions of Calcutta and Madras.

सर जान शोर और केम्बल महोदयकी यह भविष्यद्वाणी सफल हुईहै कि अंगरेजोंने भारतवर्षमें जिस शासननीतिका अवलंबन कररखाहै, उससे देश वासियोका चरित्र दिनोंदिन हीन होगा ।

अपेक्षाकृत थोडे दिनोके बीचमेही बृटिश शासनमें भारतवासियोंकी स्वाभाविक सत्यप्रियता और साधुताका अपहरण हुआहै। प्रवञ्चना, कपटप्रियता, और झुठाईने भारतवासियोके समाजमें विशेष स्थान करलियाहै। प्रत्येक भारतवासी अब कहताहै, आजकलके दिनोंमे अच्छे मनुष्योंका पाया जाना असभवहै। हमलोगोंके आईन, शासन और शिक्षाने भारतवासियोंको धूर्त, अधार्मिक और मामलेवाज बनादियाहै। इस समय कोई किसी पर विश्वास नही करता। पहले जमानेमें लोगोंके मुँहकी बात दलीलके समान अटल समझी जातीथी, पीछे दलीलही विश्वासका आधार हुई। अब तो दलील परभी किसीको विश्वास नही है। कोईभी बुद्धिमान मनुष्य अब स्थावर सपत्ति बन्धक किये विना रुपये उधार देनेमें अग्रसर नही होता। जिन स्थानोंमे अगरेजी शासन और शिक्षाने अबतक जड नही पकडीहै उन स्थानोमे साधुता और सत्यप्रियताका निदर्शनं अबभी पाया जाताहै। नये जीते हुए पजाब देशके साथ बगाल तथा मदरास प्रदेशके निवासियोकी तुलना करनेसे यह बात समझमें आजावेगी।

हाय! कहांतो सुसभ्य अगरेजोंके ससर्गसे भारतवासियोका चरित्र दिनोदिन उन्नत होना चाहिये था, कहां क्रमशः वह अवनतिको प्राप्त होरहाहै। यह थोडे शोककी बात नहीं है कि बहुकालीन मुसलमानी शासनमेभी भारतवासियोंकी जैसी चारित्र सम्बन्धी अवनति नहीं हुईथी, वैसी थोडे दिनोके अगरेजी शासनमे हुईहै। इसमें सन्देह नही कि यदि अगरेजोकी वर्तमान दोषोंसे भरीहुई शासननीतिका परिवर्तन नही होगा तो इस चारित्र्य अवनतिका स्रोत घटनेके बदले दिनोदिन वेगशाली होता जायगा।

जातीय निन्दा।

भारतवासियोंके जातीयचरित्रकी अवनति होनेके एक और कारणके विषयमें नेशनल कांग्रेसके दशवें अधिवेशनके सभापति मिस्टर आलफ्रेड वेब महोदयने आलोचना कीहै। उनका कथनहै,—

It is my growing conviction that disastrous consequences must sooner or later result from persistent vilification of Indian character .... I know how such vilification has worked in us, at times turning our better natures into gall, and being responsible for many a hideous passage in our history......... Subject peoples are abnormally sensitive to the feeling towards them of theirs rulers.

हमारा विश्वास दिनोदिन दृढ होता जा रहाहै कि भारतवासियोके चरित्रके अवनत कुत्साका विषमय फल शीघ्र हो अथवा विलम्ब एक दिन अवश्यही फलेगा। इस प्रकारके कुत्सासे हम लोगोंका (आयरिश लोगोंका) कैसा अनिष्ट हुआहै उसे हम जानतेहैं। उससे हमारे अनेक सद्गुण नष्ट हुएहैं। इस प्रकारके निन्दावादसे हमारे जातीय इतिहासमें अनेक घटनाओंने बीभत्स भाव धारण कियाहै। राजाकी जातिकी कीहुई निन्दास्तुतिसे पराधीन जातिके चरित्रमें सहजमेंही परिवर्तन उपस्थित होसकताहै।

महाभारतकी कथामें वर्णित है कि कर्णको बलहीन करनेके लिये उसके सारथी—पाण्डवहितैषी, मद्रनरेश शल्यने—उसकी बहुत निन्दा कीथी। राजाकी जातिवालोके मुँहसे रातदिन अपनी निन्दा

सुनते रहनेसे साधारणतः सबको आत्मग्लानि उपस्थित होतीहै, लोगोंके मनमे भ्रान्ति उत्पन्न होजातीहै कि हम अकर्म्मण्य और हीनशक्ति हैं। ऐसी भ्रान्ति बहुत दिनोंतक स्थायी रहनेसे उन लोगोंकी बुद्धि नष्ट होने और चरित्र बल घटने लगताहै। इसीसे अपनी जातिकी निन्दा सुनना पाप अर्थात् अवनतिजनक कहा जाताहै। अगरेजोंकी निन्दासे आयरिश जातिके चरित्रकी बहुतकुछ अवनति हुईहै। इसीसे भारतवासियोंके ऊपर विदेशी राजाकी जातिद्वारा निन्दावृष्टि होते देख सहृदय वेबसाहबने ऊपर लिखा हुआ मन्तव्य प्रकाशित करके हम लोगोंको सावधान कर दियाहै।

अनेक राजपुरुष इस देशके मनुष्योंके चारित्रकी निन्दा इसीलिये किया करतेहैं जिससे भारतवासियोंका विश्वास अपनी शक्तिपरसे कम होजाय बहुतसे चतुर चूडामणि अङ्गरेज इस लिये भी हमलोगोंके चरित्रोंपर दोषारोप करनेके लिये अग्रसर हुआ करतेहैं जिससे बडे वेतनके ऊंचे सरकारी पदोंपर भारतवासियोंके बदले अधिक सख्यामे उनके जातिभाईही नियुक्त हुआ करें। On the Edge of the Empire नामक पुस्तकमे एक अङ्गरेज राजपुरुषने लिखाहै,–

The native of India, like the ape, is at his best in childhood and deteriorates as he grows older

भारतवासी लडकपनमे विना पूछके वन्दरके समान कुछ अच्छे रहते हैं किन्तु उमरकी बढती के साथही साथ क्रमशः उनके चरित्रकी अवनतिका आरम्भ होताहै।

कुछ दिनोंके पहले एक अङ्गरेज जनरलने भारतवासियोंके साथ व्यवहार करनेके ढगका प्रसङ्ग लाकर कहाथा,–

The only way to do is to exercise no mistaken clemency, but to slay and slay and slay, recognising no surrender That is the only logic that an Eastern people can really understand.

सौभाग्यकी बात यही है कि इन लोगोंकी की हुई निन्दा इस देशके सर्वसाधारण लोगोंके कानोंतक प्रतिसमय नही पहुँचती। पक्षान्तरमें अनेक सहृदय राजपुरुषोंने भारतवासियोंके चरित्रकी यथोचित प्रशंसाभी की है (देखो पृष्ठ१८–२३–२४–२५)हम लोगोंके जातीय चरित्रकी हीनता दिखानेके काममेंई शुखीष्टके चेले–मिशनरी पादरी लोगही आगे बढे रहतेहैं, इन लोगोंके ऐन्द्रजालिक कथोपकथनसे हमारे देशके अनेक सरलचित्त शिक्षित पुरुषभी भ्रान्तिके कीचडमें फँस जातेहैं। इन लोगोंके आक्रमणका प्रबल वेग हिन्दू समाजपरही अधिक देखाजाताहै "चर्च क्वार्टर्ली रिव्यू" पत्र मे एक रेवरेण्ड (भक्ति भाजन) मिशनरीने कुछ दिन पहले लिखाथा,–

That the Hindu as a race are probably the most immoral, treacherous and cunning people on the face of this wicked earth will generally be admitted.

इस वातको सभी स्वीकार करेगे कि इस पाप पूर्ण पृथ्वीमे मानो हिन्दू जातिही सबकी अपेक्षा दुर्नीतिपरायण, विश्वासघाती और धूर्तहैं।

मालूम पडता है इस निन्दामें कुछ अपूर्णता रह गयीथी, सो मानो उसकी कसर निकालनेके लियेही एक कोमल हृदयकी मिशनरी स्त्रीने अप्रेल सन् १८९९ ईस्वीके Sentinet (सन्तरी) पत्रमें अपनी कलमसे लेख लिखकर उसकी पूर्तिका प्रयत्न कियाथा यह स्त्री इगलेण्डके विश्व,-सुहृद-समाज (British philanthropic Societies) में विशेष माननीय समझी जातीहै। इसने लिखाथा,-

Hinduism is impurity crystalized into a system.

हिन्दू धर्म अपवित्रताका एक जमघट्ट है

यद्यपि कृस्तानी धर्मके समान उनकी समझमें मुसल्मानी और जापानी धर्मभी "निरवच्छिन्न-पवित्रता और सारसत्यसे परिपूर्ण" नहीहै, वे यहभी नही समझते कि मुसल्मानी और जापानी समाजमें लेशमात्रभी अपवित्रता अथवा विश्वासघात आदिदोप नहीहैं, तोभी उनकी निन्दा करनेमें मिशनरियोका वैसा आग्रह नही देखा जाता। जापान और फारस स्वाधीन देशहैं, इसलिये वहापर मिशनरी लोग अधिक परिमाणमे जबानको लगाम लगाकर सयमसे रखते है। यद्यपि चीन और जापानमें एकही धर्म प्रचलित है तथापि चीन देशमे मिशनरियोकी जैसी गलैदराजी सुनी जातीहै वैसी जापानमे नही इसका यही कारण है कि चीन दुर्बल है और प्रबल भारतवासी मुसल्मान यद्यपि पराधीनहैं तथापि उनकी तेजस्विता सामान्य नहीं है। मुसल्मानी समाजकी निन्दा करनेमे विशेप तीव्रता दिखानेसे उस निन्दकको परनिन्दाके पापका दण्ड उसी समय भोगना पडे। यही कारणहै कि धर्म प्राण पादरी साहब उस पथमें पदार्पण नहीं करते, निरीह हिन्दुओंकी निन्दा करके व यथासम्भव अपनी तृप्ति कर लेवेहैं। वीरभूमि राजपूतानेमेंभी इनकी जीभकी सरपट चाल अगरेजी भारतकी अपेक्षा कम देखी जातीहै, यही नहीं उनका धर्म प्रचार कार्यभी वही मन्द गतिसे होरहाहै।

सुनतेहैं कि मिशनरी महाशयगण इस देशके निवासियोंके चरित्रमे धर्मभीरुताका अभाव और कुसस्कारोंकी प्रबलता देखकर विशेष चिन्तित हुआ करतेहैं। किन्तु पश्चिमके देशोंमें जिससमय दासत्व प्रथा प्रचलितथी उस समय येही लोग बाइबिलकी दुहाई देकर इस घोर निठुर प्रथाका समर्थन करतेथे। जिस समय यूरोपमे पहले पहल दर्शन-विज्ञानकी चर्चा प्रारम्भ हुई, उस समय येही सुसस्कार सम्पन्न कृस्तान धर्मोपदेशक लोगोने राजशक्तिकी सहायतासे ज्ञानमार्गको कांटोसे रूधने और स्वतन्त्र विचारोंके दरवाजे बन्द करनेका यथासाध्य परिश्रम कियाथा। इन्ही लोगोंके लिये यूरोपके नगर नगर ग्राम ग्राममे दार्शनिक और तत्त्वानुसन्धानकारी लोगोंके शरीर चिताकी आगमें भस्म हुएथे, उन बातोंकी गवाही अबभी इतिहास खुले खजाने देरहाहै। यदि पुरानी बातोंकी आलोचना करना छोडकर इन लोगोकी वर्तमान कार्यप्रणालियोंपरही ध्यान दिया जाय तौभी इनके उद्देश्योंकी साधुतामें सन्देह उत्पन्न होने लगतेहै। जिस वैराग्य, शान्ति, पापभीरुता और स्वार्थत्यागकोही ये लोग हम लोगोंके सामने गौरवके साथ ईशुक्राइष्टकी प्रधान शिक्षा कहकर प्रकाशित किया करतेहैं, उन सब बातोंका अपने देशमें बिलकुल अभाव देखकरभी ये दुःख प्रकाशित नहीं करते। मिस्टर ए. आर. वेलेस रचित The wouderful century नामक पुस्तकमे लिखा हुआहै,-

The whole world is but the gambling table of six great powers,... just as gambling deteriorates and demoralizes individual, so the greed for dominion demoralizes governments. Witness their struggle in Africa and Asia, where millions are enslaved and bled for the exclusive benifit for their new rulers. It will be held by the historian of future that we of the 19thCentury were morally and socially unfit to possess for good or for evil what the rapid advance in scientific discoveries had given us. What a horrible mockery is all this, when viewed in the light of either Christianity or advancing civilisation. Of real Christian deeds there are none; no real charity, no forgiveness of injuries, no help to the oppressed nationalities, no effort to secure peace or good will among men.

सम्पूर्ण पृथ्वीमें छः प्रधान राजशक्तियां जुएके मैदानमे उतरी हुई हैं। जिस प्रकार जुआ खेलनेसे उसके खिलाडियोंकी नैतिक अवनति होतीहै, उससे कहीं अधिक राजबढ़ानेके लोभसे राजशक्ति अधोगतिको प्राप्त होतीहै। एशिया और आफ्रिका महाद्वीपमे इन लोगोका कैसा स्वार्थ-सग्राम चलरहाहै उसेभी एकबार देखना चाहिये। देखनेसे मालूम होगा कि अपने कार्योंकी सिद्धिके लिये ये लोग लाखो मनुष्योंको गुलामीकी बेडियोंसे कस रहेहैं। नये शासक लोगोंकी सुख–स्वच्छन्दता बढानेके लिये अभागे अधीन लोगोंको अपना रक्तदानभी करना पडताहै। भविष्य इतिहास लेखक गण अवश्यही कहेंगे कि उन्नीसवी सदीमें विज्ञानकी शीघ्र उन्नतिके कारण हमलेगोंने जो लाभ उठायाहै धर्म और समाजकी दृष्टिसे उसे ग्रहण करनेके लिये हम सर्वथा अयोग्य हैं। कृस्तानी धर्मकी ओर दृष्टिदेनेसे मालूम होगा कि ये सब कार्य कैसे भयानक प्रहसन स्वरूप हैं। यथार्थ कृस्तानी धर्मके अनुकूल एकभी काम नहीं होताहै। सच्ची दयालुता, अपकार करनेवालेके प्रति क्षमा और अत्याचार पीडितलोगोंकी सहायता आदि कोई वातें दिखायी नहीं पडतीहैं।

जिस स्वार्थपरतासे सब तरहके अधर्मोंकी उत्पत्ति होतीहै, जिसके अनिष्टकर परिणामके विषयमें भगवान श्रीकृष्णने गीतामें कहाहै,–

"सङ्गात सञ्जायते कामः कामात् क्रोधोभिजायते।
क्रोधाद्भवति सम्मोहः सम्मोहात् स्मृतिविभ्रमः॥
स्मृतिभ्रंशाद्बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति॥"

वही स्वार्थपरता पाश्चात्य समाजमें किस प्रकार प्रबल होगयीहै उसका वर्णन प्रोफेसर लैड ने अपने The people of India नामक ग्रन्थमें इसप्रकार लिखाहै,–

In business, in politics, in the family and the church, in internal and international relations, the reigning spirit of covetousness is at war with true spirit of morality and religion......The crimina

spirit of insolence has become dominant in the whole of Christendom. This insolence is the rime of thinking and acting as though there were no controlling power remaining in the Divine hands.

विषयवासनामें, राजनीतिक मैदानमें, कुटुम्बकार्यमें, धर्ममन्दिरोंमें, और स्वदेशी तथा मित्रजाति सबन्धी विचारके स्थानोंमें सर्वत्र यथार्थ धर्म और अच्छी नीतिके मूलतत्वोंके साथ अमानुषिक स्वार्थलोलुपताका घोर सग्राम चल रहाहै । कृस्तानी समाजमें सब जगह आजकल उद्दण्डताका दूषणीय भाव प्रधानता प्राप्त करचुकाहै । लोगोंमे यह प्रबलसा होगया है कि मनुष्यका शासन करनेके लिये जगदीश्वरके हाथमे कोई क्षमता शेष नहीं रहगयी है । इसी भावनामें भूलकर आजकल ये लोग अपना कार्य करतेहैं ।

इगलेण्डकी स्त्रियोमे भीतरहीभीतर शराबखोरीका दोष बहुत बढ गयाहै । इस विषयमें मेञ्चेस्टरकी महिला इन्सपेक्टर कुमारी फ्रांसिस जेनेटीने अपनी गतपूर्व रिपोर्टमे लिखाथा,—

Among women the gross death-rate from alcoholism was 74 per million higher than amongst males, and from 1881 to 1900, while the male death rate from this cause increased 48 per cent that of females went up 73 per cent. These figures applied only to deaths directly caused by inebriety, but many diseases were induced and aggravated by intemperance.

अर्थात् शराब खोरीसे पैदाहुए रोगोंके द्वारा गत वीसवर्षमें सैकडा पीछे ४८ पुरुष और सैकडा पीछे ७३ स्त्रियोंकी मृत्यु सख्या बढ गयीहै । इस अध्यायके आरम्भमे डाक्टर हण्टर का जो कथन उद्धृत हुआहै उससेभी मालूम पडताहै कि पश्चिमी समाज घोर अधर्मके गहरे कीचडमें लसफस होरहाहै और मनुष्यत्वके नामसे कलङ्ककी कालिमा पोत रहाहै । सच पूछा जाय तो इस समय यूरोपमेंही सैकड़ों हजारो नहीं किन्तु लाखों करोडों धर्मोपदेशकोंकी बहुतही आवश्यकता है । धर्मोपदेशकोंके लिये इस समय यूरोपके समान और कोई खासा मैदान खाली नहीं है । प्रत्येक धार्मिक पुरुषको इस समय यही करना चाहिये जिससे पश्चिमी समाजमे सुनीतिका सञ्चार हो पापके भयानक अग्निकुण्डमे जलते हुए लोगोंके हृदयमे धर्म्मामृत सिञ्चन हो किन्तु न जानें क्यों हमारे पादरी साहबोका ध्यान उस ओर अबतक नहीं आकर्षित होताहै । क्या यह थोडे आश्चर्यकी बातहै कि ये लोग अपने जिस देशी समाजके पाप नाश करनेमे सफल मनोरथ नहीं होते उसकीही सहायतामें न लगे रहकर भारतवर्षके समान इतने दूर देशमे आतेहैं, और यहाकी भाषा सीखकर उन लोगोके चरित्रोंका सशोधन करनेमें प्रयत्न और परिश्रम उठातेहैं जिन लोगोंके चरित्रोसे वे सर्वथा अनजान हैं । अपने घरका सुधार करनेकी अपेक्षा दूसरेकी बुराइया खोजना और दूसरोंको उपदेश करनेमें पडिताई बघारना चाहे सहज भलेही हो परन्तु प्रशसनीय कदापि नहीं हो सकता । गतनवम्बर महीनेके पियर्सस मेगजीन पत्रमें मिस अलिव कृश्चियन मालेरीने ईसाई धर्मका प्रचार करने वाले को लक्ष्य करके ठीक ऐसाही कहाहै,—

"I attend a meeting recently, at which funds were appealed for to mitigate the woeful sins of heathenism. It occurred to me as funny that souls ten thousands miles off should be accounted so much more precious than those in the London streets. Why, for instance, is it a more heinous crime for a Hindoo widow to be badly treated than for an English girl to be without shelter in London streets, starving and cold?"

इन लोगोकी कृपासे हिन्दू मुसल्मानोको हाट बाट घाटमे अपने धर्म अपने देशीय समाज और अपने पूर्व पुरुषोके लिये निन्दावाक्य सुनकर सन्तुष्ट होना पडना है। मनुष्यजाति एक मनुष्य दम्पती की सन्तान है, सापका बात करना, मछलीके पेटमे मनुष्यका निवास करना, शूकरके शरीरमे भूतका प्रवेश करना, सूर्यका गतिरहित होना, तारा मनुष्यके सिरपर गिरता है, गधेको देवदूत दिखायी पडतेहैं इत्यादि गँजेडियोंकी ऐसी बाइबिलकी बातोपर यदि कोई विश्वास न करसके तो मिशनरी लोग उसे असभ्यमूर्ख और कुसस्कारोसे ढका हुआ कहकर गालिया दिया करते हैं। भारतवासियोंके घरोंके भीतर घुसेडनेके लिये जनना मिशनकी सृष्टिसे जो अनर्थ हो रहेहैं उन्हेभी अब लोग समझने लगेहैं।

भेदनीतिमें ये ऐसे कुशल है कि निपुणता प्राप्त कुटिल राजनीति विशारद लोगोंके लियेभी वह अनुकरणीय है। ये लोग कहा करते हैं कि "अनेक गोरे लोग देशी लोगोके प्रति घृणा प्रकाशित किया करते हैं, अवश्यही यह दुःखकी बात है, परन्तु ब्राह्मण लोग अन्य जातियोंपर जो हृदयसे घृणा रखते हैं उसके आगे गोरोकी देशियोंके प्रति घृणा पासगमेंभी नहीं। इस जातिभेदके कारणही भारतवर्षकी वर्तमान पराधीनता उपस्थित हुई है।" किन्तु ये लोग यह नही कहना चाहते कि बीतेहुए सातसौ वर्षोंके बीचमें भारतके राजसिंहासनको लेकर हिन्दूमुसल्मानोंमें जो युद्ध हुएहैं उनमें जातिभेदके कारणही हिन्दुओंकी हार हुईथी, यहभी नहीं कहते कि पलासीके युद्धमे भी जातिभेदने अपना प्रभाव कहांतक दिखलायाथा। उस समय वैपम्यवाद रहने परभी देहातोंमे शिक्षित अशिक्षितोमे सद्भाव था। ब्राह्मणोंके मुँहसेभी "बढई बाबा" 'कुम्हार काका" आदि अपनपौ बतानेवाले सबोधन शब्द सुने जातेथे, इस समय बराबरीका दभप्रचार बढने परभी वह प्राचीन घनिष्ठता लुप्त होगयीहै, शिक्षित और अशिक्षितोंमे सद्भावका नाम नहीहै। हम समझते हैं कि इस बातको कोईभी अस्वीकार नही करसकता।

यह बात किसीसे छिपी नहीहै कि ईशुक्राइष्ट ससारमें शान्ति प्रतिष्ठाका उपदेश कर गयेहैं, परन्तु उस सुसमाचारका प्रचार करनेवाले पादरी लोग सदैव पराये धर्मोकी निन्दा करके शान्ति पूर्ण देशोमेभी अशान्तिकी भयानक आग धधकाया करतेहैं। जिस समय अगरेज लोग राजनीतिक प्रयोजनमें न्याय और धर्मको पांवोसे कुचल डालतेहैं उस समय उस पापकर्मका प्रतिवाद करनेके लिये इनमे साहस नही देखा जाता, किन्तु भारतवासियोके नैतिक साहसके अभाव विषयमें वक्तृता झाडनेके समय इनमें न जाने कहांका असीम साहस फाट पडताहै।

इसका कारण क्या है ? क्यों मिशनरी लोगोंके चरित्रमें ऐसा विषम भाव प्रधानता जमाये हुए दिखायी पडताहै। इसका उत्तर मिस्टर आलफ्रेड वेब इसप्रकार देतेहैं,-

Foreign mission work has become a career to thousands... Young men and women are enabled through it to marry, to settle down, and rear families. In the interest of missionary enterprise there is some times apparent a tendency to stimulate support by expatiating upon the darkest side of "Heathen" character The darker it is painted, the freer will be the flow of subscriptions, the more occupation there will be for the missionary.

इस समय विदेशमे जाकर धर्मप्रचार करनेका व्यवसाय हजारों लोगोकी जीविका चलानेक उपायसा हो गयाहै । इस व्यवसायसे आश्रयहीन युवक युवतियोको परिणीत होने, गृहस्थ बनने और वशवृद्धि करनेकी सुविधा हो सकतीहै । इसीलिये इस व्यवसायको बराबर चलाते रहनेके लिये, जिन लोगोंका विश्वास ईसाई धर्ममे नहींहै उन लोगोकी जातिके चरित्र सम्बन्धी दोप सर्वसाधारणमें विशेषरूपसे प्रकट करनेका प्रयत्न कियाजाताहै । क्योंकि भिन्नधर्मावलम्बी लोगोंके चरित्र जितनेही काले रगसे चित्रित किये जावेगे उतनेही अधिक परिमाणमें उन लोगोंमे धर्म फैलानेके लिये पश्चिमदेशके धर्मभीरु लोग मिशनरियोंके भेजनेके काममें चन्दा देवेगे । इससे एक पन्थ दो काज होंगे । मिशनरियोंका व्यवसाय खूब चटकेगा ।

इस विषयमें रूसी सम्राटके चीनकी राजधानी पेकिनमे रहनेवाले राजदूत मि० पललेसरने "रिव्यू आफ रिव्यूज" पत्रके सम्पादक स्टेड साहबसे कहाथा,–

Men become missionaries as a kind of business and women go into as a kind of excitement and from a love of travel knowing that if they got into trouble there is always the consul and the gun-boat. The fact is, it is all rascals who become Christians.

पुरुपलोग व्यवसायके लिये मिशनरी बनतेहैं, स्त्रियां देश विदेश घूमनेकी अभिलापासे विदेशमें जाकर धर्म प्रचार करनेके व्रतमें व्रती होतीहैं । वे जानतेही हैं कि किसीप्रकार विपद्में पडनेपर हमारे देशके राजदूत तोपोंसे भरेहुए जहाज सहायताके लिये भेजकर अवश्यही हमारी रक्षा करेंगे । सच पूछा जाय तो साधारणतः वेही विदेशी अपना धर्म त्यागकर कृस्तान बनतेहैं जो दुष्ट प्रकृतिके होतेहैं ।

इसके पश्चात् मिष्टर पललेसरने कहाथा कि चीन और फारसके देशी कृस्तानोंमे बहुतेरोंने इसी लिये कृस्तानी धर्म स्वीकार कियाहै कि अपने स्वदेशी राजा और समाजके बन्धन तथा दडसे छुटकारा पाजावें । किसी २ प्रान्तकी पुलिसकी रिपोर्ट पढनेसे जाना जाताहै कि भारतवर्षमेंभी अनेक मनुष्य बुरे काम करके राजदण्ड और समाजदडसे छुटकारा पानेकी आशासे ईसाई बनते हैं, । इस अवसरमे जर्मन सम्राटकी एक उक्ति इस समय स्मरण आती है । आपने कहाथा,–

By true Christian I mean a good soldier.

आपके विचारमे रूसी सच्चे ईसाई न होनेके कारणही जापानसे युद्धमें जीत प्राप्त नहीं कर सके हैं। इधर ज्योंही जापानी सेनापति वीरवर टोगोने पोर्ट आर्थरके रूसी जहाजी बेडेका तहसनहस कर उसके धुर्रे उडादिये त्योंही ईसाई पत्रोंने उसके ईसाई होनेकी घोषणाकी। किन्तु अन्तमें विदित हुआ कि यह बात असत्य थी। अन्य जापानियोंके समान टोगोभी बौद्ध धर्म का प्रतिपालन करताहै। आनन्दकी बात है कि मिशनरी लोगोंकी कपट चातुरी क्रमशः अनेक रूपोंमे प्रकट हो रहीहै।

इन्हीं स्वार्थ परायण धर्मध्वजी लोगोंकी कुटिलतासे इस देशके नवजवान लोगोंकी बुद्धि भ्रष्ट होतीहै, देशकी एकता नष्ट होतीहै, और अपने देशके समाजके प्रति बहुतोंकी भक्ति श्रद्धा घट जातीहै। (१) जिससे परदेशमें पश्चिमी समाजके सामने हम लोग हेय और उपेक्षित ठहर ते हैं। डिगवी महोदयनेभी यही बात कही है,–

As a hindrance, to their (the Indians') proper recognition as men of character and of noble life, the Christian missionary societies of England interested in India have done the Indian people almost irremediable mischief.

इन्ही कारणोंसे मिशनरी लोगोंके कार्योंका रहस्य यहांपर सक्षेपमे प्रकाश करनापडा।

मिशनरी लोगोंमे कुछ सदाशय और बुद्धिमान मनुष्यभी हैं। उन लोगोंके प्रयत्नसे इस देशमे कई एक अच्छे कार्य हुएहैं, अवश्यही इसके लिये हमलोग विशेष उपकृत और कृतज्ञ हैं। उन लोगोंने इस प्रकारके निन्दाकथनोंके विरुद्ध अपना तीव्र मन्तव्य प्रकाशित कियाहै। यहांपर एक मिशनरी विद्वानका कथन विस्तृत रूपसे उद्धृत किया जाताहै।

---

(१) मिशनरी लोगोंकी प्रकाशित भारतीय समाजकी निन्दापूर्ण पुस्तके विशेषकर मदरासके पादरी मरडक साहबकी पुस्तकोंकी आलोचना करते हुए "न्यूइण्डिया" पत्रके सम्पादक श्रीयुक्त विपिनचन्द्रपालने कहाहै,–

They seem oftentimes to us to be far more injurious, than helpful to the cause of social or religious reform. Indeed the cause of reform in India has suffered more from the abusive efforts of the professional reformers, both Indian and European than from any thing else. 5-11-03.

इसके पश्चात् पादरी मडरककी पुस्तकोंके सबन्धमें विशेष रूपसे कहाहै,–

As literature they are absolutely worthless......foolish and offensive effusions.

I see with a kind of indignation that these peaceable and submissive people have of late years been a kind of target, to aim at them the shafts of calumny and malevolence and to debase them by the most unfair means.

Alas! it is not Bibles the poor Hindoos want or ask for. It is food and raiment. When the belly is empty and the back bare, the best disposed even among the Christians feel themselves but very little inclined to peruse the Bible. .Bibles cannot be to them (the Hindoos) of the least utility. It has at present become a kind of fashion to speak of improvements and ameliorations in the civilization and institutions of the Hindoos, and every one has his own plans for effecting them, but if we could for an instant lay aside our European eyes and European prejudices and look at the Hindoos with some degree of impartiality, we should perhaps find that they are nearly our equals in all that is good and our inferiors only in all that is bad...... In fact in education, in manners, in accomplishments and in the discharge of social duties, I believe them superior to some European nations and scarcely inferior to any......If you will take the trouble to attend to the subject and examine with impartiality the charactar and conduct of the persons of the same condition in our countries and in India, and compare husbandman to husbandman, artificer to artificer, mechanic to mechanic etc, etc I apprehend that you will find that, in education and manners, the Hindoo shines far above the European.

Without a knowledge of alphabet, the Hindoo females are dutiful daughters, faithful wives, tender mothers and intelligent housewives ...Such is the result of my own observations, Abbe F. A. Dubios.

इस प्रकार औरभी कई विद्वानोंके मन्तव्य उध्दृत किये जा सकतेहैं। किन्तु स्थानकी कमी और अनावश्यक समझकर इस विचारको छोडते हैं। ए बहुदर्शी मिशनरी हिन्दू चरित्रके साथ पश्चिमी चारित्रकी तुलना करके जिस सिद्धान्तमे उपस्थित हुएहैं, उसपर सहसा विश्वास करनेकी हम लोगोंकी इच्छा नही होती। उसे पढकर यही समझमें आताहै कि हम बहुतही हीनचरित्र हैं, ससारमें सबसे अधम हैं। राजजातिके मुँहसे विना रोक टोक सदैव अपनी जातिकी निन्दा सुनते रहनेसे हम लोगोंकी ऐसी मानसिक अवनति हुईहै।

अंग्रेजी शासनके कारण इस देशकी धर्मशिक्षा और लोकशिक्षाको बहुत आघात लगाहै। इस आघातनेभी हमारी मानसिक अवनतिके सिद्ध होनेमें बडी सहायता कीहै। पहले इस देशमें लोकशिक्षा और ज्ञान विस्तारके बहुतसे उपाय प्रचलित थे। दक्षिण भारतके हेमाद्रिने तेरहवीं सदीमे "चतुर्वर्गचिन्तामणि" नामक एक प्रकाण्ड ग्रन्थ तैयार कियाथा, लिखे जानेके थोडेही दिनोंके पश्चात् बगालमें वह ग्रन्थ सुपरिचित होगयाथा। जयदेवके गीतगोविन्द

और गोवर्द्धनाचार्यके शतकने बंगालमें रचे जानेके बादही महाराष्ट्रमें सुख्याति प्राप्त करली थी। सारांश यह कि उस समय देशभेद, भाषाभेद, जातिभेद तथा श्रेणीभेदके रहते हुएभी भारतवर्षके सम्पूर्ण प्रान्त एकही ऐक्य सूत्रमे बँधे हुएथे, और देशमे ज्ञान विस्तारके सहज उपाय प्रचलित थे । लोकशिक्षाके प्रसंगमे स्वर्गीय बङ्किमचन्द्र चट्टोपाध्याय महोदयने बहुत ठीक लिखाहै;–

यदि लोकशिक्षाके उपाय नहीं थे तो शाक्यसिंहने किसप्रकार सम्पूर्ण भारतको बौद्ध धर्मकी शिक्षादी। समझकर देखो बौद्ध धर्मके सम्पूर्ण कूटतर्क समझनेमे हमारे वर्तमान समयके दार्शनिक लोगोके सिरका पसीना किस प्रकार पावके तलुओको भिगा देताहै । ... . किन्तु उसी कूटतत्त्वमय, निर्वाणवादी, अहिंसात्मा, दुर्बोधगम्य धर्मको शाक्यसिंह और उसके शिष्योंने सम्पूर्ण भारतवर्षके गृहस्थ, सन्यासी, पण्डित, मूर्ख, विषयी, उदासीन, ब्राह्मण, शूद्र आदि सब श्रेणीके लोगोको सिखायाथा, फिरभी क्या कहा जासकताहै कि इस समय लोकशिक्षाके उपाय नही थे ? जगद्गुरु शङ्कराचार्यने उसी मजबूतीके साथ जडपकडे हुए दिग्विजयी, साम्यमय बौद्ध धर्मका लोप करके फिरसे सम्पूर्ण भारतवर्षको शैवधर्म सिखलाया, क्या शिक्षाके उपायोके न रहनेसे ऐसा हुआ ? अभी थोडे दिनकी बातहै कि चैतन्यदेवने तमाम उडीसा प्रान्तमें वैष्णव धर्मका प्रचार करदिया क्या लोकशिक्षाके उपाय नहीं थे ?

अन्तमे बङ्किम बाबूने यहांतक कहा है कि इस समय लोकशिक्षाके उपाय न होनेके कारणही राममोहन रायके समयसे लेकर इस समयतक अनेक प्रयत्न होते रहने परभी सर्वसाधारणमे ब्राह्मधर्मका प्रचार नहीं होसकाहै । उस समय ग्राम ग्राम और नगर नगरमें जो कथा पुराणके पाठ होतेथे उसका प्रसंग उठाकर उन्होंने लिखाहै.–

कथा कहनेवाले कथक सीताका सतीत्व, अर्जुनकी वीरता, लक्ष्मणका सत्यव्रत, भीष्मका इन्द्रिय दमन, राक्षसियोंका प्रेमप्रवाह, दधीचिका आत्मसमर्पण आदि विषय संस्कृतके अच्छे वाक्योंमे सुन्दर कण्ठसे अच्छे अलंकारोंके साथ आपामर सर्व साधारणके सामने कहा करतेथे । जो हल जोतते थे, जो रुई धुनकते थे, जो चरखा कातते थे, जिन्हें भोजन मिलता था और जिन्हें नहीं मिलता था वे सभी सीखतेथे कि धर्म नित्य है, धर्म देवताओंका बनाया हुआहै, आत्मान्वेषण करना अश्रद्धेय नहीहै, जीवन परोपकारके लियेहै, ईश्वरहै, वह संसारकी रचना करताहै, ससारका पालन करताहै, संसारका नाशभी वही करताहै, पाप पुण्य है, पापका दण्ड और पुण्यका पुरस्कार है, यह जन्म अपने लिये नहीं, दूसरोंके लिये, अहिंसा परम धर्महै, और ससारकी भलाई करना परम कार्यहै। वैसी शिक्षा अब कहांहै ? अब वैसे कथा कहनेवाले कहा है ? क्यों न रहे ? देशके नवयुवक लोगोकी रुचि बिगडजानेके कारणही उनका लोप हुआ। (ऐसे अवसरमें अनेक लोग प्रश्न करेंगे) कथा कहनेवालोकी कथा सुननेसे क्या होगा ? दक्ष यज्ञमें, विश्वयज्ञमे ईश्वरके लिये ऐश्वरीय आत्मसमर्पण सुननेसे क्या होगा ? (सो) लोकशिक्षाके भण्डारस्वरूप कथा कहनेवालोंका लोप होगया । अंगरेजी शिक्षाके प्रभावसे लोकशिक्षाके उपाय क्रमशः लुप्त होनेके बदले बढते नहीं है ।

क्योंकि अंगरेजी शिक्षा होनेपरभी देशमें लोकशिक्षाके उपाय ह्रास होनेके अतिरिक्त बढते नहीं हैं। इसका मुख्य कारण यही है कि शिक्षितोंमे अशिक्षितोंके प्रति सहानुभूति नहीं है। शिक्षित

लोग अशिक्षितोके हृदयकी बात नहीं जानते हैं, यहांतक कि शिक्षित अशिक्षितोंकी ओर आंख उठाकरभी नही देखते हैं ।

दक्षिण और पश्चिम भारतवर्षमें अबभी कथा और पुराणपाठकी रीति प्रचलित है, किन्तु अंगरेजी शिक्षाके प्रभावसे वहांभी दिनोंदिन इसकी घटती हो रहीहै । कथा कहनेवालोके द्वारा जिन लाभोंके होनेका वर्णन बङ्किम बाबूने कियाहै, उसकी यथार्थता मिस्टर सी. एफ. गार्डन कमिगके बनाये हुए In the Himalayas and on the Indian Plains ग्रन्थके निम्न लिखित वर्णनसे स्पष्ट हो जावेगी ।

Hindoos whose marvellous self-denial in the service of their gods does certainly put our self-indulgent practice of Christianity to the blush. No one who studies the creed and practice of this race with unbiassed mind, can fail to be struck with their intense earnestness in living up to teaching, which, however, distorted, has in it rich veins of thought.. ...which we deem most sacred...So too, although we Christians are taught that "whether we eat or drink or whatsoever we do, we should do all to the Glory of God,' 'I think it can scarcely be a transgression of charity to judge that comparatively few habitually obey this precept, whereas the most casual observer cannot fail to see 'that in the daily life of the average Hindoo this is the ruling principle

आश्चर्यकी बात है कि विदेशी विद्वानभी इस बातको देख रहेहैं किन्तु हम लोग सब समयमे इस बातको देखने और समझनेमें समर्थ नही होसकते । यदि प्रबल बातूनी विदेशियोंके मुखसे इसप्रकार सदैव स्वजाति और स्वधर्मकी निन्दा सुननेमें हम लोगोंको बाध्यन होना पडे तो क्या हमारी ऐसीही शोचनीय मानसिक अवनति हो ?

कुछ दिनोंके पहले बगलाके "हितवादी" पत्रमे एक चिन्ताशील पत्रप्रेरकने ठीकही लिखाथा,–

हमलोगोके आत्मविश्वासका अभाव हमारी उन्नतिके मार्गको रोकनेवालाहै । . ..यह आत्मविश्वासका अभाव अगरेजोंकी दी हुई शिक्षाका एक फल है । अङ्गरेजोंने भारतमे आकर अबतक इतिहासमें, समाचारपत्रोंमें, सभाओं और कभी २ हमारे कानोंमें जीतोड प्रयत्नके साथ हम लोगोंकी निन्दाके गीत गाये हैं । इतने परिश्रम और चिल्लाहटके पश्चात् यदि हम लोग * सचमुचही न कुछ पदार्थमें परिणत हो जायँ तो इसमे विचित्रता क्या है ? इसीप्रकार उपेक्षित होकर आयरिश जाति आयर्लेंडमें फटी हालतमे मलिन शरीर गुलामोंके समान थी किन्तु अमेरिकामे जाकर वह अङ्गरेजोंके देखते देखतेही कैसी महाजातिमें पलट गई ! कौन कहसकताहै कि अङ्गरेजोंके पैदा किये हुए जातीय पौरुषहीनताके कुहरे (National hypnotism) के दूर होनेपर भारतकी नष्ट हुई महाशक्ति पुनरुज्जीवित नही हो उठेगी ।

इसके पश्चात् जातीय दरिद्रताका उल्लेख करते हुए उन्होंने लिखाथा,–

* यहापर मूल लेखमें लेखकने बगाली शब्द लिखाथा ।

दरिद्रके पतिप्राणा स्त्री आदर्शपुत्र और देवीतुल्य कन्या रहते हुएभी उसकी अशान्ति दूर नहीं होतीहै । दरिद्रताके साथही हजारों कलह, विवाद, नीचता, स्वार्थ और रोग आकर घरमें घुस जातेहैं । दरिद्रताके दूरहोनेपरही ये सब दोष आपही आप नष्ट होजातेहै । हम लोगोका जातीय जीवन दिनोदिन घोर दरिद्रतासे ग्रस्त होरहाहै । धन नाशके साथही स्वभावसेही लोगोंकी स्वार्थचिन्ता बढतीहै । इसीलिये हम लोग एक क्षुद्रवस्तुभी दूसरेके लिये—अपने देशके लिये त्याग नही करसकते क्योंकि वही हमारा सर्वस्वहै । यह जातीय दरिद्रता नष्ट होनेपर, घरमें लक्ष्मी-का आगमन होनेपर, चरित्रोंमेंभी अनेक सद्गुणोंकी स्फूर्ति दिखायी पडेगी । तब इतना प्रयासभी नहीं करना पडेगा । तब एक दिनमेंही हमलोग यथार्थ मनुष्य होजावेंगे ।

साराश यह कि दसकरोड भारतसन्तानके आधे पेट रहनेका क्लेश यदि दूर हो मध्यम श्रेणीके लोगोंके जीवन सग्रामकी तीव्रता यदि घटे, सरकारी अफसर नशीली चीजोंका प्रचार रोकें, यदि भारतवासियोंको बुद्धिका विकाश करनेका अवसर दे तो सात्विकता प्रिय हिन्दू मुसल्मानोंका चारित्र बल निःसन्देह बढजावे ।

किसानोंकी दुर्गति ।

The condition of agricultural Labourers in India is a disgrace to any country calling itself civilised—W. R. Robertson (Agricultural Dept. Madras).

बिना अन्नहैं अधमरे, चिन्ता ज्वरसे जीर्ण ।
हाड़ चाम मिलि एकभो, बिनु भोजन तनु क्षीण ॥

चाहे अपनी जातिका हो, चाहे दूसरी जातिका, अपने देशका हो चाहे दूसरे देशका, राजा यथार्थमें सर्व साधारणका प्रतिनिधि मात्रहै । समाजके प्रतिनिधिके रूपमें दुष्टोका दमन करना, शिष्टोंका पालन करना तथा समाजके लोगोंकी धर्मनीति और धन धान्य बढानेके उपाय आदिक अच्छी व्यवस्था करके उनकी सुख शान्ति अटल रखनाही उसका प्रधान कर्तव्य है । अवश्यही इस कर्तव्यको पूर्ण करनेके लिये अधिक खर्चकी आवश्यकता है । सो उस खर्चको चलानेके लिये राजाको प्रजासे कर लेना पडता है । प्रजा भी सुख शान्तिकी आशासे आनन्द पूर्वक राजाको कर देती है । राजाको एक गुणा करलेकर ऐसे अच्छे ढगसे उसका खर्च करना चाहिये जिससे प्रजा हजार गुणा उपकृत हो । कविकुल गुरु कालिदासने आदर्श नरेश दिलीपके गुण वर्णन करते हुए कहा है,—

प्रजानामेव भूत्यर्थं स ताभ्यो बलिमग्रहीत् ।
सहस्रगुणमुत्स्रष्टुमादत्ते हि रसं रविः ॥

प्रजाका इस प्रकार अपार मगल साधन करनेके कारणही हमारे शास्त्रोंमे राजा देवताओंके अशसे उत्पन्न माना जाता है, देवताके समान उसपर भक्ति रखनेकी आज्ञा की गयी है ।

यही कारण है कि, राजाके मरने पर प्रजा विद्रोहके डरसे डरने लगती है। जबतक दूसरा राजा गद्दीपर नहीं बैठ जाता है तब तक वह भयकी अवस्थामें ही रहती है। जब दूसरा राजा गद्दीपर बैठ कर प्रजा पालनका भार ले लेता है तब प्रजाकी चिन्ता दूर होती है। सब लोग प्रसन्न होते हैं कि, अब जीविका निर्वाहके विघ्न जाते रहे। इसीसे नये राजाके राज्याभिषेकके उत्सवके समय प्रजाके लोग आनन्द मनाया करते हैं। यदि राजाके न रहनेकी स्थितिमें समाजकी शान्ति भग होनेका भय न रहता तो नये राजाके अभिषेक कार्यको प्रजाके लोग "उत्सव" नाम देते या नहीं इसमें सन्देह है। जबतक राजाके जन्म मरणसे प्रजाके दुःख सुखका सम्बन्ध इस पृथ्वीमें बना रहेगा तबतक राजाके मरनेके समय शोक प्रकाशित करना और नये राजाके अभिषेकके समय उत्सव मनाना मनुष्य समाजसे नष्ट नही होगा।

साराश यही है कि, राजा प्रजा समूहका प्रतिनिधि है। समाजके प्रतिनिधि रूपमें उसे दुष्टोंका दमन और शिष्टोंका पालन करना पडता है। शासन, पालन और सुख समृद्धिकी इच्छासे प्रजा राजाको कर देती है। इसीसे कर लेनेवाला राजा सभ्य समाजमें "प्रजाका धन रक्षक" कहा जाता है। राज्यके खजानेमें जो धन इकट्ठा होता है उसमें राजाका अधिकार थोडा ही रहता है, वह सर्व साधारणकी सम्पत्ति (Public wealth) समझी जाती है। धर्मानुसार उस "प्रजाकी सम्पत्तिको" प्रजाकी भलाईके कामोंमें खर्च करनेके लिये राजा जिम्मेवार है। सभ्यदेश और सभ्य समाजोंका यही नियम है। सुसभ्य अगरेजी राज्यमें इस नियमकी बहुत ही प्रबलता है। किन्तु दुर्भाग्यसे सरकारी अफसर लोग इस देशमें इस नियमका पूर्ण रूपसे पालन नही करते भारतवर्षकी गवर्नमेण्ट इगलेण्डके नीतिमार्गको छोडकर धनके लोभमें अन्धी होकर प्रजासे हदसे अधिक कर वसूल कर लेती है, और खर्च करनेके समय अनेक कार्योंमे मनमाना अन्धाधुन्ध धन खर्च किया करती है। प्रजाकी भलाई बुराईकी ओर वह सदैव एक समान दृष्टि नही रखती है। अनेक प्रकारसे इस देशमें राजधर्मका उल्लघन हुआ करता है।

अनुचित खर्चके विषयकी आलोचना दूसरे स्थानमे की जावेगी। इस स्थानपर केवल इसी बातकी सक्षिप्त आलोचना करनी है कि, हदसे अधिक राजकर लेनेके कारण भारतवर्षकी किसान प्रजा धनशक्तिमे बहुतही दीन हीन होकर किस प्रकार दुर्गतिके गहरे गढेमें गिर रही हे।

सर रमेशचन्द्रदत्त महोदयने दिखलायाहै कि, हिन्दुओं और मुगलोंके शासनमे जिस अन्दाजसे जमीनका लगान लिया जाताथा उससे कहीं ज्यादा—प्रजाकी दरिद्रता बढ जानेपरभी वसूल किया जाताहै। यही नहीं किन्तु बगालको छोडकर अन्य प्रदेशोंमे जमीनका लगान क्रमशः बढताही जा रहा है। अधिक लगान देनेके कारणही लोगोंकी ऐसी दीन हीन दशा होरहीहै। किसानलोग इस भयसे खेतीकी उन्नति नहीं करते कि न जाने कब लगान बढा दिया जाय। कोई एक मनुष्य समझता है कि "जमीन का लगान १०) रुपयेसे बढकर १२) होजानेसे मैं इस खेतको रख नही सकूगा, तब दूसरा मनुष्य इसे ले लेवेगा। फिर हम किस लिये जीतोड परिश्रम करके खेती सुधारनेमें जी खपावें।" इससे खेतीकी भूमि दिनों दिन

दरिद्रके पतिप्राणा स्त्री आदर्शपुत्र और देवीतुल्य कन्या रहते हुएभी उसकी अशान्ति दूर नहीं होतीहै । दरिद्रताके साथही हजारों कलह, विवाद, नीचता, स्वार्थ और रोग आकर घरमें घुस जातेहैं । दरिद्रताके दूरहोनेपरही ये सब दोष आपही आप नष्ट होजातेहै । हम लोगोका जातीय जीवन दिनोंदिन घोर दरिद्रतासे ग्रस्त होरहाहै । धन नाशके साथही स्वभावसेही लोगोंकी स्वार्थचिन्ता बढतीहै । इसीलिये हम लोग एक क्षुद्रवस्तुभी दूसरेके लिये–अपने देशके लिये त्याग नही करसकते क्योंकि वही हमारा सर्वस्वहै । यह जातीय दरिद्रता नष्ट होनेपर, घरमे लक्ष्मी-का आगमन होनेपर, चरित्रोंमेभी अनेक सद्गुणोंकी स्फूर्ति दिखायी पडेगी । तब इतना प्रयासभी नहीं करना पडेगा । तब एक दिनमेंही हमलोग यथार्थ मनुष्य होजावेंगे ।

सारांश यह कि दसकरोड भारतसन्तानके आधे पेट रहनेका क्लेश यदि दूर हो मध्यम श्रेणीके लोगोंके जीवन सग्रामकी तीव्रता यदि घटे, सरकारी अफसर नशीली चीजोका प्रचार रोकें, यदि भारतवासियोको बुद्धिका विकाश करनेका अवसर दे तो सात्विकता प्रिय हिन्दू मुसल्मानोंका चारित्र बल निःसन्देह बढजावे ।

किसानोंकी दुर्गति ।

The condition of agricultural Labourers in India is a disgrace to any country calling itself civilised–W. R. Robertson (Agricultural Dept. Madras).

बिना अन्नहैं अधमरे, चिन्ता ज्वरसे जीर्ण ।
हाड़ चाम मिलि एकभो, बिनु भोजन तनु क्षीण ॥

चाहे अपनी जातिका हो, चाहे दूसरी जातिका, अपने देशका हो चाहे दूसरे देशका, राजा यथार्थमे सर्व साधारणका प्रतिनिधि मात्रहै । समाजके प्रतिनिधिके रूपमें दुष्टोको दमन करना, शिष्टोका पालन करना तथा समाजके लोगोंकी धर्मनीति और धन धान्य बढानेके उपाय आदिक अच्छी व्यवस्था करके उनकी सुख शान्ति अटल रखनाही उसका प्रधान कर्तव्य है । अवश्यही इस कर्तव्यको पूर्ण करनेके लिये अधिक खर्चेकी आवश्यकता है । सो उस खर्चेको चलानेके लिये राजाको प्रजासे कर लेना पडता है । प्रजा भी सुख शान्तिकी आशासे आनन्द पूर्वक राजाको कर देती है । राजाको एक गुणा करलेकर ऐसे अच्छे ढगसे उसका खर्च करना चाहिये जिससे प्रजा हजार गुणा उपकृत हो । कविकुल गुरु कालिदासने आदर्श नरेश दिलीपके गुण वर्णन करते हुए कहा है,–

प्रजानामेव भूत्यर्थं स ताभ्यो बलिमग्रहीत् ।
सहस्रगुणमुत्स्रष्टुमादत्ते हि रसं रविः ॥

प्रजाका इस प्रकार अपार मगल साधन करनेके कारणही हमारे शास्त्रोंमे राजा देवताओंके अशसे उत्पन्न माना जाता है, देवताके समान उसपर भक्ति रखनेकी आज्ञा की गयी है ।

यही कारण है कि, राजाके मरने पर प्रजा विद्रोहके डरसे डरने लगती है। जबतक दूसरा राजा गद्दीपर नहीं बैठ जाता है तब तक वह भयकी अवस्थामें ही रहती है। जब दूसरा राजा गद्दीपर बैठ कर प्रजा पालनका भार ले लेता है तब प्रजाकी चिन्ता दूर होती है। सब लोग प्रसन्न होते हैं कि, अब जीविका निर्वाहके विघ्न जाते रहे। इसीसे नये राजाके राज्याभिषेकके उत्सवके समय प्रजाके लोग आनन्द मनाया करते हैं। यदि राजाके न रहनेसे विधिनिष्ठ समाजकी शान्ति भंग होनेका भय न रहता तो नये राजाके अभिषेक कार्यको प्रजाके लोग "उत्सव" नाम देते या नहीं इसमें सन्देह है। जबतक राजाके जन्म मरणसे प्रजाके दुःख सुखका सम्बन्ध इस पृथ्वीमें बना रहेगा तबतक राजाके मरनेके समय शोक प्रकाशित करना और नये राजाके अभिषेकके समय उत्सव मनाना मनुष्य समाजसे नष्ट नहीं होगा।

सारांश यही है कि, राजा प्रजासमूहका प्रतिनिधि है। समाजके प्रतिनिधि रूपसे उसे दुष्टोंका दमन और शिष्टोंका पालन करना पड़ता है। शासन, पालन और गुप्त मर्यादाकी इच्छासे प्रजा राजाको कर देती है। इसीसे कर लेनेवाला राजा सभ्य समाजमें "प्रजाका धन रक्षक" कहा जाता है। राज्यके खजानेमें जो धन इकट्ठा होता है उसमें राजाका अधिकार थोड़ा ही रहता है, वह सर्व साधारणकी सम्पत्ति (Public wealth) समझी जाती है। धर्मानुसार उस "प्रजाकी सम्पत्तिको" प्रजाकी भलाईके कामोंमें खर्च करनेके लिये राजा जिम्मेवार है। सभ्यदेश और सभ्य समाजोंका यही नियम है। सुसभ्य अंगरेजी राज्यमें इस नियमकी बहुत ही प्रबलता है। किन्तु दुर्भाग्यसे सरकारी अफसर लोग इस देशमें इस नियमका पूर्ण रूपसे पालन नहीं करते भारतवर्षकी गवर्नमेण्ट इङ्गलेण्डके नीतिमार्गको छोड़कर धनके लोभमें अन्धी होकर प्रजासे हदसे अधिक कर वसूल कर लेती है, और खर्च करनेके समय अनेक कार्योंमें मनमाना अन्धाधुन्ध धन खर्च किया करती है। प्रजाकी भलाई बुराईकी ओर वह सदैव एक समान दृष्टि नहीं रखती है। अनेक प्रकारसे इस देशमें राजधर्मका उल्लंघन हुआ करता है।

अनुचित खर्चके विषयकी आलोचना दूसरे स्थानमें की जावेगी। इस स्थानपर केवल इसी बातकी संक्षिप्त आलोचना करनी है कि, हदसे अधिक राजकर लेनेके कारण भारतवर्षकी किसान प्रजा धनशक्तिमें बहुतही दीन हीन होकर किस प्रकार दुर्गतिके गहरे गढेमें गिर रही है।

सर रमेशचन्द्रदत्त महोदयने दिखलायाहै कि, हिन्दुओं और मुगलोंके शासनमें जिस अन्दाजसे जमीनका लगान लिया जाताथा उससे कहीं ज्यादा—प्रजाकी दरिद्रता बढ जानेपरभी वसूल किया जाताहै। यही नहीं किन्तु बंगालको छोड़कर अन्य प्रदेशोंमें जमीनका लगान क्रमशः बढताही जा रहा है। अधिक लगान देनेके कारणही लोगोंकी ऐसी दीन हीन दशा होरहीहै। किसानलोग इस भयसे खेतीकी उन्नति नहीं करते कि न जाने कब लगान बढा दिया जाय। कोई एक मनुष्य समझता है कि "जमीन का लगान १०) रुपयेसे बढकर १२) होजानेसे मैं इस खेतको रख नहीं सकूंगा, तब दूसरा मनुष्य इसे ले लेवेगा। फिर हम किस लिये जीतोड परिश्रम करके खेती सुधारनेमें जी खपावें।" इससे खेतीकी भूमि दिनों दिन

रही बनती जा रहीहै । दूसरी ओर यदि सरकार खेतीकी उन्नतिके उपाय सुझाती है तो लोग यही समझने लगतेहैं कि, जहां दो एक फसल अच्छी उगी तहा सदाके लिये लगान बढा दिया जावेगा, इसीलिये सरकारी अफसर किसानोके साथ सहानुभूति दिखाते हैं । इस डरसे डरकर किसान लोग उपज बढानेके उपायोको करनेमे अग्रसर नहीं होतेहैं । कृषिप्रधान देशके लिये इससे बढकर और भयानक दशा क्या होसकतीहै ।

सर रमेशचन्द्र महोदयने और भी दिखलायाहै कि १७६३ ई० से १८२२ ई०तक सरकारने बंगालके जमीन्दारोकी आमदनी पर सैकडा पीछे ९०) और उत्तर भारतवर्षमे सैकडा ८०) लियाथा मुगलशासनके समयभी इस अन्दाजसे कर लेनेकी रीति थी परन्तु वे लोग जितना नियत करते थे उतना वसूल नही करते थे इसके सिवाय प्रजाकी शिल्प, वाणिज्य सम्बन्धी उन्नति करनेमें उनकी विशेष दृष्टि रहती थी । महाराष्ट्रदेशके राजा लोगभी राजकर अदा करनेमें विशेष कठोरता नहीं करते थे । * किन्तु अङ्गरेज जितना कर चाहते हैं उतना कडाईके साथ गला दबा कर ले लेतेहैं । बगालके अन्तिम नव्वाबने सन् १७६४ ई० में अर्थात् अपने राज्यकालके अखीर वर्षमें प्रजासे ८१७५५३०) रुपये वसूल किये थे । अंग्रेजोंने बंगाल, विहार और उडीसाका अधिकार पाकर ऐसी कठोरतासे काम लिया कि, सन् १७६४ ईस्वीमे राज्यकी आमदनी २६८०००००) रुपये होगयी । सन् १८०२ ईस्वीमें अवधके नव्वाबसे अगरेजोंने इलाहाबादके सहित कई जिले ले लिये । मुसलमान् नव्वाबके समयमें इन कई जिलेकी आमदनी १३५२३४७०) रुपये थी इसमे भी नव्वाब कुछ वसूल करते थे और कुछ प्रजाको छोडदेते थे । किन्तु अंग्रेजोंने तीन वर्षमे ही वार्षिक १६८२३०६०) रुपयेके हिसाबसे कर वसूली की । मदरासमें अंग्रेजोंने अब पहले पहल जमीनका लगान निश्चित किया तब किसानोको खेतीसे जो आमदनी होती थी उसका आधा हिस्सा लगानमे देना पडता था । सन् १८१७ई०मे महाराष्ट्र प्रान्त अगरेजोंके हाथ आया तब उस प्रान्तकी आमदनी अस्सीलाख रुपये थी, किन्तु कुछ वर्षोंके बीचमेही अंग्रेजोंने उसे बढाकर वार्षिक डेढ करोड रुपये तक पहुँचा दिया । तबसे धीरे धीरे महाराष्ट्र नरेशका लगान बढताही जा रहा है ।

पाठक यह न समझें कि, अंग्रेजी शासनमें प्रजाकी आमदनी बढनेके कारण अथवा खेतीका विस्तार बढजानेके कारण राज्यकी आमदनीमें ऐसी बढती हुई है । थोडे समयमे इस प्रकार अयोग्य राज्यकरकी अधिक वसूलीका कारण अगरेज कर्मचारियोंकी निर्दयताही है । विशप हिबरने सम्पूर्ण भारतवर्षमे घूमकर सन् १८२६ ई० मे लिखाथा,–

No Native Prince demands the rent which we do

---

* कांग्रेसके विगत १९ वें अधिवेशनके सभापति श्रीयुत बाबू लालमोहन घोषनेभी यही बात कही थी,–

The elastic modes (of collection) of the Moghul and the Mahratta have given place to cast iron system worked by a host of highly paid and "promotion-by-result" settlement officers.

अर्थात् हमारे समयमें कोई भी देशी राजा प्रजासे इतना अधिक लगान नहीं वसूल करता।
कर्नलब्रिग्सने सन् १८३० ईस्वीमें लिखा था –

A land tax like that which now exists in India, professing to absorb the whole of the landlord's rent, was never known under any Government in Europe or Asia.

अर्थात् एशिया अथवा यूरोपमें किसी भी राजाके शासनमें कभी भी इस प्रकार अधिक जमीनका लगान वसूल नहीं कियागया। इस विषयमें उस समयके और भी अनेक विज्ञ अंगरेज लेखकोंके कथन प्रमाणके लिये उद्धृत किये जासकते हैं। किन्तु भारत गवर्नमेण्ट यह बात स्वीकार करना नहीं चाहती। उसकी लगान वसूल करनेकी नीतिके दोष दिखाकर स्व० रमेशचन्द्र-दत्तमहोदयने जो निबन्ध लिखाथा उसके उत्तरमें लार्डकर्जनने सन् १९०२ की १६ जनवरीको एक सरकारी रेज़ूलेशनमें लिखाथा:–

"Historically it (the Land Revenue system of the present Government) owes its immediate origin to practices inherited from the most decadent period of native rule."

अर्थात् इतिहासकी आलोचना करके कहनेमें कहना पड़ता है कि, भारत गवर्नमेण्टकी लगान वसूल करनेकी नीति अठारहवीं सदीके पतनशील देशी राज्योंकी प्रचलित नीतिका अनुकरण करके स्थिर हुई है।

इस विषयमें विशपहिबर, कर्नल ब्रिग्स आदि उस समयके लेखकोंने अपनी आंखोंसे देशके किसानोंकी दशा देखकर जो लिखाथा उसपर विश्वास करें, अथवा इतने दिनोंके बाद लार्ड कर्जनने अपनी कल्पनाके बलसे जो लिखाहै उसेही सत्य समझकर उसपर विश्वास करें। इस समस्याकी समालोचना कौन करेगा! जोहो, सरकारी लगान वसूल करनेमें जैसी कठोरताओंसे काम लियाहै उनका वर्णन सरकारी कागजपत्रोंमें ही पाया जाताहै। सन् १७६९ ईस्वीमे बंगालमें अकाल पड़नेकी सम्भावना हुईथी अनाज और खाने पीनेकी चीजे महगी होगयीं। किन्तु राजकर्मचारियोंने लगान वसूल करनेमें यथासम्भव बहुत ही चतुराई दिखलायी। हण्टर साहबके Anals of Rural Bengal नामक ग्रन्थके २१ वे सफेमे लिखा है कि,–

The revenues were never so closely collected before.

इसके पहले इस प्रकारकी कठोरताके साथ कभी भी लगान वसूल नहीं किया गयाथा।

इसके अगले वर्षमें बंगालमें भयानक अकाल फैल गया। राजकर्मचारियोंने विलायतवालोको सूचित किया कि, "असख्य लोग भूखों मरते हैं" भाषामें ऐसे शब्द नहीं हैं कि, लोगोंके कष्टोंका वर्णन किया जा सके। एक खूब उपजाऊ पुर्निया जिलेमेंही कई महीनोंमे एक तिहाई मनुष्य दुर्भिक्षके कारण मरेहैं, किन्तु आनन्दकी बात है कि लगानके जिस प्रकार घटजानेका पहले भय हुआ था काममें वैसा नही हुआ। उनके असली कथनका अन्तिम भाग यों है;–

But we are happy to remark the collections have fallen less short than we supposed they would.

सन् १७७१ ईस्वीमे भी अंगरेजोने प्रजासे कर वसूल करनेमे उन्नति दिखाई । उस समयके सरकारी कर्मचारियोंने लिखा था,—

Notwithstanding the great severity of the late famine and the great reduction of the people thereby, some increase has been made in the settlements both of the Bengal and the Behar provinces for the present year.

अर्थात् भयानक अकाल और मनुष्य नाश होते रहनेपर भी इस समय बगाल और विहारका सरकारी लगान बढानेकी व्यवस्था हुई है । इस अकालमें प्राय: दश लाख बगालियोंने भूखकी पीडा सहकर प्राण त्याग किया था । अगरेजोने इस भयानक विपत्तिके समयमें प्रजाके लगानमे कुछ कमी नही की उलटा पहले वर्षोंसे भी अधिक लगान वसूल किया । वारेन हेस्टिंगसकी बातोमे प्रकाशित हुआ है,—

The net collections of the year 1771 exceeded even those of 1768.

इतिहासके पाठकोंसे यह बात छिपी नहीं है कि, वारेनहेस्टिंगसके हरसाल बन्दोवस्त करके जमीनका महसूल बढानेके प्रयत्नके कारण बगाली प्रजा कैसी तग आगयी थी । सौभाग्यकी बात है कि, लार्डकार्नवालिसके बगालमें दवामी बन्दोवस्त कर देनेसे बगाली प्रजा अपार अत्याचारोसे छुटकारा पागयी । ꙮ

कप्तान एडवर्ड्सका कथन पढनेसे जाना जाता है कि, अंगरेजी शासनमे आनेसे अवध प्रदेशकी दशा किस प्रकार पलट गयी थी ! सन् १७७४ ई० मे नव्वाब सुजाउद्दौलाके शासनकालमें उक्त कप्तान साहबने अवध प्रदेशको कृषि, शिल्प वाणिज्यमे उन्नत देखाथा । इसके पीछे के वर्षमें नव्वाबकी मृत्युपर अगरेज लोग अवधमे घुसे । तबसे इस प्रान्तका सम्पूर्ण धन खिचने लगा । सन् १७८३ ई०मे कप्तान एडवर्ड्सने जाकर देखा कि, अवध प्रान्त—

FORLORN AND DESOLATE.

निराश्रय और मनुष्य शून्य हो गयाहै । इस समय वारेन हेस्टिंगसने अवधकी बेगमोंके साथ न कहने योग्य भयानक अत्याचार करके जिस प्रकार उनसे धन लियाथा,लगान न देसकनेपर जिस प्रकार प्रजाके लोगोको पीजडोमे बन्द करके धूपमे डाल रखा जाता था, अत्याचार और बेइज्जत होनेके डरसे जिस प्रकार किसान लोग अपने लडके बच्चे और लडकिया बेच कर भी लगान अदा करनेमे लाचार कियेजाते थे, कोई उपाय न होनेसे देश छोडकर भाग जानेके समय जिस प्रकार सेनाकी सहायतासे उन अभागोका मार्ग रोका जाताथा, अन्तमे प्रजाके विद्रोही

ꙮ बगालके सभी स्थानोमे अबतक भी दवामीबन्दोवस्त नही हुआ है सन् १९०० ईस्वीमें बगालकी जो भूमि अस्थायी बन्दोवस्तके अधीन है उसमेंसे ३४२३२६७) रुपये और जो सरकारकी खास विना बन्दोवस्तकी भूमिहै उससे ४१०४७५३) रुपयेका लगान वसूल हुआ था ।

होजाने पर उन्हें वश करनेके लिये जैसे जैसे नाटक करने वाली भयानक ... ... की जाती थी सो इतिहास पढ़नेवाले पाठक भली भांति जानतेही हैं।

इसी समयमें तञ्जोर प्रान्तका कृषि वाणिज्य भी अंग्रेज कर्मचारियोंके अत्याचारसे अधोगतिको प्राप्त हुआ था। अंगरेजोंने पहलेही जमीनका महसूल बहुत बढ़ा दिया और उसकी वसूलीके समय भी अपनी स्वभाव सिद्ध कठोरताका काम लानेसे वे पीछे न हटे। इसीसे नव वर्षके बीचमेंही उक्त विभागके अनेक स्थान मरुस्थलके समान उजाड़ होगये। इस घोर अत्याचारके कारण सन १७८३ ईस्वी तञ्जोर विभागमें भयानक अकाल पड़ गया।

कर्नाटक देश इण्डियाकम्पनीके कर्मचारियोंने जो अत्याचार किया था उसका वर्णन संक्षेपमें नहीं किया जा सकता। सन १७८२ ईस्वी में ईस्ट इण्डियाकम्पनीकी गुप्त समिति (Committee of Secrecy) के सामने तञ्जोर विभागकी दुर्गतिका विस्तार पूर्वक वर्णन करते हुए मिस्टर पेट्रि नामक एक अंग्रेज कर्मचारीने कहाथा —

It will be necessary to inform the Committee that not many years ago (in 1768) that province was considered as one of the most flourishing, best cultivated, populous districts in Hindustan.

उक्त महाशयने सन् १७६८ ईस्वीमें जिस प्रान्तको भारत वर्षका एक सबसे बढ़िया उन्नत और मनुष्योंसे खचाखच भराहुआ खेतीकी सुन्दर हरियाली युक्त देखा था उसीकी सन् १७८२ ईस्वीमें कैसी दुर्दशा हुई थी उसका अनुमान उन्हींकी कही हुई नीचे लिखी पंक्तियोंसे होगा,—

Its decline has been so rapid, that in many districts it would be difficult to trace the remains of its former opulence

इन थोडे दिनोंके बीचमेंही इस प्रकार तीव्र गतिसे इस प्रान्तकी दुर्दशा हुई है कि अब अनेक स्थानोंमें पहलेकी सम्पत्तिका चिह्न भी बाकी नहीं रहा है।

अगरेजोंके धन खींचनेके लोभके कारण केवल तञ्जोर विभागकी ही ऐसी दुर्दशा नहीं हुई। नव्वाब मुहम्मदअलीको धन हरण करनेके समय अर्काटके किसानोंमें हाहाकार मच गया था। अंग्रेजोंको धन देनेमें जब दुर्वल नव्वाबका खजाना खाली होगया, किन्तु अंग्रेजोंकी धनकी भूख न मिटी तब किसानों पर हाथ साफ करनेमें नव्वाबको लाचार होना पडा।

अंग्रेज कर्मचारियोंने प्रजा पर कर बढा कर निर्दयताके साथ किसानोंका खून चूसना आरंभ करदिया। उन लोगोंकी यथार्थ आमदनी १३४६७९६०) रुपये थी किन्तु ये २०३६०५७००) रुपये प्रतिवर्ष लेकर बहुत दिनोंतक प्रजाका धन लूटते रहे। सन्१७८३ ईस्वीमें जो भयानक अकाल पडा उसका मुख्य कारण यह अत्याचारही था। लार्ड वेलसलीके प्रयत्नसे यह कपट चातुरी पकडी गयी। तब कर्नाटवासी इस अत्याचारके भयानक चंगुलसे छूटे।

अब एक वार बम्बई प्रान्तकी सरकारी मालगुजारीकी ओर दृष्टि दौडानी चाहिये। महाराष्ट्री नरेशोंके शासनकालमें इस देशकी प्रजासे एक वर्षमें ८० लाख रुपये लिये जाते

किन्तु जिस वर्ष अंग्रेजोंने इस प्रदेशमे अधिकार किया उस वर्षके पीछे ही १ करोड १५ लाख रुपये वसूल किये गये । इसके कारणसे प्रजा पर कैसे अत्याचार होने लगे उसकी कुछ थाह सरकारी रिपोर्टसेही मालूम हो जायगी,–

Every effort was made,—lawful and unlawful,-to get the utmost out of the wretched peasantry, who were subjected to tortures—in some instances cruel and revolting beyond description—if they could not or would not yield what was demanded. Numbers abandoned their homes and fled into neighbouring Native States; large tracts of land were thrown out of cultivation, and in some districts no more than one third of the cultured area remained in occupation.

अर्थात् अभागे किसानोके पाससे यथा सम्भव धन इकट्ठा करनेके लिये कारणके अनुकूल और प्रतिकूल सभी उपाय किये गये थे । मार पीटकर किसी स्थान विशेषमे असहनीय और वर्णनसे बाहर अत्याचार कर तथा जर्जरित कर दरिद्र किसानोसे चितचेता हुआ धन इकट्ठा करनेमे कोई कसर बाकी नही रखी गयी । इस प्रकार भयानक रूपसे हलाल होकर सैकडो पीडित किसान अपने अपने घर छोड कर समीपके रजवाडोंमे जाकर बस गये । सुविस्तृत भूमि खेती न होनेके कारण बञ्जर हो गयी, किसी किसी जिलेमे खेती होने योग्य भूमिके तिहाये भागसे अधिक भूमिमे खेती नहीं हुई ।

उडीसामें भी किसीने प्रजाका धन लूटनेके लिये थोडे प्रयत नही हुए हैं । सरकारी कागज पत्रोंमे ही प्रकाशित हुआ है कि, सन् १८२२ ईस्वीमें उडीसाके किसानोसे सरकारी कर्मचारियोंने सैकडा पीछे ८३) रुपयेके हिसावसे लगान वसूल करनेकी व्यवस्था की थी, किन्तु इस प्रकार धनकी खीच अधिक दिनोतक नही चल सकी सन् १८३३ ईस्वीके पीछे वे लोग अपनी कमाईसे सैकडा पीछे ७१) रुपये लगानमें देने लगे । इस समय घर कर उसका परिमाण सैकडा पीछे ४५) रुपये रह गया है । किन्तु बगालमे दवामी बन्दोबस्त होनेके कारण प्रजाको सैकडा पीछे ११) रुपये ही लगानमे देने पडते है । उडीसाके समान अवध प्रान्तोंमें भी १८२२ ईस्वीमे ईष्ट इण्डियाकम्पनीके नोकरोने जमीन्दारोंसे सैकडा पीछे ८३) रुपयेमे लगानमे लेनेका आईन पास किया था । इसके परिणाममे उस प्रान्तमें चारों ओर हाहाकार मचने लग गया ।

इस प्रकार राजधर्मका अपमान और प्रजापर अत्याचार करके जो धन इकट्ठा हुआ करता था, उसका बहुत थोडा भाग इस देशमे खर्च किया जाता था, अधिकांश रुपये विलायत भेज दिये जाते थे । ईस्ट इण्डियाकम्पनीके साझीदार, कर्मचारी और विलायती पार्लिमामेण्ट महासभाके मेम्बर लोग इस भारतसे धन लूटकर अपनी दरिद्रता दूर करते थे । किसान लोगोंके पाससे जो धन मिलता उसे कम्पनी ले लेती और इस देशके धनी सौदागर तथा राजा महाराजाओसे दबाकर जबरदस्ती अन्यायसे जो धन लिया जाता उससे कपनीके नौकर मालामाल होते थे एक बंगाल देशमें ही १७५७ ईस्वीसे १७६५ ईस्वी तकमें कमसे कम ४९४०४९८०) रुपये घूसमें लिये गये थे । जिसमे पार्लियामेण्टके मेम्बर कडी आलोचना न करे

इस लिये कम्पनी और उसके कर्मचारी पार्लियामेण्टके मेम्बरोंको भी घूस देकर वशमें करलेतेथे;* कर्णधार इस घूस देनेके लिये धन इकट्ठा करनेके लियेही प्रजाका धन लूटना आवश्यक समझा जाता था। उस समयके इंगलैण्डनरेश भी इस प्रकार घूस लेनेमें अलग नहीं थे। एक बार ईष्ट इण्डियाकम्पनीके कामोंकी जाँच करनेका प्रस्ताव उठने पर स्वयं इंगलैण्डनरेशने सब गड़बड़ी शान्त करदी थी। सुतरां अंग्रेज जातिकी नैतिक उन्नतिके इतिहासमें इन घटनाओंका गुरुत्व बिलकुल थोड़ा नहीं है।

महमूद गजनवी, नादिरशाह, अहमद, अब्दाली और मध्यभारतके पिण्डारी लोग भारतवर्षके धनवान लोगोंको लूट कर कितने रुपये लेगये, इसका उल्लेख और हिसाब बालकोंके पढ़नेके इतिहासोंमें और समय समय अन्य प्रकारसे प्रकाशित हुआ करता है। किन्तु ईष्टइण्डिया-कम्पनीके शासनकालमें भारतवर्षके गरीब किसानोंका कितना रुपया लूटा गया उसका हिसाब प्राप्त करना सहज नहीं है।

मिष्टर डिग्बीका कथन है अनुमान होता है कि, पलासीकी लड़ाईके पीछे प्रायः पचास वर्षोंमें भारतवर्षसे साढ़े सात अरबसे लेकर पन्द्रह अरब रुपये तक इंगलैण्डमें भेजे गये हैं। मिष्टर ब्रुक्स एडम्स Law of Civilisation and Decay नामक ग्रन्थ के २६३ वें पृष्ठमें लिखा है —

Possibly, since the world began, no investment has ever been yielded the profit reaped from the Indian plunder.

जो हो अधिक दिनोंतक गोरे राजकर्मचारियोंने इस देशके, कृषि शिल्पसे जीने वाले लोगोंको जैसी निर्दयताके साथ लूटा है, उसीसे भारतवासियोंका इकट्ठा किया हुआ अधिकांश धन समाप्ति पर आगया है। अधिक कर देनेमें किसान खोखले हो गये हैं, कारीगर और व्यापारी वाणिज्यव्यवसाय हारकर कंगाल होजानेके कारण किसानी करके पेट भरनेमें लाचार हुएहैं।

---

* Nor was the Company in good repute at home An enquiry was set on foot, and it was found that the Company had devoted in one year £100,000 to bribery But the House of Commons stifled inquiry The receipients of bribes were amongst the highest classes, and the King himself was seen to have accepted a large sum

In the meantime, and largely by the deplomacy of abasement the Company throve.......The home Government wanted money. Some at home, anxious to get the concern into their hands for a price, offered a bribe to the Government. The Company staved off difficulty by offering a larger bribe They advanced £200,000 and so secured an extention of the charter to the year 1766.—British India and England's Responsibilities. By G. Clarke. M. A. (pp 7|9.)

अगरेजी शासनके साथही साथ इस देशके किसानोपर दरिद्रतारूपी भयानक राक्षसकी कैसी विकट चढाई हुई है,इस बातको जाननेके लिये राजकरकी बढतीका यह इतिहास जानना बहुत जरूरी है। बृटिश सिहने किसी प्रदेशमे जभी अपने पैर रखेत हैं तभी उस प्रदेशके किसानोका खून ऐसी अधिकताके साथ चूसा है कि, वे अभागे एक बारही उठने बैठनेमे अशक्त हो गये हैं। इसके पीछे अवश्यही पहलेके आक्रमणोंकी कठोरता स्थान स्थानमे कुछ घटी हैं किन्तु उससे प्रजाकी नष्टहुई शक्ति फिरसे कितने अशमे लौटी है, इसका अनुमान भारतमें बारम्बार भयानक अकाल ओर विकराल अन्नकष्टकी दुर्घटनाओसेही लग सकताहै।

अबतक इस बातका वर्णन किया गया है कि, अगरेजी शासनके आरम्भकालसे इस देशके किसानोका खून चूसनेका आरम्भ किस प्रकार किया गयाथा। दुर्भाग्यसे भारतके अधिकाश भागमे अबभी उस प्रकारसे खूनका चूसना एकदम घटा नही है। सन् १८७९ ई०मे बम्बई प्रान्तमें अस्सी लाख रुपये जमीनके लगानमें वसूल होते थे, सन् १८२३ ईस्वीमे अगरेजोंने उस का परिमाण बढाकर डेढ करोड रुपये कर लिया। इसके पीछे ईस्ट इण्डियाकम्पनीका मनमौजी शासन दूर करके दयामयी महारानी विक्टोरियाने भारतका शासन भार अपने हाथमें ले लिया उनके शासनमे शासन विभागकी अनेक बातोंका सुधार हुआ किन्तु किसानी करके जीनेवाली प्रजाके दुर्दिन तिसपरभी दूर नही हुए। ईस्ट इण्डियाकम्पनीके समयमें जहां प्रजाको डेढ करोड रुपये लगानमे देने पडते थे, तहां स्वर्गीया महारानीके शासनमे १८६२ ईस्वीमें उस गरीब प्रजाको दो करोड तीन लाख रुपये देने पडे थे। किन्तु इतनेपरभी सरकारी कर्मचारियोका धन लोभ नहीं मिटा। अस्सीलाखके बदले दो करोड तीन लाख रुपये वसूल करनेकी व्यवस्था करकेभी उन लोगोंने राज्यकी आमदनी बढाना जारी रखा। अतएव अधिक सहन न कर सकनेके कारण सन् १८७७ ई० में किसान लोग बागी हो गये, अनेक स्थानोमे लडाई झगडे और शान्ति भग होनेके कारण अफसर लोग चिन्तित हुए। तब इस विद्रोहकी जांच करनेके लिये एक कमीशन बैठा। तब यही स्थिर हुआ कि, बारम्बार जमीनका बन्दोबस्त करके अधिक लगान बढाते रहनेसेही— Extravagantly heavy assesments— खासकर यह विद्रोह फूटा है।

इतनी गडबडी होनेपर भी राजकर्मचारियोंकी धनकी खीच कम नही हुई। तीस वर्षके बन्दोबस्तमें जिस जमीनका लगान निश्चित हो चुका था, उनमेसे बहुतेरी भूमिका बन्दोबस्त मियाद पूरी होनेपर फिरसे करनेकी आज्ञा हुई है। गत सन् १८८९ ईस्वीके ३१ मार्चतक २७७८१ ग्रामोमें १३३६९ ग्रामोंका नया बन्दोबस्त होगया था। इन गावोसे पहले १४४०००००) रुपये लगानमे वसूल होते थे, अब नये बन्दोबस्तमें १ करोड ८८ लाख रुपये वसूल करनेकी व्यवस्था हुई है। शेष गावोंका नया बन्दोबस्त अकाल पडनेके कारण कुछ समयके लिये रोक दिया गया था, तौभी ७८ गावोंका नया बन्दोबस्त करके १०३५३० रुपये लगा नके बदले १३३५९०) रुपये कर दिया गया। सारांश यह कि, इस नये बन्दोबस्तमे औसत दर्जे ३०) रुपये सैकडा लगान बढा दिया गयाहै। इधर डाइरेक्टर आफ लेण्ड रिकार्डस एण्ड अग्रिकलचर अर्थात् भूमि और कृषिविभागके अध्यक्ष महाशयकी १८८७ सालकी रिपोर्टमे प्रकाशित हुआहै कि बबई प्रान्तमें—

Seventy-five per cent. of the cultivated area is under food grains. The reporting authorities agree that there is a large number of cultivators who do not get a full year's supply from their land.

खेती होनेयोग्य भूमिके पौनभागमें—रुपयेमें बारह आनेमें खानेकी वस्तुओंकी खेती होतीहै । किन्तु सभी राजपुरुष एकमत होकर कहतेहैं कि अधिकांश किसान खेतीकरके सालभरके खर्चके लिये भी अनाज संग्रह नहीं कर सकते ।

डाइरेक्टरसाहबका ऐसा मन्तव्य प्रकाशित होनेपरभी जमीनका लगान बढाया गयाहै । तिसपरभी अकालके समय मृत्यु संख्या बढेगी नहीं तो और क्या होगी ? इस प्रसंगमें इस देशकी खेतीके साधनकी दशाभी वर्णन करने योग्यहै । सन् १८९४ ईस्वीमें सम्पूर्ण बरार प्रान्तमें ८० लाख ८० हजार बैल, भैंस आदि खेतीके लिये उपयोगी पशुओंकी संख्या थी, किन्तु सन् १९०१ ईस्वीमें प्रकाशित हुआ कि उनकी संख्या केवल ५२ लाख ९७ हजार रह गयीहै । अर्थात् छः वर्षमें कृषिके लिये उपयोगी पशुओंके एकतृतीयांशसेभी अधिक घटगयाहै । खेतीकरनेके योग्य अथवा खेतीहोनेवाली भूमिका विस्तार देखतेहुए पशुओंकी यह संख्या बहुत कमहै । बरार प्रान्तमें एक हलके बैल अथवा भैंसोंको प्रतिवर्ष ६० बीघे भूमि कमानी पडतीहै । किसानोंकी इससे बढकर और शोचनीय दशाका प्रमाण क्या होगा ।

मदरासके किसानोंकी दशाका उल्लेख करते हुए प्रसिद्ध इङ्गलिशमैनपत्रके संपादकने १७ फरवरी सन १८८० ईस्वीके अंकमें लिखाथा—ईष्ट इण्डिया कंपनीके शासनकालमें मदरास प्रान्तकी भूमिसे जो लगान वसूल किया जाताथा महारानीके शासनकालमें उससे दशलाख रुपये अधिक अर्थात् एक तिहाई हिस्सा अधिक वसूल होताहै । अतएव किसानोंकी सुख स्वच्छन्दता बढानेके लिये कोई व्यवस्था नहीं होतीहै । उलटा लगानकी बढतीके साथही साथ मदरास प्रांतमें अकालका प्रकोपभी बढरहाहै ।

बम्बईकी लेजिस्लेटिव कौंसिलके सिविलियन सभासद मिस्टर जी रोजसने सन् १८९३ ई० मे भारतवर्षके अण्डरसेक्रेटरी महाशयको मदरासके लगान वसूल करनेकी कडाइयों और अत्याचारोंका वर्णन करते हुए दिखलायाथा कि सन् १८७९–८० ईस्वीसे लेकर १८८९–९० ई० तक ११ वर्षके बीचमें लगान वसूल करनेके लिये मदरासके राजकर्मचारियोंने ८४०७१३ मनुष्योंकी १९६३३६४ बीघे जमीन बेदखलकरके नीलाम कराली है । किन्तु इतने परभी उनका पेट नहीं भरा । किसान लोग अपनी जमीनसे बेदखल होकर छुटकारा नहीं पासके, सरकारी लगान अदा करनेके लिये उन्हें अपना घर, द्वार, बिछौने कपडे आदिभी बेचकर २९६५०८१) रुपये सरकारको देने पडेहैं । ऊपर लिखी हुई प्रायः १९६३३६४ बीघे जमीनमेंसे पौने बारह लाख बीघे जमीन खरीददारोंके अभावमें सरकारको खरीदना पडाहै । यदि लगानका परिमाण अधिक न होता तो अवश्यही उसके मोल लेनेके लिये खरीदारोंका टोटा नहीं रहता । जमीनके लगानकी अधिकताके विषयमें इससे बढकर साफ प्रमाण और क्या हो सकताहै ?

मध्यप्रदेशकी स्थितिके विषयमे गतवर्ष आनरेबल मिस्टर विपिन कृष्ण वसु महाशयने बडे लाटकी लेजिस्लेटिव कौंसिल–व्यवस्थापकसभा–मे कहाथा कि इस प्रदेशके किसी २ जिलेमे गत दस वर्षोंके बीचमे सैकडा पीछे १०२) तथा १०५) के हिसाबसे प्रजाका लगान बढगया है। इन दसवर्षोंमे प्रजा अकाल आदिसे बहुतही तग रहीहे, तोभी अफसर लगान बढानेसे मुँह मोड नही सके। कहनेमे अत्युक्ति न होगी कि सरकारकी ओरसे इस विषयका अबतक कोई योग्य प्रतिवाद नही किया गया है। मालाबारकेभी अनेक परगनोंमे गत बन्दोबस्तके समय सैकडा पीछे ८५ से १०५) रुपये तक लगान बढ गयाहै । एक तञ्जौर जिलेमेही गत दसवर्षोंमे डेढ करोड रुपयेकी सरकारी आमदनी बढ गयीहै।

कर्नाटककी प्रजाके लगानकी दरके विषयमे भूमि और खेती विभागके डाइरेक्टर महाशयने कहा था,–

Despite its liability to famine it pays a higher land revenue than the Deccan or Concan.

अर्थात् इस प्रदेशमें दुर्भिक्ष आदिकी अधिक सम्भावना रहनेपरभी यहांके किसानोंको दक्षिणविभाग अथवा कोकणके किसानोंकी अपेक्षा अधिक लगान देना पडताहै।

केवल दक्षिण और मध्यप्रदेशमें ही नही एक बगालको छोड सम्पूर्ण अगरेजी भारतवर्षके सभी प्रदेशोंमें बीस अथवा तीस वर्षमे नया बन्दोबस्त होनेके समय किसानोका लगान बटा दिया जाताहै। और इसप्रकार सरकारी आमदनी बढाई जातीहै।

विगत १९ वी सदीके आरम्भमे अनेक बुद्धिमान् शासनकर्ताओने बंगालके समान सम्पूर्ण भारतवर्षमें दवामी बन्दोबस्त करादेनेका प्रयत्न कियाथा। सन् १८०७ ईस्वीमे मदरासमे सर टामस मनरोने प्रजाके साथ जो रैयतवारी बन्दोबस्त किया, वह बंगालके दवामी बन्दोबस्तके समानही था। विलायतमे जाचकरनेके लिये जो कमीटी बैठीथी उसमें गवाही देते समय आपने साफ साफ इस बातको स्वीकार कियाथा। बम्बई प्रदेशमेभी पहले चिरस्थायी बन्दोबस्त प्रचलितथा। सन् १८०३ ईस्वीमें जब अगरेजोने प्रयाग और अवधका सूबा अपने अधिकारमे लिया तब वहा लगानके विषयमे चिरस्थायी बन्दोबस्त करनेके करारकी बात सुनी गयी थी। किन्तु पीछेके राजकर्मचारी विशेषकर लगान विभागके कर्मचारियोने धनके लालचमे अन्धे होकर पिछले करारका उल्लघन कर डाला और सभी विभागोमे २० अथवा ३० वर्षके अन्तरसे बन्दोबस्तकरके लगान बढानेकी व्यवस्था प्रचलित करदी। नही जानते सरकार कैसी अवस्थामें प्रजापर कितना लगानका बोझा बढावेगी। सरकारसे इस विषयमें नियम स्थिर करलेनेके लिये कईबार प्रार्थना भी की गयीथी। इसके अनुसार प्रजाप्रिय लार्डरिपन महोदयने कुछ नियम बनायेभी थे, किन्तु उनके भारतवर्षसे बिदा होतेही राजकर्मचारियोंने पहलेके समान यथेच्छाचार और धींगाधींगीका रास्ता खुला रखा। इस विषयके नियम बनानेमे राजकर्मचारियोंने अबतक भी प्रकटमें उदासीनता प्रकाशित नही की है कि, जमीन्दार लोग प्रजाके पाससे अधिकसे अधिक कितना लगान ले सकेंगे, कैसी दशामे कितना लगान बढा सकेंगे आदि जो हो, परन्तु अब भी सरकार सरकारी लगान बढानेके विषयमें स्वय कोईभी नियमोंमे बँधकर

रहना नहीं चाहती। यही नहीं किन्तु यदि लगान विभागके कर्मचारी अन्याय पूर्वक लगान बढादें तो उनके विरुद्ध अपील करनेसे कुछ सुनायी नहीं होतीहै। यदि प्रजाके लोग अधिक गडबड मचावें तो उन्हीं कर्मचारियोंको फिरसे विचार करनेके लिये कहा जाता है जिन्होंने लगान बढाया है। तब उस इन कागजोंका स्मरण करके किसी किसीका नाम मात्र लगान कम कर-दिया जाताहै। कहना नहीं होगा कि ऐसे प्रसंगोंमें प्रजाके साथ प्रायः सुविचार नहीं किया जाता है। प्रजाकी इस कठिनाईको दूर करनेके लिये श्रीमान् बडौदा नरेश सयाजीराव गायकवाड महोदयने अपने राज्यमें नियम किया है कि बन्दोबस्त विभागके कर्मचारी यदि किसी पर अनु-चित लगान बढावें तो मुल्कमुल्की अदालतमें स्वतन्त्रप्रकृतिके विचारकोंके पास उसके विरुद्ध अपील हो सकेगी। इसमें सन्देह नहीं कि यदि अंग्रेजी गवर्नमेण्ट भी ऐसा नियम करदे तो गरीब किसान प्रजाके अनेक कष्ट दूर होजावें, परन्तु न जानें क्यों सुसभ्य बृटिश गवर्नमेण्ट प्रजाकी इस सुविधाकी ओर ध्यान नहीं देती है। इसी लिये जो कर्मचारी अन्याय करके लगान बढाते हैं उन्हींके पास अभागी प्रजाको सुविचारकी प्रार्थना करनी पडती है।

विगत १९०५ ई० के भारतीय बजट पर बहस करते हुए बडे लाट महोदयकी व्यवस्थापक सभाके सभासद माननीय मिष्टर गोपाल कृष्ण गोखले महोदयने किसानोंकी दुर्दशाकी ओर सरकारका ध्यान आकर्षित कियाथा। उन्होंने कहाथा कि, यूरोपकी अपेक्षा भारतवर्षके किसानोंसे जमीनका लगान अधिक परिमाणमें लियाजाता है। यूरोपके देशोंके किसान जिस खेतमें १००) की फसल उत्पन्न करते हैं उसके लिये कितना देते हैं यह बात नीचेके हिसाबसे मालूम पडेगी।

"देशका नाम	लगानकी	दर
इंगलेण्ड	सैकडा	८।)
फ्रांस	"	४।।।)
जर्मनी	"	३)
आस्ट्रिया	"	४।।।=)
इटाली	"	७)
बेलजियम	"	२।।।)
हालेंड	"	२।।।)"

"यहांपर यह भी कह देना चाहिये कि जलकर, पूर्तिकर, चौकीदारी टेक्स ओर स्टाम्प कर आदिभी इसीमें सम्मिलित हैं। फ्रांसमें सडक आदि सम्बन्धी टेक्सभी इसीमें शामिलहै। भारतवर्षमें ये सम्पूर्ण स्थानिक कर जमीनके लगानमें शामिल नहीं किये जातेहैं।

ये सपूर्ण कर स्वतंत्र रूपसे देते रहनेपर भी इस देशके किसानोंको बहुत अधिक लगान देना पडता है। यदि सर रमेशचन्द्र दत्त महोदयके हिसाबकी बात छोडकर सरकारी हिसाबपरही विश्वास करें तोभी मालूम होगा कि यूरोपके देशोंके किसानोंको सब तरहके टेक्स मिलकर सैकडा पीछे ९) रुपयेसे अधिक सरकारको नहीं देना पडताहै परन्तु भारतके किसानोंको दारिद्र-ताके कीचडमें फँसे रहने परभी केवल जमीनका लगानही सैकडा पीछे १५) रुपये और कहीं २ २०) रुपये तक देना पडता है। इस देशकी जमीनकी उपजाऊ शक्ति दिनो दिन घटती

मध्यप्रदेशकी स्थितिके विषयमे गतवर्ष आनरेबल मिस्टर विपिन कृष्ण वसु महाशयने बडे लाटकी लेजिस्लेटिव कौंसिल-व्यवस्थापकसभा-मे कहाथा कि इस प्रदेशके किसी २ जिलेमे गत दस वर्षोंके बीचमें सैकडा पीछे १०२) तथा १०५) के हिसाबसे प्रजाका लगान बढगया है। इन दसवर्षोंमे प्रजा अकाल आदिसे बहुतही तग रहीहै, तौभी अफसर लगान बढानेसे मुँह मोड नही सके। कहनेमे अत्युक्ति न होगी कि सरकारकी ओरसे इस विषयका अबतक कोई योग्य प्रतिवाद नही किया गया है। मालावारकेभी अनेक परगनोंमे गत बन्दोवस्तके समय सैकडा पीछे ८५ से १०५) रुपये तक लगान बढ गयाहै। एक तञ्जोर जिलेमेही गत दसवर्षोमे डेढ करोड रुपयेकी सरकारी आमदनी बढ गयीहै।

कर्नाटककी प्रजाके लगानकी दरके विषयमे भूमि और खेती विभागके डाइरेक्टर महाशयने कहा था,–

Despite its liability to famine it pays a higher land revenue than the Deccan or Concan.

अर्थात् इस प्रदेशमे दुर्भिक्ष आदिकी अधिक सम्भावना रहनेपरभी यहाके किसानोको दक्षिणविभाग अथवा कोकणके किसानोकी अपेक्षा अधिक लगान देना पडताहै।

केवल दक्षिण और मध्यप्रदेशमें ही नही एक बगालको छोड सम्पूर्ण अगरेजी भारतवर्षके सभी प्रदेशोमें बीस अथवा तीस वर्षमे नया बन्दोबस्त होनेके समय किसानोंका लगान बटा दिया जाताहै। और इसप्रकार सरकारी आमदनी बढाई जातीहै।

विगत १९ वी सदीके आरम्भमे अनेक बुद्धिमान् शासनकर्ताओने बंगालके समान सम्पूर्ण भारतवर्षमें दवामी बन्दोबस्त करादेनेका प्रयत्न कियाथा। सन् १८०७ ईस्वीमें मदरासमे सर टामस मनरोने प्रजाके साथ जो रैयतवारी बन्दोबस्त किया, वह बंगालके दवामी बन्दोबस्तके समानही था। विलायतमे जाचकरनेके लिये जो कमीटी बैठीथी उसमें गवाही देते समय आपने साफ साफ इस बातको स्वीकार कियाथा। बम्बई प्रदेशमेभी पहले चिरस्थायी बन्दोबस्त प्रचलितथा। सन् १८०३ ईस्वीमें जब अगरेजोने प्रयाग और अवधका सूबा अपने अधिकारमे लिया तब वहा लगानके विषयमे चिरस्थायी बन्दोबस्त करनेके करारकी बात सुनी गयी थी। किन्तु पीछेके राजकर्मचारी विशेषकर लगान विभागके कर्मचारियोने धनके लालचमें अन्धे होकर पिछले करारका उल्लघन कर डाला और सभी विभागोमे २० अथवा ३० वर्षके अन्तरसे बन्दोबस्तकरके लगान बढानेकी व्यवस्था प्रचलित करदी। नही जानते सरकार कैसी अवस्थामे प्रजापर कितना लगानका बोझा बढावेगी। सरकारसे इस विषयमें नियम स्थिर करलेनेके लिये कईबार प्रार्थना भी की गयीथी। इसके अनुसार प्रजाप्रिय लार्डरिपन महोदयने कुछ नियम बनायेभी थे, किन्तु उनके भारतवर्षसे विदा होतेही राजकर्मचारियोने पहलेके समान यथेच्छाचार और धींगाधींगीका रास्ता खुला रखा। इस विषयके नियम बनानेमे राजकर्मचारियोंने अबतक भी प्रकटमे उदासीनता प्रकाशित नही की है कि, जमीन्दार लोग प्रजाके पाससे अधिकसे अधिक कितना लगान ले सकेंगे, कैसी दशामें कितना लगान बढा सकेंगे आदि जो हो, परन्तु अब भी सरकार सरकारी लगान बढानेके विषयमें स्वय कोईभी नियमोंमे बँधकर

रहना नही चाहती । यही नहीं किन्तु यदि लगान विभागके कर्मचारी अन्याय पूर्वक लगान वढादे तो उनके विरुद्ध अपील करनेसे कुछ सुनायी नही होतीहै । यदि प्रजाके लोग अधिक गडबड मचावे तो उन्ही कर्मचारियोको फिरसे विचार करनेके लिये कहा जाता है जिन्होंने लगान वढाया है । तब उस इन क्वायरीका स्मरण करके किसी किसीका नाम मात्र लगान कम कर-दिया जाताहै । कहना नही होगा कि ऐसे प्रसगोमे प्रजाके साथ प्रायः सुविचार नही किया जाता है । प्रजाकी इस कठिनाईको दूर करनेके लिये श्रीमान् बडौदा नरेश सयाजीराव गायकवाड़ महोदयने अपने राज्यमे नियम कियाहै कि बन्दोबस्त विभागके कर्मचारी यदि किसी पर अनु-चित लगान वढादे तो खुल्लमखुल्ला अदालतमें स्वतन्त्रप्रकृतिके विचारकोंके पास उसके विरुद्ध अपील हो सकेगी । इसमे सन्देह नही कि यदि अंग्रेजी गवर्नमेण्ट भी ऐसा नियम करदे तो गरीब किसान प्रजाके अनेक कष्ट दूर होजावे, परन्तु न जानें क्यो सुसभ्य वृटिश गवर्नमेण्ट प्रजाकी इस सुविधाकी ओर ध्यान नहीं देती है । इसी लिये जो कर्मचारी अन्याय करके लगान वढातेहैं उन्हींके पास अभागी प्रजाको सुविचारकी प्रार्थना करनी पडती है ।

विगत १९०५ ई० के भारतीय बजट पर बहस करते हुए बडे लाट महोदयकी व्यवस्थापक सभाके सभासद माननीय मिष्टर गोपाल कृष्ण गोखले महोदयने किसानोंकी दुर्दशाकी ओर सरका-रका ध्यान आकर्षित कियाथा । उन्होने कहाथा कि, यूरोपकी अपेक्षा भारतवर्षके किसानोसे जमीनका लगान अधिक परिमाणमें लियाजाता है । यूरोपके देशोके किसान जिस खेतसे १००) की फसल उत्पन्न करते हैं उसके लिये कितना देते हैं यह बात नीचेके हिसाबसे मालूम पडेगी ।

"देशका नाम	लगानकी	दर
इंगलेण्ड	सैकडा	८।)
फ्रांस	"	४।।।)
जर्मनी	"	३)
आस्ट्रिया	"	४।।।=)
इटाली	"	७)
वेलजियम	"	२।।।)
हालेंड	"	२।।।)"

"यहापर यह भी कह देना चाहिये कि जलकर, पूर्तिकर, चौकीदारी टेक्स और स्टाम्प कर आदिभी इसीमे सम्मिलित हैं । फ्रांसमे सडक आदि सम्बन्धी टेक्सभी इसीमे शामिलहै । भारतवर्षमे ये सम्पूर्ण स्थानिक कर जमीनके लगानमे शामिल नहीं किये जातेहैं ।

ये सपूर्ण कर स्वतन्त्र रूपसे देते रहनेपर भी इस देशके किसानोंको बहुत अधिक लगान देना पडता है । यदि सर रमेशचन्द्र दत्त महोदयके हिसाबकी बात छोडकर सरकारी हिसाबपरही विश्वास करे तोभी मालूम होगा कि यूरोपके देशोंके किसानोंको सब तरहके टेक्स मिलकर सैकडा पीछे ९) रुपयेसे अधिक सरकारको नहीं देना पडताहै परन्तु भारतके किसानोंको दरिद्र-ताके कीचडमे फँसे रहने परभी केवल जमीनका लगानही सैकडा पीछे १५) रुपये और कहीं २ २०) रुपये तक देना पडता है । इस देशकी जमीनकी उपजाऊ शक्ति दिनों दिन घटती

जारहीहै। किसानोके पशु आदि खेतीके साधन क्रमशः शोचनीय दशाको प्राप्त हो रहेहैं, अतिवृष्टि, अनावृष्टि तथा पत्थर पाला आदिके उपद्रवोंसेभी उनका नाकों दम आगया है, उनकी दुर्दशाका पार नहीं है तिसपर ऋणकी बातकी पूछनाही क्या ? भारतके किसानोका प्रायः दो तिहाई भाग कर्जके भयानक दलदलमे फँसा हुआहै, इनके आधे भागके किसानोंके ऋणयुक्त होनेकी कुछभी आशा नही है तौभी सरकार उनसे जबरदस्त लगानकी रकम और अन्यकर लेनेमे सङ्कोच नही करती है। यही नही किन्तु मुद्राशासन प्रणालीके कारण चादीका भाव घट गयाहै।जिससे उनके साञ्चित चादीके गहने आदिकी कीमतभी घट गयीहै। इस प्रकार सब ओरसे राजकर्मचारियोंने उन्हे टोटेमे डालकर विना पखका पखेरू बना रखाहे, और अभी और भी उन्हें निर्बल करतेही जातेहैं।

"इसके पीछे सेटलमेण्टविभागका जुल्महै। वारम्बार जमीनकी मापकरके इस विभागके कर्मचारी क्रमशः जमीनका लगान बढाते जातेहैं। गत दसवर्षोमे इन लोगोके प्रयत्नसे बम्बई युक्तप्रान्त, मदरास, अवध और मध्यप्रदेशमे सरकारी लगानकी सख्या १ करोड ४ लाख रुपये बढ़ गयीहै। इन सभी प्रदेशोमे इन पिछले दसवर्षोंमें बारम्बार अकाल अनावृष्टि आदि बाधाए होनेसे खेतीके काममें अनेको विघ्न उपस्थित होते रहेहैं। ऐसी विपत्ति और दुःखके समयमे सरकारको उचित था कि उनका करभार कम करती, परन्तु ऐसे कुसमयमे उसने प्रजाके पाससे १ करोड ४ लाख रुपये अधिक लेनेकी व्यवस्था की। इससे बढकर और दुःखकी बात कौन होगी ?"

इन सब बातोंको कहकर गोखले महोदयने आगे कहा जब बजटमे दिखलाया गयाहै कि अबसे प्रतिवर्ष खजानेमे साढेसात करोड रुपयेकी बचत हुआ करेगी तब ऊपर कहेहुए प्रदेशोंके गरीब किसानोका लगान सैकडा २०) रुपयेके हिसाबसे कम करदेनेपर सरकारी लगानमें वार्षिक तीन करोड रुपयेकीही कमी होगी। जब इस प्रकार खजाना भरा पूरा है तबभी यदि सरकार वार्षिक तीनकरोड रुपयेका बोझा गरीब किसानोंका कम न करे तो कब करेगी ? सरकारके इस थोडेसे स्वार्थत्यागके करनेसेही किसानोकी स्थिति दसगुणा अधिक उन्नति करेगी (१) कहना न होगा कि सरकारने गोखले महोदयके इस उचित अनुरोधको मानना ठीक नही समझा।

बङ्गालमें रोडसेस।

सम्पूर्ण भारतवर्षमें दवामी बन्दोबस्त करनेकी बात तो दूर रही बगालके दवामी बन्दोबस्तकोभी तोडदेनेका एकबार राजकर्मचारियोंने प्रयत्न कियाथा। किन्तु आन्दोलन बढजानेसे वे लोग अपनी इच्छा पूरी नहीं करसके, उन्हें अपने विचारको उलटना पडा। तौभी अनेक प्रकारके गुप्त पेचोंसे वे बगालकी प्रजापर कर बढानेका प्रयत्न किया करतेहैं। सडकोंका टेक्स, पूर्तिकर, तथा चौकीदारी टैक्स आदि नये करही इसके दृष्टान्त हैं।

सन् १७९३ ईस्वीमें जब लार्ड कार्नवालिसने बंगालकी जमीनका दवामी बन्दोबस्त किया तब यथा सम्भव साफ भाषामें कह दिया गयाथा कि इस समयका निश्चित किया हुआ लगान किसी कारणसे किसीभी समयमें बढाया नहीं जायगा। किन्तु काम पडनेपर सरकार उस प्रतिज्ञाका पालन नहीं कर सकी। सन् १८५७ के बलवेके पीछे जब सरकारी खजानेमें धनकी कमी हुई, तब अफसर लोग इस चिन्तामें चूर हुए कि किसप्रकार सरकारी आमदनी बढायी जाय। विलायतके सौदागर भारतमें व्यापारकरके बहुतसा धन कमाते थे अत एव बाहरसे आनेवाली चीजोंपर कुछ महसूल लगा देनेसे न्यायकी मर्यादाभी रहती और सरकारकी आमदनीभी बढजाती, किन्तु गोरे सौदागरोंके विरुद्ध ऐसा करनेमें सरकारकी हिम्मत नहीं हुई। हिम्मत हुई दुर्बल किसानोंका रक्त अधिक चूसनेकी व्यवस्था करनेमें। "धोबी जब धोबिनसे नहीं जीतता तब गधेके कान उमेठताहै।" सो सरकारने लार्ड कार्नवालिसकी सरकारकी प्रतिज्ञाका भंगकरके "लोकल सेस" के नामसे जमीनके लगानके ऊपर एक नयाकर बढादिया। इसीप्रकार "रोड सेस" करकी उत्पत्ति हुई और अन्तमें "पबलिक वर्क सेस" अर्थात् पूर्तिकरभी जमीनके लगानके ऊपर आ विराजमान हुआ।

पहले कहा गयाथा कि रोडसेसका रुपया गावोंमें सडके बनानेमें खर्च किया जायगा। "सेस कमिटी" नामक एक कमिटीपर रोडसेसका रुपया खर्चनेका भार सौंपा गया। किन्तु सन् १८८० ई० में बंगालके छोटे लाट सर एसली इडेनने व्यवस्थाकी कि रोडसेसका रुपया केवल सडकोंके बनानेमेंही खर्च करना उचित नहीं है। इस प्रकार इस धनसे औरभी कई कार्य करनेका भार सेसकमिटी पर डालागया। इसके पीछे १८८५ ईस्वीमें छोटे लाट सर रिवार्स टामसन बहादुरने "सेस कमिटी" तोडकर वर्तमान डिस्ट्रिक्ट बोर्डकी स्थापना की, और जो धन सेसफण्डके नामसे संग्रह किया जाताथा, वह डिस्ट्रिक्ट फण्डके नाममें बदल दिया गया। इतना परिवर्तन होनेपरभी रोडसेसकी रकम अलग जमा रखनेकी बात थी, किन्तु १८९९ ई० में गवर्नमेण्टकी ओरसे मिस्टर रिजलीने बिना किसी पशोपेशके सूचना करदी कि रोडसेस नामकी कोई स्वतन्त्र रकम नहीं है।

तीसवर्षके पहले जब रोडसेस अर्थात् सडक निर्माणका महसूल नियुक्त हुआ तब बंगालके जमीन्दार और किसान लोगोंने एकस्वरसे उसका विरोध कियाथा। उनकी ओरसे विशेषमें कहा गयाथा कि ऐसा कर दवामी बन्दोबस्तके प्रतिकूल है। अनेक राजकर्मचारियोंने भी ऐसे करका चलाना अनुचित समझा था, अनुचित समझाही नहीं था किन्तु उन्होंने विरोधभी कियाथा। उस समयके गवर्नरजनरल लार्ड लारेंसने कहा था 'प्रजाके ऊपर नया कर लगाने देनेसे प्रादेशिक शासनकर्ता लोग अनेक कामोंमें वृथा खर्च करनेका सुभीता पावेंगे, उनको इसप्रकार वृथा खर्चको उत्साह देना कभी उचित नहीं है'। दवामी बन्दोबस्तकी प्रतिज्ञा भंगकरनेसे सरकारके ऊपरसे प्रजाका विश्वास घटजानेसे, उससे लार्डमेयरके समयमें बंगालकी सरकारनेभी नया कर लगानेके विरुद्ध अपनी सम्मति प्रकाशित कीथी। भारतगवर्नमेण्टके अर्थसचिव मिस्टर [illegible], बंगाल हाईकोर्टके चीफ जस्टिस सर बार्नेस पिकक, बम्बई हाईकोर्टके चीफ जस्टिस सर [illegible] पेल, तथा अन्य अनेक ऊंचे दर्जेके राजकर्मचारियोंने बताया कि बंगालमें नया कर लगानेसे चिरस्थायी बन्दोबस्तकी प्रतिज्ञा उल्लंघन और [illegible] भग

होगा । परन्तु स्टेट सेक्रेटरी ड्यूक आफ आरगाईलने किसीकी बातपर कान न कर बंगालकी प्रजापर "रोडसेस" का बोझा पटकही दिया । उन्होंने बङ्गाली प्रजाको भरोसा दिलाया कि यह कर देहातोंमे सडकें बनाने तथा जलाशय आदि खुदवानेम खर्च होगा । इस करका धन देहाती प्रजाका धन भण्डार समझा जायगा । देहाती प्रजाकी सलाह लिये बिना इसकी एक कोडीभी किसी काममें खर्च नहीं की जायगी । स्टेटसेक्रेटरीकी इस बातपर विश्वास करके बंगालकी प्रजा और जमीन्दारोंने रोडसेस देना स्वीकार किया किन्तु राजकर्मचारियोंने उस प्रतिज्ञाका पालन करनेमेभी ध्यान न दिया । रोडसेस लगानेके कुछही वर्षोके पश्चात् उस धनका उपयोग बडी २ सडकें बनाने स्कूल और अस्पतालोकी स्थापना करने तथा भारतीय अकालकी सहायता करनेमें होने लगा । अनेक स्थानोंमे शहर और म्यूनिसिपलिटीकी सहायताके लियेभी इसमेसे धन खर्च करनेमे राजकर्मचारियोने सकोच न किया सारांश यह कि प्रजाको इस करका बोझा वहन करनेसे कोई लाभ नहीं हुआ । गरीब देहातियोका दियाहुआ पैसा शहरके लोगोकी आवश्यकता दूर करनेमे खर्च होने लगा । देहातोंमे घाट और रास्ता बनाने तथा जलाशय खुदवानेमे इस धनका उपयोग होते न देखा गया अतएव रास्तेका कर देते रहने परभी देहाती प्रजा प्रतिवर्ष अवनतिके रास्तेमें बढने लगी । कर देनेके पहले उन अभागियोकी जैसी दशाथी करदान करनेपरभी वह दूर नही हुई । उलटा नया कर लगानेके समयसे उन अभागियोंकी पीडा औरभी बढ गयी । ठीक समयपर कर न दे सकनेके कारण अनेक लोगोंके घर द्वार नीलाम होने लगे ।

इस प्रकार गत ३० वर्षोमे बंगालकी देहाती प्रजासे रोडसेसके नामसे प्रायः बारह करोड रुपये वसूल किये गये । यदि स्टेटसेक्रेटरीके कहनेके अनुसार इन रुपयोंका व्यय देहातवासी प्रजाके कष्ट दूर करनेमे किया जाता तो आज बंगालकी प्रजाको इस प्रकार मलेरियाके बुखारसे मरना नही पडता और जलाशयोके अभावमें इस प्रकार सात करोड बंगाली प्रजाको प्याससे फडफडाना नहीं पडता । यदि म्यूनिसिपल शहरोंके जलाशयोकी व्यवस्थाके लिये, बडी बडी सडकें बनानेके लिये, स्कूल और अस्पताल खोलनेके लिये सरकार अपने खजाने खर्च देती तो वहाकी देहाती प्रजाकी आज ऐसी शोचनीय दुर्दशा क्यो होती ? सारांश यह कि बडे बडे शहरोंकी उन्नतिके लिये जो जलाशय और सडके भारत गवर्नमेण्ट अथवा प्रान्तिक गवर्नमेण्टके खर्चसे बननी चाहिये थी उन्हीं सडको आदिकी तैयारी और मरम्मत राजकर्मचारियोंने रोडसेसके धनसे की आरा और भागलपुर नगरमे स्वच्छ जल पहुचानेके लिये जब रुपयोंकी कमी हुई तब बंगालके छोटे लाट सर चार्ल्स इलियटने देहातियोंके दियेहुए रोडसेसकी रकमसे दोलाख रुपये दिये थे । अभी छोटे लाट सर एण्डरू फ्रेजरनेभी इस प्रकार मुंगेर और बाकरगञ्ज निवासियोको रोडसेसकी रकमसे खर्चकरनेकी सलाह दीहै भारतीय दुर्भिक्ष फण्ड बनानेके समयभी रोडसेसके रुपये दिये गयेथे, परन्तु अकालके समयमे वे रुपये अकाल ग्रसित लोगोंको दिये नही गये ।

रोडसेस लगानेके कुछ दिनोंबाद सरकारने बंगालकी प्रजापर "पबलिक वर्कसेसके" नामसे एक और नया कर लगाया । प्रकट रूपमे इस करका यही उद्देश्य था कि इससे लोगोंकी खेती सुधारने और जलकष्ट निवारण करनेके लिये नहर और नालोका विस्तार बढाया जाय । किन्तु ये

रुपयेभी राजकर्मचारियोंके द्वारा व्यर्थकामोंमे खर्च होने लगे। विलायतकी एक कम्पनीने अपने फायदेके लिये उडीसेमे एक नहर खुदवादी थी, किन्तु अनेक कारणोसे उससे उसकी हानि होने लगी। एक गोरी कम्पनीके रुपये भारतमें खर्च होकर उसकी हानि हो यह बात हमारी दयावान सरकारसे कब सहन की जा सकतीथी, सो राजकर्मचारियोंने कम्पनीको कुछ लालच देकर उस नहरको खरीद लिया था सर जार्ज केम्बल आदि बुद्धिमान कर्मचारियोंने इस वाहियात कामको करनेसे सरकारको रोकाथा परन्तु सरकारने उनकी एक बातपर कुछ ध्यान नही दिया। उन्होंने गरीब बंगाली प्रजाके दियेहुए रुपयोंसे उस नहरको खरीदकरही छोडा। इस नहरसे सरकारका लाभ होना तो दूर रहा आजतक एक पैसाभी मूलधनके सूदके हिसाबमें नहीं आयाहै।

इतने परही राजकर्मचारियोंकी प्रजाप्रीतिका अन्त नहीं हुआ। दूसरे उपायोसेभी कंगाल देहातवासियोंके दिये हुए धनको वे व्यर्थ कामोंमे खर्चने लगे। पाठकोंको मालूमही है कि पबलिक वर्कसेस नामक टेक्सकी वसूलीका भारभी डिस्ट्रिक्ट बोर्डके कन्धेपर रखा गयाहै। अतएव इस टेक्सके वसूल करनेमे जो खर्च होता उसका आधा पबलिक वर्क सेससे और आधा रोडसेस फण्डसे देना उचित था, किन्तु सरकारने ऐसी व्यवस्था की कि दोनो टेक्सोंके वसूल करनेमें जो खर्च होगा उसका दो तिहाई भाग रोडसेस फण्डसे और एक तिहाई पबलिक वर्क सेसके भण्डारसे दिया जायगा। पबलिक सेसका पैसा सरकारकी निजकी आमदनी है और रोडसेसकी रकम प्रजाकी समझी जातीहै, इसी लिये प्रबल शक्तिशाली गवर्नमेण्टने पबलिक सेसकी वसूलीके खर्चका एक तृतीयांश गरीब किसानोंसे वसूल करनेका प्रबन्ध करलिया। अवश्यही यह प्रबन्ध सन् १८७७–७८ ईस्वीमें पहले गुपचुप छिपाकर किया गयाथा। परन्तु जब कुछ दिनोंके बाद सरकारने देखा कि इस व्यवस्थासेभी पबलिकवर्क सेसकी रकम बढती जानेके साथही साथ प्रतिवर्ष उसके वसूलकरनेका खर्चभी बढता जाताहै, तब उसने डिस्ट्रिक्ट बोर्डस साफ कह दिया कि पबलिकवर्क सेस वसूल करनेमें बोर्डका चाहे कितनाही रुपया खर्च हो परन्तु सरकारसे इसके संबन्धमें ८६८००) रुपयेसे अधिक नहीं देगी। यद्यपि बोर्डके देशी मेम्बर इस बातको पसन्द नहीं करतेथे परन्तु बोर्डके गोरे सभापतियोंकी कृपासे बंगालके डिस्ट्रिक्ट बोर्डोंको इस प्रस्तावको माननाही पडा। इस व्यवस्थाके कारण सन् १८९९ ई० तक बंगालके डिस्ट्रिक्टबोर्डोंको दरिद्र प्रजाके दियेहुए रोडसेस फण्डसे सरकारके पबलिकवर्क सेसकी वसूलीके खर्चमें प्रायः सात लाख रुपये देने पडेहैं।

सन् १८९९ ईस्वीमें सरकारकी इस अनुचित कारखाईका देशी समाचार पत्रोंमें प्रतिवाद आरंभ हुआ। बाबू सुरेन्द्रनाथ बनर्जीने बंगालकी लेजिस्लेटिव कौंसिलमें इस विषयपर प्रश्न किया। इसके उत्तरमें बंगाल गवर्नमेण्टके मालके मन्त्रीने यह बात स्वीकार की कि सरकारी कर्मचारियोंका यह काम अन्यायपूर्ण है। उन्होंने १८७७–७८ ईस्वीके अनुसार [illegible] एक तिहाई खर्च देना स्वीकार किया। उस समय इस विषयका आन्दोलन करनेवाला [illegible] [illegible] दिनोंमें जो सरकारने सात लाख रुपये [illegible] और सरकारकी ओरसे [illegible] दिया जाना चाहिये; परन्तु सरकारने [illegible] नहीं की। [illegible]

उत्तरमें इसकी ओरसे कहा गया कि डिस्ट्रिक्टबोर्डके काममें जो सरकारी सिविलियन कर्मचारी सहायता देते हैं उनका वेतन सरकारकी ओरसे दिया जाता है। इसलिये सरकारके एक तिहाई खर्च देनेपरभी वह सरकारसे यथार्थमें आधेसे अधिक खर्च पाजाताहै। उत्तर तो खासा हुआ परन्तु हम लोगोंका विश्वासहै कि यदि सरकार दयाकरके डिस्ट्रिक्टबोर्डोंका सम्बन्ध बडी बडी तनुख्वाह पानेवाले सिविलियन लोगोंसे अलग कर देतो रोडसेस फण्डका रुपया प्रजाकी इच्छाके विरुद्ध कामोंमें न खर्च हुआ करे और सरकारभी सिविलियन लोगोंके पालन करनेका खर्च हम लोगोंके ऊपर लादनेका मोका न पावे।

चाहे जो हो, तीस वर्षतक रोडसेसका रुपया इस प्रकार अधिकांश व्यर्थ कामोंमें खर्च करनेके पीछे गतवर्ष सरकारने साढेबारह लाख रुपये डिस्ट्रिक्टबोर्डको दियेहैं। इस साधारण सहायताके लिये बडे लाटकी व्यवस्थापक सभासे लेकर छोटे लाटकी लेजिस्लेटिवकौंसिलके मेम्बरतक सरकार की इस असाधारण उदारताके प्रशंसागीत गा रहेहैं।

इन स्थानिककरोंके विषयमें जब प्रजाकी ओरसे प्रतिवाद आरम्भ किया गया तब लार्डकर्जन-की सरकारने कहाथा कि सरकारी खजानेमें रुपयेकी अच्छी बचत होनेपर इन करोंके उठादेने का प्रयत्न किया जावेगा। किन्तु उनके शासनकालके छः वर्षोंतक बराबर खजानेमें करोडोंकी बचत होती रहनेपरभी उन्होंने न तो इन करोंको उठाया और न इनका बोझाही हलका किया। उलटा दिनों दिन इसमें बढतीही देखी जाती है।

प्रवाह पत्रके सम्पादक बाबू दामोदर मुखोपाध्याय विद्यानन्द महाशयने एक स्थानपर लिखा है,—बंगालमें रोडसेस करकी कठोरतासे अनेकों भस्म होरहेहैं। इस रोडसेसकी रकम जिस प्रकार बढती जारही है उसका विचार करनेसे आश्चर्य होताहै। पन्द्रह वर्षके पहले जितना रोडसेस देना पडता था, अब कहीं कहीं उसका दसगुणा कर देना पडताहै। जो लोग मुसलमानी शासनकालसे देवधन स्वरूप बिना कर दिये भूमिका उपयोग करते आरहे हैं, उन लोगोंसे रोडसेसके नामसे जितना कर लिया जाता है उतना लगान किसी जमीन्दारसे भूमि लेकर किसानी करनेकी स्थितिमेंभी न देना पडता। जहां २ सरकार प्रजासे किसी तरह का कर लेती है वहां वहां उस कामको करनेवाले निम्न कर्मचारी लोग प्रायः बहुतही निर्दय-ताका वर्ताव किया करतेहैं कागजपत्रोंमें सभी काररवाई निर्दोष दिखाई जातीहैं, परन्तु असलमें कर्मचारियोंके दोषसे अधिकांश कार्योंमें गडबडीही दिखायी पडतीहै। ऊपरकी उक्तिको कोई अत्युक्ति पूर्ण न समझे, जिन्हें इन कठिनाइयोंसे सामना पडताहै वेही इसका अच्छी तरह अनुभव कर सकते हैं।

यहांपर चौकीदारी टेक्सके विषयमें विस्तृति रूपसे न लिखने परभी काम चल सकताहै, क्योंकि बङ्गालका प्रत्येक देहाती मनुष्य इस अत्याचारपूर्ण करके चक्कीमें पिस रहाहै अतएव इस करकी पीडा बंगालियोंके लिये शीघ्र भूलनेयोग्य नहीं है।

दुर्भिक्ष निवारक कोष ।
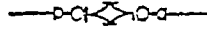
बंगालके अतिरिक्त भारतके अन्य प्रान्तोमेभी इसी प्रकार रोडसेस अथवा इसके समान अन्य दूसरे कर लगाये गयेहैं । इसलिये अंगरेजी भारतमे ऐसा कोईभी प्रान्त नहीहै जहां दरिद्र किसानोकी विडम्बना असीम असहनीय न हो पडीहो । यहापर एक औरभी करका वर्णन करना जरूरीहै । सन् १८७७ ईस्वीमें जब मदरासमे भयानक अकाल पडा तब भारत गवर्नमेण्टके माली मन्त्री सर जान स्ट्राचीने गरीबप्रजाके ऊपर "दुर्भिक्ष निवारक कर" स्थापित किया । स्थिर हुआथा कि इस करसे जो प्रतिवर्ष डेढ करोड रुपये इकट्ठे हुआ करेंगे उनसे एक "दुर्भिक्ष निवारक कोष" बनाया जावेगा । जब किसी प्रदेशमे अकाल पडेगा तब उस कोषके रुपयोंसे अकाल ग्रसित लोगोंकी सहायता करनेकी बात तय हुईथी । जिस वर्ष अकाल नही पडेगा उस वर्ष इन्हीं रुपयोसे जातीय ऋणका कुछ हिस्सा पटाया जावेगा । उचित तो यही था कि सरकारी खजानेसे यह कार्य किया जाता परन्तु दयावान राजकर्मचारियोने वैसा न करके दुर्भिक्ष भारसे दबी हुई प्रजापर औरभी एक नया करका बोझा पटक दिया ! जिस समय यह टेक्स लगाया गया उस समय राजकर्मचारियोंने साफ साफ कहाथा कि इस करके रुपये दुर्भिक्ष निवारण कार्योंके अतिरिक्त और कामोमे नही खर्च किये जावेगे ।

उस समय राजकर्मचारियोंने कहनेको तो वैसा कहदिया परन्तु उस कथनके प्रतिकूल आचरण करनेमे उन्हें देरी नहीं लगी । सन् १८७८–७९ ई० मे यह टेक्स लगाया गया और उसके दूसरे वर्षसेही उस टेक्सके रुपयोंको दूसरे कामोंमे खर्चनेका लागा लगादिया गया । भारतकी सर्वसाधारण प्रजाकी ओरसे देशके शिक्षित लोगोने इस कामका घोर प्रतिवाद किया । तब बहुतही आन्दोलनके पीछे उन डेढ करोड रुपयोंको सरकार दुर्भिक्षनिवारण अथवा जातीय ऋण चुकानेके काममे खर्चनेको राजी हुई किन्तु साथही उसने यहभी पुछल्ला लगा दिया कि रेल्वे बनवाने और खुदवानेका कामभी अबसे अकाल निवारण काम समझा जावेगा । अर्थात् इस काममेभी अब दुर्भिक्ष निवारणकरके रुपये खर्च किये जावेंगे आश्चर्यकी बातहै कि इस प्रतिज्ञाका भी वह पालन न कर सकी । क्योंकि सरकारी हिसाबमे देखा जाताहै कि सन् १८८७ ई० से १८९५ । ९६ ई०तक पन्द्रह वर्षमें अकाल निवारणकार्य, रेल्वे और नहरोंकी बनवाई खुदवाई तथा सुधराई और जातीय ऋण पटाने आदिमे सरकारने प्रायः चौदह करोड रुपये खर्च किये हैं । पहिलेकी प्रतिज्ञाके अनुसार प्रतिवर्ष डेढ करोडके हिसाबसे १५ वर्षमें साढे बाईस करोड रुपये खर्च करने चाहिये थे । इन बचे हुए साढे आठ करोड रुपयोंसे सरकार जातीय ऋणका कुछ अंश पटा सकती थी परन्तु वैसा न करके बंगाल नागपुर और इण्डियन मिडलैण्ड रेल्वे कम्पनीकी घटी पूर्ण करनेके लिये दयावान राजकर्मचारियोंने दरिद्रप्रजाके दुर्भिक्ष फण्डसे प्रायः तीन करोड ५८ लाख ८० हजारसेभी अधिक रुपये दे दिये । इसके पीछे छः वर्षमें इन दोनो रेल्वे कम्पनियोंको और भी १ करोड ३३ लाख ६८ हजारका दान दिया गया । सन् १८९६ ई०से १९०० ई० तक [illegible] करोड रुपये इसकी [illegible] [illegible] पटाई । [illegible] दुर्भिक्ष निवारक फण्डके रुपये [illegible] कारण [illegible] [illegible] खर्च न [illegible]

जाते तो अकालके समयमें सरकारको दूसरोंके पास कर्ज करके गरीब प्रजापर ऋणभार लादनेकी आवश्यकता क्यों पडती ।

इस प्रकार यह बात सहजही जानी जा सकती है कि अनेक प्रकारसे कर बढाते रहनेसे गरीब हिन्दुस्थानी प्रजाका कष्ट दिनो दिन किस प्रकार बढ रहाहै । परन्तु दुःखकी बातहै कि सरकार प्रजाका कोईभी कष्ट नहीं देख सकती है । आश्चर्य तो यह है कि सरकारी कर्मचारी ऐसा कहनेमें भी कुण्ठित नहीं होते कि प्रजाकी आर्थिक स्थिति दिनोदिन उन्नत हो रहीहै । दूसरी ओर सरकारी कागज पत्रोंमेंही किसानोकी दशाका चित्र दूसरेही ढङ्गका देखनेको मिलता है ।

मि० थारबर्नकी सम्मति ।

पञ्जाबके भूतपूर्व कमिश्नर मिस्टर एस. एस. थारबर्न इस देशमें प्रायः ३२ वर्षतक सरकारी काममें नियुक्त रहकर इसदेशके निवासियोंकी दशा बहुतकुछ जाननेमें समर्थ हुएथे । उन्होने सन् १८८६ ई० में सरकारको सूचित किया कि पञ्जाबके अधिकाश स्थानोंके किसान प्रायः अर्द्धांशही नही किन्तु सर्वांशमें कर्जके कीचडमें फँस रहेहैं । उन्होने परीक्षाके लिये पञ्जाबके भिन्न भिन्न भागोंके ४१४ गांव लियेथे । इनकी जांच करके उन्होने लिखा कि इनमेंसे २९७ गावोंकी दशा पहले बन्दोबस्तके समय—अर्थात् सन् १८७१ ई० में धनधान्य पूर्णथी, किन्तु नये बन्दोबस्तमें लगान बढजानेसे बहुतेरे किसानोंकी दशा बहुतही शोचनीय होगयीहै । उन्होंने दिखलायाथा कि पञ्जाब सरकारी अधिकारमें आनेके बादही सरकारने वहा लगान एकदम बढा दियाथा । उनमेंसे गुडगाव जिलेमें पहले बिना जानेबूझे इस प्रकार लगान बढाया गयाथा (At First ignorantly over assessed by us) जोहो, उन्होंने परीक्षाके लिये जो गांव लियेथे उनमेंसे १२ गावके ७४२ पञ्जाबी परिवारमेंसे ५६६ परिवार सन् १८७१ ई० के पीछे नष्ट होगये । दूसरे चारपरीक्षाके विभागोमें (Selected circles) १२६ गांवके आधे किसान ऋणके बोझसे इस प्रकार लदे हुएथे कि उनके बचनेकी कोई आशा नहीथी ।

थारबर्न साहबका कथनहै कि लगान वसूल करनेकी कठोरता (Fixity of Land revenue) ही इस दुर्दशाका प्रधान कारणहै । पहले तो लगानकी रकमही अधिक है फिर उसकी वसूलीमें कठोरता की जातीहै इन्ही दो कारणोंसे किसानोको महाजनोकी शरणमें जाना पडताहै । इस बातको उन्होंनेभी किसी रूपमें स्वीकार कियाहै । उन्होंने सरकारसे सिफारिश की थी - कि लगानकी वसूलीके समय कठोरता न की जाय और ऐसा उपाय किया जाय कि जिसमे उनकी जमीन महाजनोके हाथमें अधिक न जाने पावे । सरकारने उनके पहले अनुरोधपर तो कुछ ध्यान दिया नहीं, लगान वसूल करनेकी कठोरता घटाने (elasticity in collection) की उसने जरूरत नहीं समझी, केवल Land Alienation Act नामक आईन पासकरके महाजनोंका दमन किया । सोभी हजारों किसानोका जब सर्वनाश होगया तब । मिस्टर थारबर्नने अपनी रिपोर्टमें एक जगह कहाथा,—

In India a handful of foreigners rules the tens of millions and through action of these foreigners the peasant masses are now largely dependents of money-lenders, their former servants.

It is idle to say that Zamindars are thriftless, quarrelsome, or extravagant and have themselves to blame for their indebtedness. The evidence in this inquiry brings home none of these charges, except, to some small extent, thriftlessness, and even if all of them were deserved, we have to deal with human nature as it is, and the obligation would still lie on the Government so as to adjust its land revenue system as to obviate all reason for unnecessary borrowing from usurers...... Before our time in the Punjab the village lender was, and in the other countries named he is still, a dependent servant of the rural community, and never what our system is making him in the Punjab villages—that community's master... ..

Prices-current, rain statistics and the Revenue Reports of districts show that fodder and grain scarcities are of frequent recurrence and the village note-books and revenue statistics generally prove that suspensions are rare and remissions still rarer .. ...In fact for the whole district (Sialkot) the revenue of which is now fifteen lakhs, I make out that in the last 30 years only Rs 6,450 have been suspended, and Rs. 16,94 remitted all on account of damage done by hail. In that period there have been several prolonged fodder famines and quite a dozen poor harvests.

भारतवर्षमें एक मुट्ठीभर विदेशी करोड़ों मनुष्योंपर शासन करतेहैं। इन विदेशियोंके कामकी भूलसेही किसानोंको अधिक परिमाणमें महाजनोंका मुँह ताकना पड़ताहै। यह बात बिलकुल झूठहै कि भारतवर्षके जमीन्दार और किसान बहुत खर्च करनेवाले, और झगड़ालू होनेके कारण अपने दोषसे कर्जदार होतेहैं। क्योंकि जाच करनेसे जानागयाहै कि थोड़ी फजूल खर्चीके सिवाय उनमें और किसीभी दोषके होनेके प्रमाण नहीं मिलते। यदि उनमें इन बातोंका होना मानभी लिया जाय तोभी मनुष्य स्वभावकी विशेषताको विचार करके सरकारको काम करना होगा। इसलिये ऐसी दशामें खेतोंके लगानेके विषयमें सरकारको ऐसी व्यवस्था करनी उचितहै जिससे उन्हें महाजनोंके पास अनावश्यक ऋण लेनेका प्रयोजन न पड़े। हम लोगोंके शासनके पहले पञ्जाबके गावोंके महाजन किसानोंके अधीन नौकररहे थे। टर्की घाटी और सोराष्ट आदि स्थानोंमें अबभी महाजन लोग किसानोंके निरे नौकरहे हैं। किन्तु हम लोगोंकी शासन प्रणालीके कारण पञ्जाबके देहातोंमें वे जिसप्रकार किसानोंके मालिक बन बैठेहैं उस प्रकार पहले कभी नहीं हुआ था। भिन्न भिन्न जिलोंकी बाजारभाव, वर्षाका और लगान सम्बन्धी रिपोर्टोंके पढ़नेसे जाना जाताहै कि अनाज और घासचारेका अकाल उन भागोंमें लगातार पड़ रहाहै। किन्तु नोटबुक और लगा-

नकी फेहरिस्तमे दिखायी पडताहै कि सकटके समय कुछ समयतक कर वसूल करना बहुत कम मुलतवी रखा जाताहै और सकटसे सतायी हुई प्रजाका लगान एकदम माफ करदेनेकी रीति उससेभी कमहै । उदाहरणके लिये स्यालकोटका जिलाहै । इस जिलेकी सालाना आमदनी २५ लाख रुपयेहैं । किन्तु विगत ३० वर्षोंमे वहां कुल १६६४) रुपयेका लगान माफ किया गयाहै और ६४५०) का लगान कुछ समय टालकर पीछेसे वसूल कियागयाहै इन तीसवर्षोंमे यहा अनेकवार घासचारेका अकाल बहुत समयतकके लिये हुआहै और कमसे कम १२ वार फसल बहुत कम पैदा हुईहैं ।

यदि वङ्गभाषाके अप्रतिम लेखक बङ्किमचन्द्र इस समय जीते होते तो अवश्य कहते,–"बत्तीस वर्षके अनुभवसे जो सारगर्भ उक्ति सिविलियन थारबर्नसाहबकी लेखनीसे निकलीहै उसे शिमलाके राजमहलमे अच्छी तरहसे सोनेके अक्षरोंमे लिखकर रखना उचितहै ।" सारांश यह कि हिन्दुस्थानके किसानोंकी दुर्दशाके सच्चे कारणोका इस प्रकार स्पष्टभाषामें वर्णन करनेका साहस थोडेही राजकर्मचारियोंको हुआहै । सरकारके पासभी इस प्रकार स्पष्ट कहनेका पुरस्कार नही है ।

" अप्रियस्य च पथ्यस्य वक्ता श्रोता च दुर्लभः । " सरकार ऐसी कडी वात सुनना पसन्द नही करतीहै । इसीलिये थोडे दिनोंके बाद सरकारकी सीमा सम्बन्धी राजनीतिके विषयमे साफ बात कहने पर थारबर्नसाहबको इस्तीफा दे देना पडा । थारबर्न साहबके समान दूसरे साफ कहने-वाले कर्मचारियोंकोभी उच्च राजकर्मचारियोंसे थोडा लाछित नहीं होना पडा । माननीय मिस्टर स्मिटन बहादुर सरकारी माली विभागके मन्त्रीथे । उन्होने सन् १९०० । ०१ ईस्वीके बजटकी बहसके समय बडे लाटकी कौंसिलमें कहाथा, " पिछले वर्षके अकालोंके परिणामका विचार करतेहुए कहना पडेगा कि विगतवर्ष बम्बई, मदरास और पञ्जाबके किसानोंसे जो लगानमें ६० लाख रुपये अधिक लिये गयेहैं सो ठीक नही हुआ" इसी अवसरमे उन्होंने यहभी कहा कि सर-कारकी लगान सम्बन्धी राजनीतिके दोषसेही इस देशमे दिनोंदिन अकालका प्रकोप बढता जाताहै । इस प्रकार साफ साफ बात कहनेके साथही स्मिटन साहबकी अवनतिका मार्ग खुलगया कहां तो सबलोग समझ रहेथे कि वे ब्रह्मदेशके छोटे लाट नियुक्त किये जावेगे और कहां निराश होकर उन्हें सरकारी काम काज छोडकर घर बैठनेमे लाचार होना पडा । आसामके भूतपूर्व चीफ कमिश्नरसर हेनरी काटन महोदयभी अभागे कुलियोंके प्रति सहानुभूति दिखानेके अपराधके कारण बगालके छोटे लाट नहीं होसकेथे । पाठकोंको इस विषयकी सब बातें अभी यादही होगी ।

थारबर्न साहबकी बातोंसे यह सहजमेंही जाना जासकता है कि बारम्बार सरकारी लगान बढते रहनेके कारण पञ्जाबके किसानोंका आधा भाग कर्जके जालमे जकडा हुआ है । गुडगाव जिलेके उस समयके डिपुटी कमिश्नर मि० जे० आर० मेकोनकीने वहांके किसानोंकी दशाका सक्षिप्त वर्णन करते हुए निम्न लिखित राय दीथी ।

In fair seasons there is no actual want of food, but the standard of living is perilously low . ··· It is obvious that the supreme object in life for them is how to keep body and soul together, and the struggle is an arduous one.

यद्यपि अच्छी फसलके सालमें खानेपीनेकी चीजोंका अभाव वैसा नहीं रहता तथापि इन लोगोंकी जीवन यात्राका नमूना बहुतही शोचनीय है। किसी प्रकार देहके साथ आत्माका सबन्ध बनाये रखनेमें समर्थ होनेसेही ये अपनेको बड़ा सौभाग्यशाली समझतेहैं। केवल जीवन रक्षा करनेके लिये उपयोगी अनाज इकट्ठा करनेके लियेही इन लोगोंको घोर परिश्रम और कष्ट सहना पड़ताहै।

पञ्जाबके अधिकांश जिलोंकी दशा बहुतही शोचनीयहै। यह बात "Economic Inquiry of the Punjab in 1888" नामक सरकारी रिपोर्टके देखनेसेभी जानी जा सकतीहै। मिष्टर एस एस. थारबर्न महोदयकी १८९६ ई०की रिपोर्टमें प्रकाशितही हुआहै कि १८८८ ई० के पीछे पञ्जाबकी अवस्थामें विशेष फेरफार नहीं हुआहै।

अवधप्रान्तके निवासियोंकी दशा पञ्जाबियोंकी अपेक्षा किसीभी अंशमें अच्छी नहीं है। अवध गजेटियरके पहले खण्डके ५१५ वे पृष्ठमें उक्त प्रदेशके भूतपूर्व चीफकमिश्नर मिष्टर डबल्यू सी. बेनेट महोदयके निम्न कथनसे यह बात सिद्ध होजावेगी–

It is not till he has gone into these subjects in detail that a man can fully appreciate how terribly thin the line is which divides large masses of people from nakedness and starvation

अर्थात् विस्तृत रूपसे इन सब बातोंकी आलोचना नहीं करनेसे यह बात किसीकी समझमें नहीं आवेगी कि इस प्रदेशके अधिकांश निवासियोंके खाने पहननेकी वस्तुओंका अभाव कैसा भयानक रूपमें होगयाहै।

उस समयके फैजाबादके कायम मुकाम कमिश्नर मिस्टर हेरिङ्गटन महोदयने सन् १८८८ ई०के ४ अप्रेलको बेनेट महोदयके ऊपर लिखेहुए मन्तव्यको उद्धृत करके जमीन और खेती विभागके डाइरेक्टरबहादुरको एक पत्र लिखाथा, उसमें उन्होंने लिखाथा –

I believe that this remark is true of every district in Oudh.

हमें विश्वासहै कि यह मन्तव्य अवध प्रान्तके प्रत्येक जिलेके लिये लागूहै।

इसी पत्रमें एक जगहपर उन्होने औरभी लिखाथा,–

My own belief, after a good deal of study of the closely connected question of agricultural indebtedness, is that the impression ("that the greater proportion of the people of India suffer from a daily insufficiency of food") is perfectly true as regards a varying, but always considerable, part of the year in the greater part of India.

अर्थात्–किसानोंकी दशाके विषयमें अनेक आलोचना करनेसे हमारे हृदयमें यह विश्वास जमगयाहै कि हिन्दुस्थानके अधिकांश निवासी वर्षके अधिक दिनोंतक [illegible] भरपेट भोजनके बिना कष्ट पातेहैं।

[illegible] जमीनका बन्दोबस्त करनेके विषयमें [illegible] के डिपुटीकमिश्नर मिस्टर [illegible]ने सन् १८९८ ई० के मार्च महीनेकी कमीशनकी रिपोर्टमें लिखाथा कि नीचवर्गके

पहले—यही क्यों तीस वर्षके पहलेभी—इस प्रदेशकी जमीनमें जितना गेहूं तथा रबीकी फसलका अनाज पैदा होताथा, इस समय उससे बहुत कम अनाज पैदा होताहै। क्योंकि पहलेके समान लोग जमीनमें खाद नहीं डाल सकतेहैं। गाय बैल आदि पशुओंकी कीमत बढगयीहै और सम्भवहै कि उनकी सख्याभी घट गयीहै। किसानोंमेंसे प्रायः सैकडा पीछे ७५ मनुष्योंके घरमें बिस्तर तथा कम्बल नहींहैं। केवल एक "दोहर" के सहारे वे सारा शीतकाल व्यतीत करतेहैं। ❀ इस प्रकार अकसर भूखों मरना इस समय अधिकांशमें लोगोंके अभ्यासमें शामिल होगयाहै। इस जिलेमें Hunger is very much a matter of habit !

अब यह देखनाहै कि आगराप्रदेश (पश्चिमोत्तरप्रदेश) के किसानोकी दशा कैसीहै। यह बात पहले लिखी जाचुकीहै कि लार्डडफरिनके समयमें हिन्दुस्थानके किसानोकी दशा जाननेके लिये गुप्तचुप जाच की गयी थी। किसी पिछले पृष्ठमें लिखी हुई डाक्टर हण्डर और सर चार्ल्स इलियटकी सम्मतियां तथा इण्डियन नेशनल कांग्रेसके आन्दोलनही इस गुप्त जाचके कारण हैं। इस गुप्त जाचका कुछ हिस्सा बडे प्रयत्न करनेपर मि० डिगवीको देखनेको मिलाथा। उन्होंने अपने ग्रन्थमें उस रिपोर्टसे राजकर्मचारियोंकी कई सम्मतिया उद्धृतकरके हम लोगोंसे धन्यवाद पानेका कार्य कियाहै। उनके ग्रन्थकी सहायतासे उस रिपोर्टका कुछ आभास पाठकोंको दिखाया जाताहै।

सरकारी रिपोर्टका रहस्य।

आगरा प्रदेशके एटा जिलेके उस समयके कलेक्टर क्रुक साहबने अपनी रिपोर्टमें लिखाथा,— "बहुतसे बुद्धिमान लोगोंकी सहायतासे विशेष अनुसन्धानकरके जानागयाहै कि जिस किसानके पास १६॥ बीघा (एटाके १० बीघा) जमीन एक हल, एक जोडी बैल और खेती सींचनेके

अवधप्रान्तकी सरकारी लगान सम्बन्धी रिपोर्टके निम्नलिखित भागको देखनेसे जाना जायगा कि सरकारी खजानेमें रुपयोंकी कमी होतेही अफसरलोग दरिद्र किसानोंपर लगान बढानेके लिये तैयार होजातेहैं।

In some districts, notably, Fyzabad, Gonda, Kheri and parts of Sultanpur, at a time of supposed financial pressure the revision of the assessment was hurried on, a greatly enhanced demand was imposed Report of 1872–3

अवश्यही यह तीस वर्ष पहलेकी बातहै किन्तु क्या गरीब प्रजाकी वर्तमान दुर्दशासे इस बीतीहुई घटनाका कुछभी सम्बन्ध नहींहै ? क्या यह बात मनमें नहीं आती कि माननीय मिस्टर स्मीटनका कथन स्मरण होनेसे इस समयभी सरकारी खजाना बढानेके लिये बेआईनी प्रयत्न किया जासकताहै ?

योग्य कुँआहै उसकी सालाना आमदनी खरीफकी फसलमे १२६॥) और रबीकी फसलमे ८४॥) रुपये हैं। इन मुवलिक २१४) रुपयोंमें सरकारी लगानमें ७५) बीज मोल लेनेमे १३॥) फसल तैयारीके दूसरे खर्चोंमें ७६॥≈) बाद करनेपर किसानोंके पास ४५॥।≈) शेष रहतेहैं। इन पैंतालीस रुपये चौदह आनेमे उस किसानको दो बैल, एक हरवाहा और अपने कुटुम्बके सहित एक सालतक गुजर करना पडताहै। चार आदमियोंके लिये नित्य दोनो समयमे तीन सेर चावल और अन्य खानेके अनाजोंकी जरूरत पडतीहै। यदि रुपयेका २५ सेर अनाज मिले तोभी उक्त परिवारको सालमे ४३ रुपयेका अनाज खरीदना पडताहै। कपडोंके लिये सालमे ८) रुपया लगतेहैं। इसप्रकार ५१) रुपयेसे तीन आदमियोंके साथ उस किसानको एक साल व्यतीत करना पडताहै। साराश यह कि उसे प्रतिवर्ष पांच रुपये की कमी हुआ करती है।

ऊपरके वर्णनमे देखा गयाकि साधारणतः जिसके पास दस (इस समयके हिसाबसे १६॥) बीघा जमीन है उसे फसलके पीछे होनेवाले खर्चोको निकालनेपर १२१) रुपयेकी बचत होती है इसमेंसे उसे ७५) रुपये जमीनका लगान देना पडता है शेष ४५) रुपयेमें ४३) रुपयेका अनाज खरीदना पडताहै। कुक साहबने चावलका भाव प्रति रुपये २५) सेर लिखाहै। किन्तु उनके रिपोर्ट लिखनेके समय सन् १८८८ ईस्वीमे एटामे खानेके कामके अनाजका भाव प्रतिरुपये १७ सेरसे अधिक नहीं था। इसलिये उन्होंने जो अनुमान किया है कि सालमे ४३) रुपयेका अनाज लगताहै सो उसके बदले यथार्थमें ६३ ।) रुपयेका खर्च होना चाहिये। इसके पश्चात् तेल, नमक तथा अन्य व्यञ्जनोका उन्होंने कुछ वर्णनही नहीं किया। सभी इस बातको कबूल करेंगे कि चार मनुष्योंको सालमे १।) का नमक अवश्य चाहिये। तेल आदि व्यञ्जनोके लिये सालमे कमसे कम साढेतीन रुपये रखले तोभी ऊपर वर्णन किये हुए परिवारका सालाना खर्च ६८) रुपयेसे कम नहीं होताहै। कुकसाहबने कहाहै कि अनेक किसानोंके घरमे कमसे कम एक गाय अथवा भैंस रहतीही है; उसके दूधसे किसानोंके घी दूधका अभाव दूर हुआ करताहै। किन्तु उन्होंने यह नहीं बतलाया कि उनके खरीदनेके लिये तथा गाभिणी होनेके समय उन्हें खिलानेके लिये खर्च कहांसे आताहै।

ऊपरजो ६८) रुपयेका खर्च दिखलाया गयाहै उसमे बीमारी, दवा, पथ्य तथा आदि भलाइन, जन्म, मृत्यु, विवाह और धर्मकार्य आदिके खर्च जोडे नहीं गये। मिस्टर कुकने अपनी रिपोर्टके ३१वे पृष्ठमे कहाथा,–

A great majority of the rural population pass through at least one or two attacks of fever during the year, in fact in many cases the disease has a tendency to become chronic or constitutional

चार आदमियोंके परिवारके मालिक किसानकी सालाना आमदनी ४५।।।=) से अधिक नहीं है। इससे भली भांति जाना जा सकता है कि एटा जिलेकी सरकारको इतना अधिक लगान देकर किसान लोग किस प्रकार सुखसे अपनी जिन्दगी बिताते होंगे। ※ १२१) रुपयेमें ७५) लगान लेकरभी सरकार किसानोंको खर्च करनेके शौकीन कहकर घृणा करतीहै और महाजन लोगोंको विषकी बुझायी आँखोंसे देखतीहै ! यह बात सहजही जानी जा सकती है कि महाजन न होते तो किसानोंकी कैसी दुर्दशा होती। परन्तु ऋण लेनेसेही कितने दिन चलेगा ! महाजन ही कितने दिनोंतक उधार देसकेंगे ? इसी लिये किसान लोगोंको अपने परिवारके सहित आधेपेट खाकर दिन बिताने पडतेहैं। मिस्टर गार्टनका (Manager of the palmar Waste land grant) कथन है इस देशके अधिकाश स्थानोंके लोग उधार करके खानेकी अपेक्षा थोडा खाकर तथा सस्ता और खराब अन्न खाकर दिन बिताना अच्छा समझतेहैं।

They prefer short allowance and inferior kind of food to incurring debt

क्रुकसाहबने प्रत्येक किसानके परिवारकी औसत सख्या तीन रक्खी है। किन्तु भारतकी मर्दमशुमारीकी रिपोर्ट देखनेसेही स्वीकार करना पडेगा कि भारतका प्रत्येक परिवार औसत दर्जे पाच मनुष्योंसे बनताहै। यदि किसानके अधीन चार मनुष्य परिवारके मान लिये जावें तो उसका सालाना खर्च और भी १७॥) रुपये बढ जाताहै। ऐसी दशामे किसानी परिवारको कर्जके कीचडमे फँसकर आधेपेट खाकर इस जीवनको किसी तरह बिताना पडे तो इसमें आश्चर्यही क्याहै। मिस्टर क्रुकका औरभी कथनहै,–

It is unusual to find a village woman who has any wraps at all.

यहाकी देहाती स्त्रियोंमें किसीके शरीरमेभी कपडा अथवा चादर नहीहै।

पाठकोने इसी परसे एटा जिलेकी दशा जानलीहै। किन्तु इस रिपोर्टका सारसंग्रह करतेहुए जो सरकारी सम्मति प्रकाशित हुईहै, उसमे देखाजाताहै,–

Mr Crook Collector of Etah (area 1739 Miles, population 756528) whose peculiar knowledge of agricultural life lends a great value to his remarks, considers the peasantry to be a robust apparently well-fed population, and dressed in a manner which quite comes up to their traditional ideas of comfort. Mr Crook does not believe that anything like a large percentage of people in Etah or any other districts of the provinces, is habitually under-fed.

एटाजिलेका विस्तार १७३६ वर्गमील और मनुष्यसख्या ७५६५२८ है। यहांके कलेक्टर मिस्टर क्रुकसाहबका अनुभव भारतीय किसानोंके जीवनके सम्बन्धमे विशदहै इसलिये उनकी रायका वजनभी अधिकहै। इन विज्ञ कर्मचारीकी रायमें एटाजिलेके किसान हृष्टपुष्टहैं उन्हें

※ आजकल तो अनाजका भाव और भी महँगा होगयाहै रुपयेमे दस बारह सेरसे अधिक चावल नहीं मिलतेहैं।

बिलकुल अन्नकष्ट नहीहै । सुखस्वच्छन्दताके विषयमें जैसी उनकी पुरानी धारणाहै उसीके अनुसार वे पहनाव ओढाव रखतेहैं । मिस्टर क्रुक इस बातपर विश्वास नहीं करते कि एटा जिला अथवा किसीभी प्रदेशके अधिकांश लोग बारहो महीने आधेपेट खाकर जिन्दगी बितातेहैं ।

किन्तु क्रुक साहबकी रिपोर्टके २३ वें पृष्ठमें देखा जाताहै कि,–

The assertion which is universally believed by natives, that the cultivator is not so well-off now-a-days as at the time of the Mutiny.

देशके सभी मनुष्योंका विश्वास है कि सिपाही गदरके समय किसानोंकी जैसी भरीपूरी दशाथी, अब वैसी नहीहै ।

अब पाठक इस कथनसे ऊपर लिखीहुई सरकारी सम्मतिको जरा मिला देखें ।

रिपोर्टके १६ से १८ पृष्ठतक आबेरामठाकुरनामक एक किसानका परिचयहै । उसके विषयमें क्रुक साहबने लिखाहै ।

आबेरामकी उमर ४० वर्षकीहै । इसके अधीन परिवारमें पांच मनुष्यहैं । २७ बीघे जमीनकी खेती करताहै । अच्छी खेती होनेसे इसके परिवारमें प्रतिदिन दोनो समयमें ५ सेर चावल खर्च होतेहैं । यदि अनाज महँगा बिकने लगे तो तीनसेर अथवा इससेभी कम चावलोंमें उसके परिवारको समय काटना पडताहै । इस वर्ष खेतका अनाज भली भाँति पकनेके पहलेही उसे फसलमेंसे अनाज काटकर खानेमें लाचार होना पडाहै । उसके खेतमें जो अनाज हुआथा उसका मूल्य ७०) रुपये था, इसमेंसे उसे ६८॥।≶) लगान देना पडाहै । इस लगानका आधा हिस्सा जमीन्दारने और आधा सरकारने लियाहै । दूध बेचकर इसवर्षमें उसने १८) रुपये पैदा कियेहैं । बापबेटेने मजदूरी करके १५) रुपये कमायेहैं । इनमेंसे साढे नव रुपयेका उसे बीज खरीदना पडाहै । परिवारके पांच आदमियोंके साथ ४४) रुपयेमें उसे साल्भरतक इस पापी पेटकी पीडा किसी अशमें मिटानी पडीहै । इसवर्षमें उसे ७॥) रुपयेके कपडे खरीदने पडेथे । घरमें एकभी कम्बल नहीहै । गृहस्थीके असबाबकी कीमत २) रुपयेसे अधिक नहीं होगी । यदि साढे २६॥) रुपये और न होवे तो दिनमें एकबार आधे पेट खाकर वह इस वर्षको बिता नहीं सकेगा । पहले वर्षका पचास साठ रुपयेका कर्ज पडा हुआहै इसलिये महाजनके पाससे उधार रुपये मिलनेकी भी आशा नहीहै ।

क्रुक साहबने आबेराम ठाकुरके विषयमें अपनी रिपोर्टमें जो लिखा उसे पढकर आगराप्रदेश (पश्चिमोत्तरप्रदेश) के उस समयके छोटे लाट सर आकलेण्ड काल्विन साहबने अपने प्रधान मन्त्री मिस्टर टी० आर० रीडकी सम्मतिमें निम्नलिखित मन्तव्य स्थिरकिया –

The family appears to be above want.

आबेराम ठाकुरके परिवारको किसीभी बातकी कमी नहीहै ।

---

१ । इंग्रेजोंकी सम्पत्तिने [illegible] (A marked Improvement) देख पडतीहै । किन्तु [illegible] –

[illegible]

चार आदमियोंके परिवारके मालिक किसानकी सालाना आमदनी ४५|||=) से अधिक नहीं है। इससे भली भांति जाना जा सकता है कि एटा जिलेकी सरकारको इतना अधिक लगान देकर किसान लोग किस प्रकार सुखसे अपनी जिन्दगी बिताते होंगे। ✽ १२१) रुपयेमें ७५) लगान लेकरभी सरकार किसानोंका खर्च करनेके शौकीन कहकर घृणा करतीहै और महाजन लोगोंको विषकी बुझायी आंखोंसे देखतीहै। यह बात सहजही जानी जा सकती है कि महाजन न होते तो किसानोंकी कैसी दुर्दशा होती। परन्तु ऋण लेनेसेही कितने दिन चलेगा! महाजन ही कितने दिनोंतक उधार देसकेंगे? इसी लिये किसान लोगोंको अपने परिवारके सहित आधेपेट खाकर दिन बिताने पडतेहैं। मिस्टर गार्टनका (Manager of the palmar Waste land grant) कथन है इस देशके अधिकांश स्थानोंके लोग उधार करके खानेकी अपेक्षा थोडा खाकर तथा सस्ता और खराब अन्न खाकर दिन बिताना अच्छा समझतेहैं।

They prefer short allowance and inferior kind of food to incurring debt

क्रुकसाहबने प्रत्येक किसानके परिवारकी औसत संख्या तीन रक्खी है। किन्तु भारतकी मर्दमशुमारीकी रिपोर्ट देखनेसेही स्वीकार करना पडेगा कि भारतका प्रत्येक परिवार औसत दर्जे पांच मनुष्योंसे बनताहै। यदि किसानके अधीन चार मनुष्य परिवारके मान लिये जावे तो उसका सालाना खर्च और भी १७||) रुपये बढ जाताहै। ऐसी दशामें किसानी परिवारको कर्जके कीचडमें फँसकर आधेपेट खाकर इस जीवनको किसी तरह बिताना पडे तो इसमें आश्चर्यही क्याहै। मिस्टर क्रुकका औरभी कथनहै,–

It is unusual to find a village woman who has any wraps at all.

यहांकी देहाती स्त्रियोंमें किसीके शरीरमेंभी कपडा अथवा चादर नहीहै।

पाठकोंने इसी परसे एटा जिलेकी दशा जानलीहै। किन्तु इस रिपोर्टका सारसंग्रह करतेहुए जो सरकारी सम्मति प्रकाशित हुईहै, उसमें देखाजाताहै,–

Mr Crook Collector of Etah (area 1739 Miles, population 756528) whose peculiar knowledge of agricultural life lends a great value to his remarks, considers the peasantry to be a robust apparently well-fed population, and dressed in a manner which quite comes up to their traditional ideas of comfort Mr Crook does not believe that anything like a large percentage of people in Etah or any other districts of the provinces, is habitually under-fed.

एटाजिलेका विस्तार १७३६ वर्गमील और मनुष्यसंख्या ७५६५२८ है। यहांके कलेक्टर मिस्टर क्रुकसाहबका अनुभव भारतीय किसानोंके जीवनके सम्बन्धमें विशषहै इसलिये उनकी रायका वजनभी अधिकहै। इन विज्ञ कर्मचारीकी रायमें एटाजिलेके किसान हृष्टपुष्टहैं उन्हें

✽ आजकल तो अनाजका भाव और भी महँगा होगयाहै रुपयेमें दस बारह सेरसे अधिक चावल नहीं मिलतेहैं।

बिलकुल अन्नकष्ट नहीहै। सुखस्वच्छन्दताके विषयमे जैसी उनकी पुरानी धारणाहै उसीके अनुसार वे पहनाव ओढाव रखतेहैं। मिस्टर कुक इस बातपर विश्वास नहीं करते कि एटा जिला अथवा किसीभी प्रदेशके अधिकाश लोग बारहो महीने आधेपेट खाकर जिन्दगी बितातेहैं।

किन्तु कुक साहबकी रिपोर्टके २३ वे पृष्ठमे देखा जाताहै कि,–

The asseltion which is univelsally believed by natives, that the cultivatol is not so well-off now-a-days as at the time of the Mutiny.

देशके सभी मनुष्योका विश्वास है कि सिपाही गदरके समय किसानोकी जैसी भरीपूरी दशाथी, अब वैसी नहीहै।

अब पाठक इस कथनसे ऊपर लिखीहुई सरकारी सम्मतिको जरा मिला देखें। *

रिपोर्टके १६ से १८ पृष्ठतक आबेरामठाकुरनामक एक किसानका परिचयहै। उसके विषयमें कुक साहबने लिखाहै।

आबेरामकी उमर ४० वर्षकीहै। इसके अधीन परिवारमे पांच मनुष्यहैं। २७ बीघे जमीनकी खेती करताहै। अच्छी खेती होनेसे इसके परिवारमे प्रतिदिन दोनो समयमे ५ सेर चावल खर्च होतेहैं। यदि अनाज महँगा बिकने लगे तो तीनसेर अथवा इससेभी कम चावलोमे उसके परिवारको समय काटना पडताहै। इस वर्ष खेतका अनाज भली भाँति पकनेके पहलेही उसे फसलमेसे अनाज काटकर खानेमे लाचार होना पडाहै। उसके खेतमे जो अनाज हुआथा उसका मूल्य ७०) रुपये था, इसमेसे उसे ६८॥≥) लगान देना पडाहै। इस लगानका आधा हिस्सा जमीन्दारने और आधा सरकारने लियाहै। दूध बेचकर इसवर्षमे उसने १८) रुपये पैदा कियेहैं। बापबेटेने मजदूरी करके १५) रुपये कमायेहैं। इनमेसे साढे नव रुपयेका उसे बीज खरीदना पडाहै। परिवारके पाच आदमियोके साथ ४४) रुपयेमें उसे सालभरतक इस पापी पेटकी पीडा किसी अशमें मिटानी पडीहै। इसवर्षमें उसे ७॥) रुपयेके कपडे खरीदने पडेथे। घरमे एकभी कम्बल नहीहै। गृहस्थीके असबाबकी कीमत २) दोरुपयेसे अधिक नहीं होगी। यदि साढे २६॥) रुपये और न होवें तो दिनमे एकबार आधे पेट खाकर वह इस वर्षको बिता नही सकेगा। पहले वर्षका पचास साठ रुपयेका कर्ज पडा हुआहै इसलिये महाजनके पाससे उधार रुपये मिलनेकी भी आशा नहीहै।

कुक साहबने आबेराम ठाकुरके विषयमें अपनी रिपोर्टमें जो लिखा उसे पढकर आगराप्रदेश (पश्चिमोत्तरप्रदेश) के उस समयके छोटे लाट सर आकलेण्ड कालविन बहादुरने अपने प्रधान मन्त्री मिस्टर टी० आर० रीडकी सहयतासे निम्नलिखित मन्तव्य स्थिरकिया,–

The family appeals to be above want.

आबेराम ठाकुरके परिवारको किसीभी बातकी कमी नहीहै।

---

* सिन्धुदेशमेंभी राजकर्मचारीलोग प्रजाकी समृद्धि शाली दशा (A malked Implovement) देख रहेहैं। किन्तु कहतेहैं,–

कविने ठीक कहाहै,–"स्वयम् बुरे जो होतेहैं सो कहते बुरा पुकार पुकार"।

यह राय भारतगवर्नमेण्टके पास भेजी गयीथी । सरकारनेभी विश्वास करलिया कि आवेरा-मको किसी तरहकी कमी नहीं है ।

उस वर्ष एटा जिलेमें जिसकी जमीनमें ३२१) रुपयेसे अधिक मूल्यका अनाज नहीं पैदा हुआथा उसे ३०६) रुपये जमीनका लगानही देना पडाथा । इस बातका उदाहरणभी उसी रिपोर्टमें मिलताहै । तेली तथा कोरियोंकी अवस्था भी किसानोसे किसी अंशमें अच्छी होगी । किन्तु रिपोर्टमें इस विषयकी कुछभी विवेचना नहीं है ।

इटावा जिलेके कलेक्टर मिष्टर अलेकजेण्डरने उस जिलेके किसानोकी दशाके विषयमें लिखाथा,–

In all ordinary years I should say that many cultivators live one third of the year on advances from money-lenders.

साधारणतः जिस पूरे वर्षमें अतिवृष्टि अथवा अनावृष्टिकी बाधा नहीं होती, उस वर्षमें सालके प्रायः चार महीनोतक किसानोको महाजनोके पाससे कर्ज लेकर अपनी जिन्दगीके दिन व्यतीत करने पडतेहैं ।

कानपुरके असिस्टेण्टकलेक्टर मिष्टर वार्डने कहाथा,–

I have calculated the cost of food of a male at £1. 12 s. per annum, of a female, £1. 7s 4d. and a minor 18s. 8d.

मैंने औसत लगाकर प्रत्येक पुरुषके खानेका सालाना खर्च १६) प्रत्येक स्त्रीका १३॥=)॥ और प्रत्येक बालकका ९।)॥ रक्खाहै ।

जिस जिलेके पूरे जवान पुरुषको १६) रुपयेमें एक सालतक अथवा तीन पैसेमें दिनके दोनों समय तेल नमक दाल आटा आदि लेकर जी जिलाना पडताहै उस जिलेके आदमी कैसे सुखी होंगे इसका अनुमान सभी कर सकतेहैं ।

झांसी विभागके कमिश्नर मिष्टर ओयार्डने उस कमिश्नरीके जालौन जिलेके लोगोंकी स्थितिके विषयमें लिखाथा,–

In Jhalaun the burden of indebtedness is very heavy and I cannot but think that agriculture is declining from want of capital and from too continuous cultivation of the same land for the same crop

जालौन जिलेके किसानोंपर कर्जका बोझा बहुत अधिकहै धनके न होनेसे यहांकी खेतीकी दशा दिनों दिन बिगडती जारहीहै । एकही भूमिमें एकही प्रकारका अनाज बारम्बार पैदा करनेसे जमीनकी उपजाऊ शक्ति घटती जारहीहै ।

देशके अधिकाश निम्न श्रेणीके लोग प्रतिदिन आधेपेट खाकर रहतेहैं या नहीं इस प्रश्नके उत्तरमें बान्दा जिलेके कलेक्टर और मजिस्ट्रेट मिस्टर ह्वाइटने कहाथा;–

A very large number of lower classes of population clearly demonstrate by the poorness of their physique that they are habi

tually half-starved ..I think the Government would be astonished to find how many Oudh peasants cultivate land without any bullock

यह बात इन लोगोंके शरीरकी शोचनीय क्षीणतासेही मालूम होतीहै कि निम्न श्रेणीके लोगोंमेसे वहुतसे लोगोंके अधिक समयतक आधेपेटखाकर दिन विताने पडतेहैं । मैं समझताहूँ कि सरकार यह सुनकर आश्चर्य मानेगी कि वैलोंके न होनेसे अवधके अनेक किसानोंको खुद हल चलाना पडताहै ।

गाजीपुर जिलेके कलेक्टरने कहाथा,—

As a rule, a very large proportion of the agriculturists in a village are in debt.

साधारणतः गावोंके अधिकाश किसानही ऋणभारसे दवे हुएहैं ।

सीतापुर जिलेकी दशा कानपुरसेभी खरावहै । वहाके प्रत्येक पूरे जवान पुरुषको १४॥) रुपये और वालकको ७~) मे साल व्यतीत करना पडताहै । वहाके कमिश्नर मिस्टर वयने कहा था कि "किसी विशेष कारणसे यहांकी प्रजाको इसमे अधिक सुख स्वच्छन्दतामे समय व्यतीत करना अभीष्ट नहीहै ।" (देखिये रिपोर्टका ४२ वा पृष्ठ)

पहलेकी मर्दुमशुमारीकी रिपोर्टसे सन् १९०१ ईस्वीकी मर्दुमशुमारीकी रिपोर्टकी तुलना करनेसे मालूम होगा कि वरार प्रदेशमें इन दस वर्षोंमे मनुष्योकी सख्या प्रायः ५८०००० और पञ्जावमे ७५०००० घट गयीहै । मध्यप्रदेशके १३७०५०० मनुष्य गत दसवर्षमे (१८९१ से १९०१ ईस्वीतकमे) घट गयेहैं । इलाहावाद, गोरखपुर और काशी जिलेकी मनुष्य सख्या इस वीचमे २४४२८५ कम होगयीहै । यदि किसानोंको खानेपहननेकी चीजोका कष्ट न भोगना पडता तो इतने मनुष्य अकालमे कालके कवल कैसे वनजाते ? अफसर लोग कहते हैं कि दुष्ट महाजन, मोहमय दीवानी अदालत और निष्ठुर देवताके दोपसे ऐसा हुआहै, इसमें सरकारका कुछभी दोष नही है । किन्तु वडे लाटकी लेजिस्लेटिव कौंसिलमें जव माननीय श्रीयुक्त विपिनकृष्ण वसुने दिखलाया कि मध्यप्रदेशमे स्थानस्थानपर सैकडापीछे १०२ तथा १०५ रुपयेके हिसावसे कर वढजानेके कारण प्रजाका कष्ट वढगयाहै तव सरकारकी ओरसे युक्तिपूर्ण प्रतिवाद नहीं किया जासका ।

सरकारकी ओरसे इस वातको सिद्ध करनेके लिये समयसमयपर प्रयत्न किया जाताहै कि प्रजासे अधिक लगान नहीं लियाजाता । इस विषयमे इन्दौरराज्यके प्रधानमन्त्री दीवानवहादुर और रघुनाथरावने अनेक दिनोंतक मदरासकी सरकारके अधीन सवार्डिनेट सर्विसमें कामकरके अनुभव प्राप्तकर लिखाहै, सरकारी कर्मचारी कहतेहैं कि,—"जमीनकी कुल उपजसे सैकडा पीछे २५ वा या ३० वा हिस्सा अथवा किसानोंकी वचतका आधा हिस्सा सरकारी लगानमे लिया जाताहै । यदि सचमुचही ऐसा होता तो दो एक साल फसल अच्छी न होनेपरभी किसानोंकी ऐसी दीन हीन दशा न होती । सरकार प्रजासे औसत उपजके अनाजका आधेसे अधिक भाग

लगानमे ले लेतीहै । किन्तु सरकारी कागजपत्रोंमें . उपजके सो भागोंमें २५ या ३० भाग लेनेकी सत्यता दिखानेके लिये जमीनकी आमदनी अधिक रख दीजातीहै" ? उनके कथनका एक अंश योंहै,–

This is only in theory, actually they receive on an average more than fifty per cent, of the gross. On paper it is shown to be between 25 and 30 P c. of the gross by over-estimating the gross produce.

इसके पीछे दीवान बहादुरने उदाहरणके लिये एक गांवकी खेतीकी आमदनी और खर्चका वर्णन और सरकारके नियत कियेहुए लगानका अन्याय दिखाते हुए कहाहै,–

Perhaps if there any doubt in this case, I am prepared o hand over thevillage to Government if I be allowed to draw from the Government treasury annually the sum of fixed assessment perpetually

इस हिसाबकी सचाईमे यदि किसी तरहका सन्देह हो तो हम चिरकालतक सरकारका नियत कियाहुआ कर लेकर सरकारको इसका इजारा देनेको तैयारहैं ।

विगत अकाल कमीशनके सामने सरकारकी ओरसे इस बातका हिसाब पेश किया गयाथा कि किस प्रदेशकी जमीनसे प्रतिबीघे औसत दर्जे कितना अनाज उत्पन्न होताहै । उस हिसाबमें प्रकाशित हुआहै,–सन् १८८० की अपेक्षा १८९८ ई० मे औसतदर्जे प्रतिबीघे प्रायः २५ सेर अनाज अधिक उत्पन्न हुआहै । सरकारकी ओरसे यहभी हिसाब प्रकाशित किया गयाथा कि सम्पूर्ण देशवासियोंके व्यवहारके लिये उपयोगी अनाज रखकर विदेशको रफतनी होनेपरभी देशमे कितना अनाज इकट्ठा था । इस हिसाबपर विश्वास न करसकनेके कारण कमीशनने नीचे लिखी हुई राय प्रकाशित की थी,–

The Bengal returns are partitcularly unreliable The Bombay returns also appear to be far too high The Burmah annual surplus has been pitched too high . The surplus of 3, 306300, tons returned for the province of Bengal appears to us to be greatly in excess of the reality, and the Local Government take the same view ...On the whole we are disposed to think that in the figures supplied to us by local Governments the normal surplus in most cases is placed too high.

अब विहार प्रान्तके किसानोकी दशा सुनिये । पटनेके कलेक्टरका कथनहै कि जो किसान ७ बीघे जमीनकी खेती करतेहैं, वे–

Can take one full meal instead of two.

एक समयको छोड कभी दोनों समय नहीं खा सकते ।

गयाके कमिश्नर साहबका कथनहै–

Forty per cent of the population are insufficiently fed,

इस जिलेमे सेकडा पीछे ४० मनुष्य आधे पेट खाकर दिन व्यतीत करतेहैं ।

पटनेके कमिश्नर मिस्टर टयेनबीने विहारके किसानोंकी दशाका वर्णन यों कियाहै,—

"ऐसे किसानोकी सख्या इस प्रान्तमे थोडी नहींहै, जो पाच बीघे जमीनकी खेती करतेहैं । औसत दर्जे सालमे ऐसे किसानोके खेतोंसे १२५) रुपयेका अनाज पैदा होताहै । इसमेसे लगान देनेपर १०२) रुपये उनके हाथ लगतेहैं । इन रुपयेसे साधारणतः छः परिवारके मनुष्योंके साथ उस किसानको एक साल व्यतीत करना पडताहै । इस प्रकार आपत्तिके मारे मनुष्योंकी सख्या इस प्रान्तमें प्रायः छः लाख होगी । लाखो आदमियोंको केवल दो बीघेकी खेतीकरके उससे पैदा हुई फसलसे अपना जीवन व्यतीत करना पडताहै । यह बात सहजही जानी जा सकतीहै कि इस थोडीसी आमदनीसे वे कैसे कष्टके साथ अपनी जिन्दगी विताते होंगे । इनके सिवाय सेकडा पीछे १० पन्द्रह मनुष्य ऐसे हैं जिनके पास कुछभी जमीन जमा नहीं है । वे केवल मजदूरी करके अपना जी जिलाते हैं । मजदूर लोगभी सालके आठ महीनोंतक प्रायः किसी तरह की मजदूरी नही पाते । मुजफ्फरपुर, सारन, चम्पारन तथा दरभङ्गेके अनेक भागोंके मजदूरोंको आधेपेट खाकर अपना समय विताना पडताहै" ।

रावर्ट नाइटके बनाये हुए India Before Our Time and Since नामक ग्रन्थमें देखा जाताहै कि पहले उडीसाके किसानोंके घरमे सदा अनाज इकट्ठा रहा करताथा । कमसे कम दो वर्षतकके खाने खर्चनेके लिये अनाज इकट्ठा घर रखनेके विना कोई भी किसान निश्चिन्त नहीं होताथा । नाइट महोदय कहते हैं "जब से उडीसा अङ्गरेजी राज्यशासनमे आया तबसे किसानोंका अनाज इकट्ठा करके घर रखना घटने लगा, घटते २ इस समय उस अनाजके भण्डारका एकदम लोपसा होगयाहै ।"

सरकारी रिपोर्टके अनुसार दक्षिण बङ्गालके पूर्वीय भागके लोगोको अबतक अन्नकष्ट नहीं सहना पडताहै । अवश्यही पश्चिम बगालेकी दशा वैसी नही है । विहार और उडीसाको छोडकर नदियोंसे घिरी हुई सुन्दर हरियाली पूर्ण बगभूमिके किसानोको भारतके दूसरे भागोंकी अपेक्षा अन्नकष्ट नहीं सहना पडताहै । तौभी बङ्गालके सब तरहके लोगोंकी औसत आमदनी प्रत्येक मनुष्यपीछे वार्षिक १५≡) डिगबी साहब बतलाते हैं । रुपये पैसेकी तगीके कारण बगालके अनेक स्थानोंमे पीनेके लिये अच्छे पानीकी व्यवस्था नहीं होसकतीहै । यही कारणहै कि मलेरिया और हैजेसे प्रतिवर्ष बङ्गालकी मृत्युसख्या बढती जातीहै । खानेपीनेकी चीजे अच्छी न होनेके कारण असख्य बगालीबालक यकृत रोगसे अपना अमूल्य जीवन कालके हवाले कर दिया करते हैं ।

साराश यही है कि अङ्गरेजोकी कर और वाणिज्य सम्बन्धी नीतिके कारण हिन्दुस्थानके सभी भागोंके किसानोंकी दशा बहुतही शोचनीय होगयी है । अङ्गरेजी भारतवर्षमें और चाहे कैसेही सुख क्यो नहीं, परन्तु ऊपर लिखी हुई राजकर्मचारियोंकी सम्मतियोसे यह भली भांति सिद्ध होगयाहै कि भारतके दस करोड मनुष्योंको पेटकी आग बुझानेके लिये अन्न और शरीर ढाकनेको कपडोके लिये वर्षके ३६५ दिन बराबर तरसना पडताहै । प्रसिद्ध इतिहास लेखक हण्टर साहबके Imperial Gazetteer of India नामक ग्रन्थके चौथे खण्डके १६४) वे

पृष्ठमे लिखाहै कि "यथार्थ दुर्भिक्षके समय सरकार बडे कष्टसे भूखसे तडपते हुए लोगोंका प्राण बचानेकी व्यवस्था करती तो है, किन्तु–

It cannot stop the yearly work of disease and death among a steadily under-fed people.

बडी कठिनाईसे नित्य आधा पेट खाकर जो प्रजा हरसाल ६२ रोगोंकी पीडासे और हैजेके आक्रमणसे मृत्युका समय आये विनाही इस ससारको छोडकर परलोकवासी होजातीहै उसके बचानेमे सरकार असमर्थहै।"

यदि सरकारही प्रजाकी रक्षाकरनेमे असमर्थ हुई तो उस अभागिनीको और कौन अकाल-मृत्युसे बचा सकताहै? प्राचीन समयसे आपत्तिके समयमें दरिद्रतासे सतायेहुए लोगोंका आधार देशके धनवान लोगोंपर रहता आयाहे, परन्तु देशके उन धनवान दानधर्मपरायण कुलीन मनुष्योंका समूह (Nobles) अब कहांहै? उन उदारचरित कर्णके समान दाता लोगोंका समूह आज कहांहै? सरजानके (Sir John Kaye) इस प्रश्नके उत्तरमें भारतकी अङ्गरेजी शासन-नीतिका दोष दिखलाते हुए कहतेहैं,–

The proprietors of vast tracts of country, as far as the eye could reach have shrivelled into tenants of mud huts and possessors of only a few, cooking pots.

अर्थात् जो विशाल भूमिखण्डके अधिकारीथे वे दीन हीन दशामे मिट्टीकी झोपडीमे कुछ सोने पीतलके पात्र लियेहुए किसीतरह अपने दिन काट रहेहैं।

उस समयके कुबेरके समान दरिद्रोका पालन करनेवाले राजखान्दानके लोगोंका अन्तमे क्या परिणाम हुआ? इसके उत्तरमे मिस्टर जान ब्राइटने पार्लियामेण्ट महासभामे साफ साफ कहाथा,–

They are now either homeless wanderers or pensioners on the bounty of the stranger by whom their fortunes have been over thrown

जो किसी समय देशका शासन करतेथे वे इस समय यानी घरबारहीन संन्यासियोंकी श्रेणीमे पलट गयेहैं, अथवा जिन विदेशियोंने उनके भाग्यको इसप्रकार पलट दियाहै उन्हींकी कृपासे पाई हुई पेनशनसे किसी तरह अपना गुजारा करतेहैं।

इस समय यदि सरकार प्रजाका अन्नकष्ट दूर करनेमे उसकी अकालमृत्यु निवारण करनेमे अपनी असमर्थता बतलावे तो आश्रयहीन भारतवासी अब कहाँ जाय? सन् १८८७ ईस्वीमें सपूर्ण भारतवर्षमे ३९२८६३१ मनुष्य मरेथे, किन्तु सन् १९०० ईस्वीमे ८३३४१४५ मनु-ष्योंने अपनी ससार लीला समाप्त करदी। सभी सभ्यदेशोमे मृत्युसख्या घट रहीहै परन्तु अभागे भारतवर्षमे उसकी संख्या क्यो बढती जा रहीहै? देशमे खानेपीनेकी चीजोके न होनेसे अनेक मनुष्य देश छोडदेनेमें लाचार होतेहैं। जो भारतवासी सहजही अपनी जन्मभूमिको छोडना नहीं चाहते उनमेंसे १०७१२ आदमियोने सन् १८९७ ईस्वीमे पेटकी आग बुझानेके लिये कुली बनकर विदेश गयेथे। सन् १९०० ईस्वीमें उनकी सख्या बढकर २१६१३ होगयी। सन्

१८९३ ईस्वीसे सन् १९०२।०३ ईस्वीतक दस वर्षमें १ लाख ७७ हजार ५८६ मनुष्य अपना देश छोडकर जीविकाकी खोजमें विदेश चलेगये। पेटकी पीडा निवारण करनेके लिये विदेशमे टापुओकी अगरेजी वस्तियोमे जो चले गयेहैं उनके साथ वहावाले कैसा कठोर अमानुषी व्यवहार करतेहैं सो समाचार पत्रके पाठकोंसे छिपा नहीहे।

इस विषयका पूर्ण अनुभव रखनेवाले कर्नल स्टोननामक अंग्रेजने किसी विलायती पत्रमें कुछ दिन पहले एक लेख लिखकर दिखलायाथा कि टापुओंकी अंग्रेजी वस्तियोंमे भारतवासियोंको कैसे कैसे अपमान और कष्ट सहने पडतेहैं। उसमे उन्होंने लिखाथा,–"दक्षिण आफ्रिकामें जो सम्पूर्ण गोरे दूकानदार हैं उन्होंने White League "गौरागसभा" नामक एक सभा बनायीहै। यह सभा गोरोंका स्वार्थ साधन करने और उनकी भलाई करनेमें खूब ध्यान दिया करतीहै। यही सभा इस समय दक्षिण आफ्रिकासे भारतवासी और दूसरी पूर्वीय जातियोंको निकाल देनेपर उतारू हुईहै। इसगौराङ्ग सभाका यही सोचने विचारनेका प्रधान विषय होगयाहै कि जिसमें भारतवासी तथा दूसरी पूर्वीय जातियां दक्षिण आफ्रिकामें दूकाने खोलकर थोडे दामोंमे चीजें वेचकर गोरे दूकानदारोंको घटी न पहुँचा सके। वे लोग भारतवासियोंके साथ अङ्गरेजी राज्यकी प्रजा समझकर रञ्चमात्रभी सहानुभूति नहीं दिखातेहैं। उलटा हिन्दुस्थानियोंकी व्यवसायबुद्धि, परिश्रमशीलता, मितव्ययिता, कामकरनेकी चतुराई और साफ कारवार आदि गुण देखकर वहाके गोरे दूकानदार जलाभुना करतेहैं हिन्दुस्थानियोंके इन गुणोसे इनके हृदयमें बडी चोट पहुँचतीहै। यही कारणहै कि दक्षिणआफ्रिकामे भारतवासी पदपदपर अपमानित होतेहैं। वहाकी सरकारभी आईन बनाकर इन सर्वगुणसम्पन्न भारतवासियोको पैरोंसे कुचलने और तङ्गकरनेमें कुण्ठित नहीं होतीहै'।

कर्नल स्टोन औरभी कहतेहैं, यूरोपके सभी देशके लोग इस "सादे दूकानदार" की श्रेणीमें शामिलहैं। साधारण दर्जेके अगरेजसे लेकर सीरियाके बिलकुल भिन्न श्रेणीके लोग और यूरोपियन समाजके कलङ्कस्वरूप निपट नीचप्रकृतिके गोरे केवल गोरा चमडा होनेसेही इस सभामे शरीक होगयेहैं। जैसी ऊचे दर्जेकी बुद्धिमानी होनेसे वडेवडे अगरेज सौदागरोंके साथ प्रतिद्वन्द्विता की जा सकतीहै वैसी बुद्धिमानी और कामकरनेकी चतुराई उन गोरे कहलानेवाले रोजगारियोंमें नहींहै।

किन्तु भारतवासी बुद्धिमान्, सहनशील और व्यवसाय वाणिज्यमें अगरेजोके योग्य प्रतिद्वन्द्वीहैं। इसीलिये भारतवासियोंके ऊपर दक्षिण आफ्रिकाके गोरे दूकानदार खड्गहस्त रहतेहैं। इसीलिये वहांकी सरकारभी उनलोगोंके विरुद्धहै। भारतवासी चाहे कैसेही दर्जेके मनुष्य क्यों न हो, चाहे शिक्षा और विद्या बुद्धिमें वे कैसेही चढे वढे क्यों न हों परन्तु वहांपर वे "कुली" कहकर पुकारे जातेहैं। गोरोकी बस्तीमें भारतवासी घुसने नहीं पातेहैं। जो पहलेसे जाकर आफ्रिकामें व्यवसाय वाणिज्य करतेहैं उन्हें नगरके वाहर एक नियत स्थानमें रहना पडता है। उस सीमासे वाहर जानेका उन्हें हुक्म नहीं है। प्रधान सडकोंसे चलनेके समय भारतवासी फुटपाथ परसे नहीं जा सकते। अपने रुपये खर्च करकेभी वहा भारतवासी गाडियोंमें बैठकर नहीं निकल सकते। वहुत दिनोंतक वहां निवास करनेपरभी उन्हें वहाकी भूमिपर स्थायी हक नहीं मिलसकता, उनके रोजगारका मार्गभी

अडचनोंके कांटोसे रूध दिया गयाहै। वहांवालोंने इस विषयकाभी प्रबन्ध कर लिया है कि जिसमे हिन्दुस्थानियोंको कोई दूकान करने अथवा रहनेके लिये घर किरायेपर न देवे, जिसमे कोई भारतवासियोंके साथ व्यापार सम्बन्ध न रखे, किसीभी तरहकी उन्हें कोई सहायता न देसके, कोई उनकी दूकानमे न कुछ खरीदे न बेचे। इन सब बातोंकी देखरेख रखनेका भार एक "विजिलंस एसोसियशन" को सौंपा गयाहै। वहाकी सरकार इन बातोंकी कुछ रोक टोक नही करती है। इस लिये हिन्दुस्थानियोंको दक्षिण आफ्रिका छोडकर अपने देश लौट जाना पडताहै वेही अङ्गरेज भारतवर्ष और वही दक्षिण आफ्रिकाके राजाहै, परन्तु उनकी सुननेवाला कोई नही है।

इस प्रसङ्गपर पाठक इस बातकाभी उदाहरण देखें कि स्थितिके भेदसे व्यवस्थामे कैसा भेद पडताहै। चीनके कुछ मजदूर जीविका प्राप्त करनेके लिये अमेरिकाके सयुक्तराज्यमे जा बसे थे वहाके गोरोंसे उन्हेभी अपमानित होना पडताथा। परन्तु चीनवालोंने जब यह बात जानी तब वहा बडा आन्दोलन आरम्भ हुआ। चीनकी वर्तमान राजमाता "एम्प्रेस डाउयेजर" चीनी समाचार पत्रोंमे अपने देशके मजदूरोंकी दुर्दशाका हाल पढकर बहुत दु:खित हुई। इसके पीछे जब राज्यके प्रधान मन्त्रियोंकी मन्त्रिसभा बैठी तब राजामाताने मजदूर कुलियोंका दुःख निवारण करनेके लिये निम्न लिखित आज्ञा प्रचारित की,–

"चीनके निवासी चाहें स्वदेशमे रहे और चाहे विदेशमे परन्तु वे हम लोगोंकी सन्तानहैं। वे यदि किसी तरहका कष्ट पावेंगे तो वह हमारे लिये असहनीय होगा। हम लोगोंकी बहुतसी मजदूर प्रजा मजदूरीकरके अपनी जीविका चलानेके लिये विदेश गयीहैं, इससे साफ मालूम होताहै कि हमलोग उनके लिये अन्नका प्रबन्ध नही करसकते, उनका अपनी सन्तानके समान पालनपोषण नही करसकते। तिसपरभी वे लोग परदेशमें जाकर दूसरोंके हाथसे अपमानित होतेहै यह कष्ट हम किसी तरह सहन नही करसकते। इसलिये मै आप लोगोंको आज्ञा देतीहू कि जिस सन्धिके कारण विदेशमे वसनेवाले चीनी मजदूर ऐसा कष्ट भोग करतेहैं वह सन्धि आप लोग शीघ्रही दूर करे, और अमेरिकाके सयुक्त राज्यमे हमारे जो एलची रहतेहैं उन्हे शीघ्रही तारके द्वारा खबर दीजाय कि वे चीननिवासियोंपर विदेशियोंके जो अत्याचार होतेहैं उनके दूर करनेका प्रयत्न करे। वे इस बातको स्मरण रखकर काम करे कि हमारी जो प्रजा वहां व्यवसाय वाणिज्यमें लगी हुईहै उसकी भलाईकी इच्छा हमारे हृदयमें सदा विराजमान रहतीहै।"

इस आज्ञाको सुनकर कौन नहीं स्वीकार करेगा कि चीनकी महारानी राजमाताका हृदय दयाकी दुग्धधारासे परिपूर्ण है। इसीसे कहतेहैं कि स्थितिके भेदसे व्यवस्थाभेद हुआ करताहै। स्वतन्त्र राज्यकी प्रजा और परतन्त्र राज्यकी प्रजामें आकाश पातालका भेदहै। हम लोगोंकी दुर्दशाका यही कारणहै कि हमारे राजाको हमारी भलाईकी अपेक्षा गोरी प्रजाकी भलाईका अधिक ख्यालहै। किसानलोग कहा करतेहैं "हल ना चलै नहीं घर ढोर, ताके लिये यातना घोर" सो हम लोगोंकी ठीक ऐसीही दशाहै। राजाके रहने परभी हमारा दुःख दूर नहीं होताहै।

जो देश नही छोडसकते उनकी दुर्गतिका ठिकाना नहीं है। सन् १८७७ ईस्वीके भयानक अकालके समय जो भारतवासी चोरी करनेकी अपेक्षा मरजाना अच्छा समझतेथे

❀ वेही वर्षोंसे भूख भयानक यातना सहते सहते धैर्य छोडचुकेहैं और अब उन्हे चोरी करनेमे भी कुछ सकोच नही होताहै। गत १८९८ ई०मे १७९९७००० मनुष्योको चोरीके अपराधमे सजा हुईथी, परन्तु सन् १९०० ई०मे २८९६५००० मनुष्य चोरीके दण्डसे दण्डित हुए। अन्नकष्टका इससे बढकर शोचनीय नैतिक परिणाम और क्या होसकताहै ? सरकारी रिपोर्टोमे नजर दौडानेसे ओर भी मालूम होताहै कि जिस सालमे अकालके प्रकोपसे पापी पेटकी पीड़ासे पागल होकर लोगोंने राज्यके आईनोका उल्लङ्घन कियाहै, उसी वर्षमे राजकर्मचारी वेतकी सजा बेतहाश बढाकर उन अभागोंकी नैतिक उन्नतिकी आशा करतेहैं। ऐसी कठोरता और ऐसी निर्दयताका काम कभीभी राजधर्मका अनुमोदित नही होसकता।

सन् १८९८ ईस्वीके दुर्भिक्षके समय देशी राज्योमे भूखों मरनेवाली प्रजाके साथ कैसी दया दिखायी गयी थी उसका पता सरकारके मुख्यपत्र बम्बईके "टाइम्स आफ इण्डिया" के निम्न लिखित वाक्यसे लगेगा।

No less than 47,100 people migrated into H. H. the Nizam's territories from the adjoining British districts up to the spring of 1877 only.–Dec 14, 1880.

अर्थात् उस दुर्भिक्षके समय आसपासके अगरेजअधिकृत प्रदेशोंसे कमसे कम ४०४०० मनुष्योंने निजाम राज्यमे जाकर आश्रय लियाथा। देशी राज्योमे किसानोंके ऊपर महाजनोका अधिकारभी बहुत थोडाहै।

The money-lender is not the paramount power in Travancore, in Rajputana, in the Nizam's dominions, in Mysore or elsewhere outside the British provinces.–India for the Indians–And for England. pp 51.

पर्वतोंसे पूर्ण नैपाल राज्य शिक्षा और सभ्यतामे सुसभ्य अगरेजोकी अपेक्षा बहुतही पीछेहै, परन्तु वहाकी प्रजाकी दशाके विषयमे बगालके भूतपूर्व छोटे लाटसरजार्जकेम्बेलने अपनी रिपोर्टमें यों लिखाथा,–

The condition of the Nepaul ryot is, on the whole, better than that of the British ryot.

बृटिश भारतकी प्रजाकी अपेक्षाभी नैपाली प्रजाकी दशा समष्टि रूपमें अनेक गुणा अच्छी है।

दुःखकी बात है कि इस समयके उच्चपदस्थ राजकर्मचारी इस बातको माननेमे राजी नही है। वे कहते हैं कि यह बात बिलकुल सत्य नही है कि अगरेजोंके अधीन हिन्दुस्थानियोंकी धनसम्बन्धी स्थिति घटती और दरिद्रता बढतीहै। भूतपूर्व स्टेटसेक्रेटरी लार्डजार्ज हमिल्टनने गत १९०० ईस्वीकी १६ अगस्तको पार्लियामेण्ट महासभामें सबके सामने कहाथा,–

❀ सन् १८८३ ईस्वीके "नाइनटीन्थ सेञ्चुरी" पत्रमें मि० जे सेमूरके महोदयने लिखाथा,–

An eye-witness on this occasion says,–"They were starving, but not one in a hundred thousand resorted to robbing."

There is a small school in this country as in India who are perpetually asserting that our rule is bleeding India to death Since I have been Secretary of state I have taken great pains to collect and investigate any information or evidence I could obtain, no matter from what quarter it came, which by facts, figures or other reliable information tended to support this allegation. I admit at once that if it could be shown that India has retrogiaded in material prosperity under our rule, we stand self-condemned, and we ought no longer to be entrusted with the control of that country. But no such facts, figures or evidence have I ever been able to obtain. That a section of the public both here and in India believes this allegation is clear from their constant and unwearied repetition of the charge. But this is founded not on figures, or facts or economic data but on plausible syllogistic formula that they are never tired of repeating.

विलायत और भारतमें एक श्रेणीके लोग हैं जो कहतेहैं कि अगरेजोके शासनमे भारतका जो भयानक रूपसे रक्तस्राव होरहाहै उससे भारतवासी मुरदेसे होरहेहैं। जबसे मैं स्टेटसेक्रेटरीके पदपर नियुक्त हुआ तबसेही इस वातकी सचाइ झुठाईका निर्णय करनेके लिये यथासाध्य कष्ट सहकरभी अनेकप्रकारसे इसके प्रमाण सग्रह करनेका प्रयत्न कियाहै। मैं इस वातको साफ साफ स्वीकार करताहू कि यदि यह वात सिद्ध हो जावे कि अगरेजी शासनके अधीन होनेसे भारतवर्षकी अधिक अवनति हुईहै तो हमलोगोके हाथमें भारतवर्षका शासनभार रहना उचित नहींहै। किन्तु अवतक इस विषयके कोईभी तथ्य सग्रहकरनेमे मैं समर्थ नहीं हुआहू। तोभी उस श्रेणीके लोगोंके द्वारा वारम्वार इस वातके छिडनेसे माल्रूम होताहै कि इस वातपर विलायतमे और कुछ लोग भारतमें विश्वास करनेवालेहैं। किन्तु उन लोगोंका यह विश्वास सत्यताके तथ्यसे पूर्ण नहींहै। उन लोगोका सिद्धान्त न्यायशास्त्रके सूखे तर्कके वल प्रतिष्ठितहै।

इससे वढकर हम लोगोके अभाग्यकी वात और क्या हो सकतीहै। राजकर्मचारियोकी ऐसी वचन चातुरीसे विलापयतके दयावान अगरेज भारतवासी प्रजाकी सच्चीअवस्था जानने नहीं पातेहैं। भारतके मुस्तकिल अण्डरसेक्रेटरी सर लुई मैलेटने भारतकी ऐसी सङ्कटपूर्ण दशाको स्वीकार करतेहुए ठीकही कहाहै,—

I have never concealed my opinion as to the extreme gravity of our financial position, and I believe that nothing but the fact that the present system (in India) is almost secure from all independent and intelligent criticism has enabled it so long to survive.

साराश जिन अङ्गरेजोंने अपने देशके किसानोंकी गुलामी और सारे ससारके विके हुए गुलामोंकी गुलामी दूरकर अपार गौरव प्राप्त कियाहै उन्हीं अगरेजोकी दृष्टि इसतरफ विशेष रूपसे आकृष्ट हुए विना इस देशकी दीन हीन प्रजाके छुटकारा पानेकी कोई आशा नहींहै।

———

रेल और नहर।
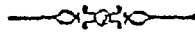
महाभारतके सभापर्वमे देवर्षि नारदने महाराज युधिष्ठिरसे पूछाथा,—

"राज्यके किसान लोग तो सन्तुष्ट चित्तसे समय बिताते हैं न ? किसानोके घरमे बीज ओर अनाजकी कमी तो नही है ? राज्यमे स्थान स्थान पर पानीसे भरे हुए बडे २ तालाब तथा सरोवर आदि खुदवाये गयेहैं ? बरसातकी अपेक्षा न करकेभी खेतीका काम बराबर चलताहै या नही ?"

उस जमानेके हिन्दू राजालोग खेतीका काम बरसातकी अपेक्षा न करके बराबर होते रहनेके लिये राज्यके स्थान स्थानमे पानीसे भरे हुए बडे २ तालाब तथा सरोवर आदि खुदवाते थे। इस लिये दैव योगसे बरसात न होनेपरभी अकालका प्रकोप पूर्ण रूपसे प्रजाको सता नही सकताथा। आजकलके समान लाखो आदमी पापी पेटकी भूख न बुझा सकनेके कारण छटपटा छटपटा कर प्राण देनेके लिये लाचार नही होते थे। किन्तु अगरेजोने किसान प्रजासे अधिक लगान लेकरभी खेतीके कामको "बरसातकी अपेक्षा न करके" करनेका प्रबन्ध नहीं कियाहै। इस देशके लोग जिन बातोंके ईश्वरको अधीन समझते हैं, उन्हें विज्ञानके बलसे अगरेज लोगोंने अपने अधीन कर रखाहै। किन्तु अकालकी बात उठतेही उनके मुँहसे सुना जाताहै कि दैवी शक्तिपर कुछ जोर नही चलता। हिन्दुस्थानियोका विश्वास है कि तालाब तथा सरोवर आदि खुदवाके खेतोंमें जल सीचनेका अच्छा प्रबन्ध करनेसे बरसात न होनेसे जो बुरा फल होताहै वह बहुत कुछ घट जासकताहै। इसीसे उस जमीनके हिन्दू राजा लोग नारदकी नीतिके अनुसार काम करके पानीकी पूर्णताका पूरा प्रबन्ध करनेमें प्रयत्नशील रहते थे। लार्ड वेलसली महोदयकी आज्ञासे सन् १८०७ ई०में दक्षिण भारतवर्षकी खेतीकी दशा जांचकर डाक्टर फ्रांसिस बुकाननने जो रिपोर्ट प्रकाशित कीथी, उसमें देखा जाताहै कि सौ वर्षके पहलेभी दक्षिणके हिंदूराज्योंमे पानीकी पूर्तिका पूरा प्रबन्धथा। उनके ग्रन्थमें उस समयके थोडी जमीनके अधिकारी राजालोगोंके राज्यमें चारकोश लम्बे और डेढ कोश चौडे तालाब तथा बहुतसी छोटी छोटी नहरोंका वर्णन पढकर इस सभ्यतासे प्रकाशित बीशवी सदीके आरम्भमें हम लोगोको अचरज हुए बिना नही रहता।

अगरेज लोग कहतेहैं कि अकालका सङ्कट दूरकरनेके लिये नहर तालाब आदिके खुदवानेमें रुपया खर्चकरना अवश्यही हमारा कर्तव्यहै, परन्तु जिन देशोंमें अनाजकी अधिकताहै वहासे अकालपीडित स्थानोंमे अन्न पहुँचानेके लिये सब जगह रेलवेकी सडकोका फैलाना आवश्यकहै। भारतवासी कहतेहैं कि खेतोंके सीचनेके लिये पानीका पूरा प्रबन्ध करदेनेसे अकाल पडनेकी सम्भावना बहुतकुछ घट जायगी, अगरेज कहतेहैं "यह बात सत्य होनेपरभी दुर्भिक्षका दमन करनेके काममें रेलवेकी बहुत आवश्यकताहै। रेलके द्वारा एक स्थानसे दूसरे स्थानको आनेजानेके लिये और व्यापारका विस्तार करनेकेलिये बहुत सुविधा हो सकतीहै। सभी सभ्य देशोंमें रेलवेका विस्तार करके राज्यके खजानेमें धन इकट्ठा कियागया और प्रजाके सुखस्वच्छन्दताकी वृद्धि

कीगयीहै । इसलिये सरकारने रेलवेका विस्तार निशेपरूपसे बढानेको अपना कर्तव्यकर्म स्थिर करलियाहै । ' इसप्रकार युक्ति और दावपेचकी बातोंसे मूर्ख प्रजाके विचार विज्ञानविद्याविशारद प्रबल राजाकी विचारधारामे बहगये ।

राजकर्मचारियोंके विचारके अनुसार अकालका प्रकोप घटानेके लिये १८४९ ई० से विगत १९०४ ईस्वीतक गरीब हिन्दुस्थानियोंके ३६२८२१५१२५) रुपये अथवा २८२५४७६७७ पौण्ड खर्चकरके २७९०४ मील लम्बी रेलकी सडकें बनायी गयीहैं । इनके सिवाय सन् १९०५ ई० मे १२॥ करोड रुपये खर्चकर ३०५५ मील लम्बी रेलकी सडक बनवानेके लिये औरभी मञ्जूरी होगयीथी। दुःखकी बातहै कि प्रजाके पहाड समान ढेरके ढेर रुपये खर्च करके ५० वर्षमें सरकार एक पैसेकाभी फायदा नही करसकीहै । उलटा सन् १९०० ईस्वीतक इस काममें सरकारी खजानेसे प्रायः साठ करोड रुपये घटीमे देने पडेहैं । और प्राय. १ अरब २ करोड ५० लाख रुपयेका ऋण करना पडाहै । तब इन सडकोंके कारण प्रायः ६३०० गोरोंको ऊंची तनुखाह देकर पालनेका सुभीता अवश्य होसकाहै । यहभी ठीकहै कि विलायती लोहेके रोजगारियोंको अपना माल यहा बेचकर फायदा उठानेका मोका मिलाहै । श्रीमान् दादाभाई नवरोजीने दिखलाया है, हिन्दुस्थानकी रेलवे सडकोंके लिये जो रुपये खर्च होतेहैं उनका सेकडा पीछे ३१॥।) हिस्सा लोहेकी चीजोंको खरीदनेके विलायतके लुहारोंके हाथमें देना पडताहै । इसके सिवाय इस देशमे जो २३ विदेशी रेलवे कम्पनिया हैं, उनके डाइरेक्टर लोगोंके विलायती आफिसोंके खर्चके लिये जो रुपये खर्च होतेहैं उन्हेभी विलायतवालेही पातेहै । रेलवे बनानेके खर्चके लिये जो ऋण लिया जाताहै, वह प्रायः विलायतमेंही लिया जाताहै, जिससे उसका व्याजभी विलायतको जाताहै । हिन्दुस्थानके राजा लोगोंसे बहुत थोडे (लगभग छ. करोड) रुपये कर्जमे लिये गयेहैं । विलायती कम्पनियाभी बहुतसा रुपया रेलवेके काममें लगातीहैं, इसलिये रेलवेसे पूरा फायदा विदेशी लोगही उठातेहैं ।

हिन्दुस्थानमे सब मिलाकर २३ विदेशी रेल कम्पनियां हैं । इन कम्पनियोंकी बनायी हुई रेलकी सडकोंके सिवाय पाच रेलवे सडकें सरकारने बनायीहैं । देशी राजाओंके राज्यमेंभी पाच रेलवे सडकें बनायी गयीहैं । भारतमे रेलवे जाल फैलानेके लिये सरकार यहातक आग्रह कररहीहै कि इन विदेशी कम्पनियोंमेसे कई एकोंको उत्साह देनेके लिये सरकारने स्वीकार (Guarantee) कियाहै कि इस देशकी रेलवेके कामसे यदि तुम्हे घटी होगी तो सरकार उस घटीकी पूर्ति करदेगी । कई एक कम्पनियोंको दूसरे रूपमेंभी सहायता देकर हिन्दुस्थानमें रेलवेका विस्तार बढानेके लिये सरकारने उन्हे उत्साहित कियाहै । जी आई पी., बी. बी. सी आई तथा मदरास रेलवेकी मालिक—कम्पनीके साथ सरकारने जैसा करार कियाहै, सोभी सुनिये ?

In the contract renewed with the three railways.....it was agreed that the companies should receive interest at the guaranteed rate of five per cent, and half the surplus profits, no account being taken of deficits, that remittances to England should be converted at the rate of 1s 10d. the rupee, and that calculations should be half-yearly– Miss Ethel Farady M. A.–"Paper on Indian guaranteed railways"– 1900

विलायती बाजारमे ढाई तीन रुपये सेकडे सूदमें मनमाना रुपया मिलसकताहै, परन्तु हमारी सरकारने उक्त तीनों कम्पनियोंको पांचरुपये सैकडे सूद देनेका वचन देदियाहै। पांच रुपये सैकडेसे अधिक जो लाभ होगा उसमे करारके अनुसार आधा आधा हिस्सा सरकार और कम्पनियोंमें बांट लिया जायगा। किन्तु यदि किसी कारणसे हानि हो तो कम्पनी हानिमे एक कानी कौडीका भी हिस्सा नहीं देगी? मुद्रा बदलनेकी दर चाहे कुछभी क्यो न हो किन्तु कम्पनी सरकारसे २२ पेन्सके हिसाबसे रुपये लेगी। इस समय बदलेकी दरके अनुसार१६ पेन्स (आने) का एक रुपया होताहै, किन्तु उक्त शर्तके अनुसार बिना २२ पेन्सदिये कम्पनीका एक रुपया पूराही नही होगा। इसीलिये सरकारको प्रतिरुपये छः आनेकी घटी सहनी पडतीहै। इसके पश्चात् प्रति छः महीनेके बाद आमदरफ्तका हिसाब देनेमेभी सरकारको बहुत घटी सहनी पडतीहै। यदि पहले छः महीनोमे घटी हो, अर्थात् पांच रुपये सैकडेसे कम लाभ होतो उसे सरकार पूर्ण करदेतीहै, किन्तु पिछले छः महीनोंमे यदि लाभ हो तो सरकार उसका आधा भागही पासकतीहै। अर्थात् पहले छः महीनोमे ४) रुपये सैकडेके हिसाबसे लाभ होनेपर सरकारको एकरुपये सैकडेके हिसाबसे घटी पूरी करनी पडतीहै, किन्तु वर्षके पिछले छः महीनामे ६) रुपये सैकडेके हिसाबसे लाभ होनेपर सरकार पांच रुपयेसे अधिक अर्थात् एकरुपयेके लाभमेंसे केवल ॥) आठआने प्राप्त करसकेगी। यदि सालके अन्तमें हिसाब हुआ करता तो पहले छः महीनोकी एक रुपये सैकडेके हिसाबकी घटी-पिछले छः महीनोमे एक रुपयेका अतिरिक्त लाभ होनेसे पूरी होजाती और सरकारको कुछभी नही देना पड़ता। किन्तु छः महीनोमे हिसाबका चुकता होनेसे सरकारको प्रायः प्रतिवर्ष घटी-ही सहन करनी पडतीहै। साराश यह कि हिन्दुस्थानी प्रजाकी प्रतिनिधिस्वरूप सरकार अपनी खुशीसे इस हानिकारी चुकतेके करारमें बँधकर नित्य भूखो मरनेवाली दरिद्र प्रजाकी गाढी कमाईसे प्राप्त किये हुए सरकारी खजानेके प्रायः १ करोड ३० लाख रुपये प्रतिवर्ष इन तीनो रेलवे कम्पनियोको दिया करतीहै। केवल यही नही अवधरुहेलखण्ड रेलवेके लिये इसी प्रकार हमारे शरीरके खून समान रुपयोंसे २३२३२८१) ओर सदर्न इण्डियन रेलवेके लिये १९४८५९९०) रुपये घटी पूर्ण करनेके लिये देना पडाहै। इस प्रकार अबतक सब मिलाकर ४करोड पौण्ड अथवा६०करोड रुपये रेलवेकी सडकोंके बनानेके लिये हम लोगोंके सरकारी खजाने से नुकसानीमे दिये गयेहैं। इसके सिवाय रेलवेके लिये जो विदेशी धन लगाया जाताहै उसके सूदमें प्रतिवर्ष ९ करोड रुपये हम लोगोंको देने पडतेहै।

गवारोंके रुपयोका सर्वनाश और किसतरह किया जा सकताहै? यदि गोरी प्रजाका रुपया होता तो क्या इसी तरह उसका व्यर्थ व्यय किया जा सकता था? यदि रेलवे विभागके ऊंचे दरजोंमें देशी लोग रखे जांय तो कुछ बचत होसकती है। एक ओर खर्च होनेसे दूसरी ओर भारतवासी कुछ रुपये प्राप्त कर सकते, किन्तु मनमानी तनुखाह देकर ६२६३ गोरे और ५८७८५ यूरोपियन लोगोंकी दरिद्रता दूरकरनेका बोझ निवारण करना सरकारके लिये अस-म्भवहै। ऐसी दशामें रेलवेके काममें घटी न पड़ने परही आश्चर्य मानना चाहिये। यह ठीक है कि इस समय प्रायः ८००६८०६ देशी आदमी रेलवे विभागमें नौकरी करके अपनी

जीविका चलातेहैं, परन्तु साथही इस बातका भी विचार करना चाहिये कि रेलवे वि
कितने गाडियोके रोजगारी, नाव स्टीमर आदि बनानवाले तथा चलनेवाले और
चलनेवाले रोजगारी तथा कारीगरोकी रोजीका सर्वनाश हुआहै । देशका व्यापार वा
किस प्रकार डूब गयाहै ।

हिन्दुस्थान ऐसे गरीब देशके लिये कितने मीलकी रेलवे सडककी जरूरतहै ? अनु
बुद्धिमान् और हिसाब लगानेवालोका कथनहै कि हिन्दुस्थानके लिये छः हजार मीलकी
सडके बस हैं । सोही Moral and Material progress and condition of In
नामक सरकारी रिपोर्टके लेखकने जब देखा कि प्रायः साढे पाच हजार मील रेलवे सड़के है
होगयीहैं तब लिखाथा,–

Railways are now almost completed, so that with the cessation
heavy outlay on construction, the financial position may be expect
to improve.

अर्थात् भारतवर्षमे आवश्यक रेलकी सडकोंके बनानेका काम प्रायः खतम हुआहै, इसलिये अ
रेलवे बनानेमें अधिक रुपये खर्च नही किये जावेगे । आशाहै कि इससे हिन्दुस्थानी राज्यका
स्थितिमे कुछ उन्नति हो सकेगी ।

सन् १८७८ ईस्वीमे प्रसिद्ध इञ्जिनियर सर आर्थर काटन साहबने सरकारको रेलवे बनाने
काम एक दम बन्द करदेनेकी सलाहदी । इसके दो वर्ष पीछे जो दुर्भिक्ष कमीशन बैठा, उस
कमिश्नरोने भी एक वाक्यसे कहा कि अकालको हटानेके लिये अब नहरोंके खुदवानेमेंही स
अधिक ध्यान देना उचितहै । किन्तु सरकारी कर्मचारियोने इन सलाहोंपर कुछभी ध्यान न
दिया । क्योंकि विलायतके लोहा बेचनेवाले व्यापारियोंने न्याय तथा अन्याय
साथ ऐसे उपाय करने आरम्भ किये जिसमें भारतमे रेलवेका विस्तार बढे और उन
व्यापार चटके उनके मेम्बर लोग पार्लियामेण्टमें बारम्बार प्रश्न करके अपने सुभीते
लिये भारतवासियोकी अपार हानि करनेवाली रेलकी सडकोंका जाल फैलानेके लिये प्रब
करने लगे, किन्तु भारत ऐसे दरिद्र देशमे रेलवेका बनाना फायदेमन्द न होनेके कार
सरकारको ग्यारण्टीकी रीति चलानी पडी । अन्तमें विलायती कम्पनिया हिन्दुस्थानी खज
नेसे घटीकी पूर्तिके रुपये पाकर रेलवे बनानेमें तैयार हुईं । इस प्रकार पार्लियामेण्टक
आज्ञा पूरी तो हुई परन्तु भारतकी घटीका एक दरवाजा और खुलगया । जब सरकारने घ
पूरीकरना स्वीकार किया तब रेलवे कपनिया मनमाना व्यर्थ खर्च करनेलगीं । भारतसरकार
भूतपूर्व खजानेके मन्त्री दी राइट आनरेबल एन. मैसी साहबने १८७२ ई० में विलायतक
जाच करनेवाली समितिके सामने साक्षी देनेके समय कहाथा;–

The East India Company cost far more, if not twice as much, as i
ought to have cost, enormous sums were lavished and the contractors
had no motive whatever for economy All the money came from the
English capitalist and so long as he was guarnteed 5 p. c. on the

revenues of India, it was immaterial to him whether the fund that he lent were thrown into the Hooghly or converted into brick and mortar. The result was these large sums were expended and that the East India Railway cost I think (I speak without Book,) about £30,000 a Mile.... It seems to me they are the most extravagant works that were ever undertaken.

औरभी कई ऊचे दरजेके तथा समझदार अगरेजोने रेलवे कपनियोंके व्यर्थ खर्च करनेके विषयमे अपना ऐसाही मत प्रकट कियाथा।

ग्यारण्टीकी रीतिमें यात्रियोंकी सुखस्वच्छन्दता और रोजगारियोंकी सुविधा असुविधाकी बातपर रेलवे कपनियोका अबतक कुछ ध्यान नहीं रहताहै। क्योकि वे जानतेहैं कि रेलवेमे यात्रा करनेवाले और माल भेजनेवाले रोजगारियोंका सन्तोप किये विनाभी हमारी कोई हानि नहीं होतीहै, सरकार हमारी सब घटी पूरी करदेगी। विलायतकी जाच करनेवाली समितिके सामने यह बातभी कईवार कही गयीहै। दुःखकी बातहै कि तौभी हमारे लिये इसका कोई अच्छा देखनेमें न आया। इन कठिनाइयोको दूर करनेके विचारसे हिन्दुस्थानकी सरकारने सरकारी खजानेसे रुपये लगाकर तथा विदेशसे रुपये उधार लाकर खुद रेलवेकी सडकोंके बनानेका प्रयत्न कियाथा, किन्तु गोरोंके पालनेमें अधिक खर्च होनेसे खजानेमें रुपयोंकी कमी होने अकाल पडने और सीमाके झगडे उठनेसे वह प्रयत्न कार्यरूपमें परिणत नहीं होसका। इधर विलायतके लोहेके व्यापारीभी छोडनेवाले जीव नहीं है। उन लोगोके दबावसे सरकारको रेलवेका विस्तार बढानेमें ध्यान देना पडाहै। विलायती कपनियोंमेंभी खजानेकी दशा देखकर माथे चढीहैं। उन्होंने निश्चय कियाहै कि विना ग्यारण्टी पाये रेलवे बनानेका जिम्मा हम नहीं लेंगी। इसीलिये विलायतके लोहेके रोजगारियोंके सुभीतेके लिये रेलवेका विस्तार बढानेमे हमें अपना खूनके समान धन देना पडताहै।

जापानमे रेलवेका विस्तार अनेक सभ्यदेशोंकी अपेक्षा अधिकहै। वहाकी मनुष्यसख्याके हिसाबसे प्रति १२७०० मनुष्योंके पीछे एकमील रेलकी सडकहै, किन्तु हम लोगोके समान जिनकी सालाना आमदनी १८) उन्नीसरुपयेसे अधिक नहीहै, और जो प्रायः नित्यही आधेपेट खाकर समय बितातेहैं, उन लोगोंके घूमने फिरनेके लिये प्रति ९१७१ मनुष्योंके हिसाबसे एक मील रेलवे सडकका बनाना कभी अच्छा नहीं कहा जासकता। हमारे ऐसे गरीबोके लिये ऐसी शौकीनी शोभा नही देतीहै। तौभी १८७३ईस्वीकी सरकारी रिपोर्टमें "आवश्यक रेलवे मार्गके बनानेका काम खतम हुआहै" ऐसी राय प्रकाशित होनेपरभी विगत ३० वर्षमें कमसेकम चौबीस हजार मील अथवा चौगुनी नयी रेलकी सडकें तैयार की गयीहैं।

हिन्दुस्थानकी रेलोंमें गत १९०४ ईस्वीमे सब २२करोड ७१ लाख टिकट बिकेथे। इसी वर्ष इङ्गलेण्ड ऐसे छोटे देशमें १ अरब १८ करोड टिकट खपेथे। यह बात इन दोनो अङ्कोका मिलान करनेसेही जानी जासकेगी कि भारतवर्षमें बहुतसी घटी सहकरभी रेलकी सडके बनानेसे कितने लोगोंकी यात्राकी सुविधा हुईहै, भारतवासी रेलवेकी आवश्यकता कहातक समझतेहैं।

इसके बाद व्यापारकी वढतीकी बात विचारने योग्यहै। किन्तु इसमेंभी हमलोगोको कुछ
नहीं पहुँचा । रेलकी सडकोंके वढनेमे दूरदूरके देहातोंमभी विलायती चीजोंकी
वढ गयीहै । गँवार देहानी विलायतकी शौकीनी चीजोकी थोडे समयतक
चमकदमकमे मोहित होकर अपना पेट भरनेका दुर्लभ अनाज
उन चीजोंको खरीदते हैं । रेलवेकी सहायतासे वही विका हुआ अनाज विन
टोक धडाधड समुद्रकिनारेके वन्दरोंसे सातसमुद्रपार विदेशमे जा पहुँचताहै । रेलोंके
अकालके समयमेभी लाखों करोडोंका अनाज विदेशोको जाताहै। नीचे लिखे हिसाबपर
से उसका अनुभव होसकेगा।

सन् ईस्वी	चावल	गेहू	दूसरे
१८९६।९७	२७८२७२६९)	११९०६२६)	२६९६२१
१८९७।९८	२६३५९९८८)	२३९२६०७)	२२३२६९
१८९८।९९	३७३९७४०४)	१९५२४८६)	४५१३२९

दूसरे देशोंमे अकालकी सभावना समझतेही राजकर्मचारी लोग अनाजकी रफ्तनी वन्द
हैं। विना रोकटोकके व्यापारकी दुहाई देकर अङ्गरेजलोग सोभी नहीं करना चाहते
सिवाय रेलोंके प्रताप से देहातके गवई गांवोमेंभी विलायतकी शौकीनी चीजोंका प्रवेश
लोगोका सर्वनाश होरहाहै। देशी शिल्पका आदर लोगोंमें हदसे अधिक घट गयाहै।
कारीगरीकी चीजोंकी आमदनीकी वात और क्या कहें, विलायती दवाइयोकी वेहद खपत
देखकरही दग रहजाना पडताहै। सन् १८८५ ई०मे ४३५७१४०) रुपयेकी विलायती
इया हिन्दुस्थानमें आयीथीं किन्तु सन् १९०२।०३ ई०में ६४७८७४५) रुपयेकी
यहा विदेशसे आई तिसपरभी हमारी सरकारको अभी रेलवेकी सड़कोंके वनाये
कल नहीं पडती।

कविने कहाहै "पुष्पकसम आन्यो यहा, रेलयान अगरेज"।

उस जमानेमे राक्षसराज रावण आकाश मार्गमे चलनेवाले रथमे वैठाकर तमाशेव
लक्ष्मीस्वरूपिणी जगदम्बा सीताको हरकर समुद्रपार अपनी राजधानी लकामें लेग
तीनों लोकोंकी सुन्दरता छीनकर उसने लकाकी शोभा वढायी थी। इस समय अगरेजोने
विमानके समान भाफ की रेलगाडियोंके द्वारा हिन्दुस्थानका सम्पूर्ण अनाज अपने
लेजानेका प्रवन्ध कियाहै। देशी कारीगरीका नाश करते हुए विदेशी चीजोंसे भारतवर्ष
रहेहै। इस प्रकार सोनेकी लकाके समान इगलैंडका धन दिनों दिन वढ रहाहै और
भारतवर्ष दिनोदिन अन्नके लियेभी तरसताहुआ कगाल वनरहाहै। नहर तालाव आदि खु
देशको धनधान्यपूर्ण करने और उच्चशिक्षाका प्रचार करके देशवासियोंके ज्ञान और स
वढानेकी ओर अंग्रेजोका वैसा ध्यान नहींहै। किन्तु भारतवर्षमे रेलकी सडकोंको वढाने
उनका जवरदस्त आग्रह देखाजाताहै। "न्यू इगलेण्ड मैगजीन" पत्रकी सितवर सन्
की संख्यामें अमेरिकन पादरी रेवरेण्ड जे टी स डरलेण्ड महोदयने हिन्दुस्थानी अ
कारणोंका उल्लेख करतेहुए यही वात लिखीथी

Whatever lack of money there may be for education, or for sanitary improvements, or for irrigation, or for other things which the people of india so earnestly desire and pray for, the government always seems to have plenty for railways. Why? Because the railways of India help the English people to wealth……… The railways have broken up many of the old industries of India and thus have brought hardships and suffering to millions of people, but they enrich the ruling nation, and they give her a firmer military grip upon her valuable dependency and so money can always be found for them whatever else suffers.

इसमे संदेह नहीं कि रेलवेके विस्तारके साथही देशका व्यापारभी बढाहै, परन्तु उससे देशवासियोंके बदले विदेशी व्यापारियोंको धन बढाहै। इस बातको औरभी साफ साफ समझनेके लिये रेलवेका विस्तार और व्यापारकी बढतीके हिसाबपर नजर दौडाना जरूरीहै। पहले देखिये कि शैतानकी आंखोंके समान रेलवेका विस्तार कैसा वेप्रमाण बढाहै,–

सन् १८७३ ईस्वीमें रेलवेकी सडकें ५६९७ मील थी, सन् १८८० ईस्वीमे ९१६७ मील, सन् १८८५ में १२३८५ मील, सन १८९० मे १६९८४ मील, सन् १८९५ मे १९७१८ मील, सन् १८९९ मे २३७८० मील और सन् १९०४ ईस्वीमे वेही बढ़कर २७९०४ मीलके विस्तारमे होगयीं।

अब आमदनी रफ्तनीका हिसाबभी नीचे देखिये।

सन् ईस्वी.	आमदनी.	रफ्तनी.
१८५५	१७९०१६९८०) रुपये	१७२३१६४८०) रुपये
१८६०	२७३७५३१२०)"	२८७८१५२४०)"
१८६५	३२८७६४९००)"	३८४४२९५००)"
१८७०	२७५३४०६७०)"	३८५६११९७०)"
१८७५	३२१४७९०४०)"	४२०८९७५१०)"
१८८०	४१२०९१६२०)"	५३६०६७२१०)"
१८८५	५००८६५३४०)"	६०१८५०९९०)"
१८९०	५६११३०६२२०) रुपये	७२४४४७३२०) रुपये
१८९५	८८५५८३३३५) "	११३९२९८६३०) "
१९०२	११११८४४००७) "	१५६०६५५७०७) "
१९०३	१५११३८३९२४०) '	२१६४४३२४१०) "
१९०४	१२९७०५८१८२) "	१६५४७७१६००) "
१९०५	१२३९६६४३३८) "	१६८१९१६५७२) "

वर्तमान व्यापार विस्तारसे हानि ।
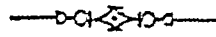
राजकर्मचारी इस हिसाबके विषयमें कहा करतेहैं, "रेलवेके कारण देशका व्यापार इसप्रकार दिनोदिन बढता जाताहै जिससे देशकी धन सम्पत्तिभी बढतीहै ।" किन्तु हम देखतेहैं, इस व्यापारकी बढतीसे हम लोगोका धन बढनेके बदले धनका नाश होरहाहै । यदि इसप्रकार रेलवेका अन्धाधुन्ध विस्तार नहीं बढता तो हमारे देशके धननाश होनेका सोता इसप्रकार जोर शोरके साथ बहता या नहीं इसमे सन्देह है ।

इसबातको विस्तारपूर्वक समझानेकी जरूरत नहींहै कि, विदेशी मालकी आमदनी बढानेसे हमारे देशके कारीगरोकी रोटी छिनती है । अब यह कहाजा सकता है कि रफ्तनी चीजोंकी बिक्रीका रुपया यहीं रहताहै । सो हमारे देशकी जलसे उत्पन्न हुई, खानिसे उत्पन्न हुई और खेतोंसे उत्पन्नहुई चीजोंको विदेश भेजनेसे प्रतिवर्ष डेढ अरब रुपये इस देशको मिलतेहैं । तौभी हमलोगोका धनकष्ट, अन्नकष्ट तथादुर्भिक्ष दूर क्यो नहीं होता ? यदि इसके कारणोंकी जाच की जाय तो मालूम होगा कि रफ्तनी चीजोंकी बिक्रीसे मिले हुए रुपयोंका बहुत थोडा हिस्सा यथार्थमे हम लोगोको मिलता है । रफ्तनीके रोजगारमे यदि भारतवासियोका मूलधन लगता, यदि भारतवर्षके कारीगरोकी कारीगरीके बने हुए पदार्थ इस प्रकार अधिकताके साथ विदेशोंको भेजेजाते, तो सचमुच हमलोग धनी हो सकते । किन्तु यथार्थमें ऐसा होता नहीहै । पहले तो देशके दसकरोड मनुष्योंके नित्य भूखों मरते रहने परभी विदेशी लोग वे रोक टोकके व्यापारकी कृपासे इस देशके लोगोंके मुँहकी रोटी छीन-कर लेजातेहैं । देशमें दिनोंदिन अनाजका मिलना कठिन होता जारहाहै । खेतीसे उत्पन्न हुई चीजोमें काफी और चायकी रफ्तनी दिनो दिन बढरहीहै किन्तु इनकी खेती बहुत करके यूरोपियन लोगोंके हाथमे होनेसे इनके व्यापारका फायदा उन्ही लोगोको मिलताहै । पानीसे उत्पन्नहुई चीजो शख मोती आदि-मेंभी उन्हीं लोगोंका मूलधन लगताहै सो इसमेंभी देशी कोरे ही रहते हैं । हां थोडी बहुत मजदूरीकी पूजी अवश्यही देशियोंको मिलतीहै । यही देशियोंके हाथ लगताहै और लाभरूपी मक्खन विदेशी मार लेजातेहैं । सोना, हीरा- लोहा, कोयला अभ्रक आदिकी खानिजसे उत्पन्न हुई और शख, सीप, मोती आदि जलसे प्राप्त कीहुई वस्तुओकी रफ्तनी विदेशोंमें खूब होती है । रत्नगर्भा भारत भूमिके गर्भमे जो रत्नहैं उन्हें विदेशी लोग निधडक खोदे लिये जाते हैं और हमारी भारत भूमिको खोखली बनाये डालते हैं । इनके लिये जो कपनियाहैं वे प्रायः विदेशी हैं इस लिये दोनों ओरसे उन्हींको फायदाहै । इससे हमारे देशकी भविष्य दशा कैसी भयानक होती जारहीहै, उसका विचार करतेही नाडियोंका खून सूखजाताहै यदि खानिज और जलज वस्तुओंके व्यापारमे देशी लोगोका मूलधन लगाया जासकता तो देशकी व्यापारवृद्धि होनेसे अवश्यही देश वासियोकी धनवृद्धि होसकती ।

ससारकी जो जातियां धनसे बढकर बडी होतीहैं वे इसीरीतिसे अपना धन बढातीहैं । इङ्ग-लेण्डकी खानियोंसे निकले हुए पदार्थ और कल कारखानोंकी चीजें देशविदेशमे फैलाकर धन

बटोरा जाताहै और वह धन फिर इङ्गलेण्डको लायाजाताहै । इससे यह नही होने पाता कि उनके देशकी वस्तुओके व्यापारसे दूसरे देशवाले लाभ उठावे और वे केवल मजदूरी पासके । यही कारणहै कि रफ्तनीके व्यापारसे इङ्गलेण्डकी धन सम्पत्ति बढतीहै । अमेरिकाकाभी यही हालहै । अमेरिका अपने देशका गुप्त धन भण्डार अपनेही हाथो खोलताहै । अपनी खेती और खानिसे उत्पन्न होनेवाली चीजोंको अपने धनसे अपनेही देशके मजदूरो द्वारा उत्पन्न करताहै । अतएव अमेरिकाकी चीजेभी देशविदेशमें फैलकर सर्वत्रका धन अपने देशमें खीच लातीहैं । हरएक देशकी धनवृद्धि इसीतरह होतीहै । यदि हमारे यहां भी ऐसाही होता तो सपूर्ण नये नये पदार्थोंकी उत्पत्ति और नये नये व्यापारोंकी सृष्टिसे हम लोगोका जातीय धन भण्डार क्रमशः पूर्ण होताहुआ बढता जाता ।

किन्तु इन व्यापारोके द्वारा भारतके धनका बढना तो दूर रहा उलटा उसके कर्जका बोझा असहनीय रूपसे बढता जारहाहै । यह ठीकहै कि दरिद्रताके कारण हमारे पास पूजी नही है । किन्तु यदि हमारा राजा मुसलमानोके समान इस देशमें रहकर राज्य करता अथवा अगरेज विदेशमे रहने परभी यदि व्यापारी बनिये न होते, यदि भारतका शासन करनेमे हिन्दुस्थानियोंकी भलाई और सुविधा करनाही एक मात्र उनका प्रधान उद्देश्य होता तो विदेशसे पूजी कर्जमें लाकरभी दूसरे रूपसे देशका धन बढाना सम्भवहोता । इगलेण्डकी जमानतपर हिन्दुस्थानकी सरकार पृथ्वीके किसीस्थानसे व्याजमें रुपये उधार लासकतीथी । जापान ऐसाही करताहै, दूसरी अनेक जातियोभी ऐसाही करतीहैं।हमभी यदि इसीप्रकार विदेशसे रुपये उधार लाकर अपने जातीय धन बढानेका मार्ग खोल सकते तो रफ्तनीके व्यापारसे हम लोगोंके देशका भी धन बढ सकता ।

हिन्दुस्थानके व्यापारमे आमदनी और रफ्तनीका मेल नहीहै । कई वर्षोंसे आमदनीकी अपेक्षा देशसे रफ्तनी अधिक होती है । गत पाचवर्षोका आमदनी और रफ्तनीका हिसाब देखनेसे जाना जासकताहै कि पांच वर्षोमे हम लोगोंने सब मिलाकर जितने मूल्यकी वस्तुए विदेशसे मँगायीहैं उससे कमसे कम सवा अरब रुपयोंकी चीजें विदेशको भेजदीहैं । यदि भारतवर्षका व्यापार ऊपर लिखी हुई स्वाभाविक रीतिकी नीवपर स्थित होता तो इन पांच वर्षोंमें हम लोगोका सवाअरब रुपयेका ऋण चुकाया जासकता अथवा इतनेही रुपये दूसरे देशवालोंको उधार देकर हम लोग हरसाल उनका व्याज प्राप्तकरते । किन्तु हमारे यहा इन दो बातोमेंसे एकभी नही होरहीहै। न तो हम लोगअपना ऋण पटा सकतेहैं और न ससारकी जातियोंके सामने उत्तम कहलाकर हमलोग प्रतिष्ठाही प्राप्त करसकतेहैं । किन्तु अमेरिकामें रफ्तनीकी बढतीसे ऐसाही हुआहै । एक समय अमेरिका यूरोपका ऋणीथा । उस ऋणको पटानेके लिये अमेरिका दरसाल अधिक अधिक चीजें विदेशको भेजताथा इस समय उसका ऋण प्रायः पटगया है । अब वह दूसरोंको रुपये उधारमें देने लगाहै ।

हम लोगोंका इतना अधिक माल क्या होजाताहै ? सन् १८३५ ईस्वीसे सन् १९०२ ईस्वी तक ६७ वर्षोंमे कमसे कम सात अरब रुपयेका अधिक माल भारतसे दूसरे देशोंको गयाहै, परन्तु उसके बदलेमें भारतको एक कौडीभी नहीं मिलीहै ? अधिक रफ्तनीसे मिला हुआ सभी रुपया होमचार्ज और सिविलियन लोगोंको तनुखाह देनेमें खर्च होजाताहै । अङ्गरेज कृपाकरके

हमारे देशका शासन करतेहैं, इसीलिये हम लोगोंको उनकी सलामी स्वरूप २५ करोड रुपये प्रतिवर्ष उन्हें देना पडताहै । इसीप्रकार बडे बडे कर्मचारियोंकी तनुख्वाहके लियेभी इस देशके राजानेसे हरसाल तीसहजार रुपये दियेजातेहैं । मुगलशासनके समयमें राजाकी सलामी और राजकर्मचारियोंके तनुख्वाहके रुपये इसीदेशमें रहते और इसीदेशमें खर्च होतेथे । किन्तु इस समय सभी रुपये विलायत चलेजातेहैं । ये ४५ करोड रुपये इसदेशकी प्रजाके घरका अनाज बेचकर सरकारी खजानेमें हरसाल जमा होताहै । प्रजाका बिका हुआ अनाज रेलीब्रादर तथा दूसरे विलायती व्यापारी मोललेकर रेलवेके द्वारा थोडेही परिश्रमसे विदेशको भेजतेहैं । इस अनाजकी अधिक रफ्तनीके कारणही हमारी रफ्तनी चीजोंका टोटल आमदनीकी चीजोंकी अपेक्षा बढजातीहै किन्तु इस अधिक रफ्तनीसे हम लोग जो धन पातेहैं,वह हमलोगोंके हाथमें नहीं रहने-पाता, सब विलायत चला जाताहै । इस प्रकार हरसाल गोरोंका पालन करनेके लिये हमलोगोंको जितनेही अधिक रुपये देनेको लाचार होना पडताहै उतनेही रुपयोंका अधिक अनाज हमें बेचना पड़ताहै । इसीसे रफ्तनीकी चीजोंका हिसाब बढ जाया करताहै । इस रफ्तनीकी बढ़ती-सेही हम लोगोंका धन नाश होरहाहै और हम मुठी मुठी अन्नके लिये कङ्गाल होरहेहैं । नये नये माल तैयार करनेपरभी भारतकी दरिद्रता घटती नहींहै । जो धनीहैं, आजतक पृथ्वीमें व्यापार वाणिज्य बढाकर खासकर वेही खूब धन पैदा करते आरहेहैं । जो लोग मजदूरी करके इसप्रकार व्यापार बढ़ाना चाहतेहैं वे कभी धन पैदाकरनेमें समर्थ नहीं होसकते । बल्कि जो लोग मूलधन लगानेवाले मालिकका धन बढानेका प्रयत्न करतेहैं उनमेंसे बहुतेरे अपनी यथार्थ मजदूरीभी पूरी पूरी नही पातेहैं ।

हम लोगोंके रोजगारमें अङ्गरेज लोग मालिकहैं सो फायदाभी पूरा पूरा उन्हींको होताहै । देशमें रेलवेका जाल फैलानेके साथही हिन्दुस्थानी रोजगारका विस्तार जितनाही अधिक होताहै उतनाही अगरेजोंका धन बढताहै,और हम क्रमशः धनहीन होते जातेहैं । रेलवेकी सडकें इस देशका धन हरनेके लिये एक प्रधान उपायसी होरहीहै ।

नहरसे सुभीता ।

इन्हीं कारणोंसे भारतवासी देशमें रेलवेका विस्तार बढानेकी अपेक्षा नहरोंका विस्तार बढाना अन्तःकरणसे चाहतेहैं । किन्तु अगरेज लोग इस प्रार्थनापर ध्यान देना नहीं चाहते । रेलवेकी सड़कोंका जाल फैलानेके लिये अगरेजोंने प्रजाका कमसे कम साढे तीन अरब रुपया अबतक व्यर्थमे फूंक दियाहै, परन्तु खेती करके जीनेवाली प्रजाकी भलाईके लिये प्रजाके दिये हुए रुपयोंसेही उन्होने अबतक नहरोंके खुदानेके काममे पूरेपूरे ३८ करोड रुपयेभी नहीं खर्च कियेहैं । जलपूर्तिविभागमें थोडा रुपया लगानेपरभी सरकारकी अच्छी आमदनी बढ़ीहै गतवर्षके हिसाबसे मालूम होताहै कि इस विभागसे खर्च बादकरके सैकडा पीछे सात रुपये सरकारको फायदा हुआहै । इसके सिवाय किसान प्रजाका जो उपकार हुआहै, ऊंची

तनुखाह पानेवाले गोरोंका जो पेट भराहै सो अलगही ! ईष्टइण्डियाकम्पनीके समयमे जब इस देशमे पहले पहल पब्लिक वर्क्स डिपार्टमेण्ट बनानेका प्रस्ताव कियागया, तब बुद्धिमान अनुभवी लोगोंने कहाथा कि भारतवर्षमे रेलवे और नहरोंके काममे बराबर खर्चहोगा किन्तु नहरोंमे प्रतिमील प्रतिवर्ष १९००) रुपयेकी आमदनी होगी परन्तु रेलवेसे १७५०)रुपयेसे अधिककी आमदनी नही होसकेगी दु:खकी बातहै कि इतना होनेपरभी इस फायदेके काममे सरकारी कर्मचारियोंका अनुराग न देखागया। प्रजाको टोटेमे डालनेको लाचारकरके सरकारने रेलवेका विस्तार फैलानेमे ही अधिक हठ दिखलाया ! उसका वह हठ अबतक दूर नहि हुआहै।

अगरेजी भारतवर्षमें जितनी भूमिपर खेती होतीहै उसका परिमाण प्राय: ७३ करोड ७५ बीघा और खेतीकरने योग्य पडतीका परिमाण ३१ करोड २ लाख बीघाहै । खेती होनेवाली भूमिमेसे केवल ५ करोड ५५ लाख बीघेकी जमीन सरकारी जलपूर्ति विभागके द्वारा सीची जासकतीहै। इसके सिवाय बिना सरकारीनाले, नहर, कुए और तालाबोंके द्वारा७करोड३लाखबीघे भूमि सींचीजाती है। किन्तु सन् १९०४ ईस्वीमे अगरेजी भारतवर्षमे सब मिलाकर १० करोड २८ लाख बीघेसे अधिक भूमिकी सिचाई नही होसकीथी सन् १९०५ ईस्वीमे सयुक्त प्रान्तकी ४५४८१९ एकडभूमि सींची गयीथी इसके पहले वर्ष सन् १९०४ ईस्वीमे १४३७६७७एकड भूमिकी सिचाई हुईथी। देशी राज्योंमें २ करोड ६७ लाख बीघे भूमिमें कृत्रिम उपायोंसे खेतोंकी सिचाईकी जातीहै । जो हो, इतना निश्चयहै कि अगरेजी भारतकी कमसेकम साठकरोड बीघे भूमिकी सिचाई की सुविधा होनेकी अभी बहुत जरूरतहै। इसलिये जहा नहर बनसकतीहै वहा नहर और जहा नहरकी सुविधा नहीहै वहा तालाब और कुएँ खुदवानेमे यदि सरकार रेलवे विभागकी तरह मनमाना खर्च करती तो इसदेशके किसान पश्चिमी किसानोंके समान बरसातकी अपेक्षा न करकेभी खूब अनाज उत्पन्न करनेमें समर्थ होते और देशमें अकालका अधिक जोर नही होनेपाता। सन् १८८० ईस्वीमे इसदेशके अकालके कारणोंकी जाच करनेके लिये जो कमीशन बैठाथा, उसकी रिपोर्टमेंभी यह बात स्वीकार की गयीहै। मैसूर राज्य नहरोंके खुदवानेमें अधिक ध्यान देताहै, इसीलिये उस राज्यमे अकालका वैसा प्रकोप नहीहै। यह बातभी भूलजाने योग्य नहीहै कि जिनदेशोंमें नहर आदि सिचाईके साधनोंकी सख्या अधिक थी उनदेशोंमे पिछलोंमे लोगोंका कष्ट दूसरे प्रदेशोंकी अपेक्षा बहुत कम था। दु:खकी बात है कि अकाल कमीशनकी रिपोर्ट पढकरभी सरकार सिचाईके साधनोंके बढानेमें प्रयत्नशील नहीहुई। सन् १८८२ ईस्वीसे सन् १८९८ ईस्वीतक रेलवेकी सडकोंके बनवाने और सिचाईके साधनोंके तैयार करनेमे जो धनखर्च हुआहै उसपर नजर दौडानेसे दांतोंतले अगुली दबाकर रहजाना पडताहै। सरकारने इन १५ सोलह वर्षोंमे सिचाईके साधनोंके लिये जो रुपये खर्च कियेहैं, रेलवेकी सडकोंके बनानेमें उसकी अपेक्षा सातगुण अधिक रुपया लगायेहैं! पृथ्वीके किसीभी कृषिप्रधान देशमें जलपूर्ति विभागमें राजाकी इसप्रकार कजूसी देखी नहींजाती!

भारतके सिचाईके साधनोंकी जाचके लिये जो कमीशन बैठाथा, उसकी रिपोर्टमें प्रकाशित हुआ है कि भारतवर्षमे औसतदर्जे सालमे ३७॥ इच वृष्टि होतीहै समझदार लोगोंका कथनहै कि पृथ्वीके किसीभी देशमें औसतदर्जे २० इञ्च वृष्टि होनेसे

का काम अच्छी तरह चल सकता है । हिन्दुस्थानमें अकालके सालमेंभी औसतदर्जे २० इञ्चसे कम वृष्टि नहीं होतीहै बल्कि भयानक अकालके सालमेंभी इससे बहुत अधिक बरसात हुआ करती है । उदाहरणके लिये कहा जासकता है कि सन् १८७७ ईस्वीमें मदरासी अकाल के समयमें ६६ इञ्च पानी बरसाथा । सन् १८६५।६६ ई०में जब उडीसामें अकाल पड़ाथा। तब वृष्टिका परिमाण ६० इञ्चसे कम नहीं हुआथा । सन् १८७६ ई०में जब बम्बई प्रान्तमें अकाल पडाथा तब ५० इञ्च पानी बरसाथा । सन् १८९६।९७ ई०मे मध्यप्रदेशमें बडाही भयानक अकाल पडाथा, तब इन दोनों वर्षोंमें क्रमसे ५२ तथा ४२ इञ्च वृष्टि हुईथी । सन् १९०० ई०के अकालके समय उन प्रदेशोंमेंभी भरपूर वृष्टि हुई थी जहां अकालका प्रकोप था । तोभी अकालकी करालतामें किसी प्रकारकी कमी नहीं हुई थी । ऐसी दशामें अकाल होनेका दोष अनावृष्टिपर नहीं थोपा जा सकता । सच पूछा जाय तो बरसे हुए पानीका ठीक ठीक सग्रह न होनेके कारणही अकाल पडतेहैं । कुए, तालाब, नहर, सरोवर आदिके द्वारा बरसे हुए पानीका सचय कर रखनेसे कुसमय वृष्टिसे खेतीके कामकी विशेष हानि नहीं होसकेगी । इसी लिये सभी सभ्य देशोंमें कृत्रिम उपायोंसे जल सग्रह करनेके लिये ढेरके ढेर रुपये खर्च किये जातेहैं ।

भारतके समान कृषि प्रधान देशमें कृत्रिम उपायोंसे जलकी सिंचाईका प्रबन्ध होना बहुत जरूरी है । इसी लिये हिन्दू तथा मुसल्मान राजाओंके समयमें देशके अधिकांश भागोंमे सिंचाई के साधनोंका यथोचित प्रबन्ध रहता था । उस समय सम्पूर्ण भारतवर्षमें कितने कुए तालाब आदि थे, इसके जाननेका तो कोई साधन नहीहै, तथापि मदरासमें अबभी ४० हजार पुराने कुए देखे जाते हैं । धारवाड जिलेमें तीन हजार कुए हैं । बम्बईके कुओंकी सख्या सब मिलाकर २ लाख ५४ हजारहै । सन् ई० की आठवी सदीमें चिंगलपट जिलेमें जो कुए खोदे गयेथे, उनमेसे दो अबतक बने हुएहैं । कावेरी नदीकी आनिकट सन् ईस्वीकी दूसरी सदीकी कीर्तिहै । इस आनिकटकी लम्बाई एक हजार फुट, चौडाई ४० से ६० फुटतक और गहराई १५ से १८ फुट तकहै । पञ्जाब और सिन्धुप्रदेशमें मुसल्मान तथा सिख राजाओंकी शासनकालकी बडी बडी नहरे अबतक मौजूद हैं । रावीनदीका पानी लाहौर लेजानेके लिये मुसल्मान बादशाहोंने जो नहर खुदवायीथी उसकी लम्बाई १३० मीलसे कम नहीहै । मुहम्मद तुगलकके समयमें ६५० मील लम्बी यमुनाकी प्रसिद्ध नहर खोदी गयीथी । कहनेका मतलब यहीहै कि इस देशके लिये इरिगेशन अर्थात् सिंचाईके साधनोंकी व्यवस्था नयी बात नहींहै । खेतीके कामको वर्षाके भरोसे न रखकरभी चलानेका प्रबन्ध सदासे इसदेशके राजा प्रजाकी ओरसे होतारहाहै ।

अगरेजोंके शासनमेंभी इरिगेशन अर्थात् पानीकी सिंचाईकी व्यवस्था हुईहै । अगरेजोंने हिन्दुस्थानकी पुरानी रीतिकी उन्नतिकाही कुछ प्रयत्न कियाहै । दक्षिण भारतवर्षकी कई पुरानी नहरोंकी सरआर्थरकाटन और उत्तरभारतवर्षकी कई प्राचीन नहरोकी सर. पी. केटले महोदयके प्रयत्नसे मरम्मत की गयीहै । कई नयी नहरेभी खुदवायी गयीहैं । सन् १८३६ ई० में ईष्ट इण्डियाकम्पनीने १५ लाख रुपये लगाकर तञ्जौरमे एक नहर बनवायी उससे सरकारको ५८॥

लाख रुपयेका फायदा हुआ। उत्तरभारतवर्षमे गंगाकी नहर खुदवाकरभी कंपनीने बहुतसा रुपया कमाया। उन नहरोंसे उत्तरहिन्दुस्थानकी प्रायः ५१ लाख बीघे जमीन सींचीजातीहै।

अगरेजी हिन्दुस्थानमें अगरेजोंकी खुदायी हुई सब नहरोका परिमाण ४२ हजारमील और उनमे एकत्रित जलका परिमाण लगभग ५५ अरब घनफुट होगा। इस सख्याको देखकर एक बार मनमें सहसा आश्चर्यका भाव उदय होसकताहै, परन्तु हिन्दुस्थानके विस्तारको देखतेहुए अगरेजोकी खुदवायी हुई नहरोंका विस्तार हम किसीभी तरह यथेष्ट नहीं कहसकते। पहले जमानेमे हिन्दुस्थान अनेक छोटे छोटे राज्योंमें बँटा हुआथा। उन छोटे छोटे राज्योके अधीश्वर राजाओने अपने अपने राज्यमे जो छोटे छोटे सिचाईके साधनोंके जलाशय बनवायेथे उनको देखतेहुए सुविशाल अगरेजी हिन्दुस्थानके सिचाईके साधनोंको यथेष्ट कैसे कहाजासकताहै? ये सिचाईके साधन अंग्रेजोकी विशेष कीर्ति फैलानेके योग्य नहीहैं।

किसानोंके खेतोकी सिचाईका सुभीता होनेसे केवल उन्हींका फायदा नहीं होता, केवल धन-धान्यसेही देश पूरा नहीं होता, सरकारकोभी अकालके समय लगान माफकरने और भूखोंको भोजन देनेका प्रबन्ध करनेपरभी खजाना खाली रहनेका भयानक भय देखना नहीं पडता। विलायती व्यापारके प्रचारकी बढतीका विचार करनेपरभी मालूम होताहै कि किसानोका धन बढनेसे विलायती व्यापारियोंको थोडा लाभ नहीहै। विगत दसवर्षोंकी हिन्दुस्थानी आमदनी रफ्तनीका हिसाब देखनेसे जानाजाताहै कि औसतसे प्रत्येक हिन्दुस्थानी पीछे प्रतिवर्ष ३ शिलिंग अर्थात् सवादो रुपयेका माल इगलेण्डने बेचाहै। इसमेंसे बडे आदमी और शहरोंमें रहनेवाले लोगोंकी सख्या निकालनेपर मालूम होगा कि किसानी और कारीगरीका पेशाकरके जीनेवाले प्रायः १७ करोड मनुष्य विलायती चीजोके लेनेमें प्रतिवर्ष दो पैसेसे अधिक खर्च नहीं करसकतेहैं। किसानलोगोंकी दरिद्रताका इससे बढकर भयानक उदाहरण और क्या होसकताहै? हिन्दुस्थानी किसानप्रजाकी दशा यदि औरभी भरी पूरी हो, औसतसे प्रतिमनुष्य सालभरमे दो आने मूल्यकी विलायती चीजें खरीदनेकी शक्ति रखे तो क्या विलायतके व्यापारियोंकी आमदनी हिन्दुस्थानी व्यापारके जरिये चौगुनी न बढ जावे? कनाडाके निवासी ऐसे धनवान हैं कि वे प्रति मनुष्य पीछे सालमें विलायतकी पाच पौंड अर्थात् ७५) रुपये कीमतकी चीजें खरीद सकते हैं? हिन्दुस्थानी यदि कनाडावालोंकी तरह धनवान होनेकी सुविधा रखते तो हिन्दुस्थानके व्यापारसे इगलेण्ड हरसाल साढे बाईस अरब रुपये पैदा कर सकते। सभी समझ सकते हैं कि यदि ऐसा हो तो इगलेण्डका गौरव और बल न जाने कितना बढ जाय। मानसिक अवनतिके अध्यायमें पाठकोंने मिष्टर थैकरका कथन पढाही है। सो जबतक मिष्टर थैकरकी प्रेतात्मा राजकर्मचारियों के सिरसे उतर न जाय तबतक इस सच्चे और सरल माहात्म्यके पानेकी आशा करना व्यर्थही है। राजकर्मचारी केवल किसानोंकी दुर्दशापर ध्यान न देकर देशमें नहर तालाब, सरोवर आदि खुदवानेमेंही कजूसी नहीं करतेहैं, वे प्रजाके पाससे जलकर वसूल करनेमंभी कहीं २ पर वे कानूनी कठोरता स्वीकार करतेहैं। विगत सन् १९०० ई०मे मदरासकी सरकारने आईन बनाया है कि जिनके खेतोंके पाससे नहरकी नालियां गयी हैं वे अपने खेतोंको सींचें "न सींचें परन्तु उन्हे सिचाईका कर देनाही पडेगा। किसानीसे जीनेवाली प्रजाके लिये इससे

अत्याचारका प्रचार करनेवाली और कौनसी व्यवस्था हो सकतीहै ? आश्चर्यकी बातहै कि सन् १८६९ ई०मे हिन्दुस्थानकी सरकारने सम्पूर्ण भारतवर्षके लिये ऐसा आईन बनानेका प्रस्ताव कियाथा । इसके दस वर्ष पीछे बम्बईकी सरकारनेभी ऐसा न्यायविरुद्ध आईन पास करनेका प्रयत कियाथा, किन्तु उस समयके स्टेटसेक्रेटरी महोदयकी कृपासे दोनों सरकारोंके प्रस्ताव नामजूर किये गये । सन् १८९७ ई०के भयानक अकालके पीछभी जब मदरासकी सरकारने जलकर वसूल करनेके विषयमे ऐसा वाहियात आईन बनाडाला जो अच्छे लोगोंके सामने बेहूदा और निन्दनीयहै, विशेषता यह कि विलायती सरकारनेभी उसे ऐसा करनेसे न रोका, तब मदरासके समान दूसरे प्रान्तकी प्रजाओंकी खोपडीपरभी सहसा ऐसाही वज्र गिराया जाय तो आश्चर्यही क्याहै ।

इसमें सन्देह नहीं कि रेलवेका मार्ग बढानेकी अपेक्षा यदि सरकारका ध्यान वैसाही अथवा उससे बढकर नहरोंके खुदवानेकी ओर होता तो देशमे इस प्रकार दरिद्रताका प्रचार नहीं होता, हिन्दूसमाजकी अनेक श्रेणीके लोगोका धनबल बढजाता । क्योंकि प्रथम तो रेलवे मार्गके विस्तारसे जिसप्रकार अनेक रूपसे बहुतसा धन विदेशको चलाजाताहै उसप्रकार सिंचाईके साधनोंमें नहीं होसकता ? इस कामसे खर्चाहुआ अधिकांश रुपया देशके मजदूर लोगोंको मिलताहै विगत १८८२ ईस्वीसे सन्१९०२ ईस्वीतक बीसवर्षमें विलायतसे रेलवेकी सडकोंके बनानेका सामान प्रायः ४ अरब ८५ करोड रुपयेका आयाहै । यह पहाड समान सम्पूर्ण धनराशि विदेशी कारीगरोंके घर गया किन्तु भारतवर्षमे रेलवेकी अपेक्षा नहरोंकी सख्या बढानेसे इतना रुपया कभीभी विदेशको नहीं जासकता और सरकारको रेलवेके चक्करमे पडकर कर्जदारनहीं होना पडता । उलटा इसका आधारुपया नहरोंके खोदनेमे खर्च करनेसे किसानोंकी खेतीकी बहुत कुछ उन्नतिहो सकतीथी ।

फिर पानीकी नहरोंकी सख्या बढानेसे जलमार्गके द्वारा मालकी आमदनी रफ्तनीभी बढसकती है । बहुतसे लोग उसमें नावें चलाकर अपनी जीविका चलासकते और धन इकट्ठा करनेकी सुविधा प्राप्तकर सकते है । यदि रेलवेमार्गके बदले छोटी बडी तथा सकरी चौडी नहरोंके द्वारा हिन्दुस्थान के एक देशका दूसरे देशसे यथासम्भव सम्बन्ध बढानेका प्रयत्न किया जाता, और भिन्न भिन्न नहरोंके बीचके प्रदेशोंमें छोटी छोटी रेलवे लाइन (trunk Lines) बनायी जातीं तो आज हिन्दुस्थानी अन्तःकरणसे अगरेजोंको धन्यवाद देनेका अवसर प्राप्तकर सकते । ऐसा प्रबन्ध होनेसे लोगोंके आनेजानेका सुभीताभी होता और देशी शिल्प व्यापारकी उन्नतिभी होसकती । जो रुपये इस समय विदेशी कपनियोंके हिस्सेदार पातेहैं वेही रुपये नावचलानेवाले देशी महाजन लोग पाते । डाक्टर बुकाननकी रिपोर्ट पढनेसे मालूम होताहै कि उन्नीसवी सदीके आरभमे नावकेद्वारा पटनेसे कलकत्तेको माल भेजनेके लिये बारह पन्द्रह रुपयेसे अधिक खर्च नहीं पडताथा । नहरोंकी सख्या बढ़ने और रेलवे कपनियोंके साथ प्रतिद्वंदिता होनेके कारण नावोंका भाडा निःसन्देह औरभी कम होजाता । इस समयभी रोजगारी लोग रेलगाड़ीकी अपेक्षा नावोंके द्वारा माल भेजना अधिक सुभीतेका समझतेहैं ।

मिसरदेशकी नहर।
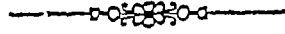
मिसरदेशमें इस विषयकी खूब परीक्षा हुईहै। वहां नीलनदीके ऊपरसे रेल और मनुष्यो आदिके चलनेकी सडकोंके लिये बहुतसे बडे बडे पुल बनाये गयेहैं। इन पुलोंके कारण नदीमें कहींभी नावोंके आनेजानेका मार्ग रुकता नहींहै। क्योंकि वे पुल कलकत्तेके हावडा पुलके समान नये ढगके बनाये गयेहैं। रोजगारियोंकी पूंजीसे चलनेवाली नावोंके आनेजानेके लिये दिनमे कईबार ये पुल खोल दिये जातेहैं। इतनी व्यवस्था होनेपरभी मिसरदेशके व्यापारी कभी कभी अपने व्यापारकी हानि होनेकी शिकायत कियाकरतेहैं। तौभी मिसरमें नदीका रोजगार इस कदर बढ़गयाहै कि वहांकी रेलवे कपनियां उनसे प्रतिद्वन्दितामे जीननेको समर्थ नही होसकतीहैं। उन्होंने मालका किराया बहुत कुछ घटा देनेपरभी कुछ सुविधापानेकी आशा अबतक नही प्राप्तकीहै। रोजगारीलोग रेलवेमार्गकी अपेक्षा नदीमार्गसे नावोंके द्वारा माल भेजनेमें सुविधाजनक समझतेहैं। इससे मिसरदेशमे दिनोंदिन नावोंके व्यापारकी बढती होरहीहै और रेलवे कपनियो को घटी सहते सहते हैरान होना पडताहै।

रेलवेकी अपेक्षा नहरोंके द्वारा व्यापारका विस्तार करना फायदेमन्द जानकरही यूरोपके सभ्य-देशोंमें नहरें खोदने और नदियोंकी गहराई बढानेमे सरकारी कर्मचारी खूब धन खर्च करतेहैं। आस्ट्रियाकी सरकारने सन् १८५० ईस्वीसे सन् १९०३ ईस्वीतक पानीकी नहरोंके लिये साढे सैंतीस करोड रुपये खर्च कियेहैं। हगरीकी सरकारने सन् १८७६ ईस्वीसे १९०० ईस्वीतक ३३ करोड रुपये खर्च कियेहैं। नेदरलेण्डकी सरकारने विगत तीसवर्षमें १७ करोड ३१ लाख ४१ हजार ५०० रुपये और रूसकी सरकारने केवल सन् १९०३ ईस्वीमेंही साढे सातलाख रुपये खर्च कियेहैं। आस्ट्रिया आदि देशोंकी सरकार दूर दूरकी नदियोंको बहुतसी नहरोके द्वारा मिलाकर नावोंके व्यापारका विस्तार करनेमें यथासाध्य सहायता करतीहैं। परन्तु हमारे देशकी सरकारका इधर ध्यानही नहींहै। बङ्गाल ऐसे सुविस्तृत प्रान्तमेंभी सरकार नहरोंके बनाने और सुधारनेमें प्रतिवर्ष ५० हजारसे भी कम रुपये खर्च करतीहै। यूरोप और अमेरिकाकी गवर्नमेण्टे नहरोके लिये अन्धाधुन्ध खर्च करकेभी नावके रोजगारियोंसे टेक्स नहीं लेतीहैं, यदि लेती भी हैं तो बहुत थोडा। बगालमें नावके व्यवसाइयोंसे जो टेक्स लिया जाताहै वह सभी सभ्यदेशोसे अधिकहै। किन्तु इस प्रकार अधिक कर लेकरभी नावका व्यापार बढानेके लिये कोई प्रयत्न नहीं करतीहै। नई नहरोंके खुदवाने और पुरानी नदियोंकी जमीहुई मिट्टी निकलवानेकासा भारी काम करना तो दूरही रहा, रेलवेके लिये नदी और नहरोंके ऊपर जो पुलहैं वेभी हावडेके पुलके समान नहीं हैं। इसलिये उनके नीचेसे बडी बडी नावें निकल नहीं सकतीहैं। रेलवे इञ्जिनियर लोग केवल सस्ते पुल बनाकरही चुप नहीहुए किन्तु नदीकी बाढ आनेपर जिसमे उनकी हानि न हो इसकाभी प्रबन्ध कियाहै। बाततो यह है कि हमारी सरकार रेलवे कम्पनियोंके किसी कामका प्रतिवाद करतीही नहींहै। इस विषयमे माननीय श्रीयुक्त योगेन्द्रचन्द्र चौधरी महाशयने विगत १९०४।०५ ई०के बजटकी बहसके समयमें बगालके छोटे लाटकी लेजिस्लेटिव कौंसिलमें इन सब बातोंको साफ

कहाथा और सरकारसे प्रतिकार करनेकी प्रार्थनाकीथी। किन्तु छोटे लाट महोदयने उनकी बातोंपर कुछ ध्यानही न दिया। इसके पीछे सन् १९०५ ई०के ७ जूनके "इण्डियन डेलीन्यूज" पत्रमे नीचे लिखा हुआ तीव्र मन्तव्य प्रकाशित हुआ, तौ भी सरकार इस विषयमे चुपही रही।

The question of railway versus river borne traffic is of great importance in Lower Bengal where the absence of feeder-roads is compensated for by the presence of innumerable small rivers teeming with country boats These feeder-rivers are being greatly damaged by the efforts of Engineers to construct cheap bridges, and the cutting of the headways to effectuate economy, has seriously interfered with river traffic It is a mistaken policy in view of the gigantic amount of river-borne trade, and is merely killing the goose that lays the golden eggs. The Hon'ble Mr. Jogesh Chowdhury has repeatedly called attention to this matter in the Bengal Council, and as we think, has received extremely unsatisfactory replies, dictated in the interest of the railways without due consideration, of the enormous importance of the river-borne trade or a due appreciation of the disastrous results caused by the silting up of rivers by artificial obstructions necessary to protect the railway bridges. It is now being realised in Germany and in England that it is cheap water transport which makes the country rich and the enormous scheme recently unfolded in Germany is an instance of it Before all the water-ways of Bengal are ruined by injudicious concessions to the railway interest it is to be hoped that the Government of India will look into the matter.

सारांश, बगालही क्या सम्पूर्ण भारतमे रेलवेका मार्ग बढानेमें यदि सरकार बारम्बार सहायक न होती और सम्पूर्ण देशमें जलमार्गकी उन्नति और मरम्मत करनेमें प्रयत्न करती तो देशका व्यापार थोड़े खर्चमेही बहुत बढजाता विलायतवालेभी अब समझगये हैं कि रेलवेकी अपेक्षा नदी और नहरोंके द्वारा व्यापार करनेमें विशेष सुविधा है। इसलिये वहा नहरोंकी सख्या बढानेमें विशेष ध्यान दिया जाताहै। हिन्दुस्थानमें रेलवेके लिये जितना धन खर्च कियागयाहै उसका आधा तथा चौथाई भागभी खर्च करनेसे जलमार्गकी सुविधा बहुत कुछ बढजाय। सभी समझदार लोग इसी प्रकारकी रायदेतेहैं, परन्तु हमारी सरकार सर्वसाधारण प्रजाकी भलाई के लिये इतना खर्च करनेमें राजी नही है।

वङ्गालमें नौकाव्यापार।

ऐसा होनेसे पुराने नाव बनानेवाले पुराने कारीगरोंकी जीविका न मारी जाती, बल्कि व्यापारकी बढतीके साथही साथ नावोंके बनानेसे कारीगरोंकी संख्या और भी बढ जाती। किन्तु रेलवेके विस्तारसे इस देशमे नाव बनानेकी विद्या बहुत कुछ घट गयीहै। अंगरेजोंने भी बडी युक्तिसे इस देशकी दूसरी कारीगरियोंकी तरह नाव बनानेकी कारीगरीको नष्टकरनेका प्रयत्न कियाहै। हमलोगोंके प्राचीन शास्त्रोमे समुद्रमें चलनेवाले जहाजोंका बहुत वर्णन है। यहांतक कि ऋग्वेदमेंभी (शतारित्रा नावम्) अर्थात् शत–पतत्रयुक्ता समुद्रमें चलने वाली नावका वर्णन पायाजाताहै। महाभारतके जतुगृहदाहपर्वके अध्यायमें मनोमारुत–गामिनी, सर्ववातसहा, यन्त्रयुक्ता नावोंका उल्लेख मिलताहै। बंगालकी भूमि खूब नदीनालोसे पूर्णहै। इसलिये वहां बहुत प्राचीन समयसे नाव बनानेकी विद्या प्रसिद्धथी। बहुत पुराने समयमे बंगवासियोंने नावोंमे सेना और युद्धसामग्री लेजाकर सिंहलदेशको जीताथा। "महावंशो" नामक बौद्ध इतिहासग्रन्थमे इस विषयका वर्णनहै। कालिदासके रघुवंशमेंभी देखाजाताहै कि महाराज रघु जब दिग्विजय करनेके लिये पूर्वकी ओर चलेथे तब उनका रास्ता रोकनेकेलिये बंगालके राजालोग बहुतसी नावे लेकर पहुँचेथे, किन्तु रघुने नौका बलका घमण्ड रखनेवाले उन बंगाली राजाओंको हरायाथा। अंगरेज जिसे "नेवलफोर्स" कहतेहैं, उसीको कालिदासने "नौ–साधन" का नाम दियाहै। यथा,–

"वङ्गानुत्थाय तरसा नेता नौ–साधनोद्यतान्"।

मुसल्मानोंके समयमेभी बंगालियोंका नौ–साधन नष्ट नहीं हुआथा। यह बात घटिकारिकासे प्रमाणित होसकतीहै। बंगालके सुप्रसिद्ध वीर प्रतापादित्यके दामादके भागनेके वर्णनमे लिखाहै,–

चतुःषष्टिदण्डयुता नौरानीता महामतिः।
नौलोकैः सज्जिता स्वैरं सैन्याद्यैरभिरक्षिता॥
तस्यामारोहणं कृत्वा प्रगृह्य नालिकायुधम्।
तूर्णं गमनवार्ताश्च नालिकध्वनिभिर्ददौ॥

चौसठ दण्डयुक्तनालिक अर्थात् तोपोंके समूहसे सजकर सैनिकोंके द्वारा रक्षित नावोंमे बैठकर रामचन्द्र तोपोकी ध्वनि करतेहुए अपने जानेकी सूचना कर चलेगये।

घटककारिका पढ़नेसे यह बात कुछ कुछ जानी जासकतीहै कि मुगलसम्राट् अकबरके समयमे बंगालियोंके जङ्गी कैसे जहाज होतेथे। कारिकाके लेखकने महाराज प्रतापादित्यके जहाजोंके घाटों–बन्दरों–काभी वर्णन कियाहै। घटक महाशयका वर्णन कपोलकल्पित नहींहै। यदि इस विषयका प्रमाणही चाहिये तो बाबू यदुनाथ सरकारके बनाये हुए The India of Aurung zeb नामक ग्रन्थके LVII चिह्नित सफेको देखनेसे सोभी होजायगा। प्रसिद्ध ऐतिहासिक श्रीयुक्त रामायणगुप्त अनुवादित "रियाज–उस सालातिन" ग्रन्थमेंभी इस विषयका कुछ वर्णन पाया जाताहै।

सन् १८०० ईस्वीतक बगालियोंकी नौकाविज्ञान विद्या कम नहीं हुईथी, बल्कि दिनोंदिन बढ रहीथी। सन् ईस्वीकी उन्नीसवी सदीके आरभतक इस देशमें ऐसे गजबन जहाज बनतेथे कि उन्हे देखकर बहुतसी पश्चिम निवासिनी जातियोंके मनमे ईर्षाका सचार हुआ करताथा। जो कलकत्तेका बन्दर इससमय विदेशी जहाजोंसे पूर्ण दिखायी देताहै, सो १८०१ ईस्वीमे बडे बडे देशी जहाजोंसे सुशोभित रहताथा। ढाका, सप्तगांव और चरगावमे बहुत पुराने समयसे बहुत अच्छे जहाज बनतेथे। उस समयके गवर्नर जनरल लार्डवेलसली साहबने इसवर्षके आरभ विलायतकी सरकारको सूचित कियाथा कि,–

The port of Calcutta contains about 10,000 tons of shipping built in India, of a description calculated for the conveyance of cargoes to England ❊ ❊ From the quality of private tonnage now at command in the port of Calcutta, from the *state of perfection which the art of shipbuilding has already attained in Bengal* (*promissing still more rapid progress* ..) it is certain that this port will always be able to furnish tonnage to whatever extent may be required for conveying to the port of London the trade of the private British merchants of Bengal.

बंगालमे जहाज बनानेकी विद्याने जब ऐसी उन्नति कीथी तब बम्बईके बनेहुए जहाजभी विलायती जहाजोंकी अपेक्षा कई गुणा अधिक अच्छे समझे जातेथे। महाराष्ट्र प्रान्तमे सबसे पहले छत्रपति महाराज शिवाजीने जहाज बनानेकी कारीगरीको उत्साहित कर उन्नत कियाथा। मुगल लोगोके प्रयत्नसेभी इसदेशकी जहाजी विद्या बहुत चढबढ गयीथी। पेशवालोगोंके शासनके समय महाराष्ट्री कारीगरोके बनाये जहाज सर्वसाधारणमे विशेष प्रशसित होतेथे। विजयदुर्ग, कुलाबा, सिन्धुवर्ग, रतनागिरी, अञ्जनवेल आदि बन्दरोमें महाराष्ट्रीलोगोंके जंगी जहाज बनाने के "डाक" कारखाने थे। महाराष्ट्री जलसेनापति आंग्रेकी देखरेखमें बने हुए एक जहाजमे चारसौ टन (एकटन प्रायः २८ मनका होताहै) माल भरा जाताथा। इसके सिवाय उन जहाजोमे १६ से लेकर ७४ तक बडी २ तोपे सजायी जाती थी। एक दूसरे सेनापति आनन्दराव धुलयेके अधिकार मे पचास जहाजथे। उनमें तीनसौ तोपे सदा रखी रहा करती थी प्रत्येक जहाजमें ३०० चारसौ वीर बैठकर युद्ध करते थे। उस समयके अगरेज और पोर्तगाल वालोंके जंगी जहाजभी इनकी तुलनामें बहुत निकृष्ट समझे जातेथे।

लेफ्टनेण्ट कर्नल ए. वाकट महोदयकी सन् १८११ ई०की लिखी हुई Considerations on the affairs of India नामक पुस्तकमें इस विषयका विस्तृत वर्णन देखा जाताहै। उसके ३१६ वें पृष्ठकी कई एक पक्तियां यहा उद्धृतकी जातीहैं,–

It is calculated that every ship in the navy of great Britain is renewed every 12 years. It is well known that teak-wood-built ships last 50 years, and upwards. Many ships Bombay-built, after running 14 to 15 years, have been bought into the navy and

considered as strong as ever. The *Sir Edward Hughes* performed I believe, eight voyages as an India man before she was purchased for the navy No Europe-built ship is capable of going more than six voyages with safety

इस वर्णनको पढनेसे माल्म होताहै कि उस समयके विलायती जहाज १२ वर्ष व्यवहारमे लानेके पीछे जलसेनाके अधिकारियोंके द्वारा बेकाम समझे जातेथे; परन्तु बम्बईके सागोनकी लकडीकि बने हुए जहाज पचास वर्षतक ज्योंके त्यो रहतेथे। जो देशी जहाज १४ पन्द्रह वर्षतक काममें लाये जाते थे उन्हेंभी बडे आग्रहके साथ जगी जहाज विभागके अधिकारी खरीद लिया करते थे । यूरोपके बने हुए जहाज छः बार इगलेण्डसे भारतवर्षको आनेजानेमें बेकाम होजाया करते थे, परन्तु देशी जहाज 'आठबार हिन्दुस्थानसे विलायत और विलायतसे हिन्दुस्थानको आनेजानेपरभी नये जहाजोंके समान रहतेथे, और इगलेण्डकी जगी जलसेनाके द्वारा खरीद लिये जाते थे । वाकरसाहब और भी कहतेहैं, "हिन्दुस्थानी जहाज ऐसे मजबूत होनेपरभी उनके बनानेमें यूरोपकी अपेक्षा बहुत कम खर्च लगताहै । जैसे जहाज विलायतमें एक हजार रुपयेमें बनतेहैं, हिन्दुस्थानमें ७५०) रुपयेमे उससे चौगुना उत्कृष्ट जहाज तैयार किया जासकताहै । इगलेण्डके जहाज अधिक द्रव्य लगाकर बनवानेपरभी १२ वर्षसे अधिक नही चलतेहैं; परन्तु हिन्दुस्थानी जहाज बहुतकम दामोमे बननेपरभी पचासवर्षतक कामदेनेपरभी ज्योंके त्यो बने रहतेहैं । इसलिये हिन्दुस्थानमें जहाज बनानेका कारखाना खोलनेसे इगलेण्डका बहुतसा रुपया बच सकताहै । यदि वाकर महोदयका उपदेश मानाजाता तो इसमे सदेह नहीं कि इगलेण्डका इससे बहुत उपकार होता । और हिन्दुस्थानकी जहाज निर्माणविद्याभी दिनोंदिन उन्नतिको प्राप्तहोती । किन्तु दुःखकी बात है कि विजराजकर्मचारियोंका ध्यान इधर आकर्षित नहीं हुआ । जिसल्यिे हिन्दुस्थानी जहाज बनानेकी विद्याके शिरपर बज्र गिराया गया उसकी बात मिस्टर टेलरके बनाये हुए हिन्दुस्थानके इतिहासके २१६ वें पृष्ठके देखनेसे माल्म होतीहै नीचे उसे उद्धृत करतेहैं ।

The arrival in the port of London of Indian produce in Indian-built ships created a sensation among the monopolists which could not have been exceeded if a hostile fleet had appeared in the Thames. The shipbuilders of the port of London took the lead in raising the cry of alarm, they declared that their business was on the point of ruin and that the families of all the shipwrights in England were certain to be reduced to starvation.

अर्थात् हिन्दुस्थानके बनेहुए जहाज हिन्दुस्थानी चीजे लादकर जब लन्दनके बन्दरपर पहुचे तब अपनीही भलाई चाहनेवाले विलायती कारीगरोंमे भयानक हलचल पडगई । इस मामले विलायतके लोग इसप्रकार घबडागये कि यदि दुश्मन सेनाओंसे लादकर टेम्सनदीमें ऐसे जहाज लाते तौभी कदाचित् वे लोग सहसा इससे अधिक न घबडाते । लन्दनके जहाज

लोंकी डरावनी चिल्लाहटसे चारोंदिशा कांपने लगीं। वे कहनेलगे "अब तो हमारा रोजगार मिट्टीमें मिलगया? विलायतके सभी जहाज बनानेवालोंको अब अवश्यही परिवारके साथ भूखों मरकर प्राण देना पड़ेगा"।

ईष्टइण्डियाकम्पनी अपने रोजगारके लिये इसदेशमें व्यापारी जहाज तैयार करातीथी। सन् १७७० ई०से बगालमे उसके कारण जहाज बनानेकी कारीगरी बढनेलगी। उससमय खिदरपुर कोटागढ़ और कलकत्तेकी पुरानी टकसालके पास एक एक जहाज बनानेका कारखाना था। इन स्थानोंमें ५००० मन मालभरने योग्य बडे बडे जहाज तैयार किये जातेथे। परन्तु ए कारखाने लन्दन और लिवरपुलके जहाज बनानेवालोंकी छाती जलानेवाले हो उठे। उनकी तरफदारी करते हुए सन् १८१३ ई० मे एक अंग्रेज लेखकने सरकारसे प्रश्न कियाथा,—

"Is it not a matter to be deplored that the Company should employ the natives of India in building their ships, to the actual injury and positive loss of this nation, from which they received their charter? Mistaken as the Company have been in this particular, it is not very difficult to devine what will take place if an unrestrained commerce shall be permitted. if British capital shall be carried to India by British speculators, we may expect a vast increase of dockyards in that country, and a proportional increase of detriment to the artificers of Britain."

अर्थात्—क्या यह दुःखकी बात नहींहै कि ईस्टइण्डिया कम्पनी जहाज बनानेके काममें हिन्दुस्थानी कारीगरोको नियुक्तकर इगलेण्डकी भयानक हानि और यथार्थ अनिष्टसाधन कररहीहै! इसविषयमे कम्पनी बहुत भ्रममें पड़गईहै। यदि वह इगलेण्डसे हिन्दुस्थानमे पूजी लेजाकर इसतरहके कामोमे खर्चकरेगी तो हिन्दुस्थानमे जहाज बनानेकी कारीगरी बढजायगी, इससे जिस अंगरेजी जातिसे कम्पनीने हिन्दुस्थानमें व्यापारकरनेकी सनद लीहै उसी अगरेजी जातिके जहाज बनानेवाले कारीगरोकी भयानक अवनति होगी!।

कारीगरोकी इसप्रकारकी चिल्लाटह और आन्दोलनसे ईस्टइण्डियाकपनीके देशभक्त मेम्बर अपनेको भूलगये। निश्चयहुआ, गोरेकारीगरोकी भलाईके लिये हिन्दुस्थानी काले कारीगरोकी रोजीको धूलमें मिलाना होगा, हिन्दुस्थानसे जहाज बनानेकी अच्छी अच्छी सामग्रियां विलायतमे लेजाकर विलायती कारीगरोके द्वारा जहाज बनानेका काम किया जायगा। इसीसमय हिन्दुस्थानके मुसलमान सैनिकोंकी रोजी छीननेका प्रबन्ध हुआ। इसविषयका कुछ वर्णन किसी पिछले पृष्ठमें किया गयाहै। इगलेण्डमे उससमय "ओक" नामक लकडीसे जहाज बनाये जातेथे, किन्तु इस प्रबन्धके पीछे जहाज बनानेमें ओक लकडीके पहले सागोनकी लकडी काममे लायी जानेलगी। इससमयभी जहाज बनानेकेलिये इसदेशसे लाखो मन सागौन हरसाल विलायत भेजा जाताहै।

इसप्रकार केवल समुद्रमे चलनेवाले बड़े २ जहाजोंके बनानेकी विद्याही इसदेशसे विदा नही हुईहै किन्तु छोटी छोटी नावोंके बनानेकी कारीगरीभी लोपसी होगयीहै। पहले बङ्गालकी खाडी और अरबसमुद्रके किनारोपर हिन्दुस्थानी कारीगरोके बनाये हुए हजारो जहाज माल लादे हुए

फिरा करतेथे । और इसकाममे लगे हुए लाखो आदमियोकी जीविका चलतीथी । सबलोगोको भरोसा था कि सुसभ्य अङ्गरेजोंकी सगतिसे हिन्दुस्थानके जहाज बनानेका रोजगार खूब चटकेगा और विज्ञान विशारद अगरेजोके चेला बनकर हिन्दुस्थानी इस कारीगरीको तरक्कीपर पहुँचा सकेंगे । परन्तु कामपडनेपर उसका उलटा फलहुआ । सरकारी (Statistical Abstract of British India) और वे सरकारी (O'conor's Trade Report) कागज पत्रोंसे लेकर नीचे चार सालमे माल लाने लेजानेके काममे जितनी देशी जहाज थे उनकी सख्या देतेहैं । इस सख्याको देखकर हिन्दुस्थानी जहाज बनानेकी कारीगरीकी वर्तमान दशाका पतो लगजायगा ।

सन्	जहाजोकीसख्या
१८५७	३४२८६
१८९९	२३०२
१९००	१६७६
१९०१	१०४९

मिस्टर ओकोनरने अपनी रिपोर्टमे एक जगहपर साफ कहाहै,— The native craft employed in the foreign trade are slowly but surely disappearing इस बातका अन्दाज कौन करेगा कि इसके कारण कितने आदमियोंकी रोजी मारीगई है ? यदि-अगरेज लोग सहानुभूति प्रकाशित करते तो इसमें सन्देह नही कि हिन्दुस्थानी कारीगर जहाज बनानेकी विद्यामे यूरोपके कारीगरोको हरादेते उन्नीसवी सदीके बीचके समयतक इस देश की जहाज बनानेकी विद्या जैसी दशामें थी उसकाभी हाल सुनिये,—

The correct forms of ships—only elaborated within the past ten years by the science of Europe—have been familiar to India for ten centuries. Notes on India, By Dr Buist (Bombay)

विगत जनवरी सन् १९०३ ई०के The Indian Texatile Journal पत्रमें ईस्टइण्डियारेल्वे कम्पनीके जमालपुरके एञ्जिन बनानेके कारखानेकी जो रिपोर्ट प्रकाशित हुईहै यहांपर उसकाभी देना आवश्यकहै ।

The finished locomotive, as we see it in the paint shop in its new decorations, ready to take its place upon the railway, is the best epitome of the capability of the native Indian craftsman. If he can build an E I R. Co's locomotive under European supervision from-start to finish he can build any thing...The proverbial laziness of the Indian worker is not to be discerned in the busy shops of Jamalpur and the best evidence of Indian capacity for work when properly directed, and instructed, is to be found in the "Lady Curzon" the new E. I Railway express locomotive.

इस जमालपुरके कारखानेमे हिन्दुस्थानी कारीगर एञ्जिन बनानेका काम आदिसे अन्ततक बहुत अच्छा करसकतेहैं इससे इस बातपर अविश्वास नहीं किया जासकता कि ए लोग जहाज बनानेकी विद्याको तरक्कीपर लानेमे असमर्थ होंगे। परन्तु ऐसी तरक्कीके लिये राजशक्तिकी सहायताकी आवश्यकताहै। यदि राजशक्तिकी अनुकूलता न होती तो श्याम, जापान, और जर्मनीवाले शिल्प व्यापार वाणिज्यमें ऐसी उन्नति करसकते या नहीं इसमें सन्देहहै। दुर्भाग्यसे हिन्दुस्थानकी राजशक्ति देशी कारीगरीकी उन्नति करनेके विरुद्धहै। इसीसे हिन्दुस्थानकी कारीगरियोंका लोप होगयाहै, प्रजाके लोग मुट्ठीभर अन्नके लियेभी कंगाल होगये हैं कहा तो चतुर कारीगर और विज्ञान विशारद सभ्यजातिकी संगतिसे हिन्दुस्थानकी कारीगरी और विज्ञानकी तरक्की होना चाहिये कि कहा वह जडमूलसेही नष्ट होरहीहै।

हिन्दुस्थानकी व्यापार सम्बन्धी रिपोर्टोंके देखनेसे मालूम होताहै कि विगत सन् १८३४।३५ ईस्वी सन् १९०२।०३ ईस्वीतक इसदेशमे २४ अरब ४४ करोड ५० लाख १० हजार ७ सौ ५६ रुपयेका माल विदेशसे आया और इसदेशसे ३०३४३२४७४४४ रुपयेका माल विदेशको गयाहै। इन बीतेहुए ५६ वर्षोंमें यह ५४७८८२५८१९० रुपयेका माल विदेशी जहाजके रोजगारी लोगोंने देश विदेशमे लेजाकर जो धन कमायाहै उसका अधिकभाग (यदि इसदेशकी जहाज बनानेकी कारीगरीके सिरपर अंगरेजलोग वज्र न गिरातेतो) निस्सन्देह इसदेशके लोगही पाते। इसके सिवाय यदि महाजनोंके फायदेका हिसाब सैकडापीछे १० रुपयेभी रखा जाय तो गतसदीमें विदेशी वाणिज्यसे हिन्दुस्थानी महाजन खर्च बाद देकर कमसे कम ८० करोड़ रुपये कमासकते। जहाज बनानेकी कारीगरीके नष्ट होनेसे यह आमदनी विदेशी रोजगारियोंके हाथमे गई है और हिन्दुस्थानी कंगाल होकर रास्तेके भिखारी बन गयेहैं।

पुराने कुएँ तालाब आदिके मरम्मत करनेपर ठीक २ ध्यान देनेसेभी देहातोंमें पानी इकट्ठा करनेमें विशेष सुभीता होसकताहै किन्तु सरकार इस काममे भी खर्च करना नहीं चाहती। इसीसे बहुतेरे तालाब पूर गयेहैं और लोग पानीके लिये भी तरसने लगेहैं। लार्ड लिटनके शासनके समय जब राज्यका रुपये घटानेकी बात उठीथी तब हिन्दुस्थानकी सरकारने प्रान्तिक सरकारोंसे पूछाथा कि देशके कुएँतालाब आदिकी मरम्मतमें जो हरसाल खर्च किया जाताहै उसे घटा देनेसे कितने धनकी बचत होसकतीहै। परन्तु क्या उस समय रेल विभागका खर्च घटानेकी बातभी उनके दिमागमे समाई होगी? कहनेका मतलब यहीहै कि जलाशयोंकी मरम्मतमें सरकारके ध्यान न देनेसे देशकी अनेक थोडे पानीवाली नदियां, नाले, और नहरें क्रमशः कीचड मिट्टी आदिसे पूरती जा रहीहैं। इसी सबबसे देशमे मलेरियाकी बीमारी अधिक फैलतीहै। सबसे पहले राजा दिगम्बर मित्रने मलेरिया कमीशनके आगे अपना अभिप्राय प्रकट करते समय इस बातको बहुत अच्छी तरह समझाय दियाथा कि रेलवेकी सडकोंका विस्तार होनेसे बंगालमें मलेरियाकी बीमारी बहुत बढ़ गयीहै। इण्डियन डेलीन्यूज आदि गोरे अखबारोंमेंभी रेल्वेका मलेरियाके साथ सम्बन्ध होनेकी बात स्वीकार कीगईहै। सरपेट्रिक मैंसनमहोदयके बनायेहुए Tropical Diseases नामक ग्रंथमेंभी इसविषयका वर्णन पायाजाताहै। रेल्वेके कारण देशके अथाह जलकी जो कमी होतीहै उसका दूर करनाभी सरकारके लिये बहुत कठिन काम नहीहै।

परन्तु सरकार रेल्वेका विस्तार घटानेपरभी राजी नहींहै और पानी इकट्ठा करनेका प्रबन्ध करनेके लिये धनखर्चकरनाभी नही चाहती, इसीलिये हरसाल लाखों मनुष्य मलेरिया बोखारकी भयानक यन्त्रणा सहाकरतेहैं।

सारांश यही है कि हिन्दुस्थानमें रेलकी सडकोंकी सख्या और विस्तार न बढाकर यदि अगरेज नहर, तालाब, कुए और सरोवर आदिकी सख्या बढानेमें ध्यान देते तो जमीनकी उपजाऊ शक्ति बढजाती और जिन किसानोंकी सख्या हिन्दुस्थानमें सैकडापीछे ८५ हैं वे धनवान होसकते। पुराने जहाज चलानेवाले, जहाजोंका रोजगार करनेवाले और जहाजके कारीगरोंके सत्यानाश नहोनेसेभी देशका धन बढसकता। इग्लेण्डके समान छोटे और बीहड देशकेलिये रेल जिसप्रकार फायदेमन्दहै हिन्दुस्थानके समान बडे और सपाटदेशके लिये उसप्रकार नहीहै,—इस बातको राजकर्मचारी अबतक समझ नहींसकेहैं अथवा समझकरभी विलायतके लोहेके रोजगारियोंकी भलाईके लिये पानीके साधनोको बढानेके बदले लोहेकी सडकोंके बढानेमें अधिक प्रेम दिखाते आरहेहैं। इसका जैसा भयानक परिणाम हुआहै उसका वर्णन अक्टूबर सन् १९०३ ईस्वीके Asiatic Quarterly Review पत्रमें जनरल फिसर (General J H fischer R. E) महोदयने सरलभाषामें यों प्रकाशित कियाहै,—

No words could have better described the railway administration in India during the past half Century, the advocates of this system have never ceased to din into the cars of the public in England "the incalculable benifits" the railways have conferred on India, without producing the shadow of evidence to support their assertions. Those works of extreme utility, without which it is impossible to make land of any country valuable, have been entirely neglected, being too mean and palty for the consideration of such very great minds, and the results have been that the country has been brought to the verge of ruin and its whole population are in the most pitiable condition of hopeless poverty, misery and desolation

बाबू रमेशचन्द्रदत्त महोदयने हिन्दुस्थानसरकारके जमीनके लगानसम्बन्धी आईन कानूनोंका दोष दिखलानेके लिये जो पुस्तक बनाईहै उसके जवाबमें हिन्दुस्थानकी सरकार और मदरासके मालविभागके मत्री महाशयने दो किताबें प्रकाशित कीहैं इन दोनों किताबोंकी आलोचना करते-हुए जनरल फिशरमहोदयने लिखाहै,—

Examine these documents through and through, and you will not find one word in them to show that the slightest attention whatever has ever been paid by any one of the revenue authorities towards promoting the real wealth of the country by any one of those means which Adam Smith and all modern authorities

agree in declaring every country must be provided with, to make its land and labour as productive as possible." *

There is, we fear very little excuse for us in this matter: "we knew the good and chose to follow the evil" and "have reaped as we have sown." The awful famines which have so frequently prevailed in india, accompanied with plague, cholera and pestilences, are the just Judgements of God upon us for neglecting the interests of all the subjects placed under us by Him.

यदि अगरेजलोग अबभी नया दिखलावें, रेल्वे विस्तारके लिये और धन न खर्चकरके खेतीके कामको बरसातकी परवाह विना कियेही चलाते रहनेके लिये सम्पूर्ण शक्तिका उपयोग करें तौभी हिन्दुस्थानकी प्रजाकी दुर्दशा किसीकदर कम होसके, देशवासियोंका धनबल बढनेके साथही इगलेण्डका हिन्दुस्थानी व्यापारभी बहुत कुछ बढजावे ।

कारीगरोंका सर्वनाश ।

देशमें दरिद्रता बढनेके साथही देशीकारीगरीको बढानेकी ओर अनेक लोगोका ध्यान आकर्षित होताहै । किसानोंको अन्नके विना भूखों मरते देख और मध्यम स्थितिके लोगोंकी रोजीके मार्गमे काटे फैलेहुए देख बहुतसे लोग देशी कारीगरी बढानेके लिये बहुत ध्यान देने लगेहैं । इसमे सदेह नहीं कि देशके लिये ये अच्छे चिह्नहैं ।

बहुतसे लोगोंका विश्वास है कि विलायतमें भाफके बलसे चलनेवाली कलोंके प्रचारसेही इस देशकी कारीगरी नष्टहुईहै । भाफकी कलोंसे बनेहुए मालके साथ हाथकी कारीगरीके पदार्थोंके टक्कर न झेल सकनेके कारणही हिन्दुस्थानी कारीगरीकी अवनति हुईहै । इस विचारके फेरमें पडकर बहुतसे लोग देशी कारीगरोंकी निन्दा कियाकरतेहैं । उन्हे इसलिये घृणाके साथ देखते हैं कि वे कारीगरीके काममे भाफकी कलोंकी सहायता प्राप्त नही करसकते । जो लोग ऐसे विचारके फेरमें पड़ेहुएहैं वे लोग देशी कारीगरीके नष्ट होनेका सच्चा इतिहास नही जानते । यद्यपि यह बात अस्वीकार नहीं की जासकती कि उन्नति पायेहुए विज्ञानकी सहायतासे बनेहुए यन्त्रोंके साथ टक्कर झेलनेमे देशीकारीगरोको किसी अशमें असुबिधा भोगनी पडतीहै; किन्तु हमारे देशकी कारीगरीके भयानक दुर्दिन आनेके अन्य कई भारी कारणहैं । यहापर उन्ही कारणोकी विवेचना कीजातीहै ।

हिन्दुस्थानी कारीगरीके नष्टहोनेका सबसे प्रधान कारण अंगरेजोका अत्याचार और बेहद स्वार्थपरताहै । अगरेज इसदेशमें व्यापारी बनिये बनकर घुसेथे । इसीलिये इसदेशके व्यापारमे अपनीही प्रधानता बनानेके लिये स्वभावसेही उनके हृदयमें बलवान इच्छा उत्पन्न हुई थी । इस इच्छाको पूर्णकरनेके लिये उन्होंने जैसी बेआईनी और रोंगे खड़े करनेवाले उपायोंसे काम लियाथा उन्हे सुनने से सबकी छाती दहल उठेगी ।

सन् १६००ई०में विलायतके व्यापारियोंके एक झुण्डने ७० हजार पौण्ड अर्थात् उस समयके करीब ७ लाख रुपयेकी पूंजी लेकर पहले पहल व्यापार करनेके लिये हिन्दुस्थानमे कदम रखाथा। यही रोजगारियोंका झुण्ड ईस्टइण्डिया कम्पनीके नामसे प्रसिद्धहुआ। प्रायः १०० वर्षतक सूरत, बम्बई, मदरास आदि स्थानोमें रोजगार करनेके बाद सन् १६९० ई०मे इन्होने बगालमें कलकत्तेकी जमीन खरीदी और वहींपर अपना सबसे बडा व्यापारी अड्डा बनाया। इन पश्चिमी वणिक व्यापारियोंने पहले हिन्दुस्थानियोंको अपना जैसा स्वरूप दिखायाथा उसका वर्णन किन्ही पिछले पृष्ठोंमें कियाही गयाहै। ये लोग रोजगार और रोब जमानेके सुभीतेके लिये मुँहसे बडी २ अच्छी नीतिकी बडी २ बाते सुनाते हुए भी—

From the outset the Company maintained the strictest principles of monopoly. * * * They contrived to make some money to establish themselves as colonists in several important places, to commit an infinity of misdemeanors of various degrees of enormity upon friends and foes. Empire in Asia by W M. Torrens.

यथार्थमे सब तरहसे नीतिके विरुद्ध कामकरके धनकमानेके बडे २ प्रयत्न करते थे, इसके लिये शत्रुमित्र सभीके साथ एक समान खराब बर्ताव करनेमे हिचकते नही थे। व्यापारमे अपनी प्रधानता बनाये रखनेमे पहलेसेही इनका खूब ध्यानथा। उस समयके मुगलबादशाह औरङ्गजेबसे इन लुटेरे बनियोंकी करतूत छिपी न रहसकी। उसने गुस्सेमें आकर इन विदेशी व्यापारियोंको देशसे निकालदेनेकी आज्ञा दी। आज्ञा देतेही सूरतसे अगरेज लोग खदेर दियेगये उनके ढीठ नौकर जेलमें ठूसेगये, बम्बई, मछलीपट्टन और विजगापट्टन आदिकी अगरेजोंकी व्यापारी कोठिया छीनलीगयीं, तबतो अगरेज बडीही विपत्तिमे पडे। अन्तमे बहुतही गिडगिडाकर (Most abject) बारम्बार माफीमांगने और १॥ लाख रुपये जुर्मानेके देनेपर छुटकारा पासके। औरगजेबने समझा,—अगरेजोंकी खूब हानि हुई है, उनकी शक्ति प्रायः नष्ट होगयीहै, अब वे सिर ऊचा नही करसकैंगे। इस प्रकार मुगलबादशाहकी उदारतासे अगरेजोंने व्यापार करनेके लिये दुबारा अधिकार प्राप्त किया।

औरगजेबके पोतेसे अगरेजोने अनेक उपायसे इस देशमे बैरोकटोक व्यापार करनेका अधिकार प्राप्त करलिया। इस अधिकारके कारण ईस्टइण्डिया कम्पनीका माल आमदनी रफतनीका महसूल बिना दियेही बगालके अनेक स्थानोमे जाने आने लगा। उस समय कम्पनीका व्यापार बहुत चढा बढा हुआ और विस्तृत नहीं था, किन्तु कम्पनीके नौकर लोग बादशाहकी सनद और कम्पनीके नामकी दोहाई देकर जिस तिस मनुष्यके हाथ विना महसूल दिये व्यापार करनेका परवाना बेचकर अपना पेट भरनेलगे। इससे देशके लोगोंके स्वतन्त्र व्यवसायमे धक्का बैठने लगा। बगालके नव्वाबभी उचित महसूल पानेसे हाथ धोनेलगे इसप्रकार अगरेज व्यापारियोंकी भलाई करनेमे बगालके सरकारी खजानेकी और देशी रोजगारियोंकी हानि होनी आरम्भ हुई।

सन् १७५७ ईस्वीकी पलासीकी लडाईके बाद इसदेशमे अग्रेजोका जोर बढनेलगा। अग्रेजोने मीरजाफरको पहले नव्वाब बनाकर पीछे अपना काम साधनेके लिये उसे नव्वाबी गद्दीसे

अलग करदिया। मीर जाफरके पीछे मीर कासिमपर अंग्रेजोंकी विशेष कृपाहुई, इससे उसीके सिरपर नव्वाबी मुकुट रक्खागया। वह नामका नव्वाब अवश्यथा परन्तु यथार्थमे अंग्रेजही सब प्रकारके कर्त्ता हर्त्ता बनबैठे। मीरकासिम बिल्कुल कमजोर दिलका नव्वाब नहीं था इससे देशमे अंग्रेजोंका यथेच्छाचार वह सहन नहीं करसका। गरीब प्रजाका दुःख दूर करनेके कारण उसे अगरेजोंके क्रोधाग्निमे भस्म होनापडा। मीरजाफरको फिर नव्वाबकी गद्दी दीगई इसबार अंग्रेज बंगालियोंको इसप्रकार अत्याचार करके सतानेलगे जिसका कुछ ठिकाना नहीं। लोगोंका सर्वस्व छीनलेनाही उससमय अंग्रेजोंका देशमे राज्यकरनेका मूलमंत्रथा।

ज्योंही पलासीके लडाईके पीछे बंगालमें अगरेजोंका जोर बढने लगा त्योंही वे जबरदस्ती अपने व्यापारी अधिकार बढानेका प्रयत्न करनेलगे। कंपनीके नौकर अपने मालिकोंके लिये बेरोकटोक व्यापार करनेका अधिकार पाकर बिना महसूलदिये खुदरोजगार करनेका प्रयत्न करनेलगे। पहले यह काम छिपाछिपी हुआ करताथा। बंगालका अभागी नव्वाब सिराजुद्दौला इस बेरोकटोकके व्यापारसे बाधा देनेके कारण अगरेजोंकी आंखोंका कांटा होगया। चालाक अंगरेजोंने उससमयके कई अदूरदर्शी कुटिल नीतिपरायण देशीलोगोंकी सहायतासे सिराजुद्दौलाको सिंहासनसे उतारकर तथा मरवाकर अपने बेरोकटोक व्यापारके बढानेका रास्ता साफ करलिया।

ऐसे अवसरमे किसी सहृदय लेखकने कहाहै,—जिस दिन अभागी सिराजुद्दौलाने राज्य खोकर फ़कीरके वेशमें मुर्शिदाबाद छोडा उसी दिनसे हिन्दुस्थानके लडनेका काम आरम्भहुआ। मीरजाफर, क्लाइव और कईएक अगरेज, अमीरबेग, नवकृष्ण और रामचन्द्र इकठे होकर मुर्शिदाबादके खजानेमें घुसे और धनके हिस्से करनेलगे। कलकत्तेकी कौंसिलके अगरेज मेम्बरोंने १२ लाख ८० हजार रुपये पाये। इसके सिवाय क्लाइवने गुप्त रीतिसे १६ लाख रुपये अपने पल्ले किये। ईष्टइण्डिया कंपनीको प्रायः एक करोड रुपये दियेगये। देशी लोगोंके भाग्यमें सदा पत्तलकी जूठनहीं बदी रहतीहै, सो बंगाली सेठोंको श्राद्धके सीधेकी दक्षिणाके समान बीसलाख रुपये दियेगये। अगरेज सैनिकोंको व्यवस्था देनेवाले पण्डितोंके समान छलबलसे सोलह सोलह आनेकी बिदाई मिली। सिपाही और अन्य देशी लोगोंनेभी कुछ कुछ दक्षिणा प्राप्तकी। इस धनके बांटके समय अंगरेजोंकी ओरसे विश्वासघातकता और नृशंसताका काम खूब हुआ। कंपनीके धूर्त्त नौकरोंकी धनपानेकी इच्छा पूरीकरनेमें हिन्दुस्थानके कितनेही धनी कंगाल होगये। उस समयके गोरे लोगोंके समान प्रकृतिवाले कितनेही नीच दरजेके लोगभी सहसा बडे आदमी होगये। जिस प्रकार इनके द्वारा भारतके भिन्न २ प्रदेशोंमें लडाईकी आग सुलगी, जिसप्रकार इनलोगोंके निष्ठुर व्यवहारसे हिन्दुस्थानियोंका कोमल हृदय क्रमशः पत्थरके समान कडा होगया, जिस प्रकार इनलोगोंके बुरे उदाहरणोंसे हिन्दुस्थानी पहलेसे न जाननेवाले धूर्त्ततर, बदमाशी, क्रूरता और बीभत्स पापके काम करना सीखगये उन बातोंको विशेषरूपसे जाननेके लिये टारेंन्स (W M. Torrens) साहबकी बनाईहुई "एम्पायर इन एशिया" नामकी पुस्तक ध्यानपूर्वक देखनी चाहिये।

नव्वाब मीरकासिमने अगरेजोंके बेरोकटोकके व्यापारमें बाधादेनेका प्रयत्न कियाथा। जब उसे इस प्रयत्नमें सफलता नहीहुई तब उसने देशी व्यापारियोंके लियेभी एकदम महसूल माफ

करदिया। क्योंकि उसने देखा कि अपने राज्यमे विना महसूलदिये विदेशी व्यापारियोंको व्यापार करने देनेसे महसूल देनेवाले देशीव्यापारियोकी विशेष हानि होरहीहै। उसके इस अच्छे कामसे व्यापारके मैदानमे बगाली और अगरेज व्यापारियोंने बराबर अधिकार प्राप्त किया। इससे व्यापारविभागसे नव्वाबको लगान प्राप्तकरनेकी आशा इकदम त्यागकरदेनी पड़ी। किन्तु प्रजाकी भलाईके लिये इसप्रकार अपना स्वार्थत्याग करनेपरभी मीरकासिम अपनी इच्छा पूरी नही करसका। स्वार्थसे अन्धे हुए कलकत्तेके अग्रेज व्यापारियोंने बडीही बेशरमीके साथ मीरकासिमके इस न्यायसगति व्यवहारका तीव्र प्रतिवाद किया। यदि वे कुछ विशेष मालके लियेही सर्वप्रधान बननेका प्रतिवाद करते तो उनकी बात किसी अशमे ठीकभी कही जासकती थी, किन्तु ऐसा न करके उन्होंने बगालमे सभी गोरोंके लिये सभी तरहके मालपर बेरोकटोक परिवारमें एक मात्र प्रधानता रखने और देशी व्यापारियोंके ऊपर भारी महसूल लगानेके लिये नव्वाब मीरकासिमसे अनुरोध करना आरभ किया। जब मीरकासिम उनके ऐसे बेआईनी अनुरोधका पालन न करसका तब अगरेजोंके साथ उसकी लडाई छिडगई। उस लडाईमे सन् १७६३ ई० मे प्रजाकी भलाई चाहनेवाले नव्वाबको गेडिया और उदय नालाके मैदानमे हारखाकर भागना पडा।

ससारके इतिहासमें इसप्रकार अन्याय पूर्ण लडाईका एकभी दृष्टात मिलेगा कि नहीं इसमें सन्देहहै। किन्तु वाणिज्य व्यवसायमे मनुष्यमात्रको जो साधरण अधिकार प्राप्तहै; उन स्वाभाविक अधिकारोंसेभी इस देशवालोको वचित करनेके लिये इस देशके उस समयके अङ्गरेज कर्मचारियोंको बहुतसे वाहियात उपाय करनेकी बात सोचकर शरीरमे कांटेसे गडने लगतेहैं। इसप्रकार वर्षों पिशाची प्रयत्न होते रहनेसे यदि इसदेशका व्यापार डूबजाय, कारीगरीकी अवनति होजाय और देशवासी किसी सहृदय कविकी कहीहुई "खेती पाती चाकरी, जहँ तहँ परत लखाय। घृणा और अपमानपर, मिलै पगार सदाय" वाली दशाको प्राप्तहोजाय तो उसमें अचरजकी कौनसी बातहै।

अङ्गरेज इतिहास लेखकोंने इसदेशके पुराने शासकोंके समयकी अराजकताके विषयको थोडा बहुत बढाकर विस्तारपूर्वक अपने २ ग्रन्थोमें लिखाहै। किन्तु इस बातका वर्णन किसीभी प्रचलित इतिहासमे नहीं पायाजाता कि उन्होने इसदेशमे आकर मनुष्यको शोभा न देनेवाले अत्याचारोंके द्वारा किसप्रकार देशमे भयानक अशातिकी आग जलादीथी। तौभी उस समयके सरकारी कागजपत्रोमें इसविषयका बहुतअच्छा और साफ चित्र खींचा हुआहै। उसी अशान्तिका जहरीला नतीजा हमलोग इस समयभी भोगरहेहैं।

बगालके तीसरे गवर्नर मिस्टर वेरल्स्टने अगरेजोंके इस जुल्मका वर्णन सक्षेपसे इस प्रकार लिखाहै।

A trade was carried on without payment of duties, in the prosecution of which infinite oppressions were committed English agents or Gomastahs, not contended with injuring the people, trampled on the authority of the Government binding and punishing the Nabab's officers whenever they presumed to interfere. This was the immediate cause of the war with Meer Cassim.—View of Bengal.

इसका यही मतलबहै कि इसदेशमे आकर अगरेज व्यापारियोके विना महसूलादिमे व्यापारकरने और देशीव्यापारियोके खूब अधिक महसूलदेनेमे लाचार होनेका कारण बगालमे विदेशी व्यापार बहुत फैलगया । इसप्रकार व्यापार फैलानेके लिये अगरेजोने देशवासियोके ऊपर बहुत अत्याचार कियाथा । अंगरेज व्यवसायियोके गुमाश्ते कवल देशवासियोंको तङ्गकरकेही सतुष्ट नही होतेथे किन्तु कम्पनीके नौकरोंका स्वार्थ सिद्धकरनेके लिये देशी सरकारकी आज्ञाकाभी उल्लघन किया करतेथे । यदि देशी राजकर्म्मचारी अङ्गरेज व्यापारियोका अत्याचार बंदकरनेका प्रयत्न करते तो गोरे रोजगारी उन्हेंभी तङ्गकरनेमें नही डरतेथे । नव्वाब मीरकासिमको इस अत्याचारके मिटानेकी प्रतिज्ञा करनेपर अङ्गरेजलोग उससे लड़ाई करनेपर उतारू होगये ।

गवर्नर वेरलस्टका कथन इसी प्रकारहै । किन्तु इस विषयमे केवल यही गवाह नहीहैं अन्य स्वदेशी तथा विदेशी गवाहियोकाभी टोटा नहीहै । स्वय नव्वाब मीरकासिमने कलकत्तेके गवर्नरके पास जो फरियादकीथी उसमें कम्पनीके नौकरोंके अनेक अत्याचारोका उल्लेख पायाजाताहै । कहनेमें अत्युक्ति नही होगी कि निषिद्धमालका व्यापार करने और नव्वाबके नौकरोंकी आज्ञा टालना उनका नित्यका कामथा अङ्गरेज व्यापारियोने इस देशमे शोरा खरीदने वेचनेका एकमात्र अधिकार प्राप्तकर लियाथा । एक व्यापारीने स्वय नव्वाबके व्यवहारके लिये कुछ शोरा खरीदाथा इसपर सन्धिको शर्त तोड़नेका बहानाकर अगरेजी कम्पनीके पटनेम रहनेवाले प्रतिनिधि मिस्टर एलिसने नव्वाबके उस व्यापारीको हथकडी बेडी कसकर कलकत्ते भेजाथा । दो अगरेज सैनिकोंके गुम होजानेपर एलिसने नव्वाबके मुगेरके किलेमे घुसकर उनकी खोज करनेके लिये अपने नौकरोंको भेजाथा । यह बात सहजही जानने योग्यहै कि जो स्वय नव्वाबके साथ ऐसा बुरा वर्ताव करनेमें नही हिचकते थे उनका जब सर्वसाधारणके ऊपर जुल्म आरम्भ होता रहाहोगा तब उसका वेग कैसा भयानक होता रहता होगा । वारनहेस्टिग्जके दो पत्रोंमे ऊपर लिखीहुई दोनो घटनाओंका उल्लेखहै । उस समयके फारसी इतिहास लेखक सैर मुताक्षरीनके वनानेवालेने अगरेजोंके जगी (सैनिक) आचरणकी प्रशंसा करते हुए अन्तमे लिखाहै "इस देशके निवासियोकी भलाईकी ओर इनकी विल्कुल दृष्टि नही है उनके अधीन प्रजा अत्याचारसे पीडित होकर चारो ओर दुःखसे भयानक हाहाकार मचातीहै, दरिद्रता और आफतसे तग होरही है । हे भगवन् ! तुम इसी दुखी सन्तानके लिये आओ और भयानक अत्याचारोसे रक्षाकरो ।"

मिस्टर टामस खिडेन हामने ठीकही कहाहै ।

Englishmen are most apt than those of any other nation to commit violence in foreign countries This I believe to be the case in India.

इस अत्याचारकी सत्यताके विषयमें स्वय नव्वाब मीरकासिमके एकपत्रमे लिखा हुआ देखा जाताहै ।—"अगरेज व्यापारी इस देशकी प्रजा और व्यापारियोके घरसे जबरदस्ती माल उठा लेजातेहैं, और यथार्थ कीमतका केवल चौथाई हिस्सा उन्हे देतेहैं । दूसरी तरफ रैयतके गले विलायती माल मढकर अनेक प्रकारके जोर जुल्मोंके द्वारा एक रुपयेके स्थानमें उनसे

पांच रुपये वसूल करतेहैं। हमारे कर्मचारियोंको वे लोग शासन और विचारका काम करने नहीं देतेहैं इस प्रकार अत्याचार होते रहनेसे देशमें दुर्दिन उपस्थित हुआहै और हमारी पच्चीस लाख रुपयेकी सरकारी आमदनी घट गई है। हम कम्पनीके साथ सन्धिकी शर्तें अब-तक पालन कररहे हैं किन्तु कम्पनीके नौकर हमें नुकसानके गड्ढेमें डालते जातेहैं।

नव्वाव मीरकासिमकी वातपर जिनलोगोंको विश्वास नहो उन्हें हम सारजण्ट ब्रेगोनामक गोरे आदमीके २६ मई सन् १७६२ ई०का लिखाहुआ पत्र पढनेकी सलाह देतेहैं। सारजण्ट महोदयने इस पत्रमें कहाहै,—"कम्पनीके नौकर अपनेको असीम शक्ति शाली समझतेहैं, कम्पनीके लिये किसी चीजको खरीदने बेचनेके समय से लोग गांव गावमे जाकर वहाके निवासियोंके इच्छाके विरुद्ध उन्हे माल खरीदने तथा बेचनेके लिये लाचार कर रहे हैं यदि कोई उनकी आज्ञाका पालन नहीं करता तो उसको बेतोसे पीटकर उसीदम जेलखाने भेजदेते हैं। केवल इतनाही नही जोर जुलमके साथ गावबालोंको इस शर्तको माननेके लिये भी लाचार किया जाता है कि गोरे व्यापारियोंके सिवाय न वे किसी दूसरेसे माल खरीदेगे और न वेचेंगे इसके सिवाय कम्पनीके नामसे कम्पनीके नौकर लोग जो अपने निजके व्यापारके लिये अत्याचार करके माल खरीदतेहैं उसका पूरा पूरा मूल्य अभागे देशवा-सियोंको नही दियाजाताहै कभी २ तो उनको मूल्य मिलताही नहींहै। इसप्रकारके अत्याचारके कारण बाकरगञ्जका जिला धीरे २ मनुष्योंसे खाली होरहाहै। जहाके प्रसिद्ध बाजारोंमेंभी जब अब अधिक चीजें मोल नही मिल सकतीहैं तौभी अङ्गरेज व्यापारियोंके चपरासी बिना रोकटोक दरिद्रलोगोंपर जुल्म करनेमें हिचकते नहीहैं। यदि जमीन्दारलोग प्रजाकी रक्षाकोलिये प्रयत्नकरते हैं तो उन्हेंभी आफतमें डालनेकी धमकी दीजातीहै, पहले सरकारी कचहरियोंमें नालिश करके न्याय पासकतेथे। इससमय अङ्गरेज व्यापारियोंके गुमाश्ते लोगही इन्साफका काम करतेहै प्रत्येक गुमाश्तेहीके घरपर अदालत लगतीहै, गुमाश्ते लोग विचारक बनकर जमीन्दार लोगोके विरुद्धभी दण्डकी आज्ञा देनेमे हिचकते नहीहैं। जमीन्दारके वर्तावसे कम्पनीकी हानि होनेका बहानाकर उनसे विनाकारण वे रुपये वसूल करतेहैं, यदि गुमाश्तेके आदमीभी उनकी कोइ चीज चुरा-लेतेहैं तो जमीन्दारके आदमियोंपरही चोरीका इलजाम लगाकर जमीन्दारसे नुकसानी वसूल करतेहैं।"

केवल बाकरगञ्जमेंही ऐसे अत्याचार नही होतेथे प्राय: बगालके सभीभागोमें इसीप्रकारके पिशाची खेल खेले जातेथे उस समयके ढाकेके कलेक्टर मुहम्मदअलीने १७६२ ईस्वीके अक्टू-बर महीनेमें अंग्रेजव्यापारियोंके अत्याचारका वर्णन करके कलकत्तेके गवर्नरके पास जो पत्र लिखाथा उसमेंभी इस प्रकारके वहुतसे अत्याचारोंका वर्णन पाया जाताहै उन्होंने लिखाथा।— "कम्पनीके नौकर ढाका और लक्ष्मीपुर विभागके निवासियोंको तमाखू, रूई, लोह आदि चीजें वाजारभावसे अधिक मूल्यमें लाचार करतेहैं। मूल्य वसल करनेमे सभी जगह जबरदस्ती की जातीहै, इसके सिवाय चपरासीके खूराकके नामसे कुछ रकम वसूल की जातीहै इसलिये यहाकी आढत नष्टसी होगईहै। लक्ष्मीपुरमे कम्पनीके कर्मचारी अपने घरके लिये लोगोंसे जबरदस्ती जमीन छीनलेतेहैं उसका मूल्यभी नहीं देते बदमाशोंकी सलाहसे सिपाही साथलेकर गोरेलोग

अनेक गांवोमे जाकर विना कारण झगडा फसाद मचातेहैं । जगह २ महसूल वसूल करनेके लिये चौकी वनाई गई है । कम्पनीके नौकर गरीव लोगोके घरमें जो पातेहैं । उसे वेचकर प्राप्त की हुई पूजी अपने पल्ले करते है इसतरहके जुल्मोसे देश सत्या-नाश होरहाहै । प्रजाके लोग न घरमे रहने पाते और न मालगुजारी देने-पातेहैं । कैद स्थानोमें मिस्टर शिवेलियरने जोरदेकर कई नयेवाजार और शिल्पशाला (फेक्टरी) स्थापित कीहै, वह आलीसिपाही भेजकर जिसे चाहताहै उसे पकड बुलाताहै और जुर्माना वसूल करताहै इस गोरेके जुल्मसे इसओरके अनेक वाजार, घाट, परगने एक वारही नष्ट होगयेहैं । ''

विलियमवोल्टसनामक उस समयके मेयर कोर्टके जजने इस अत्याचारका वर्णन औरभी भयानक रूपसे कियाहै Considerations on Indian Affairs (1772 A) नाम ग्रथमें पाठक उस वर्णनको देखसकैगे,–''उनका कथनहै बगालमे अगरेजोंके व्यापारको अत्याचारोंकी धाराप्रवाही दृश्य कहनेसे सत्यताकी मर्यादा भग नहीहोगी । इस अत्याचारका बुराफल इस देशके प्रत्येक जुलाहे और कारीगर भोगरहेहैं, देशकी प्रत्येक कारीगरीकी वस्तुएअगरेज व्यापारीने अपनी मुट्ठीमें कररक्खीहै, किसकारीगरको कितना माल कितनीकीमतमे तैयार करना होगा इस वातकोभी अगरेजलोग अपनी इच्छाके अनुसार स्थित करदेतेहैं । इसलिये दलाल, चौकीदार और जुलाहोको सिपाहियोंकेद्वारा कम्पनीके नौकरोंके पास हाजिर कियाजाताहै और मालका अन्दाज, कीमत, तथा उसके देनेके समयके विषयमें अपने सुभीतेके अनुसार शर्तें लिखवाकर उसमे कारी-गरोंके दस्तखत करालियेजातेहैं इसविषयमें कारीगरोंके सलाहकी रायकी कुछ परवाह नही की-जाती । कारीगरोंके हाथमे बयानेके नामसे पहले कुछ रुपया दियाजाताहै यदि वे उसे लेना मजूर नही करते तो वह वयाना उनके कपडोंमें जबरदस्ती वांधादियाजाताहै । इसके बाद कचह-रीके सिपाही चावुक मारमारकर उन्हें वहासे निकालदेतेहैं । अनेक कारीगरोंको इसवातपर लाचार कियाजाताहै कि वे और किसीका काम नही करसकैंगे. इसकाममे कल्पनाके वाहर हथ-पलीती कीजातीहै, पहले तो जिस भावमें जुलाहोंसे कपडे खरीदे जातेहैं वही बाजारभावसे वहुत कमहोताहै । इसके वाद '' याचनदार अर्थात् कपडेकी परीक्षा करनेवालोंके साथ षड्यन्त्रकरके अच्छामालभी खराव दरजेका गिनाजाताहै इससे अभागे जुलाहोको सैंकडा पीछे ४० रुपये नुकसान सहना पडताहै । इन हथपलीतियोंके कारण जो जुलाहे करारनामेके अनुसार माल पूरा नही करसकते उनका द्वार वेचकर उसी समय नुकसानी लीजातीहै । रेशमके कारीगर ''नागोवाड़ लोगोंके साथभी ऐसेही भयानक जुल्म कियेजातेहै. अपना रोजगार छोडदेनेमेंभी इनका छुटकारा नही होता, पीछेसे कम्पनीके नौकरलोग उन्हें मारपीट और तगकर फिरभी कपड़े बिननेके लिये लाचार करतेहैं इससे इन अत्याचारोंसे बचनेकेलिये ए अभागे अपने हाथका अगूठा काटकर कामकरनेसे वेकाम होवैठतेथे '' ।

अगरेज व्यापारियोंके अत्याचारसे बगालका केवल शिल्पवाणिज्यही नष्ट नहीं होने लगा किन्तु खेतीके कामकीभी भयानक अवनति होगई । इस विषयका वर्णन करते हुए मिष्टर वाटल्स महोदय कहतेहैं ''बगालकी प्रजामें साधारणतः सभी लोग खेती और कारीगरीकी सहायतासे अपनी जीविका चलातेहैं. कम्पनीके गुमाश्तेलोग उनके पाससे कारीगरीकी चीजें लेकर इकट्ठा

करनेके लिये जैसा अत्याचार करते हैं उससे वे अभागे इस प्रकार दुखी होगयेहैं कि अब खेतीकी तरक्की करनेकी शक्ति उनमें नहीं है, यही क्यों उनकी लगान देसकनेकी ताकतभी नष्ट होगई है। एक ओर कारीगरीकी चीजोंके लिये उनपर जैसा जुल्म होताहै दूसरी ओर जमीन का लगान वसूल करनेमें भी वैसाही होताहै। लगान वसूल करनेवाले कर्मचारियोंके अमानुषिक अत्याचारोंसे अभागिनी प्रजा लगानके रुपये इकट्ठा करनेके लिये प्रायः अपने प्राणोंसे प्यारी सन्तानतकको वेचदेनेके लिये लाचार होती है। जो लोग ऐसा पिशाची काम नहीं कर सकते उनके लिये देश छोड कर भाग जानेके सिवाय और कोई बचनेका उपाय नहीं था"

पाठक! ऐसे अत्याचार हिन्दुस्थानमें अथवा बगालमें किसीभी ऐतिहासिक समयमें क्या कभी हुए हैं? नादिरशाह सिराजुद्दौलह आदिके नाममें तो निष्ठुरताकी कलककालिमा अमिटरूपसे लीपी गई है, परन्तु क्या उन्होंनेभी कभी ऐसे अत्याचारोकी कल्पनाभी की थी? दूसरेकी बात क्या कहैं खुद कम्पनीके डाइरेक्टरही साफ २ कबूल करनेको लाचार हुए हैं कि,—

We think vast fortunes acquired in the inland trade have been obtained by a scene of the most tyrannic and oppressive conduct that was ever known in any age or country.

सन् ई०की अठारहवीं सदीके अन्तमें और उन्नीसवीं सदीके आरम्भमें बगालियोंके साथ अगरेजोंका जैसा सबन्ध होगया था सो लार्डमेकालेकी निम्न लिखित बातके पढने सेही मालूम होजायगा।—

The relations between the Bengalese and the English were such that the English were like wolves and the Bengalese like sheep, or the English were like demons and the Bengalese like men.

बाघके साथ भेड़का जो सबन्ध है बगालियोंके साथ अगरेजोंकाभी वैसाही सम्बन्ध था। अथवा यों कहना चाहिये कि यदि बगाली मनुष्य थे तो अगरेज राक्षस अथवा दानव थे. बगाली प्रजाके ऊपर इस प्रकार वर्णन करने योग्य अत्याचार देखकर उस समयके एक ब्राह्मण कुमारका हृदय विचलित होगया था, उनके और दोष चाहे जैसेही हों किन्तु वे उन्होंने इन घोर अत्याचारोंके विरुद्ध खडे होनेका प्रयत्न किया था किन्तु व्यक्तिके अभावसे हो अथवा अन्य किसी कारण से हो उनका प्रयत्न सफल नहीं हुआ. इन [illegible] विषयमें कलकत्तेकी अगरेजी कौंसिलने २४ जुलाई सन् १७५९ ईस्वीमें निम्न लिखित मन्तव्य लिखाथा,—

"Nabab Mir. Jaffier has entered into an agreement with us that he or his officers should, on no account, interfere with the acts or conduct of the Factors and Gomastas of the East India Company and that these Factors and Gomastas should be at [illegible] perfect liberty to act just as they pleased in furtherance of the commercial interests of the Company. But a wicked

named Nundcumar, notwithstanding the remonstrances of his master, the present Nabab of Murshidabad, always stands between the Company,s servants and the weavers who take advances from them. This man makes frequent complaints that the weavers are being oppressed by the servants and Gomastas of the East India Company. He has no right to make any such complaints when the Company's servants are authorised by the Nabab himself to deal with these weavers just as thay please in furtherance of their most lawful trade. Nundcumar is really an enemy of the East India Company."

अर्थात् नव्वाव मीरजाफरने हमारे साथ इस मतलवकी सन्धि कीथी कि वे अथवा उनके कर्मचारी किसीभी सववसे कम्पनीके कोठीवाला अथवा गुमाश्ताकेलोगोके काम अथवा व्यवहारमे किसीतरह हाथ नही डालसकैंगे। वे कम्पनीके नौकरोको कामकरनेकेलिये पूर्णरीति स्वतन्त्रतादेगे किन्तु नन्दकुमारनामक एक दुष्टब्राह्मण अपने मालिक अर्थात् मुर्शिदावादके नव्वावके मनाकरने-परभी कम्पनीके कर्मचारियोके काममे कदमकदमपर वाधा दियाकरताहै। जो जुलाहे अगाऊ रुपया लेतेहैं उनका पक्षकरके वह मामले खडा करताहै, यह आदमी वारम्वार फरियाद करताहै कि कम्पनीके गुमाश्ते और कोठीवाले जुलाहोके ऊपर जुल्म करतेहैं, सच पूछाजायतो इस ब्राह्म-णको इस प्रकारकी फरियाद करनेका कोई अधिकार नहींहै, क्योकि कम्पनीके नौकरोंने नव्वावके पाससे अपने मालिकोंका व्यापार वढानेके लिये जुलाहोंकेसाथ मनमाना वर्ताव करनेका अधि-कार प्राप्त करलियाहै। इसलिये नन्दकुमार यथार्थमे इस इण्डियका एक दुश्मन है।

इस प्रकार गरीव देशी कारीगरोंका दुख दूरकरनेके लिये कम्पनीसे दुश्मनीकरके अन्तको इस ब्राह्मणको फासीकी टिकटीपर चढकर प्राणत्याग करना पडा! दुखकी वात है कि, उससमयके कूट नीतिकुशल प्रभावशाली लोगोंका हृदय इस घटनासेभी वैसा विचलित नहींहुआ, देशी कारीगरोका दुख दूरकरनेके लिये उन लोगोंने कुछभी आग्रह नहींकिया, अगरेजलोग दिल्लीके नाममात्रके वेकाम वादशाहसे दीवानी सनद प्राप्तकर मनमाना देशका खून चूसने लगे, लार्ड क्लाइवने विलायतके अधिकारोंको लिखभेजा,–

No future Nabab will either have power or riches sufficient to attempt your overthrow by means either of force or corruption.

अर्थात् इसके वाद किसीभी भविष्य नव्वावको इतना अधिकार अथवा धन वल नहीं दिया जायगा जिससे इस देशमें हमलोगो (ईष्टइण्डियाकम्पनी) की शक्ति नष्टहोसके।

किन्तु इसप्रकार खून चूसते रहनेपरभी कम्पनी पूर्णरूपसे निर्विघ्न नहीहोसकी, वुद्धिमान पेशवा माधवरावकी आज्ञासे इस समय महादजी सेंधिया वङ्गालसे अगरेजोको निकालकर वहां हिन्दु राज्य स्थापित करनेकेलिये चढाई करनेकी तैयारी करतेथे। लाला सेवकराम नामक महाराष्ट्रोंके दूतके

साथ जगमोहनदत्तनामक एक गुप्त बातचीत चलरहीथी अगरेजोने इस खबरको पाकर महाराज नवकृष्णको जगमोहनके कामोंकी गुप्तरीतिसे जाच करनेके लिये जासूस (Spy) नियुक्त किया । अन्तमें जगमोहन पकडकर जेल भेजागया इस घटनासे अगरेज लोग अपनी अन्तिम परिणामको सोचकर कैसे डरेथे उसका पता वारनहेस्टिंग्जके निम्नलिखित कथनसे होजायगा ।—

much fear that it is not understood as it ought to be how near the Company's existence has on many occasions vibrated to the edge of perdition and that it has at all times been suspended by a thread so fine that the touch of chance might break, or the breath of opinion dissolve it and instantaneous will be its fall whenever it shall happen. (British India by R. M. Frazar).

अगरेज पण्डित लार्डमेकालेनेभी उस समयकी दशाकी आलोचना करतेहुए लिखाहै,—

At what was this confusion to end? Was the strife to continue during centuries? Was it to terminate in the rise of another great monarchy? Was the Mussalman or the Maratha to be the Lord of India? Was another Babar to descend from the mountains and to lead the hardy tribes of Kabul and Khorasan against a wealthier and less warlike race? None of these events seemed improbable.

किन्तु प्रसिद्ध इतिहासलेखक हन्टरसाहब कहतेहैं,—

So far as can now be estimated, the advance of British power at the beginnig of the present (19th) Century, alone saved the Moghal Empire from passing to the Hindus...The British won India not from the Moghal but from the Hindus

इन होनेवाली घटनाओंमेसे यदि कोईभी एक सच होजाती तो हिन्दुस्थानका इतिहास कैसे स्वरूपको धारण करता सो निश्चय रूपसे नही कहा जासकता । तब इसमे सन्देह करनेका कोई विशेष कारण नहीं देखाजाता कि इस बीसवीं सदीमे मरहटे अथवा मुसल्मानोंके अधीन रहकरभी हिन्दुस्थान, तुर्किस्तान अथवा जापानके सामान पश्चिमी ज्ञानविज्ञानको सीखनेमे समर्थ होते हन्टर साहबके कथनको औरभी साफ साफ समझनेके लिये बाजीराव पेशवाका जीवन चरित्र पढना आवश्यकहै । आजकलके दिनोंमें मुगल, पठान अथवा मराठोंके शासनकी बात सुनतेही बहुतोंकी छाती धडकने लगतीहै । इस प्रकारका अगर हमारे ज्ञेता जातिके लिखे हुए निन्दित मायावी इतिहासोके देखनेसे होताहै । राजनैतिक मतलब गाठनेके लिये अगरेज इतिहास लेखकोंने अपने पहलेके हिन्दू, मुसलमान राजाओंके शासनकालको अत्याचारी सिद्धकर-नेका भरसक प्रयत्न कियाहै किन्तु यह लोग पाठकोंको इसबातके समझनेकी सुविधा नहीं देते कि एकराजके नष्ट होने और दूसरेके उदय होनेके समय सभीदेश अशान्तिपूर्ण और जातीय उन्नतिके विपरीत होजातेहैं । मुगल राज्यके अधःपातहोने और महाराष्ट्र साम्राज्यके स्थापित

होनेके बीचके समयमें जैसी स्वाभाविक अशान्तिकी सूचना हुईथी उसीको अगरेज लेखक देशी शासनका नमूना कहते हुए आजकलके अंगरेजी शासनके साथ उसकी तुलना किया करतेहैं। बडौदेके महाराज श्रीसयाजीराव गायकवाड महोदयने सन् १९०५ की ६ जौलाईको विलायतकी ईष्टइण्डिया एसोसियेशनमें हैदराबादराज्यकी आलोचना करतेहुए अगरेज लेखकोंके इस व्यवहारपर सर्व साधारणका ध्यान खींचाथा। उन्होंने कहाथा.–

Such times of crisis, following the overthrow of one Empire and preceeding the establishment of another, were not unknown in other countries besides India It was a mistake to take this period of history as affording evidence that the people of India were not capable of managing their own concerns.

सारांश, नये और पुराने साम्राज्यके सन्धिस्थलमे पडकर अठारहवीं सदीमे हिन्दुस्थानी समाजको किसी अशमे अशान्ति भोगकरनेमें लाचार होना पडाथा इससे इस बातका कहना बिल्कुल मूर्खता है कि उसमे शासनशक्तिका अभावथा अथवा हिन्दुस्थानी राजाओंकी शासन पद्धति दोष पूर्ण थी। ※ २२ नवम्बर सन् १८५० ई० मे हिन्दुस्थानकी दशा जाननेवाले गुणग्राही राजकर्मचारी सरजानसलीवन साहबने जनरल बृगस साहबको जो पत्र लिखाथा उसमेंभी यही भाव दीख पडताहै। उन्होने लिखाथा,–

※ "It has been said that Great Britain can rule India better than India can rule herself A sufficient answer to this claim would seem to be India's increasing famines, increasing impoverishment and increasing discontent of her people. But another answer also is seen in the relative condition of Britain-ruled India and self-ruled Japan When the British came on the scene, India was the leader of Asiatic civilization , she was far in advance of Japan. Time has passed. India has been ruled by a foreign power ; Japan has governed herself, and shaped her own development. What has been the result ? Which country now is in the advance. India ? or Japan."—The Causes of Famine in India By Rev. J T. Sunderland M. A.

※ हिन्दुस्थानी जिसमें पश्चिमी ढंगकी आत्मशासन प्रणाली प्राप्त करनेके योग्य होवै उसपर ध्यान रखकर लार्डमेकालेके बतलाये हुए मार्गके अनुसार हिन्दुस्थानका शासन कार्य्य चलनेसे हिन्दुस्थानी शासन कार्य्यमे पार्लियामेन्टकी कडी नजर रहनेसे अगरेजोंके शासनमे हिन्दुस्थानकी ऐसी अवनति कभी न होती, बीसवीं सदीमेभी हिन्दुस्थान विशाल एशिया महाद्वीपमे सभ्यताका मुकुट रहसकता जापानभी इससे अधिक बढ सकता या नही इसमे सन्देहहै। ※

Pray do not give the enemy an advantage by speaking in unqualified terms of the bad government of our predecessors. Considering the incessant wars and revolutions in which they had been engaged for a full century after the Moghal Empire broke up, it is quite a wonder that there was any government at all. Yet in the midst of incessant fighting the civil institutions were undisturbed and almost everywhere the country was flourishing. Since our last good piece of work, when we put down the Pindary ravages in 1818, we have held India with such an iron grasp that hardly a shot had been fired in our territory. But what have we made of this quiet interval? The Government is more in debt and I doubt if the people are so rich

अर्थात्—हमारी यही प्रार्थना है कि अपने पहलेके महाराष्ट्र शासनकी निन्दाकरके शत्रुओंको कडीबात कहनेका मौका कृपाकर न दीजियेगा। मुगलराज्यके नष्ट होनेपर पूरी एकसदी तक महाराष्ट्र लोगोके लडाई झगडे और अशान्ति गदरोमे लगेरहनेकी बात विचारनेसे मनमें यही आताहै कि इतनी गडबडियोंके बीचमे भी इस देशमे किसी सरकार अथवा राज्यप्रबन्ध का बना रहनाही आश्चर्यकी बातहै तो भी इस प्रकारके लडाई झगडे होते रहने परभी देशके धन धान्य और सामाजिक प्रबन्धोंमे कुछभी गडबडी नहीं होने पाई देशके प्रायः सभी भागोकी उन्नति हो रहीथी, सन् १८१८ ई०मे हम लोगोने पिण्डारियोंका नाश करके आखीर अच्छा काम कियाहै किन्तु उसके पीछे इस देशमें हमारा कठोर शासन आरम्भ हुआहै तबसे यद्यपि एकभी बन्दूकका शब्द कहीं सुना नहीं जाता तौभी इस बडी शातिके समयमें हमने क्या कियाहै? हिन्दुस्थानकी सरकार पहलेकी अपेक्षा अधिक कर्जमे जकड़ गयीहै देशके निवासीभी वैसे धनवान हुए हैं या नहीं इसमे भी हमें सन्देह है।—

पाठक क्या आप जानतेहैं कि इन लडाई झगडों और अशान्ति गडबडियोसे घिरेहुए हिन्दुस्थानमे लोगोंकी सुखशान्ति कैसी निर्विघ्नथी? समझदार अगरेज राजकर्मचारियोंने इस विषयकी जाचकर निश्चय कियाहै कि इस देशके देहातो (विलेजकम्युनीटीज) का अच्छा प्रबन्धही इसका मुख्य कारणहै। सन् १८१९ ईस्वीमे एलिफेन्सटनसाहबने लिखाथा,—

Their village communities are almost sufficient to protect their members if all other government are withdrawn

सन् १८३० ईस्वीमें सरचार्लसमेटकाल्फने लिखाथा,—

The village communities are little republics, having nearly everything they want within themselves They seem to last where nothing else lasts Dynasty after dynasty tumbles down, revolution succeeds to revolution. Hindu, Pathan, Moghul, Marhatta,

Shikh, English are masters in turn, but the village communities remain the same... ..The union of the village communities each one forming a little seperated State in itself, has, I conceive, contributed more than any other cause to the preservation of the people of India through all revolutions and changes which they have suffered and it is in a high degree conducive to their happiness and to the enjoyment of great portion of freedom and independence.—

इतिहास जाननेवाले पाठकोसे छिपा नहीहै कि अङ्गरेजोंके आनेके पहले अलीवर्दीखाके शासनकालमे बगाल कैसा समृद्धिशालीथा । विधर्म्मीराजाओमे अलीवर्दीखाके समान अच्छे शासनकर्ता बहुत थोडेही हुएहैं मुसल्मानी शासनकी विचारपद्धतिको हमलोग " काजीका न्याय कहकर हंसी उडातेहैं, किन्तु उस समय योरोप तथा पृथ्वीके अन्य स्थानोमें जैसी विचारपद्धति प्रचलितथी उसके साथ मिलान करनेपर इस देशकी मुसल्मानी विचारपद्धतिकी प्रशसा विनाकिये रहा नहीं जासकता इसबातको राजा विनयकृष्णदेवने अपने The Early History and Growth of Calcutta. नामक ग्रथमे दिखलायाहै किन्तु अगरेजोंने इसदेशमे सुप्रिमकोर्ट स्थापितकरके जो पश्चिमी विचारपद्धति चलाई उसका वर्णन करतेहुए लार्डमेकालेने कहाहै,—

'No Mahratta invasion has ever spread through the province such dismay as this inroad of English lawyers. All the injustice of the former oppressions, Asiatic or European, appeared as a blessing when compared with the justice of the Supreme Court."

अर्थात् अङ्गरेज वकील और वारिष्टरोके उपद्रव और सुप्रिमकोर्टके विचार कार्य्यसे देशके लोग ऐसे तङ्ग होउठेथे कि उसकी अपेक्षा पिण्डारियोंके हमले अथवा कम्पनियोंके नौकरोंके भयानक अत्याचारभी उनके आगे आनन्ददायी मालूम होने लगेथे । यदि इस देशमें अङ्गरेजोंका शासन प्रचलित न होता तो हिन्दुस्थानकी जैसी अवस्था होती उनका अनुमान मेकाले और हन्टर साहबने कियाहै उसका उल्लेख हम पहलेही करचुकेहैं । इससमय इसविषयमे बडौदेके सुशिक्षित महाराजकी श्रीसयाजीराव महोदयकी रायभी लिखने योग्यहै । पहले कहीहुई इस्टइण्डिया एसोसियेशनकी वक्तृतामे उन्होंने कहाथा,—

The subject requires delicate handling from me, because the least mistake may be misunderstood.. . .I think if the British and French Government had not come on the scene, it would have been an interesting problem which it is now useless to discuss, what would have become of India—whether many of the States would have vanished, whether some of them would have established a supremacy over others or whether they would have been formed into United States, something like those of America.

महाराज श्रीसयाजीरावका अनुमानहै कि हिन्दुस्थानमे पश्चिमी जातियोका अधिकार न होनेसे यातो इसदेशके इससमयके कई बचेखुचे राज्योंपर किसी एकका अधिकार होता या अधिकाश छोटे राज्य नष्टहोकर कई बडे राज्य बनते अथवा सब छोटे राज्योंको मिलाकर अमेरिकाके युनाइटेडस्टेट्के समान इसदेशमे भी एक विशाल सयुक्त राज्य स्थापित होता। किन्तु वारनहेस्टिंग्ज़की आशका कार्य्यमें परिणत न होनेसे हिन्दुस्थानके इतिहासने दूसराही स्वरूप धारणकिया। जो हो बगालके जिन महापुरुषोंने सिराजुद्दौलाकी उद्दण्डतासे विचलित होकर उसे गद्दीसे उतारनेके लिये विकट कौशलजाल फैलाया था वे अगरेज बनियोंके हाथसे लाखो स्वदेशियोकी भयानक दुर्दशा देखकरभी विचलित न हुए। इस बातका जानना बहुतही कठिनहै कि कम्पनीके नौकर अत्याचार प्रियतासे सिराजुद्दौलाको हराकर किसप्रकार बगालके मुखिया लोगोंकी घृणासे अपनेको बचासकतेथे। सौभाग्यसे अपने नौकरोके अत्याचार दूरकरनेके लिये अन्तमें कम्पनीके डाइरेक्टरोंनेही ध्यानदिया, क्योकि अगरेजोका एक २ दल हिन्दुस्थानमे आकर थोडेही दिनोमे बहुतसा धन कमाकर अपने देशको लौटजाताथा यह बात विलायतके नौकरोंकोही असह्य होचुकी इसलिये इस प्रबल ईर्षाके वशमें होकर कम्पनीके नौकरोंकी कमाईका माल कांटोंसे रूधनेके लिये वे प्रयत्न करनेलगे झुण्डके झुण्ड इगलेण्डनिवासियोंने कम्पनीके डाइरेक्टरोंके आफिसमें जाकर उनके हिन्दुस्थानी नौकरोके लालच, अत्याचार, और जुल्मका कडा प्रतिवाद करने लगे इससे लाचार होकर डाइरेक्टर लोग अपने कर्मचारियोको घूँस न लेने और अत्याचार न करनेकी कडी २ आज्ञा देनेलगे किन्तु दुष्टकर्मचारियोंके न रुकसकने योग्य धन कमानेका लालच और अत्याचार प्रियतासे डाइरेक्टरोंकी आज्ञाका कदम २ पर उल्लघन होताथा जोहो अन्तमें उनके बहुतदिनोंसे प्रयत्न करते रहनेसे धीरे २ अत्याचार बहुत कुछ घटगया।

इसप्रकार समय पाकर कम्पनीके नौकरोंका अत्याचार तो दूर हुआ परन्तु बङ्गालके कारीगरोंका दुर्दैव दूर नहींहुआ। क्योंकि १७ मार्च सन् १७६९ ई० में कम्पनीके डाइरेक्टरोने यहाके कर्मचारियोंको नया अत्याचार करनेको लागा लगानेकी आज्ञादी। उन्होंने कहा "बगालके सभी रेशमके काम करनेवाले कारीगरोंका स्वतन्त्रतासे व्यापार करनेका अधिकार छीन लेना होगा, इसके बाद जिसमें कोई अपने घरमे स्वतन्त्रतासे रेशमी कपड़ा बनाकर जीविका न चलासके उसपर ध्यान देना आवश्यक है। कारीगरोंको कम्पनीकी फेक्टरीमें जाकर काम करनेके लिये लाचार करना होगा, जो स्वतन्त्रतासे रेशमका व्यापार करेंगे उन्हें कडा दण्ड देना होगा।" इस बातको एक १० वरसका लड़का भी समझ सकेगा कि इस प्रकार अत्याचार पूर्ण आज्ञा देनेसे इनका यथार्थ उद्देश्य बगालकी रेशमकी कारीगरी नष्ट करने और विलायतके कारीगरोंकी उन्नतिका मार्ग चौडा करनेका था। इस प्रकार बहुत दिनोंतक न कहने योग्य अत्याचारोंके कारण देशकी शिल्पवाणिज्यकी अवनति होगई। अगरेज व्यवसाइयोने आईन सगत प्रतिद्वन्द्विताके बदले इस प्रकार पाशविक बलकी सहायतासे हिन्दुस्थानकी शिल्प वाणिज्यका नाशकरदिया। इस देशके निवासियोंका अपार

धन अन्याय पूर्वक लूटकर विलायतके व्यापारियोंका धन बढ़ायागया, यूरोपकी अनेक जातियाँ इसी प्रकार दूसरोंका धन हरणकर वर्तमान समृद्धिदशाको प्राप्त हुईं। *

देशी कारीगरीकानाश।

The cotton and silk goods of India up to the period (1813 A. D.) could be sold for a profit in the British market at a price from 50 to 60 per cent lower than those fabricated in England. It consequently became necessary to protect the latter by duties of 70 and 80 per cent on their value or by positive prohibition. Had this not been the case, had not such prohibitory duties and decrees existed, the mills of Paisley and Manchester would have been stopped in their outset, and could scarcely have been again set in motion, even by power of steam. They were created by the sacrifice of the Indian manufacture. Had India been independent she would have retaliated, would have imposed prohibitive duties upon

---

* Much of modern European national prosperity is based upon the plunder of nations representing ancient civilisations. Spain robbed South America, England from Elizabeth to Cromwell seized as many of the Lusitanian treasure ships on their way to Spain as she could and appropriated what they carried.

England's industrial supremacy owes its origin to the vast hoards of Bengal and the Karnatic treasure being made available for her use Before Plassy was fought and own, and before the stream of treasure began to flow to England, the industries of our country were at a very low ebb. Lancashire spinning and weaving were on a par with the corresponding industry in India so far as machinary was concerned, but the skill which made Indian cotton a marvel of manufacture was wholly wanting in any of the Western nations. As with cotton so with iron, industry was in Britain at a very low ebb, alike in mining and in manufacture Modern England has been made great by Indian wealth, wealth never preffered by its possessor, but always taken by the might or skill of the stranger.

Prosperous British India.

British goods and would thus have preserved her own productive industry from annihilation. This act of self-defence was not permitted to her, she was at the mercy of the stranger. British goods were forced upon her without paying any duty and the foreign manufacturer employed the arm of political injustice to keep down and ultimately strangle a competitor with whom he could not have contended on equal terms." Mill's History of British India, (Wilson)

जो लोग समझते हैं कि भाफसे चलनेवाली कलोंकी सहायतासे बने हुए मालके साथ प्रतिद्वन्द्विता न कर सकनेके कारणही हमारे देशकी कारीगरीकी हाथसे बनी हुई चीजें धीरे२ नष्ट होगयीहैं, वे इतिहास लेखक विलसनकी ऊपर लिखी हुई बातको विचारनेपर अपनी भूल समझ सकेंगे । इसके पहले हमने देखाहै कि पलाशी युद्धके पीछे गोरे व्यापारियोंके भयानक अत्याचारोंसे बगालके कारीगर और रोजगारी लोग बहुतही दुःखित होगये थे । सन् १७६९ ई० मे कम्पनीके कर्तारोंने उन जुल्मोको बन्दकर नये अत्याचारोंका लागा लगवाया था । उनकी आज्ञासे बगालके अधिकांश कारीगर स्वतन्त्रतापूर्वक कपडे बुननेके अधिकार से रहित हुए ।

इन अत्याचारोंसे बगालका शिल्पवाणिज्य बहुत कुछ मुरदार होजानेपरभी एकदम नष्ट नहीं होगया । बहुत दिनोंतक अत्याचार सहते रहने परभी बगालके कारीगर जो कपडे बनाकर विलायत भेजतेथे उन्हें वहांके बाजारोंमे विलायती कारीगरोंके बनायेहुए मालकी अपेक्षा सैकडापीछे ५० साठ रुपये कम मूल्यमें बेचनेपरभी यथेष्ट लाभ रहताथा । अङ्गरेज व्यवसायी इस बातको सह नहीं सके । वे हिन्दुस्थानी मालपर भारीसे भारी महसूल लगवाकर दूसरी और इसदेशमे विना महसूलदिये माल भेजनेका प्रबन्ध कर इगलेण्डके व्यापारको बढानेपर मुस्तैद हुए । उनके सोच विचारका मुख्य यही विषय था कि किसप्रकार हिन्दुस्थानमें विलायती मालकी कटती बढ सकतीहै । इसीलिये पार्लियामेंटके हाउस आफकामसकी आज्ञासे बनाये हुए । एक कमीशनके द्वारा वारनहेस्टिङ्गज, सरटामस मनरो तथा सरजान मैलकम, जानस्ट्राची सरीखे हिन्दुस्थानकी दशा जाननेवाले लोगोंसे प्रश्नपूँछे जानेलगे ।—

From your knowledge of the Indian character and habits, are you able to speak to the probability of a demand for European commodities by the population of India, for their own use ?

अर्थात् हिन्दुस्थानियोंके स्वभाव तथा आचारणके सम्बन्धमें आपको जो कुछ जानकारीहै उसके अनुसार क्या आप कहसकतेहैं कि हिन्दुस्थानी लोगोंके लिये उनके निजके व्यवहारके लिये यूरोपकी बनी चीजें खरीदना सम्भवहै कि नहीं ?

इस प्रश्नके उत्तरमें सभीने कहा, "हिन्दुस्थानकी बनीहुई चीजेंही हिन्दुस्थानकी आव- श्यकता पूरी कर सकतीहैं वे बिल्कुल विलासप्रिय नहींहैं हिन्दुस्थानी मजदूर महीनेमें [illegible]

रुपयेसे अधिक नहीं पैदा करसकते सारांश, भारतवासियोंमें विलायती चीजोंके आदर होनेकी कुछभी सम्भावना नहीहै ।" टामस मनरोने उसीसमय कहाथा हिन्दुस्थानी माल विलायती मालकी अपेक्षा कईगुणा अच्छा होताहै एक हिन्दुस्थानी शालको हम सातवर्षसे काममें लारहेहैं, किन्तु, इतने दिनो उपयोगमें लानेपरभी उसमें कोई विशेष परिवर्त्तन नही हुआहै । सच बात तो यहहै कि यूरोपियन शाल मुफ्तमें इनाम मिलनेपरभी हम उसका उपयोग करना नहीं चाहते ।

इसप्रकार निराशाजनक उत्तर पाकरभी विलायती व्यापारी चुप नही हुए । उन्होंने यह स्वतन्त्र व्यवसायकी प्रतिद्वन्द्वितामें असमर्थ होकर राजशक्तिका आश्रय लिया हिन्दुस्थानी मालपर जबरदस्त महसूल लगवाकर उसका बल तोडदेनेका आईन उन्होंने बनवालिया। इसके पहलेही अनेक स्थानोमें स्वतन्त्ररूपसे कपडे बुननेका काम बन्द होचुकाथा । अब विलायतमें जानेवाले हिन्दुस्थानी कपडोपर सैंकडा पीछे ७० से ८० तक महसूल लगायागया । इधर हिन्दुस्थानमें आनेवाला विलायती कपडा विनामहसूल दियेही चारों तरफ फैलने लगा । इसप्रकारके घृणित आचारणसे लज्जित न होकर अङ्गरेज व्यापारी साफ साफ कहते हैं कि यह काम किसीतरह बुरा नहीहै इसे हम अपने देशीमालकी तरक्की करनेके लिये रक्षाका महसूल समझतेहैं ।–

(We) Look upon it as a protecting duty to encourage our own manufactures."

मालावार प्रान्तसे क्यालिको नामकी छींटका कपडा पहले विलायतमें बहुत जाताथा सन् १७७६ ईस्वीमें विलायतमें पहले पहल इस कपडेके बनानेका कारखाना सावितहुआ । सन् १७०० ईस्वीमें इस नयी कारीगरीकी सहायताके लिये विलायती जुलाहोंके दरख्वास्त करनेपर पार्लियामेन्टने कानून बनाया कि हिन्दुस्थानकी क्यालिको बिना रोकटोक विलायतमें न जानेपावे । उसके हरएक गजके लिये ३ पेंस यानी डेढ़आना टेक्स जारीहुआ । साथही साथ सफेद क्यालिको ऊपरभी टैक्स लगायाथा । दो वर्षके पश्चात् पार्लियामेण्टने विलायती जुलाहोंकी प्रार्थनापर क्यालिको छींटका महसूल दूना यानी हरगजपर तीनआना करदिया । सन् १७२० ईस्वीमें कानून बना कि जोलोग विलायती हिन्दुस्थानी क्यालिको बेचेंगे उसपर '२० पौण्ड यानी' २००) रुपया और जो खरीदेंगे उनपर ५०) रुपया जुर्माना होगा । *

और और चीजोंपर कैसा महसूल लिया जाताथा सोभी देखिये,–

घिवकुंवार	सैकडे	७०)२	से	२८०)
हींग	"	२३३)	से	६२२)
इलायची	"	१५०)	"	२६६)
काफी	"	१०५)	"	३७३)
कालीमिर्च	"	२३६)	"	४००)
चीनी	"	९४)	"	३९३)
चाय	"	६७)	"	१००)

* Useful Arts and Manufactures of Great Britain pp. 363.

बकरेकी ऊनकी चीजें ”	८४॥≈)	”
चटाई ”	८४॥≈)	
मसलिन (तनजेब) ”	३२॥)	
क्यालिको ”	८१)	
कपास फी मन प्रायः	१५)	
कपासकाकपडा सैंकडे	८१)	
लाख ”	८१)	
रेशम ”	२।॥) और फी सेर	४)

रेशमी कपडा विलायत भेजना एकबारही निषिद्ध था। यदि कोई रेशमी कपडा विलायत में मगाताथा तो उसे विलायतके बन्दरमें उठने न देकर उसीघडी लौटते जहाजपर भारतमे भेज दिया जाताथा।

एकतो कम्पनीकी कोठीमे देशी कारीगरोंको जबरदस्ती पकड लेजाकर कामकरनेको लाचार करनेसे देशी कारखाने नुकसान उठारहे थे, तिसपर देशी चीजोपर विलायतसे उस प्रकार कडा महसूल जारी होनेसे हिन्दुस्थानी शिल्प और वाणिज्यकी मानो जड कररहीथी।

इस प्रकार अनुचित उपायसे हिन्दुस्थानी शिल्पकी जड काटीगयी और उसकी जगह हिन्दुस्थानमें विलायती माल लायागया। इसका फल यह हुआ कि सन् १७९४ ई०मे जिस भारतमे १५६ पौण्डसे अधिक विलायती सूती कपडा नहीं आयाथा वही सन् १८०९ ई०में १ लाख १८ हजार ४ सौ पौण्डसेभी अधिक मूल्यका विलायती कपडा घुसायागया। इस प्रकारसे दिनपर दिन भारतमें विलायती मालकी वृद्धि होने लगी। दूसरी ओर विलायतमें तथा दूसरे देशोंमें हिन्दुस्थानी मालकी कटती दिनपर दिन घटने लगी। नीचे लिखे हुए हिसाब को देखनेसे मालूम होजायगा कि देशी शिल्पकी अवनति कैसी जल्दी होने लगी।

विलायतमें हिन्दुस्थानी चीजोकी रफ्तनीका हिसाब ।

रूई।

सन् १८१८ ई०	१२७१२४ गांठ।
सन् १८२८ ई०	४१०५ गाठ।

कपड़ा।

सन् १८०२ ई०	१४८१७ गांठ।
सन् १८२९ ई०	४३३ गाठ।

लाख।

सन् १८२४ ई०	१७६०७ मन।
सन् १८२९ ई०	८२५१ मन।

किन्तु कच्चेनील और कच्चे रेशमकी रफतनी बढने लगी। साथही साथ कडे महसूलके लिये रेशमी कपड़ेकी कटती विलायतमें घटने लगी।

इस समयभी विलायतमें कारीगरोंकी अर्जीदरख्वास्त आदिकी कमी नहीं हुई। भारतवासियोंकी ओर से भी उस अनुचित महसूलको हटाने व घटानेके लिये बहुतेरीवार अर्जियां भेजी गयी थीं। बंगालके नामी रामगोपालघोषने देशी चीनीका महसूल घटानेके लिये विलायतमें दरख्वास्त भेजीथी। कई अंगरेज व्यवसायियोंनेभी उसपर दस्तखत करादियेथे। किन्तु अंगरेज कर्त्ताओंने अपने वर्त्तावसे सिद्ध करदिया कि 'भिक्षाया नैव च नैव च।'

सन् १८१६ ई०तक केवल एक ईष्टइण्डिया कम्पनीही विलायतसे यहां माल मगातीथी और यहांसे वहां भेजतीथी। उक्त सन्में इंगलैण्डके सभी व्यवसायियोंको भारतमें व्यवसाय करनेका अधिकार मिलगया। सो विलायती मालसे क्रमशः भारतकी दुकानें भरनेलगीं। सन् १८२९ ईस्वीको भारतमें प्रतिवर्ष सबसमेत ६५॥ लाख पोण्ड यानी ६॥ करोड रुपयेका विलायती माल आया।

भारतकी कारीगरी और वाणिज्यको विगाडनेके लिये ईष्टइण्डिया कम्पनी केवल उक्त अनुचित उपायोंको अवलम्बन करही चुप नहीं हुईथी। उसने भारतकीभी कारीगरीपर कडामहसूल जारी करदियाथा। लार्ड वेंटिंगके समयमें इस विषयपर जो अनुसन्धान हुआथा उससे प्रकट हुआथा कि विलायती कपडे भारतमें फी सैंकडे २॥) रुपया महसूल देकर बेचेजातेथे, किन्तु भारतवासी अपने देशमें अपने व्यवहारके लिये जो कपडे बनातेथे उन्हें फी सैंकडे १७॥) रुपया महसूल देकर लेना पडताथा। देशी चमडेकी चीजें देशमेंही व्यवहारकरनेके लिये गवर्नमेन्टको उनपर फी सैंकडे १५) रुपया महसूल देना पडताथा। देशी चीनीपर विलायती चीनीसे फी सैंकडे ५) रुपये अधिक महसूल वसूल किया जाताथा। इसप्रकारसे भारतमें खपती हुई भारतकी प्रायः २३५ प्रकारकी कारीगरीकी वस्तुओंपर बडाही अनुचित महसूल (Inland duties) जारी कियागयाथा। प्रायः ३० वर्षतक इसप्रकार कडामहसूल देनेको लाचार होनेसे भारतके कारीगर और व्यवसायी यदि गहरीसे गहरी अवनतिकी दशामें पहुँचजावें तो आश्चर्यही क्याहै।

इन सब ज्यादतियोंसे विदेशोंमें हिन्दुस्थानी कारीगरीकी वस्तुओंकी रफ्तनी घटनेलगी। अमेरिका, डेनमार्क, स्पेन, पुर्तगाल, मोरस, तथा एशियाखण्डके दूसरे देशोंके साथ हिन्दुस्थानी कारीगरोंका पूर्वसम्बन्ध मिटने व घटने लगा सन् १९०१ ई० में इसदेशसे अमेरिकामें १३६३३ गाठ कपडे गयेथे, सन् १८२९ ई० मे वह संख्या घटकर केवल २५८ गांठकी होगयी। सन् १८०० ईस्वीतक प्रतिवर्ष डेनमार्कमें कमवेश १४५० गाठ कपडोंकी रफ्तनी होतीथी, किन्तु १८२- ईस्वीसे आगे उसकी जगह १५० गांठ कपडेसे अधिककी रफ्तनी उसदेशमें यहांसे फिर कमी नहींहुई। सन १७९९ ईस्वीमें हिन्दुस्थानी कारिगर और व्यवसायी ९७१४ गाठ कपडे पूर्तगालमें भेजतेथें, किन्तु सन् १८२५ ई०के आगे वे फिर कभी १०००गांठसे अधिक उस देशको नहीं भेजसके। सन् १८२० ईस्वीतक अरब और ईरानकी खाडीके तटवाले देशोंमें ४००० से ७००० तक कपडोंकी गाठ भारतवर्षसे भेजे जातेथे, किन्तु सन् १८२५ ई०के आगे फिर कभी उनदेशोंमें २००० गाठसे अधिक कपडा नही भेजा जासका। मुहम्मद रजाखांके दिनों बंगाली जुलाहे ६ करोड बंगालियोंकी लज्जाका निवारण करतेहुएभी प्रतिवर्ष १५ करोड़ रुपयेके कपडे विदेशोंमें

भेजतेथे। आजकल वे ३ लाख रुपयेके कपडेभी नही भेज सकतेहैं। हिन्दुस्थानी जुलाहोंके स्वाधीन व्यवसायमे बाधादेकर अगरेजोंने इस देशकी कारीगरी और वाणिज्यका कैसा सत्यानाश कियाथा। वह उक्त हिसाबोंको देखनेसे सबलोग भली भांति समझ सकेंगे।

अठारहवीं सदीके अन्तिमभागमे विलायतके द्रव्यनैतिक पण्डितलोग वहां बिना किसीप्रकार महसूलके सबदेशोंसे सबप्रकार वस्तु मगानेका कानून जारी करनेके लिये आग्रह प्रकट करतेथे, किन्तु, जबतक हिन्दुस्थानी शिल्प और वाणिज्यकी जड एकबारही न काट डालीगयी तबतक अगरेज व्यवसायियोने अपने देशमे वह कानून जारी होने नहीं दिया। सन् १८३६ ईस्वीमें अवश्यही भारतमें कानून बनाकि भारतमे बनीहुई वस्तुओंको भारतमे खपानेके लिये कोई महसूल देना नहींपडेगा। किन्तु तबतक हिन्दुस्थानी कारीगर और व्यवसायियोके शरीरोंसे सारा लोहू निचोड लियागयाथा एक ओर तो यह सत्यानाश हुआ था और दूसरी ओर रेलवेका विस्तारकर नाव और दूसरीप्रकार सवारियोंके चलानेवालोंकाभी सत्यानाश कियागया। नगरोसे बडीबडी दूरके गांवोंमेभी विलायती माल बिना रोकटोक भेजनेका प्रबन्ध होनेसे देशकी दारिद्रता बढनेलगी।

डाक्टर बुकानन्दने कम्पनीकी आज्ञासे उत्तरी भारतकी कारीगरी ओर वाणिज्यकी दशा जांचनेके लिये सन् १८०७ ई०मे पटना, शाहाबाद आदिस्थानोंका पर्य्यटन कियाथा। उनकी जाचसे मालूम हुआथा कि उससमय पटना जिलेमें धानका भाव फी मन १॥।) था। उस समय २४०० बीघे जमीनमे रूईकी और १८०० बीघेमें ईखकी खेती होतीथी। वहा ३३०४२६ औरतें केवल सूत कातकर अपनी जीविका करलेती थीं। दिनभरमें केवल कई घण्टे कामकर वर्ष भरमें १० लाख ८१ हजार पांचरुपये नफा पातीथीं। अगरेजीकी ज्यादतियोंसे महीनसूतकी रफ्तनी रुकनेके साथही साथ उनका व्यवसाय घटनेलगा तथा जीविकाकी जड कटनेलगी। वहां जुलाहे कपडे बुनकर वार्षिक खर्च निर्वाहकर साढ़ेसातलाख रुपया नफा पातेथे। फतूहा, गया, नवादा आदिस्थान टसरके व्यवसायके लिये प्रसिद्धथे। शाहाबादमें १५९५०० स्त्रिया प्रतिवर्ष १२॥ लाखरुपयेका सूत काततीथीं। उसजिलेमे ७९५० करघे चलतेथे, जिनसे १६ हजाररुपयेके कपडे बनतेथे। इसके अतिरिक्त कागज सुगन्धीवस्तुए, तेल, निमक और शराब आदि वस्तुओंको व्यवसायकी दशाभी बडीही उन्नतिपरथी। भागलपुरमें चावलका भाव फी रुपये ३७॥ सेर था। उस समय उस जिलेमे १२००० बीघे जमीनपर कपासकी खेतीहोतीथी। वहां टसर बुननेके लिये ३२७५ करघे और कपडा बुननेके लिये ७२७९ करघेथे गोरखपुरमें १७५६०० स्त्रिया चरखेसे सूत कातकर दिन काटतीथी, वहा ६११४ करघोमें काम होताथा, २०० से ४०० तक नावें प्रतिवर्ष बनतीथी। इन सबोंके अतिरिक्त निमक और शक्कर बनानेके कारखानेभी अनेकथे। दीनाजपुर जिलेमें २९००० बीघेपर पटुआ, २४०० बीघेपर रूई २४००० बीघेपर, ईख, १५००० बीघेपर नील, और १५०० बीघेपर तमाखू, की खेती होतीथी। उस जिलेमे १३ लाखसेभी अधिक गायें और बैलथे, ऊचीजातियोंकी बहुतेरी विधवाए और किसानोंकी स्त्रिया सूत कातताहुई खर्चसे अतिरिक्त ९१५००० रुपये फायदेमे पाजातीथी। वहा ५०० रेशमव्यवसायियोंके घराने वर्षमें

१२००००० रुपये अपने कामसे नफेमे पाजातेथे। वहां जुलाहे प्रतिवर्ष १६ लाख १४ हजार रुपयेके कपडे बुनतेथे। मालदह जिलेकी मुसल्मान स्त्रियोंमे सूईकी कारीगरीका बहुतही अधिक प्रचारथा। सूत और कपडेमें भांति भांतिके रंगोंको चढाकर वहां हजारों मनुष्योंका गुजारा होताथा। पूर्निया जिलेमे स्त्रिया प्रतिवर्ष लगभग ३ लाख रुपयेकी कपास खरीदकर जो सूत काततीथीं उससे उनको १३ लाख रुपये मिल जातेथे। जुलाहोंके ३५०० करघोंसे वहा ५६००० रुपयेके कपडे बनतेथे जिससे कारीगरलोग नफेमें प्रायः १॥ लाख रुपये पाजातेथे। इसके अतिरिक्त १०००० करघोंसे मोटे कपडे बुनकर वे प्रतिवर्ष ३२७००० रुपये नफेमें पातेथे। वहा दरी, फीता आदिका व्यवसायभी बडी उन्नतिकी दशामेंथा। यहां स्मरण रखना चाहिये कि इससमयके एकरुपयेसे उससमयके रुपयेका बडा अन्तरथा। इस समय एकरुपयेसे कितना अन्न मिलताहै उससे कही अधिक अन्न उस समयको एकरुपयेसे मिलताथा।

इन सब जिलोकी दशाका परिचय पाकर पाठक समझ जायगे कि उन दिनों सम्पूर्ण भारतवर्षकी कारीगरी और वाणिज्यकी दशा कैसी अच्छी थी। * अगरेज वणिकोने स्वार्थके वशमे होकर

---

* बूढोंके मुखसे सुननेमें आताहै कि इस देशमे विलायती सूत चलानेके लिये कम्पनीके आदमी सूतकातनेवाली स्त्रियोंके चरखे तोड देते थे, कहीं २ चरखोंपर कडा महसूल लगाया था। यह सुनने से कि कम्पनीके आदमी आरहेहैं स्त्रियां तालाबोंमें चरखे छिपा रखतीथीं। यह सबबाते चाहे जितनी सत्य हो पर इतिहासोंके प्रमाणसे यह तो निश्चयही मालूम होताहै कि चरखोंपर कड़ा महसूल लगायाथा। उसका प्रमाण लीजिये,–

Francis Carnac Brown had been born of English parents in India and like his father had considerable experience of the cotton industry in India. He produced an Indian charka or spinning wheel before the Select Committee and explained that there was an oppressive Moturfa tax wich was levied on every charka, on every house, and upon every implement used by artisans The tax prevented the introduction of saw-gins in India—India in Victorian Age p 135

उन दिनोंके विलायती जुलाहे कपडोकी किनारी बुनना नही जानते थे। उन्होंने वह विद्या खासकर बगालके जुलाहोंसे सीखली थी। पहले पहल इस देशमे जो विलायती कपडे आये थे उनकी किनारियां ऐसी वाहियात होतीथीं कि आजकलके लोग उन कपडोंको कभी बर्तनेकी इच्छा नहीं करते। क्रमशः जब विलायती कपडोकी किनारियां देशी कपडोकी भांति होने लगीं तब इस देशके बहुतेरे लोगोने आश्चर्य मानकर कहा था "इन कपडोंका विलायती समझना कठिन जानपडताहै। ये तो ठीक देशी कपडेकी भांति बनगये हैं"। सौ वर्षोंमें इस देशके और विलायती कपडोकी दशाओका जितना हेरफेर हुआहै वह विचारनेसेभी आश्चर्य मानना पड़ताहै।

इस देशके बडे भारी व्यवसायको मट्टीमे मिलादिया है । इसीसे भारतके लाखों मनुष्य आज दिन अन्नके बिना त्राहि २ करते हुए प्राण छोडरहेहैं ।

इस घटनाका वृत्तान्त कहनेमें नामी बंगला समाचारपत्र "हितवादी"के लिखे हुए एक मन्तव्यके यहा लिखना अयोग्य न होगा—"कम्पनीकी ज्यादातियोसे इस प्रकारसे बगालकी कपडे की कारीगरी बिगडगयी । एक ओर जुलाहोंकी दूसरी ओर बगाली बिधवाओंकी हाहाकार सुनायीदी । सूतकातनेके व्यवसायसे वर्जित होकर बगाली बिधवाए सचमुचही आश्रयहीन हुई और स्वजनोंके गलेपडी । हम अगरेजी शिक्षासे बुद्धिहीन होकर विधवा विवाहकी व्यवस्था सोचते हुए उनके दुःखोंको दूरकरनेका उपाय निकालनेमें लगगये । क्रमशः अगरेजोंकी नकल करनेमें बिलायती विलासकी वस्तुओपर हमारा लोभ बढने लगा । यह बात बिना विचारेही कि देशी कारीगरोकी क्या दशा होगी हम उनपर से एकबारही अपनी दृष्टि टालकर विदेशियोके प्रेममे लोटपोट होगये । हम सोचने लगे कि बिलायती सभ्यताको अवलम्बन करते हुए हम सुसभ्य बनते जातेहैं तथा हमारे भ्रमोका अन्धकार टूटता जाताहै, किन्तु ससारके सच्चे सभ्यलेगोंने हमारे वर्ताओंसे जान लिया कि हम दिनपरादिन निरे असभ्य बनते जातेहैं । क्योंकि उनके विचारानुसार वह जाति उतनीही सभ्यहै जो अपनी प्रयोजनकी चीजें जितनी आपही आप बनाती हुई अपना दुःख दूर कर सकतीहैं तथा वह जाति जो अपनी प्रयोजनकी वस्तुओंके लिये जितनी दूसरी जातियोंके मुँह ताका करती है उतनीही असभ्यहै । अगरेज शिक्षाके मोहमें पडकर हम इस अटल सत्यको पहले पहल समझ नही सके थे । उस समय हमने सोचा था कि अगरेज लोग हमारे सब दुःखोंको दूरकर हमको सभ्यताके ऊचेसे ऊचे शिखरपर चढादेगे । किन्तु बहुत दिन सब कुछ देखते और विचारते हुए हमारा वह भ्रम क्रमशः दूर होरहाहै" ।

"इसविषयमे सबसे प्रथम वम्बईके निवासियोका मोह दूरहुआ वे अपने प्रान्तमें विलायती वस्त्रोंकी बडीभारी वृद्धि देखकर सावधान हुए । वे अपनी पूजी लगाकर कल और कारखाने बम्बईमें खड़े करने लगे । यह प्रायः ५० वर्ष पहलेकी बातहै । किन्तु यह देखकर कि बम्बईके निवासी आपही अपनी लज्जा निवारणकरनेको उद्यत हुएहैं तथा अपनी बडी बडी प्रयोजनकी वस्तुओ वस्त्रआदिके लिये अगरेजोंके मुँह ताकना नही चाहते अगरेज चौंकपड़े । बस नियम करदिया कि विलायतसे भारतमें कल आदि मगानेके लिये अधिक महसूल देना होगा । उस अधिक महसूलको देते हुएभी बम्बईके निवासी कल आदि मगाने और उनसे कपडे बनवाने लगे । पहले पहल नुकसान उठाते रहनेपरभी बम्बईके कलवाले निराश नहीहुए । आगे गवर्नमेण्ट कारखाने सम्बन्धी कानून जारीकर वम्बईके कलवालोको हानि पहुँचानेका प्रयत्न करनेलगी । तिसपरभी कलवालोंकी हिम्मत नहींहारी । उधर महाराष्ट्र वासियोंने प्रतिज्ञा की कि जहांतक बन पडेगा वे विलायती कपडा नहीं पहनेगे ।"

बम्बईके निवासियोंकी यह प्रतिज्ञा और देशमें कलकारखानोंकी वृद्धिकी राहमें कांटे बिछानेके लिये गवर्नमेण्टके कमर कसकर खडी होनेपर हिन्दुस्थानमें स्वदेशी वस्त्र वर्तनेकी चिल्लाहट मची । आगे अगरेजोकी कुटिलताकी बात ज्यों ज्यों हिन्दुस्थानियोंके ध्यानमें आनेलगी त्यों त्यों

स्वदेशी वस्तोके लिये भारतवासियोंका अधिक अधिक आग्रह होनेलगा । तब सन् १८९६ ई० मे गवर्नमेण्टने देशी कपडेकी कारीगरीका प्रभाव बिगाडनेके लिये बनतेहुए देशी कपडोपर महसूल जारीकिया । लङ्काशायरके कलकारखानेवालोंके देखे इसदेशके कलकारखाने-वालोंको जितनी दिक्कतें झेलनी पडतीहैं सो सभी जानकार लोग जानतेहैं । कारखानोंके लिये एक मकान बनवानेमेंही इसदेशमें विलायतसे कहीं अधिक खर्च लगजाताहै, तिसपर कल आदि लाकर खडी करनेमें भी बहुत खर्च बैठजाताहै । जानकारोंको मालूमहै कि इन दो कामोंके करनेमे जहां विलायत वासियोंका एक लाखरुपया खर्च होताहै तहां भारतवासियोका सवा दो लाख रुपयेसे कम खर्च नही होता । कल-आदिके लिये दूसरी प्रयोजनीय वस्तु ओंकाभी (Mill stores) खर्च विलायतसे कहीं अधिकहै विलायतमें कल चलानेके लिये कोयलेका खर्च जितना होताहै यहां उससे ड्योढा अधिक होताहै । विलायतमें सैंकडे ढाई तीन रुपये सूदपर पूंजीके रुपये मिलजातेहैं, भारतमे रुपयेका सूद सैंकडे छः सात रुपयेसे कम नहीहै । इन सब दिक्कतोंसे अतिरिक्त यहां कल आदिमे कामकरने योग्य सिखे सिखाये मजदूरोंकी कमीसे इस देशमे कमादिकत झलनी नहीं पडतीहै । इन सब दिक्कतोंके लिये यहां सस्तेमे कपडे नही बनतेहैं । तिसपरभी गवर्नमेण्टने हिन्दुस्थानमें कपडे बननेके विरुद्ध बखेडे किये । गत सन् १८९६ ई०से विलायती कपडोंका महसूल सैंकडे १॥) रुपये घटाकर देशी कपडोंपर सैंकडे साढे तीनरुपया महसूल नया लगायागया । इसप्रकार बखेडा खडाकरदेनेसे इसदेशसे चीन और जापानमे जातेहुए कपडोंकी रफ्तनी बहुत घटगयीहै। इस देशमेंभी विलायती कपडोकी अपेक्षा देशीकपडे इतने महगे होगये हैं कि खरीदना कठिन होगयाहै । वर्तमानदशामें यदि अंगरेज निष्कपटचित्तसे केवल बिना रोकटोककी वाणिज्य नीतिकाभी अनुसरण करते रहते तो इसदेशकी कपडेकी कारीगरीकी इतनी हानि नहीं उठानी पड़ती । अब प्रत्येक देशहितैषी पुरुषको यह विचारना चाहिये कि यदि गवर्नमेन्ट इस पक्षपात भरीहुई चालको न छोडदे तो इस देशकी पूरी पूरी उन्नति होना कहांतक सम्भवहै।

यहां यहभी जानलेना चाहिये कि इङ्गलेण्डकी अधीनस्थ नयी आबादीवाले टापुओंके आमदनी महसूलसे भारतके आमदनी महसूलका कितना अन्तरहै । अङ्गरेजलोग हिन्दुस्थानमें जिस ढङ्गसे बिना रोकटोककी वाणिज्यनीतिको वर्ततेहैं वैसा उन टापुओंमें करना उनकी सामर्थ्यके बाहरहै । कनेडामें दूसरी विलायती वस्तुओंके महसूल फी सैंकडे १७) रुपये, कपड़ेके लिये २३) रुपये न्यूजलेण्डमें ९।) रुपये और अस्ट्रेलियामें ६।) रुपये लियाजाताहै किन्तु भारतमें केवल २॥।) महसूल देकर विलायती वस्तुए बेची जातीहैं । विलायती कपड़ेपर यद्यपि सवातीनरुपये महसूल लगारक्खाहै; पर साथही हिन्दुस्थानी कपड़ोंपरभी महसूल लगा रक्खागयाहै । देशमें बनतीहुई किसी वस्तु वा कपडेको देशहीमें बेचनेके लिये भारत छोडकर किसी टापूमें महसूल लगाना अंगरेजोंस नहीं बनपड़ाहै ।

इतिहास लिखनेवाले विलसनसाहबने सच कहाहै " हिन्दुस्थानी कारीगरीकी चीजोकी जड़ काटनेके लिये यदि ऐसे अनुचित उपाय नहीं गढे जाते तो मैनचेस्टर और पायसलीकी कपड़ेकी कलें अकुरमेंही बिगड़जाती । यहांतक की उन कलोंको

इञ्जिनके सहारेभी फिर चलाना बडाही कठिन होजाता। असली बात यह है कि हिन्दुस्थानी कारीगरी और वाणिज्यको ध्वस करही विलायतकी कलें जिला रक्खी गयीहैं। भारतवर्ष यदि स्वतन्त्र देश होता तो वह इस वाणिज्यकी टक्करमें अपनी रक्षा करसकता; वह विलायती मालपर कडा लगाकर अपने नफेकी कारीगरियोंको साबित रखसकता। किन्तु अगरेजोंने भारतवर्षको अपनी रक्षाके लिये यह उचित अधिकार नहीं दियाहै, भारतवासियोको विदेशी वणिकोंकी कृपाके ऊपर निर्भरकर रहनेको लाचार किया गयाहै।"

अगरेजलोग यदि अपनी राजशक्तिके सहारे भारतवासियोंकी कारीगरी सम्बन्धी बुद्धि प्रकट करनेकी राह रोक न देते तो बहुत दिन पहले भारतमें पश्चिमी विज्ञानके अनुसार कल आदिके सहारे भांति२की कारीगरीकी वस्तुओंके बनानेका प्रबन्ध होजाता। यदि भारतवासी पहले पहल विज्ञानके अनुसार नये नये यन्त्रोंका आविस्कार करनेमें समर्थभी न होते तो दूसरे पश्चिमी जाति योंकी भांति और लोगोंके 'निकालेहुए यन्त्र आदिकी उन्नति तथा सद्व्यवहार निस्सन्देह करनेको समर्थ होते। अनुकरणकी बुद्धिमें भारतवासी पृथ्वीकी किसीभी जातिसे हीन नहींहैं, किन्तु तिसपरभी भारतकी हिन्दू सन्तान यन्त्र विज्ञानके विषयमें सब दूसरी जातियोके पीछे पडीहुईहै। इसका एक मात्र कारण यह है कि अगरेज अपनी राजशक्तिको भारतवासियोंकी इसविषयमें विरुद्धताके लिये सदैव उद्यत रखतेहैं। इस सत्यको स्पष्ट करदेनेके लिये यहा कई उदाहरण दिये जातेहैं।

अनेक लोग जानतेहैं कि अगरेजोंने सबसे प्रथम आजकलकी दियासलाई ईजादकीथी। एक समय पृथ्वीभरमें जितनी दियासलाई काममें लायी जातीथी। उसके दस हिस्सोमेंसे नौ एक इगलेण्डहीमें बनतेथे। किन्तु आजकल फ्रांस, बेलजियम्, स्वीडन, और जापानकी दिया सलाईने इगलेण्डको हरादियाहै। अब एक फ्रास देशसेही इगलेण्डमे ३७०००००००० बाक्स दियासलाईके मगाये जातेहैं। इगलेण्डने यद्यपि "टाइप राइटर" की ईजाद की किन्तु आजकल अमेरिकाके टाइपराइटरहीका सर्वत्र आदर होताहै। लेड यानी शीशेकी पेंसिल, प्यानों बाजा और घड़ीके व्यवसायका इतिहास देखनेसे मालूम होताहै कि इन सब विषयोंकी यद्यपि अगरेजही ईजाद करनेवालेहैं, किन्तु अमेरिका, जर्मनी और स्विटजरलेण्डवालेही इन व्यवसायोंमें अगुवे होरहेहैं। अब इगलेण्डमेंही बहुत पेंसिल, बहुत घडी, तथा बहुत प्यानों उक्तदेशोंसे मगाये जातेहैं। सीनेकी कलके विषयमेंभी वही बात देखनेमें आतीहै। उसकी ईजाद एक जातिने की और उसकी व्यवसायसे दूसरी जाति नफे उडा रहीहै।

स्वय अङ्गरेज लोगही सन् १८६० ई० तक जगी जहाज बनानेकी विद्यामें फ्रांसीसियोसे कम थे। आगे फ्रासीसियोसे उस विद्याको चुरानेके लिये एक अगरेज कारीगर दरिद्र पथिक बनकर फ्रासमें भेजागया। वह कारीगर फ्रासमे जाकर फ्रासीसियोंकी जगी जहाज बनानेकी रीतिकी ओर गुप्त दृष्टि रखने लगा। कुछ दिनोंतक गुप्त अनुसन्धान करताहुआ वह उस विद्याको सीखकर अपने देशको लौटा। तबसे अगरेजोंके जगी जहाजोने नया स्वरूप धारण किया। आगे फ्रासीसियोंकी नीति टूटी। फ्रांसीसी गवर्नमेण्टने क्रोधमें आकर अपनी जहाजकी बनानेकी विद्याको गुप्त रखनेके लिये कडे नियम आदि बनाये। क्रमशः प्रतिभाशाली फ्रासीसी

कारीगरोंने जगी जहाज बनानेकी और भी अच्छी प्रणाली ढूढ निकाली फिरभी अगरेजोंने गुप्त भेदियोंके सहारे उस विद्याके गुप्त भेदोंको जानलिया । बिना धुएकी बारूद बनानाभी बड़ी बडी चेष्टाओंसे अगरेजोंने फ्रांसीसियोंसे गुप्त उपायोंसे सीखलिया । अमेरिकाके अस्त्र बनानेवाले कारीगरोंसे अगरेजोंने मेग्जिमगन आदि भांति भाति के अस्त्रों के बनानेकी विद्या सीखली ।

इस प्रकारसे प्राय: सभी जातियोंने औरोंकी निकाली हुई विद्याकी नकलकर उसकी उन्नति कीहै । जापाननेभी पश्चिमी विद्याकी थोडीसी रोशनी पाकर उस तरफ पूरा ध्यान देता हुआ अपने जातीय द्रव्यकी वृद्धिकीहै, किन्तु भारतवासी १५० वर्षोंसे सुसभ्य यन्त्र विद्या चतुर अगरेजोंका साथ करते हुएभी शिल्प और वाणिज्यकी किसी प्रकार उन्नति करनेको समर्थ नहीं हुए । राजशक्तिकी विरुद्धताके लियेही भारतवासी आखोंमे परदा डाले हुए बैलोंकी भाति १५० वर्ष केवल कोल्हू पेरते आते हैं । इच्छा और बुद्धि रहनेपरभी भारतवासियोंके लिये इस विषयमे कोई उपाय नही है ।

भारतवर्षका द्रव्यबल यदि नष्ट न होता तो वेभी पृथ्वीकी दूसरी जातियोकी भांति कला कौशल बनानेमें तथा कारीगरी और वाणिज्यमें निस्सन्देह पूरी उन्नति करसकते । द्रव्यबल रहनेसे कारीगरी और वाणिज्यके विषयमे विद्या और बुद्धिकी कमी नही होती । इस विषयमे इगलेण्डकी कारीगरी बढने का इतिहास दृष्टांतकी भांति दिखाया जासकताहै । मिष्टर बुक्सएड्म्सने अपनी "सभ्यता और विनाशके नियम" नामक पुस्तकमें लिखाहै,–

"The influx of the Indian treasure, by adding considerably to the nation's cash capital, not only increased its stock of energy, but adding much to its flexibility and the rapidity of its movement. Very soon after Plassy, the Bengal plunder began to arrive in London, and the effect appears to have been instantaneous, for all authorities agree that the "Industrial revolution," the event which divided the 19th century from all antecedent time, began with the year 1760. Prior to 1760 according to Baines, the machinery used for spinning cotton in Lancashire was almost as simple as in India, while about 1750 the English iron industry was in full decline...... At that time four-fifths of the iron used in the kingdom came from Sweeden.

Plassy was fought in 1757, and probably nothing has ever equalled the rapidity of the change which followed......In themselves inventions are passive, many of the most important having lain dormant for centuries waiting for a sufficient store of force to have accumulated to set them working. That store must always take the shape of money, and money not hoarded, but in motion.

From 1694 to Plassy, the growth (of Banks) had been relatively slow...... Writing in 1790 Burke mentioned that when he came to England in 1750 there were not "twelve bankers shops" in the provinces, though then, he said, they were in every market town. Thus the arrival of the Bengal silver not only increased the mass of money, but stimulated its movement.——"Law of Civilisation and Decay," by Brooks Adams pp 259—64.

अर्थात् भारतीयधन विलायतमे आनेसे ऐसा नहीं कि केवल इगलेण्डके जातीय धनकीही वृद्धि हुईहो, किन्तु उससे जातीय उद्यमकी वृद्धि हुईहै तथापि जातीय उन्नति बहुत शीघ्र हुईहै। पलाशीकी लडाईके पीछेसेही बगदेशका लुटाहुआ धन विलायतमें आना आरम्भहुआ, उसका अच्छा फलभी हाथोंहाथ दिखाई देनेलगा। सन् १७६० ईस्वीके पहले विलायतके लङ्काशायरमे सूत वनानेकी कल और कारखाने तथा लोहेकी वस्तुओंके व्यवसायकी दशा बडीही हलकीथी, उससमय विलायतमे स्वीडनसे अधिकाश लोहेकी चीजे मगाई जातीथी। किन्तु सन् १७५७ इस्वीमे पलाशीकी लडाई होजानेपर विजुलीकी तेजीसे यह दशा बदलने लगी।

आविष्कारकी शक्ति जातीय जीवनमे सोतीहुई दशामे रहाकरतीहै। उसको न जगानेसे उसकी तेजी नहीं दिखायी देतीहै। यन्त्र आदिका आविस्कारभी हरसमयमे आशानुरूपफल नही देसकता है। अनेकानेक बडे बडे प्रयोजनीय यन्त्र आदि निकाले जाने परभी चलानेकी शक्ति न रहनेसे बहुत दिनोतक योंही पडेहुएथे। द्रव्यबल हाथमें आतेही वे यन्त्र आदि कामदेने लगे। पलाशीकी लडाईसे पहले इङ्गलेण्डमें बेङ्कोंकी दशाभी बहुतही खराबथी किन्तु उस लडाईके पीछे बगालकी दौलत आनेके साथही साथ चारो ओर नये नये बंके खुलेने लगे। रुपये इकट्टे होनेसे उनको काममें लगानेकी इच्छा लोगोंके जीसे फटनिकली।"

जिस द्रव्यबलसे इगलेण्डके कारीगरोमे नवीन शुभमुहूर्तका सञ्चार हुआ उस द्रव्य बलसे ईस्टइण्डिया कम्पनीके कर्मचारियोंके ज्यादतियोंके कारण हम वञ्चित हुए। इसके उपरान्त भाँति भाँतिके कठोरसे कठोर नियम रचकर उन्होंने हमारी कारीगरीकी उन्नति का पथभी रोकदिया। जापान, जर्मनी, अमेरिका, वेलजियम, डेनमार्क और स्विटजरलेण्डके निवासियोंने अपनी उन्नतिके लिये जो सुविधाएं प्राप्त कीथीं वे सुविधाए राजशक्तिके विरोधकेलिये हम अबतकभी प्राप्त नही करसके। कम्पनीके राज्यके समयमें हमारी कारीगरीको उन्नतिके पथमें कर्मचारियोने यथाशक्ति केवल काटेही नही बिछादियेथे, वलिक उन्होंने उस उन्नतिके मस्तकपर बज्राघात कियाथा। इतिहास लिखनेवाले विलसन महाशयने इस बातको स्पष्टरूपसे स्वीकार कियाहै। आश्चर्यकी बात इतनी है कि इस प्रकारसे भारतवासियोंका सत्यानाश करकेभी इस्टईण्डिया कम्पनीके एक डाइरेक्टर मिस्टर सेन्डजार्जटकर महाशयने कुछभी विना लजाये कहदिया है।

No government ever manifested, perhaps a more constant solicitude to promote the welfare of a people and it is with satisfaction and with pride that I can bear an almost unqualified testimony in its favour.'

इस बातके साथ २ इंगलैण्डके भूतपूर्व सेनापति लार्ड उलस्ली महाशयकी नीचे लिखी हुई बातको पढनेसे हमारे राजकर्मचारियोंकी बातोंकी व्यर्थ चटक और भी अच्छी तरह प्रकट होगी।

"As a nation we bred up to feel it a disgrace even to succeed by falsehood"—'The Soldier's Pocket Book for Field Service.

राजशक्तिकी सहायता पानेसे भारतमे कारीगरी और वाणिज्यके अबतकभी इरेदिन आसकते हैं। हमारे राजकर्मचारी लोग यूरोपीय वणिकोंकी उन्नतिके लिये जैसा प्रयत्न किया करतेहैं उसका आधाभी यदि वे भारतकी काली प्रजाके शिल्प और व्यवसायकी उन्नतिके लिये करले आते तो इस देशमें अनेक लोगोंका अन्नका ठिकाना होजाता। नीलकी खेतीकी अवनति रोकनेके लिये गवर्नमेण्टने जितना धन खर्च किया है तथा जितने रासायनिक पण्डितोंको नियुक्त किया है सो अनेक लोगोंको मालूम है। चाय पीनेकी आदत भारतके लोगोंमें डालनेके लिये यहांसे रफ्तनी होनेवाली चायपर कर्तारोंने "टी सेस" नामक महसूल लगायाहै यह महसूल केवल विदेशी खरीददारोंसे वसूल किया जाताहै। उस महसूलसे मिले हुए धनको सरकार चायकी उन्नतिके पीछे खर्च किया करतीहै। चाय और नीलके व्यवसायमें गोरोंके लगे रहनेसेही उन दोनों व्यवसायोंपर गवर्नमेन्ट इस प्रकारकी कृपा दिखाया करतीहै। ऐसी कृपा यदि वह देशकी दूसरी कारीगरी और व्यवसायोंपर दिखाती होती तो आज निश्चयही हमारे दिन फिर जाते। काटनडयूटी यानी कपासपरके महसूलसे गवर्नमेण्टने गत पाच वर्षोंमें १ करोडसे भी अधिक रुपया हस्तगत कियाहै, किन्तु उसकी एक कौडीभी इस देशके वस्त्र सम्बन्धी कारीगरीकी उन्नतिके पीछे खर्च नही की गयीहै। हां आजकल गवर्नमेन्टने इस देशमे कपासकी खेतीकी उन्नतिके पीछे मन दियाहै, किन्तु इसका कारण और हीहै। अमेरिकाकी रूईके वहांवाले धनी व्यवसायियोंके एकबारही हस्तगत होजानेसे इगलैंडके जुलाहोंका काम उनकी इच्छाके अनुसार बन्द होजासकताहै। इसी भयसे इंगलेण्डके जुलाहोंको बचानेके लिये इगलैंडने भारतगवर्नमेंटसे कहाहै कि हमारी जमीनदारी रूपी भारतवर्ष मे अच्छी रूईकी खेती कराओ। इसीसे भारतगवर्नमेन्टने कपासकी खेतीकी उन्नतिमें मन लगाया है इससे यदि हमकोभी कुछ फायदा होजाय तो वह हमपर सरकारी कृपाके कारण नही होगा उस के लिये सरकार हमारी धन्यवाद भाजन नहीं होसकेगी।

चमडा विदेशमें भेजनेके लिये जो महसूल लगाहुआहै उसको कुछ बढाकर यदि सरकार उसे इसदेशमे पश्चिमी रीतिपर चमड़ा साफ़ करनेका काम जारीकरनेमें खर्चकरे तो कितनेही भूखे दोकवर अन्नकी व्यवस्था अपने लिये करले सकतेहैं। इसदेशसे ढेरका ढेर कच्चा चमडा अमेरिकाके व्यवसायी अपने यहां लेजातेहैं और उस चमड़ेको साफकर तथा रंगकर चौगुने मूल्यमे फिर हमारेही देशमे लाकर बेचतेहैं। राजकर्मचारी लोग यदि हिन्दुस्थानी चमारोंको चमड़ा साफकरनेके वैज्ञानिक कौशलको सिखानेका प्रयत्न करते तो इसमें सन्देह नहींहै कि चमड़ेके व्यवसायसे भारतमें विदेशोंसे बहुत कुछ धन आनेलगता। यदि गवर्नमेण्ट चाहती तो योंही

दूसरे कच्चे मालपर अधिक महसूल लगाकर उस अतिरिक्त नफेके रुपयेको इस देशकी कारीगरीकी बहुत कुछ उन्नति कर सकती ।

अवश्यही इसप्रकार सीधी चालसे भारतवर्षकी सबप्रकार कारीगरियोकी उन्नति करना सम्भव नहीहै । जर्मनी, अमेरिका आदि देशोंकी भांति इसदेशमेंभी कारीगरीकी रक्षाके लिये महसूल जारी करनेकी जरूरतहै और साथही उन देशोंकी भांति इस देशके कारीगरोंको वृत्ति (Bounty) देनेका नियम जारी करनाभी जरूरीहै । जर्मनीकी गवर्नमेण्टने वहांके शक्कर बेचनेवालोंको बहुत अधिक वृत्ति देकर वहांकी शक्करको भारतमें बहुत अधिक चलादियाहै । अमेरिकाकी गवर्नमेण्टने अपने देशके कागज बनानेके कारखानोंकी रक्षा करनेके लिये विदेशी कागजपर फी सैकडे ५०) रुपया महसूल लगायाहै । अमेरिकामे कई वर्षोंसे अलसीकी खेती होने लगीहै । इस नये व्यवसायकी रक्षाके लिये अमेरिकाकी गवर्नमेण्टने भारतसे जातीहुई अलसी और अलसीके तेलपर कडा महसूल लगायाहै । इसीसे "कलकत्ता तेल" (Calcutta Oil) नामसे परिचित हिन्दुस्थानी अलसी तेलकी रफ्तनी अब अमेरिकामें बहुत घटगयीहै । यदि गवर्नमेण्ट इसदेशकी कारीगरी और व्यवसायकी रक्षा करनी चाहे तो उसकेलिये इसप्रकार वाणिज्य रक्षा नीति अवलम्बन करनी जरूरीहै । दुःख इतनाहै हमारे सरकारी कर्मचारियोकी दृष्टि इस विषयमे एकवारही नहीं पडतीहै । यदि अबभी गवर्नमेण्ट इधर ध्यान दे तो वह ३० करोड प्रजाका हार्दिक आशीर्वाद लाभकरे ।

इतिहास पढनेसे मालूम होताहै कि राजशक्तिकी सहायताके बिना कभी किसीभी देशमे कारीगरी और वाणिज्यकी उन्नति नही हुईहै । सबसे बढकर राजपरिवार और राजदरबारकी जरूरतोंको पूरा करनेके लिये देशमे कारीगरी आदि रचीजातीहे । जो राजा विदेशोमे बनीहुई वस्तुओंसे अपनी जरूरतोको पूरा करताहै उसके राज्यमें कारीगरी और वाणिज्यकी कभी उन्नति नहीं होसकतीहे । इन दिनोंके पश्चिमी व्यवसायी अपनी राजशक्तिकी कृपासे ही पृथ्वीके सब स्थानोंमें अपने वाणिज्यकी बडाई फैलानेमे समर्थ हुएहैं । भारतवर्षमेंभी इङ्गलेण्डके वाणिज्यकी बडाई राजशक्तिके सहारेही खडी हुईहै । जिस जर्मनीके वाणिज्यके प्रबल सोतेमे पडकर आजकल अगरेज वणिक ओर कारीगर बहते चलेजातेहैं, जिस जर्मनीकी कारीगरी पगपगपर इगलेण्डकी कारीगरीको हरातीहुई उसकी जगह अपनी बडाई फैला रहीहै, वह जर्मनीभी एक लहमेके लिये यदि अपनी राजशक्तिकी सहायता उस कारीगरीके बटानेमें देना अस्वीकार करे तो आजकलका विशाल जर्मन वाणिज्य देखतेही देखते जलके तिलककी भाति सूखजाय । इसीसे हम भारतीय कारीगरी और वाणिज्यकी उन्नतिके लिये काय मन वचनसे अपनी राजशक्तिकी सहायता माँगते रहतेहैं । किन्तु अपनी जातिके प्रेममे पडकर अंगरेजलोग हमको वह सहायत देनेसे मुँह मोड लेतेहैं । इससे बढकर दुर्भाग्यकी बात हमारे लिये और क्या हो ।

स्वदेशी आन्दोलन।
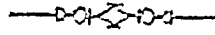
यह बात कोईभी अस्वीकार नहीं करसकता कि इनदिनों भारतवासियोंकी दृष्टि स्वदेशी कारीगरीकी उन्नतिकी ओर बहुत अधिक जापडीहै। बगाली लोग जहातक बनपडे विदेशी वस्तुओंको न छूनेकी प्रतिज्ञा करचुकेहैं। बम्बई, मदरास, मध्यभारत और पञ्जाब आदि प्रान्तोंके निवासीभी बगालियोंकी विदेशी वस्तु त्यागनेकी प्रतिज्ञामें सम्मिलित हुए हैं। इसलिये गतवर्ष शारदीय दुर्गापूजाके बगाली महोत्सवके दिनोंमी विलायती वस्तुओंकी बिक्री प्रायः रुक गयीथी। खासकर विलायती वस्त्र प्रायः किसीने नहीं खरीदाथा उसके बदले मोटे कुत्सित देशी वस्त्र लोगोंने आनन्दपूर्वक लियाथा। अबतकभी बहुतेरोंका स्वदेशी वस्त्र आदि बर्तनेका आशातिरिक्त आग्रह दिखायी देरहाहै। स्वदेशी वस्तुओंके बर्तनेमें भारतवासियोंका विशेषकर बगालियोंका इतना आग्रह इससे पूर्व और कभी देखनेमें नहीं आयाथा। इससे यहाके गोरेवणिक विचलित हुएहैं और गवर्नमेण्टको विदेशी वाणिज्यकी रक्षाके लिये उत्साहित कररहेहैं। देशवासियोंके स्वदेशी वस्त्रव्यवहारकी प्रतिज्ञा करनेसे बम्बईके कलवाले उनको प्रयोजनके अनुरूप वस्त्र देनेके लिये १२ घण्टेकी जगह १५ घण्टे कल चलाते हुए वस्त्रकी कमी मिटानेकी इच्छासे यथासाध्य प्रयत्न कररहेहैं। यो अधिक काम करतेहुए मजदूरोंको वे अधिक पारिश्रमिक देनेसे हिचक नहीं रहेहैं। मजदूरभी अधिक रोजगारका उपाय हो जाते देखकर आनन्दपूर्वक अधिक परिश्रम करनेमे लगगये। देशवासीभी अधिक मूल्य देतेहुए स्वदेशी वस्त्र लेनेको उद्यतहुए। किन्तु भारतवासियोंने आपही अपनी लज्जा-निवारण करनेके लिये जो प्रतिज्ञा करली है उसकी रक्षाहोनेका इस प्रकार उपाय होते देखकर कुटिल गोरे व्यवसायियोंके हृदयमें भयका सञ्चार हुआ। उनका प्रतिनिधि बनकर बम्बईके नामी "टाइम्स-आफ इण्डिया" नामक समाचार पत्रके सपादकने लिखा,—

BOMBAY SLAVES.

COLD-BLOODED INHUMANITY,

A plea for Government Intervention.

अर्थात् "बबईके गुलाम," "भयानक जुल्म," "गवर्नमेण्टके हस्तक्षेपकी आवश्यकता।" इसप्रकार शीर्षदेकर सात कालमवाला एक लबा लेख प्रकाशकिया। इस लेखमे लिखागया कि देशी कलवाले अभागे मजदूरोंसे १५ घण्टे काम लेरहेहैं जिससे मजदूरोंके सुस्ताने और गृहस्थीके काम धन्धे करने तथा स्त्रीपुत्रोंके सुख स्वच्छन्दतापर ध्यानदेने और सबसे बढकर उनके साथ बातचीतकर जीमे सन्तोष भरनेका अवकाश नही पाते। इसप्रकार सुस्तानेका समय न मिलनेसे अभागे मजदूरोंकी तन्दुरुस्ती जिसप्रकार बिगड रहीहै उसपर निष्ठुर हिन्दुस्तानी कलवालोका ध्यान नही पडता। गवर्नमेण्टके हस्तक्षेप न करनेसे यह भयावनी ज्यादती नहीं रुकेगी। इसलिये गवर्नमेण्टको बिना विलम्ब इस विषयका एक कानून बनाना चाहिये तथा नेशनल काग्रेसमे जो

लोग वक्तृता देतेहुए स्वदेशहितैपिता प्रकट करतेहैं उनकोभी इससमय चुप नहीं रहना चाहिये। टाइम्सपत्रकी इस बातको सुनकर विलायतके मजदूरे चिल्लाहट मचाने लगेहैं और टाइम्सकी बात माननेके लिये सरकार हिन्दसे जिद्द करने लगेहैं। इससे भारतवासियोंके चित्तमें भयका सञ्चार हुआहै। क्योंकि कौन जाने स्वजातिप्रेमी गवर्नमेण्ट ऐसा अच्छा सुभीता पाकर यदि देशी कल-वालोंके लिये असुविधाका कोई कानून रचकर देशी कपडेकी उन्नतिकी राहमे कांटे बिछादे तो आश्चर्यही क्याहै। क्योंकि यद्यपि गवर्नमेण्ट देशी वस्त्रकी उन्नतिकी बात मुखसे कहा करतीहै, किन्तु कार्य उसका विपरीत देखनेमें आताहै। इसीसे टाइम्सकी उत्तेजना सुनकर सम्पूर्ण भारत-वासी भय खागयेहैं। *

वर्तमान स्वदेशी आन्दोलनके विषयमें देशके धनवानोको विशेष आग्रह कलकारखाने आदि जारी करनेकी ओर प्रकट करते न देखकर जो लोग दुःखी हुएथे उनको बम्बईके "टाइम्स" पत्रके हुङ्कार सुनकर कुछ ढारस मिलगया होगा। विलायती कलोंके मजदूरोंपर हिन्दुस्थानी कलोंके मजदूरोंसे कहीं अधिक जुल्म हुआकरताहै। किन्तु उधर ध्यान न देकर विलायती व्यव-सायियोकी कृपादृष्टि हिन्दुस्थानी कलोंके मजदूरोंपरही आ गिरीहै। और वे भारतगवर्न-मेण्टको हिन्दुस्थानी मजदूरोंके कामका समय घटादेनेके लिये कानून बनानेकी जिद्द करने लगेहैं। इससे अब बगाली लोग समझ गयेहैं कि इञ्जिनसे चलनेकी कल और कारखाने जारी करनेके बदले गांवोके जुलाहोंको अधिक काम देनेवाले अच्छे करघे ला देकर सस्तेमें कपडा बुननेकी सहायता देनेसे हमारे देशमे कहीं अधिक अच्छा फल देखनेमें आवेगा। क्योंकि इञ्जिनसे चलनेवाले करघोंको देशमे जारी करनेसे हरएक करघेके पीछे सब समेत प्रायः एक हजार रुपया खर्च होताहै और उससे नित्य प्रतिसात जोडे मोटे अथवा चार जोडे महीन कपडोंके बन सकते हैं। किन्तु तीस चालीस रुपये मूल्यके फ्लाइशटलवाले एक करघे से नित्य प्रति कमसे कम १२ से १५ हाथतक महीन कपडोंके बनसकतेहैं। इस बातकी परीक्षा अनेक लोगोंने की है। फिर मिट्टीमें गड्ढा खोदकर करघा बैठानेके बदले यदि लकडीके फ्रेममे बैठाया जाय तो हरएक करघे से २० हाथतक कपडा बुना जासकता है। इस दशामे एक हजार रुपये खर्चपर एक विलायती करघा मगानेके बदले २५ फ्लाइशटलवाले करघे लेकर कपडे बुननेसे इञ्जिनवाले करघोंको परास्त करना कुछभी असम्भव नहीं है। इस बातके प्रमाणमे "इण्डियनइकानमिस्ट" नामक पत्रमे कुछ दिन पहले जो बात लिखी गयीथी नीचे उसको उद्धृत करदेतेहैं—

---

*- बम्बईकी कपडेकी कलोंके मजदूरोंकी तकलीफसे "टाइम्स आफ इडिया" का हृदय तो इतना पिघलाहै पर चायके बगीचोंमें कुलियोंसे जैसा बर्ताव हुआ करताहै सो क्या उस पत्रके सम्पादक और उसके पिट्ठूलोग अब एकबारही भूलगये हैं। कोई २ गोरे केवल मुखकी बातोंसे अथवा अखबारोंमे कलवाले मजदूरोंसे सहानुभूति दिखाकरही चुप नहीं हुएहैं। उन्होने उन मजदूरोंको यहभी उत्तेजनादीहै कि तुम मिलवालोंके विरुद्ध विद्रोह करो और दङ्गे फसाद मचाकर उनको हैरान करो।

"In 1896 the manager of a mill in the Central Provinces wrote to the Local Chamber of Commerce that within the previous five years 2 mills in Cawnpore had to discontinue the weaving of cloth and stop their loom, because of their inability to compete with hand woven cloths. Here we have an apt illustration of the power of hand woven cloth to compete with that woven by machinery."

"अर्थात् सन् १८९६ ईस्वीमें मध्यप्रदेशके किसी कपडेकी कलके मैनेजरने उस प्रान्तके चेम्बर आफ कामर्स नामक व्यवसायी सभाको लिखकर जताया था कि गत ५ वर्षोंमें हाथसे चलनेवाले करघोंके साथ समान कामकरनेमें असमर्थ होकर कानपुरके दो कपड़ोंकी कलोंके कार्य्यकर्त्ता लोग काम बन्द करनेको लाचार हुएथे। हाथसे चलनेवाले करघोंसे इञ्जिनकी शक्तिको परास्त करनेका यह बहुत उत्तम उदाहरणहै।"

इसके उपरान्त आजकल दिनपरदिन जैसे आलादरजेके करघे तथा चरखे और तानेबानेके यन्त्र ईजाद होरहेहैं। उनको अच्छी व्यवस्थाके साथ चलानेमे समर्थ होनेसे कलसे सस्तेमें देशी करघोंके सहारेही कपडे बननेका निश्चय होरहाहै। जिसदेशमे जुलाहोंकी सख्या कमहै तथा मजदूरोंकी मजदूरी बहुत अधिकहै उस देशमें अवश्यही इञ्जिनकी शक्तिकी सहायता विनालिये थोड़ेमूल्यमें कपडे बनाना असाध्य होसकताहै, किन्तु हमारे देशमे जुलाहोंकी सख्या इतनी अधिकहै तथा मजदूरोंकी मजदूरी इतनी कमहै कि कपडा बुननेके लिये इञ्जिनकी सहायता लेनेका विशेष प्रयोजनका अनुभव नहींहोता। विशेषकर जबकि बीस नम्बरसे महीन सूतका कपडा कलके सहारे बुननेसेही गवर्नमेण्टको सैकडे साढेतीनरुपये अर्थात् पूजीपर सैकडे सात रुपयेके हिसाबसे महसूल देना पडताहै *—तब हाथके करघोंसे कपडा बुननाही इस महसूलसे पारपानेका एकमात्र उपायहै। फिर हाथके करघेसे कपडा बुननेसे उस कारबारके विगडजानेका भय कम रहताहै। इसके उपरान्त यहभी स्मरण रखना चाहिये कि कल कारखानोंके विस्तारसे देशके निवासियोंकी वुद्धि विकसित होनेके मार्गमें काटे बिछ जातेहैं, देशमें केवल मजदूरोंकीही सख्या वढतीहै, कारीगर घटने लगतेहैं। फिर पूजीवालोंके साथ आजकल यूरोपमे मजदूरोंके जैसे अपार झगडे छिडने लगेहैं उसका बीज इस देशमेभी बोनेसे क्या फलहोगा। इन सब बातोंका विचारकर वुद्धिमान मात्रही इस देशमें हाथके करघे वढानेको उत्सुक हुएहैं। पर यदि इञ्जिनकी सहायतालेनी ही हो तो छोटी २ इञ्जिन मगानेसे अधिक हानिकी सम्भावना नहीं है। देशके लखपती लोग कदाचित इस प्रकार कार्य्य प्रणालीका समर्थन करना नही चाहेगे, वे कदाचित् अधिक पूजी लगा कर बडी २ कल और कारखानेजारीकरनेकाही आग्रह प्रकाश

---

* A $3\frac{1}{2}$ per cent duty in cloth is equivalent to about a 7 per cent duty on weaving capital; since the produce per loom sells for about twice as much as the value of the fixed capital per loom.—The Cotton Industry of India and the Cotton Duties By B. J Padshah.

करेंगे। इससे यद्यपि उनको बहुत अधिक नफा मिलेगा किन्तु बगालके सात लाख जुलाहोंको उनके उस कामसे कोई फल नही मिलेगा। साधारण दशाके मनुष्य इस सत्यको कभी भूल नही सकेंगे। ❀

वर्तमान समयमें सम्पूर्ण भारतमें लगभग १९७ कपडे बुनने और सूतकातनेकी कल कारखानोंमें प्रायः १७ करोड रुपये लगे हुएहैं और उनसे ५८ करोड पौण्ड (आधसेरमें एक पौण्ड) सूत और ५५ करोड गज कपड़े बनरहेहैं। ५८ करोड पौण्ड सूतमेंसे २३॥ करोड पौण्डकी चीन आदि देशोंमें रफ्तनी होतीहै, १३॥ करोड हिन्दुस्थानी कपड़ेके कलवाले कपडा बुननेके लिये लेतेहैं और १९ करोड पौण्ड हाथसे करघा चलानेवाले जुलाहे लेकर कपडा बुनतेहैं। इसके सिवाय विलायतसे जो सूत आताहै उसमेंसेभी प्रायः ३ करोड पौण्ड वे हाथसे काम करनेवाले जुलाहे कपडा बुननेमें खपादेतेहैं। इस लिये हाथके करघोंमें २२ करोड पौंड अर्थात् हिन्दुस्थानी कपडोंके कलोंके प्रायः दूना सूत काममें लाया जाताहै। केवल हाथसे चलनेवाले करघोंसेही इस देशमें प्रायः ९० करोड गज कपडा बनताहै। सो अबतकभी भारतमें जितनी कलें जारी हुई हैं उनसे बननेवाले कपडेसे हाथसे बननेवाला कपडाही अधिक बनताहै। और भी दो सौ नयी कले स्थापन करनेमें समर्थ न होनेसे सब मिलाकर भारतकी कले देशी करघोका जितना कपडा बनानेको समर्थ नहीं होंगी। विलायतसे प्रतिवर्ष इस देशमे २१६ करोड गज कपडे आतेहैं। उतना कपडा इस देशमे बनानेके लिये यदि कले खडीकीजाय तो कमसे कम ३० करोड रुपये पूजीकी जरूरत होगी। किन्तु सरकारी हिसाबको देखनेसे मालूम होताहै कि १० वर्षोंमे हमारे देशके लोगोने ३ करोड रुपयेभी कलकारखाने जारीकरनेमें नही लगायेहैं। आगे प्रतिवर्ष तीन२करोड़ रुपयेकी पूजी लगानेसे दसवर्षोंमें तीसकरोड रुपयेकी पूजी कलकारखानोंमें लाकर विलायती वस्त्रोंका सम्पूर्ण अभाव दूर होसकताहै। ऐसा नहीं कि इसदेशके बडे आदमियोंके प्रयत्न करनेपर ये रुपये इकट्ठे न होसकें। क्योकि उन्होंने प्रायः ५० करोड रुपयेके कम्पनी कागज लेरखेहैं, इसके उपरान्त बेङ्क आदिमें उन्होंने जो रुपये जमा रखेहैं वे

❀ इस विषयमें बडौदा राजाके एक मन्त्री सिविलियन बाबू रमेशचन्द्रदत्त और कलकता आर्टस्कूलके प्रिन्सिपल हैवेल साहबभी इस रायके पक्षपातीहैं। हैवेल साहबकी राय अन्यत्र उठायी गयी है। यहा रमेशबाबूकी रायका एक अश उनकी काशी शिल्प समितिकी वक्तृता से नीचे दियाजाताहै;—

"India is a country of cottage industries. Each agriculturist tills his own little field, pays rent and transmits his holding to his son. ...The humble weavers working with their wives and children in their homes, live better and more peaceful lives than men and women working in crowded and un-wholesome factories...I am myself partial to cotton-industries ...The dignity of man is seen at its best when he works in his own field or his own cottage, —not when he is employed as part of a vast machine which seems to crush out all manhood and womanhood in the operatives"

भी कम बेश २० करोड होंगे । किन्तु इसदेशमें बहुत आदमियोंकी दीहुई पूंजीसे कलकारखानोंका काम भलीभांति चलानेका ढङ्ग लोगोंको मालूम न रहनेसे वे एकाएक कलकारखानोंमें रुपया लगानेसे डरतेहैं । उधर गांवोंके जुलाहोंसे कपड़ा बनवानेके लिये रुपये लगानेमें बहुतेरे लोग न तो असमर्थ निकलेंगे और न उनके जीमें किसीप्रकारका भय उठ खड़ाहोगा । इसलिये ३० करोड़ रुपये कलकारखानोंके झञ्झटमें न डालकर उसके दसवें अंशसे देशी जुलाहोंके द्वारा नये ढङ्गके करघोंके सहारे कपड़ा बनवानेमें लगवाना बहुत सहज और निस्सन्देह उत्तम फल पानेके लिये आशाजनकहै । सरकारी सेविंग बैंकमें साधारण मनुष्योंके प्रायः ११ करोड रुपये जमाहैं । इन रुपयोंमेंसे यदि २ करोड़ रुपयेभी देशी करघोंसे कपडे बुनवानेमें लगाये जांय तो उससेभी कम लाभ नहीं होगा । यहभी स्मरण रखना चाहिये कि बंगालकी स्त्रियोंके चरखोंसे कातेहुए सूतसे एकसमय गावोंके जुलाहे इतने कपडे बनातेथे कि सम्पूर्ण देशवासियोंकी लज्जा निवारणकर विदेशोंमें १६ करोड रुपयोंके भेजतेथे । सो वर्तमान समयमें गावोंके जुलाहोंसे कपडे बुनवानेकी रीति जारी करनेसे यदि विदेशोंसे १६ करोड़ रुपये देशमें न भी आवें तो इतना अवश्यही होगा कि देशके १६ करोड रुपये विदेशोंमें नहीं चले जांयगे । गत सन् १९०१ ईस्वीकी मर्दुमशुमारीके हिसाबसे जानपड़ताहै कि बंगालमें अबतक जुलाहोका कामकरनेवाले (actual workers) ताती नामक जातिके लोग ३१५००० हैं जूगी नामक जातिके लोग ९०२१८ हैं, चिक नामक छोटे नागपुरवाली जातिके लोग ९३०० है, और पान नामक उडीसा और छोटे नागपुरवाली जातिके लोग १५९७०० हैं । इस हिसाबमें निकम्मे बूढे और बच्चे शामिल नहीं कियेगयेहैं । इस हिसाबसे मालूम होजायगा कि बंगालके दोनो कटेहुए हिस्सोंमें जुलाहोंका काम करनेकी योग्यता रखनेवाले हिन्दुओंकी सख्या सब मिलाकर ५७४२०० है । इसके उपरान्त जुलाहोंके कामकरनेकी योग्यता रखनेवाले मुसलमान स्त्रीपुरुषोंकी सख्या ४३२३०० है । सो सम्पूर्ण बंगदेशमें जुलाहोंके काम करनेकी योग्यता रखनेवाले हिन्दू और मुसलमानोंकी सख्या १०६५०० से कम नहींहै । इस सख्याके लोगोंमेंसे १३०८२८ जुलाहे और मालिक कहलानेवाले, ८५४०७ ताती कहलानेवाले, ४४९५९ जूगी कहलानेवाले, ९१५२ पान कहलानेवाले, और २५३६ चिक कहलानेवाले, सब मिलाकर २७२८९२ मनुष्य अबतक भी करघे चलाकर अपनी जीविका करलेतेहैं ।

किन्तु मर्दुमशुमारीके हिसाबके अनुसार बङ्गालके दोनो कटेहुए भागोंमें सब समेत ४२७७६ मर्द और औरत अभीतक कपडे बुननेके काममें लगेहुएहैं । इनके उपरान्त प्रायः ४७५०० मनुष्य कभी करघोंमें काम करते हुए और कभी दूसरा काम करतेहुए अपनी जीविका करलेतेहैं । इससे यह निश्चय होजाताहै कि ऐसे लोग जिनका जुलाहेका काम करना पुश्तैनी पेशा नहींहै १७७००० जुलहेके काममें नये शरीक होकर जीविका करने लगेहैं । इसके उपरान्त गत कई माससे स्वदेशी आन्दोलन जारीहोनेसे दोनों बंगालके अनेक जिलोंके बहुतेरे जुलाहे कुली मजदूरी और नोकरी छोडकर अपने पुश्तैनी व्यवसायमें दत्तचित्त हुएहैं । इन सबोंकी सख्या मिलाकर देखनेसे निश्चय हो जायगा कि दोनो बंगालेमें इससमय जुलाहेके कामसे जीविका करलेनेवाले मर्द औरतोंकी सख्या लगभग ५ लाख होगी । अभीतक इनके उपरान्त परिश्रम करनेकी

शक्ति रखनेवाले ७ लाख पुश्तैनी हिन्दू मुसलमान जुलाहे दोनों बंगालमे मौजूदहैं । जो पुश्तैनी काम छोडकर अन्य कामोंसे अपनी जीविका करलेरहेहैं ।

ये ७ लाख मनुष्य अपने पुश्तैनी पेशेमे लगाये जावे तो उनसे ४ लाख नये ढगके करघे चलाये जासकतेहैं । बगालके गांवोंमे लकडी जैसी सस्तीहै और बढइयोंकी मजदूरी जितनी कमहै उससे फ्लाइशटलवाले करघोंके बनानेमें हरएकका खर्च लगभग १५) रुपये होगा । इसके उपरान्त हरएक करघेके लिये यदि १५) रुपयेका सूत देदिया जाय तथा और और खर्चमिलानेसे यदि हरएक करघेके पीछे कुलखर्च लगभग ३५) रुपये जोडाजाय तो ४ लाख करघे चलानेमे १४००००००, अथवा १५००००००, रुपयेसे अधिक खर्च न होगा । कलकत्ता आर्टस्कूलके प्रिन्सिपल हेवल साहबनेभी यही राय प्रकटकीहै। असली बात यह है कि अधिकसे अधिक दो करोड रुपये पूजी होनेसे बगदेशमे कमसे कम ७ लाख नये ढगके करघे जारी होसकेंगे जिनसे प्रतिवर्ष (३०० दिन ६ गजके हिसाबसे कपडा बुननेसे) कमसे कम १२६ करोड़ गज कपडे सहजही बनने लगेगे । बगदेशमे विलायती कपडेभी इससे अधिक नही आते । किन्तु इन दोकरोड रुपयोंकी पूजीसे कपडे बुननेकी इञ्जिनसे चलनेवाली कलें खडी करनेसे प्रतिवर्ष ८ करोड गज कपडे निकालना कठिन होजायगा । ❀

आनन्दकी बातहै कि देशके साधारण दशाके बुद्धिमान लोग फिर देशी करघे चलानेके लिये आग्रह दिखाने लगेहैं । बहुतेरो जिलोके जुलाहे अपने त्यागे हुए पुश्तैनी व्यवसायको पुनर्वार उत्साहके साथ आरम्भ करने लगेहैं । जिन लोगोकी शिल्पबुद्धि इतने दिन मानो सोती हुई दशामें पडी थी वे अब नये २ करघे तथा ताना बाना आदिकी कले और चरखें तथा दूसरी कारीगरीकी वस्तुए बनानेमें प्रशसनीय योग्यता प्रकट कर रहेहैं । × विदेशी

❀ कपडेकी कल जारीकरनेके बदले हाथके करघे जारीकरनेसे केवल देशके लाखो जुलाहोंका ही पालन नही होगा, करघे चरखे आदि कपडे बनानेकी चीजें बनाते हुए हजारो बढई लोहार आदि कारीगर अपनी जीविका करले सकेंगे । इन सब देशी वस्तुओंका प्रचार और उन्नति होनेके साथही साथ कारीगर लोग अपने पुश्तैनी व्यवसायसे पहलेकी भांति जीविका करलेनेका सुभीता प्राप्त करेंगे । इस प्रकारसे खेती और नोकरीकी ओरसे इन सब पुश्तैनी कारीगरोकी दृष्टि घटजानेसे किसान और नोकरी पेशेवाले साधारण गृहस्थोंकी भलाईका पार नही रहेगा । इसके साथही साथ कपासकी बडीही लाभजनक खेती देशमे जारी होनेसे उस खेतीसेभी देशका धन बढेगा ।

× हेवल साहबने गत सन् १९०५ ई०की काशी शिल्पसमितिमे वक्तृता देते कहा था,—

The improvement of Indian hand looms and other weaving appliances has now become the first industrial question of the day. It is making rapid progress all over India, and it cannot be many years before power-loom mills, both in India and in Europe will have to face a very stronger competition than before. Under these circumstances, I think the much prudent investor would be well-

वस्तुओंके निमर्जनसे स्वदेशी वस्तुओंके वर्तनेमें लोगोंका आग्रह बढनेसे देशके अगणित अन्नहीनोंके घरोंमें अन्न भररहेहैं। इस समय सरकारी कर्मचारी लोग यदि देशवासियोंकी शिल्पोन्नतिकी इस चेष्टामें कुछ थोडीसी सहायताभी दें तो इस देशकी जमानेकी दरिद्रता थोडे दिनके भीतरही मिटसकेगी, अकालका भय तथा नित्य आधे भोजनसे दुखपानेवाले मनुष्योंकी उदर ज्वाला बहुत घट जायगी। दुर्भिक्ष कमीशनोंके मन्तव्योंमें अनेकवार देशकी डूबती हुई कारीगरी आदिको फिर जिलानेकी जरूरत स्वीकृत हुई है। हमारी गवर्नमेण्टनेभी अनेक वार जबानी कहाहै कि देशमें शिल्प और वाणिज्यकी उन्नति न होनेसे देशके दुर्भिक्षका भय दूर नहीं होगा। गवर्नमेण्टके कर्मचारी अपने मनमें भी यह इच्छा रखते होंगे कि भारतीय शिल्पकी उन्नति हो, किन्तु विलायती कारीगरोंको भारतीय शिल्पकी उन्नतिसे अवश्यही नुकसान पहुंचेगा। इसीभयसे वे सरकारी कर्मचारी भारतीय शिल्पकी उन्नतिके लिये आग्रह प्रकाश करनेका साहस नहीं कर सकते। यदि थोडी २ उन्नति होती हुई क्रमशः ५० वर्षोंमें भारतीय शिल्प और वाणिज्यकी उन्नति होगी तो हमारे राजकर्मचारी कुछभी दुखी नहीं होंगे। किन्तु बगालके बटवारेसे देशकी शोचनीय दशापर बगालियोंकी दृष्टि पडनेपर वे जिस दृढता और शीघ्रतासे देशीय शिल्पकी उन्नतिके विषयमें अग्रसर होने लगेहैं। उससे हमारे सरकारी कर्मचारियोंके जीमें भय उठ खडा हुआहै। वे पहले पहल स्वदेशी आन्दोलनको "बगालियोंका खिलवाड" समझकर निश्चिन्तथे। किन्तु उस आन्दोलनकी गभीरता और विस्तारको क्रमशः देखकर अनेक सरकारी कर्मचारियोंके चित्तमें घबडाहट खडी होगयी। विलायती वाणिज्यको हानि पहुंचते देखकर वे इतने विचलित हुए कि आधे भोजनसे दुःख पातेहुए भारतवासियोंकी यन्त्रणाओंकी बात भूलगये। अब स्वजातीय कारीगरोंके भोजनकी चिन्ताही उनके चित्तोंमें लहरा रहीहै। इसीसे वे भांति भांतिके बहाने प्रकट करतेहुए कभी शांति रक्षाकी दुहाई देकर, कभी दरिद्रोंपर दया दिखानेकी दुहाई देकर, कभी विना रोकटोकके वाणिज्यकी दुहाई देकर स्वदेशी आन्दोलनके मुखियों तथा उनको सहायता देनेवाले युवाओंको भांति भांतिसे सतानेके लिये उद्यत होगयेहैं। जमीनदारोंको डराकर उस आन्दोलनसे अलग रखनेके लिये प्रयत्न किया जाताहै। बरिसाल, सिराजगञ्ज, मैमनसिंह, मदारीपुर, रगपुर, नवाखाली, ढाका आदि स्थानोंमें जैसी भयावनी लीलाएं दिखायी गयीहैं वे समाचार पत्रोंके सहारे अब सब लोगोंके कर्णगोचर होचुकीहैं। यदि राजकर्मचारी लोग एकवार इस समय यहभी सोचें कि इसप्रकार वर्ताओंका पुराने जमानेकी ईष्टइण्डिया कपनीके कर्मचारियोंकी ज्यादतियोंसे कितने मिलतेहैं तो वे लज्जाके मारे निश्चयही अपना मुख तोपलेंगे। उस जमानेमें ढाका और बाकरगञ्ज जिलोंमें देशी कारीगरीकी जड काटनेके लिये जो प्रयत्न हुएथे और इन दिनों बरिसाल और सिराजगञ्जमें स्वदेशी आन्दोलन रोकनेके लिये गोरखे और

-advised to leave power-loom weaving alone..... No one can maintain that European industrial conditions are an improvement on those which obtain in India from a humanitarian point of view. It is beyond dispute that the work in modern power-loom factories is physically, morally and intellectually degrading.

आसाम प्रान्तको जगी पुलिसके सहारे भले मानुस प्रजापर जैसी ज्यादतियां कीगयीहैं सो वे कर्मचारी सोचे और विचारे। विलायतमे उन्नीसवीं सदीके आरम्भमे लोगोको अपनी कपडेकी कारीगरी बनाये रखनेके लिये हिन्दुस्थानी कपडे खरीदने और बेचनेकी दशामे किसप्रकार दण्डित करनेका कानून बनाया गयाथा और इस बीसवीं सदीमे भारतवासी अपनी स्वदेशी कारीगरीकी रक्षाके लिये कुछ थोडासा प्रयत्नकर किसप्रकार सताये जारहेहैं इन बातोकोभी वे राजकर्मचारी एकबार सोचे और विचारें। किन्तु यह सब बाते अब उनके चित्तमें नही जमने पातीहैं अथवा उन बातोको सोचनेका मौका उनको मिल नहीं रहाहै । वे केवल इस समय अपने देशवासियोंकी उसी दशाको सोचते होगे जो हिन्दुस्थानसे अन्नका जाना बन्द होनेसे उनके ऊपर उपस्थित होगी। जब कि वे अपने देशवासियोंके आधे भोजनसे सूखनेवाले मलिन मुखकी चिन्ता अपने जीमे लारहेहैं तब उनकी दया, धर्म, न्याय, बुद्धि आदि अच्छी वृत्तियोंकी तिलाञ्जली होरहीहै। उत्तरभारतके किसी साधूने सत्यही कहाथा,—

"पेटदियो बडो पाप दियोहै।"

यानी हे भगवन्! चित्तमे सङ्कल्प होताहै कि अनेक सत्कर्म करू, किन्तु इस जले पेटके लिये एकभी सत्कर्म नही करसकताहू तुमने जो पेट दियाहै उसीसे सब पाप उपज रहेहैं।

अगरेज कर्मचारी लोग अपनी जातिके कारीगरोकी जीविका स्थिर रखनेके लिये जैसा प्रयत्न कररहेहैं वैसाही प्रयत्न हमकोभी अपनी रक्षाके लिये, अपने देशवासियोंकी जीविकाके लिये करनाही पडेगा। इस प्रयत्नमे कुछभी ढिलाई करनेसे हमारा नामतक दुनियाके पर्देसे मिटजायगा। अगरेज अवश्यही अपनी भुजाके बलसे बलवान हैं और हमारी भुजाओंमें बल नहीहै, किन्तु भुजाके बलसे चित्तके बलकी श्रेष्ठता सभीलोग स्वीकार करतेहैं। हम यदि चित्तके बलका परिचय देतेहुए अग्रसर होसकें, सहस्रों क्लेश सहते हुएभी धीरज और सञ्जमका अवलम्बनकर स्वदेशी ग्रहण और विदेश वर्जनकी प्रतिज्ञाको अटल रखसकें, यदि विलासिता और व्यर्थ मोहको त्यागदें, यदि त्यागहीको अपने शरीरका अलकार बनासकें, यदि स्वदेशका धन विदेश भेजनेमे हमारे हृदयमें ऐसी व्यथा उत्पन्न हो कि मानों हृदयका लोह सूख रहाहै तो भुजाके पशुबलसे बलवान होनेपरभी निश्चयही अगरेजोका प्रयत्न हमारे प्रयत्नके आगे परास्त होजायगा। इस कठोर साधनाको अवलम्बन बिनाकिये अपनी रक्षाकेलिये कोई दूसरा उपाय नहीहै।

किसीभी देशमें राजकर्मचारी, किसीभी कालमे तलवारके बलसे प्रजाके हृदयकी जीतनेमे समर्थ नहीं होसके हैं। जिस देशके लोगोंमें स्वदेशकी प्रीति और उन्नतिकी उच्च आकाङ्क्षा विद्यमान रहतीहै उसदेशके निवासियोकी उस स्वदेशप्रीति और उस उन्नतिकी उच्च आकाङ्क्षाकी तिलाञ्जली तलवारके बलसे कभी नही होसकतीहै। ज्यादतीसे कभी किसीभी देशमें सत्कार्योंकी जड नहीं काटी जासकीहै। पृथ्वीके प्रत्येक देशमें अनुचित रीतिपर पीडा पहुँचानेवालोंको सदैवही परास्त होना पडाहै। हमारे विषयमेभी वही बात सघटित होगी। क्योंकि स्वदेशी आन्दोलन सर्वथा न्याय और धर्मके अनुकूलहै। जो लोग इसको दबानेके लिये प्रयत्न कररहेहैं वेही न्याय और धर्मका उल्लघन कररहेहैं। किन्तु इस बीसवीं सदीमे इङ्गलेण्डके सुसभ्य शासनकी दशामें

ये ज्यादतिया कदापि चिरस्थायी नहीं होसकेंगी । इन ज्यादतियोंसे स्वदेशी आन्दोलनकी कोई हानि नहीं होगी । उलटे इनसे आन्दोलनकी शक्ति औरभी बढजायगी । राजकर्मचारियोंके जुल्मसे मुलका आन्दोलन अवश्यही कुछ घट सकताहै, किन्तु जैसा लक्षण दिखाई देरहाहै उससे स्वदेशी वस्तुओंपर देशवासियोंका आन्तरिक अनुराग कुछभी नहीं घटेगा । इस सत्यके उपस्थित रहनेपरभी जो लोग विचारतेहैं कि अङ्गरेजोंके भुजाके बलमें हमसे बडेहोनेके लियेही हमारे स्वदेशी सम्बन्धी प्रयत निष्फल होजायेंगे उनको चेतानेकेलिये हम स्वर्गीय बङ्किमचन्द्रकी कईएक सारगर्भ उक्तिया नीचे देदेतेहैं,–

"मनुष्योंका शारीरिक बल बहुतही सामान्यहै; तिसपरभी हाथी घोडांआदिका मनुष्योंकेद्वारा शासन होरहाहै । मनुष्योंके साथ मनुष्योंकी तुलना करनेसे मालूम होजायगा कि जो पहाडी जङ्गली जातिया हिमालयके पश्चिममें बसतीहैं उनके समान शारीरिक बलसे बलवान् पृथ्वीमें और कौनहै ? एक एक मेवाफरोशके थप्पडसे बहुतेरे जहाजी गोरोंको चक्करमें पडकर अंगूर, पिश्तोकी आशा त्यागदेते देखाहै । किन्तु तिसपरभी जहाजी गोरोंने समुद्रपारकर भारतको अपने कब्जेमे करलिया और उन काबुली मेवाफरोशोंसे भारतका सम्बन्ध केवल मेवे पानेकाही क्योंरहा । अनेकानेक हिन्दुस्थानी जातियोंसेभी अङ्गरेजोंका शारीरिक बल कमहै । शारीरिक बलमे सिखलोग अङ्गरेजोंसे बडेहैं, तिसपरभी सिख अङ्गरेजोंके पैरोंमे लोटरहेहैं । कारण इसका यहीहै कि शारीरिक बल सच्चाबल नहीहै । "

"उद्यम, एकता, साहस, और दृढता इन चार वस्तुओंको एकत्रकर जो शारीरिक बल काम लायाजाताहै वही सच्चा बलहै । जिस जातिमे उद्यम, एकता, साहस और दृढताहै उसका शारीरिक बल चाहे जैसाही क्यों नहो उसमे निश्चयही सच्चा बल है । ये चार वस्तु बङ्गालियोंमे कभी नहींहै, इसीसे बङ्गालियोंमे सच्चा बल नहीहै । "किन्तु बङ्गालियों समाजकी गति जैसीहै उससे उन चारवस्तुओंका बगालियोंके चरित्रमें सम्मिलितहोना कुछभी असम्भव नही हैं ।"

"हृदयमे वेगवती उच्च अभिलाषा रहनेसे उद्यम उपजताहै । अभिलाषा मात्रहीसे उद्यमकी उत्पत्ति नही होती । जब अभिलाषाका वेग इतना अधिक होता है कि, उस की पूर्णताके बिना चित्तमे शांति नहीं आती, तब अभिलाषाकी वस्तुके पानेके लिये उद्यमकी उत्पत्ति होतीहै । अभिलाषाकी पूर्ति न होनेसे चित्तमे जो क्लेश उपजता है उसका इतना प्रबल होना चाहिये कि वह चुपचाप आलस्यमे रहनेके सुखसे कहीं अधिकहो ! ऐसी बेगवती अभिलाषा जिस बङ्गालीके हृदयमे उपस्थित होगी उसमे उद्यमकी उत्पत्ति होगी । "

"जब उस बङ्गालीके हृदयमें वह एकही अभिलाषा जगती रहेगी, जब उस अभिलाषाका वेग हरएक बङ्गालीके हृदयमें इतना अधिक होगा कि सब बङ्गाली उसकी पूर्ति न होनेका दुःख चुपचाप आलस्यमे पडे रहनेके सुखसे कहीं अधिक अनुभव करनेलगेंगे तब उद्यमके साथ साथ एकताभी सम्मिलित होगी । "

"साहसके लिये और भी कुछ प्रयोजनीयहै । जब जातीय सुखकी वह अभिलाषा औरभी प्रबल होगी, इतनी प्रबल होगी कि उसकी पूर्तिके लिये प्राणतक दे देनेका संकल्प होगा तब साहसभी आजायगा । "

"यदि यह वेगवती अभिलाषा कुछदिन स्थायी होगी तो दृढता,आपही आप उपस्थित होगी।"

"इसलिये यदि कभी (१) बङ्गालियोंमें किसी जातीय सुखकी प्रबल होगी, यदि (२) हरएक बङ्गालीके हृदयमें वही अभिलाषा प्रबल होगी, यदि (३) वह प्रबलता इतनी अधिक होगी कि उसके लिये लोग प्राणतक देदेनेको प्रस्तुत होजायँगे और यदि (४) उस अभिलाषाकी प्रबलता कुछदिन स्थायी होगी तो बङ्गालियोमें अवश्यही सच्चा बल आजायगा।"

"ऐसा कहा नही जासकता कि बङ्गालियोंमे चित्तकी यह दशा कभी नहीं आवेगी। हरएक समयमे वह दशा सघटित होसकती है।"

देशकी आय और व्यय।

India is a poor country, and cannot afford a good, expensive and scientific Government. Our Government is already far too expensive and gets more so every year. The departments to cut down would not, in my opinion, be far to seek Native industries should be more protected to the exclusion, for instance, of Manchester trade.

Mr. Harris.—Deputy Commissioner, the Panjab.

जिस देशमे २२ करोड प्रजामेंसे १० करोड अच्छी फसल होनेके वर्षमें भी आधे भोजनसे दिन काटतीहै और अकाल पडनेसे दलके दल प्राण त्यागनेको लाचार होतीहै, जिस देशको स्वय विलायतके भारतमन्त्री तकने very very poor country अर्थात् बड़ाभारी दरिद्रदेश कहकर ठहरायाहै उस देशका शासनका कार्य्य जितना बनपडे उतनेही थोडे खर्चमें पूराकरना मनुष्य मात्रको उचित जानपडेगा। इसदेशके मनुष्य स्वभावहीसे जैसे राजभक्तहैं सीधेसादे तथा अधर्मसे डरनेवालेहैं उससे उनका शासन करनेमें कुछ अधिक प्रयास पाने तथा अधिक व्ययकरनेका कुछभी प्रयोजन नहीं रहसकता। किन्तु दुःखके साथ कहना पडताहै कि इसदेशके शासनकार्य्यमें अङ्गरेज लोग जितनी व्यय कियाकरतेहैं उतनी ऐसीही दशाके किसी दूसरेदेशमें नहीं होतीहोगी। जो महाशय सम्पूर्ण वृटिश साम्राज्यरूपी नौकाके सर्वप्रधान खेवैयेहैं वे विलायतके प्रधान मन्त्री इङ्गलेण्डके राजकोपसे वार्षिक ७५ हजार रुपये तनख्वाह पातेहैं। किन्तु उस वृटिशसाम्राज्यके एक अश दारिद्र भारतवर्षके राजप्रतिनिधि बड़ेलाट बहादुरको सदैव दुर्भिक्षकी पीड़ा सहनेवाली प्रजासे निचोडेहुए धनसे वार्षिक २ लाख ५० हजार रुपये तनख्वाह दीजातीहै। इसके अतिरिक्त भत्ता तथा बट्टेकी हानि आदि भरदेनेमें उनको औरभी अनेक सहस्र रुपये मिलजातेहैं। इतनी अधिक तनख्वाह पाकरभी वे प्रसन्न नहीहै। थोडे दिनकी बात है अपनी तनख्वाह बढानेकेलिये लार्डकर्जनने विलायतमे कर्त्तारोंकी सेवामें अर्जी भेजीथी। यह दारिद्र भारतवासियोंकेलिये सौभाग्यकी बातहै कि उनकी वह दरख्वास्त मञ्जूर नहींहुई। यह चाहे जो हो किन्तु बड़ेलाटकी तनख्वाह आदि एकही घटनापर

ध्यानदेनेसे यह पता लगजाताहै कि भारतीय प्रजाका पैसा किस फैयाजीसे खर्च कियाजाताहै। भारत साम्राज्यकी आय और व्ययकी आलोचना करनेसे इसप्रकार फैयाज़ी बहुतेरी बातोंमें दिखाई देतीहै।

इससे पूर्व कहागयाहै कि राजेश्वर राजाही प्रजासमाजके प्रतिनिधि और धनके रक्षकहैं। सभ्यदेशोंमे विशेषकर बृटिशराज्यमें राजकोषका सम्पूर्ण धन आम प्रजाका धन समझा जाताहै। अङ्गरेजोंके भारतराज्यके राजकोषमे जो धन जमा होताहै वहभी उक्त नियमके अनुसार वास्तवमें अगरेजी भारतराज्यकी प्रजाका धनहै। इसीसे राजकोषकी आय और व्ययके विषयमें बहस करनेका अधिकार हमारे प्रतिनिधियोंको लाटोंकी कानूनसभामे दियागयाहै। भारतगवर्नमेण्टकी आय और व्यय वास्तवमें हमारे देशकी आय और व्यय है। देशकी आय और व्ययका हिसाब देशवासियोंको जानना चाहिये। विदेशीय राजकर्मचारी लोग यदि अनुचित शक्तिके प्रकट करनेकी इच्छाके वशमें होकर अथवा भ्रमपूर्ण नीतिके पक्षपाती होकर प्रजाके जमाकियेहुए धनका अनुचित रीतिपर खर्चकरे तो हमको न्याय सगत रीतिपर उसका प्रतिवादभी करना चाहिये।

हमारी गवर्नमेण्टकी वार्षिक आय इतनेदिन सबमिलाकर ११० करोड थी। गत ४ वर्षका हिसाब देखनेसे मालूम होताहै कि कईवर्षसे लगातार भारतगवर्नमेण्टकी आय बढती जातीहै। सन् १९०१ ईस्वीमें प्रायः ११३ करोड, सन् १९०१–२ ईस्वीमे ११४॥ करोड़, सन् १९०२–३ ईस्वीमें ११६ करोड, १९०३–४ ईस्वीमें १२५ करोड़ ८३ लाख और सन् १९०४–५ ईस्वीमें १२७ करोड, रुपये आयहुई। वृद्धिका प्रमाण जैसा देखनेमे आताहै उससे अनुमान होताहै कि कोई दुर्घटना न होनेसे आगामी वर्ष लगभग १३० करोड रुपये वसूल होंगे। व्यय आयहीके अनुरूप होतीहै। आयके अनुरूप व्ययकरनेमें समर्थ न होनेसे हमारे सरकारी कर्मचारियोंने हमपर कुछ कर्जका बोझभी डालदियाहै। वह कर्ज "सार्वजनिक कर्ज" नामसे गिना जाताहै। इस सार्वजनिक कर्जका प्रमाण सन् १८५८ ईस्वीमें ५ करोड १० लाख पौण्ड (यानी उस समयके हिसाबसे ५१००००००० रुपये) था अब उस कर्जका प्रमाण बढते बढते ३ अरब ४१ करोड़ २१ लाख ४८ हजार ७९० रुपये होगयेहैं। इस कर्जके लिये इसके देनेवाले विदेशी महाजनोंके यहाँ भारतवर्षकी रेलके नहर, जगल और प्रजाके खेत आदि गिरो रखेहुएहैं।

सरकारी (सार्वजनिक) क़र्ज़।

इस लगभग ३४१ करोड़ रुपये कर्जमेंसे हिन्दुस्थानके धनियोंसे सरकारने प्रायः १४१ करोड ५२ लाख ५ हजाररुपये कर्ज लेरखाहै, बाकी २०० करोड ६९ लाख ४४ हजाररुपये इगलेण्डके महाजनोंसे लियेगयेहैं। इस कर्जका सूद प्रतिवर्ष दरिद्र भारतवासियोंको ११ करोड २३ लाख ६३ हजार ६६० रुपये देनापडताहै। इस सूदमेसे ६ करोड ५४ लाख ८६ हजार ५६० रुपये इगलेण्डके महाजनोंको मिलतेहैं। इस ३४१ करोडरुपये कर्जमेंसे १७६ करोड ८१ लाख ८१ हजार रुपये रेलवेकेलिये और ३७ करोड २५ लाख ६१ हजार रुपये नहर आदिकेलिये

कर्ज लियेगयेहैं । * बाकी १२६ करोड रुपयेमेंसे ७६॥ करोड रुपये पहलेकी ईस्टइण्डिया कम्पनीसे भारतवर्षका राज्याधिकार मोललेनेकेलिये गत सन् १८५८ ईस्वीमें कर्ज लियेगये थे । उस समय इसका प्रमाण ५१ करोड रुपये (अर्थात् ५ करोड १० लाख पौण्ड) था । इस समय पौण्डका भाव बढजानेसे उसका प्रमाण ५१ करोडकी जगह ७६॥ करोड़ रुपये होगयाहै । गत ५० वर्षके अन्दर गवर्नमेण्ट हमारे सार्वजनिक कर्जमेंसे प्रायः कुछभी भर नहीं सकीहै । यदि ईष्टइण्डिया कम्पनीको दियेहुए ५ करोड १० लाख पौण्ड ऋणको सरकार उसके पीछेके ३० वर्षोंमेंभी भरसकती तो पौण्डका भाव बढ़जानेसे उस समयका ५१ करोड रुपये अब बढकर ७६॥ करोड़ रुपये नहीं होजाते ।

ईस्ट इण्डिया कम्पनीने इसदेशके लोगोंसे भिन्न भिन्न ढगोंसे प्रायः १००० करोड रुपये लूटलियेथे, तिसपरभी उसके हाथसे भारतका राज्याधिकार लेतेसमय गवर्नमेण्टने हानिभरनेके मूल्यके बतौर उसको ५१ करोड दिये जबकि इगलेण्डकी गवर्नमेण्टने कम्पनीसे भारतका राज्याधिकार मोललिया तब मोललेनेका मूल्य इगलेण्डकी गवर्नमेण्टकोही इगलेण्डके राजकोषसे देना उचित था । किन्तु ऐसा नहीहुआ । यह जाननेपरभी कि इगलेण्डकी गवर्नमेण्ट अपने भारतराज्यके नफेकी मालिक होगी उसने राज्य मोललेनेके उस कर्जको हिन्दुस्थानी प्रजाके नाममेंही लिखलिया । अर्थात् मानो हमलोगोंनेही अपना रुपया देकर इगलेण्डकी गवर्नमेण्टके पास अपनेको बेचदिया । ब्रिटिश गवर्नमेण्ट एककौडीतक खर्च न कर ३० करोड हिन्दुस्थानी प्रजाकी प्रभुता पागयी । ईस्ट इण्डिया कम्पनीके पायेहुए राज्यका मूल्य भारतवासियोंनेही दिया किन्तु राज्यके अधिकारी हुए अगरेजलोग, छोटेसे बोअरयुद्धमे ४५० करोड़ रुपये खर्चकर छोटेसे बोअर राज्यका अधिकार अगरेजोंको प्राप्तकरना पडाहै, इसके उपरान्त उसे लेनेमें कितनेहीं अंग्रेजोंके खूनकी नदी बहगयीहै । किन्तु इस विशाल भारतसाम्राज्यको पानेकेलिये अंग्रेजोंको एक कौडीभी अपने टेंटसे निकालनी नहींपडी । साम्राज्यका मूल्य दिया भारतवासियोंने, अपने लोहूकी नदी बहायी भारतवासियोंने, किन्तु साम्राज्यके मालिक बने अंग्रेज । इसके आगे आधी सदीतक राज्य करते न करते नित्यकी भूखके क्लेशसे दुखी राजभक्त भारतवासी प्रजाको उन अंग्रेजोंने ३४१ करोड़ रुपये कर्जकी कीचडमें डबोदिया । ऐसी विचित्र घटना क्या ससारके इतिहासमें और कहीं दिखाई देती है ?

सन् १८६० ईस्वीमें इगलेण्डके जातीय कर्जका प्रमाण ८२ करोड़ ६० लाख पौण्डथा । सन् १८९६ ईस्वीमें वह कर्ज घटकर ६५ करोड २० लाख पौण्ड होगया । इगलेण्डके राजकर्मचारियोने अपनी प्रजाका १७ करोड़ ४० लाख पौण्ड कर्ज ३६ वर्षमें भरदिया, किन्तु उस समयके भीतर भारतीय प्रजाका कर्ज कई गुणा बढगया । सन् १८५८ ई०मे भारतीय प्रजाका कर्ज ५ करोड १० लाख पौण्ड अर्थात् ५१ करोड रुपये था, सन् १८६२ ईस्वीमें वह बढकर ९७ करोड रुपये होगया । आगेके ४१ वर्षोंमें वह और भी बढकर ३४१ करोड रुपये होगया

* Vide Statistical Abstract of British India 38th No. (1904 A. D)

गत ५० वर्षोंमें राज्यकी आय जैसी बढ़ीहै वैसाही कर्जभी बढ़ाहै । कर्जमें फसनेमें भारतगवनमेण्ट मूर्ख किसानोंकेभी कान काटनेका परिचय देतीहै ।

अङ्गरेजी राज्यकी २३ करोड भारतवासी प्रजाका कर्ज ३४१ करोड रुपयेहैं । ईस्टइण्डिया कम्पनीके हाथसे जब दयावती विक्टोरियाने भारतराज्यका शासन और पालनका भार लेलिया था तब हमारे सरकारी कर्जका प्रमाण केवल ५१ करोड रुपये था अर्थात् ५० वर्ष पूर्व भारतवासियोंके सरकारी कर्जका प्रमाण हर मनुष्यपर लगभग ३) रुपये था अब वह बढकर हर मनुष्यपर १४॥।) आने होगयाहै । ५० वर्षोंमें प्रजाके सरकारी कर्जकी वृद्धि प्रायः पचगुणी हुई है, इससे बढकर दुखकी बात ओर क्या होसकतीहै ! अवश्यही हरएक सभ्य जातिका अनेक सहस्र करोड रुपये कर्ज है, किन्तु स्वतन्त्र जातिकी कर्जसे परतन्त्रजातिके कर्जकी तुलना करना ठीक नहीं है । स्वाधीन और सभ्यजाति कर्जसे जो रुपये संग्रह करतीहै उसे वह देश जीतकर अपने राज्यकी आय और गौरव बढाने, भिन्नदेशमें अपनी जातिकी आबादी फैलानेमे तथा अपने शिल्प वाणिज्य आदिका विस्तार करनेमे लगादेती है; किन्तु परतन्त्र जाति विशेषकर भारतवासियोंकी भाँति परतन्त्र जातिके सरकारी कर्जसे इस प्रकारके महान् उद्देश्य सिद्ध नहीं होते । गत १००वर्षके भीतर भारतमे २५ वार दुर्भिक्ष हुआहै और दुर्भिक्षसे ३ करोड मनुष्योंने प्राण देदियेहैं, किन्तु गवर्नमेण्टने प्रजाके लिये कृषिसम्बन्धी बेङ्क स्थापन करनेमे कितना खर्च कियाहै ? भारतमें दिनपर दिन खेतीकी दशा बिगड रही है । विदेशीय अन्न आदिकी तुलनासे भारतके अन्न आदि विदेशीय बाजारोंमें हीन दरजेके गिने जारहे हैं किन्तु क्या इस दोषको दूर करनेके लिये भारतके प्रत्येक प्रान्तमे एक एक अच्छा कृषिकालेज स्थापन कियागयाहै ? देशमें उच्चशिक्षा देनेके लिये कितना खर्च किया जारहाहै ? प्रजाकी तन्दुरुस्ती बनारखनेके लिये, गावोंमें अच्छे जलका प्रबन्धकर मलेरिया और हैजेकी धूम दूरकरनेके लिये कितना खर्च कियागयाहै ? भारतवासी प्रजाकी प्रतिनिधिरूपी अंगरेजी गवर्नमेण्टने अबतक गाय भैंस भेडआदिकी संख्या बढाने और उनके वशकी उन्नति करनेमे कितना खर्च कियाहै ? यदि इन सब हितकारी कार्य्योंके लिये अधिक खर्च न किया गयाहो तो गवर्नमेण्टने ३४१ करोड रुपये क्यों कर्ज लिये कदाचित् हरएक भारतवासी ऐसा प्रश्न पूछ सकताहै ।

सन् १८३७ ईस्वीमे इगलेण्डकी राजगद्दीपर महारानी विक्टोरियाके बैठनेके दिनसे सन् १८५७ ईस्वीतक समयको इसदेशके राजकोषकी आय और व्ययपर ध्यानदेनेसे मालूम होताहै कि भारतीय आयसे भारतके शासन पालन आदि कार्य्योंकी सारी व्यय अनायासही पूरीहोकर प्रतिवर्ष राजकोषमे बहुतरुपयेकी बचत होजातीथी । किन्तु कर्तारोंने भारतराज्यकी इगलेण्डीय व्यय अर्थात् होमचार्जका खर्च प्रतिवर्ष अधिक अधिक बढाकर तथा उस रुपयेको इसदेशके निवासियोंसे निचोडकर इसदेशकी प्रजाका सरकारी कर्ज तिलसे पहाड करदियाहै । सन् १८३७ ईस्वीमें जिस होमचार्जका प्रमाण २ करोड ३० लाख रुपयेथा वह सन् १८५७ ईस्वीमें बढकर ६ करोड १६। लाख रुपये होगयाथा । यदि इस होमचार्जकी व्यय भारतवर्षसे नहीं लीजाती, यदि अगरेजोंकी विदेशीय आबादियोकी भाँति भारतवर्षकेभी शासनकी देखभालका खर्च इगले-

ण्डहीके राजकोषसे किया जाता ※ तो भारतवर्षको कुछभी कर्जमें नहीं पडना पडता। उलटे भारतके राजकोषमे बहुतकरोड रुपये इकट्ठे होजाते। किन्तु अंगरेजोंने भारतवर्षके साथ भिन्न-प्रकार वर्तावकर भारतके दुर्भाग्यसे उसको उसका उलटा फल चखाया। सन् १८५८ ईस्वीके आरम्भमे भारतवासियोंके सरकारी कर्जका प्रमाण वढकर ६९॥ करोड रुपये होगयाथा। सन् १७९२ ईस्वीसे सन् १८३७ ईस्वीतक भारतीय राजकोषकी व्ययसे आय बहुत अधिकथी। उस समय राज्यशासनके काममे देशी कर्मचारी प्रायः नहीं लियेजातेथे। बहुत तनख्वाह देकर गोरोंका पालन करतेरहनेपरभी उन दिनोंके शासनकर्ता आयसे व्यय बढने नही देतेथे। इसके उपरान्त यहाकी सारी व्यय पूरीकर ईस्टइण्डिया कम्पनीको होमचार्जके वतौर प्रतिवर्ष २ करोड रुपये विलायत भेजने पडतेथे। ये रुपये न भेजनेसे कम्पनीको कुछभी. कर्जलेनेकी जरूरत नहींहोती।

इसके पश्चात् सिपाहियोंके गदरको दवानेके लिये इंगलेण्डने जो ४० करोड खर्च किये सोभी भारतवासियोंसेही लेनेका प्रबन्ध कियागया। ईस्टइण्डिया कम्पनीसे भारतवर्षको मोललेनेका मूल्य जिसप्रकार भारतवासी ही अंग्रेजोंको देनेकेलिये लाचार हुएथे वैसेही भारतके गदरको दवानेका खर्चभी भारतवासियोंको कर्ज काढकर देनापडा। केवल यही नही गदरके कारण जब भारतीय राजकोषकी दशा वडीही खराब हुईथी उस दुस्समयमें अंग्रेजोमें गदरको दबानेके लिये अपनी विलायतसे भेजीहुई सेनाका खर्च तो भारतसे वसूल करहीलिया और साथही सेनाके यहा आनेसे छः मास पहलेतकका वेतन आदि खर्च भारतवासियोंसेही लेलिया। अवश्यही सब लोग जानतेहैं कि वह गदर अंग्रेजोंकेही दोषसे हुआ था।

जिन्होंने गदर कियाथा उन्होंने धर्मका नाश होनेके भयसेही कियाथा, सो उनको कोईभी अपराधी नही ठहरासकता। तिसपरभी बहुतेरोंने अपना प्राण देकर गदरकरनेके पापका प्राय-श्चित्त कियाथा। जो लोग इस दुर्घटनाके समय नहींपरे अथवा पीछे फाँसीकी सजा नही पागये उनकोभी अन्यप्रकारसे वडी वडी सजा और दिक्कतें झेलनी पडीथीं। बहुतेरे निर्दोष मनुष्योंकोभी उस दण्डका अश अपने माथे लेना पडाथा। गदरसे कोई न कोई सम्बन्ध रहनेकी बात जिनलोगोंके विरुद्ध प्रकट हुईथी उनकी दौलत और जायदाद जब्त करनेसे राजकर्मचारी हिचके नहींथे। इस प्रकारसे थोडे पापकी काठिन सजा जब विद्रोहियोंमेंसे बहुतेरोंको भोगनी पडीथी तब फिर दूसरे भारतवासियोंके मत्थे जो निर्दोषथे ४० करोड रुपयेका भार क्यो डालागया? जिन्होने अपराध कियाथा उनको तो दण्ड मिलगयाथा, किन्तु जो निरे निर्दोषथे, बल्कि जिन्होंने स्वदेशवासी सिपाहियोंके विरुद्ध अंग्रेजी सरकारको गदर दवानेमे सब प्रकारकी सहायता दीथी उनको सरकारने ४० करोड रुपये जुर्मानेकी सजा क्यों दी? और अन्तमें उनके अस्त्र क्यों छीनलिये? उधर ट्रांसवालवासियोने अंगरेजोसे लडकर क्यो भिन्नही फल प्राप्तकिया?

※ अङ्गरेजोंकी विदेशी आबादियोंको शासन कालपर निगहबानी रखनेकेलिये विलायतमें जो कलोनियल आफिस है उसका खर्च वार्षिक १५ लाख रुपयेका है। ये सभी रुपये इंगले-ण्डके राजकोषसे दियेजातेहैं, किन्तु भारतीय शासनकी निगहबानीके लिये विलायतमे जो इण्डिया आफिसहै उसमे वार्षिक खर्च होतेहुए ४५ लाख रुपयेकी एक कौडीभी इंगलेण्डके राजकोषसे नही दीजाती, सभी दुर्भिक्षके मारेहुए भारतवासियोंसे वसूल कियाजाताहै।

तेहैं कि भोजनमें निमकका हिस्सा घटजानेसे हैजा, प्लेग, रक्तपित्त, ज्वर आदि रोगोंके होनेकी सम्भावना अधिक होतीहै । इन सब रोगोंसे भारतवासी दिनपरदिन जीर्ण होतेजातेहैं, तिसपरभी सरकारी कर्मचारीलोग निमकपर कडा महसूल वसूल करनेसे बाज नही आतेहैं ।

एक मन निमक बनानेमें साधारणतः ६ पैसेसे ८ पैसेतक खर्च होताहै । २ आनेके मालपर १॥) रुपये महसूल लगाना निश्चयही घोर निष्ठुरताका परिचय है । किसीभी सभ्य देशमें निमकपर महसूल नही लियाजाता । तन्दुरुस्ती बना रखनेकेलिये हरएक मनुष्यका प्रतिवर्ष कमसे कम १० सेर निमक खाना जरुरीहै । किन्तु महसूल अधिक होनेसे भारतवासी खरीदनेमें असमर्थ होकर अबतक प्रतिवर्ष मनुष्यपीछे ६॥ सेरसे अधिक निमक नहीं खासकतेथे । भारतवासी मनुष्यपीछे प्रतिवर्ष जो ६॥ सेरके हिसाबसे निमक लेतेहैं उसीमेंसे गऊ भैंसोंकोभी कुछ कुछ खिलाना पडताहै. अर्थात् इस हिसाबसे बाहर गऊ भैंसोंके लिये अलग निमक वे नही लेसकतेहैं । सो इससे भलीभाति समझा जाताहै कि तन्दुरुस्ती बना रखनेके लिये जितना निमक खाना जरूरीहै उससे कितना कम निमक खाकर भारतवासियोंको दिन काटने पडतेहैं. अवश्यही अब महसूल घटनेसे दरिद्रियोंके लिये इससे कुछ अधिक निमक लेनेका सुभीता हुआ है, किन्तु दीर्घकालतक कम निमक खाते रहनेसे लोगोंकी तन्दुरुस्ती जितनी बिगड चुकीहै तथा पशुओंका जितना नाश होचुकाहै उस नुकसानकी भरती किसी प्रकार नहीं होसकती (१) सब देशोंमेंही विलासकी वस्तुओंपर महसूल लगाया जाताहै । किन्तु इस दुर्भाग्य देशमे तन्दुरुस्ती बना रखनेके लिये निमककी भाति बडीही जरुरी चीजपरभी कडा महसूल लगाया गयाहै ।

इस विषयमे विदेशी निमक मँगाये जानेकी बातकी भी संक्षेपमें आलोचना होनी चाहिये । पहले निमकके व्यवसायमे हिन्दू और मुसलमान नरेशोंका ही पूरा अधिकार था । समुद्रतटपर अनेक स्थानोंके देशी महाजन निमक बनानेके कारखाने रखतेथे । उस समय देशमे जो निमक बनता और मिलताथा उसीसे देशवासियोंका भलीभाति गुजारा होताथा । विदेशोंसे उन दिनों निमक लानेकी कुछभी दरकार नही होतीथी । मनुष्योंकी वृद्धिके साथ साथ अवश्यही देशमे निमकके व्यवसायका विस्तारभी होता । किन्तु इस समय गवर्नमेण्टके निमक व्यवसायका पूरा अधिकार अपने हाथमें लेलेनेसे देशवासियोके विना रोकटोक उस व्यवसायको करनेमें बाधा उपस्थित हुई है । और दिनपर दिन विदेशोंसे अधिक अधिक निमक इस देशमें आरहा है । गत दस वर्षोंमे विदेशी निमककी आमदनी फी सैकडे ३८ गुणी बढी है । सन् १८९१–९२ ई०में विलायतसे ६० लाख २ हजार १०० मन निमक इस देशमे आया था । सन् १९०१–२ ई०मे लगभग ७० लाख मन आया । केवल विलायतही नहीं और और

---

(१) यथेष्ट निमकके विना इस देशकी गौ भैसोंका जैसा नाश हुआ है उसके विषयमें लार्ड लारेंसने कहाहै:–

I believe myself, that a great deal of the loss of the cattle from murain in India has arisen from want of salt. I have very strong opinion on the subject.

देशोंसेभी निमकका आना बढगयाहै । सन् १८९१–९२ ईस्वीमे भारतमें सब मिलाकर १ करोड ९८ हजार मन विदेशी निमक आयाथा । सन् १९०१–२ ई०में सब मिलाकर विदेशी निमक २ करोड ४९ लाख ३७ हजार ४०० मन आया । विदेशी निमक स्वधर्मनिष्ठ हिन्दू मुसलमानोंकी दृष्टिमें अशुद्ध समझा जाताहै । जो हिन्दू विदेशी निमकका बर्तावभी करते हैं वे दैव तथा पैत्र कार्य्योंमें उसका व्यवहार नही करते । निष्ठावान् हिन्दू भ्रमसेभी विदेशी निमकको नहीं छूते, क्योंकि उसमें समय समयपर भाति भांतिके जीवोंकी हड्डियोंके टुकडे मिलतेहैं । अनेक लोग कहते हैं कि बहुतेरे निमकके जहाजोंमें गौ और सुअरके मास निमकके भीतर तोपकर इसदेशमें मँगाये जातेहैं । जिस बगदेशमे विदेशी निमक अधिक आताहै वहांके अनेक हिन्दू मुसलमानोने इस बातको जानकर अब विदेशी निमक खाना छोडदियाहै । इस दशामें यदि गवर्नमेण्ट देशी व्यवसायियोंका उत्साह बढावे तो इस लवणसमुद्रसे घिरेहुए भारतवर्षमें हिन्दू मुसल्मानोंका धर्म बिगाडनेवाला विदेशी निमक मँगानेका प्रयोजन निस्सन्देह देखतेही देखते दूर होजाय ।

इस देशमे नशेकी वस्तुओंका प्रचार बढानेके लियेभी सरकारी कर्मचारी बहुतकुछ प्रयत्न किया करते हैं । २५ वर्ष पहले इसदेशमे नशेकी वस्तुए जितनी बिकतीथीं उनसे गवर्नमेण्टकी आय २ करोड ८४ लाख रुपये साल होतीथी, किन्तु इस समय आबकारी की सरकारी आय वार्षिक ७॥ करोड रुपयेतक पहुच गयीहै । जहां प्रजाके चारित्रका बल बढनेमें सहायता करना गवर्नमेण्टको कर्तव्यहै तहा वह धनके लोभमें पडकर नशेकी चीजोंके प्रचार और साथही पशुत्वकी वृद्धिमें सहायता देरहीहै । देश वासियोंको ज्ञान देनेकेलिये ग्रामग्राममें विद्यालय खोलनेके विषयमें सरकारका कोई बडा आग्रह नहीं दिखाई देता, किन्तु सरकारी कर्मचारियोंका विशेष आग्रह गावगांवमें शराब, गाजा, अफीम आदिकी दूकान खुलवानेमें दिखाई देताहै । मर्दुमशुमारी की रिपोर्टसे मालूम होताहै कि अगरेजी भारतमें गावोंकी सख्या ५॥ लाखहै जिनमेंसे पाचवें हिस्सेमे विद्यालयहैं । बाकी ४ हिस्सोंमें ग्रामवासियोंके लिखने पढनेका कोई प्रबन्ध नहींहै । किन्तु अनेक ग्रामोंमे नशेकी चीजोंकी दुकाने हैं । गतवर्ष गवर्नमेण्टने कहाथा कि अबसे आबकारीकी आय बढानेका प्रयत्न नही किया जायगा, किन्तु फल इसका उलटा हुआहै । इसवर्षभी आबकारीकी आय बढीहै ।

स्टाम्पका कानूनभी लोगोंके लिये सामान्य कष्टदायक नहीहै इस समयकी भॉति विचार बेचनेकी चाल इसदेशमे कभी नहीथी । सबसे बढकर अफसोसकी बात यहहै कि धनशाली इगलेण्डमेंभी जितना स्टाम्पका मूल्य लियाजाताहै उससे अधिक मूल्य दरिद्र भारतमे लेनेकी चाल जारी कीगयीहै । विलायतमें जमीन गिरो रखनेके दस्तावेजके लिये ५ पौण्ड अर्थात् ७५ रुपयेपर ३ पेन्स अर्थात् ३ आना, ५०० पौण्ड अर्थात् ७५००) रुपयेपर १ पौण्ड अर्थात् १५) रुपयेका कोट फी स्टाम्प लगताहै। हिन्दुस्थानमें वैसे दस्तावेजके लिये ५०) रुपयेमें ४ आना और १०००) रुपयेमें ५) रुपयेका कोट फी स्टाम्प लगताहै । विलायतमे जायदाद हस्तान्तर करनेके दस्तावेजपर ५ पौण्ड अर्थात् ७५) रुपयेके लिये ६ पेन्स अर्थात् ६ आने और २०० पौण्ड अर्थात् ३०००) रुपयेके लिये १५) रुपयेका स्टाम्प लगानेका नियम है, किन्तु वैसे कामके लिये भारतमें ५०)

रुपयेमें आठ आना और १०००) रुपये में १० रुपयेका स्टाम्प लगानेका नियमहै । इस देशमें २०) रुपयेसे अधिककी रसीदपर एक आनेका स्टाम्प लगाना पडता है । विलायतमें ३०) रुपयेकी रसीदपर एक पेनी यानी एक आनेका स्टाम्प लगाना पडता है । इन सब दृष्टान्तोको छोडकर दूसरे दस्तावेजोंपरभी विलायत वासियोंको भारतवासियोंसे कम मूल्यका स्टाम्प लगाना पडताहै ।

पहले इस देशमें जो पञ्चायतकी चाल थी उसके अङ्गरेजी नीतिके कौशलसे नष्ट होनेसे लोगोंको आपही आप अपना शासन करनेकी शक्ति और एक दूसरेपर पूर्ववत् विश्वास और प्रीति बिगडगयीहै । इस लिये सर्वस्वान्त होते रहनेपरभी लोगोंमे मामलाबाजीकी प्रवृत्ति दिनपर दिन बढती जातीहै । (१) सन् १८९२ ई०मे इसदेशमे जहाँ कुल २००१३८४दीवानी मुकद्दमें हुए थे तहाँ गत सन् १९०१ ई०में २२८८५५६ हुए ।

अंगरेजी जमानेमें भारतमें जगलातका महकमा जारी होनेसे दरिद्र प्रजाको इन्धन सम्बन्धी बडा भारी क्लेश सहना पडताहै । सम्राट् सप्तम एडवर्ड महोदयके राज्याभिषेकके समय भारतके किसी २ प्रान्तोकी प्रजाने महसूल बिना दिये सूखी लकटी इकट्ठी करनेका अधिकार पानेकी प्रार्थनाकी थी । दुःखकी बात यह है कि प्रजाकी वह सामान्य प्रार्थनाभी स्वीकृत नहीं हुई थी । अवश्यही पूर्व राजाओंके दिनों भारतीय प्रजा जंगलोंसे लकडी बटोरनेका अधिकार रखती थी । अँग्रेजोंके प्रजाके उस अधिकारको छीनलेनेसे क्लेश और व्यय दोनोंकी ही वृद्धि हुई है । वाणिज्यकी लडाईमें हारीहुई धनबलरहित प्रजाकी निमक, विचार और लकडी पानेमें व्ययकी वृद्धि कभी सुखजनक समझी नहीं जासकती । जगलातके सबबसे अनेक स्थानोंमे प्रजाकेलिये गौ, भैंस चरानेमें बड़ाभारी क्लेश उपस्थित हुआहै ।

अफीमके व्यवसायको गवर्नमेण्टके सिवाय और किसीके करनेके अधिकार न रहनेसे प्रजा उस नफेके व्यवसायसे वञ्चित हुईहै । अगरेजोंके इस देशमें आनेसे पहले इस नफेके व्यवसायमे

---

(१) कोम्बाटुरके भूतपूर्व मजिस्ट्रेट और मदरास म्यूनिसीपालिटीके भूतपूर्व सभापति मिस्टर आरुण्डेल कहतेहैं,–

It is a singular feature of the centralizing tendency of our bureaucratic rule, that the village communities have lost much of the power of self-rule and self help they formerly possessed. The native jury-system, the punchayt has been rudely shaken.

भारतगवर्नमेण्टकी मालगुजारी और खेती महकमेके पूर्वसेक्रेटरी सर एडवर्ड वर्क थोडे दिन पहले बम्बईके मालाबारी महाशयको गावोंकी पञ्चायत फिर गठित करनेकी असम्भवता प्रकटकर जो पत्र लिखाथा उसमे मानागयाहै कि,–

During the first half of the last century, we destroyed the village community in this part of India, Sir Richard Temple striking the final blow in the Central provinces

प्रजाकी पूरी स्वतन्त्रताथी । ईस्टइण्डिया कम्पनीने अफीमकी खेतीको अपने हाथमें लेकर प्रजाको बड़ाभारी नुकसान पहुँचायाहै । कलकत्तेकी वृटिशइण्डियन एसोसिएशनने सन् १८५३ ईस्वीमें इस अत्याचारयुक्त अफीमके व्यवसायसे गवर्नमेण्टको रोकनेकेलिये विलायतकी पार्लियामेण्ट-महासभामे अर्जी भेजीथी । किन्तु उससे कोई फल नहीं हुआ था । सो अफीमकी आमदनी (वार्षिक साढ़ेआठ करोड रुपये) प्रजाके हाथमें न आकर पहले सरकारी खजानेमें पहुँच रहीहै और आगे युद्धविभागमें खर्च होरहीहै ।

इन सब कारणोंको छोडकर औरभी बहुतेरे कारणोंसे प्रजाका क्लेश बढाहै । गत २० वर्षोंके भीतर जब कभी सरकारी खजानेमें धनकी कमी हुईहै तभी मालगुजारीके मन्त्री रुपयेका मूल्य घटजानेको उसका कारण बताकर उसे दूरकरनेके लिये प्रजापर अधिक टैक्स जारी करते आयेहैं । धनकी कमीके लिये पहले दुर्भिक्षमें सहायतादेना बन्द कियागयाथा । सन् १८८६, १८८७ और १८८८ ईस्वी इन तीन वर्षोंमें धनकी कमी रहनेसे अकालग्रसित प्रजाको किसी प्रकार सरकारी सहायता नहीं मिली थी । उसके पश्चात् उस सहायताका प्रमाण कुछ घटादियागया, तबसे वह कमी बराबर चली आरहीहै । इससे प्रजाका क्लेशबढा, किन्तु गवर्नमेण्टकी कल्पित धनकी कमी बनीही रही जिससे प्रजापर लगातार टैक्स बढाकर आमदनी और खर्चका समञ्जस रखनेका प्रयत्न पूरा होनेलगा । सन् १८८३–८४ ईस्वीसे १८९५ ईस्वीतक १२ वर्षोंमे गवर्नमेण्टने प्रजापर नौबार नया टैक्स जारी कियाहै ।

सन् १८८६ ईस्वीमें इन्कम्‌टैक्स जारीहुआ । उसके एक वर्ष पीछे सन् १८८७–८८ ईस्वीमें निमकपर ड्यूटी बढी । उसके आगेके वर्षमें पटवारी टैक्स और किरासिन तेलपर टैक्स जारीहुआ । इसके उपरान्त उसी वर्ष ब्रह्मदेशवासियोंको भी इन्कम्‌टैक्स देनेको लाचार कियागया । उसके आगेके वर्षमें विलायती शरावपर महसूल जारी कियागया । सन् १८९०–९१ ई०में देशी बिअर शरावपरभी महसूल लगा । सन् १८९२–९३ ईस्वीमें ब्रह्मदेशकी खारी मछलियो-पर टैक्सलगा । सन् १८९३–९४ ईस्वीमे कपासकी बनीहुई वस्तुओंको छोडकर सब दूसरी वस्तुओंपर सैकडे ५) रुपयेके हिसाबसे फिर महसूल लगायागया । अन्तमें सन् १८९४–९५ ईस्वीमें कपासकी बनीहुई वस्तुओंपरभी महसूल जारीहुआ ।

सन् १८९६ ईस्वीमें बाणिज्यकी वस्तुओंपर टैक्सके बारेमे जो अदल बदल हुआ उसके फलसे विलायतसे आनेवाले कपासके सूतपरका सैकडे ५) रुपयेका टैक्स उठगया । इसके उपरान्त विदेशी वस्तुओंपरका महसूल सैकडे ५) रुपयेकी जगह ३॥) रुपये कर दियागया । इससे गवर्नमेण्टका वार्षिक ५० लाख रुपयेका नुकसान हुआ । किन्तु मैञ्चेस्टरके जुलाहोंके हितके लिये गवर्नमेण्ट वह नुकसान सहनेको लाचारहुई और हिन्दुस्थानमे बननेवाले कपड़ोंपर भी सैकडे ३॥) रुपये महसूल लगाकर उस नुकसानका कुछ अंश भरलेने लगी । सन् १८९९ ईस्वीमें विदेशोंकी सरकारी सहायतासे सस्ती बनीहुई शक्करके ऊपर ड्यूटी लगाई गयी । इस प्रकारसे १२ वर्षोंमें उक्त महसूलोंके लगानेसे गवर्नमेण्टकी आमदनी वार्षिक प्रायः १२ ३० लाख रुपये बढगयी ।

इतनेहीमें गवर्नमेण्टका आमदनी बढाना बस नहींहुआ। और और विषयोंकी भाँति जमीनकी मालगुजारीभी उक्त १२ वर्षोंमें बहुत बढायी गयीहै। बडेही आश्चर्य्यका विषय यह है कि गत ८ वर्षोंमें देशमें दोबार प्रचण्ड अकाल पडनेपरभी जमीनकी मालगुजारी हद्दसे ज्यादा बढीहै। सन् १८९६ ईस्वीसे सन् १९०१ ईस्वीतक गवर्नमेण्टने लगभग २६ करोड रुपये की मालगुजारी प्रतिवर्ष पहलेसे अधिक वसूल कीहै। इसके उपरान्त लार्ड कर्जनके ७ वर्षके शासन-कालमे सब मिलाकर ४९ करोड रुपये प्रजासे अधिक वसूल कियेगयेहैं। अब इस बातकी आलोचना करनीहै कि इस दरिद्रदेशमें इसप्रकार अधिक अधिक महसूल लगातीहुई सरकार अपनी जो आमदनी बढारहीहै उसका खर्च किस प्रकारसे कररहीहै।

कृषिविभागमें सरकारी खर्च।

इससे पूर्व कहागयाह चाहे ज्ञानवश अथवा अज्ञानवश प्रजाका कष्ट बढातेहुएभी सरकारी कर्मचारी लोग दिनपरदिन किसप्रकारसे प्रजापर मालगुजारी बढाते आरहेहैं। किन्तु दुःखके साथ कहना पडताहै कि मालगुजारीकी उस वृद्धिके अनुसार कृषिकार्य्यकी उन्नतिकेलिये धन लगानेमें वे उद्यत नहीहोते। भारतवर्ष कृषिप्रधान देशहै। अंगरेज वणिकोंकी कृपासे इसदेशके शिल्प और वाणिज्यका सत्यानाश होजानेसे भारतवासियोके लिये कृषि छोडकर जीविकाका कोई और उपाय नहीं रहगयाहै। प्रायः १८ करोड मनुष्योंके लिये खेतीही जीविकाका एकमात्र उपायहै, किन्तु गवर्नमेण्टने इन १८ करोड किसानोकी उन्नतिके लिये वार्षिक १० लाख रुपयेसे अधिक अबतक नही खर्च कियाहै। पाठकोंके जाननेके लिये यहा यह हिसाब दियाजाताहै कि पश्चिमीदेश वाणिज्यप्रधान होनेपरभी वहाके शासनकर्ता लोग कृषिकी उन्नतिके लिये प्रतिवर्ष कितना खर्च कियाकरतेहैं;—

देश	खर्च
आस्ट्रिया	२४७५०००००० रुपये
रूस	६००००००००० रुपये
हँगेरी	२५५००००००० रुपये
अमेरिका	१२०००००० रुपये
इटाली	९०००००० रुपये
स्वीडन	५२५०००० रुपये
डेनमार्क	३०००००० रुपये

डेनमार्कके निवासियोंकी सख्या २५ लाखसे अधिक नहींहै। ❀ किन्तु डेनमार्ककी गवर्नमेण्ट अपनी प्रजाकी इस छोटीसी सख्याकी कृषिसम्बन्धी उन्नतिकेलिये वार्षिक ३० लाख रुपये खर्च

❀ पश्चिमी देशोंमें किसानोंकी सख्या कितनीहै सोभी यहा सक्षेपमें लिखदीजातीहै। फी सैकडे आस्ट्रियामें ३८, हगेरीमें ६४, इटालीमें ४७, स्विटजरलेडमे ३७, फ्रासमें ४४, इङ्गलेंड में १०, स्काटलैंडमें १४, अयरलैंडमे ४४, अमेरिकामे ३६, और डेनमार्कमें ५०।

कियाकरतीहै। और इस ३० करोड मनुष्योसे भरीहुई भारतभूमिके १८ करोड किसानोके मंगलकेलिये हमारी बडी भारी सभ्य गवर्नमेण्ट वार्षिक १० लाख रुपयेसे अधिक खर्च करनेको समर्थ नहीहुईथी। हा सन् १९०५ ईस्वीसे कृषि विभागके लिये वार्षिक २० लाख रुपये खर्च-नेका प्रबन्ध हुआहै।

कृषिकार्य्यकी उन्नतिका प्रथम और प्रधान उपाय जलका प्रबन्धहै। किन्तु इस विषयमे गवर्नमेण्ट धन लगानेमे बहुतही हिचकतीहै। किसानोंको जल सींचनेकी सुबिधा करदेनेके लिये पहले वार्षिक ७५ लाख रुपयेकी मजूरी थी। आगे उसमे वार्षिक १ करोड रुपये खर्च करना निश्चय हुआ। किन्तु कर्त्तारोके यत्न और आग्रहकी कमीसे किसीभी वर्ष जल सिंचवानेके पीछे पूरे एक करोड रुपये खर्च नही हुए। यह चाहे नहो पर रेल फैलानेमे सरकारी कर्मचारियोंने अपनी सारी शक्ति-का प्रयोग कियाहै।

गत सन् १९०२–३ ई०के हिसाबोंसे मालूम होताहै कि रेलके लिये २९ करोड ८५ लाख ७४। हजार रुपये खर्चकर गवर्नमेण्टको ३० करोड २० लाख ८॥ हजार रुपये मिले हैं। उस वर्ष जल सींचनेके काममें ३ करोड ८६ लाख २८ हजार ६६० रुपये खर्चकर ४ करोड १५ लाख ३४ हजार ८०५ रुपये मिलेथे। अर्थात् ३० करोड रुपये लगाकर जहा गवर्नमेण्टने ३४ लाख ३४। हजार रुपयेका नफा पाया था। तहा जल सिचायीमे प्रायः ३॥। करोड़ रुपये खर्चकर २९ लाख ६ हजार रुपये नफा पायाथा। सन् १९०३–४ ई०मे रेलके पीछे ३२ करोड़ ३३ लाख ६८ हजार, रुपये खर्च कर १ करोड २९ लाख १० हजार रुपये नफेमे मिलेथे। और जल सिचायीके काममें ४ करोड २ लाख रुपये खर्चकर ३४ लाख ७६ हजार ३४० रुपये नफेमें मिलेथे। अर्थात् रेलमें जो धन खर्च हुआ था वह जल सिचायीके काममें खर्च करनेसे कमसे कम २ करोड ८० लाख रुपये नफेमे मिलते तथा उससे प्रजाको खेती करनेमें इतना अनुपम सुविधा होता कि जो लिखकर जताना सम्भव नही है। नहर खोदनेके काममे यदि इतने नफे रहनेपरभी गवर्नमेण्ट उसमें रुपये लगानेसे हिचके तो इस देशमे खेतीके लिये वर्षाका मुँह ताकनेके बिना और उपायही क्याहै? नहर सम्बन्धी बातोंकी खोजके लिये जो कमीशन बैठीथी उसके विज्ञ सभासदोंने कहाथा कि कमसे कम और भी ४४ करोड रुपये लगाकर देशके स्थान २ में नहर न खुदवानेसे खेती करनेमें जलकी कमी बन्द नहीं होगी। किन्तु गवर्नमेण्ट इस देशको खेती करनेमें वृष्टिका मुँह ताकना बन्द करनेके लिये वार्षिक २ करोड रुपयेभी खर्चनेको राजी नही हुई। दुर्भिक्षसे अनेक लोगोके मरनेपर तथा प्रजाकी ओरसे बडी भारी चिल्लाहट मचायी जानेपर सन् १९०३–४ ई०में गवर्नमेण्टने १ करोड २५ लाख रुपये खर्चनेका दिलासा दिया। किन्तु वास्तवमे उसका आधाभी खर्च नहीं किया। उधर प्रतिवर्ष नयी नयी रेल बनानेके पीछे लगभग १२ करोड रुपये खर्च किया जारहाहै और अब यह सुननेमे आयाहै कि अबसे प्रतिवर्ष १५ करोड रुपयेके हिसाबसे खर्च किया जायगा।

खेतीकी उन्नतिका दूसरा उपाय वैज्ञानिक रीतिकी कृषि जारी करनाहै। इस काममे खर्च अधिक होनेपरभी सभ्य देशवाले उससे मुँह नहीं मोड़तेहैं। पहले प्रकाशित पेरिस्तका देशानग

इस विषयमें सभ्य देशोंके खर्चका पता लगजायगा, किन्तु गत १५० वर्षके भीतर सुसभ्य अंगरेजी गवर्नमेण्टने इसदेशमें वैज्ञानिक रीतिकी कृषिकी कोई भी बात ठीकठीक काममें नहीं लायी। इसदेशमें कृषिविज्ञान सीखनेका कोईभी प्रबन्ध नहीहै, कहनेसे अनुचित नहीं होता। पूना, बम्बई, मदरास, शिवपुर आदि स्थानोंमें कृषिविद्या सिखानेका कुछ कुछ प्रबन्धहै, किन्तु वास्तवमें उनमेंसे कहींभी सन्तोषजनक शिक्षालाभ नहींहोता। कुछ दिनोंसे गवर्नमेण्ट दर्भंगेके पूसा-नामक स्थानमें एक बड़ा कृषिविद्यालय और आदर्श कृषिक्षेत्र स्थापन करनेकी अभिलाषी हुईहै। कहाजाताहै कि इस विद्यालयसे इस देशमें कृषिकार्य्यकी बडी भारी उन्नति होगी। किन्तु हमारा विश्वास यहहै कि १८ करोड़ भारतवासी किसानोंकेलिये कमसे कम २८ उच्च कृषिकालेज स्थापित न करनेसे इसदेशमें कृषिप्रणालीका कोई परिवर्तन वा सुधार नही होगा। अमेरिकाके युक्तराज्यवासियोंकी संख्या ७॥ करोडहै। वहां कृषिविद्या सिखानेकेलिये १० बडे बडे कालेज और ५४ आदर्श कृषिपरीक्षाके क्षेत्रहैं। कृषिपरीक्षाके क्षेत्रोंकेलिये वहांकी गवर्नमेण्ट प्रतिवर्ष कमसे कम ३० लाख ६० हजार रुपये खर्च कियाकरतीहै। इस हिसाबसे भारतमें वार्षिक एक करोड रुपये खर्चपर कमसे कम १५० आदर्श कृषिपरीक्षाके क्षेत्र स्थापित होनेचाहिये। उक्त गवर्नमेण्टके कृषिविभागका वार्षिक कुल खर्च कुछ कम ३ करोड रुपयेहै। इस हिसाबसे भारतके कृषिविभागका खर्च वार्षिक कमसे कम ८॥ करोड रुपये होने चाहिये। इस विषयमें गवर्नमेण्टका आग्रह प्रकाश होनेसे अंग्रेजोंकी कृपाके अभिलाषी बहुतेरे राजा जमीन्दार आदिकीभी ओरसे बहुत कुछ धनकी सहायता मिलनेकी आशा की जासकतीहै। अमेरिकामें कृषिकार्य्यकी उन्नतिके विषयमें गवर्नमेंटका आग्रह प्रकाश होनेका फल यह हुआ कि वहांके धनी लोग वार्षिक २ करोड रुपये कृषि विद्यालयोंकी उन्नतिके लिये लगानेलगे। ❀

बम्बईके भडौच जिलेके कमिश्नर मिस्टर लेलीने ५ वर्ष पहले उस प्रान्तकी भूमिकी अवनतिका विचार करनेमें अपनी रिपोर्टमें कहाथा कि वहाँ हर तीनवर्षोंके उपरान्त एकवर्ष बिना जोते जमीनको योंही रखछोडनेकी रीति बहुत पहलेसे प्रचलित थी। इस रीतिका फल यह होताथा कि खाद न देनेसेभी भूमिकी उपजाऊशक्ति नही घटती थी और योंही रखछोडनेके पीछेके वर्ष दूना अन्न उत्पन्न होताथा। पुराने जमीन्दार और शासन कर्त्तालोग प्रजाको उस बातका सुभीता करदेनेकेलिये उक्तवर्ष मालगुजारीसे बरी करदेते थे। अंगरेजी गवर्नमेण्टने भी पहले पहल कुछ दिनोंतक इस प्राचीन रीतिका अनुसरण किया था, किन्तु प्रायः ४० वर्ष हुए उसने इस हितकारी रीतिका परित्याग कियाहै। मिस्टर लेलीका कथन यहहै कि तबसे दिनपरदिन भडौच जिलेकी जमीनकी अवनति होरहीहै। यह बात सभी जानकार लोग मानतेहैं कि बीचबीचमें

❀ अमेरिकाके युक्त राज्यमें सरकारी कृषिविभागसे प्रतिवर्ष ८०० पृष्ठोंकी बडी ही अच्छी जिल्दवाली वार्षिक कृषि विवरणकी प्रायः ५ लाख प्रतियां बिनामूल्य बाँटी जातीहैं। भारतमें उसप्रकार रिपोर्टें बेंची जातीहै। यहांके लोग मागभेजनेसे भी अमेरिकाकी गवर्नमेण्टसे बिनामूल्य वह रिपोर्टें पाजातेहैं। किन्तु यहांकी गवर्नमेण्ट मांगनेपर भी किसीको बिनामूल्य रिपोर्टकी पुस्तक नही देतीहै। पर हमारी गवर्नमेण्ट कृषि जीविकावाली प्रजासे प्रतिवर्ष ३० करोड रुपये वसूल करतीहै।

मुस्तानेका अवकाश न पाकर भारतवर्षके वहुतेरे स्थानोंकी भूमि दिनपरदिन अपनी उपजाऊ-शक्ति खोरहीहै और उससे किसानोंकी दशा विगडरहीहै। सो केवल कृषिविद्यालय स्थापन करनेसेभी भारतकी कृषि चमक नहीं उठसकेगी। दरिद्र किसानोंको कर्जके कीचडसे साफकर वैज्ञानिक कृषिका खर्च सहनयोग्य बनानेकेलिये मालगुजारी घटानेकी भी बडी भारी आवश्यकताहै।

दुर्भिक्ष कमीशनकी रिपोर्टसे प्रकाश हुआहै कि भारतके किसानोंके तिहाईलोग ऐसे गहरे कर्जमे डूबगयेहैं कि उनके उससे मुक्तहोनेकी कोई सम्भावना नहींहै। अवशिष्ट किसानोंके आधे लोग कमवेश कर्जदारहैं। केवल तिहाई किसानही कर्जदार नहींहैं। सन् १८८० ईस्वीमें यह बात प्रकट हुईथी, किन्तु तबसे अबतक गवर्नमेण्ट इस दुर्दशाको सुधारनेके लिये अग्रसर नहीं हुई। इस लिये गत कई वर्षोंके दुर्भिक्षमे कई लाख किसान मृत्युकी शरणलेकर इस दुर्दशासे मुक्त होगये।

किसानोंकी दुर्दशा मेटनी हो तो राजा और प्रजा दोनोको ही कुछ २ स्वार्थका विसर्जन करना होगा। देशके महाजनोंको सूद घटाना पडेगा और गवर्नमेण्टको दरिद्र किसानोंका उत्साह बढाना पडेगा, पञ्चायती विचारकी चाल जारी करनी होगी तथा मालगुजारी सम्बन्धी नियमोंकी कठोरता कम करदेनी होगी। लिखेपढे लोग ऐसा ही परामर्श देतेहैं। इसी मतके अनुसार २५ वर्ष पहले देशके कई हृदयवान धनी किसानी वेङ्क स्थापितकर थोड़े सूदमें किसानोंको कर्ज देनेका प्रवन्ध करनेके लिये अग्रसर हुए थे। उन्होंने इस विषयमें सरकारी कर्मचारियोंकी सहायता भी मांगी थी। उदार हृदय वेडरवर्नकी भाति सम्मानित और बड़े पदवाले अंगरेजोंने उक्त धनियोके विश्वस्त रीतिपर कार्य्यकरनेकी जिम्मेवारी सरकारके आगे उठायी थी। किन्तु दुःखके साथ कहना पडताहै कि ऐसे उत्तम कामकी सहायता करना गवर्नमेण्टको स्वीकृत नहीं हुआ। गवर्नमेण्ट और प्रजाके बीचमें जमीन्दार अथवा महाजनोकी भांति किसी दानी तथा शक्तिशाली श्रेणीके मनुष्योंको रहने देना इस देशके सरकारी कर्मचारियोंको उचित नहीं जँचता है। इसलिये उन्होने उन उदार महाजनोंके प्रस्तावको मानकर उनको उत्साहित करना स्वीकार नही किया। अगरेजी भारतराज्यके अभागे किसान चुपचाप गहरीसे गहरी अवनति के पथमें अग्रसर होने लगे। अन्यत्रकी बात जाने दीजिये भारतके देशी राज्योंमेभी किसानोंकी दशा ऐसी विकराल नही है। भारतके भूतपूर्व सेनसस कमिश्नर रेन्ससाहब कहते हैं:—

It is a very curious feature in the census returns that the proportions of money-lenders who combine that occupation with the possession of land is far greater in British territory, than in the Native States.

अर्थात् जन संख्याके विचारसे देशी राज्योसे अङ्गरेजी भारतराज्यमे सूदखोर महाजनों की संख्या अधिकहै।

इतने दिनोंके पीछे इस अभिप्रायसे कि इस देशके किसानोको थोड़े सूदमें कर्ज मिले तथा वे खेतीकी उन्नति करते हुए थोडे खर्चमें गुजारा करना सीखलें. गवर्नमेण्टने अब को ऑपरेटिव क्रेडिट सोसायटी वा एक दूसरेको सहायता करनेकी मडली बनानेकी व्यवस्थाकीहै। किन्तु

भेदनीतिकी पक्षपाती गवर्नमेंटने इस विषयमे यथा सम्भव सावधानीके साथ ऐसा प्रबन्ध कियाहै कि इसकाममें देशके मध्यदशाके लोग तथा महाजनलोग शरीक न होसकें । नियम कियाहै कि इन मंडलियोंके बेंकमे कोईभी सभासद २५०) रुपयेसे अधिक जमारखने और उसकी पूंजीके दसवें हिस्सेसे अधिक खरीदने नहीं पावेगा । उद्देश्य यहीहै कि कोई बडा धन भंडार स्थापित न होकर छोटे छोटे धनभंडार स्थापितहों । कारीगरोंके लिये भी ऐसी मंडलिया स्थापित करनेकी गवर्नमेंट पक्षपातीहै । किन्तु दो तीन ग्रामोंके किसान जिसप्रकार मिलकर एक मंडली गठिन करसकतेहैं उस प्रकार कारीगरोंको करनेदेना गवर्नमेंटको स्वीकृत नहींहै । एक ग्रामके कारीगरोंको दूसरे ग्रामोंके कारीगरोंसे मिलने न देनेका यह आग्रह गवर्नमेण्टको करते देखकर कोईभी प्रसन्न नहीं होसकता ।

साराश यहहै कि इस व्यवस्थासे भारतके किसानोंका कोई विशेष उपकार होनेकी सम्भावना बहुत थोडीहै । क्योंकि जो किसान बहुत दिनोंसे कर्जमें डूबे हुए हैं वे कर्जसे विना रिहाई पाये कैसे धनभण्डारमें धनदेकर मंडलीके सभासद होसकतेहैं ? दूसरे लोग भी उनके साथ लेनदेनकरनेका साहस कैसे करसकतेहैं । जर्मनीदेशमें जब इसप्रकार मण्डली स्थापित करनेकी व्यवस्था हुईथी तब वहाकी गवर्नमेण्टने किसानोंका पहलेका कर्ज भरवानेकी विशेष व्यवस्थाकी थी । भारतगवर्नमेंट उसप्रकारकी कोई व्यवस्था करनेको उद्यत नहीं होसकी । सची बात यहहै कि जबतक गवर्नमेंट और और फजूल खर्चियोंको घटाकर प्रजाके हितकेलिये पश्चिमी नरेशोंकी भाति अधिक धन खर्चनेको उद्यत नहींहोगी तबतक केवल व्यवस्था गठितकरने और बातोंका हुल्लड़ मचानेसे कोई भी सुफल पानेकी आशा नहीं होसकेगी ।

शिक्षाविभागका खर्च ।

प्रजामें शिक्षा फैलानेकेलिये धन खर्चनेमें भी गवर्नमेंटका हिचकना मालूम होताहै । भांति भांतिसे प्रजापर टैक्सोंका बोझ लादकर जो मालगुजारी वसूल की जातीहै उसका प्रायः सत्तरवॅ भाग अथवा राज्यकी पूरी आमदनीका एकसौ बीसवां भाग २३ करोड प्रजाको शिक्षादेनेमे खर्च कियाजाताहै । गत १९०३–४ ईस्वीमें सम्पूर्ण भारतके शिक्षाविभागोंकेलिये सरकारी खजानेसे केवल १ करोड २८ लाख ५७॥ हजार रुपये खर्च कियेगयेहैं । आजकल चारपाचवर्षसे गवर्नमेण्ट शिक्षाके पीछे कुछ अधिक खर्च करनेलगीहै । इसका कारण यहहै कि गत ७ वर्षसे सरकारी खजानेमे वार्षिक ७ करोडके हिसाबसे मालगुजारीकी बचत होनेलगीहै । किन्तु उससे पूर्व किसीभी वर्ष गवर्नमेण्टने पूरा एक करोड रुपयाभी इसकाममें खर्च नहीं कियाथा । सन् १८९३–९४ ईस्वीमे शिक्षादेनेमें सरकारी खजानेसे केवल ९० लाख २१ हजार ३९६ रुपये खर्चहुएथे । उक्त सन् १९०३–४ ईस्वीमें शिक्षाविभागका कुलखर्च ४ करोड ६२॥ लाख रुपये हुआथा । उसमें सरकारी खजानेसे मिलेहुए १ करोड ३७ लाख ५७॥ हजार रुपये छोडकर विद्यार्थियोंकी फीसके १ करोड ४७ लाख ८४ हजार रुपये, लोगोंसे मिलेहुए दान ओर चन्देआदिके १ करोड २॥ लाख रुपये, लोकलफण्डके ७४॥। लाख रुपये और म्यूनिसिपलटियोंके १७॥ लाख रुपये शामिलभये । इसके उपरान्त देशी राज्योंसे मिलेहुए १५॥। लाख

रुपयेभी खर्चहुएहैं । अंगरेजी भारतराज्यमें पढ़नेकी उमरवाले बालकोंकी संख्या प्रायः ३ करोडहैं । जिनमेंसे प्रायः ४९ लाख सुसभ्य अंगरेजराज्यकी कृपा और जनसाधारणके प्रयत्नसे लिखनेपढ़नेका मोका पारहेहैं । इनमें एकमात्र बंगदेशके विद्यार्थियोंकी संख्या १७ लाखहैं । जिस बंगालमें ७॥ करोड मनुष्योंका वासहै वहांकेलिये इन छात्रोंकी संख्या कितनी कमहै सो सभीलोग समझसकतेहैं । बंगदेशमें अंगरेजी राज्य स्थापन हुए १५० वर्ष होजानेपरभी लोगोंकी संख्याके विचारसे हरहजार मनुष्योंमे केवल १४७ लिखेपढ़े मिलतेहैं । सम्पूर्ण अंगरेजी भारत-राज्यमें केवल ५ लाख लडकिया विद्यालयोंमे पढतीहैं । जिनमे बंगालमें रहनेवालोंकी संख्या १ लाख ३० हजारहै, मदरासकी १ लाख ३३॥ हजार और बम्बईमे ९० हजार है । ब्रह्मदेशमें विद्यार्थी और विद्यार्थिनियोंकी संख्या २ लाख ८९ हजार और ४३ हजारहै । सम्पूर्ण भारतमे फी सैंकडे ११ पुरुष और फी हजार ९ स्त्रिया लिखना पढना जानतीहैं तिसपरभी गवर्नमेण्ट प्रजामे शिक्षा फैलानेकेलिये खर्चकरनेसे हिचकतीहै । अधिक खर्चना दूररहे शिक्षाके सुधारके नामसे शिक्षाके संहारके कितने उपाय सोचेजातेहैं । देशीय ग्रन्थकार और छापनेवालोंकी जीविकामे धूल डालकर एकओर लागमैन और मैकमिलन कम्पनियोंके रोजगारकी राह साफ करदीगयीहै और दूसरी ओर देशी विद्यार्थियोंको गौराण्डी हिन्दुस्थानी सिखाकर उनके ज्ञानमार्गमें अग्रसर होनेकी विचित्र योग्यता प्राप्त करनेका प्रयत्न कियागयाहै । यह सब देखनेसे भविष्यत्की चिन्ता प्रत्येक स्वदेशभक्तके हृदयमें बडाभारी भय लादेती है । प्रायः १५० वर्षके अगरेजी शासनके पीछे भारतवर्षमे फी सैकडे लगभग ८९ मनुष्य अक्षरज्ञानसे रहित हैं । सुसभ्य देशशासकके लिये इससे बढकर गहरे कलककी और क्या बात होसकती है ? पृथ्वीके किसीभी सभ्यदेशमें निरक्षर लोगोंकी संख्या भारतकी भांति नहीं है । यहांतक कि अन्यत्र यहाके आधेभी लोग निरक्षर नहीं हैं । जापानने अपने जनसमाजमे शिक्षाके विस्तारसे वर्तमान बडाई लाभकीहै । सन् १८७२ ई० मे शिक्षाके सुधारपर जब जापानी प्रधानोंकी दृष्टि पहले पहल पडी तब जापानके सम्राट्ने कहाथा —

It is intended that henceforth education shall be so diffused that there may be not a village with an ignorant family, or a family with an ignorant man.

अर्थात् अबसे शिक्षाका ऐसा विस्तार कियाजायगा कि किसीभी ग्राममें एकभी मूर्ख परिवार न रहसके और किसीभी परिवारमें एकभी मूर्ख मनुष्य न रहसके ।

जापानी राजकर्मचारियोंने अपने सम्राट्की यह उक्ति अक्षर अक्षर पालन करनेका प्रयत्न कियाहै । इसका फल यह हुआहै कि अब जापानमें बालक बालिका और युवाओंके फी सैकडे ८१ विद्यालयोंमे शिक्षा पारहे हैं । जापानमे सब निवासियोंकी चौथाईही निरक्षर है । जापानके हिसाबसे भारतमें एक करोड ८० लाख विद्यार्थियोंको विद्यालयोंमे पढने रहना चाहिये था । किन्तु वास्तवमें ४९ लाखसे अधिक बालक बालिका और युवा इस देशमे शिक्षा सीखनेका सुभीता नहीं पाते ।

हमारे सम्राट् सातवें एडवर्डके पूर्व प्रतिनिधि लार्डकर्जन इस देशमे शिक्षाका संस्कार करने मे मन लगाकर जब यूनीवर्सिटी बिल पास करने लगे तब उनके मुखसे शिक्षाके विस्तारके विषयमें कितनीही बातें सुनी गयी थीं । किन्तु उदारहृदय जापान सम्राट्ने सन् १८७२ ई०मे जो उक्त बाते कहीं थीं उनकी भांति कुछ कहना लार्ड कर्जनसे नहीं बन पडाथा ।

सन् १८८२ ईस्वीकी शिक्षाकमीशनने इसविषयमे गवर्नमेण्टको ध्यान दिलानेपरभी इस देशमें शिक्षाका विस्तार करनेमे राजकर्मचारियोंने वैसा प्रयत्न नहीं किया । इतने दिनोंपर कर्त्ताओंने प्रथम शिक्षाकोलिये पहलेकी अपेक्षा अधिक खर्च करना निश्चय कियाहै । किन्तु इसदेशमे उच्च शिक्षाकी बडी भारी हानि करनेकी नीयत वे दिखारहेहैं । उच्च शिक्षाकी जड काटकर निम्न शिक्षाका विस्तार करनेकी कल्पना प्रकट होरहीहै । किन्तु इस समय निम्नशिक्षाके लियेभी हमारी गवर्नमेंट जितना खर्च कररहीहै उसके साथ दूसरे सभ्यदेशोकी निम्न शिक्षाके खर्चको मिलाकर देखनेसे सब लोगोंको आश्चर्य मानना पडताहै ।

पहले तो यह देखना चाहिये कि निम्नशिक्षाका प्रमाण किसदेशमें कैसाहै । इङ्गलेण्डमे प्रतिवर्ष लगभग फी सैकडे साढेसत्रहसेभी अधिक लोगोको निम्न शिक्षा दीजातीहै । फ्रान्समे फी सैकडे साढे-चौदह, आस्ट्रिया हङ्गेरीमें पन्द्रह, इटलीमे सवासात, जापानमे आठ, यूनानमे प्रायः सात, रूसमें तीन और अङ्गरेजोंके भारतराज्यमें फी सैकडे प्रायः डेढ़है ! ❀ खर्चके हिसाबसेभी भारतवर्ष इस विषयमे अङ्गरेजोंके कलङ्ककाही प्रचार कररहाहै । इङ्गलेण्ड और प्रूशियामे निम्न शिक्षाका खर्च हर मनुष्यके पीछे ३॥।) आनहैं, फ्रांसमे ३॥≥) आने, आस्ट्रियामे १॥।≥) आने, इटलीमे १≊) आने, रूसमें ।।) जापानमें ।।≊)आने और अंगरेजोंके भारतराज्यमें ─) आनेसेभी कमहै । यहां यहभी कहदेना उचितहै कि पश्चिमी देशोंमे एकदो देशोको छोडकर प्रायः सर्वत्रही निम्न शिक्षाका तीनचौथाई खर्च सरकारी खजानेसे दियाजाताहै । अब उच्चशिक्षाके हिसाबकी ओरभी ध्यानदीजिये । उच्चशिक्षाके पीछे भारतमें हरमनुष्यके लिये १ पैसा खर्चहोताहै । रूस और यूनानमें दो आना, इटलीमे साढेतीन आने, आस्ट्रियों और फ्रान्समें छः आने, जर्मनीमे सातआने, कनेडामे दसआने, अमेरिकाके युक्तराज्यमे और इग्लेण्डमें ग्यारह आने । अर्द्ध सभ्यरूसभी शिक्षाका विस्तार करनेमे सुसभ्य भारतगवर्नमेण्टको पछाड रहाहै । छोटेसे टापू लङ्कामे अगरेज

❀ सन् १९०२–३ ईस्वीमें सम्पूर्ण अंगरेजी भारतके सरकारी प्राइमरी अर्थात् प्राथमिक विद्यालयोकी संख्या १ लाख २ हजार २ सौ पन्द्रह और छात्रोंकी संख्या ३४ लाख ११ हजार २०२ थी । सेकेण्डरी वा दूसरे दरजेके विद्यालय ५ हजार ५४४ और उनके विद्यार्थी ५ लाख ५९ हजार ४५५ थे । इसके सिवाय गैरसरकारी प्राथमिक और उच्चश्रेणीके विद्यालयोकी संख्या ४३ हजार ३५० और छात्रोकी संख्या ५१ हजार ३५२ थी । शिल्पविद्यालयोंकी संख्या इस-देशमे नामभरकीहै । छोटी बडी सरकारी और गैरसरकारी सबमिलाकर शिल्पशालाओंकी सख्या ९५ से अधिक नहींहै । इन सब विद्यालयोंमें प्रायः ७ हजार लडके सुतहरका काम और थोडीसी चित्रविद्या सीखतेहैं । गवर्नमेण्टने कहाहै कि इसप्रकार विद्यालयोंकी सख्या बढ़ानाभी इस-समय बननहीपडेगा ।

शिक्षाके लिये हर मनुष्यके पीछे दोआने और मोरसटापूमें दसआने खर्च कियाकरतेहैं, किन्तु भारतवासी प्रजामे शिक्षा फैलानेमे वे बडी भारी कोताही दिखातेहैं ।

छोटेसे इंग्लेण्डदेशमें १३ विश्वविद्यालय हैं, आस्ट्रियामें विश्वविद्यालयोकी सख्या ७, बेलजियममे ४, जर्मनीमे ३०, जिनमेंसे ७ शिल्प और वाणिज्य सम्बन्धी हैं, जर्मनीमें शिक्षाविस्तारके पीछे वार्षिक प्रायः ३० करोड ४० लाख रुपये खर्च होतेहैं । भारतवर्ष आकार और लोकसख्यामें जर्मनीसे साढ़ेपांचगुणा बडाहै, किन्तु भारतवर्षमें सब मिलाकर शिक्षाके पीछे पूरे पांचकरोड रुपयेभी खर्च नहीं किये जाते । जर्मनीमें प्राथमिक विद्यालयोंमे ८८ लाख ३० हजार लडके लडकियोंको शिक्षा दीजातीहै । अगरेजी भारतराज्यमे ४३ लाखसे अधिक लडके और युवा तथा ४ लाख ७३ हजारसे अधिक लडकियोंको विद्यालयोंमे जाना बन नही पडताहै । बम्बई और बगालमें प्राथमिक विद्यालयोंमें पढनेयोग्य बालकोंमेंसे फी सैकडे २३ । २४ और पञ्जाब तथा सयुक्तप्रान्तमें फी सैकड़े ८।९ ही बालक शिक्षापातेहैं ।

सब सभ्यदेशोंमें दरिद्र लडकोंको बिनाखर्च शिक्षा देनेकी व्यवस्था देखीजातीहै । इगलेण्ड बेलजियम, जर्मनी, अमेरिका, जापान आदि देशोंमें पितामाताकी इच्छा न रहनेमेभी बालकोको कानूनके बलसे बिना खर्चके विद्यालयोमे जाकर शिक्षा लेनीपडतीहै । इसलिये उनदेशोमे निरक्षर मूर्खलोगोंकी सख्या बहुत थोडीहै । इंग्लेण्डमें फी सैकडे ७ मनुष्य निरक्षरहैं, बेलजियममें २९ और जापानमें उससे कम । जापान राज्यको सब प्रकार मालगुजारियोंसे ३० करोड रुपयेकी आमदनी होतीहै, किन्तु उसमेसे शिक्षा विस्तारके लिये वार्षिक ७५ लाख रुपये खर्च किये जातेहैं । इस हिसाबसे सुसभ्य भारतगवर्नमेण्टको वार्षिक ३ करोड रुपये शिक्षा विस्तारमें खर्चने चाहिये थे । किन्तु गत दसबर्षोमे प्रतिवर्ष १ करोड़ रुपयेभी इस काममें भारतमें खर्च नहीं हुआ । गत ३ वर्षोसे वार्षिक १॥ करोड रुपये खर्चनेकी मंजूरी तो हुई है, किन्तु प्रान्तीय गवर्नमेण्टोंको इतना अधिक खर्चनेका सुभीता नहीं हुआ । गत सन् १९०२–३ ईस्वीके आय व्ययके हिसाबको देखनेसे मालूम होताहै कि शिक्षाविभागमें खर्च करनेका सुभीता न होनेसे २८ लाख २० हजार रुपयेकी बचत प्रान्तीय खजानोंमें हुई है। किन्तु उसके आगेके वर्षमेंभी १ करोड २८ लाख ५७॥ हजार रुपयेसे अधिक खर्च नही कियागया । यह बात थोडे आश्चर्य की नहीं है कि जिस देशमें फी सैकडे ८९ आदमी निरक्षरहैं उस देशमे शिक्षा फैलानेके पीछे खर्च करनेका उपाय सरकारको नहीं होता ।

पहले कहचुकेहैं कि सभ्यदेशोमे दरिद्रबालकोंको शिक्षा देनेके लिये सरकारी खर्चसे चलने वाले बहुतेरे बिना वेतनके विद्यालय खुले हुएहैं । किन्तु भारतमें कर्त्तारोंकी यह सावधानी देखनेमें आतीहै कि यहांके सरकारी और आधे सरकारी विद्यालयोंमे बिना वेतन पढनेवाले विद्यार्थियों की सख्या दो तीनसे अधिक न होनेपावे । इन दिनों विश्वविद्यालय सम्बन्धी नया कानून जारीकर भारत गवर्नमेटने इस देशमे शिक्षा प्राप्त करनेका खर्च बहुत बढादियाहै । इस विषयमें देशी नरेशोके राज्योंमें बहुत कुछ उदारता देखनेमें आतीहै । बडौदेके महाराज गायकवाड और मैसूर और त्रावणकोरके नरेश पश्चिमी देशोंकी नकल करतेहुए अपने राज्योंमें बिनावेतन विद्या देनेकी व्यवस्था करके सुसभ्य अङ्गरेजी गवर्नमेटको उत्तम उदाहरण दिखारहेहैं । बड़ौदाराज्यमें फी

सैकड़े ४४ बालक और ९॥ बालिकाएँ विद्यालयोंमे पढ़तेहैं । सारांश यहहै कि, संसारमें सभ्य नरेशमात्रही बिना खर्च अथवा थोडे खर्चेमे शिक्षा देनेकी व्यवस्था करना अपना कर्तव्य सोचलेतेहैं । जिस चीनको असभ्य कहकर घृणा की जातीहै उस चीनमे भी फी सैकडे ९५ मर्द और १० स्त्रियां थोड़ाबहुत लिखपढलेती हैं; किन्तु भारतमे अंगरेजी राज्यमे १५० वर्ष होजानेपरभी फी सैकडे ८९ मनुष्य निरक्षरहैं । इससे बढ़कर गहरे कलककी बात राजा तथा प्रजा किसीकेभी लिये नहीं होसकतीहै । इस कलंकको मेटनेके लिये सबकोही अग्रसरहोना चाहिये । सरकारी रिपोर्टोको देखनेसे मालूम होताहै कि शिक्षा पानेकेलिये भारतवासियोका आग्रह दिनपरदिन बढ़रहाहै । किन्तु यह बात इसदेशमें रहनेवाले अंगरेजोंके लिये सहनयोग्य नहींहै कि भारतवासी ज्ञान और विज्ञानमें प्रवीणता प्राप्तकर अंग्रेजोके बराबर होजावे । इसलिये गवर्नमेण्टभी उच्चशिक्षा घटादेनेके विषयमे प्रयत्न कररहीहै । निम्न शिक्षाके विस्तारमे पहलेकी अपेक्षा अधिक खर्च करनेकाभी बीडा उठानेपरभी गवर्नमेटने हिन्दुस्थानी शिशुओको मेकामिलन कंपनीकी जघन्य पुस्तकावली पढ़नेमें लाचारकर देशीय साहित्यको चितापर चढानेका आरंभ कियाहै । ॐ इसदेशमे अनेक छापेखाने और ग्रन्थ प्रकाशकरनेवाली व्यवसायी कंपनियोंके रहतेभी विलायती कम्पनीको १० वर्षके लिये पुस्तक छापनेका ठेका दे देनेसे यही प्रतीत होताहै कि अंग्रेजलोग यह सहन नहीं करसकते कि इसदेशके निवासी पुस्तक छापकर कुछ रोजगार करें । ऐसाभी नहीं कि इसदेशके लोग विलायतवालोसे पुस्तक खराब छापतेहैं । सभी लोग जानतेहैं कि यहाके लोग विलायती कम्पनीसे पढ़नेकी पुस्तक अच्छी छापतेहैं ।

विश्वविद्यालय सम्बन्धी नये कानूनके अनुसार यह नियम एकप्रकार उठादियागयाहै कि कोई कालेजमे न पढ़कर एफ. ए. बी. ए. परीक्षाओंमें शरीक होसके । इस कानूनसे उच्च शिक्षा पानेके पथमें बहुतेरे लोगोंकेलिये कांटे बिछाये गयेहैं । किन्तु सब सभ्यदेशोंमें दिनपरादिन यह सुभीता अधिक अधिक बढ़ाया जारहाहै कि लोग घरबैठेही परीक्षा देसकें । फ्रान्समे तो यहांतक सुभीताहै कि कोई पहलेकी परीक्षा न देकर चाहे जिस किसी ऊचीसे ऊची परीक्षा देले । वहां एन्ट्रेन्सतक बिना पासकिये हरकोई एम.ए. की परीक्षाभी देसकताहै । इसीसे उस देशमे विद्वानोंकी सख्या बहुत पायीजातीहै । किन्तु भारतमें देशवासियोंके द्वारा चलायेजाने-वाले मेडिकल कालेजोंके विद्यार्थियोकोभी सरकारी परीक्षामे शरीक होनेका अधिकार नहीं दियाजाताहै और एन्ट्रेन्स परीक्षाकी कठोरताभी दिनपरदिन बढ़ायी जारहीहै । अब मैमनसिंह-प्रान्तीय समितिके सभापति महाशयकी वक्तृताके नीचे उठाये हुए अंशको पढ़नेसे सबलोग समझसकेंगे कि बंगदेशमे विद्या पढ़नेके विषयमे कितना खर्च कियाजाताहै और उस विषयमे

ॐ जापानगवर्नमेंट प्रतिवर्ष १५० युवाओंको शिल्प और विज्ञानकी शिक्षाकेलिये पश्चिमी देशोंमें सरकारी खर्चसे भेजतीहै । उसप्रकार कोई व्यवस्था नकरनेसे भारतगवर्नमेण्टकी निन्दा सब लोग किया करतेथे । उस निन्दासे पार पानेकेलिये अब गवर्नमेटने प्रतिवर्ष १० भारतवासि-योंको पश्चिमीदेशोंमें शिल्प और विज्ञानकी शिक्षाकेलिये स्कालरशिप देकर भेजनेकी सूचनादी है । किन्तु क्या इस नामभरकी व्यवस्थासे क्या सरकारी कर्मचारी कलकसे पार पासकेंगे ।

गवर्नमेण्टकी कार्य्यपरिपाटी कैसीहै,—"यह बडेही अफसोसकी बातहै कि लोगोंको शिक्षादेनेके विषयमे बगालकी गवर्नमेण्ट उचित प्रयत्न नहींकरतीहै। बम्बईप्रान्तमें लोगोको शिक्षा देनेकेलिये इरहजार मनुष्यके पीछे १०७, रुपये बरारमे और आसाममे ३३) रुपये, खर्च कियेजातेहैं। किन्तु बगालमे फी हजार मनुष्योंके पीछे ११) रुपयेसे अधिक नहीं खर्च कियेजाते। इस ११) रुपयेमेसे सौ भागका कुछ कम आठभाग मात्रही सरकारी खजानेसे दियाजाताहै, ६७। भाग लोकलबोर्ड आदिसे मिलताहै और बाकी २६ भाग विद्यार्थियोकी फीससे इकठा होताहै"। गत १९०३–४ ईस्वीकी सरकारी रिपोर्टको देखनेसे मालूम होताहै कि उक्त वर्ष सम्पूर्ण बगदेशमें ७ लाख १८ हजार ६१३ रुपये उच्च प्राथमिक शिक्षाके पीछे खर्च कियेगयेहैं। इस प्रायः ७। लाख रुपयेमेसे ४४ हजार ६२२ रुपयेही सरकारी खजानेसे दियेगयेहैं, २ लाख २४ हजार २११ रुपये लोकलफण्डसे और बाकी प्रायः ४॥ लाख रुपये म्यूनिसिपालटियो और विद्यार्थियों-की दी हुई फीससे प्राप्त हुए हैं। निम्न प्राथमिक शिक्षाके लिये उक्तवर्ष जो प्रायः ३०लाख रुपये खर्चहुएहैं उसमेसे १ लाख ४३ हजार रुपये बङ्गाल गवर्नमेण्टने, ७लाख ४८ हजार रुपये लोकलबोर्डोने, ५३ हजार रुपये म्युनिसिपालटियोने और १६ लाख ३६ हजार रुपये लडकोंके स्वजनोने फीसके बतौर दियेहैं। इन सब हिसाबोंको देखनेसे मालूम होताहै कि प्राथमिक शिक्षाके लिये जितना खर्च हुआहै उसके आधेसेभी अधिक देशके दरिद्र किसानो और कारीगरोसे वसूल कियागयाहै और गवर्नमेण्टने सम्पूर्ण खर्चका केवल इक्कीसवा भाग स्वय दियाहै। यह बात भी किसीको भूलना नहीं चाहिये कि जिलाबोर्डोंके खजानेसे जो कुछ दियागयाहै उसकीभी चौथाई देशके किसानों आदिसे वसूल की गयीहै।

"यद्यपि इनदिनों गवर्नमेण्टने निम्नशिक्षाका विस्तार करनेके पीछे कुछ अधिक खर्चना स्वीकार कियाहै तथापि उच्चशिक्षाके विस्तारमेंभी प्रयत्न करना उसका कर्त्तव्यहै। उच्च शिक्षाके लिये गतवर्ष गवर्नमेण्टने प्रत्यक्षरूपसे ५ लाख ८७ हजार रुपये खर्च कियेहैं। इसके उपरान्त अप्रत्यक्ष रूपसेभी (अर्थात् वृत्ति, दान, देखभाल, गृहआदिके निर्माण आदि विषयोंमेभी) ४॥ लाख रुपये खर्च हुएहैं। बहुत बढाकर हिसाब करनेसेभी यह बात स्पष्टरूपसे कहीजासकतीहै कि उच्च शिक्षाके पीछे गवर्नमेण्टका कुल व्यय १२ लाख रुपयेसे अधिक नहीं होताहै। जिसदेशमें मनुष्योंकी सख्या ७ करोड ४० लाखहै और मालगुजारीकी आमदनी प्रायः ७ करोड़ रुपये हैं, उस देशमे उच्च शिक्षाके पीछे केवल १२ लाख रुपये खर्च होना कितना साधारणहै सो सब लोग समझ सकतेहैं। उच्च शिक्षाका प्रचार बढानेमें आजकल कर्तारोकी जो नाराजी देखी जातीहै उसका किसीभी प्रकारसे समर्थन नहीं होसकता। पूछा-जाताहै कि उच्चशिक्षाके बिना सरकारी कामोंमें नियुक्त होनेवालोंका चरित्र बल कैसे बढेगा?"

निम्न शिक्षाके लिये आजकल अधिक रुपया खर्चनेका अहङ्कार हमारी सरकार किया करतीहै। किन्तु जापानके साथ उस खर्चका मिलान करनेसे उस अहङ्कारका मूल्य समझाजाताहै। सन् १९०४–५ ईस्वीमें हमारी गवर्नमेण्टने २३ करोड प्रजाकी प्राथमिक शिक्षाके लिये १ करोड ५ लाख रुपये खर्च कियेहैं। इस साल जापानकी गवर्नमेण्टने अपनी ४॥ करोड प्रजाकी प्राथमिक शिक्षाकेलिये

३ करोड़ ७८ लाख रुपये खर्च कियेहैं। इस हिसाबसे यदि हमारी गवर्नमेंट भारतवासियोंकी प्राथमिक शिक्षाके लिये खर्च करती तो उस वर्ष उसका १९ करोड रुपये खर्चहोता।

निम्नशिक्षाकोलिये गवर्नमेण्टके पहलेसे कुछ अधिक खर्च करनेका बीडा उठानेपरभी प्राथमिक शिक्षाका आशानुरूप विस्तार नहीं होरहाहै। सन् १९०४–५ ईस्वीकी रिपोर्टसे देखनेमे आताहै कि बगदेशमें प्राथमिक शिक्षाके स्कूल ४९०९३ से घटकर ४८१७६ होगयेहैं अर्थात् फी सैकडे वे स्कूल १०८ घटगयेहैं। छात्रोंकी संख्या १३९१९९७ से घटकर १३५६७७३ होगयीहै अर्थात् फी सैकडे २॥ विद्यार्थियोंकी घटी हुईहै। चटगाव, ढाका, राजशाही, वर्धमान और भागलपुर विभागोंमे केवल प्राथमिक निम्नशिक्षाके स्कूलोंमे फी सैकडे ३ विद्यार्थी कम हुएहैं। जहा प्राथमिक शिक्षाके लिये अधिक खर्च करना निश्चय करलेनेपर विद्यालय और विद्यार्थियोंकी संख्या बढनी उचितथी तहां प्लेग दुर्भिक्ष आदि विशेष कारण विद्यमान न रहनेपरभी वंगदेशमे वह सख्याएं घटरहीहैं। गवर्नमेंटने जिस शिक्षा नीतिका अवलम्बनकर उच्च प्राथमिक परीक्षामें उत्तीर्ण होनेवाले युवाओंको मुख्तारी परीक्षाओंमें शरीकहोना रोकदियाहै, प्राथमिक शिक्षाके विद्यालयोंमें विद्यार्थियोको परीक्षासे ऊंच नीच नम्बरोंका होना रोकदियाहै तथा सुखसे पढनेयोग्य ज्ञान देनेवाली पुस्तकोंके बदले मेकमिलन कम्पनीकी बनायी हुई अङ्गरेजी ढंगकी बंगला पुस्तकें चलादीहैं उस शिक्षानीतिका परित्याग न करनेसे अधिक खर्च करनेपरभी प्राथमिक शिक्षाका यथोचित प्रचार नही होगा।

होमचार्ज।

भारत गवर्नमेंटकी पहले कही हुई १२७ करोड़ रुपयेकी वार्षिक आयसे हमको प्रतिवर्ष होमचार्जके नामसे २५ करोड रुपये विलायत भेजने पडतेहैं। श्रीयुक्त दादाभाई नौरोजीने इस होमचार्जका नाम "भारतकी लूटका रुपया" दियाहै। हम इसको अंगरेजोंकी सलामीका रुपया कहनाही उचित समझते हैं। सन् १८३४ ईस्वीतक इस सलामीका प्रमाण वार्षिक ३ करोड रुपयेथा। सन् १८५७ ईस्वीके गदरके समयमेभी उसका प्रमाण वार्षिक ४ करोड रुपयेसे अधिक नही हुआथा। किन्तु उसके आगे जब भारतका राज्यभार ईस्टइण्डिया कम्पनीके हाथसे दयामयी महारागी विक्टोरियाके हाथमें चलागया तबसे सरकारी कर्मचारियोकी कृपा कुछ ऐसी बढी कि उस सलामीका प्रमाण क्रमशः बढनेलगा। २० वर्षोंमें वह रुपया बढकर ४ करोड़की जगह २० करोड बना। तबसे गत ३५ वर्ष वार्षिक २४–२५ करोड रुपयेके हिसाबसे दरिद्र भारतवासियोंसे वह सलामी लीजारहीहै। उस रुपयेके बदलेमें भारतवासी अवश्यही किसीभी प्रकारका उपकार नही पातेहैं। सो इस प्रकार अधिक रुपया प्रतिवर्ष फजूल निकलजानेसे भारतवासी दिनपरादिन निर्धन बनते जातेहैं।

इस होमचार्जके अन्यायको प्रकटकर सन् १८३८ ईस्वीमे मिस्टर मण्टेगोमारी मार्टिन नामक एक चिन्ताशील लेखकने निम्नलिखित मन्तव्य प्रकाश कियाथा,—"अंग्रेजोके भारतराज्यसे प्रतिवर्ष ३ करोडके हिसाबसे गत ३० वर्षोमे सूदसहित (चक्रवृद्धिके नियमानुसार फी सैंकडे वार्षिक

१२) रुपये सूद जोडनेसे) ७ अरब २३ करोड ९९ लाख ७६ हजार १७० रुपये होमचार्जके बतौर विलायत आयेहैं। यादि गत ५० वर्षका हिसाब लियाजाय तो विलायतमें होमचार्जके बतौर कमसेकम ८४ अरब रुपये इसढङ्गसे पहुँचेहैं। लगातार इस प्रकार धन निकाललेनेकी रीति जारी होनेसे इग्लेण्डकी भांति धनीदेशमेंभी थोडे दिनके भीतर ऐसीही दरिद्रताकी दशा उपस्थित होसकतीहै। जिसभारतमें मजदूरे नित्य तीन आनेसे अधिक रोजगार नहीं करसकतेहैं उस भारतमें इसप्रकारसे धन खाजानेका फल कैसा भयानक होगा। सो समझा जासकताहै।" उन्होंने औरभी कहाहै;–

"I do not think it possible for human ingenuity to avert entirely the evil effects of a continued drain (for half a century) of three or four million pounds a year from a distant country like India and which is never returned in any shape.

इसका अर्थ यहहै कि आधी सदी विदेशमें इसप्रकार अपरमित धन भेजनेके फलसे भारतके निवासियोंकी जो हानि हुईहै उसे मेरी समझमे सम्पूर्णरूपसे दूरकरना मनुष्योंकी शक्तिके बाहरहै। क्योंकि इस ढेरके ढेर धनके बदलेमें इगलैंडसे किसीभी रीतिपर भारतवर्षको एक कौडीभी लौटा नहीं मिलतीहै।

उदाराचित्त गवर्नरजनरल सरजान शोर महाशयने इसदेशमें रहते समय जो कुछ जानकारी प्राप्त-कीथी उसे उन्होंने अपनी नोट्स आन इंडियन एफेयर्स नामक पुस्तकमें प्रकट कियाहै उस ग्रन्थमे उन्होंने कहाहै,

The halcyon days of India are over. She has been drained of a large proportion of the wealth she once possessed; and her energies have been cramped by a sordid system of misrule to which the interests of millions have been sacrificed for the benefits of the few.

अर्थात् भारतके शान्तिपूर्ण प्रसन्नताके दिन जातेरहेहैं। एक समय भारत जिस धनदौलतका अधिकारी था उसका अधिकांश विदेशोंमें चलागयाहै। बुरे शासनकी ओछी नीतिके कारण भारतवर्षकी कामकरनेकी शक्ति सकुचित होगयीहै। इग्लैंडके थोडेसे लोगोंके फायदेके लिये भारतके करोडों मनुष्योंके स्वार्थका विसर्जन कियाजारहाहै।

सर जार्ज वींङ्गेट महाशयने इस होमचार्जको Cruel burden of tribute यानी नजराना का निर्दय बोझ कहाहै। मिलसाहबके भारतीय इतिहासके छठें खन्डमें इस धनकी लूटका वृत्तान्त लिखते २ नीचे लिखाहुआ मन्तव्य लिखागयाहै,–

It is an exhausting drain upon the resources of the country, the issue of which is replaced by no reflex, it is an extraction of the life-blood from the veins of national industry which no subsequent introduction of nourishment is furnished to restore.

इसका अर्थ यह है कि धनकी इस प्रकार लूट देशके धन, जायदादकी जड़ काटनेवालीहै। इस लूटसे जो हानि होरहीहै उसकी पूर्ति किसीभी प्रकारसे नहीं होरहीहै। इस प्रकार धनकी लूट जातिकी कर्मशक्तिरूपी नसोंसे प्राणके साररूपी रक्तको निचोडलेनेका एक ढङ्गहै। इस प्रकार भयानकरूपसे लोहू निकाललेनेके पश्चात् चाहे जितनाही बल लानेवाले पथ्यको क्यों न खिलानेका प्रबन्ध कीजिये किन्तु उससे फिर कभी तन्दुरुस्ती लौट नहीं आवेगी।

साठ वर्ष पहले इस देशसे जो ढेरका ढेर धन होमचार्जके नामसे इंग्लेडमे जाताथा उसी के बारेमें द्रव्यनीतिके पडित उदारचित्तवाले लेखक महोदयोंने उक्त प्रकार मन्तव्य प्रकाश किये थे. उसके पश्चात् इस देशसे दिनपरदिन बढातेहुए होमचार्जके नामसे जितने अधिक रुपये इंग्लेड भेजे जानेलगे उसके जाननेका उपाय यदि उन महाशयोंको रहता तो वे कितने भयसे घबड़ा उठते सो सहजहीमें समझा जासकताहै।

मटेगोमारी महाशयके प्रकाश किये हुए हिसाबके अनुसार सन् १८३३ ई०तक इस देशसे इंगलेडमे भेजे हुए रुपयेका प्रमाण ८४ अरब ठहराया गयाहै। उसके आगे सन् १८५८ ई० मे गदरके समय तक २० वर्षोंमे और ३४ करोड रुपये देशसे निकल गये। मंटेगोमारी के दिखाये हुए नियमानुसार हिसाब करनेसे उन २० वर्षोंमे सूदसहित कितने रुपये हमारे हाथसे निकलगये थे सो हिसाब जाननेवाले पाठक ठहराले। गदरके पीछेके २२ वर्षोंमें कितने रुपये भारतवासियोंसे निचोड लिये गये उसका हिसाब नहीं मिलता। किन्तु उस समय होमचार्जका प्रमाण क्रमशः बढ़रहाथा। गत ३७ वर्ष होमचार्ज गोरे कर्मचारियोंके वेतन और भत्तेमें वार्षिक कमसेकम४५ करोड रुपयेके हिसाबसे १६ अरब ६० करोड़ रुपये इस देशसे बाहर निकल गये। चक्रवृद्धिके नियमानुसार यह १६ अरब ६० करोड रुपये ३७ वर्षोंमे सूदसहित कितने बनजातेहैं सो जोडनेसे अकल ठिकाने पहुँच जातीहै।

देशके धनकी यह व्यर्थ लूट देखकर बडी भारी हृदयवेदना और धैर्य्यच्युतिसे श्रीयुक्त दादाभाई नौरोजीने सन् १८८० ईस्वीमें स्टेटसेक्रेटरी महाशयको जो पत्र लिखाथा उसमे निम्न लिखितीखी बात दिखाई देतीहै;—

The thoughtless past drain we may consider as our misfortune, but a similar future will, in plain English, be deliberate plunder and destruction

साराश यहहै कि इसप्रकार रोमांच करनेवाले रक्तके निचोडसे पृथ्वीके धनीसे धनी मनुष्य समाजकेभी पञ्जर निकलआतेहैं। इसके ऊपर शिल्प और वाणिज्यका विनाश होनेसे उस समाजके पञ्जरके भी धुर्रे उडजातेहैं। उस मनुष्य समाजका देशदुर्भिक्ष और महामारीका मृत्युपूर्ण श्मशान बन जाताहै। अफसोसकी बात यहहै कि भारतवर्षकी इस बिना रोकटोककी धनहानि साबित रहने परभी १० करोड मनुष्योंका आधापेट सदैव खाली रहनेपरभी हमारे अंगरेजी कर्मचारी कहाकरतेहैं कि भारतवासियोंका धन दिनपरदिन बढरहाहै।

सेनाविभागमें व्यर्थ खर्च ।
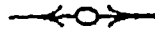
भारतकी मालगुजारीके शेषधनमेंसे आजकल प्रायः ३३ करोड रुपये सेनाविभागके खर्चके लिये दियेजातेहैं । इस विषयमेंभी प्रजाके धनका बडाभारी व्यर्थ खर्च होरहाहै । अपरिमित धनशाली इग्लेंडमे प्रजासे जितना आमदनी टैक्स वसूल होताहै उसका चौगुना धन सैनिक खर्चमें लगायाजाताहै । किन्तु बडेही दरिद्र देश भारतवर्षमें राजकर्मचारी लोग आमदनी टैक्ससे वसूल होनेवाले रुपयेका चौदहगुना सैनिकखर्चमे लगातेहैं । इसविभागके मोटी मोटी तनख्वाहवाले कर्मचारीलोग सभी गोरेहैं । इसलिये इस रुपयेका बहुत थोडाही हिसा इसदेशमे रहताहै बाकी सब विलायत चलाजाताहै ।

सन् १८९४ ईस्वीतक भारत गवर्नमेंट हरएक गोरे सैनिकके लिये वार्षिक ८९१ रुपये खर्च करतीथी, किन्तु देशी सिपाहियोंके लिये वार्षिक लगभग फी आदमी ३४३) रुपयेभी खर्चा नहीं जाताथा । उसके आगे गोरे सैनिकोंका व्यय फी आदमी १२३) रुपयेके हिसाबसे औरभी बढायागया । गत सन् १९०४ ईस्वीके १ अप्रेलसे उनका वेतन वार्षिक औरभी १४६) रुपया फी आदमी बढायागया । यो गवर्नमेंट गोरोंके लिये अब फी आदमी वार्षिक ११६०) रुपये खर्च करतीहै । गोरे सैनिकोंके लिये सुख और सुभीतोंकी जैसी वृद्धि कीजारहीहै वैसी देशी सिपाहियोंके लिये नहीं होती । उनको वार्षिक ३४३) रुपयेकी जगह ३७०) रुपये देनेकी व्यवस्था हुईहै । अर्थात् गत् ८ वर्षोंमे गोरोंके लिये जहा २६९) रुपये बढाये गये तहां देशी सिपाहियोंके लिये २७) रुपये बढ़ाये गये । किन्तु शूरता और वीरतामे बहुतेरी जगह गोरोंसे बढकर देशी सिपाहियोंने बड़ाई दिखायीहै ।

गत १९०३ ईस्वीके मार्च महीनेमें भारतीय व्यवस्थापक सभामे वार्षिक आय व्ययकी आलोचना करतेहुए माननीय अध्यापक गोखले महाशयने भारतीय सेनाविभागके गठन और संस्कारके विषयमें कई बडेही आवश्यकीय और हितकर प्रस्ताव कियेथे । उन्होंने कहाथा कि देशी सैनिकोंका कार्य्यकाल घटादेनेसे गवर्नमेण्टके जङ्गी बलकी वृद्धि और खर्चकी कमीहोगी । गोरेसैनिकोंके लिये वैसी व्यवस्था तोहै किन्तु उससे भारतवासियोंका कुछभी लाभ नहीं होता । क्योंकि केवल थोडेही दिन कामकर गोरे सैनिक अपने देशको चलेजातेहैं और उनकी जगह विलायतसे नये सैनिक इसदेशमे आजातेहैं । इन सब गोरे सैनिकोंका बार बार विलायत जाते आते रहनेका खर्च भारतवासियोंको सहना पडताहै । नये आये हुए गोरोंमेंसे अशिक्षित लोगोकी संख्याही अधिक रहतीहै । भारतवर्षमें रहकर भारतवासियोंके खर्चसे वे युद्ध विद्यामे सुशिक्षित होतेहैं और शिक्षा पूरी होनेके पीछे कुछही दिन यहां रहकर अपने देशको चले जातेहैं । इस प्रकारसे इङ्गलेण्ड विनाखर्च भारतवर्षसे थोडे थोडे दिनोके अन्तर सुशिक्षित सेनाओकी एक एक मण्डली प्राप्त कररहाहै । अनायासही इस उपायसे विलायतकी रिजर्व सेनाकी संख्या पुष्ट होरहीहै ।

देशी सैनिकोंके बारेमें ऐसा नियम नहींहै । उनको प्रायः जीवनभर काम कार्य करना पडताहै । सरकारी कर्मचारी लोग यदि दोनों सेनाओंके लिये एकही नियम बनादें तो देशका बडा भारी मगलहो । और साथही न्यायकी मर्य्यादा बनीरहे । देशी सैनिक यदि थोडे दिन कामकरकेही बिदा लेलेवें और उनकी जगह नये लोग भरती कियेजावें तो क्रमशः देशके अनेक लोगोंको युद्धविद्या सीखनेका अवसर मिले देशमें ऐसे लडाके मनुष्योंकी संख्या बढनेसे गवर्नमेण्टको फिर इस समयकी भांति अपरिमित धनका व्ययकर सदैव अधिक सेना खडी रखनेकी दरकार नहीं होगी । वर्तमान सेनाकी केवल चौथाई वेतन पानेवाले सिपाही रखदेनेसे गवर्नमेण्टका काम बन जायगा । क्योंकि विपद आनेपर पुराने शिक्षित सिपाहियोंको बुलालेनेसेही थोडे समयके बीचमें चाहे जितनी बडी सेना बनालेनेका सुभीता होजायगा । इसलिये काम सीखकर अलग होनेवाले सिपाहियोंको नामभरका भत्ता देकर रिजर्व सेनाको फेहरिस्तमें दर्ज कररखनाही सब-प्रकारसे उत्तमहै । भारतीय सेना विभागमें इस प्रथाके न रहनेसे शान्तिके समयमेंभी निरर्थक अतिरिक्त सेना खडी रखनेका अनुचित खर्च हमारे मत्थे मढाजाताहै जिससे विपद उपस्थित होनेपरभी नयी सेना संग्रह करना कठिन होजाताहै । अपने इस प्रस्तावको दृढ सिद्ध करनेके लिये अध्यापक गोखलेने जापानकी जङ्गी व्यवस्थाका उल्लेख कियाथा । जापानकी सेना भारतीय सेनाकी आधीसे अधिक नहीहै किन्तु वहां सेनाविभागका खर्च हमारे सेनाविभागके खर्चकी चौथाई हीहै । जापानी लोगोंने रिजर्व सेनाकी संख्या बढानेके लिये साधारण सैनिकोंका कार्य्यकाल घटादियाहै और देशके जितने अधिक लोगोंको बनपडे जगी शिक्षादेनेका उपाय कियाहै । इस प्रकार व्यवस्थाके कारण जापान सेनाविभागमें हमारे चौथाई खर्च करता हुआभी विपदके समय हमसे पाच छः गुनी अधिक सेना इकट्ठी करनेकी शक्ति पाचुकाहै ।

भारतवर्षके जंगी बेलकी बात सोचनेसे निराश होना पडताहै । अंग्रेजी सरकारने सारे देशको निरस्त्र करछोडाहै । २३ करोड मनुष्योंमेंसे प्रायः सभी लोग अपनी रक्षाकरनेमें असमर्थ हैं । वे विपदके दिनो अपने देशकी रक्षा कैसे करेंगे ? स्वदेशकी रक्षाके पवित्र कार्य्यसे उनको वञ्चित रखना जिसप्रकार अधर्मजनक बनाये हैं उसी प्रकार बेतन पानेवाली स्थायी सेनाके ऊपर इतने बडे देशकी रक्षाका भार अर्पणकर निश्चित रहना अनुचितहै । पृथ्वीके किसीभी देशमें इसप्रकार राजनीति विरुद्ध अद्भुत प्रथा विद्यमान नहींहै । इंग्लेण्डके बडे बडे युद्ध विशारदोनेभी इस नीतिको दोषयुक्त विचाराहै । सन् १८७९ ईस्वीमे शिमलेमें जो सेना कमीशन बैठीथी उसमें लार्डराबर्टकी प्रधानताके अधीनस्थ युद्धतत्वज्ञ मनुष्योने सभासदका पद प्राप्तकियाथा । उस कमीशनने इसदेशमें पूर्व कथित प्रणालीसे रिजर्व सेना गठित करनेका अनुकूल मत प्रकाश कियाथा । कमीशनने दिखायाथा कि देशी सैनिकोंका कार्य्यकाल घटाकर रिजर्व सेना गठित करनेका प्रयत्नकरने प्रति दसवर्ष ५२ से ८० हजारतक रिजर्वसेना अनायासही संग्रहीत होस-केगी । इस प्रकारसे भारतमें युद्धकरनेकी शक्ति रखनेवाले लोगोंकी संख्या बढ़नेसे इसदेशमें अंगरेजी राज्यकी स्थापिताके विषयमें किसीप्रकार सन्देह उठ खडाहोनेकी आशङ्का इस देशकी सच्ची दशा जाननेवाले कमीशनके सभासदोंके चित्तमें कुछभी नहींहुई । किन्तु विलायतमें इण्डिया आफिसके मनमें सन्देहका पाप रखनेवाले कर्तारोने कमीशनके इस प्रस्तावको मानलेना विपदजनक सोचा । बस, उस प्रस्तावके अनुसार कार्य्य नहीं होसका । प्रजाके ऊपर अविश्वास

रहनेके कारण अगरेजोंको बडेभारी खर्चसे बडी भारी सेना खडी रखनी पडीहै। इसमे भारतवासी दिनपरादिन अन्नकष्टसे दुबले बनते जातेहैं।

साम्राज्यकी जगी शक्तिके विषयमे इगलेंड भारतवर्षसे जितनी सहायता और लाभ प्राप्त करता है उतनी सहायता और लाभ उसको साम्राज्यके और किसीभी अशके प्राप्तकरनेकी शक्ति नही है। अंगरेजी नयी आबादियोंकी रक्षाका भार इगलेडके सेनाविभागके हाथमेही सौंपा हुआहै। उनकी रक्षाके लिये इगलैंडको प्रतिवर्ष बहुत धन खर्चना पडताहै। किन्तु उस खर्चके बदलेमे इंगलेडको प्रायः कुछभी लाभ नही होताहै। उधर भारतवर्ष प्रायः ३० करोड रुपये खर्चकर जो बडी भारी सेना खडी रखताहै उसके सबबसे भारतवर्षकी रक्षाके लिये इगलैंडको एक कौडी भी खर्चनी नही पडतीहै तथा एशिया और पूर्व आफ्रिकामे इगलेडके लिये राज्यविस्तार करनेका कार्य्य बिनाखर्चे अथवा थोडे खर्चे उस सेनाके सहारे पूरा करनेका सुभीताभी मिलजाताहै। गत सन् १८३८ ई०से सन् १९०० ई० तक अफगानिस्थान, चीन, ईरान, अबीसीनिया, पेराक, मिसर, सोडान, चित्राल, शुमाली, ट्रांसवाल, तिब्बत आदि स्थानोंमे १२ लडाइयोके फलसे अंगरेजोंका राज्यविस्तार हुआहै। किन्तु सेना भेजनेके व्ययका अधिकांश भारतवासीहीको सहना पडाहै। उधर अगरेजी नयी आबादियोके रक्षाके लिये जो सेना, जगी जहाज तथा लडाइके दूसरे सामानहैं उनका सम्पूर्ण खर्च चूतक बिना किये इङ्गलेण्डके खजानेसे देदिया जाताहै।

भारतराज्यसे अगरेज लोग जब भांतिभातिके उपकार प्राप्त कररहेहैं तब भारतीय सेना विभागके खर्चका एक अंश देना उनके लिये सर्वथा उचितहै। इस विषयमे दरिद्र भारतवासियोंकी ओरसे बहुतेरी बार प्रार्थना आदि पहुचायी गयीहै। किन्तु अगरेजोने किसीभी प्रकारसे उस न्यायपर ध्यान नही दियाहै इसके कारणके विषयमे सरचाल्र्स विलियनने पार्लियामेण्टकी आज्ञासे बनीहुई फाइनस कमेटीके सम्मुख गवाही देते समय सन् १८७३ ईस्वीमें स्पष्ट रूपसे कहा था,—

We charge Canada, Australia, the *Cape of Good Hope* and the whole round of British Colonies, *nothing, why* should we charge India anything? The only real *difference* is *that* Canada or Australia would not hear of it, whereas *India* is at our mercy and we can charge her what we *like.*

अर्थात् हमारे कनेडा, आस्ट्रेलिया, *नेटाल तथा दूसरी अगरेजी नयी* आबादियोंसे सैनिक खर्च कुछभी न लेनेका कारण यहहै *कि हम तो उनसे खर्च मांगतेहैं पर वे* हमारी बात [illegible] देते। किन्तु भारतवासी *प्रजा भले मानुषोंकी तरह हमारी दयाके ऊपर* निर्भर [illegible] हम उनसे जितना *बनपडताहै जगी खर्चके* [illegible] निकाल लेतेहैं।

अङ्गरेज *लोग कैसी* उद्दण्डतासे इङ्गलैंडके सेना विभाग खर्च [illegible] फेहरिस्तसे *मालूम होजायगा,—*

सन् १८८४-८५	ईस्वीमें		१६९६००००० रुपये
,, १८८७-८८	,,		२०४१००००० ,,
,, १८९०-९१	,,		२०६९००००० ,,
,, १८९४-९५	,,		२४०९००००० ,,
,, १९०२-३	,,		२८२३१९०८० ,,
,, १९०३-४	,,		२०३६०८३४५ ,,
,, १९०४-५	,,		३२०३४३५०० ,,
,, १९०५-६	,,	अन्दाज़	३३३५००००० ,,

किन्तु इतना खर्च करकेभी सेना विभागके प्रधान लोग प्रसन्न नहीं हैं। हमारे प्रधान सेनापति लार्ड किचनरने रूसके भारतपर आक्रमण करनेकी आशङ्कासे घबराकर जिस प्रकारसे सेनाको चुस्त दुरुस्त करनेमें मन लगायाहै उससे आगे सेना विभागका खर्च और भी शीघ्रता से बढ़जानेकी आशङ्का सबको होरहीहै। लार्ड किचनरने इस बीचमें सेनाके पीछे १५ करोड़ रुपये खर्च मन्जूर करवा रखाहै। उन्होंने यहभी चाहाथा कि वह रुपया खर्च होजानेके पश्चात्भी वे औरभी जितना चाहेंगे सोभी भारत गवर्नमेण्टको देदेना पड़ेगा। इसी बातपर बड़े लाटसे उनकी लड़ाई छिड़ीथी। बड़े लाटने सेना विभागका खर्च लापरवाहीसे बढ़ानेका प्रतिवाद कियाथा, किन्तु विलायतके भूतपूर्व स्टेटसेक्रेटरीने कहाथा कि प्रधान सेनापति जितना रुपया चाहेंगे उतनाही बड़े लाटको देना पड़ेगा। इस लिये खजानेमें दरिद्र प्रजाका जो धन इकट्ठा होताहै उसका अबसेभी बहुत अधिक भाग सेना विभागका खर्च पूरा करनेके लिये लगाया जायगा। प्रजाकी तन्दुरुस्तीकी व्यवस्था, विचार और शासन विभागोंको अलग करना, खेतीकी उन्नति शिक्षाका विस्तार आदि कार्य्योंके लिये खजानेमें अब कुछभी रुपया नहीं रहेगा।

सुना जाताहै कि हालमें विलायतमें जो उदार नीतिके मन्त्रीलोग नियुक्त हुएहैं उनके सर्व-प्रधान पुरुष सर हेनरी केम्बल बेनरमैन लापरवाहीसे सैनिक खर्च बढ़ाने और बनावटी मान दिखानेके बड़ेही विरोधीहैं। यहभी सुना गयाहै कि वह भारतके सैनिक व्ययके विषयमें प्रधान सेनापति महाशयकी शक्ति कुछ घटाना चाहतेहैं। उनका यह चाहना कितने दिनमें पूरा होगा अथवा बिल्कुल पूरा होगा कि नहीं सो कोई कह नहीं सकता। क्योंकि "श्रेयांसि बहु-विघ्नानि" किन्तु विलायतके कुछ दूसरे लोग और एक नया खर्च हमारे मत्थे मढ़नेके प्रयत्नमेंहैं। वे कहतेहैं कि प्रयोजन होनेपर इङ्गलेण्डसे भारतमें सेना भेजनेमें जितना समय लगेगा उससे कम दक्षिण आफ्रिकासे भेजनेमें लगेगा, इसलिये भारतकी रक्षाके लिये दक्षिण आफ्रिकामें सेनाओंका एक बड़ाभारी दल बनाकर सदैव तैयार रखना चाहिये; उस सेनाको वहां रखनेका खर्च भारतवर्षसे आधा और इङ्गलेण्डसे आधा वसूल कियाजायगा। असली बात यहहै कि दक्षिण आफ्रिकामें कुछ अधिक सेना रखनेका प्रयोजन विलायतके प्रधानोंको जानपड़ाहै, किन्तु वहांसे उस सेनाका खर्च देना सम्भव नहींहै, क्योंकि बोअरलोग उस खर्चको कभी देना नहीं चाहेंगे। विलायतकीभी प्रजा उस खर्चके देनेमें राजी नहीं होगी। इसलिये भारतकी रक्षाके बहाने सीधे भारतवासियोंके ऊपर उस सेनाकी रक्षाका आधा खर्च ठोंसनेका प्रयत्न होरहाहै।

सम्भवहै कि भारत गवर्नमेण्ट इस प्रकार प्रस्तावका खण्डनकरे। किन्तु मालूम नहीं होता कि उस खण्डनका कोई फल होगा।

रूसके भयके बहाने भारतगवर्नमेण्ट इसदेशमें प्रयोजनसे अतिरिक्त सेना रखरहीहै। किन्तु जापानके बलसे इन दिनों रूसके मान और शक्तिका जिसप्रकार खण्डन हुआहै तथा रूसराज्यमें जिसप्रकार प्रजाका विद्रोह चलरहाहै उससे कमसेकम आगामी १२ वर्षतक रूसको भारतकी ओर आंख उठानेका सुभीता वा अवकाश मिलनेकी सम्भावना दिखाई नहीं देती। अङ्गरेजोंके साथ रूसियोंकी मित्रता सूचक सन्धिकी बातभी होरहीहै। इसलिये इससमय भारतका सैनिक खर्च घटाकर भारतवासियोंको अन्ततः कुछदिनोंके लियेभी कठिन खर्चका भार सहनेमें विश्रामदेनेसे कुछ दोष नहीं होगा। अनेकानेक विज्ञलोग इस प्रकारकी सम्मति प्रकटभी कररहेहैं, किन्तु हमारी गवर्नमेण्टको इसप्रकार सम्मति ठीक नहीं जँचतीहै। सुनाजाताहै कि आगामी वर्ष प्रायः ५॥ हजार गोरे सैनिकोंका कार्य्यकाल पूरा होजायगा। विलायतके भूतपूर्व जङ्गी मन्त्री मिस्टर आरनोल्ड फास्टरने कहाथा कि इस समय रूससे भय नहीं रहाहै और भारतमेंभी शान्ति बनी-हुईहै। इसलिये उन ५॥ हजार सैनिकोंके स्थानमें विलायतसे नये सैनिक न भेजनेसेभी कुछ दिनोंतक कोई हानि नहीं होगी। इसमें सन्देह नहींहै कि फास्टर बहादुरकी उक्त सम्मतिको मानलेनेसे अन्ततः कुछ दिनोंके लिये हमारे बहुतसे रुपयोंकी फ़ुजूल खर्ची बन्द होती। किन्तु भारतगवर्नमेण्टने उस प्रस्तावको नहीं माना। सो रूससे भय न रहनेके दिनोंभी हमको अतिरिक्त गोरे सैनिकोंका खर्च मत्थेपर लिये रहनाही पडेगा।

किन्तु जिस भारतराज्यकी रक्षाकेलिये अङ्गरेजलोग दरिद्र प्रजाके लोहूके समान धनको पानीकी भांति बहारहेहैं उस भारतराज्यकी रक्षाके मूल सूत्रोंकी ओर उनकी कुछभी दृष्टि नहींहै। भारतवर्षके गत हजार वर्षके इतिहासको देखनेसे मालूम होताहै कि जभी किसी विदेशी शत्रुने भारतपर चढाई कीहै तभी भारतवर्षकी रक्षाकरनेवाले लडाकोंकी हार और विदेशी चढ़ाई करने-वालोंकी जीत हुईहै। यहांतक कि विदेशी चढ़ाई करनेवालोंके हाथसे हारखाना मानो भारतका अखण्डनीय नियमसा बनगयाहै। इसप्रकार घटनाके कारणका निर्णय करनेमेंभी इतिहास चुप नहींहै। इतिहासोंसे जानाजाताहै कि अधिकांश दशाओंमें भारतवासी अथवा भारतवर्षके राज्येश्वर लोग ऐसे लोगोंकी चढाईका मुक़ाबिला करनेको लाचार हुए कि जो बल, कौशल आदि विषयोंमें हीन तथा उनसे सभ्यतामें न्यूनथे। भारतवर्षके जीतनेवाले मुसलमानलोग सभ्यता की ऊंची सीढीपर चढ़नेपरभी सब बातोंमें प्राचीन भारतको अतिक्रम नहीं करसकेथे। किन्तु इसमें सन्देह नहींहै कि वे उनदिनोंके विलासप्रेमी राजाओंसे अधिक बलशाली और उत्साही थे। आगे एक सम्प्रदायवाले मुसलमानोंके भारतको जीतकर राज्यसुख भोगते भोगते विलासी और निकम्मे होजानेपर अपनेसे थोड़ी सभ्यता रखनेवाले मुसलमानोंके दूसरे सम्प्रदायद्वारा वे परास्त हुए। आगे दूसरे सम्प्रदायवालेभी तीसरेसे परास्त हुए। किन्तु हरदशामें भारतमें बसकर विलासप्रेमी तथा सुसभ्य हिन्दू और मुसलमानोंसे चढाई करनेवाले लोग बढचढ़कर कट्टर लडाके रहनेपरभी सभ्यतामें उनसे न्यूनथे। रोमनराज्यभी आधे सभ्यजातिवालोंके द्वाराही नष्ट भ्रष्ट हुआथा। भार-तके वर्तमान राज्येश्वरके शत्रु रूसभी उनसे असभ्य तथा कट्टर लड़ाके सब लोगोंके विचारानु सार गिनेजातेहैं।

भारतवासियोंके वारवार हारखानेका एक कारण यहभी है कि उनकी सेनाका प्रवन्ध ठीक नहीथा। भारतमें देशरक्षाका भार सर्वसाधारणपर कभी सौंपा हुआ नहीथा। राजाके ऊपर देशकी रक्षाका भार देकर और आप अपने मत्थे उसके खर्चका भार लेकर भारतवासी सदैव निश्चिन्त रहाकरतेथे। राजाभी वेतन पानेवाली सेनाके सहारे बाहरी शत्रुओंकी चढाईसे देशकी रक्षाकरनेका प्रयत्न करतेथे। यूरोपमे प्रजाकी शक्तिने जिसप्रकार क्रमशः राजाकी शक्तिको दवाकर राजकार्य्य और देशरक्षाका भार अपने ऊपर लेलियाहै उस प्रकार दशा भारतमें कभी नहींथी। इसदेशके हिन्दू राजालोग पुत्रोंकी तरह प्रजाका पालन करतेथे; इसलिये राजाके ऊपर प्रजाका विश्वास अटलथा। पटानोंके दिनोंमेभी सर्वसाधारण प्रजापर उन विदेशी राजाओंके चिरस्थायी अत्याचार नहीं होतेथे। इसलिये सिंहासनके सम्बन्धमे झगडा छिडनेसे उसमें प्रजाके लोग शरीक नही होतेथे। जो कोई राजा होताथा उसेंही मालगुजारी देकर प्रजा सव झगडोंसे पार पा जातीथी। इसलिये राज्यकी रक्षाके काममें राजाको सहायता देनेका प्रयोजन प्रजाको कभी अनुभव करना नही पड़ताथा। सोही राजाको वेतनपानेवाली सेनाके ऊपर निर्भर करकेही बाहरी शत्रुओंसे राज्यकी रक्षा करनी पड़तीथी। उधर चढाई करनेवाले सैनिकलोग लूट खसोटके लोभसे लड़तेहुए लड़ाईमें जैसा उद्यम कियाकरतेथे वैसा करना वेतन पानेवाले सैनिकोंसे वन नहीं पडताथा। यहभी विदेशीयोंके हाथसे भारतवासियोंके हार खातेरहनेका एक वड़ाही पुष्ट कारण है।

उदारचित्त अकवर और महात्मा शिवाजीने इस परिपाटीका परिवर्तनकर सुफल पायाथा। अकबरके राज्यकालमे देशके हिन्दूनिवासियोंपर राज्यकी रक्षाका भार दियागयाथा। इसीसे मुगलोंका राज्य इसदेशमें बडी भारी दृढ़ता लाभकरनेको समर्थ हुआथा। औरंगजेवने सङ्कीर्ण नीतिके वशमें होकर देशवासी हिन्दुओंके हाथसे राज्यकी रक्षाका भार छीनलियाथा जिसका फल यह हुआ कि उनके जीतेजीही देखते देखते छायाकी भांति उनका राज्य सिमिटगया। महात्मा शिवाजीकी नीति अकबरकी नीतिसेभी अच्छीथी। उनके दिनों देशके साधारण किसानतक पर स्वदेशकी रक्षाका भार सौंपागयाथा। शिवाजीने प्रत्येक महाराष्ट्रवासीके हृदयमें स्वदेशरक्षाकी वासनाका जो बीज वोदियाथा उसने थोडे दिनोंमें ऐसे विशाल बनस्पतिका आकार धारण कियाथा। कि स्वयं सम्राट औरङ्गजेव २० लाख सेना लेकरभी महाराष्ट्रदेशको जीतनेमें समर्थ नहीं हुएथे। वड़ी भारी सेना लेकर २० वर्ष मुट्ठीभर स्वदेशप्रेमी महाराष्ट्रियोंसे लड़तेहुए उनको इतना हताश होना पड़ाथा कि औरंगावाद लौटजाना पड़ाथा। महाराष्ट्रवासी नरेशलोग यदि अन्ततक राज्यरक्षाके विषयमें शिवाजीके दिखाये हुए पथसे चलसक्ते तो अकालमे महाराष्ट्र-साम्राज्य नष्ट नहीं होता।

भारतके गतसहस्रवर्षोंके इतिहासकी आलोचना करनेसे यह दोनोंही तत्त्व राज्यके अधिकारियोंके लिये विशेष रूपसे शिक्षा योग्य प्रतीत होतेहैं। उनमेंसे पहला यहहै कि भारतमें राज्याधिकारियोंका विलासप्रेमी और वडाईके घमण्डी होनेसे तथा आक्रमणकारी बाहरी शत्रुओंके कुछ असभ्य कट्टर लड़ाके और उद्यमी होनेसे भारतका सिंहासन आक्रमणकारियोंकेही हाथमें चलाजाताहै। यह बात यद्यपि पृथ्वीके सव देशोंकेलिये घटित होनेके योग्यहै तथापि इतिहासहै

सुझा रहेहै कि यह भारतवर्षके सम्बन्धमें सदैव विशेषरूपसे घटित होती आयीहै। भारतके इतिहासकी दूसरी शिक्षा यहहै कि वेतनभोगी सैनिकोंके सहारे गत सहस्रवर्षोंके भीतर कभी कोईभी राजा भारतवर्षकी रक्षा नहीं करसके हैं। इन दोनों तत्त्वोंके ऊपर ध्यान रखकर अङ्गरेज लोग भारतराज्यकी रक्षाकी समस्याको नहीं विचारते। इसीसे हमारे दिखाये हुए राज्यनाश करनेवाले दोनों दोषोंमेंसे एककोभी दूरकरनेका प्रयत्न उन्होंने अभीतक नहीं कियाहै।

पहलेके हिन्दुस्थानी राजाओंकी भाति अङ्गरेज लोगभी विभवके अहकारसे.मत्तहोकर विलासी वनगयेहैं। पहलेकी भांति सचे वीरोंके योग्य कष्ट सहनेकी शक्ति अब उनमें नहीं रहीहै। पहलेके समान दूरदर्शी राजनीतिविशारद लोगभी अब अङ्गरेज जातिमें जन्म नहीं लेरहेहै। वाणिज्यकी लालसा और विलासके प्रेमसे अगरेजोंकी बुद्धि मोहकी कारिखिमे डूबती जातीहै, वल और वीर्यकी भी वहुत कुछ कमी होगयी है। भारतके सीमाप्रान्तमें अफरीदियोंसे लडनेमें और दक्षिण आफ्रिकाके बोअर युद्धमे अङ्गरेजोंका वल घटनेका परिचय सब लोगोंको मिलगयाहै। अफरीदियोंसे लडते समय गोरीसेनासे सिख और गोरखोंकी शूरता और वीरता कहीं अधिक प्रकट हुईथी। बोअर युद्धमें ६० हजार अशिक्षित किसानोंको दबानेकेलिये २। लाख अस्त्र शस्त्र युक्त गोरे सैनिकोंको वल प्रकटकरनेका प्रयोजन हुआथा। अस्त्र शस्त्र रहित एकसौ बोअर किसानोंके सामनेसे कई वार हजार अंगरेज सैनिकोंको प्राणलेकर भागना पडाथा। कुछ दिन पहले उत्तर समुद्र सम्बन्धी दुर्घटनामें रूसी वीर रोजडेजभेनस्कीके हाथमे हदसे ज्यादा अपमानित होकरभी अगरेजोंने जिस ढगसे उस अपमानको सहलियाथा वहभी अगरेजोंके विलासप्रेममे उपजीहुई कमजोरीका लक्षणहै। विलायतके निवासी अब पहलेके भाति सेनाविभागमे भरतीहोनेका आग्रह नहीं दिखाते। सैनिक सग्रहकरनेके लिये विलायतके कर्ताओंको अब पहलेसे कहीं अधिक धन खर्चना तथा श्रमउठाना पडताहै। किन्तु सेना विभागमे काम चाहनेवाले इङ्गलेण्डवासियोंमेंसे फी सैकडे ७२ आदमी उस विभागमें काम करनेके अयोग्य समझे जाकर छाटे जारहेहैं। विलायतके निवासियोमे युद्धप्रेमके वदले आरामका प्रेम अधिक न होनेसे तथा अङ्गरेजोंके शरीरके बलकी कमी नहोनेसे ऐसी दशा कभी नहीं होती। इसीसे सन् १९०५ ईस्वीके गत २१ मार्चको इण्डियन डेलीन्यूजपत्रके सम्पादकने घरडाइटके मारे लिखाथा,—

Many of the failings which characterised the decline and fall of the Roman Empire are witnessed this day in the Empire of Great Britain. And above all, is seen the decline of the military spirit which animated our fore-fathers in the days when no man considered any sacrifice too great for the good of his country. We see in England the steady growth and spread of frivolity, of luxury and of corruption—the whole under a weak and self-seeking Government, and with no great military spirit to support the burden. Wealth there is and success in trade and manufactures. The fleet

of Britain sail on every sea, and carry our merchandise into every port of the habitable globe. But the sage philosopher Francis Bacon Verulam says regarding the vicissitude of the things ;—'In the youth of a State, arms do flourish ; in the middle age of a State, learning and then both of them together for a time , in the declining age of a State mechanical arts and merchandise ' Are not these words prophetic of the decline of our Empire?

अर्थात्-रोमन राज्य नष्ट भ्रष्ट होनेसे पहले वहां जो जो दोष दिखाई दे रहेथे वेही वे इन दिनोंके बढे चढेहुए वृटिशसाम्राज्यमेंभी दिखाई देरहेहैं । सिर्फ यही नहीं जो युद्ध व्यवसाय एकसमय अङ्गरेज जातिके लिये गौरवका पदार्थ समझा जाताथा और देशके हितकेलिये अङ्गरेज लोग एकसमय सब प्रकारसे जैसा आत्मविसर्जन करतेथे वह बात अब इंग्लेण्डमें नहीं रहीहै । हम स्पष्टरूपसे देख रहेहैं कि इन दिनों दिनपरदिन इंग्लेण्डमे नीचाशयता, विलासप्रियता तथा घूसलेनेकी चाल बढती और चारोओर फैलती जातीहै । इंग्लेण्डकी गवर्नमेण्ट अर्थात् मन्त्रीसमाज दुर्बल और स्वार्थीहै । इतने बडे साम्राज्यकी रक्षाकेलिये देशमे जिसप्रकार वीरताका प्रयोजनहै वहभी वृटिशजातिमे नहीं दिखाई देरहीहै । यह सबलक्षण कदापि अच्छे नहीहैं । इसमे सन्देह तो नहीहै कि अंगरेजोके वाणिज्य करनेवाले जहाज अब पृथ्वीके सर्वत्र समुद्रपर बहते फिररहेहैं; अगरेजोके धन और सम्पतिकीभी कमी नहीहै, किन्तु व्यवसाय वाणिज्यकी ऐसी वृद्धिके विषयमे सुप्रसिद्ध दार्शनिक और चिन्ताशील लेखक फ्रांसिस बेकनने लिखाहै,—सब राज्योंकी युवा अवस्थामे लडाईका प्रेम प्रबल बनारहताहै, मध्यम अवस्थामें ज्ञान और विज्ञानकी चर्चा बढ़तीहै; उसके पश्चात् कुछ दिनोंतक अस्त्र शस्त्र और ज्ञान विज्ञान दोनोंकी चर्चा बराबर बनीरहतीहै । राज्यकी अवनतिके समयमे शिल्प वाणिज्य और यन्त्रादिकी उन्नति और प्रचारकी वृद्धि होतीहै । इन तत्वज्ञ, चिन्ताशील लेखकके कथनानुसार क्या हमारे बृटिश साम्राज्यकी अवनति और भविष्य परिणामका स्पष्ट चित्र सूचित नहीं होरहा है ।

इण्डियन डेली न्यूजका यह कथन अत्युक्ति नहीं है बल्कि घमण्डसे फूलेहुए अङ्गरेजोंकी तेजी कितनी घटगयीहै और कमजोरी कितनी बढीहै । वह उनके अपने सदैवके शत्रु फ्रासिसी और कृस्तानी धर्मके न माननेवाले जापानके साथ सन्धिकरलेनेसेही सबको मालूम होरहाहै । अंगरेजोका बल और वीर्य्य यदि पहलेकी भाति तीव्र बना रहता तो वे कभी रूसके भयसे फ्रासीसी और जापानके साथ मित्रता गठित करनेके लिये अग्रसर नही होते । अगरेज यदि अब भी सावधान होंगे तो अपने विशाल साम्राज्यको ध्वंस होनेसे अनायासही बचा लेसकेगे । अगरेज यदि ईम्पीरिअलिजम अर्थात् साम्राज्यवाद, विलास प्रेम और अटल वाणिज्य लालसाको कुछ घटासकेंगे तो उनका साम्राज्य निश्चयही दीर्घकालतक स्थायी होसकेगा । बहुतेरे विज्ञ राज नीतिज्ञ पुरुषोंनेभी इस विषयमे ऐसीही सम्मति प्रकट कीहै ।

इतनी तो अंगरेजोके विलासप्रेमकी बातहै । आगे वेतन पानेवाले सैनिकोंके सहारे राज्यकी रक्षाका प्रयत्न करनेके विषयमे भी अंगरेजोकी त्रुटि साधारण नहीं है । यह कहनाभी अनुचित नहीं है कि भारतके पूर्व राज्येश्वरोके देखे अगरेजोके दिनो यह दोष बहुतही अधिक बढगया

है। कारण यह है कि अंगरेज भारतवासियोंका विश्वास नहीं करते। इस हेतु इस देशकी प्रजाको ब्राह्मण क्षत्रियसे लेकर शूद्र किसानतक उच्चनीच सर्वसाधारण मनुष्योंको महात्मा शिवाजीकी भांति देशरक्षाके पवित्र व्रतमें दीक्षित करनेका साहस उनको नहीं होता। सिख गोरखे आदि सिपाहियोंकी सेनाकोभी वे सर्वोत्तम अस्त्रशस्त्र आदि नहीं देते। उधर विलायतके वेतनपानेवाले सैनिक लोग भारतकी रक्षाके लिये स्वदेश छोडकर इस अधिक गर्मीके देशमें आनाभी खुशीसे नहीं चाहते। अनेक अगरेज आशका यहांतक करतेहैं कि इग्लेण्डकी रक्षाके लिये अगरेज सैनिक प्राणकी माया छोडकर जिस प्रकार कटकटाकर लडेंगे उस प्रकार लडाई वे भारतकी रक्षाके लिये कभी नहीं करेंगे। सो वेतनपानेवाले सैनिकोंमें जो दोष उपस्थित होतेहैं वे दोष भारतीय गोरे सैनिकोंमें सम्पूर्णरूपसे विद्यमान दिखाई देरहेहैं। किन्तु इसमें सन्देह नहींहै कि भारतवासियोंको यदि युद्धविद्या सिखायीजाय तो वे स्वदेशकी रक्षाके लिये प्राणकी माया छोडकर विदेशी चढाई करनेवालेको हरावेंगे। अगरेज यदि सुन्दर शासनसे भारतवासियोंको प्रसन्न रखेंगे तो भारतवासियोंको युद्धविद्या सिखानेसे अगरेजोंका परममगल होगा। भारतवासियोंके युद्धविद्या सीखनेसे सेनाविभागका खर्च बहुत घटजायगा और दरिद्र प्रजाके टिकसका बोझ घटानेमें समर्थ होकर अगरेजी सरकार भारतवासीकी अपार कृतज्ञता पासकेगी।

दुर्भाग्यकी बात यहहै कि भारतवासी प्रजाको अस्त्र देनेकी सम्मति अगरेजोंको किसीभी प्रकारसे नहीं होती है। दीर्घकालतक अस्त्र आदिकी चर्चा न रहनेसे इस देशके निवासियोंके लडाई सम्बन्धी गुणभी बिगड रहेहैं। देशसे पुरुषार्थकी चर्चा इस प्रकार डूबगयीहै कि अगरेज लोग सेनाविभागमें काम करनेके योग्य मनुष्योंको ढूंढकर भी एकाएक नहीं पारहेहैं। कुछ दिन पहले कलकत्तेके इंग्लिशमेन पत्रमें भी इस प्रकारकी बात छेडी गयीथी। इग्लिशमेन ने स्पष्टही कहा था,—

Trouble is already being experienced in getting the right class of recruit.

यह दशा कैसी भयानकहै सो सभी लोग अनुभव करसकते है। ऐसा नहीं कि अंगरेजभी इसका अनुभव नहीं करसकते हैं। इसीसे वे रूसी चढाईका नाम सुननेसे डरसे अकड पडते हैं। किन्तु सुख की बात इतनीहै कि इग्लिशमेन भी अब कहने लगाहै;—

Whether something could not be done in India to increase the number of reservists is a question which ought to form part of any consideration of military defence.

अर्थात् अब भारतवर्षमें रिजर्व सेना बढानेका कोई उपाय होसकताहै कि नहीं सो भारतरक्षा सम्बन्धी प्रश्नकी मीमांसाके मिसमें विचारना उचितहै।

हमारी रायसे वह बात पहलेही सोचना उचित था। यदि ऐसा नहीं हुआ तो हानि नहीं अबभी उसके सोचनेका समय जाता नहीं रहाहै। अबभी रिजर्व सेना बढानेका प्रयत्न करनेसे अंग्रेज थोडे दिनोंके बीचमेंही लाखों देशकी रक्षाकेलिये प्राणदेनेवाले रिजर्व सैनिक इकट्ठे करसकेंगे। इस देशसे पुरुषत्वकी अभीतक पूरी तिलाञ्जुली नहीं हुई है। अबभी प्रयत्न करने

करतेहुए शिक्षादेनेसे लाखों हिन्दुस्थानी युवा थोड़े दिनोंके प्रयत्नसेही अच्छे सैनिक बन जासकते हैं। यदि इङ्गिलिशमेनके इस प्रस्तावके अनुसार कार्य्यहो, यदि लार्ड रावर्टकी भांति युद्धनीति धुरन्धर मतानुसार अंगरेज राजनीतिकलोग कार्य्यके करनेको राजी हों तो थोड़े दिनोंके बीचमें भारतमें अपूर्व शूरता और वीरता रखनेवाली देशरक्षक सेना गठित होसकतीहै. उस समय रूस२० लाख सेना लेकर चढ आनेपरभी विजय पानेकी आशा नहीं करसकेगा। यहांतक कि अंगरेजोंकी ५ करोड़ प्रजाको केवल अस्त्र लेकर अंगरेजोंकी पीठकी रक्षा करनेमें नियुक्त देखनेसे रूस भारत पर चढ़नेकी कल्पनातक विसर्जन करनेको लाचार होगा। हम साहसके साथ कहसकते हैं कि यह बात अटल सत्यहै। किन्तु अङ्गरेज लोग अपनी इस सच्ची भक्ति प्रजाको जी खोलकर विश्वास नहीं करतेहैं। वे केवल इसीलिये जापानके साथ सन्धि करनेको लाचार हुएहैं कि वे अपनी १॥लाख सेना लेकर रूसकी बड़ी भारी सेनाका सामना नहीं करसकेंगे। इससे भारतकी प्रजापर अङ्गरेजोंके घोर अविश्वासका जैसा नमूना मिलाहै उससे भारतवासी मात्रको बहुतही दुःखी होना पड़ाहै। भक्ति रखनेवाली प्रजाको इसप्रकार दुःखी करना कदापि अच्छी राजनीतिके अनुकूल नहींहै।

असली बात यह है कि वेतन पानेवाले स्थायीसेनाके ऊपर इतने बड़े देशकी रक्षाका भार अर्पणकर कोई भी निश्चिन्त नहीं रहसकता है। क्योंकि स्वदेश रक्षाकी पवित्र दीक्षाको ग्रहणकर जो लोग लड़ाई करतेहैं उनके साथ वेतन पानेवाली सेनाका कभी मुकाविला नहीं होसकताहै। रूस और जापानकी लड़ाईमें हम इसबातका प्रत्यक्ष प्रमाण नित्य पग पगपर देखरहेहै। दुःखकी बात यहहै कि भारतवर्षमें स्वदेश रक्षाकी दीक्षासे हृदयको उभारे हुई सेना एकभी नहींहै। स्वदेश रक्षाके पवित्र कार्य्यमें भारतवासी एकवारही वञ्चित होरहेहैं। उधर १॥ लाख या २ लाख वेतन पानेवाली सेनाके सहारे रूसके समान प्रबल शत्रुके आक्रमणसे इस विशाल देशकी रक्षा करनाभी असम्भवहै। इसलिये अंगरेज अवभी कुटिल बुद्धिका परित्यागकरो, भारतवासीको विश्वासकरो, भक्तप्रजाको इसप्रकार निरस्त्र, निर्बल, निष्पौरुष, मत बनारक्खो। ऐसा भूलका विश्वास त्यागदो कि अस्त्र हाथमें आतेही भारतवासी गदर करेंगे। सन् १८७७ ईस्वीतक भारतवासीके हाथमें अस्त्र रहनेपरभी व बागी नहीं हुएथे। जिस गदरके डरसे तुम घबड़ा उठतेहो वह गदर तुम्हारी ज्यादतियोंसे जलेहुए सैनिकोंहीने कियाथा। साधारण प्रजामें कभी विद्रोहकी उत्तेजना नहीं हुईथी। उलटे उससे सहायता पानेसेही तुम गदरको दबासकेथे। पहलेकी भांति अस्त्रके बलसे बलशाली होनेपर भारतवासी अवभी अंगरेजोंके लिये उत्साहपूर्वक रूससे लडसकेंगे। इसका फल यही होगा कि राजा और प्रजा दोनोंकाही मंगल होगा। अंगरेजी सरकारका राज्यरक्षाका सोच जाता रहेगा, दरिद्र प्रजाके धनकीभी फजूल खर्ची बन्द होजायगी।

गोरोंका पालन।

शासनविभागमेंभी फजूल खर्चीकी हद नहींहै। सन् १८३३ ईस्वीमें पार्लियामेण्टसे आज्ञाका प्रचार हूआ कि शासनविभागके उच्चपदोंपरभी देशी कर्मचारी नियुक्त कियेजावें। इसके पश्चात्

सन् १८५८ ईस्वीमें गदरके पश्चात् स्वर्गवासिनी महाराणीने जिस आज्ञापत्रका प्रचार किया उसमेंभी पहलेकी आज्ञा पुष्ट की गयी। किन्तु लार्डलिटन्‌की बातसे मालूम होताहै कि उस आज्ञाका प्रचार होनेके दूसरे दिनसेही भारत गवर्नमेण्ट उसके लंघन करनेका उपाय सोचने लगी। इसका फल यही हुआ कि उच्च पदोंके पानेका पथ इस देशवासियोंके लिये पहलेकी भांति रुका हुआ रहा। सरजानशोरने कहाहै,—

The Indians have been excluded from every honour, dignity or office, which the lowest Englishman could be prevailed upon to accept.

अर्थात् हरएक सम्मान और गौरवके उच्च पदोंसे इस देशके निवासियोंको वञ्चित कियाजाताहै। जिस पदपर काम करनेमें कुछभी गुण न रखनेवाले अङ्गरेजको राजी किया जासकताहै उस पद पर भारतवासी नियुक्त नहीं किये जातेहैं।

यह अवश्यही सन् १८३८ ईस्वीकी बातहै। उसके पश्चात् गत दशवर्षमें इस विषयमें गवर्नमेण्टने जितनी उदारताका परिचय कियाहै सो किसीसे छुपा हुआ नहीं है। सन् १८७३ ईस्वीमें विलायतमें बनी हुई फाइनेन्स कमेटीके सामने गवाही देने समय सरचार्लस ट्रेवेलियन महाशयने कहा था,—

All sorts of young men who fail at the competitive examinations in this country, or who do not even venture to go into them, go out to India with recommendations and they have been put into the police and then into lower department of the Revenue as Deputy Collectors etc.

इसका भावार्थ यहहै कि जो अगरेज युवा लोग प्रतियोगी परीक्षामें सफलता प्राप्त नहीं करसकतेहैं अथवा उस परीक्षाके लियेअग्रसर होनेका साहस जिनको नहीं है वे चाहे सज्जन वा नीच वर्णोंके हों एक सिफारशी चिट्ठी लेकर हिन्दुस्थानमें आतेहैं। उस सिफारिशके बलसे वे अनायासही भारतके पुलिस महकमेमें भरती होतेहैं। उनमेंसे बहुतेरे मालगुजारी महकमेकी डिपटी कलेक्टरी आदि छोटी नौकरियोंमभी भरती होजातेहैं।

विभागीय कर्त्ताओंकी कृपासे इन दिनों बहुतेरे गवर्नमेण्ट आफिसोंमें ५०) रुपयेसे अधिक वेतनके काममें जहातक बनसक्ताहै फरंगीही नियुक्त किये जातेहैं। सन् १८९२ ईस्वीमें पार्लियामेण्टमें जो हिसाब पेस कियागयाथा उसपर ध्यान देनेसे मालूम होताहै कि जो गोरे कर्मचारी मासिक १२५) रुपये वा उससे अधिक वेतन पातेहैं उनके लिये प्रतिवर्ष सरकारी खजानेसे २१ करोड रुपये खर्च होतेहैं। इसके उपरान्त कुछ थोडेसे फरंगियोंको वेतनके बतौर वार्षिक १॥ करोड रुपये दिये जातेहैं। किन्तु भारतवासियोंको वेतन देनेमें गवर्नमेण्ट वार्षिक ५ करोड २५ लाख रुपयेसे अधिक खर्च नहीं करती। यह ५। करोड और थोडेसे फरंगियोंको मिलते हुए १॥ करोड रुपयेही इस देशमें रहतेहैं। बाकी गोरे कर्मचारियोंको मिलती हुई वेतन २१ करोड रुपयेका अधिकांश होमचार्जकी भांति इस देशसे निकलजाता है। उक्तवर्ष पार्लियामेण्टके एक सभासदके प्रश्नोत्तरमें उनदिनोंके भारतमन्त्रीके सहकारी मिस्टर कर्जन (

समयके लार्डकर्जन) ने कहा था कि वार्षिक ५० हजार रुपये या उससे अधिक वेतन पानेवाले हर २७ राजकर्मचारियोंमें से केवल एकही हिन्दुस्थानी है। जो लोग वार्षिक ३० हजारसे ५० हजार रुपयेतक वेतन पातेहैं उनमेंसे केवल तीनही हिन्दुस्थानी हैं। बाकी १७२ सभी गोरेहैं।

सन् १८९२ ईस्वीके पश्चात् बहुतेरे गोरे, काले और फरङ्गियोंकी संख्या सरकारी नौकरीमें बढीहै। उसके अनुसार खर्चकी भी वृद्धि हुईहै। सेनाविभागमे खर्च बढ़नेका पार नहींहैं; मुल्की विभागमे आजकल प्रायः ८ हजार विदेशी गोरे काम कररहेहैं। उनको सरकारी खजानेसे वार्षिक ८ करोड़से कुछ अधिक रुपये वेतनके बतौर दियेजातेहैं। इसके उपरान्त उन राजकर्मचारियोंके लिये भत्ते आदिका अलग प्रबन्धहै। उस मुल्की विभागमें सब मिलाकर १ लाख ३० हजार हिन्दुस्थानी काम करतेहैं। इनको वेतन देनेमें सरकार ७ करोड रुपया खर्च करतीहै। ६ हजार फरंगियोंको ७३ लाख १५ हजार रुपये मिलतेहैं। अर्थात् लगभग वार्षिक हर अंगरेजको ९००५ रुपये हर हिन्दुस्थानीको ५४० रुपये और हर फरंगीको १२१५ रुपये मिलतेहैं।

पश्चिमी शिक्षाके फलसे इसदेशमें जो ज्ञानका सूर्य उग उठाहै वह स्थूलदर्शी सरकारी कर्मचारियोंके प्रयत्नसे अब गहरे बादलोंमें छुपाया जारहाहै। अंगरेजोंने कुछ कुछ उदार बुद्धि और बहुत कुछ प्रयोजनके वशमें होकर इस देशमे पश्चिमी शिक्षाके विस्तारकी सहायता करतेहुए भारतवासियोंके हृदयमें जिस ऊंची वासनाकी जड लगादीहै उसकी यथोचित पुष्टिकी सहायता करनेसे ओछे चित्तवाले सरकारी कर्मचारी अब प्रस्तुत नहीं होरहेहैं। हिन्दुस्थानी कर्मचारी सरकारी काममे प्राणविसर्जन करतेहुएभी उचित वेतन और पुरस्कार पानेसे वञ्चित रहतेहैं।

केवल शासन विभागही नही रेलवे विभागमेभी ६ हजारसे अधिक विदेशी गोरे बडी बडी नौकरियोंपर नियुक्त रहकर हिन्दुस्थानियोंके अधिक वेतन पानेके पथमे कांटे बिछारहेहैं। यह बात तो सबकोही मालूम होगी कि रेलवेके काममे नुकसान होनेपर सरकारी कर्मचारियोंकी कृपासे दरिद्र देशवासियोंकी दीहुई मालगुजारीसेही उस नुकसानकी पूर्ति कीजातीहै। इसका फल यही होताहै कि रेलवेसे फायदा पानेवाले गोरे होतेहैं और नुकसान उठानेवाले काले। रेलवेके काममे अबतक गवर्नमेण्टको ४ करोड पौण्ड अर्थात् प्रायः ६० करोड रुपयेका नुकसान भरना पड़ाहै। इस नुकसानको भरनेके लिये हिन्दुस्थानके खजानेसे निकालकर सरकारी कर्मचारियोंने हिन्दुस्थानी प्रजाके निचोड़े हुए रक्तकी भांति धन देदेनेका प्रबन्ध कियाहै। उच्चपदोमे देशवासियोंके नियुक्त रहनेसे कही थोडे खर्चमें काम बनता। सो नुकसानका प्रमाणभी इतना भयानक नहीं रहता और साथही देशवासी कुछ अधिक धन पातेहुए अपनी दरिद्रताके किसी कदर सुधार सकते। किन्तु इस विषयमें विदेशी राजकर्मचारियोंका ध्यान नही जमता भारतवासियोंकी चाहै कितनी धनहानि क्यों नहीहो वे गोरोंकेही स्वार्थकी रक्षाका प्रयत्न सदैव करते रहते हैं। यह थोड़े खेदकी बात नहीहै।

लार्डकर्जनके दिनों उच्चपदोंपर देशियोंकी संख्या औरभी धूमसे घटायी गयीहै। सन् १८९५ ईस्वीके प्रारम्भमें लार्डकर्जनने इसदेशका शासनभार लियाथा और सन् १९०४ ईस्वीके प्रथम

भागमे उन्होने आयव्ययके लेखेका विचार होते समय यह कहकर घमण्ड प्रकाश कियाथा कि सरकारी बडे बडे कामोमे इस देशके निवासियोकी सख्या बढायी जारहीहै । किन्तु उसके दूसरेही वर्ष गोखले महाशयने सन् १८९७ ईस्वी और सन् १९०३ ईस्वीके कर्मचारियोकी फेहरिस्त प्रकटकर दिखायाथा कि एक विचार विभाग छोडकर प्राय: सभी विभागोमें हिन्दू कर्मचारियोकी सख्या घटायी गयीहै । शिक्षाविभागमे हिन्दू और मुसलमानोकी सख्या पहलेसे घटगयीहै । एक सहस्रसे अधिक मासिक वेतनके पदपर इस विभागमें एकसे अधिक हिन्दुस्थानी नहीहै । सन् १८९७ ईस्वीमे एकसहस्र रुपयेसे अधिक वेतनके पदोपर गोरोंकी सख्या जहा ३९ थी तहा सन् १९०३ ईस्वीमें ४८ होगयी थी । इञ्जीनियरी विभागमे ५ देशी तो बढे किन्तु मासिक १२००) रुपयेके अधिक पदोंमें एकभी हिन्दुस्थानी नहीं मिले । केवल यही नहा, सन् १८९७ ईस्वीमें उन पदोपर जहां ४० गोरेथे तहा सन् १९०३ ईस्वीमे ८१ होगये थे अर्थात् जिस समय स्वल्पवेतनके पदोमें ५ देशी नियुक्त किये गये उसी समय मासिक १२००) रुपयेसे अधिक वेतनके पदोमे २१ गोरे नियुक्त कियेगये ।

रेलवे विभागमेंभी इसप्रकार निम्न पदोपर गोरोंकी सख्या घटाकर कई फरंगी और केवल एकही हिन्दुस्थानीकी नियुक्ति हुई, किन्तु १२००) से अधिक रुपये वेतनके पदोपर पहलेके देखे ५ गोरे और २ फरगियोको नियुक्तकर कर्तारोने अजीब उदारताका परिचय दियाहै । इसके उपरान्त कृषिविभाग, इञ्जिनीयरी विभाग आदि कई नये विभाग रचे गये हैं जिनमे काले चमडेवालोको घुसने नही दिया गयाहै । पशुचिकित्सा, म्यूजियम (यानी अजायव घर) औ डाक आदि विभागोमेभी गोरोकी सख्याही बढायी जातीहै । इस प्रकारसे जिधरही आख फेरतेहैं उधरही हम लार्ड कर्जन महोदयकी विचित्र उदारता और पश्चिमी सचाईका परिचय पाते हैं ।

रेलवे सेना और शासनादि विभागोंमे नियुक्त सफेद हाथियोंके केवल पेट भरनेका ही धन देकर हम छुट्टी नहीं पा जातेहैं । उन सुफेद शरीर धारियोंको धर्मशिक्षा देनेका खर्चभी हमकोही देना पडता है । इस कामके लिये सरकारी खजानेसे प्रतिवर्ष हमारे प्राय: आधे करोड रुपये खर्च होजातेहैं । गोरे कर्मचारियोंके धर्मका ज्ञान बढानेमे यदि सचमुचही पादडी लोग सहायता दे सकते, यदि उनकी राजनीतिक कठोरताको कुछ घटा सकते तो हम आनन्दपूर्वक इन पादडी महाशयोंकेभी पेट पालसकते । किन्तु ये कृस्तानी पुरोहित लोग हमारा वह हित साधनेमे वैसा ध्यान नही देते । ऐसी विडबना क्या और किसी देशमे चल सकतीहै ? इससे बढकर "वर्बरस्य वनक्षय"का उदाहरण और क्या मिल सकताहै ?

गत सन् १८५८ ई० मे नामी दार्शनिक जान स्टूवर्ट मिलने लिखाथा,—

The Government of a people by itself has a meaning and a reality, but such a thing as the government of one people by another does not and cannot exist One people may keep another for its own use, a place to make money in, a human cattlefirm to be worked for the profit of its own inhabitants.

इसका भावार्थ यहहै कि स्वदेशीय राजशक्तिकेद्वारा शासित होनेकी कुछ सार्थकता तथा सत्यता है। किन्तु एक जातिके द्वारा दूसरी जातिके शासित होनेका कुछभी अर्थ नही होता। एक एक जाति दूसरी जातिको अपने मतलब साधनेके लिये नियुक्त रख सकतीहै उसे अपने धनार्जनका वसीला बनासकतीहै, उसे मनुष्यरूपी पशुओंकी जाति बनाकर उनसे अपना (कोल्हू पेरनेका) काम कराले सकती है।

बाबू रमेशचन्द्रने इसपर सत्यही कहाहै; "किन्तु वे गौएं मरना चाहतीहैं, कोल्हू फिर कौन पेरेगा ?" उन्होने औरभी कहाहै कि मिलकी इस कटीली बातमे जितना सत्य रहनेका अनुमान पहले होताहै, उससे कही अधिक सत्य भरा हुआहै। एक जाति दूसरीका शासन कररहीहै और शासन की जाती हुई जातिके स्वार्थोंकी भी पूरी पूरी रक्षा होरहीहै,--इसका उदाहरण पृथ्वीके इतिहासमे एकभी नहीहै। *मनुष्योंकेद्वारा अभीतक ऐसे उपायका निकालना बन नहीं पडाहै कि* भिन्न जातिके शासकोंके द्वारा किसी जीती हुई जातिके स्वार्थ ठीक ठीक बने रहे। पर इस बुराईको दूर करनेका केवल एकही उपाय है। वह उपाय यह है कि, जीतीहुई जातिके हाथमें देशके शासनका कुछ भार दे देना। इस उपायको अवलम्बन करनेसे जीतनेवाले तथा जीतेजाने वाले दोनोकाही बहुत मंगल होताहै।

सच्ची बात यह है कि देशमे इकट्ठी की हुई मालगुजारी आदिका अधिक अंश देशमेंही खर्च न करनेसे प्रजाकी दुर्दशाका घटना बन्द नहीं होसकता है। पहलेके शासनकर्त्ता हिन्दू और मुगलोंके दिनो--यहांतक कि ज्यादती करनेवाले शासकोंके दिनोभी देशमे उगाहे हुए धनका अधिक अंश देशहीमे खर्च होता था। प्रजा जो मालगुजारी आदि देतीथी उसे भांति भांतिके उपायोंसे फिर राजाओंसे लौटा पातीथी। इस लिये अत्याचारी मुसलमान राजाओंके दिनो प्रजाके जितने क्लेश चाहे न रहे हों, परन्तु अन्न वस्त्रका ऐसा क्लेश कभी नहीं था। फिर भारतवासी हिन्दू बादशाह तथा नवाबोंके प्रधान मन्त्रीतक होसकतेथे। मुसलमान राजा कर्मचारी लोग जो वेतन पाते थे तथा प्रजापर लूट मचाकर जो धन संग्रह करते थे वह इसी देशमे रहता था, अबकी भांति वह धन सदैवके लिये सात समुद्र पार निकल नहीं जाताथा। भिन्न २ अकालोंमे वह धन फिर प्रजाके हाथमे चला आता था। इसके उपरान्त मुसलमान नरेश लोग देशी शिल्पियोंके बडे भारी शरण देनेवाले थे। प्रजा पेट भरकर खाने पातीथी, इसीसे राजकर्मचारियोंकी ज्यादतिया सह ले सकती थी। किन्तु इन दिनो ऐसा नहीं हो रहाहै, जो कौडीभी अंगरेजोंके हाथमे पडतीहै वह सीधे इग्लेण्डमे चली जारहीहै, फिर लौटकर हिन्दुस्थानमे नही आरहीहै। सो प्रजाकी दरिद्रता बढीहै, भांति २ की बातोंमे भारतवासी अपना पहला स्वभाव बिसारनेको लाचार हुए हैं। इस लिये हम जिस काममे हाथ डालते हैं वही ठीक २ पूरा होने नही पाता है। और देशोंमें जो काम जिस रीतिसे किया जाता है वह काम इस देशमे उस रीति पर पूरा करना बन नहीं पडता है, अन्त होते २ उसमें कुछ न कुछ निष्फलता उपस्थित होतीहै। हम पहलेसे जिस फलके लिये लौ लगाकर रहतेहैं वह फल हमको ठीक समयपर नही मिलता है। उलटे जिस बातकी शंका हमको पहले उपस्थित नही होती वही आकर उपस्थित होतीहै। श्रीयुक्त नवरोजी महाशयने भी यह बात कहीहै,--

In India's present condition the very sweets of every other nation appear to act on it as poison. With this continuous and ever increasing drain by innumerable channels, as our normal condition at present, the most well-intentioned acts of the Government become disadvantageous

इस स्वभाव विरुद्ध दशाको हटाकर भारतीय समाजको स्वभावमे लाना हो तो बाबू रमेश-चन्द्रकी ठहरायी हुई दवा सबसे पहले काममें लानी होगी। सुविज्ञ नवरोजी महोदयभी उसी दवाके पक्षपातीहैं। सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक डाक्टर अण्टरसाहबने अपने Englnd work in Indiaनामक ग्रन्थमे परामर्श दियाहै कि बडी बडी सरकारी नौकरियोमे अनेक हिन्दुस्थानियोंको भरती करना चाहिये। उन्होंने स्पष्टही कहाहै कि अब जिस प्रकार दो चार हिन्दुस्थानियोको सिविल सर्विसमे भरती कर दिलासा दिया जाताहै उस प्रकार ढगसे इस झगडेकी मीमांसा नही होगी। बडी बडी नौकरियोमे अनेक हिन्दुस्थानियोंको भरती करना होगा। उनके कामकी देख भालके लिये सब ठौरोमे गोरोंकी निगहबानीकीभी व्यवस्था रखनी ठीक न होगी। हण्टर साहब गोरे कर्मचारियोंकी सख्या एकबारही घटा देनेके बडे भारी पक्षपाती थे। डयूक आफ डिवनशायर महाशयभी इसी मतके माननेवाले हैं। वे कहते है कि बडी बडी सरकारी नौकरियोंमे अनेक हिन्दुस्थानियोंको नियुक्त न करनेसे भारतमे उत्तम शासन कदापि जारी न होगा। सर जार्ज वींड्रेट केवल अधिकाश हिन्दुस्थानियोकी सरकारी नोकरियोमे भरती करनेके ही पक्षपाती नहीं थे बल्कि भारतवासियोंको होमचार्जके बखेडेसे भारतवासियोको एकबारही बचाना चाहते थे। उनकी सम्मति यह थी कि इंग्लेण्डके साथ भिडनेसे भारतकी जो अपरिमित हानि हुई है उसकी पूर्त्ति होमचार्जको एकबारही बिना उडाये तथा भारतवासियोकी दीहुई सम्पूर्ण मालगुजारी आदि भारतमेही खर्चनेका प्रबन्ध विना किये कभी नहीं होगी। दूसरे अनेक विज्ञ पुरुषोंनेभी ऐसीही सम्मति दी है। हमारी जातीय महासभाभी गत २१ वर्षोंसे यही प्रार्थना करती आती है। खेदकी बात यह है कि इस देश शक्तिप्रेमी राजकर्मचारी इस विषयमे उचित ध्यान नहीं देते।

पादड़ियोंकी युक्ति।

यहा धर्मव्यवसायी पादडी महाशयलोग देशके कोमल चित्त युवाओको समझाना चाहतेहैं कि तुम अपनी सामाजिक कुशिक्षाके ही दोषसे तुम दरिद्रता भुगत रहे हो नहीं तो अङ्गरेजी शासनके दिनो तुम्हारी जैसी उन्नति हुई है वैसी कभी नही हुई थी। तुम्हारा धन बहुत बढाहै; किन्तु तुम (१) विवाह और श्राद्ध आदिमें बहुत खर्च करते हुए सब खोरहे हो। (२) तुम्हारी ऋण लेनेकी इच्छा बडी अधिक है और (३) तुम सरकारी नौकरी करनेके लिये फूले हुए रहते हो, बस इन तीन कारणोसे तुम्हारी दरिद्रता बढीहै। (४) तुम जेवरोंमें अपना रुपया फँसा रखते हो और (५) बिना विचार जिस तिसको भिक्षा दिया करते हो, (६) मदिरा गाजा अफीमके लटटू होकर भी बहुत रुपये बिगाडते हो। तुम्हारे दान देनेके

भारतको Land of charity (दानका देश) कहलाने परभी Land of beggars (भिखारियोंका देश) बनगया है । क्या यह थोडी लज्जाकी बात है कि यहां ४१ लाख मनुष्य भीखमागकर दिन काटते हैं ? किन्तु ब्राह्मणोंने तुम्हारी नसोंमे ऐसी कुशिक्षा भरदीहै कि तुम्हारे देशवासियोंके चित्तमे इस बातके लिये लज्जाभी आने नहीं पाती । तुम्हारे देशके अनेक लोगोंका ऐसा विचार है कि देशकी बडी बडी नौकरियोंमें अङ्गरेजोंके नियुक्त रहनेसेही तुम्हारा धन घटनेकी एक बडी राह रुक गयी है । किन्तु वह तुम्हारी बडी भारी भूल है । भारतमें अङ्गरेज सिविलियन लोग जो वेतन पाते हैं उसका हिसाब लनेसे तुमको मालूम होजायगा कि उस वेतनके लिये तुमको फी भारतवासी वार्षिक दो पैसेसे अधिक देना नहीं पडताहै । उन नौकरियोंमे आधी वेतनपर देशवासियोंके भरती करनेसे तुमको बहुत फायदा हो तो फी भारतवासी एक पैसेकी बचत हो सकती है । वर्ष भरमें एक पैसा कम या बेशी खर्चसे कुछ आता जाता नहीं है । सच्ची बात यह है कि अँगरेजोंके जमानेमें तुम्हारे धनकी वृद्धि होनेपरभी तुम उक्त "षट्चक्रमें" पडकर नाशकी ओर अग्रसर हो रहे हो । इसके उपरान्त कोई कोई हमारी "मरालिटी" यानी धर्मभयकी कमी तथा परिवारके लोगोंका एकत्र मिल जुलकर रहनेकी चाल को हमारी दरिद्रता बढनेका कारण ठहराते हैं । ऐसा मसीहको न माननेसे और बाइबिलकी ऐसी बातोंको न माननेसे कि साप और आदमियोंमे बाते हुआ करतीहैं । भारतवासियोंकी भलाई नहीं होगी । इस प्रकार उनके अनेक विचित्र उपदेश सुननेमे आतेहैं । होमचार्ज आदिसे भारतका धन निचोड लेनेसे और सरकारकी कृपासे बढे हुए विलायती वणिकोंसे धक्के पाते रहनेसे भारतवासियोंके दिनपरदिन धनका नाश होते रहनेकी बात भारतमें रहनेवाले पादडियोंके कभी सुननेमे नहीं आतीहै ।

जो लोग उक्त कारणोंको ठहराकर भारतकी दरिद्रताके सच्चे कारणको छुपानेके लिये प्रयत्न करतेहैं उनसे पूछा जाताहै कि क्या विवाह श्राद्ध आदि विषयोंमे धनका व्यय होना इस देशकी सदैवकी प्रथा नहीं है ? क्या इन्हीं दिनों हमारे गांवोंमें इन सब खर्चोंकी अधिकाई एकाएक उठ खडी हुई है ? जो लोग सच्ची बातको जानतेहैं वे इस बातको देखकर दु:खी होतेहैं कि आजकल लोगोंका धन घटजानेसे वे सब खर्चभी बहुत घटगये हैं । और यदि ऐसा नभी हुआ हो तो क्या उन सब खर्चोंसे देशका धन घट सकताहै ? इन सब विषयोंमें खर्च किये हुए रुपये क्या देशके भिन्न २ सम्प्रदायोंमे बँट जानेसे देशका बडा भारी कल्याण नहीं होताहै ? क्या इन सब लेन देनोंके कारण देश धनहीन हो सकताहै ? अथवा जो रुपया देश छोडकर समुद्रके दूसरे पार चलाजाताहै तथा उसके वहांसे लौट आनेका कोई उपाय नहीं रहता उसहीसे क्या देशकी दरिद्रता नहीं बढतीहै ?

आगे महाजनोंकी और कर्जा करनेकी प्रवृत्तिकी बात विचारिये ? क्या पूर्वकालमें इस देशमे महाजन नहीथे ? इन दिनों सूदका लेना यदि अधिक होगयाहो तो उसका क्या कारणहै ? देशमें रुपया अधिक होनेसे रुपयेका सूद कम नहीं होता । धनकी कमी होनेसेही रुपयेका सूदभी अधिक होताहै । क्या लोगोंमे धनकी कमी होनाही कर्ज काढनेकी प्रवृत्तिका मूल नहीं है ? रुपयेकी कमी मालूम न होनेसे क्या कोईभी कर्ज काढनेको अग्रसर होताहै ? क्या कर्जका कारण कमीहै अथवा

कभी कर्जका कारणहै ? पहले महाजन लोग देशवासियोंके अनुकूल नौकरोंकी भांति थे, क्या कारण है कि आजदिन वे ग्रामवासियोंके मालिकोंके आसनपर विराजने लग गयेहैं ? इस विषयमें मिस्टर थोरबर्न जो कुछ कहगयेहैं उसका प्रतिवाद क्या कोईभी करसकताहै ?

सरकारकी प्रतिकूलतासे देशके लोगोंका शिल्प, वाणिज्य जब बिगड जाताहै, जब विदेशी शिल्प और वाणिज्यसे टक्कर खातीहुई प्रजा सरकारसे किसी प्रकार सहायता पानेसे वञ्चित होतीहै, जब विद्यालय आदिमें स्वाधीन भावसे जीविका करलेने योग्य शिक्षा विद्यार्थियोंको नहीं दी जातीहै तब लोगोंकी गति नौकरी छोडकर और किधर हो सकतीहै ? राजशक्ति जहां शराब पीनेका उत्साह देनेवालीहै वहां प्रजाकी शराब पीनेकी प्रवृत्ति रोकनी क्या बहुतही कठिन नहीहै ? पूर्वी भूखण्डका जापान ईसा मसीहका भक्त न होकरभी चण्डू पीनेवालोंका मुण्ड काटनेकी व्यवस्था करताहै और चीनदेशके निवासी अफीम खानेकी इच्छा त्यागना चाहतेहैं तो सभ्योंके शिरोमणि अंगरेज बन्दूकोंकी गोलियो और सगीनकी नोकोंसे उनको हैरानकर अफीम खरीदनेमें लाचार करतेहैं कहिये इसका क्या कारणहै ?

दान करते समय अवश्यही हम लोग सुपात्र और कुपात्रके विचारका आग्रह नहीं करते। इसका एकमात्र कारण यह है कि कहीं वैसा विचार करनेमें सच्चे दुखियोंको सहारा मिलना बन्द न होजाय। इस भयसे कि दानपानेके सच्चे अधिकारी कहीं दान विना पाये न रहजाँय। हम मगते मात्रको दान करते हैं। हाय ! इन दिनों वह प्रवृत्तिभी रुक रहीहै। इस प्रकार दान देना चाहे हमारी जातिका दोषहो, किन्तु जिसदेशमें ३० करोड मनुष्योंका वासहै, जिस देशमें प्रायः १० करोड मनुष्य प्रतिदिन एक शाम भोजन करनेको लाचार होतेहैं उस देशमें यदि केवल ४१ लाख भिखारी हो तो प्रत्येय ७० मनुष्योंमें एक आदमी भिक्षासे जीविका करलेताहै। क्या ऐसे देशको भिक्षुकोंका देश कहकर हँसी उडाना कोई भलमसत है ? ऐसी दशामें ब्राह्मणोंकी कुशिक्षासे देशवासियोंकी लज्जाका अनुभव करनेकी शक्तितक मिटजानेका उलाहना देना क्या कोई अच्छी बातहै ? हां इसमें सन्देह नहीं है कि गहनोंमें हमारे कुछ रुपये अटके हुए रहतेहैं। किन्तु क्या हमारे गहनेभी घट नहीं रहेहैं ? पहले कुछ अच्छी हालतके गृहस्थ और किसानोंके जितनी सोने चांदीकी वस्तुएँ देखनेमें आती थीं उनसे क्या अब कम देखनेमें नहीं आतीहैं ? वङ्गदेशमें बन्दोबस्त इस्तमरारीके लिये, उपजाऊ भूमिके लिये और पटसनकी खेतीके लिये सब ठौरोंके किसानोंकी हालत चाहे बहुत गिरी हुई नहो किन्तु क्या भारतके अन्य प्रान्तोंमें उनकी दशा हदसे बाहर बिगडी हुई नहींहै ? अच्छी दशाके गृहस्थोंके यहाँ पहले जितने गहने आदि दिखाई देतेथे उनके आधेभी अब बहुतेरे स्थानोंमें नहीं देखनेमें आते। पहलेसे अब बहुत कम रुपये गहने आदिमें अटके हुए रहतेहैं तो सही किन्तु इससे क्या हमारे सपात्रकी दशा पहलेसे अच्छी होसकी है ?

गोरे सिवीलियन और दूसरे गोरे कर्मचारियोंको बड़ी बडी तनख्वाह देते देते हमारे मुँहसे खून निकलते रहनेकी बात कहकर जो लोग अफसोस करतेहैं उनकी भूल दिखानेके लिये जो विचित्र युक्ति निकाली गयीहै उसके सुननेसे हँसी आतीहै। कहागयाहै कि सरकारी कामोंमें देशवासियोंकी संख्या बढ़ानेसे हिन्दुस्थानवासी प्रजाका खर्च फी आदमी लगभग जो एक पैसा

घट सकताहै उसका मूल्यही क्याहै ? ३० करोड़ प्रजाके दियेहुए ३० करोड पैसेसे प्रतिवर्ष कमसे कम ४७ लाख रुपये इकट्ठे हो सकते हैं; वे ४७ लाख रुपये देशवासियों को मिलनेसे देशमेंही रहजातेहैं। किन्तु केवल इतनीही बचत नहीं, बडे लाट महाशय की कानून सभाके पूर्व सभासद उदार चित्तवाले सीवीलियन मिस्टर डोनल्ड स्मीटन साहबने दिखाया है कि गोरे कर्मचारियोकी संख्या घटादेनेसे भारत गवर्नमेण्टका प्रतिवर्ष १४ करोड रुपयेका खर्च घट सकताहै। क्या पादडी उपदेशकोंने कभी यहभी सोचकर देखाहै कि ये १४ करोड रुपये प्रजाके कितने प्रकारके हित कार्य्योंमें लगाये जासकतेहैं ? कृषिसे जीनेवाले भारतवर्षमें प्रतिवर्ष १४ करोड रुपये कूप, तालाब आदि खोदने और साफ करनेमें लगानेसे क्या प्रजाको थोडा लाभ होगा ? गावोंकी सडकों आदिको दुरुस्त करनेमें, देशकी सफाई आदि करनेमें चिकित्सा आदिका प्रबन्ध करनेमे, शासन और विचारका भार अलग २ कर्मचारियोंमें सौंपनेमें, शिल्प सम्बन्धी बडी बडी शालाओंके खोलनेमें यदि ये १४ करोड रुपये लगाये जायँ तो क्या देशवासियोंका लाभ थोडा होगा ? इस १४ करोड रुपयेके साथ साथ यदि होमचार्जकेभी कमसे कम आधेकी बचत होतो देशवासियोंका लाभ थोडा होगा ? जिस देशमे २२ करोड मनुष्य रहतेहैं वहां क्या कमसे कम शिल्प आदि सिखानेके लिये २२ विद्यालयोका रहनाभी उचित नहीं है ? प्रायः अब देशभरके लोग देशी शिल्प चाहिये, देशी शिल्प चाहिये, कहते हुए मानो पागल बनरहेहैं, किन्तु गवर्नमेण्टको और कुछ न होतो कमसे कम २ चार शिल्पशालाभी बनानेका उत्साह नहीं होरहाहै ? इन सब बातोंके सोचनेसे सभी लोग सहजहीमें समझ सकतेहैं कि प्रति-वर्ष फी आदमी २ पैसा बचना कितना फलकारी है।

मिस्टर डोनल्ड स्मीटनकी सारगर्भित उक्ति।

प्रवीण सिवीलियन मिस्टर डोनल्ड स्मीटन सी. आई. ई. बहादुरने गत १९०४ ईस्वीके फरवरी मासमें एडिबरा नगरमे भारतवर्षकी वर्तमान शासन पद्धतिके सुधारनेके विषयमें जो सार गर्भित सम्मति प्रकाश कीथी उसमे बडी बडी तनख्वाहवाले सिवीलियनोंको पालन करनेकी हानि-कारिता बडीही युक्तियुक्त भाषामें सिद्ध की गयी है। इस विषयमे उनकी वक्तृताके एकांशका अभिप्राय इस प्रकारहै, वर्तमान शासन प्रणालीके दोषसे सपूर्ण देश दरिद्र होगयाहै। प्रायः ४ करोड परिवारोंके लोग दैनिक तीन आना मात्र आमदनीपर जीविका करलेनेपर लाचार हुएहैं। किन्तु उनको फी आदमी लगभग वार्षिक तीन रुपये टैक्स देना पडताहै। ५ मनुष्योंके परि-वारके १५) रुपये वार्षिक टैक्स देना पडताहै। इस प्रकारसे भारतवासियोंसे गवर्नमेण्ट वार्षिक १ अरब १० करोड़ रुपये मालगुजारी वसूल कररहीहै। प्रजाके कष्टसे दिये हुए इस धनको विदेशी सिवीलियनोंके विलाससे भरे हुए जीवनका निर्वाह करनेके लिये और सैनिक विभागके कर्मचारी लडाईकी चुलबुली मिटानेके प्रबन्धमें खर्च किया जाताहै। इन सब अनुचित खर्चोंका बडाही कठिन भार भारतवासियोंके लिये अब सहने योग्य नहीं रहाहै। सुसभ्य अगरेजोंके लिये यह बडेही कलंककी बात निस्सन्देह है।

जिन सब कारणोंसे भारतवासियोंकी दरिद्रता बढ़ी है उन सब कारणोंका मूल खोद डालनेसे मेरी समझमें भारतवासी धनवान् होसकेंगे। भारतीय खजानेसे प्रतिवर्ष २७ करोड रुपये सेना विभागमें, १५-१६ करोड रुपये मुल्की बन्दोबस्तमें, ४-५ करोड रुपये गोरोंकी पेन्शन आदि देनेमें, ६ करोड रुपये इञ्जीनियरी काममें और ६-७ करोड रुपये मालगुजारी वसूल करनेमें खर्च किये जातेहैं। मेरा विश्वास यहहै कि इस ६० करोड रुपयेके बदलेमें भारतवासी कुछ भी उपकार नहीं पाते। कहनेसे कोई अत्युक्ति नहीं होगी। भारतके धनसे पूरे हुए सेना विभागसे भारतसे कहीं बढ़कर इग्लेण्डहीका उपकार होताहै। उपकारके लिहाजसे खर्चका बाटनेकी व्यवस्था होनेसे यह कहना चाहिये कि भारतके सेना विभागसे खर्चका एकतिहाई भाग यानी ८करोड रुपये इग्लेण्डके खजानेसे देना चाहिये दिवानी विभागके काममें गोरे कर्मचारियोंकी कुछभी आवश्यकता नहींहै कहनेसे कुछभी अत्युक्ति नहीं हो तो मैसूर आदिकी भांति देशी राज्योंमें थोडी तनख्वाहके देशी कर्मचारी बडीही उत्तम रीतिपर राज्यकार्योंका निर्वाह कररहेहैं। अगरेजोंके भारतराज्यमें भी वैसी व्यवस्था करनेसे खर्च घटानेका प्रबन्ध होसकताहै। मेरे प्रस्तावके अनुसार कार्य्य होनेसे इस विभागमें कमसेकम आधा यानी ८ करोड रुपयेका खर्च घटसकताहैं, पेन्शनका खर्चभी २करोड रुपये घटसकताहै। मालगुजारी वसूल करनेके लिये गोरे कर्मचारियोंकी संख्या घटाकर वार्षिक ३ करोड रुपये और इञ्जीनियरी विभागकाभी वार्षिक प्राय. ३ करोड रुपयेका खर्च घटसकताहै। इस प्रकारसे खर्च घटानेसे उक्त चार विभागोंसेही सरकारी खजानेसे वार्षिक २२-२३ करोड रुपयेकी बचत होजायगी। वार्षिक २३ करोड रुपयेके खर्च घटनेसे गवर्नमेण्ट किसानोंको आधी मालगुजारी छोड देसकेगी ३ निमककी ड्यूटी आधीसे भी अधिक घटादेसकेगी और वार्षिक ५ हजार रुपयेसे कम आयपर आमदनी महसूल घटा देसकेगी। धनियोंके लिये यह सब सुभीते बहुत अधिक नहीं जानपडसकतेहैं, किन्तु जो लोग तीन आनेकी दैनिक आमदनीपर परिवारोंके पालन करनेमें लाचार होतेहैं उनका इसमें सन्देह नहीहै कि इससे बडा लाभ होगा। ❀❀❀❀ किन्तु जितने दिन भारतके मन्त्री और बडे लाटके हाथमें बडीभारी शक्ति सौंपी रहेगी उतने दिन यह सब सुधार हो नहीं सकेगा। क्योंकि वे लोग जन साधारणकी सम्मतिपर उपेक्षा प्रकटकर मनमाना वर्ताव कियाकरतेहैं। भारतवासी भी अब इस बातको भलीभांति समझगयेहै।

भारतवर्षके शासननीतिके मूलतक परिवर्तन बिना किये किसीभी ओरका मङ्गल होनेवाला नहीं है। केवल पार्लियामेण्टमें भारतवासी सभासदोको लेनेका प्रबन्ध करनेसेही आशानुरूप फल नही मिलेगा। पहले स्टेटसेक्रेटरी और बडेलाटकी शक्ति घटानी पडेगी। गठरी गठरी भर रुपयेकी वेतन न देनेसे जैसे कर्मचारी नही मिलसकतेहैं उनकी संख्या और प्रभाव घटाना है। अवश्यही वर्तमानकालके अनुचित शक्ति चाहनेवाले राजकर्मचारी इस प्रस्तावको किसीभी प्रकारसे नहीं मानेगे। किन्तु यदि इग्लेण्ड और भारतकी चिरस्थायी भलाई करनीहो तो इस परामर्शके अनुसार करनाही चाहिये।

जातीय महासभा कांग्रेसके गत इक्कीसवें अधिवेशनके सभापति बनकर माननीय श्रीयुक्त गोपाल कृष्ण गोखले महाशयने संक्षेपमें भारतके आय व्ययकी बात इस प्रकारसे समझायीथी,-

भारतगवर्नमेण्ट प्रजासे (वसूल करनेके खर्चको छोडकर) वार्षिक ६६ करोड रुपये मालगुजारी वसूल करतीहै । इसमेंसे ३० करोड रुपये सेनाविभागके लिये खर्च होतेहैं । होमचार्ज २१ करोड रुपये (विलायती जगीखर्च छोडकर) विलायत भेजेजातेहैं । मुल्की विभागके गोरे कर्मचारियोंका पालन करनेमें ४॥ करोडसे भी अधिक रुपये खर्च होतेहैं, बाकी १०॥ करोड रुपये गवर्नमेण्टके हाथमें रहतेहैं । इस थोडेसे रुपयेसे उसको प्रजाके हितके सभी कार्य्य कुछ कुछ करनेपडतेहैं । ऐसी दशामें शिक्षाका विस्तार आदि कार्य्योंके लिये धनकी कमी आदिका अनुभव होना कुछभी आश्चर्य्य नहीहै ।

पार्लियामेण्टके भूतपूर्व सभासद सरकारका पक्ष समर्थन करनेवाले मिस्टर जे. एम. मेकलीन तकने भी इस बातको मानाहै;—

" It is literally true that at the present out of the fifty millions of net revenue of India, half comes to England to pay the Home Charges, while probably another third is spent on the army, which s mainly employed in guarding the frontier. Very little of the Indian revenue is spent in fact in India at all

अङ्गरेजोंके साथ वाणिज्यके टक्करमें पराजय, मालगुजारीकी ज्यादती, होमचार्जके नामसे भारतवासियोका रक्त सोखना और प्रायः अधिक वेतनकी सम्पूर्ण नौकरियोंमें विदेशियोंको नियुक्त करना आदि कारणोंसे देशवासियोकी दुर्दशा कैसी हुईहै उसका निश्चय श्रीयुक्त रवीन्द्रनाथ ठाकुरके निम्नलिखित कथनसे भलीभांति प्रकट होताहै,—

हम प्रत्यक्षरूपसे देखरहेहैं कि एक समय भारतवर्षने पृथ्वीभरको कपडा पहुँचायाथा, आज वह पराया वस्त्र पहरकर अपनी लज्जा बचारहाहै, एक समय भारतभूमि अन्न पूर्णाथी, किन्तु हाय ! आज लक्ष्मीको लक्ष्मीने लात मारीहै—एक समय भारतमें पुरुषार्थकी रक्षा करनेके लिये अस्त्र थे, आज केवल नौकरीकी लेखनी बढ़ानेका चाकूही रहगयाहै । ईस्टइण्डियाकम्पनीने राज्य पानेके दिनसे स्वेच्छापूर्वक भारतके शिल्पियोको छल, बल और कौशलसे लगडा बनाते हुए सम्पूर्ण देशको किसानीके काममें नियुक्त कियाहै । आज वेही किसान मालगुजारी बढते बढते ऐसे अभागे बनादिये गयेहैं कि कर्जके समुद्रमें सदैवके लिये डूबगयेहैं । यह तो वाणिज्य और कृषीकी दशाहुई । आगे साहस और अस्त्रकी बात कहनी चाहिये; किन्तु नहीं, उस बातके कहनेकी दरकार नहीहै ...... इस देशसे वर्षप्रतिवर्ष ५ अरब रुपये मालगुजारी और महाजनोंके नफेके नामसे विदेश चले जातेहैं । व्यवसायके लिये पूँजी कहांसे मिलेगी ? दशा तो ऐसी उपस्थित हुई है । ... रोमके शासनमें, स्पेनके शासनमें, मुगलोंके शासनमें क्या इतना बड़ा विशालदेश कभी इस प्रकार रक्षाके उपायसे एक बारही रहित हुआथा. वंगदर्शन—अत्युक्ति शीर्षक लेख ।

प्रतिकारका पथ ।

इस शोचनीय दशाका परिवर्तन न होनेसे भारतवासी देखतेही देखते ध्वस होजायँगे । जातीय महासभा उसकी रक्षाका भार लेचुकी है, वह उस दुर्दशासे रक्षाके लिये राजशक्ति और प्रजा

शनिको जगा रहीहै। राजकर्मचारी लोग महासभाके बातपर यथोचित ध्यानतो नहीं देरहेहैं किन्तु महासभाके इन २० वर्षोंके प्रयत्नसे हमारा जातीय जीवन बहुत कुछ गठित हुआहै, भाति २ के भेदोंके विचित्र स्थान भारतवर्षमे इस शुभ प्रयतसे अपूर्व एकताका सञ्चार हुआहै। हिन्दू, मुसलमान, कृस्तान, फरंगी, बंगाली, मदरासी, पञ्जाबी, महाराष्ट्रीय, पारसी, पश्चिमी, गुजराती, उडिया आदि भिन्न २ सम्प्रदायोंके लिखे पढे प्रधान एक सूत्रमे बँधकर एकही महान उद्देश्यको साधन करनेके लिये एकही पथसे अग्रसर होरहेहैं। जातीय महासभाके आन्दोलन और आलोचनाके फलसे हमारा लक्ष्य स्थिर हुआहै। हम अब समझसकेहैं कि किस उद्देश्यकी सिद्धिके लिये हमको परिश्रम करना चाहिये। यहभी हमारे ध्यानमे आगयाहै कि उस उद्देश्यकी सिद्धिके लिये कैसी बडी साधना और आत्मत्यागका प्रयोजन है। धर्मभेद वा जातिभेदकी बात उठाकर देशके कार्य्यमे मिलनेमें अब किसीको पहलेकी भाति सकोच नहीं हो रहाहै। कांग्रेसके फलसे अब हम एक दूसरेको हम पहचान सकेहैं। एकप्रान्त वासीके सुख वा दुःखसे दूसरे प्रान्तवासीके हृदयमे आज आनन्द वा वेदनाका सञ्चार होरहाहै। वर्तमान बंग भंगके आन्दोलनकी सर्वव्यापिता कांग्रेसहीका फलहै। यहभी देशके लोग कांग्रेसके फलसे नसनसमे समझगयेहैं कि हमारा राजनीतिक अभाव और अभियोग क्याहै।

किन्तु इसप्रकार अनुष्ठान पहले इस देशमे नहीं था। इस लिये यह जिस देशकी वस्तुहै इसे उस देशके ढगसे न चलानेसे उत्तम फलका पाना कठिन होजायगा। पश्चिमी देशोमे प्रजाके राजनीतिक आन्दोलनसे जो तुरत फुरत उत्तम फल मिलजाताहै उसका कारण यहहै कि वहाकी छोटीसी छोटी प्रजातक उस आन्दोलनमें जीके साथ मिलजातेहैं। हमारे देशमे विद्याका प्रचार न होनेसे अनेक लोग इन सब आन्दोलनोंके पतेतक नहीं रखते। देशके सबलोग जातीय महासभाके कार्य्यमे बराबर उत्साह नहीं दिखाते। इसीसे शक्तिप्रेमी राजकर्मचारीलोग आन्दोलन करनेवालोंकी अल्पताका अनुभव कर प्रतिकारमें उदासीनता प्रकट करतेहैं। इससे अवश्यही महासभा अकिञ्चित कर समझी जानेके योग्य नहीं होसकती, इससे हमीलोगोंकी अकर्मण्यता और अज्ञताही प्रकट होतीहै।

यदि जातीय महासभाके आन्दोलनसे समाजके सब श्रेणियोंके लोगोंकी सहानुभूति प्रकट हो, यदि राजकर्मचारी लोग समझसकें कि इस आन्दोलनसे सम्पूर्ण समाज नख शिख डोलरहाहै, यदि वे जानले कि महासभाके प्रस्ताव सम्पूर्ण देशवासियोंके हृदयसे स्वीकृत कियेहुए प्रस्तावहैं और उन प्रस्तावोंके अनुसार कार्य्य न करनेसे भारतीय समाजके अन्तसे अन्ततकके तलवाले वेदनासे हिलने लगेंगे तो वे राजकर्मचारी कांग्रेसके प्रस्तावोंपर अवश्यही ध्यान देनेके लिये आग्रह दिखावेंगे। इस हेतु कांग्रेसके उद्देश्य अर्धशिक्षित और अशिक्षित जनमण्डलोंको समझादेकर देशकी बढतीहुई दरिद्रताकी बात, हमारी सोचनीय अवनतिकी बात उनकी नसनसमे जमादेतेहुए कांग्रेस पर सबका अनुराग बढाना और योंही इस हितकर कांग्रेसकी शक्ति बढाना प्रत्येक देश-वासीका अवश्य कर्तव्यहै। देशके प्रत्येक सुसन्तानको यह कर्तव्य अपने मत्थे लेलेना चाहिये। सन् १८३३ ईस्वीमें पार्लियामेण्ट सभाकी बनायीहुई विधियोंसे और सन् १८५८ ईस्वीकी महाराणीके आज्ञापत्रसे हमको जो अधिकार मिलेहैं, उत्तम शासनके जोजो भरोसे दियेगयेहैं, उन्हें देशके बहुतेरे लोग भलीभांति नहीं जानते। इसीसे हम उन सब अधिकारोंसे वञ्चित रहकर अवनतिके तेज

बहुत चलेजाते हैं। अङ्गरेजी भारतराज्यकी सब प्रजाओं—नीचेसे नीचे दरजेतककी प्रजाको हमारे राजाके दियेहुए अधिकारोंकी बात ठीकठीक समझानेके लिये, उन अधिकारोंका पूरापूरा फल लाभके अर्थ सबके हृदयमें व्याकुलता भरदेनेके लिये देशके प्रत्येक सुपूतको यथासाध्य प्रयत्न करना होगा। अनजानहीसे इतने दिनोंतक हमारा सर्व नाश होताआयाहै। स्वर्गीय बंकिमबाबू बहुतदिन पहले यही बात कहगयेहैं। उनका कथन यहहै,—

सुशिक्षितलोग जो कुछ समझतेहैं उसका कुछकुछ अंश अशिक्षितोंको बुलाकर समझादेनेसे वे भी शिक्षित होजातेहैं। इस बातका प्रचार बङ्गदेशमें सर्वत्र होनाचाहिये। किन्तु सुशिक्षित लोग अशिक्षितोंसे जबतक नहीं मिलने लगेंगे तबतक यह बात नहीं होसकेगी, सुशिक्षित और अशिक्षितमें एक दूसरेके लिये सहानुभूतिका प्रयोजनहै ❀ ❀ ❀ ❀ बङ्गालके ६ करोड ६० लाख (अब प्रायः ८ करोड) मनुष्योंके द्वारा कोई कार्य्य न होनेका कारण केवल यहीहै कि बङ्गालमें सर्व साधारण लोगोंकी शिक्षाका प्रयत्न नहीहै।

अब यही उपाय अवलम्बन करना चाहिये कि जिससे वह अज्ञता दूरहो, देशके छोटे बडे सबलोग अपनी सच्ची दशा समझसकें, सबकोई दुर्दशा दूर करनेके लिये जातीय महासभाके साथ आग्रहके साथ मिलजावें और राजकर्मचारीलोग कांग्रेसवालोंको थोडेसे आन्दोलनकारी कहकर उपेक्षा न करसकें। इस सुमहान् पवित्र कर्तव्यका साधन करनेमें उत्साह प्रकट न कर जो लोग जातीय महासभापर हँसी उडावेंगे अथवा उपेक्षा प्रकट करेंगे वे देश और समाजके शत्रु कहलाकर सज्जनोंके घृणाभाजन होंगे।

जो लोग जातीय महासभाकी प्रयोजनीयताको अनुभव करनेमें असमर्थहैं उनके विषयमें आलोचना करना यहां अनावश्यकहै। किन्तु जो लोग महासमितिकी कार्य्यप्रणालीका परिवर्तन चाहतेहैं, प्राचीनकार्य्य पद्धतिपर जिनके जीमें अश्रद्धा उत्पन्न हुईहै, उनकी बातोंपर सबकोही ध्यान देना चाहिये। इन नये ढंगके स्वदेश सेवकोंमेंसे एकका मन्तव्य युक्तिसंगत समझकर नीचे कुछ कुछ उद्धृत करदेतेहैं,—

राजाके कार्य्योंकी समालोचना करकेही अथवा राजाको परामर्श देकरही भिन्न देशीय राजाके पैरोंपर गिरीहुई जातिका राजनीतिक कर्तव्य पूरा नहीं होसकता। यह बात कोईभी अस्वीकार नहीं करसकता कि राजनीतिकाही आन्दोलन राजनीतिके शिक्षाका एक प्रधान उपायहै। यदि और किसी बातके लिये नहो तो केवल इसी शिक्षाके लियेही राजनीतिक आन्दोलनका प्रयोजन है। पर हमारी बात यह है कि कहीं केवल इसी काममें नियुक्त रहकर हमारी सारीशक्ति मिट न जावे अथवा केवल इसीको हम अपना एक मात्र कर्तव्य मान न लेवें। इसके उपरान्त भिक्षावृत्ति सर्वथा त्यागने योग्यहै। हम अपने राजनीतिक प्रस्तावोंको सदैव केवल Respectfully request करकेहीकृतार्थ न होजावें,कभी कभी firmly I can andकरनेकाभी साहस प्रकट करें तो ठीकहै। क्योंकि जो दावा करनेको असमर्थ है उसके अनुरोधका कोई अर्थ नही है। हम कांग्रेसके विरोधी नही हैं। भारतके राजनीतिके विषयमें कांग्रेसने अनेक बडे २ कार्य्यकर दिखायेहैं। हम केवल उसकी कार्य्यप्रणालीका कुछ २ परिवर्तन चाहते हैं। जो खानेकी वस्तु ५ वर्षके बच्चेके लिये यथेष्ट है उससे २० वर्षके युवाका पेट कैसे भरेगा?

××××हम यही चाहतेहैं कि राजनीतिक अधिकार पानेके लिये केवल अनुरोध न कर यदि दावा करना हो तो उस दावेके पीछे जिस शक्तिका रहना प्रयोजनीय है उसी शक्तिको पानेके लिये कांग्रेस इस समय प्रयत्नकरे। इस कार्य्यमें अग्रसर होनेके लिये सबसे पहले कांग्रेसकी प्राचीन प्रणाली और प्राचीन प्रस्तावोका सस्कार होना चाहिये । कांग्रेसमे शिल्पप्रदर्शिनीको इससे पूर्व अपने अङ्गमे मिलाकर समयकी गतिका अनुसरण कियाहै। हम और भी अग्रसर होनेको कहरहे हैं। जातीयजीवन प्रवाहके साथ चलतापुर्जा बने रहनेके लिये कांग्रेसकी सम्मतिका कुछ कुछ परिवर्तनका प्रयोजन होगा। क्योंकि २५ वर्षोंकी जानकारीसे हमको बहुत कुछ शिक्षा मिलचुकी है। नव्य भारतपत्रमे श्रीयुक्त धीरेन्द्रनाथ चौधरी एम. ए. का भारतकी प्रजानीति नामक लेख।

इस प्रसगमे धीरेन्द्रबाबूने सर्व साधारण जनमण्डलीमे राजनीतिक शिक्षाका प्रचारके विषयमें जो कुछ कहाहै उसकाभी एक अंश उद्धृत करने योग्यहै,—

हम इस बातको एकबारही नहीं मानते कि साधारण शिक्षाका प्रचार न होनेसे राजनीतिक शिक्षाका प्रचार नही होसकताहै. अथवा सर्वसाधारणमे स्वदेशकी प्रीति जाग्रत नहीं होसकती। कथकड आदिके सहारे सर्वसाधारण जनोंमें नीति और धर्म्मकी बडीबडी बातोंका सदैव प्रचार होताआयाहै, उन्हे लोग समझते और उनके अनुसार कार्य्य करते आयेहै, उन्हें समझनेमे यदि उन लोगोको क्लेश न हुआहो तो ऐसा कहना निस्सारहै कि अन्न वस्त्रकी बात, सर्व साधारणके सुख दुःखकी बात समझादेने वे समझ नही सकेंगे। यह कौन नहीं समझता कि जीवन संग्राम दिनबदिन बढता जारहाहै। कुछदिन हुए एक ग्राममे गयाथा और सर्वसाधारणको बुलाकर अपनी वर्तमान दशाके विषयमें कुछकुछ वहाके लोगोको समझानेका मैंने प्रयत्न कियाथा। देखा कि उस प्रयत्नका फल आशासे कही बढकर हुआ। लोग जब दुःख और कष्टके किसीभी कारणको आंखोंके सामने नही देखपातेहैं तबही उन्हे भाग्यका फल समझकर चुपहो रहतेहैं। किन्तु समझानेसे उनके ममझनेमें देरी नहीं लगती। जाच पडताल करनेसे मालूम हुआ कि ऐसा एकभी किसान नहीं है जिसे वर्षके अन्तमें एकमास दोमास वा तीनमास धान मोललेकर खाना नहीं पडताहै। सूखा वा बाढ न रहनेसेभी यह दुर्भिक्ष क्यों बनाहुआ रहताहै? साधारण प्रजा इसका कारण ढूँढकर न पानेसेही भाग्यका फल समझलेतीहै। किन्तु जब समझा दियागया कि इसका कारण अदृष्ट नहीं दृष्टहै, यह लीला देवी नहीं, मानुषी है और निवारण करने योग्यहै. तब मानों लोगोकी छातीपरसे एक भार हटगया। इस दुःख दुर्दशाको दूर करनेके लिये जब उन लोगोकी सहायता मांगी जायगी तब वे आग्रहके साथ सहायता करनेको अग्रसर होंगे। इस विषयमें सच्ची दशाको समझादेना छोडकर उनको और किसी शिक्षा देनेका प्रयोजन नहीं होगा। दुःखके सच्चे कारणको अनुभव करनेसे जब बगालकी प्रजा नीलहेसाहबोंके अत्याचारसे बचनेके लिये कठोर प्रतिज्ञासे बद्ध होसकीथी. तब कौन कहेगा कि अत्याचारकी बात समझनेसे अत्याचार रोकनेके प्रयोजनके समय फिर कठोर प्रतिज्ञासे बद्ध नही होसकेगी? जिनको मिलान कर देखनेकी सामर्थ्य है वे साधारणरूपसे समझ सकतेहैं कि दीनताका कारण भाग्यका

फल नहीं है । कुछदिन पहले कटकके एक १०० वर्ष उमरवाले मछुइसे पूछा था कि मरहठोंकी अमलदारी अच्छी थी अथवा अङ्गरेजोंकी अच्छी है ? बूढेने सांस छोडकर कहा वाबूजी! पितासे सुनचुकाहू कि दो पैसेके दूध घी की नदी वहती थी; इस समय दो महीनेमें एकवारभी छटाकभर दूधका मुँह नहीं देखता । उडीसामें मरहठोंकी अमलदारी पूरी होनेके वादही बूढेने जन्म लियाथा । मैंने पूछा ऐसा क्यों हुआ ? बूढेने कहा कम्पनी सब लूट ले गयी है । सो हम इस बातका अर्थ समझही नहीं सकतेहैं कि लोगोंको समझादेनेसे वे क्यों नहीं समझेंगे और उस लूटको रोकनेकी सहायता मांगनेसे क्यों नहीं सहायतादेंगे । सारे अनर्थका मूल यह है कि हम समझानेका प्रयत्न नहीं कररहेहैं । नहीं तो क्या लार्डकर्जन कहसकते:–Efficiency of administration is in my opinion synonym for the contentment of the Governed.—कर्जन बहादुर Governed शब्दसे सर्व साधारण प्रजाको समझाना चाहतेहैं। क्योंकि शिक्षित मण्डली तो discontented graduates and under graduates हैं । यह साधारण प्रजाका contentment अर्थात् सन्तोष क्या वस्तुहै? यह वामपायर नामक चमगुदडके चूसलेनेसे रक्तरहित प्रजामण्डली की उसके पंखकी हवासे आयी हुई गाढी नींदहै । इस निद्रासे जागकर प्रजामण्डली यदि स्वदेशके हितके लिये लिखी पढी मण्डलीसे मिलजाय तो फिर शिक्षित मण्डलीको "बालाना रोदनं बलम्" वाली नीतिका अनुसरण कर स्वदेशका हित साधना नहीं पडेगा। सो कांग्रेस प्रजाको उस निद्रासे जगानेका प्रयत्न करे । इङ्गलेण्डमें पोलिटिकल डेपूटेशन न भेजकर साधारण प्रजामण्डलीको राजनीतिक समाचार देनेका देशव्यापी प्रबन्ध करनेसे थोडे खर्चमें करोडो गुण अधिक सुफल प्राप्त होगा ।

विलायतमें राजनीतिक आंदोलन करनेके लिये डेपूटेशन भेजनेके प्रयोजनको हम अस्वीकार नहीं कर सकते । श्रीयुक्त बाल गंगाधर तिलक महाशय भी विलायतमें आन्दोलन करनेके लिये डेपूटेशन भेजनेके पक्षपाती हैं । अब उस बातको जानेदीजिये । धीरेन्द्र बाबूने और एक मार्केके विषयमें जातीय महासभाके प्रधानोंकी दृष्टि खींची है । वे कहतेहैं कि सबसे पहले गाव गांवमें सभा स्थापन करनी चाहिये । उनके कथनका एक अंश नीचे उद्धृत करदेतेहै,–

हम बंगविच्छेदके विरुद्ध घोर आन्दोलन कररहेहैं, किन्तु धीरे धीरे जो और एक अनर्थकी सूचना होरहीहै उसपर हम ध्यान नहीं देरहे हैं । सावहेज साहब पञ्चायत फिरसे गठनेकी चालसे जिस कठोर शासनकी शूलीपर हमको चढाना चाहतेहैं उसपर हमारे राजनीतिक प्रधानलोग क्यों चुप पडेहुएहैं ? हमने पहलेही कहाहै कि विदेशी राजा जितना जितना हमारे भीतरी कामोंमें हाथ डालेंगे उतनीही उतनी हमारी अधिक अधोगति होगी और हम उस राजबन्धनमें फँसजायेंगे । यह पंचायत सुधारनेकी चाल इस बन्धन और गुलामीकी कमीको पूरा करनेवालीहै । देशमें यदि कुछभी तेजस्विता, कुछभी साहस, कुछभी आत्मनिर्भर, तथा कुछभी निर्भयता, शेष बची हों तो वह ग्रामोंमेंही है । उसकी भी जड उखाडकर जातीयजीवनको एक बारही असार कर देनेका प्रयत्न होरहाहै । समय रहते चिकित्साका प्रबन्ध न करनेसे रोग चिकित्सासे आरोग्य होने योग्य नहीं रहेगा । कहां हमको गावोंकी सभा स्थापित कर अपनी शक्ति बढानेका प्रयत्नकरना चाहिये

और कहा जो कुछ शक्ति अवशिष्टथी उसकोभी ध्वंस करनेका प्रयत्न होरहाहै। हमारे राजनीतिक प्रधानलोग सचेत हो जावे, प्रयत्न करनेको उद्यत हो जावें, ग्रामोंमें सभाए स्थापित होकर जिससे होनेवाली सरकारी सभाओंका स्थान पहलेहीसे अपने दखलमे करलेसकें उसका प्रयत्न करें।

इस विषयमें श्रीयुक्त रवीन्द्रनाथ ठाकुर अपनी अवस्था और व्यवस्था शीर्षक लेखमें कहतेहैं;—

एक समय पचायत हमारे देशकी वस्तुथी, अब पचायत गवर्नमेंटके दफ्तरमें गढीहुई चीज होनेको चली। यदि फलका विचार कियाजाय तो इन दोनों प्रकार पचायतोंकी प्रकृतियां एक दूसरेसे एकबारही विपरीत प्रतीत होगी। जिस पचायतकी शक्ति ग्रामके लोगोंकी अपनी दी हुई नहींहै, जो शक्ति गवर्नमेटकी दीहुई है वह बाहरकी वस्तु होनेसे ग्रामोंकी छातीपर अशान्तिजनक स्वरूपमें चढबैठेगी। वह परस्परमें ईर्षा बनादेगी। इस पञ्चायतमे पद पानेके लिये अयोग्य लोग ऐसा प्रयत्न करनेको उद्यत होंगे कि जिससे विरोध खडाहो। वह पञ्चायत मजिस्ट्रेटको और उनके अधीनस्थ लोगोंको ही अपने पक्षवाले मानलेगी और मजिस्ट्रेटसे वाहवा पानेके लिये गुप्त वा प्रकाश रूपसे ग्रामका विश्वास तोडती रहेगी। ये पञ्चायतवाले ग्रामवासी होकरभी ग्राममें औरोंका उपकार करनेको लाचारहोंगे। ग्रामवासियोंकी जो पञ्चायत ग्रामवासियोंकी स्वरूपधारी शक्ति थी उसके बदले ग्रामवासियोंकी दुर्बलता साधनेवाली दूसरी पञ्चायत बनजायगी। भारतवर्षके जिन सब ग्रामोंमें अभीतक गाववाली पञ्चायतका प्रभाव बनाहुआहै, जो पञ्चायत समय पाकर शिक्षाके विस्तार और दशाके परिवर्तनके अनुसार आपही आप स्वदेशी पञ्चायत बनजाती, जो पञ्चायत किसी दिन देशभरके साधारण कार्य्योंमें सब देशवासियोंकी गँठजोड बाधनेवाली समझी जातीथी, उसके भीतर यदि गवर्नमेण्टकी शक्तिरूपी बाढ घुसजावे तो उस पञ्चायतका पञ्चायतपन सदैवके लिये मिटजायगा वह पञ्चायत देशकी वस्तु होकर जो काम करती गवर्नमेण्टकी वस्तु होनेसे उसका ठीक उलटा करने लगेगी। बगदर्शन।

बूढे भारतहितैषी ह्यूमसाहबने काग्रेसके गत उन्नीसवें अधिवेशनके कुछही पहले भारतवासियोंको जो सारगर्भित उपदेश दिया था उसे भी हरएक भारतवासीको स्मरण रखना चाहिये,—

"क्या तुम मुहूर्तके लियेभी मनमें सोचतेहो कि कोई भी राजशक्ति आपही आप तुमको राजनीतिक अधिकार देगी? जिन सब अधिकारोंके देदेनेसे शक्ति चाहनेवाले शासन कर्ताओंकी शक्ति घटजायगी वे न्यायके विचारसे तुम्हारे हजारों दावे रहनेपरभी क्या सहजहीमें उन शक्तियोंका विसर्जन करदेगे? जिस शक्तिको त्यागदेनेसे राजाकी जातिके मनुष्योंको उच्चपदोंसे वञ्चित होनापडेगा उस शक्तिको क्या राजकर्मचारीलोग कुछभी बिना उज्र किये छोडदेंगे? क्या तुम स्वप्नमेंभी सोचसकतेहो कि उदार नीतिवाली वा कोई भी गवर्नमेण्ट केवल न्यायबुद्धिसे तुम्हारे सब दु.खोंको दूर करनेके लिये अग्रसर होगी? ऐसी झूठी चिन्तामें पडकर कभी अपनेको धोखा मतदो। भारत और विलायतमें परिश्रमको परिश्रम न मानकर अटल उद्यम और उत्साहके साथ आन्दोलन करते रहना पडेगा, विलायतमें आन्दोलनकी अधिकताका प्रयोजन है। इस प्रकारसे अधिक दिनोंतक गवर्नमेण्टको यदि क्रमानुसारादिक कर सकोगे तो तुम्हारे इष्टोंकी सिद्धिका पथ साफ होजायगा। राजनीतिक आन्दोलनसे सुफल पानेको

म पुरा भरोसा तो रखताहू किन्तु तुम जिस प्रकार उदासीन होकर आन्दोलन करतेहो उसका फल कुछभी नही होगा। आन्दोलनमें चित्तको एकाग्र करलो; अपने धन और शक्तिको जातिकी उन्नतिके लिये विसर्जन कियाकरो, भारतमें वर्षकी आदिसे वर्षके अन्ततक आन्दोलनको जाग्रत रखो; राजकर्मचारियोंकी टेढी निगाहसे मतडरो। सब प्रयत्नोंसे अगरेज जातिके हृदयमें यह विश्वास खींचदो कि तुमने जिस विषयको पकडलियाहै उसको बिना पूराकिये तुम अगरेज जातिको एक दिनके लियेभी सुस्ताने नही दोगे। ससारके सामने सिद्ध करदो कि तुम अपने समय, धन यहांतक कि जीवनकोभी विसारकर अपने सङ्कल्पकी सिद्धिके लिये उद्यत होगयेहो। कामसे अपनी योग्यता सिद्ध करदो। कभी देखलोगे कि तुम्हारी उन्नतिके काटे इस प्रकार दूर होगयेहैं कि जैसे ग्रीष्मके आनेपर वर्फ नही रहती"।

"तुम्हारी उन्नति तुम्हारेही प्रयत्नपर निर्भर करताहै। अपने सम्पूर्ण साम्प्रदायिक और व्यक्तिगत मतभेदोंको भूलजाओ, छलकपट छोडदो, सब एकही मन्त्रसे दीक्षित होजाओ, रात्रि और दिनको भूलकर एक मनसे तथा एकही प्राणसे उद्देश्यकी सिद्धिके पथमें अग्रसर होते रहो, अटल और निस्सङ्कोच मनसे काममें डँटजाओ, फिर देखलोगे कि तुम्हारी कामना विना विलंब पूरी होजायगी। नही तो इस समय तुम्हारे आन्दोलनमें तुम्हारी एकाग्रता और सच्चे हृदयकी कमी तेज बनीहुई है उसके विद्यमान रहते कुछभी फललाभ नही होगा।

"और और देशोंकी गवर्नमेण्टोंकी भांति तुम्हारी गवर्नमेण्टभी सब विषयोंमें अपनेको अधिक विज्ञ और शक्तिशाली समझाकरतीहै। वह स्वेच्छापूर्वक तुमको एक तिलकाभी अधिकार नहीं देदेगी। उलटे क्रमशः मिलते हुए अधिकारोको सकुचित करदेनेका प्रयास करेगी। जिस देशमें प्रजाकी शक्ति दुर्बलहै उस देशमे राजशक्तिका ऐसाही व्यवहार हुआ करताहै। राजशक्तिके इस प्रकार अत्याचारको रोकनेके लिये सर्व साधारण प्रजाका सदैव सजग रहनाही उचितहै। प्रजा यदि राजाके अविचारको न रोकसके तो वह दोष प्रजाकाही है राजाका नहीं। इस बातको सदैव स्मरण रखना"।

"गत १९०५ ईस्वीके नवम्बर महीनेमे माननीय श्रीयुक्त गोपाल कृष्ण गोखलेकी विलायतसे विदाईके समय मिस्टर ओडोने भी ऐसीही बात कहीथी। उनकी उक्तिका एक अश नीचे दियाजाताहै:—

विधिसंगत उपायसे अगरेजी गवर्नमेण्टका गलादबानेका कोई उपाय न ठहरालेनेसे भारतवासियोंका राजशक्तिसे कभी कोईभी अधिकार पानेकी आशा नहींहै। यह बात आप (,गोखलेमहाशय) अपने देशवासियोंको भलीभांति समझादेना। बगालके कटे हुए टुकडोको जोडनेके लिये विलायती वस्तु वर्जन करनेकी जिस प्रतिज्ञासे आपलोग बद्धहुएहैं वह रोग दूर करनेकी ठिक औषधिहै। इस विलायती वस्तु त्यागनेकी प्रतिज्ञा आपलोग कुछदिनोंतक स्थायी बना रखसकेंगे तो अंगरेजलोग समझ जायँगे कि भारतकी शासनपद्धतिका नखशिख सुधार करनेका प्रयोजन उपस्थितहुआहै।"

मिस्टर ह्यूम और ओडोनेल साहबोंका यह उपदेश ग्रहण करना अभीतक हमारे देशके बहुतेरे विज्ञताका अभिमान रखनेवालोंने उचित नहीं मानाहै। वे इस भयसे कापाकरतेहैं कि सरकार चिढजायगी, किन्तु क्या इस भयसे कि राजकर्मचारीलोग हमारे ऊपर अन्यायपूर्वक चिढजायँगे॰

हमको सदैव अंगरेजी प्रजाके उचित अधिकारोंसे वञ्चित रहना पडेगा? क्या राजकर्मचारियोंकी अनुचित कार्यावलीको सदैव मानलेते हुए हम इस विशाल भारतभूमिको सच मुचही श्मशान बनजाने देंगे? अन्नके लिये मारे मारे फिरना कैसा भयानकहै? यह जिनको नित्य अनुभव करना नहींपडता वे चाहे दसकरोड आधे भोजनसे जीनेवाले तथा रोग और शोकसे पिसनेवाले लोगोंकी यन्त्रणाओंका भलीभांति अनुभव न करसकें, किन्तु जो लोग स्वय यन्त्रणाओंको सहरहे हैं, जो लोग छातीका लोहू मुखसे निकलने तक परिश्रम करते हुएभी बच्चोंके मुखमें दो कवर अन्न नहीं देसकतेहैं। उलटे जिनके रोजगारका अधिक भाग गोरोंके पेट पालने और विदेशी व्यवसायियोंका धन भण्डार परिपूर्ण करनेमे लगजाताहै वे राजकर्मचारियोंकी झूठ मूटकी लाल आखें देखकर क्यों अपने कर्तव्यसे हटेंगे? राजाने जो हमको अधिकार दियेहैं उनके गुमाश्ते हमको उनसे वंचित कर हमारा सर्वनाश करनेको उद्यत होजावेंगे तो क्या हम उसे चुपचाप सहलेंगे? यदि जीनाहै तो विधि सङ्गत उपायसे अपने पानेयोग्य अधिकारोंको पालनेके लिये हमको सदैव डँटकर उद्यम करना पडेगा।

सन् १८३३ ईस्वीमें पार्लियामेण्टने भारतीय शासन पद्धतिका सुधार करनेके अभिप्रायसे जो व्यवस्था की थी उसका एक अंश ग्रन्थके आरम्भमें कुछ दूर चलकर उद्धृत कियागयाहै। उसकी व्याख्या करनेमें उन दिनोंकी ईस्टइण्डियाकम्पनीके डाइरेक्टरोंने कहाथा,—

The court conceive this section to mean that there shall be no governing caste in British India.

अर्थात् भारतमे राजाकी जाति और प्रजाकी जातिका भेद रहनेदेना पार्लियामेण्टको अभीष्ट नहीं है। सन् १८५८ ईस्वीके १ नवम्बरको अपने आज्ञापत्रमें महाराणी विक्टोरियाने ईश्वरका नाम लेकर कहाथा कि इग्लेण्डकी और अगरेजी नयी आबादियोंकी प्रजाके साथ हम जिस प्रकार कर्तव्य पालन करनेको बद्ध होचुकेहैं उसी प्रकार कर्तव्य भारतवासी प्रजासेभी पालन करनेकी प्रतिज्ञा की जातीहै। इस आज्ञा पत्रसे हमलोगोंको अगरेजी प्रजाकी भांति अधिकार भोगनेका हक होगयाहै। अगरेजी प्रजाके सब अधिकारोंका मूल यहहै कि No taxation without representation. अर्थात् प्रजाकी रायबिनालिये राजा प्रजापर कोई टैक्स नहीं लगासकेगा। राजा प्रजाकी राय बिनालिये टैक्स लगावेगा तो प्रजा टैक्सदेनेको जिम्मेवार नहीं होगी। इस मूलनेही पार्लियामेण्टको गठित कियाहै। जिस पार्लियामेण्टकी आज्ञासे देशका शासन होरहाहै वह सब दरजेकी प्रजाके चुनेहुए प्रतिनिधियोंसे बनीहै। इन प्रतिनिधियोंमेंसे अधिक लोगोंकी रायके अनुसार प्रजाके शासन सम्बन्धी कर्तव्य निश्चय कियेजातेहैं। उनकी राय बिनालिये राजकर्मचारीलोग यहांतक कि प्रधान मन्त्री अथवा स्वय राजराजेश्वरभी किसी विषयमें एक कौडी तक खर्च नहीं सकते। यही सच्चा आत्मशासनहै। अगरेजोंकी नयी आबादियोंने भी यह अधिकार पालियाहै।

अगरेजोंकी प्रजा होनेके कारण भारतवासी भी न्यायके अनुसार इस प्रकार आत्मशासन प्राप्त करनेके हकदारहैं। यह आत्मशासन प्राप्त करनेसे भारतवासी अपने भलाईके लिये देशकी भीतरी शासन व्यवस्थाका जैसा चाहेंगे वैसाही अदल बदल कर सकेंगे। उनके काममें कोई

भी बाधा देनेवाला नहीं रहेगा। देशवासियोंके प्रयोजन और कमियोंके विचारसे आय और व्ययकी व्यवस्था होगी। भिन्नराज्योंके साथ भारतवर्षका जैसा सम्बन्ध रहना चाहिये केवल उसीकी व्यवस्था अगरेजी गवर्नमेण्ट सार्वभौम शक्ति होनेके कारण करदेगी, बडेलाट और गवर्नरोको नियुक्त करनेकी शक्तिभी इग्लेण्डके हाथमे रहेगी; किन्तु गवर्नरोकी कानून सभाओंके सभासद प्रायः सभी और प्रबन्ध कारिणी सभाओंके अधिकांश सभासद प्रजाके द्वारा चुनेजाकर अगरेज गवर्नरोको राज्यशासनके काममे सहायता देगे। वैसी दशामें भारतवासियोको होमचार्ज और विलायती इण्डिया आफिसका खर्च नहीं देना पडेगा। सेना विभागका खर्च भी प्रजाकी इच्छाके विरुद्ध और प्रयोजनके अतिरिक्त बढाना राजकर्मचारियोंके लिये सम्भव नहीहोगा। देशमे शिक्षाका विस्तार नहर आदिका प्रबन्ध और स्वास्थ्य रक्षाकी व्यवस्था आदि हितकर कार्य्योंमे बहुत धन खर्च करनेको मिलजायगा। लार्ड मेकालेसे डाक्टर हण्टर और सर हेनरी काटन तक सब उदारचित्त विज्ञ राजनीतिक अगरेजोंने स्वीकार कियाहै कि हम इस प्रकार आत्मशासन पानेके हकदारहैं। महारानीके आज्ञापत्रमें भी वृटिश प्रजाका यह अधिकार हमको देनेकी आज्ञा दी गयीहै। किन्तु राजकर्मचारी लोगोंकी कुटिलतासे हम गत १५० वर्ष इन सब हकोंके पानेसे वञ्चितहैं। भारतवर्षमें जिस प्रकार शासन नीतिका अवलंबन करनेसे किसी समय भारत-वासी आत्मशासन प्राप्त करनेके योग्य होसकतेहैं उस प्रकार शासनप्रणाली जारी करनेमें अगरेज राजकर्मचारी लोग धर्मानुसार प्रतिज्ञाबद्धहैं। यह बात पृथ्वीके सभी सभ्यजातियोंको मालूम है। इसीसे कुछदिन पहले स्ट्रेटसेटलमेण्टके अंगरेज शासन कर्ता सर एण्डरूक्लार्क महाशयको अमेरिकाके अन्तर्गत बोस्टन नगरके मिस्टर मोरफिल स्टोरेने पूछाथा,—

Have these centuries of British rule brought the Indian people any nearer to self-government than they were when British rule began?

अर्थात् १५० वर्षोंके अगरेजी शासनने भारतवासियोंको आत्मशासन प्राप्त करनेके कुछभी योग्य बनादियाहै कि नहीं? उसके उत्तरमे सर एण्डरूक्लार्कने कहा कि अगरेजोंके शासनमे रहकर भारतवासियोने एक तिलभी आत्मशासन प्राप्त नही कियाहै। इस उत्तरको सुनकर सच्चे हृदयवाले अगरेजोंके हृदयमे लज्जाका सञ्चार हुआहै। किन्तु हिन्दुस्थानके अगरेजी राजकर्म-चारी कहते है कि भारतवासी शिक्षा, दीक्षा और चित्तकी शक्तिमे ऐसे हीन हैं कि अभी बहुत दिनोंतक वे आत्मशासनके अधिकारको नहीं पासकेंगे। पहले भारतवासी योग्यता प्राप्त करे। आगे उनको आत्मशासनकी शक्ति दीजायगी। किन्तु यह कहना कि पहले तैरना सीखे, फिर पानीमें उतरने देंगे। जैसा न्याय पूर्णहै वैसी ही भारतीय राजकर्मचारियोंकी यह युक्ति सब बुद्धिमानोंको उचित जँचेगी। पहले पानीमें न उतरनेसे तैरनेकी शिक्षा जिस प्रकार मिल नहीं सकती उसी प्रकार शक्ति न पानेसे शक्तिका व्यवहार करनेकी शक्ति भी नही मिल सकती। इसीसे उदार हृदय ग्लाडस्टोन महाशय कहते थे,—

It is liberty alone which fits men for liberty.

और एक सत्पुरुषने कहाहै,—

Liberty is the best educator. Its atmosphere is pure and bracing, through which the lark of genius soars high beyond the reach of the shafts of despotism and clouds of ignorance.

भारतवासीको आत्मशासन देने विशेषकर सरकारी खजानेसे धनका व्यय करते समय भारतवासियोंकी राय ले लेनेका प्रस्ताव मदरासके पूर्व गवर्नर सर चार्ल्सट्रेवेलियन महाशयने सन् १८७२ ई० में अनुसन्धान समितिके सामने उठाया था अवश्यही वह प्रस्ताव स्वीकृत नही हुआथा। ट्रेवेलियन महाशयने उस समय कहाथा,—

Give them the raising and spending of their own money and the motive will be supplied, and life and reality will be imported into the whole system All would act under real personal responsibility, under the eye of those who would be familiar with all the details and would have the strongest possible interest in maintaining a vigilant control over them. And it would be a school of Self-Government for the whole of India—the longest step yet taken towards teaching its 200,000,000 of people to govern themselves, which is the end and object of our connection with that country.

अर्थात् भारतवासीको टैक्स लगाने और अपने देशके खजानेका धन खर्चनेका अधिकार देनेमे उसका व्यवहार भली भांति करनेकी बुद्धि उनमें आपही आप आजायगी और सम्पूर्ण हिन्दुस्थानी समाजके प्राणमें बल आजायगा। समाज अपनी स्थिति समझ सकेगी। सबलोग अपनी अपनी जिम्मेवारी को समझकर कार्य करेंगे। अवश्यही उन विषयोका जो लोग विशेष ज्ञान रखतेहैं उनकी देखरेखमें रहकर दूसरे लोगोंको काम सीखना होगा। ऐसी व्यवस्था भारतमे चलादेनेसे वह २० करोड प्रजाकी आत्मशासन शिक्षाकी शाला अथवा सीढी बनजायगी। यह कहना सर्वथा ठीक है कि भारतवासियोको आत्मशासनकी विद्यामें पारगत करनाही भारतके साथ हमारे वर्तमान सम्बन्धका प्रधान लक्ष्यहै।

पार्लियामेण्टकी अनुसन्धान समितिके सामने इस मन्तव्यके प्रकाशित हुए ३५ वर्ष बीतेहैं, किन्तु तबसे इस लम्बे समयके बीचमें प्रजाको सरकारी खजाने से धनका खर्च करनेके विषयमें कोई भी अधिकार नही दियागया है। अबतो राजकर्मचारीलोग प्रजाकी राय न लेकरही जैसे मन लगताहै वैसेही प्रजाके धनको फूकाकरतेहैं।

हमारे राजकर्मचारी कहतेहैं कि, भारतवर्षमें लिखे पढे लोगोंकी सख्या वहुत थोडीहै, इसलिये भारतवासियोंको आत्मशासनकी शक्ति नहीं दीजासकती। किन्तु २०० वर्ष पहले इङ्गलेण्डमे जब शिक्षित लोगोकी संख्या वर्तमान भारतवर्षसे बहुत थोडी थी तब भी इङ्गलेण्डवासी हाउस आफ कामन्स अर्थात् आत्मशासन सभा प्राप्त करनेके योग्य इग्लेण्डकी गवर्नमेण्टके द्वारा गिने गयेथे। यह बाततो सभी लोग जानतेहैं इसके उपरान्त क्यूबा फिलीपाइन और लाइबेरिया देशोंके निवासियोंसे भारतवासी शिक्षा, दीक्षा और सभ्यता किसीभी बातमे न्यून नहींहै, वह बातभी

किसीसे छिपी हुई नही है। तिसपर भी उन देशोंके निवासी अपनी अमेरिकन गवर्नमेण्टसे जो अधिकार पानेके योग्य समझे गयेहैं उन सब अधिकारोंके पानेके योग्य हम इंग्लेण्डकी गवर्नमेण्टद्वारा नही समझे जारहेहैं। पश्चिम आफ्रिकाके अन्तर्गत लाइबेरिया नामक देशके हबशी २६ वर्ष अमेरीकाके शासनमे रहकर प्रजाके द्वारा राज्यशासन करनेकी शक्ति पानेके योग्य होगये। तथा सन् १८४७ ईस्वीके जुलाई मासमे उनके स्वाधीन शासन जारी होनेकी सूचना प्रकट हुई। और इधर १५० वर्षतक वृटिश शासनमे रहकरभी भारतवासी बडे लाटबहादुरकी प्रबन्धकारिणी सभाके सभासद तक होनेके योग्य नही होसके। क्या यह अङ्गरेजी शासन प्रणालीका दोषहै? अथवा गोरे राजकर्मचारियोंकी कुटिलताहै अथवा भारतवासियोंकी शिक्षा दीक्षा और कार्य्यकी योग्यता कम होनेका परिचयहै? क्या भारतवासी लाइबेरियाके हबशियोसे भी मानसिक शक्तिमे पीछे पडे हुए हैं? यदि यह सत्य हो तो जो सर आर्थर काटनका नाम भारतीय इञ्जीनियरोमे सर्वोपरि विद्यमानहै उन आर्थर काटनने जल और मकानोंकी इञ्जीनियरी विद्यामे भारतवासियोका शिष्य होना उचित क्यों माना? *

सच्ची बात यह है कि प्रजाको जो शक्ति देनेसे राजकर्मचारियोंके मनमाने वर्तावकी राह रुकजायगी वह शक्ति किसीभी प्रकारसे एकाएक हमको नही दी जायगी। इसीसे भारतवासियोकी अयोग्यता आदि भाति भातिके कल्पित बहाने उठाये जातेहैं। इस दशामे हम यदि अङ्गरेज जातिके चित्तमे यह विश्वास नही जमासके कि अङ्गरेजी प्रजाके पाने योग्य अधिकार न पानेसे हम अगरेज जातिको एक लहमेके लियेभी सुस्ताने नहीं देंगे तो अगरेज क्यों हमको आत्मशासनका अधिकार देने लगेगे? इग्लेण्डके निवासियोंको शुद्ध हृदय वाले समझनेका विश्वास रखनेके लिये कोई भी कारण हमारे यहां विद्यमान नहीहै। उनके हृदयमे यह वासना भी कम नहींहै कि महारानीके आज्ञापत्रकी बात रखीजावे। किन्तु वे इस देशकी प्रजाकी सच्ची दशा जाननेका अवकाश नही पाते। एकतो अपने अपने कामोसे ही उनमेसे बहुतेरोंको फुर्सत नहीं मिलतीहै, तिसपर जो लोग भारतके शासन कार्य्यमें नियुक्त होकर इस देशमे आतेहै वे सभी सुशिक्षित न्यायी और उदार इग्लेण्ड वासियोंकी दृष्टिमे समझे जातेहैं। सरकारी कागज और पेंशन लियेहुए सिविलियनोकी पक्षपातसे भरीहुई बातसे उनको निश्चय होताहै कि भारतका शासनकार्य्य भलीभांति निर्वाह होरहा है। इसलिये भारतके राजकर्मचारियोंके अत्याचार रोकनेमे उनका आग्रह कभी प्रकट नही होता। अवश्यही बीचबीचमे भारतसे श्रीयुक्त गोखले तथा लाजपतराय सरीखे लोगोके विलायत जाकर सच्ची दशा समझानेका प्रयत्न करनेसे भारतीय प्रजाकी दुर्दशाकी ओर विलायतवासियोका ध्यान कुछ कुछ खिचसकता है। किन्तु यह कामभी

* "The natives have shown practical talent (in Engineering), and on the main point of all, that of irrigation, nothing can be better than the ancient irrigation works of Southern India. In fact, they have been a model to ourselves. Sir Arther Cotton is merely an imitator on a grand scale and with considerable personal genius, of the ancient native Indian Engineers." Sir Charles Trevellyan. Report of 1873. Question 1547.

सहजमे सिद्ध होनेवाला नहीहै। बहुत खर्च उठाकर बहुत दिनोतक इसप्रकार प्रयत्न करते रहनेसे कोई अच्छा फल पानेकी सम्भावना नहीहै। फिर विलायतमे भारतगवर्नमेण्टका पक्ष समर्थन करनेके लिये वक्तृताकारियोंकी किसीमण्डलीका खडा होजानाभी असम्भव नहीहै। ऐसी बात होनेसे विलायतके लोगोका दोनो प्रकार वक्ताओंकी विरोधी बातोंसे सत्यको समझलेना सहज नही होगा।

इस दशामे भारतीय प्रजाकी दुर्दशाकी ओर इङ्गलेण्डके लोगोंकी दृष्टि खींचनेका उपाय क्या होसकता है? विज्ञजनोंने निश्चय कियाहै तथा गत जातीय महासभाके अधिवेशनमे भी सबलोगोंकी सम्मतिसे निश्चय होचुकाहै कि विलायती वस्तुओका वर्जनही भारतकी ओर विलायतवासियोंकी दृष्टि खींचनेका एकमात्र विधिसङ्गत उपायहै।

क्योकि अङ्गरेजलोग वाणिज्यसे जीनेवाली जातिवाले हैं। वाणिज्यमें ही वे ऐसे डूबेहुए रहतेहैं कि और जातिवालेके सुखदुःखोकी बातोपर ध्यान देनेका अवकाश उनको नही रहता है। व्यवसायमें हानि न होनेसे उनकी आख नही खुलती है। ऐसी दशामे विलायती वस्तु वर्जन करनेके प्रयत्नसे यदि अङ्गरेजोका वाणिज्य घटनेलगे तो इसमे सन्देह नहीं है कि उस हानिका कारण अनुसन्धान करनेकी इच्छा सहजहीमे उनको उपस्थित होगी। इसप्रकार अनुसन्धानमे उद्यत होकर जब अङ्गरेजलोग समझजांयगे कि मुट्ठीभर राजकर्मचारियोंके अनुचित शक्ति प्रेमके लिये भारतके करोडो निवासी असन्तुष्ट हुएहैं तथा उनको प्रसन्न न करनेसे ४ करोड अङ्गरेजोका वाणिज्य नष्ट पुष्ट होजायगा। यहांतक कि ३० करोड प्रजाके असन्तोषसे भारतमे कठिन राजनीतिक विपद उठ खडी होसकतीहै तब आपही आप उनमे भारतीय शासन प्रणालीका नख शिख सुधार करनेका आग्रह होसकेगा। सची दशा समझनेमे समर्थ होनेसे वे कभी मुट्ठीभर राजकर्मचारियोंके अनुचित शक्ति प्रेमको स्थिर रखतेहुए विलायतके ४ करोड मनुष्योंके वाणिज्यमे हानि उठाना स्वीकार नहीं करेंगे! प्रजाका असन्तोष राज्यके लिये हितकर नहीहै। जब अङ्गरेजोमे ऐसा विश्वास जमजायगा तब भारतकी शासन व्यवस्थाके दोषोंको सुधारनेमे उनकी आग्रह वृद्धिकी आशा अवश्यही पक्की होगी। इस लिये एक ओर विलायती वस्तुओंका वर्जन प्रतिज्ञाके साथ करते हुए भारतकी दशापर विलायतवासियोंका ध्यान लाना और दूसरी ओर माननीय गोखले और श्रीयुक्त लाला लाजपतराय सरीखे महाशयोंको विलायत भेजकर हमारे शासनके दोषोको सुधारनेके उपाय आदि वक्तृता और पुस्तक आदिके प्रचारसे विलायतवासियोंको सुझाना उचितहै। इसके उपरान्त समाजकी शक्तिको अच्छे नियमोंके प्रबन्धसे समाजकी भलाईके कार्य्यमें नियुक्त कर भारतमे प्रजाकी शक्तिको बढानेका प्रयत्न करनाभी उचितहै।

इन दिनोंके अगरेजकर्मचारी इन सब बातोको समझकरही स्वदेशी आन्दोलनको बिगाडनेके लिये कमर कसचुके हैं। वे समझगयेहैं कि इस देशमे अब स्वदेशी ग्रहण और विलायती वर्जनका जो प्रयत्न होरहाहै उससे मनमाना काम करनेवाली राजशक्तिको प्रजाकी बातोंपर ध्यान देनाही पडेगा। इस प्रयत्नके सफल होनेसे प्रजाका धन बढनेके साथही साथ राजनीतिक अधिकारकीभी वृद्धि होगी, शासनकी व्यवस्थाभी पूरी २ सुधारी जायगी; राजकर्मचारीलोग फिर

पहलेकी भांति मनमाना शासन करनेका अवकाश नहीं पावेंगे, उनको प्रजाकी सम्मतियोंपर ध्यान देकर सब काम निर्वाह करना पडेगा। जो लोग सदासे मनमानी रीतिपर प्रजाका शासन करते आयेहैं उनके लिये इस प्रकार शक्ति घटनेकी सम्भावना निश्चयही बहुतही भयदायी है। इसीसे राजकर्मचारी लोग गोरखोकी लाठियोंसे स्वदेशी आन्दोलनको दबानेके लिये कटिबद्ध हुएहैं। किन्तु उनके इस अत्याचारसे लोगोंमे स्वदेशीवस्तु वर्तनेका आग्रह बढरहाहै। अवश्यही लोग पहलेकीभांति आन्दोलन और सभा समितियोंकी धूम न करतेहुए सावधानीके साथ काम कररहेहैं। विलायती वस्तु खरीदनेमे खुलाखुली बाधा नदेकर उनके लेनेवालोको सामाजिक दण्डसे दण्डित करतेहुए रोकनेका प्रयत्न कररहे हैं। यों स्वदेशीवस्तु लेनेके लिये लोगोंमें जो अनुराग आगयाहै उसकी दिनपरदिन वृद्धि होरही हैं। क्योंकि शिक्षित भारतवासी विशेषकर बंगालीलोग समझगयेहैं कि यह स्वदेशी आन्दोलन हमारे अधिक अधिक राजनीतिक अधिकार पाने और बंगालका विभाग व्यर्थकरनेमे सहायता देगा। अशिक्षित लोगोने समझलिया है कि इससे उनका अन्नकष्ट मिटजायगा। इसलिये कोईभी इस कल्याणकारी स्वदेशी ग्रहण और विलायती वर्जन वाले आन्दोलनको त्यागना नहीं चाहता।

सच्चीबात यहहै कि वर्तमान विदेशीवस्तु त्यागनेकी प्रतिज्ञावाला स्वदेशी आन्दोलनही हमारे राजनीतिक अधिकार लाभकरनेकी आरम्भ कीहुई लडाईका एकही ब्रह्मास्त्र है। इस ब्रह्मास्त्रका यदि हम उचित सद्व्यवहार नकरसके तो हमारा कभी मगल नही होगा। वर्तमानदशाहीमे हम अपनी अवनतिकी अन्तिम सीमातक पहुँचगये हैं। डिगवी महाशयने हिसाबकरके दिखादियाहै कि सन् १८५० ईस्वीमे भारतवासियोंकी दैनिक आय लगभग प्रतिमनुष्य दो आने थी सन १८८० ईस्वीमे वह आमदनी घटकर छः पैसेकी होगयी थी इनदिनो वह आमदनी तीनपैसे-तक उतरचुकी है। अन्नपूर्णाकी सन्तानोके लिये इससे बढकर और क्या कुगति होसकती है। सो आलस्यमें समय गँवानेका अवकाश और नही रहाहै। शक्तिचाहनेवाले राजकर्मचारियोंकी कुटिलतासे हम जिस विधिसगत अधिकारोंसे वञ्चित हुएहैं उन्हें फिर पानेके लिये समय रहते कमर कसकर प्रयत्न नकरनेसे पीछे पछताना पडेगा। मिस्टर डिगवीने कहाहै कि, भारतवासियोका लोहू जिस भयानक रूपसे निचोडा जारहाहै उससे।

"India is not far from collapse."

सम्मोहन—चित्तविजय।

History records in its annals no greater marvel of one race over mastering another in all matters alike of mind and body.

Prosperous British India

अगरेज शरीरकी लडाईसे भारतवासियोंके शरीरका बल और वाणिज्यकी लडाईसे उनके धनका बल बिगाडकरही निश्चिन्त नहींहुए। भारतीय समाजका केवल धन बल और भुजबलही विदेशीराजाके लिये एकमात्र भयकरनेका पदार्थ समझा नहीं गया। बुद्धिबलसेभी मनुष्य बहुतेरे

असाध्योंका साधन कर ले सकता है। नीतिके जाननेवाले कहाकरतेहैं कि "बुद्धिर्यस्य बलं तस्य" इसलिये बुद्धिबल उपेक्षाकी वस्तु नहीहै। विशेषकरके भारतकी आर्य्यजातिकी बुद्धि कभी उपेक्षाकी वस्तु नहींहोसकती। सो बुद्धिमान अंगरेजोंको भारतवासियोंकी बुद्धिमें डाँवाडोल लाकर उनकी चित्तवृत्तियोंको मोहित कररखनेके लियेभी लड़ाईका प्रबन्ध करना पडाहै। इस देशमें नयी शिक्षाप्रणाली जारीकर देशवासियोंकी चिन्तातरंगको नयी राहमे लेजाना पश्चिमी सभ्यताका प्रभाव प्रकट करतेहुए देशवासियोंकी बुद्धिवृत्तिको मोहित कर उनको विश्वास अपने अभिमान और अपनी शक्तिकी ओरसे बिगाडदेना इसलडाईका प्रधान लक्ष्यहै।

इस लडाईमें परतन्त्र जातिका चित्त जीतनेवाली जातिके वशमें आजाताहै। पश्चिमी विर्ज राजनीतिकोंने निश्चय कियाहै कि अपनेसे दुर्बल जातिकी बुद्धि बिगाडने और चित्तकी दृढ़ता नष्ट करनेमें इसलड़ाईसे बढकर कोई दूसरा उपाय नहींहै। मिसरके खार्टून नगरमें गार्डनकालेज और पेकिनमें ह्यानलिंग और टगवेकालेज आदि इसी उद्देश्यसे खोलेगये हैं। बहुतेरे स्थानोंमें पादड़ीलोग इस बुद्धिबिगाडनेवाली लडाईमे प्रधान अस्त्र बनकर काम कियाकरते हैं। इनकी सहायतासे भारतवर्षमें इस चित्तविजय करनेके काममे अंगरेजोंने थोडी सफलता नहीं पायी है।

भारतमें इस नयीलडाईके आरम्भ होनेसे देशवासियोंकी चिन्ताकी गति अंगरेजोंकी दिखाई हुई नई राहमें दौडी अपने देश, अपने समाज और अपने पुरखोंपरसे लोगोंकी श्रद्धा घट गयी और विदेशी विषयोंपरही अनुराग बढने लगा। ऐसी स्थितिमें स्वभावहीसे पराये दुःखोंको देखकर दुःखी होनेवाले बहुतेरे लोगोंकी बुद्धि बिगडकर समाजको जडसे उखाड़ने और पश्चिमी ढंगसे गठित करनेके कामकोही जीवनका एकमात्र उद्देश्य समझने लगी। इस प्रकार समाजसुधारकोंके सिर उठानेसे हिन्दूसमाज दो दलोंमें बँटगया। नयी शिक्षाके कारण और मिश्नरियोंकी कृपासे ब्राह्मण और शूद्रोंमें मनका बिगाड उपस्थित हुआ, समाजकी एकताका बन्धन शिथिल हुआ। तबसे नये प्रकारकी ईर्षा, नये ढंगका झगडा बिना रोक टोक जारी रहकर हमारे समाजको क्रमशः दुर्बल कररहा है।

साधारण झगडे और घरकी लडाई पृथ्वीके सर्वत्र विद्यमानहै। वह अबभी हैं, आगेभी रहेगा और पहलेभी था। कौनसी गृहस्थी घरकी लडाईसे खाली है। कौनसा समाज सामाजिक झगडेसे बचाहुआ है? कोनसी सभा स्वतन्त्रचित्तवाले सभासदोंके बिगाडके बिना चलसकतीहै? जो अंगरेजी पार्लियामेण्ट सभा बडेही उत्तमनियमोंसे गठित हुईहै उसमेंभी सभासदोंके आपसका बिगाड दिखाई देताहै। यहांतक कि विद्या और बुद्धिमें प्रवीण प्रधान लोगोंमें समय समयपर आपसकी बोलचालतक बन्द होजाती है। किन्तु हमारे देशमें झगडेकी जो बहुत अधिकाई देखीजातीहै और उससे आरम्भ कियाहुआ काम व्यर्थ होजाताहै उसका कारण हमारी परतन्त्रता है परतन्त्रताकी दशामें चित्तवृत्तियोंकी ओछाई आजातीहै। ईर्षाडाहकी वृद्धि होतीहै, मिलकर काम करनेकी शक्ति बिगडजातीहै। स्वतन्त्रजाति देशके लिये आपसके सबझगडोंको भूलसकती है। इस प्रकार एकता सीखनेके लिये उनके पास जो सामग्री है उसके न रहनेसेही हमारा छोटासा छोटा झगडा सब दुर्गतियोंका मूल-होजाताहै। क्रमशः जातीय जीवनका लक्ष्य ओर

ऊपरको जायगा और बडा होगा त्यों त्यो हमभी क्रमशः इस ओछे स्वार्थसे उठेहुए तुच्छ झगडोंको भूलना सीखेंगे । स्वाधीन जातिका अपने ऊपर विश्वास अटल बनाहुआ रहताहै, सैकडो विरोध विद्यमान रहने परभी वे उन्हें हमारी भांति जातीय जीवन मिटजानेका कारण समझकर हताश नहीं होते है । पादडियोंकी शिक्षासे इस देशमे जो सामाजिक झगडे उठ खड़े हुए हैं उनका मूल ब्राह्मणोंपर द्वेष और समाजपर द्वेष है । इसी हेतु इस झगडे-को नया कहाहै ।

नयी शिक्षाके फेरमे पडनेसे देशकी बहुतेरी पुरानी अच्छी प्रथाए भी हमारी समझमें जंगलि-योंकी प्रथा जान पडने लगीहै । हमारे पुरखे असभ्य वा अर्द्धसभ्य प्रतीत होने लगेहैं, प्राचीन विषयोंपर श्रद्धा घटजानेसे पहलेके गौरवका उद्धारका आग्रहभी हममें कम होगया है । अलग अलग मनुष्यकी सच्ची स्वतन्त्रताका अभिप्राय समझनेमें असमर्थ होनेसे सभीलोग अपने आप बडे होगयेहैं । परतन्त्रताके कारण समाजके लिये स्वार्थ त्यागनेकी प्रवृत्ति क्रमशः नष्ट होतीजाती है । जो जैसा चाहताहै वह समाजमे रहकर वैसाही काम विना रोक टोक करने लगता है । स्वाधीनजाति जानतीहै कि देशकी रक्षा और समाजकी रक्षाका भार हमारेही हाथमें है । उस जिम्मेवारीकी समझसे वह प्रयोजन उपस्थित होनेपर स्वार्थकी तिलाञ्जुली कर सकताहै । परतन्त्र जातिकी देशरक्षा और प्रजा रक्षाका भार औरोंके ऊपर रहनेसे वह उस विषयकी जिम्मेवारीसे अपनेको मुक्त समझती है । जिम्मेवारीकी कमीके कारण क्रमशः स्वार्थ विसर्जनकी प्रवृत्ति नष्ट होजाती है । हमारे ऊपर वही दुर्दशा उपस्थित हुईहै । * इसके उपरान्त हमारे गावोंकी पचायतोंको बिगाडकर अङ्गरेजोंने हमारी अपने पैरोंके बल खडे होनेकी शक्तिकी जड काटदीहै । साथही अगरेजोंकी शिक्षा विद्यमानहै । इस बिगडीहुई शिक्षाके फलसे अपनी शक्तिका विश्वास खोकर हमने केवल परायी सेवाकी योग्यता पाली है । बुद्धिकी ऐसी गडबडीमें पडकर हमारे जातीय चारित्रकी पँसुलीतक चूरचूर होगयी है । अगरेजोंकी आरम्भ की हुई तीसरी लडाईमें भिडकर हम प्राचीन बडाईकी श्रद्धा खोचुके है, और भविष्य उन्नतिके विषयमे आशा रहित विचित्र जीव बनते जाते हैं ।

---

* "In the earlier days,...each member of the commune was bound by his own self interest to subordinate his personal desires to the general interest of the community. In the new days (i e under foreign rule) he began to assert his own private desires and interests, because he has nothing to gain by suppressing them The joint and united action of the community was no longer necessary for his protection from outside enemies, and he no longer felt himself dependent on the good will and sympathy of his neighbour, so he was less and less inclined to give into them individually or as a body in any matter on which his private interests were opposed to theirs."— Mr. G. Adams C. S in the EAST and WEST

अंगरेजलोग कहतेहैं कि हम तुमको सुसभ्य बनारहेहैं। हमभी सोचरहेहैं कि हम अंगरेजोंसे मिलकर सभ्य बनरहेहैं। इस विचित्र गोरखधन्देका पता लगानेमें सर टामस मनरोने कहाहै,–

I do not exactly know what is meant by civilising the people of India In the theory and practice of good government they may be deficient but if a good system of agriculture, if unrivalled manufactures, if a capacity to produce what convenience and luxury demand, if the establishment of schools in every village for reading and writing, if the general practice of kindness and hospitality, and above all, if a scrupulous respect and delicacy towards the female sex are amongst the points that denote a civilized people, then the Hindus are not inferior in civilisation to the people of Europe.

सच्चीबात यहहै कि हमसे मिलकर अगरेज किनकिन विषयोंमें कितने सभ्य बनेहैं और हम उनसे मिलकर किन किन विषयोंमें कितने सभ्य बनेहैं सो मनरो महाशयकी की हुई उक्त आलोचनाका स्थिरचित्तसे विचार करनेसे मालूम होजाताहै। मिस्टर ब्रुक्सका जो कथन पुस्तकके मध्यभागमें उद्धृत करचुकेहैं वह भी इसबातके साथ विचारने योग्य है। स्वर्गीय भूदेव मुखोपाध्यायने सत्य ही कहाहै कि यदि भारतवर्ष आज राजनीतिके सम्बन्धमें अगरेजोंद्वारा चलाया नहीजाता तो क्या उसकीभी शिक्षित सेना दृढ समुद्रीसेना और युरोपियन विषयविन्यास प्रवीणलोगोंकी कमी रहती? किसीबातकी कमी निश्चयही नहींरहती। अपना काम कोई दूसरा करदे अपनी काम करनेकी शक्ति दूसरेके छीनलेनेसे सदैव यह उलहना और लाञ्छना सुननेसे कि काम नहीं करसकते। काम करनेका आरम्भ करतेही सिरपर सवार होकर टर्रानेसे कोईभी काम नहींकरसकता। आज हिन्दू लोग इसलिये चुपचाप पडेहुए हैं, उन्नमी नहीं बनरहे हैं। हिन्दूओंसे बढकर जपानीलोगोंका कोईभी गुण नहीहै। हिन्दू यदि परतन्त्र नहीं बने रहते तो वेभी निःसन्देह युरोपियनोंका मुकाबिला करते जैसे जापानी कररहे हैं। दुःखकी बात यह है कि इस तत्त्वको अगरेजी शिक्षाके मोहसे अनुभव करनेमें असमर्थ होकर हम अपनेको युरोपियनोंसे स्वभावहीसे हीन समझा करते हैं।

कलकत्ता आर्टस्कूलके अध्यक्ष हैवेल साहब कहतेहैं कि इस देशके लोगोंकी रुचि शिक्षाके सम्बन्धमें बहुत बिगड गयीहै। इस देशमें इमारत बनानेके विषयमें बडीभारी उन्नति हुईथी, पुरानी इमारतें और मन्दिरोंमें इस देशकी इमारती विद्याके विचित्र चिह्न बनेहुए हैं। गत १५० वर्षोंमें विलायतमें इमारत बनानेकी एक प्रकार बिगडी हुई रुचि खडी हुई है। इस देशके सरकारी आफिस उस बिगडेहुए विलायती शिल्पके नमूनेसे बननेके कारण इस देशके निवासियोंकी रुचिभी उस विषयमें बिगड चुकी है। देशी कारीगर देशी राजाओंकी उपेक्षा झेलरहे हैं। किन्तु महारानी विक्टोरिया अपने "असबरन" राजभवनको सजानेके लिये हिन्दुस्थानी कारीगरोंको विलायत लेगयी थी। देशमें बढियाँसे बढ़िया इमारती नमूने विद्यमान रहनेपर भी देशी राजालोग न जाने क्यों अपने राजभवनोंको बिगडीहुई विलायती रुचिके अनुसार कुत्सित

बनारहेहैं। इस देशमे बढ़ियां और गौरवजनक इमारती विद्याके जो अगणित नमूने विद्यमान हैं उनके विषयमे इस देशके लोगोका ज्ञान भलीभांति आजानेसे भारतीय शिल्पके लिये फिर नवीन जीवन उपस्थित होगा।

कलकत्तेकी चैतन्य लाइब्रेरीकी वार्षिक उत्सव सभामें उक्त कथनकी पुनरुक्ति करतेहुए हैवेल साहबने कहाथा,–

जातीय शिल्पकलाकी अवनति जातीय अवनतिका नमूना है। यह बात सबको स्मरण रखना चाहिये कि जातीय शिल्पकला एक वारही विगडजानेसे जातीय जीवनकाभी नाश होजाता है। राजनीतिक व्यवस्थाके विषयमे युरोपियनोंकी नकल करनेपर भी जापानने अपने शिल्पकलापर ध्यान रखना नहीं छोडा। जापानकी उन्नति ठीक जातीय ढगसे हुईहै। जापानके जापानीपनके स्थिर रहनेका मूल लडाईकी बहादुरी नहीहै। अपने शिल्पकलाकी रक्षाका प्रयत्नही जापानीयोंकी जातीयता स्थिर रहनेका प्रधान सहाय हुआहै। जिस जातिके हृदयमे शिल्पकलाका प्रेम भराहुआ है उस जातिके आचार, व्यवहार, घूमना, बैठना बातेंकरना प्रत्येक विषयमेंही उसका परिचय मिलजाता है युरोपियनोमे वह प्रेम कुछभी नहींहै। इनदिनों युरोपियनोंने धन बढानेवाले वाणिज्य आदि विषयोंमें मन प्राण समर्पण कियाहै। वे इस बातको एकवारही भूलगये हैं कि शिल्पकलाकाभी कुछ प्रयोजन है। युरोपके चाहे जिसकिसी नगरमे जाइये देखनेमें आवेगा कि धनीलोग सुन्दरतारहित कुत्सित ईटोंके ढेररूपी इमारतोंमे प्रसन्न मनसे वसरहे हैं, कदाचित मकानके भीतर दो चार चित्र लगेहुए हैं। सभीलोग इसीचिन्तामे लगेहुए हैं कि क्योकर अधिक रोजगार होगा, दरिद्रलोग बडेही कुत्सित ढगसे दिन काटते है। ये सब शिल्पकलापर अनुराग रहनेके लक्षण नहींहैं। तिसपरभी भारतवासी अपनी प्राचीन कीर्त्तिकी बात विसारकर अन्योंकी भाति युरोपियनोंकीही नकल कररहे हैं। क्या यह दुःखकी बात नहीहै कि जिन्होने पहले ताज-महल आदि सुन्दर इमारतें बनायी थी उनके वंशवाले आज युरोपियन कारीगरोंकी कुत्सित प्रणालीकी नकल कररहे हैं, अगरेजोने इस देशमें जो सब बडीबडी इमारतें बनायी हैं उनमें शिल्पकलाका तो नामही नहींहै. उल्टे धूप, वर्षा, तूफान, भूडोल आदि दैवी विपदोमे भी वे विपदरहित नहींहैं। तिसपरभी भारतवासी अन्धे बनकर युरोपियनोंकीही नकल कररहेहैं। सच्ची बात यह है कि भारतकी उन्नति करनीहो तो भारतीय शिल्पकी उन्नति करनी होगी।

A system of education which excluded both art and religion could never succeed because it shut out the two great influences which mould the national character. There were obvious reasons why a State-aided University could not indentify itself with religious teaching but art was neutral ground upon which all creeds and schools of thought could meet.

H E Havell.

अर्थात् जिस शिक्षापद्धातिमें शिल्प और धर्मका स्थान नही है उससे हैवेल साहबके मतानुसार कभी जातीय चरित्रकी उन्नति नही होसकती है। सरकारी विश्वविद्यालयमें चाहे धर्म शिक्षाका सुप्रबन्ध नहो, पर यह नहीं समझा जाता कि शिल्प सिखानेका प्रबंध क्यो नहीं होता।

विज्ञानकी चर्चा युरोपियन जातियोंकी उन्नतिका मूल है । इसीसे हम विज्ञानकी शिक्षाके इतने पक्षपाती हैं । किन्तु हम ऐसे मोहमे पडेहुए हैं कि अँगरेजी पुस्तकोंमे विज्ञानका नामभर सुनकर अपनेको भूल गयेहैं । इसीसे हमारा यह आग्रह प्रकट होने लगाहै कि हम अपनेको वैज्ञानिक नामसे सुझावे । अपने प्राचीन सस्कारोंको हम विज्ञानके विरोधी सोचकर त्यागने लगगये हैं । किन्तु हम कुछभी समझ नहीं रहेहैं कि विज्ञानको हम कुछभी नहीं सीखसके हैं । इस देशमे विज्ञान अभीतक पुस्तकोंके पन्नोंमेंही दर्ज है । उससे हमारी बुद्धि वा चित्तका कोईभी सुधार नही हुआ है, देशकी व्यवहार योग्य शिल्पवस्तुए नतो अभीतक बढीहैं और न थोडे मूल्यमे विकने लगी हैं । यहांतक कि हमारे विद्यार्थियोंने अभीतक जापानियोंकी भांति अपने गोरे शिक्षकोंसे यह कहना नहीं सीखा है—Please, Sir, we don't want to read American or European history ony more. We want to read how balloons are made. यानी साहब ! अमेरिकन और युरोपियन इतिहास और पढना नही चाहते हम यह पढना चाहतेहैं कि "बलून" कैसे बनाये जातेहैं । डेडसो वर्षोतक अगरेजोका सग करने और अगरेजी सीखने परभी हममे विज्ञानका अनुराग जहा कुछभी सञ्चारित नही हुआहै तहां तीसही वर्षके भीतर जापानियोमें अपूर्व विज्ञान प्रीतिका सचार हुआहै । इसीसे जापानी शिल्पवस्तुओंसे भारतकी दूकाने भररही हैं । इस देशमे अङ्गरेजोंकी चलायी हुई शिक्षा कैसी निस्सार है सो इसीसे स्पष्ट मालूम होजायगा । किन्तु इस बेजड पेंदीकी शिक्षाके मोहमें पडकर हम अपनेको भूल रहेहैं ।

अगरेज राजकर्मचारियोंके इस विषयमे प्रयत्नकी कमी नहींहै कि इसदेशमे युरोपियन विज्ञानका महान उपकारी अश न आनेपावे । स्वर्गीय टाटामहोदयकी अपार दानप्रवृत्तिके फलरूपी "रिसार्च इन्स्टिटयूट" नामक विज्ञानशालाका प्रस्ताव गवर्नमेण्टके प्रतिकूल वर्तावसे अभीतक बननहींसका । टाटा महाशयने ३० लाखरुपये खर्चकर इस देशमे सच्ची विज्ञान चर्चाका आरम्भ करना चाहाथा । मैसूरके महाराजभी उसमे सहायता देनेको उद्यत हुएहैं । किन्तु गवर्नमेण्ट इस शुभअनुष्ठानको देखकर प्रसन्न नहीं होसकी उल्टे बहुत दिनोंसे युरोपियन विज्ञानका वह अर्थ इस देशमे सिखायाजाता है जिससे इस देशके समाजमें व्यर्थ गडबड बढजावे। युरोपियन विज्ञानकेउस मोहलानेवाले तथा विरोध बढानेवाले अंगको अपना लेकर हमने सामाजिक बखेडेका वृक्ष लगाया है । उस बखेडेमे पडनेसे हमारे काम करनेकी शक्ति जडवत् बन गयी है ।

युरोपियन विज्ञानभेद सूचित करनेमें विशेष समर्थ हैं । एकताके बीचमें कहां फूट मिल सकती है उसका पता ठीकठीक लगाना उस विज्ञानका एक प्रधान भाग है । किन्तु भारतीय विज्ञानकी प्रकृति यहहै कि फूटकी बीचसे एकता कैसे मिले, विचित्रतासे भरे हुए इस संसारमें आंखोंसे दिखाई देनेवाले भेदका नाश कैसे हो उसके भीतरसे एकताका सुराग कैसे निकले तथा टेढी और सरलआदि अनेकानेक राहोंसे होकर एकही लक्ष्यकी ओर हम कैसे चलसकें यहबात श्रीमद्भगवद्गीताके विश्वरूपदर्शन अध्यायमें भलीभांति दिखायी गयीहै ।

हमारे सर्व साधारण लोगोंमे अनेक दिनोंसे भिन्न भिन्न मत पुष्ट होते रहनेपरभी मन ऐसा बनगया है कि सब विरोधोंके बीचमें बिना बखेडे कैसा सामञ्जस्य दिखाई पडता है । कर्म फलमें पूरा विश्वास रहनेपरभी हमारी देवताओंपर भक्ति कुछभी विचलित नहीहोतीहै । विश्वससारको तो

मायाका विकार कहकर उड़ादेते हैं, किन्तु सम्पूर्ण संसारमें देवताका विकाश देखतेहुए, वृक्ष लता सब रचनाओंमे मायासे परे विश्वेश्वरकी महान मंगल इच्छाका अनुभव करतेहुए प्रेमसे लोटपोट होजाते हैं, देवताको एक और अद्वितीय जानकर इतर वस्तुओंकी पूजाको तो निरर्थक समझते हैं, परन्तु छोटेसे छोटे पत्थरके टुकडेके चरणोमे नैवेद्यका निवेदन विनाकिये नहीं रहसकते हैं, द्वैत और अद्वैतको समान रूपसे हृदयमे भररखते हैं; ब्रह्मको निर्गुण कहते है फिर सगुण जानकर पूजनभी करते हैं, जहा भिन्न भिन्न मतोंके बीचमे स्पष्ट विरोधको देखलेते हैं वहाभी हम दोनोको हृदयमें भरकर अपना बनालेते हैं। अनुमान होताहै कि भिन्नमतमतान्तरोंके टक्करोंसे हमारे मनकी भिन्न भिन्न विषयोंके समझनेकी शक्ति कुछ अधिक होगयी है और भिन्न भिन्न विषयोंका विचार करते रहनेसे हमारे मनका विरोध सहजहीमे खण्डन होजाताहै ।

जो सब बडेबडे धर्मतत्त्व आजकल अंगरेज सुधारकलोग हममे घुसाना चाहतेहैं जैसा कि जाति कुछनहीं है, सबमनुष्य बराबरहैं, ईश्वर एकहीहै, प्रतिमापूजन वाहियातहै, ये सब हमारे देशके अशिक्षित साधारण लोगोंके लियेभी कोई नयीबात नहींहै । साधारणसे साधारण झोपडेमें रहने वाले किशानसेभी पूछनेसे वह वतादेगा कि धर्मके सामने कोई जाति नहींहै, सभी लोग उस एकही आंखोसे नदेखने योग्य परमेश्वरके बनाये हुए हैं और वह महान परमेश्वर सबभूतोमे, सब ठौरोमे निरन्तर विद्यमान है यदि उससे पूछाजाय कि फिर पत्थरको पूजनेसे फलही क्याहोता है तो वह पुरखोंसे चले आते हुए नियमकी बात कहकर यह समझावेगा कि इस पत्थरके भीतर भी परमेश्वरहैं और साथही यहभी बतावेगा कि उस निराकार परमेश्वरको समझनेकी शक्ति मुझमे नहीं है । किन्तु आप पत्थर पूजते रखनेके कारण अनुपम ब्रह्मकी बडाई कभी अस्वीकार नहीं करेगा ।

भिन्न भिन्न ओरसे देखनेका अभ्यास होजानेसे मनकी स्थिति निस्सन्देह इसप्रकार बढजातीहै और संसारके सर्वत्र भिन्नभिन्न मतमतान्तरोंके बीचमे एक विरोध रहित गूढसत्यको ठहराकर मन सम्पूर्ण बाहरी जगत्‌को हृदयमें अनुभव करना सीखलेताहै । साधना—बलेन्द्रनाथ ठाकुरका खण्डगिरिशीर्षक लेख ।

बलेन्द्रबाबूने ठीकही कहाहै कि इसविरोधको अनुभव करनेकी शक्तिही हिन्दूधर्मका जीवन है और ब्राह्मणोंमे इसी बातके रहनेसेही इसदेशमें बौद्धधर्म टिक नहीं सका । * ब्राह्मण-

---

* भातिभातिके विरोधोंसे इस चिरस्थायी एकताको ढूंढ निकालनाही अद्वैतवादकी सर्व प्रधान शिक्षा है । यह शिक्षा भक्तिकी प्रतिकूल नहींहै, इस उदार शिक्षाका भारतमें जितनाही अधिक प्रचार होगा उतनाही इसमे व्यर्थ विरोधकी उपेक्षा आवेगी तथा जातीयभाव हृदयमें पुष्ट होगा ईस्वी सोलहवीं और सत्रहवी सदीमें एकनाथ, रामदास, तुकाराम, आदि साधु पुरुषोंके प्रयत्नसे हमारे देशमें अद्वैतवातका प्रचार होनेसे वर्णभेद माननेवाले महाराष्ट्रीय समाजमें असाधारण एकता और एकाग्रता सञ्चारित होकर स्वतन्त्र महाराष्ट्रसाम्राज्य स्थापित हुआथा । इस अद्वैत वादकी शक्तिसेही शक, यवन, हुन पह्लव आदि बाहरीशत्रु और बौद्ध, चार्वाक, नानकपन्थी, कबीरपन्थी आदि भीतरी शत्रुओंसे बारबार टक्कर खाते रहने परभी हिन्दूसमाजें अपनी रक्षा करनेको समर्थ हुआथा । दुःखकी बात यहहै कि अङ्गरेजी शिक्षाके फलसे अब हम अद्वैतवादकी उदारताको भलीभांति समझ नहीं सकतेहैं । कुरानी ज्ञान, विज्ञान, धर्मनीति और राजनीतिका विरोध बढानेवाला ढङ्ग क्रमशः हमपर अपनी प्रभुता फैला रहाहै ।

लोग तो फिर बुद्धदेवकोभी विष्णुका अवतार मानते है । सो बौद्धकी मूर्तिके विषयमे यदि किसी समय झगडा उठनेकी सम्भावनाभी होती तो उनको इसप्रकार अवतार माननेसे उस झगडेका समाधान होगया है ।

मुसलमानोके विषयमें भी यही बात घटित होतीहै। हिन्दूधर्म इस विरोध मेटनेकी तथा सामञ्जस करलेनेकी शक्ति रहनेसेही इसलामधर्मके भक्त मुसलमानभी हिन्दुओंकी स्थायी घृणाके पात्र नहीहैं ।

"छपराशहरके रहनेवाले कईब्राह्मणोने वहांके एक नामी मौलवीके विषयमें मुझसे कहाथा— महाशय ! मुसलमान होनेसे क्या होताहै, मौलवीसाहबका मन और आचार ऐसा पवित्र है कि हम ब्राह्मण लोग भी यदि उनका जूठा खालें तो ऐसा सोच नही सकते कि हम अपवित्र होगये । वास्तवहीमें मुसलमानोमे ऐसे उदारचित्तवाले और पवित्र कर्म करनेवाले ऐसे अनेक महाशय विद्यमान हैं । मैंने अनेकानेक बडे २ मौलवियोसे बाते कर समझ लियाहै कि सच्चे ज्ञानी मुसलमान लोग उन्नत आर्य मतकेही पक्षपाती है । उनमेंसे एक महाशयके साथ बातचीत करनेके समयमे जब सुना कि "वही यह हैं" तब मुझे जानपडा कि मानों किसी प्राचीन ऋषिके मुख से यह वैदिक महावाक्य निकलरहाहै कि "सर्वं खल्विदं ब्रह्म" ।

"जिसजातिमें आजतकभी ऐसे २ लोग विद्यमान हैं उस जातिके विषयमें कदापि यह विश्वास नही होसकता है कि उसका राज्य बढनेके दिनों वह केवल अत्याचारियोंसे भरीहुई थी । मुसलमानोंसे भारतराज्यका शासन होनेसे हमारे बहुत कुछ उपकार हुएहैं । उन्हींके राज्यके दिनों भारतवर्षने सब देशोंमें चलनेयोग्य हिन्दीभाषा प्राप्तकीहै, इमारत बनानेकी विद्यामे बडी भारी उन्नति लाभ कीहै तथा अन्य जातिवालोंसे सज्जनता प्रकट करनेकी आदर्शरीति सीखली है । मुसलमानोंका भारतवर्ष निश्चयही बडा कृतज्ञ है । यद्यपि किसी २ मुसलमान नरेशने प्रजाको पीडा पहुचायी है, किन्तु उनमेंसे बहुतेरे न्यायी थे और जो लोग अत्याचारी थे उनका भी अत्याचार देशभरमें प्रायः नहीं फैलताथा, केवल दो दस धनी और बडे लोगोंपरही उसका धक्का लगताथा" स्वर्गीय भूदेव मुख्योपाध्याय रचित सामाजिक प्रबन्ध ।

"मुसलमानशासन प्रणालीका कष्टदायी होना हम अस्वीकार नही करते । किन्तु जिस समय थोडी आमदनी होने परभी आजकलकी भाति कमीका अनुभव नही होताथा, देशके लोग चाहे किसी धर्मके क्यों न हों सरकारी बडी सी बडी नौकरी पाजाते थे, देशका धन देशहीमें रहताथा, एक बडा छूरा तक रखनेमें सरकारी पास नहीं रखना पडताथा, अगणितलोग भूखो रहनेका कष्ट नही भोगतेथे, उस समयको कसे मानें कि इस समयसे अधिक कष्टदायीथा । हिन्दुओंके राज्यमें मुसलमानोके गुणवान लोगोका आदर था, मुसलमानोंके राज्यमें हिन्दुओंके गुणवानोकी उन्नति होतीथी । इन सब बातोंको हम अङ्गरेजोकी कपोलकल्पित बातें सुनकर बिसार नहीं सकतेहैं । ❀ सच्ची बात यदि कहना हो तो यही कहना पडताहै कि यूरोपियन सभ्यताको देखकर हम यूरोपकी ओर विशेष भक्तिकी निगाह नहीं देखसकतेहैं ।" हितवादी ।

❀ आजकलभी भारतके बहुतेरे देशी हिन्दू राज्योंमें मुसलमान मन्त्री और मुसलमान राज्योंमें हिन्दू मन्त्री नियुक्त होतेहैं । विशाल निजामराज्यके वर्तमान प्रधान मन्त्री हिन्दूहैं, बडौदाराज्यके प्रधानमन्त्री मुसलमान हैं ।

सुविज्ञ भूदेव बाबू और हितवादी सम्पादककी इन बातोंकी सत्यता हम अस्वीकार नहीं कर-सकते। किन्तु भेद नीतिके बलसे जो लोग भारतका शासन करना चाहतेहैं उन्होंने हिन्दू और मुसलमानोंमें विरोध बढानेके लिये भारतके कोमल चित्त विद्यार्थियोंके सामने मुसलमानोंको अत्याचारी और असभ्य सिद्ध करदेनेका प्रयत्न कियाहै। इसीसे हम लोगोने बचपनसेही सीखाहै कि, मुसलमानलोगोंने एक हाथमें कृपाण और दूसरेमें कुरान लेकर यमराजके वेशमे देशभरको तहस नहस कियाथा। किन्तु हालमे लाहोर गवर्नमेण्टकालेजके दर्शनाध्यापक टामस आनेलि साहबने प्रीचिङ्ग आफ् इसलाम नामक ग्रन्थ रचकर सम्पूर्ण सभ्यदेशोंको समझायाहै कि धर्मकी वक्तृता देते हुएही मुसलमानवणिकोंनेही पृथ्वीभरमें धर्मका प्रचार कियाहै। उन्होने प्रत्येक मुसल-मानधर्म प्रचारकका नाम धाम लिखकर बडेही खुलासेमें दिखादियाहै कि उन्होने यूरोप, आफ्रिका और एशियाके प्रत्येक देशमें तथा प्रशान्त समुद्रके टापुओमे कैसे शान्तभावसे इसला-मका प्रचार कियाहै। क्या तलवारही के बलसे चीनराज्यके प्रायः चौथाई लोग इसलाम धर्मा-वलम्बी हुएहैं ? चीनमे तो वे मुसलमान किसीभी समयमें विजयी पूर्तिमे नहीं घुसे थे अथवा राज्य नही करतेथे। सुमात्रा जावा, बोर्नियो, और आफ्रिकाके अरबी व्यवसायियोंके बडे भारी परिश्रम और उद्यमसे मुसलमान धर्मका प्रचार हुआहै। कृस्तानोमेंसे धर्मका प्रचारकरना कुछ लोगोका मानो व्यवसाय बन गयाहै, किन्तु मुसलमानोमेसे हरएक मनुष्यही अपने धर्मका प्रचारकहै, उनके धर्ममे पुरोहित बनानेकी प्रथा विद्यमान न रहनेसे सभी मनुष्य विशेषकर अरबी व्यवसायी अवकाश मिलनेसेही धर्मकी वक्तृता देते हुए और अच्छे दृष्टान्तोंको दिखातेहुए अनेक देशोंमे इसलाम धर्मका प्रचार करगयेहैं। कुरानमें भिन्न धर्मवालोंपर सद्व्यवहार करनेकेही ढेरके ढेर उपदेश दिये गयेहैं।

आनाॅल्डसाहब कहतेहैं " यद्यपि मुसलमानोने समय समयपर अत्याचार कियाहै तथापि मुसलमान जातिका इतिहास पढनेसे सहजहीमें अनुमान होताहै कि मुसलमान राज्यके दिनों भिन्नधर्मावलम्बी लोग धर्मके विषयमे जैसी स्वतन्त्रता भोगतेथे वैसी स्वतन्त्रता इनदिनो भारत वर्षको छोड़कर कृस्तानी राज्योमे भिन्नधर्मावलम्बी लोग कभी भोग नही सक्तेहैं। " कुरानके अङ्गरेजी अनुवादक इसलाम धर्मके घोर विद्वेषी कृस्तान जज सेल साहबने कुरानकी भूमिकाके १११ पृष्ठमें कहाहै।

The (Christians) have shown a more violent spirit of intolerence than either of the former (the Jews and Mahommedans) अर्थात् कृस्तानो ने यहूदी और मुसलमानोंसे धर्मके विषयमें कहीं बढकर निष्ठुरता दिखायीहै। मुहम्मदसाबहकी एक हाथमें कुरान और दूसरेमें कृपाण धारणकर धर्मका प्रचार करनेकी आज्ञा देनेकी बात एक बारही झूठी है। भेद नीतिके पक्षपाती अगरेज इतिहास लिखने वालोनेही ऐसा विना जड़ पेदीका विश्वास हमारे देशके लोगोमें विशेषकर अगरेजी लिखेपढेहुए लोगोमें जमादियाहै।

मौलवी गञ्जके एक विज्ञ मुसलमानने हिन्दू और मुसलमानोमे एकता बढानेवाली वक्तृता देते समय जो मन्तव्य प्रकटकियाथा उसका निम्नलिखित अंश विशेष ध्यानदेने योग्यहै।

मुसलमानोने धन निचोडनेके लिये भारतपर चढाई नहीं किथी महमूद गजन्वी और तैमूरलङ्गके कामका नाम लूटदिया जासकताहै । किन्तु लूट और निचोडना एकही बात नहीं है । सदैव छातीपर सवार होकर हृदयका खून निचोडते हुए पीतेरहना और एकबार वा बारहबार धन लूट लेजाना बराबर नहीं है । अन्य जातिकी भांति भारतका धन निचोडकर यदि अपने देशका भला-करना मुसलमानोंका लक्ष्य होता तो भारतभूमि मुसलमानोंके दीर्घकालके शासनसे मरुभूमि बन-जाती । ऐसा न होकर मुसलमानोंके जमानेमें भारतके निवासियोको धनसम्बन्धी और शरीर सम्बन्धी दशा इस समयसे कहीं अच्छी बनारहना कदाचित् विदेशी इतिहास लिखनेवालेभी बिना माने नहीं रहसकतेहैं ।

"अकबरशाहके मानसिंह और टोडरमल, औरङ्गजेबके यशोवन्तसिंह और जयसिंह; अलीवर्दी-खाके फतहचन्द, जगतसेठ, और रामजीवन तथा सिराजुदौलाके मीरमदन और मोहनलाल आदि हिन्दूसेनापति वा मन्त्रीलोग हिन्दुओंपर मुसलमानोंकी बडी भारी प्रीति और विश्वासके नमूने हैं । उसी प्रकार शिवाजी महाराजके मुसलमान जलसेनापति, प्रतापादित्यके मुसलमान सेनापति, महाराज सीतारामरायके बख्तियारखा यहांतक कि आजकलके हिन्दूजमीदारोंके मुसलमान सरदारलोग मुसलमानोंपर हिन्दुओंकी प्रीति और बडे भारी विश्वासके नमूने हैं ।

" बहुतदिन मुसलमान शासनमें बसकर हिन्दूलोग मुसलमानोंकी प्रधानता मानना सीखगयेहैं.। मुसलमानलोगभी बहुतेरे स्थानोंमें हिन्दूमहाजन अथवा जमीनन्दारोंकी प्रधानता मानना सीख गयेहै । केवल मुसलमान होनेसेही उसकी मालगुजारीकी एक कौडीभी माफ नहीं करतेहैं । किन्तु हिन्दूजमीन्दारोंकी अधीनतामे अभीतक बिना मालगुजारीके पीरके स्थान, दरगाह तथा मसजिद बनीहुईहैं । विपदके समय अभीतक बहुतेरे मुसलमान हाथ पसारनेसे एक मात्र हिंदू सेही सहायता पासकतेहैं । "

सच्चीबात यहहै कि हिन्दू और मुसलमानोमें प्रीति बढनेके आजकल अगरेजराज-कर्मचारीही प्रधान बाधकहैं । नही तो भारतवर्षकी सामाजिक दशा जैसी है उससे यहां धर्म वा आचार व्यवहारकी भिन्नताके लिये तीव्र विद्वेष बहुत दिनोंतक स्थायी नही होसकताहै । भोज आदिमे एकता न रहनेपरभी लोगोंकी एक दूसरेसे प्रीति बनी रहना इस देशकी सदैवकी घटना है । कुछ विचारनेसेही निश्चय होजायगा कि देशकी इसी प्रकृतिके लिये मुसलमानोंमेंभी यह साम-ञ्जस बनालेनेकी शक्ति पुष्ट हुईहै । अब भारतमें "ऐसा प्रदेश नहीं है जहाके अधिकाश मुसल-मान हिन्दू ज्योतिषियों और दूसरे पण्डित ब्राह्मणोंका कुछ न कुछ सम्मान वा आदर न करते हो, जहा गोवध करने और गौ मास खानेमें कुछ न कुछ हिचकतेहो; जहा हिन्दुओंके उत्सवोमें आनन्द न मनातेहों और जहा अपने विवाह आदिकामोंमे पडोसी हिन्दुओंको न्योता न देतेहों । बगदेश और दाक्षिणात्यकी तो कोई बातही नहीं है, क्योंकि उन २ प्रदेशोंमें ऊंचेसे ऊँचे वशवाले मुसलमानोंमेंसे भी कोई कोई गुप्तभावसे प्रतिनिधि ब्राह्मणोंके द्वारा अपने नामसे सकल्प कराते हुए दुर्गाजीका पूजन तथा रथयात्राका उत्सव कराते हैं । दूसरे अनेक लोग अनुगत ब्राह्मणोसे अपने खर्चपर ब्राह्मण सज्जनोंकी सेवा कराते हैं ।" भूदेव मुख्योपाध्यायका सामाजिक लेख ।

यह बातभी बहुतेरे लोग जानतेहैं कि गांवोंमें पठित ब्राह्मणोसे पुराणोका पाठ और कथा सुननेके लिये बहुतेरे मुसलमान भक्तिपूर्ण चित्तसे उपस्थित होतेहैं । कुछ दिन पहले दीनाजपुरमें किसी प्रसिद्ध पण्डितसे कथा सुननेके लिये वहांके अनेक मुसलमान नियमपूर्वक प्रति दिन उपस्थित होतेथे । यह समाचार हितवादीपत्रमे बहुत लोगोंने पढाहोगा । बगदेशके सुप्रसिद्ध दराफखाँकी गगाभक्तिविपयिनी कहावत कदाचित् बहुतेरोंने सुनी होगी । पैतृक जायदादके अधिकारके विपयमेंभी मुसलमान लोग बहुतेरी ठौरोंमे हिन्दुओंकी व्यवस्थाकोही मानलेतेहैं । उनकी कन्याए इस लाभशास्त्रके अनुसार पिताके धनकी अधिकारिणी होनेपरभी वह शास्त्र सब जगह नहीं मानाजाता । हमारे देशके किसीसेभी यह बात छिपी नहीं है कि हिन्दूलोग मुसलमानोंके धर्मोत्सवमें शुद्धचित्तसे सम्मिलित होतेहैं तथा मुसलमान पीरोंके आगे मनौती करतेहैं।

हिन्दू और मुसलमानोंमे कहींभी मनकी गडबडी नहीहै । हमने गावोंमे बूढे पण्डित ब्राह्मण और मुसलमान छप्पड बनानेवालेको एकत्र बैठकर छप्पड बनाते देखाहै । दुर्गापूजाके समय बंगालके गांवोंमे मुसलमानलोगभी जी खोलकर हिन्दुओंके साथ उत्सव मनातेहैं । दुर्गापूजाके समय हिन्दुओंकी भांति मुसलमानलोगभी अपने बच्चोंको नया कपडा लेदेतेहैं । देवीकी पधरौनीके समय मुसलमानभी बंगला भाषामे देवीका भजन गातेहैं । उन भक्तिपूर्ण मधुर भजनोंको सुननेसे प्राण भक्तिसे उछल उठतेहैं । पूर्वबङ्गालके अनेक स्थानोंमें देवीके विसर्जनके समय नदीके ऊपर एक बडाही अपूर्व दृश्य देखनेमे आताहै । बडी बडी नावोंपर देवीकी प्रतिमाए रखीहुई हैं, उन नावोंके बगलहीमें मुसलमानोंकीभी नावें लगरहीहैं । जो लोग हमारे गावोंके रहनसहनको नहीं जानतेहैं वेही समझाकरतेहैं कि हिन्दूमुसलमानोंमे सर्वत्रही मनका अनमेल है । जब "मुश्किल आसान" वाले फकीर लोग मधुरगीत गातेहुए हाथमें चिराग लेकर हिन्दुओंके द्वारोंपर आतेहैं तब कौनसे घरको हिन्दू स्त्रियां उस चिरागकी ओर भक्तिकी दृष्टि नहीं देती हैं ? मुसलमानबूढियां हमारे हरएक घरसे सीरनीके लिये अथवा फातिमाका पूजाके लिये पैसे लेजाती है । अनेक हिन्दू फारसीमें अच्छे विद्वान हैं । बगाली कवि कृष्णचन्द्र मजूमदारकी बहुतेरी कविताए हाफिजके शेरोंका सच्चा अनुवाद है । हाफिदके शेरोंमें जो गहरा धर्म भाव है उससे हरएक हिन्दूके हृदयमें भक्तिका सञ्चार होताहै । इसीसे मर्दुमशुमारीका वृत्तान्त लिखनेवालेने आश्चर्य्यके साथ कहाहै,–

In social as in religious matters the people of India are curiously catholic in their tastes. Just as Muhammadans worship Hindu saints and both Hindus and Mussulmans attend and take a more or less active part in each others religious festivals, so there is a tendency towards the adoption of any matrimonial custom that seem to imply a degree of social superiority Census Report vol. I, part II. pp. 435.

मुसलमानोंने भारतीय साहित्यकी उन्नतिके विषयमें थोडा प्रयत्न नहीं कियाहै । बहुतेरे लोग जानतेहोंगे कि हिन्दी साहित्य कबीरकी रचनामे कितना प्रभाववाला होगयाहै । दक्खिनके मुस-

लमान शायर और साइंयोंने मराठी भाषामें योग संग्राम नामक पुस्तक तथा बहुतेरी गान और भक्तिपूर्ण कविताए रचकर महाराष्ट्रीय साहित्यको पुष्ट कियाहै । तुकाराम, एकनाथ, आदि महाराष्ट्र कवियोनेभी अपने मुसलमान मित्रोंके लिये उर्दू भाषामें भगवत्तत्त्व पूर्ण कविताए रचीथीं । गद्य इतिहास रचनेका आदर्श महाराष्ट्रियोंने मुसलमानोंसेही प्राप्त कियाथा । बगालमे आलवाल कवि, परागलखाँ, हुसेन शाह, छूटीखॉ आदि नामी मुसलमान ग्रन्थ कारोके नाम बाबू दिनेशचन्द्रसेनके वगभाषा और साहित्य नामक ग्रन्थके सहारे बहुतेरे लोगोंको मालूम होगयेहैं । चटगांवके मुन्शी अब्दुल करीम महाशयने उस प्रान्तके मुसलमान कवियोंकी जो फेहरिस्त कृपापूर्वक मेरे पास भेजीहै उसमें ८८ गन्थकारोंके नामहैं। इन प्रायः एकसौ मुसलमान कवियोंने भांति भातिके काव्य रचकर बगला साहित्यको पुष्ट कियाहै । इनमेंसे प्रायः ३० कवियोने षट्चक्रभेद, राधा कृष्णलीला और श्यामा विषयक काव्य और कविता आदि रचीहैं। एक चटगांवहीमें जब प्रायः १०० मुसलमान कवि होगये तब विचारलीजिये कि सम्पूर्ण बगालमे. कितनेसौ मुसलमानोंमें वग भाषाकी सेवा कीहोगी । इस विषयमे श्रीयुक्त अब्दुल करीम महाशयकी भांति खोजी, साहित्यसेवियोंकी सख्या बढना बहुतही प्रार्थनीय है ।

सारांश यह है कि भारतवर्षके अधिकांश स्थानोंमें हिन्दू और मुसलमानोंके बीच विरोधकी अपेक्षा मित्रताही देखनेमें आतीहै । हिन्दुओकी शिक्षाभी इस मित्रताके विशेष अनुकूल है । दुःखकी बात यह है कि आजकल बगदेशमें कथा कहनेकी चाल घटनेके साथही साथ हिन्दूधर्मकी यह उदार शिक्षाभी घटती जाती है । उधर अगरेज इतिहास लिखनेवाले हिन्दूबालकोंके हृदयमें मुसलमानोंका विद्वेष प्रज्ज्वलित रखनेकेलिये यथोचित प्रयत्न कररहेहैं । खेदसे कहना पडताहै कि किसीकिसी दूरदर्शिता न रखनेवाले हिन्दूलेखकोंने काव्य नाटक आदिमे मुसलमान भ्राताओंकी निरर्थक निन्दा छापकर अङ्गरेजोंकी उद्देश्य सिद्धिकी सहायता की है । राजकर्मचारी लोग कभी हिन्दुओंपर और कभी मुसलमानोंपर पक्षपात दिखाते हुए एक दूसरेमें बिगाड करदेनेको डँटे हुएहैं । जहां अगरेजी शिक्षा और अगरेज राजकर्मचारियोंका प्रभाव कमहै वहा हिन्दू और मुसलमानोंकी प्रीति अभीतक बिगडने नहीं पायीहै । दुष्टलोगों की उत्तेजनासे नीच दरजेके हिन्दू मुसलमानोमे समय समयपर दंगे हगामें होते जातेहैं किन्तु ऐसी घटना इगलेण्डमेंभी प्रोटेस्टाण्ट और रोमनकेथलिकोंमें कम नहीं होती । उन झगडोंसे यदि अगरेजोंके जातीय भावमें बाधा न पडती हो तो यहां क्यो बाधा पडेगी ?

अंगरेजोंके बाग्जाल से अनेक मुसलमानोंमें ऐसा भ्रम उठ खडाहुआ है कि अंगरेज लोग हिन्दुओंसे बढकर मुसलमानोंपर अधिक कृपारखतेहैं । अगरेज लेखक लोगभी कहतेहैं कि हिन्दुओंसे बढकर मुसलमानोंसे अधिक प्रीति रखनाही अङ्गरेजोंके लिये स्वाभाविक है। क्योकि अगरेजोंकी भाति मुसलमानभी एकही ईश्वरके माननेवाले हैं अगरेजोंकी भाति मुसलमानभी जातिभेद नहीं मानते । अंगरेजोंकी भाति मुसलमानभी देवदेवियोंकी प्रतिमा पूजा के विरोधी हैं । इन सब विषयोंमें तथा दूसरे आचारव्यवहारोंमें हिन्दुओंसे बढकर मुसलमानोकी अगरेजोंसे अधिक एकता है । इसीसे मुसलमानोंसे अगरेजोंकी अधिक प्रीति होना स्वाभाविक है । किन्तु अगरेजोंका सुअरभोजन और स्त्रियोंकी स्वतन्त्रता मुसलमानोंकी दृष्टिमें कैसी वाहियातहै उसको वे कभी लिखकर नही बताते।खेदकी बात यहहै कि अगरेजोंको इस वचनचातुरीमे आकर

बहुतेरे मुसलमान अपनेको हिन्दुओंसे अगरेजोंका अधिक प्रेमभाजन और हितैषी मानतेहैं। अपने जातियालोंका यह भ्रम दूरकरनेके लिये मदारीपुर हबीगञ्जके जमीन्दार श्रीयुक्त गुलाम मौला चौधरी साहबने बरीशालमें बंगदेशके बँटवारेके विरुद्ध वक्तृता करनेमें कहाथा;

" यह धोखा कि गवर्नमेण्ट हमलोगोको अधिक प्यार करतीहै यदि हमारे मनमें हो तो हम अपने मुसलमान भाइयोंसे कहतेहैं कि आँख उठाकर देखो–गवर्नमेण्टने तुम्हारी जातिके ऊपर प्रेम रखनेके चिह्नरूपी कलकत्तेकी कालकोठरीको चिरस्मरणीयकर रक्खाहै, उस प्रेमके चिह्नको स्थायी करनेके लिये उसने नव्वाब शिराजुद्दौलाके चरित्रको काले रगसे चित्रित कररक्खाहै । उस प्रेमके उज्ज्वल चिह्नको औरभी देखलो—दक्षिण आफ्रिकामें जो भारतवासी लोग रहतेहैं उनमें हिन्दू कितने हैं ? प्रायः सभी मुसलमान हैं। किन्तु उनकी धनसम्बन्धी दशा अच्छी होनेपरभी वे क्यो कुली नामसे पुकारेजाते हैं ? उनके रहनेका स्थान सब सज्जनोंके निवासस्थानसे अन्यत्र क्यो ठहराये जातेहैं ? गाडीपर चढने की दशा होनेपरभी उन्हें क्यों नही चढनेको दियाजाताहै ? और बात दूर रहे गोरोंके साथ एकही सडकसे उनके चलनेतककी मुमानियत है । सीरिया देशके ओछे गोरोका जो अधिकार है वह अधिकार बडे भारी साम्राज्यके निवासी होनेपरभी इग्लेण्डके राजराजेश्वरकी प्रजा होनेपरभी गवर्नमेण्टके प्रेमके पात्र होनेपरभी क्यो मुसलमानोको नही दिया जाताहै ? आज हमारी हाईकोर्टके जज अमीर अलीने पेंशन लेलीहै । क्या हाईकोर्टमें कोईभी दूसरे सुयोग्य मुसलमान वकील नहीं हैं ? फिर क्यो हाईकोर्टमें अमीर अलीकी जगह कोई मुसलमान जज नही बनाये गये ? गवर्नमेण्टका मुसलमानप्रेम कहां रहा ? सोही कहतेहैं कि प्यारे मुसल्मान भाइयो ! फिर सरकारी प्रेमके मोहमें पडकर अपनेको मत भूलजाओ । आपही अपने मूल्यको समझना सीखलो।"

इनदिनों पूर्वबंगालके मुसलमानोंको थोड़ी वेतनकी नौकरियां देनेकी बातसे लुभाकर बहुतेरे राजकर्मचारी हिन्दुओंसे अलग करनेका प्रयत्न कररहेहैं । इस बातसे दुःखी होकर बीरभूमिके एक विज्ञ मुसलमानने समाचार पत्रमें एक पत्र लिखकर निम्नलिखित मन्तव्य प्रकाश कियाहै,–

"अगरेजी गवर्नमेण्टके कई कर्मचारियोंने बंगालकी मुसलमानजातिकी शोचनीय अवनतिपर गरीब मुसलमानोको सरकारी नौकरी देनेके लोभसे इसप्रकार लुभायाहै कि हमारे मुसलमान भाई लोग नव्वाब सिराजुद्दौलाकी राजसभामें गोरे बीरके बाइबिल छूटकर कीहुई प्रतिज्ञा और स्वजातिद्रोही मीरजाफरकी दुर्गतिकी बातको सोचनेका अवकाश नही पारहेहैं ।

मीरजाफरने गोरे वणिकोंके लिये जो सब काम किये थे वैसे काम क्या और किसीनेभी कियेहैं ? किन्तु उसके परिणामको एकबार सोचलीजिये । अभी हाथोंहाथ हैदराबादके बरार प्रदेशके विषयमे जो बात होगयी सो क्या किसीको मालूम नही है, ! अगरेजोकी वह पहली प्रतिज्ञा कहा गयी ? कूटराजनीतिकी चाल चलनेवाली भारतगवर्नमेण्टकी इस प्रकार लुभानेवाली प्रतिज्ञा नयी नहीं है । सच्ची बात यहहै, इस भयसे कि कहीं हमारे स्वदेशी आन्दोलनसे विलायती वाणिज्यकी हानि न हो, हिन्दू और मुसलमान मिलकर काम न करसकें, पहलेहीसे भाति भातिके कुटिल कौशल रचकर हिन्दू और मुसलमानोंकी प्रीति बिगाड़नेका प्रयत्न किया जारहा

है। किन्तु मनुष्य एक प्रकार चालसे एक, दो वा तीन वार ठगाजासकताहै, वारवार कौन ठगाजाताहै ! दूरदृष्टि न रखनेवाले तथा स्थूलबुद्धि वाले हिन्दू और मुसलमानोमे बीच बीचमे आपसके द्वेष प्रकाश तो होतेहैं, किन्तु वहुत दिन एकत्र रहनेसे दोनों सम्प्रदायोंमें जो सम्बन्ध स्थापित हुआहै वह सहजमें त्याग नही किया जासकताहै । हृदयमे जो तूफ़ान उठाहै उसकी गति रुकनेवाली नही है। इसीलिये हिन्दुओंके उत्सवोंमे मुसलमान और मुसलमानोके उत्सवो मे हिन्दू यथासम्भव उत्साह और आनद किया करतेहैं। गत रूम, यूनानकी लडाईमे जगन्मान्य मुसलमान जातिके खलीफा अमीरुलमुमेनि सुल्तान तुर्कीके विजय पानेपर भारतके मुसलमानोंके साथ हिदुओंनेभी उत्सव मनायाथा । उस समय तो सम्बध त्यागना बन नही पडाथा। और क्या याद नही है कि उस समय हमारे हित चाहनेवाले गोरोंने हमारे साथ क्या वर्त्ताव किया था !"

साराश यह है कि राजकर्मचारी लोग कुटिल नीतिके वशमे होकर कभी इस जातिका कभी उस जातिका पक्षपात क्यो न दिखाया करें पर बृटिश गवर्नमेण्टकी शासननीति मुसलमानोंकी विशेष अनुकूल नहीं है। एकही शासनकी रस्सीमें भारतके हिन्दू और मुसलमान दोनोही बधे हुएहैं। दोनोंहीका सुख दुःख एकही ढङ्गकाहै। एकही हानिसे दूसरेको लाभ कभी नहीं हो सकताहै। सो अगरेज जवानो मुसलमानोपर चाहे कि हिन्दुओंसे क्यो न अधिक प्रीति दिखावें पर उससे मुसलमानोंको विशेषलाभ होनेवाला नहींहै ।

कलकत्ता हाईकोर्टके पूर्व जज माननीय अमीर अली कहते हैं कि अगरेजी शासनमें भारतके दूसरे सम्प्रदायोंने तो थोडी बहुत उन्नतिकी सीढ़ीपर चढ़ली है पर मुसलमानोकी दशा बहुत विगडरही है ।

Whilest all other nationalities have prospered under the British rule, the Mussulmans have alone declined A cry from Indian Mussulmans. The Nineteenth Century, August 1882.

This important community, as history goes, probably the most important only a short time ago, has suffered the most under the British rule. An Indian Retrospect. The Nineteenth Century, October 1905.

अमीर अली महाशय और मी कहतेहैं कि मुसलमानोसे अगरेजोंने वगदेशको पायाथा। सन् १७६५ ईस्वीके १२ अगस्तको दिल्लीके बादशाह शाह आलमने ईस्टइण्डियाके हाथ बगाल की दीवानी अर्पण कीथी। इस शक्तिके पानेके कुछ दिनोंतक अगरेज राजकर्मचारियोंने मालगुजारी और विचार विभागोंका सम्पूर्ण भार मुसलमानोंके हाथमे रखछोड़ाथा । सन् १७९३ ईसवीमे नया नियम लार्ड कार्नवालिसने बनालिया उसके फलसे शासन विभागके सब बडे बडे पद गोरोंके हाथमें चलेगये। किन्तु बादशाहने जब अगरेजोंके हाथमे दीवानी दीथी तब अगरेजोने अवश्यही ऐसी शर्त की थी कि जहातक बन पडेगा मुसलमानी शासनपद्धति स्थिर रखकर राजकार्य्यका निर्बाह करेंगे। ऐतिहासिक डाक्टर हण्टरने लिखाहै कि लिखापढीमें चाहे वह बात न आयी हो पर बादशाह और अगरेज दोनोंनेही जीमे उसप्र-

कार शर्त समझलीथी किन्तु अंगरेज उसशर्तके अनुसार नहीं चले । कुछ दिन पीछेही उन्होंने मुसलमान जागीरदारोंके हाथमें मालगुजारी वसूल करनेकी शक्ति छीनलेकर उनकी जगह गोरे कलेक्टर मुकर्रर किये । इस प्रकारसे मुसलमानोंकी इज्जत और शक्ति बिगाडी गयी। आगे लार्ड विलियम वेण्टिङ्कने सन् १८२८ ईस्वीमें आयमादार और लाखिराजदारोंके दस्तावेजोंकी परीक्षा करनेकी आज्ञा देकर मुसलमानोंका सत्यानाश किया । इसकी जाच पडतालके लिये अलग अदालत मुकर्रर हुई और इसके पीछे १८ वर्ष तक सारा बंगदेश गोयन्दा, झूठे गवाह और हकबिगाडनेवाले कर्मचारियों की चिल्लाहटकी अशान्तिसे भरगया। नयी बनी हुई अदालतमें कानूनकी कुटिल भसमे फँसकर बहुतेरे मुसलमान जमीन्दार अपने दावे सिद्ध करनेको असमर्थ हुए जिससे उनका हक जाता रहा । मुसलमानलोग बहुतदिनोंसे पुश्त दरपुश्ततक जायदाद भोगते आतेथे। इसलिये उन जमीन्दारोंको अपने हकके विषयमे निश्चिन्तता थी । वे अपने दस्तावेजोंको रखे रहनेकी जरूरत समझ नहीं सकेथे। इसलिये उनमेंसे बहुतेरे दिल्लीके बादशाहका सनद दाखिल नही करसके । सो जायदाद उनके हाथसे छिनगयी । मराठे सरदारोंनेभी उन जायदादोंसे मुसलमानोंको वञ्चित नहीं कियाथा, देशमे मराठोंकी लूट तराजके कठोर दिनोंमेंभी जिनजायदादोंपर आंच नहीं लगी थी उन जायदादोंकोभी चतुर अङ्गरेजोंने कौशलका जाल रचकर हडप लिया । अङ्गरेजोंके इस बर्तावसे सैकडों इज्जतदार मुसलमान घराने राजभवनोंकी भांति मनोहर गृहोंसे अलग होकर दीनोंकी भांति टूटे फूटे झोपडोंमें रहनेको लाचार हुए। लाखिराज जायदादोंकी आमदनीसे मुसलमानोंके जो जो धर्म और शिक्षाके प्रबन्ध चले आतेथे वे भी इस गडबडमे नष्ट भ्रष्ट होगये ।

इसके उपरान्त ७०० वर्षोंके मुसलमान राज्यमें फारसी भाषा भारतकी बहुतेरे स्थानोंकी सरकारी भाषा और उर्दू भारतवासियोंकी एक दूसरेसे बोलचालकी भाषा होगयी थी । अमीर अली महाशय कहतेहैं कि वह दोनोंही भाषा अंग्रेजी भेदनीतिके वशमे होकर मृत्युको प्राप्त हुईं। अंग्रेजी सरकारी भाषा और प्रान्तप्रान्तकी अलग अलग भाषाए लोगोंकी बोलचालकी भाषा करादी गयी। इसके फलसे भारतवासियोंमें एकभाषासे बनीहुई एकता नष्ट हुई । फारशीका देशनिकाला होनेसे मुसलमान समाजकी शक्ति औरभी घटगयी । एकाएक फारसीकी जड इसप्रकारसे कटनेपर सहस्रों फारसी नवीस कर्मचारी, मुंशी, मौलवी आदि कार्य्यच्युत होकर अन्नके लिये हाहाकार करनेलगे । क्रमशः अङ्गरेजीका आदर सरकारके यहा बढनेलगा । किन्तु मुसलमान लोग कुछ कुछ अज्ञतासे और कुछ कुछ दशाबिगड़नेसे दरिद्रताकी कीचमें डूबकर अंगरेजी शिक्षाकी ओर ध्यान नही देसके । अबभी केवल दरिद्रताहीके वश इच्छा रहनेपरभी बहुतेरे मुसलमान अंगरेजी शिक्षा नहीं लेसकतेहैं । उधर अङ्गरेजी गवर्नमेण्ट हिन्दू और मुसलमान प्रजाके दियेहुए धनसे यूरोपियन और फरङ्गी विद्यार्थियोंकी शिक्षाके लिये बहुत खर्च कररहे हैं । इतनेदिनोंतक सरकारी नौकरी पानेमें हिन्दूही मुसलमानोंके प्रतिद्वन्द्वी थे । अबसे गवर्नमेण्ट फरंगियोंकोभी उनके प्रतिद्वन्द्वी बनारहेहैं । इसप्रकारसे अंगरेजोंने राजभक्त मुसलमानोंकी उन्नतिके पथमें भांतिभांतिसे कांटे बिछादियेहैं और वे अबतकभी बिछाते जातेहैं । किन्तु जबानी मुसलमानोंपर हिन्दुओंसे बढकर अनुराग प्रगट किया जाताहै ।

अमीरअली महाशयने मुसलमानोके एक वडे भारी भ्रमकी बातभी कहीहै। अंगरेजराजकर्म-चारियोके जबानी मीठी बातोंमें पडकर बहुतेरे मुसलमान अंगरेजोके प्रिय पात्र होनेके भरोसे किसीभी राजनीतिक आन्दोलनमे हिन्दुओके साथ जीखोलकर शामिल नही हुएहैं इससेभी मुसल-मानोकी उन्नति रुकगयीहै। अमीर अली महाशय कहते हैं:—

The very fact that he (Mussulman) has so far stood aloof from political agitation has caused him a dis-service.

अर्थात् राजनीतिक आन्दोलनोसे अलग रहनेसे मुसलमानोंकी हानि हुईहै। अमीरअली-महाशयकी इस बातपर मुसलमान भाइयोंको विशेष ध्यान देना चाहिये। राजनीतिक आन्दोल-नोमें शामिल न होनेसे अनेक जीवनमें नवीन उत्साहका सञ्चार नहीं होगा।

अगरेजोंके और एक प्रबन्धसे मुसलमान समाजको बडी भारी हानि सहनी पडीहै। जायदादका वंशवालोमें बँटजाना रोकनेके लिये इसलामशहरमें वक्फकी चाल बनीहुई है। इस चालसे हरएक मुसलमान धर्मकार्य्यके लिये जायदादको नियुक्त कर किसी सुयोग्य स्वजन अथवा अपने हाथमेंभी रखसकताहै। यह जायदाद एक ओर जिस प्रकार दान और बिक्रीके योग्य नहीं रहती है। दूसरी ओर उसी प्रकार उसका ट्रस्टी पुश्त दरपुश्ततक उसे कबजेमें रखकर अपने वंशकी इज्जत साबित रखताहुआ दाताकी इच्छाकी अनुसार उसकी आमदनीको भले कामोमें लगासकताहै। इस प्रबन्धसे सैकडो मुसलमान घराने पुश्त दर पुश्ततक सुखसे रहतेहुए भातिभातिके भलेकाम करनेका अवकाश पातेथे। १३ सदियोंसे यह चाल मुसलमान समाजकी अपनी वस्तु है। वक्फकी जायदादही बहुतेरे श्रीमान् उच्चवंशवाले मुसल-मानोको शरण देनेवाली थी। अमीरअली महाशय कहतेहैं कि अङ्गरेजोंने इस चालकी जडमें कुठार चलाकर सैकडों इज्जतदार मुसलमान घरानोको घोर विपदमें डालाहै। केवल यही नहीं वक्फ सम्बन्धी चालको बिगाडनेमें अगरेजोंने वक्फसे चलतेहुए भले कामों तकका नाश करनेमें सङ्कोच नही मानाहै। यो भातिभांतिसे मुसलमानोंको बडी भारी हानि पहुचाकर अगरेज आज बहुतेरे मुसलमानोकी दृष्टिमें हित जँचरहेहैं। यह अगरेजोकी साधारण सम्मोहनशक्तिका परिचय नहीहै❀।

अगरेजोके सम्मोहन कौशलसे केवल हिन्दू और मुसलमानोंका आपसका प्रेमही नहीं बिगड-रहाहै; परन्तु उनके अपने देश और अपने समाजपरभी प्रेम क्रमशः घटता जाताहै। कूटनीतिके शिरोमणि अंगरेजोके रचेहुए कुहरेमें हमारे "देशका इतिहासही हमारे देशको हमारी दृष्टिसे छिपा रहाहै। महमूदकी चढाईके दिनसे लार्ड कर्जनकी राजकीय शेखीसे भरे हुए समयतक जो कुछ इतिहास रचागयाहै वह भारतवर्षके लिये एक बारही कुहरेका जालहै वह हमारे देशके विषयमें हमारी दृष्टिको सहारा नही देताहै; दृष्टिको केवल दबाही लेताहै। वह ऐसी जगहमें नकली रोशनी ला डालताहै कि जिससे हमारा देश अन्धकारकी ओर होजाते।" बंगदर्शन—भारतवर्षका इतिहासशीर्षक लेख।

❀ नवनूर पत्रमें मुसलमानोंका सर्वनाश शीर्षक लेखमें इस विषयकी आलोचना खुलासेमें की-गयीहै। हरएक मुसलमानको उसलेखका पढना उचित है।

उक्त लेखमें रवीन्द्र बाबूने और भी लिखाहै।

"बचपनसे जिस प्रणालीसे जो शिक्षा हमको दीजाती है उससे प्रतिदिन देशसे हमारा विरोध गठित होता हुआ हमारे जीमें देशका विद्रोहभाव आजाताहै। बचपनहीसे हमारे ज्ञान और प्रेमकी कल्पनाके द्वारपर गोरी सेनाका पहरा बैठजाताहै। हमारी प्रकृतिके जनानखानेमें स्वदेश लक्ष्मीको घुसनेका अवकाश नहीं मिलताहै, विदेशसे बुलायी हुई युक्ति, शंका आदि कई मजदूर मजदूरिनियोंकी भीड वहां लगी रहतीहै, किन्तु, जो उनपर मालकिन होकर उनको अपने लाभके काममें लगा सकती तथा एकताके महोत्सवमे मुकर्रर करसकती, उस लक्ष्मीकी वहां गुजर नहीं होती इसीसे हमको लक्ष्मी छूटजानेकी दशा झेलनी पडतीहै, इसीसे भिक्षाही भिक्षा हमको सूझती रहतीहै; इसीसे बात बातमे हमारी ढिठाई और गँवारी सूचित होतीहै, इसीसे हमको भडकीली निष्फलता बारबार ग्रसलेतीहै, इसीसे बात और काम तथा शिक्षा और वर्तावमे पगपगपर हमारा असमञ्जस सिद्ध होताहै। वह महालक्ष्मी जो पिताके साथ पुत्रको, भ्राताके साथ भ्राताको, निकटसे दूरको, भविष्यतसे अतीतको, भीतरसे बाहरको, अदृश्य एकताके बन्धनसे सदैव मिलाती आतीहै, उसकी राहको मत छेको, उसको सारे रेखागणित, बीजगणित, भूगोल तथा अर्थ पुस्तकोंके पहाडको भेदकर हमारे हृदयके जनानखानेमे उसके अपने सदैवके सिंहासनपर आकर बैठनेदो। बस, सब खाली भरजायगी। सब शंका मिटजायगी।

"किन्तु हमारी प्रकृतिके दरवाजेपर वह जो जञ्जालका ढेर लगरहा है जिससे बाहरकी रोशनी हमारे बाहरही पडी रहती है और हमारे भीतरकी दौलत भीतर घुसने नहीं पाती है उस जञ्जालके बीचसे राह कौन बनादेगा? नित्यके खेलवाड और अन्तके महाभयसे हमारा उद्धार कौन करेगा?

भारतका एक सच्चा इतिहासही इस हँसी उभारनेवाली, इस शोक भरनेवाली विडम्बनासे हमारा उद्धार करनेका एकमात्र उपाय है।"

यह इतिहास जिसतरह लिखना चाहिये उसके विषयमे रवीन्द्रबाबू कहतेहैं,–विदेशी विचारका आदर्श परित्याग कर श्रद्धाके साथ पितरोंके हृदयमे घुसना होगा। इस श्रद्धाके न रहनेसे हमको भूलमे पडना पडेगा। क्योंकि जितने नये ढगके विदेशी ख्याल हमारे मनमे जड जमाचुके हैं उनको न रोकनेसे वे बडीभारी दिक्कत मचावेंगे। दृष्टांतमे जातिभेदकी बात कही जासकती है। इस जातिभेदपर पूरी श्रद्धा न रहनेसे भारतवर्षका इतिहास ठीकठीक लिखना एकबारही असम्भव है। ❁ ❁ ❁ इसके उपरान्त यूरोपके आदर्शकोही एकमात्र श्रेष्ठ आदर्श मानकर उसकी ओर मुँह किये बिगडीहुई दूरबीनके सहारे भारतवर्षको बहुत ओछा देखलेनेसे सच्चा भारतवर्ष दिखायी नहीं देगा। ❁ ❁ ❁ केवल विदेशी गतोंकी अलापचारीसे स्वदेशको समझना कभी सभव नहीहै। इत्यादि।"

अंग्रेजोंकी सम्मोहनी शिक्षासे बहुतेरे विषयोमे हमारी बुद्धि बिगडचुकी है। श्रीयुक्त रामेन्द्रसुन्दर त्रिवेदी एम. ए. महाशयने अपने "सामाजिक व्याधि और उसका प्रतिकार" नामक लेखमें इस विषयपर कहाहै,–

"हम धूमधामसे वक्तृता करतेरहते हैं कि अंग्रेजी शिक्षा पानेसे हमको स्वतन्त्र चिन्ता कर-

नेका अवकाश मिलगया है । किन्तु क्या सचमुचही हमारी वह चिन्ता हमारी अपनी चिन्ता है ? मैं राजनीतिक.सम्बन्धको एकवारही,छोडकर केवलमात्र शिक्षासम्बन्धी विषयकी बात पूछताहू मेरा पूछना यहहै कि प्रबलके बलसे जो दुर्बल मोहमे पडाहुआ है उसकी स्वतन्त्रता कहाहै ? ❀❀❀ हम वर्तमानकालमे सब विषयोंकी जिस शान्ति और आरामको भोगरहेहैं वह दशा क्या मनुष्य समाजके लिये स्वाभाविक दशा होसकती है ? हमारी इस वर्तमान अस्वाभाविक स्थितिमें हमारे उद्यमोंकी निष्फलताही वास्तवमें स्वाभाविकहै । वर्तमानकालको जो लोग जातीय जीवनके नवीन अभ्युदयका काल कहते हैं उनकी रायको मैं कभी मान नहीं सकता हू । सैकड़ों वर्षके अन्धकारके पीछे जो लोग नयी ज्योतिका उदय देखतेहैं उनके नेत्रोंकी दुरुस्तीके विषयमें मुझे सन्देह होता है । ”

अगरेज शिक्षकोंने हमको समझायाहै कि, पूर्वीदेशके विशेषकरके भारतवर्षके हिन्दू और मुसलमान नरेशलोग सदैव अपनी अपनी इच्छाके गुलाम थे, उनके खयाली शासनके लिये प्रजाको निरन्तर अत्याचार सहने पडते थे । राजा प्रजाकी सम्मतिकी कोईभी कीमत रहना नहीं मानता था । प्रजाका हक वा दावा नामकी कोईभी वस्तु उस जमानेमे नहीं थी । पश्चिमी राज्यशासन प्रणालीमें यह सब असभ्यता नहीं थी—अन्ततः आजकल नही है । वहां प्रजाकी सम्मतिके विना कोईभी काम नही होताहै । अगरेजोकी इस शिक्षाको हमने सोलहआने सत्य समझलियाहै । किन्तु वास्तवमें थोडेही दिन पहलेतक यूरोपके नरेशलोग प्रजाके परिवारिक, सामाजिक और नैतिक सारेही कामोंमें अनुचित रूपसे हस्तक्षेप किया करते थे, वज्रकी भाति कठोर वन्धनसे उनके शरीर और मनको बाधना चाहते थे, धर्मकी व्याख्या और शास्त्रकी व्याख्या राजा स्वयही करता था, नीति और मुक्तिका पथ दिखानेका हक राजा अपनेही हाथमें रखताथा, प्रजाका कोईभी मनुष्य इन सब विषयोंमें चूलक करता था तो उसे अगारकी अग्निमें जल मरना पडता था, चुडैलका सन्देह होनेसे राजाकी आज्ञासे लाखों स्त्रियां जलमें डबोकर समाप्त कीजाती थी, कोईभी विज्ञ मनुष्य ज्ञान, विज्ञानके विषयमें नयीवातका प्रचार करताथा तो वह राजाकी आज्ञासे आगमें जलाया जाता था, राजा मनुष्य स्वतन्त्रचिन्तामें बाधा डालता था, यह सबवातें यूरोपके इतिहासके पृष्टपृष्टमें पढकरभी हमारा भ्रम छूट नहीं रहाहै । यूरोपमें सनातनसे राजा और प्रजाका बिगाड चलता आता है । उस बिगाडने बारबार राष्ट्र विप्लव होचुके हैं । यह नीतिवाक्य कि “ पुत्रवत् पालयेत् प्रजाः । ” पश्चिमी देशोंमें पहले नहीं था, अबभी नहींहै । इसीसे राजा और प्रजाका झगडा आजतक बन्द नहीं हुआ है । राजाकी शक्तिको घटानेके लिये प्रजा अबतकभी प्रयत्न कररही है । राजाके अत्याचारी नहोनेसे ऐसी दशा नहीं होसकती है । निहिलिष्ट, सोसियालिष्ट, अनारकिष्ट आदिसम्प्रदायोंकी सम्भावना राजाके अत्याचारी नहोनेसे नहीं होतीहै । किन्तु यह सब बात हमारी बुद्धिमें नहीं समाती है । हम नित्यही इन घटनाओंको देखकर भी नहीं समझते हैं । नसमझसकनेका मूल वही अंगरेजी शिक्षा है । उस शिक्षाका मोह बड़ाही प्रबल है । पूर्वीनरेशोंने इसप्रकार अत्याचार कभी नहीं किया था, सब बातोंमें प्रजाको यों सतानेकी कभी उनके जीमें आतीभी नहीं थी । हिन्द

और मुसलमानोंकी अमलदारीमें भारतवासीलोग इनदिनोंकी यूरोपियन प्रजासेभी बढकर अधिक स्वतन्त्रताका सुख भोगचुके हैं । ❀ बङ्किमबाबूभी इसबातको मानगए हैं । वे कहतेहैं,–

जिसमें विद्या और बुद्धि है उसको यदि विद्या और बुद्धिके फलकी उत्पत्तिका अवकाश नहीं दियाजाय तो उसपर बडाभारी अत्याचार कियाजाता है । आजकलके भारतवर्षमें यही बात होरही है। प्राचीन भारतवर्षमेंभी वर्णभेदके कारण वह बात थी, परन्तु आजकलके जितनी नहीं थी । अङ्गरेजी अमलदारीमें हमारे जातीय गुण चमकने नहीं पातेहैं । विविध प्रबन्ध प्रथम भागमें स्वाधीनता और पराधीनता नामक लेख ।

मुसलमानोंकी अमलदारीमेंभी यह "बडाभारी अत्याचार" इस देशमें नहीं था । तिसपरभी उन दिनोंके हिन्दू और मुसलमान नरेशोंको हमने अत्याचारी कहना सीखाहै । शब्दशास्त्रका ऐसा अनुचित व्यवहार और किसीभी देशमें नही देखनेमें आता ।

भारतवासियोंके शास्त्रानुसार राजकर प्रजागणकी वेतनको छोडकर और कुछ नही है । किन्तु वृटिशभारतमें प्रजाकी दी हुई मालगुजारीको भूमिके मालिक होनेके दावेसे अगरेजलोग अपनी पानेकी वस्तु विचारतेहैं । इग्लेण्डमे जिस प्रकार प्रजाके भोजनको छोडकर जमीनकी सारी पैदावार जमीन्दारकी अपनी वस्तु समझी जाती है कुछ कुछ उसी प्रकार यहांकी मालगुजारी अंगरेज लोग समझे हैं ।

"स्थाणुच्छेदस्य केदारमाहुः शल्यवतो मृगम् ।" इस भारतीय नीतिको वे लोग नही समझते हैं । जो मनुष्य जगलको काटकर आबाद करता है वह वहांकी जमीनका मालिक है, उसकी रक्षाके लिये वेतनके बतौर राजा मालगुजारी लेतेहैं । इस तत्वको अगरेज नही मानते हैं । इस लिये प्रजाके अर्थ वे जो कुछ करते है उसके लिये वे नये नये टैक्स वसूल करतेहैं । यहातक कि धर्माधिकरणके द्वारा जो न्याय और अन्यायका विचार करना राजाका अवश्य कर्तव्य है उसके लिये भी अंगरेज स्वतन्त्र टैक्स स्टाम्पके स्वरूपमें अगरेजलोग वसूल करतेहैं । जो लोग इस प्रकारसे प्रजाका सदैवका भूमि सम्बंधी अधिकार छीनलेतेहैं और भांति२के टैक्सोंसे प्रजाको पीसडालते हैं वे सुसभ्य और प्रजावत्सल हैं और जिन्होंने ऐसा नहीं किया वे असभ्य और यथेच्छाचारी हैं। क्याही विचित्र बात है वाक्यका इससे बढकर अनुचित प्रयोग और क्या हो सकता है ? सच्ची बात यहहै कि, पूर्वकालके पश्चिमीनरेशोंके स्वाभाविक अत्याचारीपनको अगरेज सुसभ्य होकरभी आजतक छोड नही सकेहैं ।

अङ्गरेज जातिकी मूल प्रकृतिके सम्बन्धमें श्रीयुक्त विजयचन्द्र मजूमदार बी. एल्. महाशयने भारती पत्रिकामें अग्रेजोंका स्वार्थ और देशका हित नामक लेखमें लिखाहै;–

"अग्रेजलोग स्वभावहीसे बडे अहकारीहैं और दूसरोंके गुण वा बडाई देखकर बडे अप्रसन्न होनेवाले हैं । इस बातको बहुतेरे अग्रेज मानभी लेतेहैं । स्टीवनसन साहबके लेखोंके ग्रन्थमें

❀ ये सब बातें श्रीयुक्त रामेन्द्रसुन्दर त्रिवेदीमहाशयने " साहित्यपत्रमे पराधीनता " शीर्षक लेखमें समझायी थी । वह लेख हरएक शिक्षितयुवाको पढना चाहिये । उसके साथही साथ स्वर्गीय भूदेवमुखोपाध्यायके सामाजिक प्रबन्ध और भारतवर्षका स्वप्नलब्ध इतिहास नामक ग्रन्थोंकोभी अवश्यही पढ़ना चाहिये ।

इसकी विस्तृत आलोचना देखनेमें आती है। इसलिये देखपडताहै कि यद्यपि यह देश अंगरेजोंका है; तथापि इस देशकी पुरानी बातोंको जितनी दूसरी यूरोपिय जातियोंके पण्डितोंने ढूढक निकालाहै उसके शतांशका भी एकांश अंगरेजोंने नहीं निकालाहै। विद्याके लिये विद्यालाभ पुरानी बातोंको ढूंढनेके लियेही निस्स्वार्थ होकर ढूढना प्रायः अंगरेजोंमें नहीं देखाजाताहै। यदि पुरानी बातोंको ढूढनेसे शासन कार्य्यका कोई सुभीता होसके तो उन्हींके ढूढनेमें अंगरेज अग्रसर होतेहैं और उसी दशामें खोजनेसे पुरानीबातका निकलपडना उनको बुरा नही लगता।" जो लोग सोचतेहैं कि भारतवासियोंकी भलाईके लिये अंगरेजोंने इसदेशमें रेल, तार और डाक आदिका सुप्रबन्ध कियाहै उनकी भूलको सुझादेनेके लिये विजयबाबू लिखतेहैं,—"इसविशाल देशके शासन और रक्षाके लिये रेल चाहिये, तार चाहिये, डाककाभी प्रबन्ध चाहिये। मान लीजिये कि यदि हम भारतवासियोंको ब्रह्मविद्याकी महिमासे ऐसे योगबल सम्पन्न होजाते कि उन वस्तुओंकी दरकार हमको नहीं रहती तौभी अपने राज्यको मजबूतीसे अपने हस्तगत रखनेके लिये अंगरेज अवश्यही इसदेशमें उन वस्तुओंको जारी करते। केवल मात्र तुम्हारी और हमारी सुविधाकी ओर ध्यान देकर अंग्रेज लोग कोई काम नही करते।"

इस बातकी सत्यताका अनुभव गत सन् १९०५ ई—के अगहन मासमे बंगदेशके नये प्रान्तस्थित बरिसाल, मैमनसिंह, सिराजगञ्ज आदि स्थानोंमें गोरखोंका शासन तथा दूसरे दूसरे अत्याचार मचानेसे होचुका है। उन स्थानोंके अत्याचारोंसे पिसे हुए लोगोंने कलकत्तेके मित्रों बडेबडे सरकारी कर्मचारियोंकी सेवामें अत्याचारोंसे बचनेके लिये तारद्वारा जो समाचार भेजना चाहाथा उसे तारमहकुमेवाले भेजनेको राजी नहींहुए थे। इससे दुःखी होकर उनदिनों एक सज्जनने निम्नलिखित बात समाचारपत्रमें प्रकाशित कर अपने चित्तका भाव प्रकट किया था,—

भारतवर्षके निवासी धन देकर जो तार रेल स्टीमर और एक महकमोंको पालने आतेहैं वे विपदके समय भारतवासियोंको एक कौडीकाभी लाभ पहुचानेवाले नही प्रतीत होतेहैं। तुम गहरे दुःखमें पड़कर तारका समाचार नही भेज सकोगे स्टीमरपर चढकर कहीं नहीं जासकोगे, रेलपर चढ नहींसकोगे और डाकसे चिट्ठी नही भेजसकोगे। सो हम उनका जितना खर्च देरहेहैं वह मानों बूझेहुए अंगारपर घी छोडरहेहैं।

आगे विजयबाबू कहतेहैं,—देखनेमें आताहै कि बंगदेशमें बहुतेरे अनार्य निम्नजातिवालोंने ब्राह्मणोंकी देखादेखी उनकी रीति नीतियोंका अवलम्बन किया है। धोबीभी विधवाओंका विवाह नहीकरते और दशा अच्छी होनेसे उनकी विधवाएं एकादशीको व्रतभी रहती हैं। छोटानागपुर तथा अनार्य्योंसे भरेहुए बहुतेरे दूसरे स्थानोंमें अबतक बहुतेरे अनार्यलोग हिन्दू पड़ोसियोंके आचार व्यवहार और धर्म धीरेधीरे अवलम्बन करतेहुए हिन्दुओंसे बहुतकुछ मिलजानेका उपाय अनजानमें कररहे हैं। बंगाल आदि देशोंका विषमय फल

अँगरेजी सरकार इसप्रकार मिलजाना भला नहीं समझती । इसीसे प्रयत्नतत्व और जातितत्वकी गहरी गवेषण प्रकटकर रिजली और गेटसाहबोंने मर्दुमशुमारीकी रिपोर्टमें दुःखके साथ कहा है कि हा ! अनार्य लोग भूलमें पडकर अपनी जातीयताको खोरहे हैं और प्राचीन इतिहासके चिह्नोंको बिगाडनेरहेहैं । वे जब दलके दल कृस्तान बनजाते हैं तब इन महात्माओंके आसू नहीं झडते किन्तु ब्राह्मणोंका आदर्श, स्वदेशका आदर्श ग्रहण करनेसे साहबोंको दुःखका पार नहीं रहता और इतिहासकी बात याद आजाती है । हमारे देशमें निम्नश्रेणीके लोगोंपर उच्चश्रेणीके लोगोंका प्रभाव जितना कम फैले उतनाही अगरेजी शासन नीतिके अनुकूल होता है । अवश्यही हम घाट बाट पहचानते हैं, इतिहासभी समझते हैं और प्रयत्नतत्वभी जानते हैं, किन्तु क्याकरें हम मरेहुए हैं ।

अगरेजोंकी दीहुई भ्रमयुक्त शिक्षासे अपने भारतीय समाजके जाति भेद, बाल्यविवाह, पडदेकी कडाई और ब्राह्मणादि कईएक ऊचीजातिवालोंमें विधवाओंके पुनर्विवाहका निषेध आदि रीतिया देखकर हम स्वदेशवासियोंकी भविष्यत् उन्नतिके विषयमे हम हताश हुएहैं । किन्तु माननीय विचारपति चन्दावरकर महाशयने गत १९०३ ई० की सोशल कान्फरेन्समें कहाथा,—

It is a superficial view to take of the cause of the degeneracy of a community of people to say that it has gone down solely because it is divided into innumerable castes, it enforces infant marriage, it prohibits widow marriage and keeps women in seclusion.

उक्तवाक्यमें जिन सबदोषोंकी बात कहीगयी है उनमेंसे एकभी ब्रह्मदेशके समाजमें विद्यमान नहींहै । तिसपरभी ब्रह्मदेशवासियोंका जातीयजीवन हम्हींलोगोकी भांति चमक दमकसे वर्जित है । भारतीय मुसलमान समाजमें एक दूसरेका अन्नखाना तथा विधवाओंका विवाहकरना मना न कियेजानेपरभी उनके जातीयजीवनका अधःपतन हुआहै । सच्चीबात यह है कि ज्ञानकी चर्चामे मन न लगाना तथा भोगविलासमें अधिक धंसजाना और राजनीतिचर्चामें उचित सावधानी न रहना आदि दोषही जातीयजीवनके नचमकनेका मूल है । भारतवर्षमेंभी विशेषकर इन्हींकारणोंसे जातीयजीवनकी शक्ति घटगयी है । इसके उपरान्त हमारे सामाजिक कुसस्कारो सेभी जातीयजीवनकी शक्ति कुछकुछ घटजानेकी बात अस्वीकार नहीं करसकते, सङ्कर विवाहसे हमारे समाजकी अति उन्नति होना कितना असम्भव है उलटे उससे फरगी और अमेरिकाकी मिश्रजातिकी भांति हमारी समाजकीभी अवनति होना कितना निश्चय है सो विज्ञप्रवर सुप्रसिद्ध दार्शनिक स्पेन्सर महोदयकी बातोंसे सुसिद्ध होजाता है । उन विज्ञपुरुष का इसविषयका पत्र उनकी मृत्युके कुछदिन पहले सब समाचारपत्रोंमें प्रकाशित हुआ

था। ❀ इसदेशमे रहनेवाले हिन्दू और मुसलमानोंकी सामाजिक दशा युरोपियनोंकी सामाजिक

❀ उस पत्रका कुछ अश यहां उद्धृत कियाजाता है। जापानी बैरन कैण्टारे कैनेको महाश यके प्रश्नके उत्तरमे स्पेन्सर महाशयने सन् १८९२ ई० के २६ अगस्तके पत्रमे लिखा था,–

"Respecting the further question you ask, let me, in the first place, answer generally that the Japanese policy should, I think, be that of "keeping Americans and Europeans as much as possible at arm's length." In presence of the more powerful races your position is one of chronic danger, and you should take every precaution to give as little foot-hold as possible to foreigners.

"It seeems to me that the only forms of intercourse which you may with advantage permit are those which are indispensable for the exchange of commodities--importation and exportation of physical and mental products. If you wish to see what is likely to happen, study the history of India Once let one of the more powerful races gain a point a' appui, and there will inevitably in course of time grow up an aggressive policy which will lead to collision with the Japanese: these collisions will be represented as attacks by the Japanese which must be avenged, as the case may be, a portion of territory will be seized and required to be made over as a foreign settlement, and from this time there will grow eventually subjugation of the entire Japanese Empire.

इसके पश्चात् जापानी खानोमे युरोपियनोको नियुक्त करने और समुद्रतटके वाणिज्यमे उनको किसी प्रकारका अधिकार देनेके विषयमे बारबार निषेध करतेहुए उन्होंने कहाहै,–

"To your remaining question respecting the inter-marriage of foreigners and Japanese my reply is it should be positively forbidden. It is not at root a question of biology. There is, abundant proof, alike furnished by the intermarriage of human races and by the interbreeding of animals, that when the varities mingled diverge beyond a certain slight degree, the result is inevitably a bad one in the long run.

The physiological basis of this experience appears to be that any one variety of creatures in course of many-generations acquires a certain constitutional adaptation to its particular form of life and every other variety similarly acquires its own special adaptation. The consequence is that, if you mix the constitution of two widely divergent varities which have severally become adapted to widely divergent modes of life, you get a constitution which is adapted to the mode of life of neither--a constitution which will not work properly, because it is not fitted for any set condition whatever By all means, therefore peremptorily interdict marriages of Japanese with foreigners."

प्रकृतिसे एकवारही भिन्न है । इसलिये युरोपियन समाजके आदर्शपर इसदेशमें समाज संस्कार करना आरम्भ करनेसे इसदेशके निवासियोंकी भलाईकी सभावना बहुतही थोडी है ।

इसविषयमें औरभी एकबात हमको स्मरण रखना चाहिये । स्वतन्त्र देशमे सामाजिक रीतिनीतिका सुधार होनेके लिये जो सब शक्तिया काम करसकती हैं वे शक्तियां परतन्त्र देशमें पूरापूरा काम करनेका सुभीता नही पातीं । परतन्त्र देशोमे समाजके हृदयमे किसीकदर सङ्कोच और घबराहटका भाव सदैव विद्यमान रहता है । इसलिये समाज अपनी सपूर्ण भीतरी शक्तिको काममे नही ला सकती । स्वतन्त्र और स्वस्थ समाजमें भीतरी बुराई वा व्याधि मेटनेकी जो स्वाभाविक शक्ति रहती है वह परतन्त्र समाजसे प्रायः चलीजाती है । परतन्त्रतासे समाजकी जीवनीशक्ति क्रमशः घटती रहती है, मनुष्यत्व सकुचित होजाता है । इसलिये जिसप्रकार एकओर उसकी सस्कारचेष्टा संपूर्ण फलदायी नहीहोती उसीप्रकार दूसरीओर नयीनयी कुरीतिया उसमे आघुसनेका सुभीता पाजाती हैं । इसलिये हमारे देशके उन्नतिशील लोगोसे देशकी कुरीतिया दूर होते न होते बहुतेरी विदेशी कुरीतिया उसमें आघुसी है । सच्ची बात यह है कि परतन्त्रतासे जब मनुष्यत्व सकुचित होजाताहै तब समाज उन्नतिकी दशा नहीं पासकता । ऐसी दशामे सामाजिक कुरीति सुधारनेके लिये बहुत शक्ति न बिगाडकर राजनीतिक आन्दोलनसे परतन्त्रताका बधन ढीला करनेका प्रयत्न करनेसे वांछित फल पानेकी सम्भावना अधिक है । समाज संस्कारकी चेष्टा कभी निन्दनीय नहीं है, समाजसस्कारके प्रयत्नमे जो लोग अपनी जीवन देरहे हैं उनके हृदयकी उदारता और स्वदेशकी प्रीति अवश्यही प्रशसनीय है । किंतु देशकी राजनीतिक स्थितिका सुधार इससे कहीं अधिक प्रयोजनीय है । इसी बातके-उदाहरणमें महाराष्ट्रके इतिहासका उल्लेख किया जा सकताहै । महाराष्ट्र देशमे एकनाथ और तुकारामकी भाति बहुतेरे साधुपुरुषोने जन्म लेकर समाजसस्कारकी प्रयत्नमे जीवन दे दिया था, किंतु परतन्त्रतासे पिसे हुए महाराष्ट्रीय समाजमे उनके प्रयत्नका आशानुरूप फल प्राप्त नहीं हुआथा, उल्टे उन लोगोंको वैसी साधुचेष्टाके लिये बहुत कुछ सामाजिक दण्डसहने पडे थे । किंतु महात्मा शिवाजीके प्रयत्नसे जब महाराष्ट्र देश परतन्त्रतासे मुक्त होगयाथा तबसे नामभरकी चेष्टा अथवा विना चेष्टाही बहुतेरे बडे बडे समाजसस्कार प्रसिद्ध होगये थे । उसके आगे फिर जब महाराष्ट्र देशकी स्वतत्र राजशक्ति दुर्बल होनेलगी तबसे फिर भांतिभांति संकीर्णताए समाजमें घुसतीहुई अवनति गति बढाने लगी । महात्मा शिवाजी और आगेके पेशवे लोगोंके दिनो महाराष्ट्रीयसमाजमें संस्कार प्रयास विना कियेही किस प्रकारसे होजाता था और इन दिनों उसकी गति कैसी घटगयीहै सो बबई हाईकोर्टके पूर्व विचारपति स्वनामधन्य काशीनाथ त्रिम्बक तेलग महोदयने सन् १८९२ई०के सेप्टेम्बर मासमें डेकनकालेज युनियनसभामे पढे हुए Gleanings from Maratha Chronicles नामक अपने लेखमें भलीभांति दिखादियाथा । उस लेखमें तैलग महाशयने मुक्तकण्ठसे स्वीकार कियाहै महाराष्ट्रदेश अंगरेजी शासनके अधीन न होजाता तो इसमें सन्देह नहीं है कि महाराष्ट्रीय समाजमें औरभी भाति भांतिके सस्कार होजाते । उन्होने निश्चय कियाहै कि अगरेजी शासनमें इस देशमे स्वाभाविक नियमसे समाजसस्कार होताभी रुकगया है । बात यह है कि परतन्त्रतासे हमारे समाजके हृदयमे यदि सदैव सकोच और घबराहटका भाव विद्यमान नहीं रहता तो समाज

सस्कार कभी ऐसा रुक नहीं जाता। इस विषयमे भूदेव मुख्योपाध्याय महाशयकीभी सम्मति उक्त सिद्धान्तके अनुकूल है। (उनका "स्वप्नलब्ध भारतवर्षका" इतिहास पढिये।)

हमारे विलायती नवी सभ्यताके मोहमे अन्धे होजानेको प्रकृतिके विषयमे काउण्ट टलस्टय महाशयकी सम्मति विचारने योग्य है। वह कहते हैं,–

"Why should I place civilisation in Europe? Is it because the Europeans have created for themselves artificial needs and because they have invented the railway, the telegraph, the telephone, and I do not know what besides? To me all these acquisitions of so called civilisation seem the invention of barbarism. They serve and pander to all that is basest in man I fail to see that they confer on him any sort of moral superiority, while I perceive that, on the other hand, the use he makes of his intelligence is most often for evil and not for good,"––

इससे पूर्व The wonderful Century of moral and Religious Crisis नामक ग्रन्थसे जो सम्मति उद्धृत की है वहभी इस मतको पुष्ट करतीहै। विलायती सभ्यताकी व्यर्थता अब सब लोगोंकी समझमे आगयी है। भारतवर्षमे इस नयी सभ्यतासे जैसा बुरा फल हुआ है उसके कहनेमे एक उदार अङ्गरेजने कहा है।

It is not more science, but more sympathy that is demanded of us by an ancient civilisation like that of India. Wherever we have superceded, in stead of supervising, native officials and head-man, where-ever we have poisoned the social organism with English reforms, instead of purifying it by the light of the best native traditions, there the seeds of demoralisation and disaster have been sown broadcast. The wisest men in India are beginning to recognise the fact—A. K. Connell's Paper on Indian Pauperism, Free Trade and Railways (1884)

इस सभ्यताके विषसे यूरोपतक जर्जरित होरहाहै। कल कारखानोंकी अधिकाईसे यूरोपमे स्त्रियोंका जीवन कैसा शोचनीय बनगया है सो स्टेट्समैन सम्पादकके निम्नलिखित मन्तव्यसे समझमे आजाताहै;–

There are in all western Countries a growing number of women who go out into the world to earn their own living, and who have but a very small chance of ever becoming wives and mothers...... They go out to work not because their grand-mothers had no work, but because the work that the grandmothers did was done in the home, whereas the same work is now done in the factory 27-5-05.

युरोपियन सभ्यताकी नकल करनेमे जापानमे स्त्रियाँ सम्बन्धी बखेडा ऐसाही कठिन होगयाहै।

The woman problem in Japan is practically identical with the woman problem in Europe and America. In Japan the old ideal which tied the woman to the home more rigidly than she was ever tied in Europe seems to be breaking down. Women are being educated, and educated women are going out to work. In the purely economic side the causes which are now sending Japanese women out into the world are the same as those that operate in Europe and America

इसलिये भारतवासियोंको समय रहते सावधान होना चाहिये । राजनीतिक उद्देश्यसे घनाये हुए इस मोहके हाथसे बचनेकेलिये स्वदेशकी प्रीतिही एकमात्र महौषध है । युरोपियनोंके साथ छुआछूत होनेमे हमारे समाजके शरीरमे जो विष घुसाहै, जो जातीय नैतिक अवनतिका बीजबोयागयाहै उसकी हानिकारिता दूर करनेके लिये स्वजातिप्रेमही एकमात्र उपाय है ।

"हमारे जातीय जीवनका जो सोता अब 'धीरेधीरे बहरहाहै उसमे वेग लानेके लिये इसी प्रकार देशीय भावकी आग बालना जरूरी है । मेरा विश्वास यह है कि स्वजातिप्रेम और स्वदेशभक्ति उपजानेके लिये समाजके साथ घनिष्ठसम्बन्ध स्थापन करना आवश्यक है । समाजमे कहां क्या है सो जाननेके लिये समाजके शरीरके अग अगकी परीक्षा करनी होगी उसमें कहां कितनी हड्डिया हैं, कहां कितनी नसे हैं, किस गड्ढामें कितना लोहू है, किस नससे कितनी चेष्टाशक्ति चलाकरती है, उसका पता ध्यान देकर लगाना होगा । कहा कैसा घाव हो गया है, कहा कौनसा कीडा हो गयाहै । उसकाभी पता लगाना होगा । किन्तु फीस लेनेवाले सम्बन्धवर्जित सर्जनके द्वारा यह अनुसन्धान नही हो सकेगा, अतएव स्वजनकी भांति प्रेम और दया पूर्वक यह अनुसन्धान करना होगा आगे उस समाज शरीरकी गर्भस्थ दशासे शिशु अवस्था तक, शिशुअवस्थासे यौवनावस्थातक और यौवनासे प्रौढ़ दशातक सब दशाओकी आदिसे अन्ततकका पता लगाना होगा । समाजका प्राचीन इतिहास यथाशक्ति रत्तीरत्ती अनुसन्धान करना होगा. बस

तभी उस समाजपर श्रद्धा उत्पन्न होगी, श्रद्धासे भक्ति आवेगी। भक्तिसे प्रेम उपजेगा और प्रेम अन्तमे महाभाव बन जायगा। समाजके जो लोग पथ दिखानेवाले हैं, जो लोग सुशिक्षित हैं, जो लोग ज्ञानी हैं, जो लोग भला बुरा सोचनेको समर्थ हैं वे उस महाभावको जगावेगे और उसे नसनसमे चला देगे। इस महाभावका विकास अधिक होनेकी दशामे रोमाञ्च खडे होंगे, नसोंमे लोहूका प्रवाह तेजीसे बहेगा, हृदयका पिंड बारबार हिलता रहेगा। नवजीवन सञ्चारित होनेपर हर्षसे निकले हुए आसुओंकी बाढ होजायगी, उस बाढसे विघ्न विपत्तिया टलनायेंगी। यही हमारे समाजकी व्याधिकी चिकित्सा है; यही हमारे सब रोगोंका एकमात्र इलाज है।" श्रीयुक्त रामेन्द्रसुन्दर त्रिवेदी रचित "सामाजिक व्याधि और उसका इलाज।"

किन्तु सरकारी स्कूल कालेजोमें जो शिक्षा दीजातीहै वह हमारे कोमलचित्त बालकोंके हृदयमे स्वदेशकी प्रीति सञ्चारित होनेकी बाधक है। क्योंकि वर्त्तमान शिक्षाप्रणाली बालकोंकी मानसिक वृत्तियोंको स्वतन्त्र रीतिपर फैलनेका अवकाश नहीं देती है। देशके विज्ञलोगोंने बहुत दिनोंसे यह बात समझी है, इससे बहुत दिनोसे भारतसन्तानोको जातीयभावकी शिक्षा देनेकी कल्पना हो रहीहै। नवीन विश्वविद्यालय व्यवस्था चलनेके दिनसे बहुतेरोंने समझाहै कि बालकोकी शिक्षाकी व्यवस्था अपने हाथमे न लेनेसे हमारी भलाईका कोई भरोसा नहीं है। स्वदेशी आन्दोलनसे सर्व साधारणके चित्तमे यह बात दृढरूपसे जमगयाहै। देशके विद्यालयोकी प्रधानता अपने हाथमें रहनेसे सरकारी कर्मचारी लोग विद्यार्थियोको स्वदेशकी सेवाके कार्य्यसे अलग रखनेके लिये भाति भातिके अनुचित उपाय अवलम्बन करनेको समर्थ हुएहैं। अगरेजोंकी चलायीहुई मोहनेवाली शिक्षासे हम भ्रमजालमें पडकर स्वदेशसे विमुख होरहेथे, वह भ्रमजाल भाति भांतिकी घटनाएँ एकके पीछे दूसरी उपस्थित होनेसे एकाएक टूटनेकी सम्भावना हुई है। इसीसे राजकर्मचारी लोग आंखपरसे लाजका पर्दा हटाकर हमारे बालकोंके हृदयसे स्वदेशकी प्रीति और स्वजाति प्रेमके अंकुरको नष्ट करनेके लिये पशुबलकी शरण लेनेलगे हैं। इतने दिनोतक जो बात कौशलसे सिद्ध की जातीथी उसके लिये अब बलप्रकाश वा अत्याचार किया जारहा है। शिक्षा विभागके गोरे इन्सपेक्टरने आज्ञा दी है कि जो सब "वन्दे मातरम्" कहरहे हैं उनको पाच पाच सौ वार लिखदेना होगा कि "वन्दे मातरम् कहना मूर्खता और असभ्यता है।" जिस शिक्षा प्रणालीके सहारे बालकोंको ऐसी स्वदेशद्रोहिता सीखनी होतीहै उससे बालकोका सम्बन्ध जितना शीघ्र टूट जाय उतना भला है। राजकर्मचारी लोग दिन दिन जैसी नीतिका अनुसरण कररहे हैं उससे विना विलम्ब जातीय विश्वविद्यालय स्थापित कर हमारे बालकोंकी जातीय रीतिकी शिक्षा देना बडाही प्रयोजनीय हुआ है। आनन्दकी बात यहहै कि इस विषयमें देशके प्रधानोंका ध्यान जमाहै। इस विषयमें उनको विशेषरूपसे सहायता करना देशके बालकोंके स्वजनोका परम कर्त्तव्य है। बालकोंको सरकारी विद्यालयका

सम्बन्ध छुड़ाकर जातीय ढङ्गकी शिक्षाका प्रबन्ध विना किये हुए अङ्गरेजोंके रचेहुए राजनीतिक कीचड़से बचनेका उपाय कभी नहीं होगा, स्वदेश प्रेमकी बाढ़के पवित्र सिञ्चनके विना समाजके सब पापोंके धोजानेका उपाय नहीं होगा। जो लोग देशकी भलाई चाहतेहैं तथा अपने सन्तानों को सच्चा मनुष्य बनाना चाहते हैं वे जातीय विश्वविद्यालय स्थापन करनेकी यथाशक्ति सहायता देनेसे कभी विमुख नहीं रहेंगे। सम्पूर्ण।
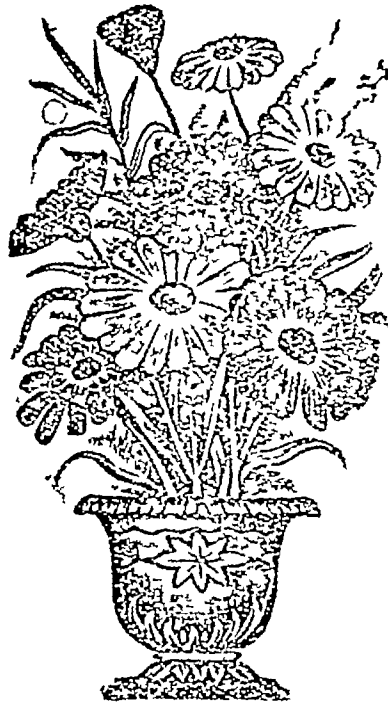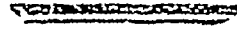
परिशिष्ट।

वङ्गदेशका अङ्गच्छेद।

सरकारी मन्तव्य।

गत १९०५ ई०के १९ जुलाईको शिमलेसे प्रकाशित इण्डिया गजेटमे भारतगवर्नमेण्टने वङ्गदेशके अङ्गच्छेद विषयक अपने कठोर सिद्धान्तकी सूचना देशके सर्व साधारण लोगोको दीहै। सरकारी मन्तव्यका सक्षिप्त अभिप्राय नीचे प्रकाश किया जाताहै,—

भूमिकामें गवर्नमेण्टने कहाहै कि वहुत दिनोंसे सुविशाल वङ्गदेशका शासनकार्य्य चलानेकी असुविधाके विषयमे भांतिभांतिके अभियोगोंको सुनती हुई गवर्नमेण्ट पूर्ववगाल और आसाम प्रान्तोको एक अलग छोटे लाटके अधीन कर देनेकी कल्पना कररही थी। क्योंकि इतने बडे भूखण्डका शासनभार एकही शासनकर्त्ताके हाथमें रहनेसे अच्छे शासनमे बाधा पडरहीथी। इसलिये सन् १९०३ ई० के डिसेम्बर मासमें भारतगवर्नमेण्टने प्रान्तीय शासनकर्त्ताओंकी सम्मति जानना चाहाथा। उनकी प्रकाश कीहुई सम्मातियोंकी विशेष आलोचना कर तथा उस विषयमें प्रयोजनीय अनुसन्धान आदि उचित रीतिसे कर भारत गवर्नमेण्टने अपने पूर्वप्रस्तावका कुछ परिवर्त्तन किया है। तदनुसार छोटे नागपुरका वडाभारी अश मध्यप्रदेशके अन्तर्गत कर-देने और मदरास प्रान्तके कई एक जिले वगदेशके अन्तर्गत करदेनेका पूर्व प्रस्ताव त्याग दिया गयाहै। इनमेंसे मदरास प्रान्तके जिले उस प्रान्तके लाटके उज्रसे जाति और भाषा सम्बन्धी भेदके लिये वगदेशमें मिलाये नहीगये। वाणिज्य व्यवसायके सुभीते और असुभीतेके विचारसे छोटे नागपुरका अधिक अश वगदेशकेही अन्तर्गत देखना पडा।

इसके पश्चात् सरकारी रिजोल्युशनमे वगभाषा भाषियोंमें विछोह डालनेकी चर्चा छेडीगयी है। गवर्नमेण्टने कहाहै,—(१) पहले एकबार चटगांव और आसामको मिलाकर एकप्रान्त वनानेकी कल्पना की गयीथी। (२) इसके आगे सन् १९०३ ई०में गवर्नमेण्टने जो प्रस्ताव कियाथा तद-नुसार ढाका और मैमनसिंह जिलोंको भी आसाममे मिलादेनेकी वात लिखी गयीथी।(३)किन्तु इन दो जिलोंको मिलादेनेसेभी वह नया प्रान्तको एक लफटण्टी करने योग्य वडा समझा नहीं गया। इसीसे राजशाही विभागको नये प्रान्तमें मिलाना निश्चय कियागया था। उस समय बडे लाटने ढाका चटगाव और मैमनसिंहमें वक्तृता करते करते इशारा किया था कि वङ्गालको बाँटनेके उस समयवाले प्रस्तावसे भी अधिकतर बढा प्रस्ताव काममे लाना कर्त्ताराको अभीष्टहै। इस समय लोगोने जो प्रतिवाद कियाथा उसपर ध्यान देकर गवर्नमेण्ट लोगोंकी भलाईके लिये विशेष प्रबन्ध करनेको उद्यत हुई।

पहले बंगालके छोटे लाटने ढाका, चटगाव, बोगडा, रगपुर, पवना और आसामको मिलाकर एक प्रान्त बनानेकी सलाहदी थी। किन्तु भारतगवर्नमेण्टने विचारा कि इस सलाहको माननेसेभी

एक लफ्टण्टी योग्य बडा प्रान्त नहीं होसकता। इसीसे भारतगवर्नमेण्टने राजशाही दिनाजपुर जलपाइगोड़ी, मालदह और कुचविहार राज्यकोभी नये प्रदेशमें मिलाना उचित समझा।

यह नया बँटवारा बङ्गाली जातिके वंश, जातिभाषा और भूगोल सम्बन्धी सामंजस्यकी ओर ध्यान रखकर ही कियागया है। इसके उपरान्त इस बातकाभी ध्यान रखागयाहै कि आसामके चाय बगीचोकी विशेष उन्नति हो. निश्चय हुआ कि नये प्रान्तका नाम "पूर्व बङ्गाल और आसाम" रखा जावे। चटगाव, ढाका, राजशाही विभाग, पहाडी पिटारा राज्य और आसाम इस प्रान्तके अङ्ग होगे। ढाका इस प्रान्तकी राजधानी और चटगाव इसका दूसरा प्रधान नगर बनेगा। इस प्रान्तका प्रमाण १ लाख ६ हजार ५४० वर्गमील और मनुष्य संख्या ३ करोड १० लाख होगी जिनमेंसे मुसलमान १ करोड ८० लाख और हिन्दू १ करोड ३० लाख होंगे। नये लेफ्टनेण्टगवर्नरकी एक कानूनसभा और एक रेविन्यूबोर्ड रहेगा। बोर्डमे २ मेम्बर होंगे। नया प्रान्त कलकत्ता हाईकोर्टकेही अधीन रहेगा। अबसे पश्चिम बंगालका प्रमाण १ लाख ४१ हजार ५८० वर्गमील और मनुष्य संख्या ५ करोड ४० लाख होगी। जिसमेंसे हिन्दू ५ करोड २० लाख होंगे।

इस प्रस्तावका प्रजाने जो प्रतिवाद कियाहै सो गवर्नरजनरल भली भांति जानतेहैं। इसप्रतिवादकी जडमें जो भावका उत्साह विद्यमान है उसकी उपेक्षा करनेकी इच्छा गवर्नरजनरलको नहीं है। देशदेशमें तथा मनुष्य मनुष्यमे सम्बन्ध इतना शीघ्र घना होजाताहै कि देशको बाँटनेसे उस घने सम्बन्धको स्थिर रखना कठिन होजाताहै और उस घने सम्बन्धका तोडना बडाही क्लेशदायक तथा दुखदायी होताहै। पहलेकी जानकारीसे भारतगवर्नमेण्ट विचारती है कि इस बँटवारेका फलभी वैसाही होगा।

उपसंहारमे भारतगवर्नमेण्टने कहाहै कि इस बटवारेके फलसे बगाली जातिका हित होनेकी सम्भावनाही अधिक है।

४॥ करोड़ बंगालियोंकी प्रार्थना निष्फल हुई।
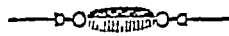
बगालके इस बँटवारेको बंद करनेके लिये ऐसा कौन काम कि जो बगाली जातिने न किया हो? एक शाम परिश्रम न करनेसे जिनके परिवारके लोग भूखों रहतेहैं वैसे दरिद्र किसानोंने भी स्वदेशको स्थिर रखनेके लिये चन्दे दिये हैं, तथा सब काम काज बिसारकर राजकर्मचारियों-से चित्तका दुःख जनानेके लिये व्याकुल प्राणोमे कोसों चलकर सभाओंमें जुडे हैं। प्रजाको आशा हुईथी की कि, राजकर्मचारीलोग उसके जीके गहरे दुःखको जानकर बगालका दो भागोमें बाटना बन्द करेंगे। किन्तु प्रजाकी दुःखभरी प्रार्थनाओंपर ध्यान देना लार्ड कर्जन तथा सर एण्डरू-फेजरने उचित नहीं विचारा। पूर्वबंगालके जमीन्दार लोग सैकडों प्रकारके लुभानेमे नही आये, तथा सैकड़ो भ्रुकुटियोंकी परवा नहींकी। जननी जन्मभूमिके छुरी फिरनेकी बातपर वे चौंक उठे। वे जन्मभूमिको अखण्डित रखनेके लिये कुली मजदूरोकी भाति दिनरात परिश्रम करचुकेहैं, तथा दोनों हाथोंसे धन खर्चनेसे नही हिचके हैं। किन्तु सरकारी कर्मचारियोंने उनकी आहभरी रुलाईपर ध्यान नहीं दिया।

मदरासके अन्तर्गत गञ्जाम जिला और विजिगापत्तनके देशी राज्योंको बंगदेशके अन्तर्गत करना निश्चय कियाथा। किन्तु मदरासकी प्रजाने उसका कड़ा प्रतिवाद कियाथा। मदरासके दयामय गवर्नर लार्ड एमथिलने प्रजाका आन्तरिक दुःख समझकर भारतगवर्नमेण्टके प्रस्तावका प्रतिवाद किया था। इसलिये भारतगवर्नमेण्ट मदरासका अगच्छेद नहीं करसकी। मदरासके गवर्नरको अपना पूराआज्ञा कारी न पाकर लार्ड कर्जन मदरासके अंगमें छुरी फेरनेको समर्थ नहीं हुए।

छोटे नागपुरका बहुत कुछ स्थान मध्यप्रदेशके अन्तर्गत करदेनेका प्रस्ताव हुआथा। किन्तु छोटानागपुर कोयला और लोहेके लिये प्रसिद्ध है। कलकत्तेके अंगरेज वणिकोंने इसपर गरज-कर कहा कि छोटानागपुर बंगालके अंगसे अलग नही होसकेगा। बस लार्ड कर्जनने उस प्रस्ता-वको परित्याग किया।

बंगालके प्रधान लोगोने बंगालके छोटेलाटकी सेवामे जाकर बंगदेशको यथावत बना रखनेके लिये कितनी प्रार्थना की थी। छोटे लाटके मुखसे कितनीही सहानुभूति की बातें प्रकट हुईथी। हरेककी उज्र उन्होंने अपने हाथमे लिखलीथी। बंगालके निवासियोंकी प्रार्थना बड़े लाटसे कह-नेकी प्रतिज्ञा कीथी, किन्तु काम उन्होंने यही किया रंगपुर, बोगडा, पबना, फरीदपुर और बाखरगञ्ज जिलोंको आसामसे मिलादेनेका अनुरोध लार्ड कर्जनसे किया। छोटे लाट यदि उज्र करते तो लाट कर्जन बंगालका अंगच्छेद करनेका साहस कभी नहीं करते।

४॥ करोड बंगालियोंकी प्रार्थना टालीगयी किन्तु कई कोयलेके व्यापारी अंगरेजोंकी उज्रपर लार्डकर्जन छोटे नागपुरसे अलग करनेका साहस नहीं करसके।

बंगदेश दो भागोंमे बांटा गया। जो बंगालीलोग इतने दिनसे एकत्र बसते आतेथे जिसका स्मरणतक बना हुआ नहीं है, जो लोग एक दूसरेके सुखदुःखसे सुखीदुःखी होते आतेथे, जो लोग एक दूसरेके प्रेमडोरसे बँधकर एक बडीभारी शक्तिशाली जाति बन रहेथे, वे लार्ड कर्जनकी एकही चोटसे छिन्न भिन्न होगये। ढाका, मैमनसिंह, फरीदपुर, बाखरगञ्ज, चटगाव, नवाखाली, टिपारा, राजशाही, रंगपुर, दिनाजपुर, बोगडा, पबना, जलपाई गोडी, मालदह और बंगालके गौरवरूपी स्वतन्त्र टिपारा राज्य सब नये प्रान्तके शामिल करदियेगये। पुराने बंगालके केवल २४ परगना, नदीया, मुर्शिदाबाद, जशोर, खुलना, बर्द्धवान् हुगली, हवडा, मेदनीपुर और वीरभूमजिले तथा कूचविहार पुराने प्रान्तमें रहगये।

भाइयोंमें भेद।

बडेलाट लार्ड कर्जनने भारतगवर्नमेण्टके मन्तव्यमें कहाहै कि बंगदेशकी भांति आठकरोड मनुष्योंको बडे भारी देशको एकही शासनकर्त्ताके अधीन रखनेसे शासनकार्य्यमें बहुत असुविधा होतीहै। एकही शासनकर्त्ताके लिये इतने बडे देशका शासन करना कठिन होताहै। इसीसे बंग-देशको दोभागोंमे बांटकर उसका एक भाग एक नये शासनकर्त्ताके हाथमे करदेनेका प्रयोजन आपडाथा। लाट महाशय यह कहनेकोभी नहीं भूलेहैं कि बंगदेशको विनाबांटे यदि किसी और उपायसे उत्तम शासन करना सम्भव होता तो गवर्नमेण्ट कभी बंगदेशको बांटकर प्रजाके मनम

पीडा नहीं पहुँचाती । यह बात यदि सत्य होती तो हम सोचसकते कि गवर्नमेण्टने लाचार होकरही बंगदेशको दो भागोंमें बांटा है । किन्तु क्या गवर्नमेण्टका दिखाया हुआ कारण सत्य है।

अच्छा तर्कके लिये हम मानलेते हैं कि बंगालके लाटका कठिन शासनभार घटानेके लियेही बंगालको दो भागोंमें बाँटनेकी बडी भारी आवश्यकता होपडी थी; तीन करोड १० लाख नरनारियोंका शासन भार दूसरे शासनकर्त्ताके हाथमें अर्पण करनेका विशेष प्रयोजन उपस्थित हुआथा। किन्तु पूछना है कि २ करोड ३३॥ लाख बेहारवासी ४९ लाख छोटानागपुरी और प्रायः ७५ लाख उडीसा वासियोंको मिलाकर एक ३॥ करोड मनुष्योंका प्रान्त क्यों नहीं बनायागया ? । ३ करोड १० लाख मनुष्योंको मिलाकर "पूर्वबङ्गाल और आसाम" प्रान्त रचनेके बदले गवर्नमेण्टने ३॥ करोड मनुष्योंका "बिहार और उडीसा" प्रान्त क्योंनहीं बनाया ? वर्द्धमान और प्रेसिडेन्सी विभागोंकोभी पूर्वबङ्गाल और आसामके साथ पूर्ववत् सम्मिलित रखकर उसका नाम बङ्गदेश और आसाम रख देनेसे क्या हानि होती ? जब विजिगापत्तन और गञ्जाम प्रदेशको भाषा और जातिका सामाञ्जस्य न होनेकी बात कहकर मदरासप्रान्तसे अलग नहीं कियागया, जब छोटे नागपुरके ५ देशी राज्य भाषा और जाति सम्बन्धी एकताके लिये मध्यप्रदेशमें मिला दिये गये, तथा सम्बलपुर, बामडा, कालाहाण्डी आदि उड़ीसाके साथ मिलाये गये तब बंगभाषा भाषीलोगोंको एकत्र और एकलाटके अधीन क्यों नहीं रखागया ? इसके उत्तरमें गवर्नमेण्टने कहा है कि That would make the province universally unpopula अर्थात् ऐसा करनेसे कोईभी (सिविलियन) प्रसन्न नहीं होता । इस लिये बंगालकी लाखो प्रजाकी सम्मतिपर पदाघात कियागया ।

पाठक ! बातको अच्छी तरह समझिये । वर्त्तमान बंगदेशकी लोक संख्या प्रायः ८ करोड है, इसमेंसे ४ करोड २८ लाखकी मातृभाषाबंगला बनता है, २ करोड ३३॥ लाखकी मातृभाषा बिहारी हिन्दी है, बाकी ७५ लाख मनुष्य उडिया भाषा बोलनेवाले हैं, बडे लाट ४ करोड २८ लाख बंगभाषा बोलनेवालोमेंसे १ करोड ७२ लाख उड़िया और बिहारवासियोंके साथ रहने देकर बाकी २ करोड ४६ लाख बंगालियोंको आसाम वासियोंके साथ मिला देनेकी आज्ञा दीहै । इस आज्ञाके अनुसार बंगालभाषा बोलनेवाले १४ जिले और देशी राज्यके निवासियोंको आसामवासियोंके साथ तथा दश जिले और १ देशी राज्यके निवासियों उडीसा और बिहारवासियोंके साथ मिला दिया गया । इसलिये पूर्व बंगाल और पश्चिमबंगालमें जो कुछ थोडासा भेद था और जो भेद एकत्रवास और एकत्र ज्ञानकी चर्चा करते करते दिनपर दिन घटरहाथा वह निस्सन्देह बढ़जायगा तथा स्थायी होगा ।

उसी प्रकार इतने दिनोंतक हिन्दू और मुसलमान एक थे; वे इस नये प्रबन्धसे एक दूसरेसे अलग हुए हैं । पश्चिमबंगालमें ४ करोड २० लाख हिन्दू और ९० लाख मुसलमान तथा पूर्व बंगालमें १ करोड २० लाख हिन्दू और १ करोड ८० लाख मुसलमान हुए । बंगालका अंग काटकर पश्चिम बंगालमें हिन्दुओंकी प्रधानता और पूर्व बंगालमें मुसलमानोंकी प्रधानता करदी गयी । सच्ची बात यह है कि चाहे जिधरसे देखिये बंगाल प्रेसिडेन्सीको बाटनेके बदले बंगाली जातिकोंही बाँटना कर्त्तारोंकी व्यवस्थाका प्रधान

लक्ष्य जान पडताहै । इसलिये यही कहना ठीकहै कि बगाल देशके बडा होनेसे उसके अधिक निवासियोका शासन करनेमें कर्त्तारोंके दिकत झेलते रहनेकी जो बात कही गयीहै वह ठीक नहीहै, बल्कि बगाली जातिकी एकता कर्त्तारोकी आखोंमे गडरहीथी । इसीसे चतुर गवर्नमेण्टने बगालके बँटवारेके नामसे बगला बोलनेवाली तथा एकतासे बढतीहुई बंगाली जातिको दो भागोंमें बाँट दिया ।

भारतगवर्नमेण्टने कहा है कि आजकल बंगालके लेफ्टनेण्ट गवर्नरका काम बहुत बढगयाहै । यह बात किसीकदर सच होने परभी बगालकी कानून सभाका काम नही बढाहै । बगालकी हाईकोर्ट काम बढानेकी शिकायत नही कररहीहै । उसके जजलोग दूसरे हाईकोर्ट जारी करनेके पक्ष पाती नहींहै । यहभी सुना नही जाता कि रेविन्यूबोर्ड सम्पूर्ण बगालकी मालगुजारी सम्बन्धी काम चलानेको अशक्त हुआहै । शिक्षाविभागके डाइरेक्टर महाशयनेभी शिक्षाविभागका काम चलानेमें अपनी शक्तिहीनताकी सूचना नहीं दीहै । पुलिसके इन्स्पेक्टर जनरलने यह शिकायत नहींकीहै कि मनुष्यसे न होनेयोग्य परिश्रम करना पडताहै । इन्स्पेक्टर जनरल आफ रेजिस्ट्रेशनको यद्यपि प्रतिवर्ष अपने कार्य्यकी रिपोर्ट पेश करनी नहीं पडतीहै पर उन्होंनेभी कभी यह दुःख प्रकट नही कियाहै कि हृदयसे ज्यादा परिश्रम करना पडताहै । इसके उपरान्त कैदखानोंके इन्स्पेक्टर जनरल और अस्पतालोके इन्स्पेक्टर जनरलके सम्बन्धमेंभी यही बात कही जासकतीहै । इसलिये देखनेमे आताहै कि बगालके प्रधानकर्म्मचारियोंमेंसे एक छोटे लाटको छोडकर और किसीनेभी काम बढजानेकी शिकायत नहीकीहै । किन्तु एकमात्र उनके कामका भार घटानेके लिये बगाल दोभागोंमें बाटनेकी दरकार क्याथी ? छोटे लाटके कामकी सहायता करनेकेलिये एक डिपुटी गवर्नर नियुक्त करनेसेभी उनके कामकी अधिकाईकी शिकायत मिटजासकती थी । इन दिनों बगदेशको जिसप्रकार बाटागयाहै उससे वार्षिक कमसे कम १२॥लाख रुपये अधिक खर्च होगा; किन्तु एक डिपुटी गवर्नर नियुक्त करनेसे वार्षिक १ लाख २० हजार रुपये अधिक खर्च करनेसेही काम मजेमें चलाजाता । बम्बई और मदरासकी तरह एक गवर्नर नियुक्त करनेसेभी वर्त्तमान व्यवस्थासे वार्षिक ७लाख २१ हजार रुपये कम खर्चसे काम चलसकता । बगालियोंने गवर्नमेण्टकी सेवामे इसी प्रकारके प्रस्ताव कियेहैं । किन्तु लार्ड कर्जन और भारतमन्त्री ब्राडरिक साहबोंने उनकी बातपर ध्यान न देकर बंगालको बाटनेकीही आज्ञा पक्की की । उनके इसप्रकार वर्त्तावको विचारनेसे चित्तमे आपही आप यही बात उठतीहै कि शासनकार्य्यका सुभीता करना अथवा छोटे लाटका काम हलका करदेना बगालके बाटनेका अभिप्राय नही है । बङ्गालियोको अलग अलग कर उनकी शक्ति घटादेनाही कर्त्तारोंको अभीष्ट है ।

बँटवारेका परिणाम ।
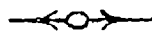
बगाली जातिके अंगच्छेदकी बातका अन्तिम फल विचारनेसे इसको मझाना पडताहै । पहले पश्चिम बगालके निवासियोकी बात कहीजातीहै । विहार और उडीसामें बंगालियोको सरका

नौकरियोंमें नियुक्त करनेकी अनिच्छा प्रभुलोग बहुत पहलेसे प्रकट कररहेहैं। अब पूर्व बंगालके अलग होनेसे पश्चिम बङ्गालके निवासी बर्द्धवान और प्रेसिडेन्सी विभागोंको छोडकर और कहीं नौकरी नहीं पासकेंगे। बंगालकी कानूनसभामें अबसे पश्चिम बंगालके निवासियोंकी संख्या घटजायगी, बिहार और छोटे नागपुरकेही निवासियोंकी संख्या उसमें अधिक होगी। इतने दिनों-तक पूर्वबंगाल और उत्तर बङ्गालके लिखे पढे लोगो और जमीन्दारोंकी सहायतासे पश्चिम बंगालके निवासी कानून सभामें अपने स्वार्थकी रक्षाका प्रयत्न करतेथे। अबसे उस सहायतासे वे वञ्चित हुए।

पूर्व और उत्तर बंगालके व्यवसायियोंकी सहायतासे अब कलकत्तेके वाणिज्यकी पुष्टि नहीं होगी। चटगावके वाणिज्यका केन्द्रस्थल बन जानेपर कलकत्तेके मारवाडी, मुसलमान और बंगाली हिन्दुओंके व्यवसायकी अवनति होने लगेगी। नये प्रान्तमें नयी हाईकोर्ट वा चीफकोर्ट बननेपर कलकत्ता हाईकोर्टके जजोंकी संख्या और शक्ति घटजायगी। हाईकोर्टकी शक्ति घटनेके साथही साथ शासन विभागका जुल्म बढेगा। कलकत्ता सम्पूर्ण बंगाली जातिकी विद्या और बुद्धि के विकास और विद्वान् तथा बुद्धिमानोंके मिलनेका स्थान बना नहीं रहेगा। उत्तर और पूर्व बंगालके प्रतिभाशाली पुरुषोंके मिलनेकी जगह नये प्रान्तकी राजधानी बनजायगी। पश्चिम बंगालके निवासी क्रमशः उनकी सहकारिता और सहायतासे वञ्चित होजायगे। इससे बंगला साहित्यकी सामान्य हानि नहीं होगी।

नयी राजधानीमें स्कूल और कालेजोंकी संख्या ज्यों ज्यों बढेगी त्यों त्यों कलकत्तेके कालेज और विद्यार्थियोंकी संख्या घटजायगी। पूर्व बंगालके जमीन्दार लोग कलकत्ता छोडकर नये प्रान्तकी राजधानीमें जाकर बसने लगेंगे। बहुतेरे जमीन्दारोंके पूर्व और पश्चिम बंगाल दोनों प्रान्तोंमें जमीन्दारियां हैं। उनको दोनों राजधानियोंमें रहनेके स्थान बनाने पडेंगे तथा सरकारी चन्देके खातेमें दोनों प्रान्तोंमें अलग अलग चन्दे देने पडेंगे। कलकत्तेकी उन्नति करनेका जो प्रस्ताव हुआ है उसके पूरा होनेसे बहुतेरे बंगालियोंको कलकत्ता छोडकर चलाजाना पडेगा। कलकत्तेसे बंगालियोंकी बडाई मिट जायगी। इसके उपरान्त बंगालकी प्रायः आधी मनुष्यसंख्या नये प्रान्तमें शामिल होजायगी, किन्तु उस हिसाबसे गवर्नमेण्टका खर्च नहीं घटेगा। सुना जाताहै कि खर्चकी प्रायः चौथाईही घटायी जायगी। सो पश्चिमबंगालके निवासियोंको राज्यशासनका खर्च पहलेसे बहुत अधिक उठाना पडेगा। इसलिये प्रजापर अधिक टैक्स लगनेमें आश्चर्यही क्याहै।

पूर्व और उत्तर बंगालके निवासियोंको भी इसी प्रकार असुविधायें झेलनीपडेगी। वहांके निवासियों पर शासनका खर्च अधिक होगा और साथही प्रजाके लोग कठिन टैक्सके भारसे दुःखीहोंगे। दूसरी असुविधाएँ और हानिभी थोडी नहीं होगी। नये प्रान्तमें छोटे लाटकी जो कानून सभा बनेगी उसके सभासदोंके नियुक्त होनेके विषयमें अभीतक यह निश्चय नहीं हुआहै कि गवर्नमेण्ट स्वयं उनको पसन्द करेगी अथवा प्रजा चुनेगी। किन्तु यह बात निश्चितहै कि नये प्रान्तकी राजधानी बनानेमें १४।१५ करोड रुपयेसे कम खर्च नहीं होगा। अवश्यही ये १४ करोड रुपये नये प्रान्तके निवासियोंसेही वसूल किये जायगे।

छोटे लाट और उनके सेक्रेटरियोंके वेतन आदिके लिये वार्षिक कभी १२ लाख रुपयेसे कम खर्च नही होगा। सपूर्ण बगालके ७॥ करोड मनुष्य इतने दिनोंतक जितना खर्च उठातेथे उतनाही खर्च नये प्रांतके ३ करोड १० लाख मनुष्योंको उठाना पडेगा। क्या इसी खर्चसे पूर्व-बगाल और उत्तर वगालके निवासियोंको पिसजाना नही पडेगा?

नये प्रांतमें कलकत्तेकी भाति मेडिकल कालेज, प्रेसिडेन्सी कालेज, इञ्जिनियरिंग कालेज, दूसरेकी भाति कृषि कालेज और मिशनरी तथा स्वतन्त्र कालेजोंकी तरह कालेजोका बनवाना वडाभारी खर्चीला होनेसे असम्भव होगा। इसलिये नये प्रान्तवालोंकी शिक्षाकी निश्चयही अवनति होगी। नयेप्रान्तके छोटे लाटके लिये सेना रखनी होगी। इसलिये सेनाका वारिक बनानेका खर्चभी अधिक होगा। इन सव कामोंमें अधिक खर्च हो जानेसे लोगोंके हितकर कार्य्य करनेके लिये सरकारी खजानेसे अधिक खर्चना वन नही पडेगा।

इस बँटवारेके फलसे बगाली जाति बँटकर कमजोर होकर तथा टैक्सोंके भारसे पिसकर नष्ट भ्रष्ट होजायगी। इसीसे इसका ऐसा कठोर प्रतिवाद बङ्गाली लोग कररहेहैं। शासन कार्य्यके सुभीतेके लिये बङ्गालका बँटवारा नही हुआ है, बङ्गाली जातिमे भेद डालनाही इसका अभिप्राय है।

राजकर्मचारियोंकी कुटिलता।

वङ्गदेशके अगच्छेदके विषयमें स्टेट्समैन पत्रके सम्पादकने एक बडाही अच्छा लेख प्रकाश किया था। उसलेखके एक स्थानमें उन्होंने कहा था,–

"Objects of the scheme are, briefly, first, to destroy the collective power of Bengali people, secondly, to overthrow the political ascendency of Calcutta, and thirdly, to foster in East Bengal the growth of Mahomedan power which it is hoped will have the effect of keeping in check the rapidly growing strength of the educated Hindu community."

अर्थात् वगदेशके अंगच्छेदके उद्देश्य ये हैं, (१) बगाली जातिकी मिलित शक्तिको बिगाडना, (२) कलकत्तेकी राजनीतिक बढाईकी जड काटना और (३) पूर्वबगालमे मुसलमान शक्ति बढाना। सरकारी कर्मचारी लोग आशा करतेहैं कि मुसलमानोंकी शक्तिबढादेनेसे शिक्षित हिन्दुओंकी नित्य बढती हुई शक्तिको रोकना सम्भवहोगा।

पाठक! ओरिएण्टल डिप्लोमेसी वा पूर्वी कुटिलताकी निन्दा करनेवाले लार्ड कर्जनके वंगच्छेदका सच्चा अभिप्राय क्या है सो तो एक अगरेजके ही मुखसे सुनचुके। अब उनके निजमुखकी बात भी सुनिये। इस विषयके जो कागज प्रकाशित हुए हैं उनमें एक जगह लार्ड कर्जनकी गवर्नमेण्ट स्पष्टही लिखती है,–

It cannot be for the lasting good of any country or any peo that public opinion or what passes for it should be manufa

by a comparatively small number of people at a single centre and should be disseminated thence for universal adoption, all other views being discouraged or suppressed ......From every point of view it appears to us desirable to encourage the growth of centres o independent opinion, local aspirations, local ideas and to preserve the growing intelligence and enterprise of Bengal from beini cramped and stunted by the process of forcing it prematurely ging a mould of rd and sterile uniformity.

लार्ड कर्जनकी इस कौशलभरी उक्तिका सरलभापामे अर्थ यहहै कि "कलकत्तेकी भांति किसी केंद्रस्थानके थोडेसे लिखे पढे मनुष्योंकी सम्मतिके अनुसार यदि वगदेशके सब लोग चलते रहेंगे तो उसका मूल वगदेश और वगाली जातिके लिये अच्छा नही होगा। एकही सम्मतिसे सब लोग न चलकर जिससे समाजके अलग अलग भागोंके लोग अलग २ पथसे चले, जिससे एक भाषा बोलनेवाले लोगोंमें भिन्न २ सम्मति गठित हो जावे, सब लोग आपही आप अपने को बड़े समझने लगें, सबकी आकांक्षा तथा आदर्श एक न होकर अलग अलग हो उसकी व्यवस्था करना गवर्नमेण्ट अपने लिये बहुत जरूरी समझतीहै। वगदेशमें आजकल जैसा एका देखनेमें आरहा है उससे समाजमे अलग २ भाव और सम्मतियोकी वृद्धि देखनेमे नहीं आरही है ऐसी एकता गवर्नमेण्टको अनुचित जँचरही है।

इससे बढकर और साफ बात दूसरी क्या होसकतीहै। किन्तु इसीमें प्रभुओंकी कुटिलता बस नहीं हुई है। जातीय महासभाके गत इक्कीसवें अधिवेशनके सभापतिने सत्यही कहाहै कि इस वंगविच्छेदके विपयमें लार्ड कर्जनने जैसा वर्ताव कियाहै उससे धीरताके साथ तौली हुई भापामे उनके कार्य्यकी आलोचना नहीं की जा सकतीहै। पहले सक्षिप्त रीतिपर विभागकी जो कल्पना हुईथी उसपर देशमे घोर आन्दोलनका आरम्भ हुआ था। यह देखने से भय खाकर उन्होंने अपने अन्तिम निश्चय सम्पूर्ण पूर्ववगालको काटनेकी बात बिल्कुल नहीं उठायी। वर्षभरसे भी अधिक दिन उस विषयमें और कोई बात उन्होंने प्रकट तो नही की, किन्तु चुपे चुपे काम किया। गप्प उडी कि बंगालके बँटवारेकी इच्छा त्यागदी गयी है। इस गप्पकाभी लार्ड कर्जनने कोई प्रतिवाद नही किया। अन्तमें भारत मन्त्रीकी मंजूरी मँगाकर शिमलेसे उन्होंने एकाएक बगाविभागका मन्तव्य प्रकाश किया। आगे सहसा नौकरी त्यागदी। इसपर लोगोंने जाना कि बस अब कुछ न होगा। क्योंकि कुछ करनेसे पहले उस विषयके कागज पार्लियामेण्टमें पेश करनेकी प्रतिज्ञा की गयीथी। सो सब लोगोंने समझा कि पार्लियामेण्टमें उस विषयकी आलोचना होनेसे कुछ नहीं किया जायगा। और उचित भी यही था कि पदत्यागनेके पीछे इस विषयका भार लार्ड कर्जन लार्ड मिण्टोके हाथमें सौंप देते। युवराजके भारतमें आनेके समय लोगों को दुःखी बनाना भी ठीक नहीं था। किन्तु लार्ड कर्जनके चित्तमें यह सुविचार नहीं समाया। उन्होने जिदके वशमें होकर गत सन् १९०५ ई०के १६ अक्टोबरको बंगालियोंके मस्तकपर बज्राघात किया।

मुसलमान समाजकी हानि ।

हम यह भी नहीं विचारते कि लार्ड कर्जनकी इस व्यवस्थासे मुसलमान समाजको कुछ लाभ मिला । क्योंकि इतने दिनोंतक पूर्वबंगालके निवासियोंमेंसे मुसलमान एक तिहाई थे । यदि बंगालकी गवर्नमेण्ट मुसलमानोकी किसी सामाजिक रीति नीतिपर हस्तक्षेप करनेका प्रयत्न करती तो बंगालके एक तिहाई निवासी अर्थात् अढाई करोड बंगाली मुसलमान उस कामका विरोध करते थे । सो अढाई करोड मुसलमानोंको चिढ़ानेवाले किसी काममें हस्तक्षेप करनेसे पहले गवर्नमेण्टको बहुत सोचना विचारना पडता था । किन्तु अबसे पश्चिम बंगालके ५० लाख मुसलमानो को तुच्छ नाचीज समझना पश्चिम बंगालके छोटे लाटके लिये सहज होगया । साढ़े चार करोड निवासियोंमे ५० लाखकी क्या गिनती हो सकती है ?

मुसलमान समाजमें इन दिनों क्रियाकी चर्चाका आदर होरहाहै । यह बात पूर्वबङ्गालसे पश्चिम बंगालमे अधिक दिखाई देरहीहै। पूर्व बंगालमें मुसलमानोकी संख्या पश्चिम बंगालसे अधिक होनेपरभी पश्चिम बंगालके मुसलमान विद्या और ज्ञानकी चर्चामें अधिक आग्रह रखतेहैं । इससमय पश्चिम बंगालको पूर्वबंगालसे अलग करदेनेसे पूर्व बंगालमें मुसलमान समाजकी दशा शिक्षाके सम्बन्धमे बिगडजायगी । थोडेसे लिखे पढे मुसलमानोंपर अधिकांश अशिक्षित मुसलमानोंकी उन्नति साधनका भार अर्पित होगा । पहले कई हजार मुसलमानोंके लिये जो भार कठिन जंच रहाथा वह पीछे कई सौ मुसलमानोंपर अर्पित होनेसे और भी कठिन होगा । इसलिये अब मुसलमानोंकी उन्नतिकी गति पहलेसे धीमी होजायगी। सौ वर्षसे अधिक दिनोंके प्रयत्नके पीछे पश्चिम बंगालके मुसलमान विद्याकी चर्चामें कुछ उन्नति करनेको समर्थ हुएहैं । उन लिखे पढे हुए मुसलमानोंकी सहायता पानेसे पूर्व बंगालके मुसलमानोंकी उन्नतिका मार्ग सुगम होरहाथा । अब वह मार्ग प्रभुओंकी कृपासे बहुत दिनोके लिये कांटोंसे अटक गया । पूर्वबंगालके मुसलमानोंकी उन्नतिहोनेमे फिर सौ वर्ष लग जायँगे ।

शिक्षित मुसलमान समाजका मुखपत्र "नवनूर" में मौलवी यकीन उद्दीन अहमद बी०ए० इस विषयमें लिखतेहैं,—बहुत दिनोंकी चेष्टाके पीछे सम्पूर्ण बंगालके मुसलमानोंने गत दोचार वर्षोंसे एकमतस्थ होना आरम्भ कियाहै । राजनीतिके मार्गमें क्योंकर अग्रसर होना चाहिये सो निश्चय कर थोडे दिनोंसे वे उस मार्गमें अग्रसर होने लगे थे । अब फिर गवर्नमेण्टकी नयी व्यवस्था हुई । नये प्रान्तमे नयी व्यवस्थाके साथ सामञ्जस्य रखकर अब मुसलमानोंको अग्रसर होना पडेगा । उनके इतने दिनोका प्रयत्न देखतेही देखते चूर चूर होगया । मुसलमान चाहे जिस प्रान्तके निवासी क्योंनहो, उनकी संख्या चाहे जितनी क्यो नहो वे ऊंची शिक्षा न पानेसे कभी उन्नति लाभ करनेको समर्थ नहीं होंगे । इसलिये उस स्थानसे जहा मुसलमानोंकी शिक्षाकी उन्नति होगी वहा मुसलमानोंका घना सम्बन्ध रहना जरूरीहै।किन्तु अनेक दिन और अनेक लोगोंकी चेष्टासे जो कलकत्ता शिक्षाका प्रधान केन्द्रस्थान बना है, उससे बंगविच्छेदके कारण मुसलमानोंका सम्बन्ध टूटगया । इससे मुसलमान समाजकी हानि थोडी नहीं हुई ।

इसीसे इस आन्दोलनमें बोगड़ाके नव्वाब अबदुस्सुभान चौधरी साहब, टांगाइलके जमीन्दार अब्दुल हालिम गजनवी, बारिस्टर मि० ए० रसूल, चटगांवके जमीन्दार अब्दुल कुद्दुस चौधुरी और सिद्धिक अहमद चौधुरी, खां बहादुर बदरुद्दीन हैदर, ब्राह्मण बेड़ियाके मौलवी शम्सउल-हुदा एम० ए०, बी० एल०, फरीदपुरके जमीन्दार मौलवी अनरुद्दीन खां चौधुरी महम्मद आली मजमान बी० ए० सीताकुण्ड माद्रासाका स्थापन करने वाले मौलाना ओबरदल हक, मौलवी मनिरज्जमा, मौलवी काजिम अली, मैमनसिंहके मौलवी हमीदउद्दीन मुहम्मद, इथींग-ञ्जके जमीन्दार गुलाम मौला चौधुरी साहब आदि अगणित देशमान्य मुसलमान शरीक होकर गवर्नमेण्टके कामका प्रतिवाद कररहेहैं।

प्रजाका प्रतिवाद।

भारतगवर्नमेण्टकी बंगविभागसम्बन्धी आज्ञाका अन्यायपन प्रकट करनेके लिये बंगदेशके अनेक स्थानोंमें सभाएँ हुई हैं। गवर्नमेण्टका प्रथमप्रस्ताव सुनकरही बंगदेशमें विषम आन्दोलन हुआथा। प्रजाने कमसे कम ६०० बडी बडी सभाओंका अधिवेशन कियाथा; हरएक सभामें १० हजारसे ४० हजार तक मनुष्योंकी भीड लगी थी। केवल यही नहीं देशके जो राजा महाराजा तथा जमीन्दार लोग इतने दिनोंतक गवर्नमेण्टकी आज्ञा मानते हुए निस्सार उपाधियां धारण करते हुए अपनेको धन्य मानते आयेहैं वेभी इसबार प्रतिवादकी धूममें संयुक्त हुए हैं। उत्तर पूर्व बंगालसे नाटोर और दिनाजपुरके महाराजा और काकिना, दिघापतिया तथा डिमलाके राजा और बोगड़ाके नव्वाब बहादुरने गवर्नमेण्टकी उस आज्ञाका प्रतिवाद कर विलायतमें स्टेट-सेक्रेटरीके यहा तार भेजेथे। पश्चिम बंगालसे सर महाराजा यतीन्द्रमोहन ठाकुर और कासिमबा-जारके महाराजा मनीन्द्रचन्द्र नन्दीने भारतमन्त्रीके यहां उक्त प्रकारसे अपनी अप्रसन्नता प्रकटकी थी। योंही पूर्व और पश्चिम बंगालके शिक्षित, अशिक्षित, धनी, दरिद्र, जमीन्दार हिन्दू मुसल्मान प्रजा आदि सब निवासियोंने उस प्रस्तावपर विरोध प्रकट कियाहै। सर गुरुदास बन्धोपाध्याय, डाक्टर रासविहारी घोष, श्रीयुक्त लालमोहन घोष, आनन्दमोहन वसु, सुरेन्द्रनाथ बन्धोपाध्याय आदि जो सब प्रधान भिन्न देशोंमें भी पूजित होते हैं उनकी बातपर भी ध्यानदेना कर्त्तारोंको उचित नहीं जंचा। भारतगवर्नमेण्टको अवश्यही अपने रिजोल्युशनमें विरोधके आन्दोलन निस्सार कहनेका साहस नहीं हुआ किन्तु तिसपरभी ८ करोड प्रजाकी दुःखभरी प्रार्थनापर उसने उपेक्षा दिखायी।

प्रथमवार उपेक्षा दिखाने परभी प्रजाके धनी दरिद्र पण्डित मूर्ख जमीन्दार तथा सर्व-साधारण लोगोंने फिर मिलकर सरकारकी सेवामें यह अनुग्रह प्रार्थना की है कि दुहाई हमको अलग अलग मत करो।

गत सन् १९०४ ई० के ७ अगस्टको कलकत्तेके टौनहालमें जिस बडीभारी सभाका अधिवे-शन हुआथा उसमें प्रायः २० हजार बंगाली और ४ हजार कालेजके विद्यार्थियोंने उपस्थित होकर सरकारी प्रस्तावका प्रतिवाद कियाथा। उस सभामे और और प्रस्तावोंके साथ साथ

यहभी निश्चय हुआथा कि वगदेशके अगच्छेदका प्रस्ताव त्याग न दिये जानेतक बगाली लोग किसी भी विलायती वस्तुको काममे नही लावेंगे। इस प्रस्तावके अनुसार कार्य्यकरनेके लिये लोगोंका आग्रह देखकरभी गवर्नमेण्टने अपना सङ्कल्प नहीं छोडा। उसने१ सेप्टेम्बरको सूचनादी कि सन् १९०५ ई० के १६ अक्टोबरको वगदेश विभाग किया जायगा। आसाम प्रान्तके चीफ कमिश्नर मि० फुलर नये प्रान्तके छोटे लाट होंगे। इस सूचनाके अनुसार उक्त दिन बगाल दो टुकडोमे बाँटा गया।

हमारा कर्त्तव्य।

अब हमारा कर्त्तव्य क्या है? लार्ड कर्जनके बर्त्तावसे बंगालियोंकी मोहभरी नीद टूट गयी है। परायी दयाके ऊपर निर्भर कर पराये मुखकी ओर ताकते रहकर अपना कर्त्तव्य न पालते हुए मोहसे आच्छादित रहकर हम कदापि अपनी भलाई नही करसकेंगे। अपने बलके भरोसे अब हमको कठोर कर्त्तव्यके मार्गपर चलना होगा। नहीं तो हमारा घोर अधःपतन और सर्वनाश रुकनेवाला नही है। हम जो उपाय अवलम्बन करनेको अग्रसर हुए हैं उसीको अवलम्बन करनाही अब हमारा एकमात्र कर्त्तव्य है। विलायती वस्त्र आदि परित्याग कर अपने अभियोगकी ओर इग्लेण्डके निवासियोको विशेष कपडेके व्यवसायियोको ध्यान देनेके लिये लाचार करना होगा। अब यही हमारा एकमात्र कर्त्तव्यहै। हमारे छोटे लाट और बडे लाटने सोचा था कि बंगालके बँटवारेकी सूचना प्रकट होतेही यह नकली आन्दोलन बन्द होजायगा। इसी विश्वासके वश उन्होने झटपट बँटवारेकी सूचना प्रकट की थी। हमारा विश्वास यह है कि अब अपने भ्रमको भलीभाति समझ गये होंगे।

लार्ड कर्जन और सर एण्ड्रू फ्रेजरने जिस सरकारी सूचनाको स्वदेशी वस्तु काममे लानेका रोकनेवाला विचारा था उसी सूचनाने बगदेशमे नवीन आन्दोलनका आरम्भ करदिया है। हमने लार्ड कर्जनके इस सूचना प्रकाशके दिनको अपने जातीय इतिहासका एक स्मरण करने योग्य दिन विचारतेहैं। साढेचार करोड़ बगाली यथाशक्ति एकत्र रहनेका प्रयत्न कररहे हैं, और साम्राज्यके घमण्डसे कूदनेवाले सरकारी कर्मचारी लोग उनको राजकीय वज्रके बलसे तितर बितर कर देनेका प्रयत्न कररहेहैं। लार्ड कर्जनका अभीष्ट था वगदेशको काटना। हमारा अभीष्ट है बंगाली जातिमे एकाको स्थिर रखना लार्ड कर्जनने राजशक्तिके बलसे अपनीप्रतिज्ञाका पालन कियाहै और हम ४॥ करोड बगाली लार्ड कर्जनकी मार छातीपर लेकर अपनी सम्मिलित चेष्टासे जन्मभूमिका अग कटना रोकनेको उद्यत हुएहैं। गत १ नवेम्बरको प्रजाकी ओरसे नीचे लिखी हुई सूचना प्रकाशित हुईहै,—

"जब कि सम्पूर्ण बगाली जातिकी सबप्रकार प्रतिवादके विरुद्ध बगदेशको दो भागोमे बाँटा है तब हम बगदेशके निवासी इस बँटवारेका चालकी बुराईसे बचनेके लिये सम्पूर्ण जातिकी स्थिरताको बनाये रखनेके उद्देश्यसे अपना पूरा सम्मिलित प्रयत्न काममे-लानेकी प्रतिज्ञा करतेहैं। यही हमारी सूचना। भगवान् हमारे सहायक हों"।

अब देखना चाहिये कि ४॥ करोड बगालियोका अभीष्ट पूरा होता है कि नही।

"लार्ड कर्जन आज साम्राज्यके घमण्डसे फूलकर अपने को सबप्रकारसे शक्तिमान विचार रहे हैं। भारतके विषयमें कुछ जानकारी न रखनेवाले निकम्मे भारतमन्त्री मि० ब्राडरिकने लार्ड कर्जनको प्रसन्न करनेके लिये करोडों प्रजाकी प्रार्थना अर्जी आदि फूंककर उडा देते हुए उनकी छातीमे तलवार धँसानेके प्रस्तावको मञ्जूर किया है। किन्तु हम उनके इस बर्त्तावसे नाराज होनेपर भी हताश नहीं हुए है। हम जानते हैं कि लार्ड कर्जन चाहे कितनेही शक्तिशाली क्यों न हों, पर उनके भी प्रभु अवश्यही हैं। भारतमत्री और उनके सहायक मंत्री समाज अपनेको चाहे कितनेही बलशाली क्यों न विचारा करें, किन्तु उनकी सच्ची दशा हम जानते हैं। विलायतके सर्वसाधारण लोग जिस घडी उनके विरुद्ध खडे हुए उसी घडी वे मानो हवासे तिनकेकी भाति उड गये। उन्होंने विलायतके सर्वसाधारण लोगोंका विश्वास खोदिया है। इसका फल यही है कि साम्राज्य के घमण्डसे कूदनेवाले इन पूछ्ताराओंका अस्त होगयाहै। इस समय साम्राज्यके घमण्डसे कूदनेवाली नीतिका विरोध करनेवाले उदार नीतिकर लोग इग्लेण्डकी राजनीति चक्र चला रहे हैं। हम यदि जडकी भाति अचल अटल न बनकर धीरज न खोदें औरका मर बन कर कर्त्तव्यके मार्गसे चलना बद न करे तो वर्त्तमान दशाका परिवर्त्तन अवश्य ही होगा।

सच्ची बात यह है कि राजवशोंकी भाति राजकर्मचारियोंका उठना और गिरना हम निरतर देखते आते हैं। आगे और भी कितना ही देखेंगे। राज्यके साथ राजकर्मचारियोंका सम्बध जिस प्रकार थोडे दिनोंके लिये है देशके साथ देशवासियोंका सम्बन्ध उस प्रकार थोडे दिनोंके लिये नहीं है। इस लिये हमारे सङ्कल्पकी दृढता होनेसे तथा तन मन वचनसे हमारे सदैव प्रयत्न करते रहनेसे राजकर्मचारियोंका क्षण भरका उद्यम कितने दिनोंतक स्थिर रह सकेगा? हम यह भी जानते हैं कि अंग्रेजोंके इस देशका राजा होनेपर भी उनकी दृष्टि राज्यसे बढकर वाणिज्यकी ओर दौडती है। भारतमे राज्यकर वे जितने लाभवान् होते हैं उससे कही अधिक लाभ वे भारतमे वाणिज्य करके उठाते है। इस देशमे अपनी राजशक्तिका घटना देखनेसे अगरेज जितने विचलित होते हैं उससे कहीं अधिक भयका सञ्चार उनके जीमें वाणिज्यका घटना देखनेसे होता है। सच्ची बात यह है कि भारतके वाणिज्यके लिये ही विलायत वासियोंके यहा भारतके साम्राज्यका इतना आदर है। एक भारतहीमें इग्लेण्डका वाणिज्य सब दूसरे स्थानोंसे अधिक होताहै। उस वाणिज्यकी यदि किसी प्रकारसे हानि हो, यदि किसी प्रकारसे भारतमे इग्लेण्डका वाणिज्य घटे तो अंगरेज निश्चयही घबराकर वाणिज्यके मार्गका कण्टक दूर करनेके लिये निश्चयही सब प्रकार प्रयत्न करेंगे। उस समय सैकडो लार्ड कर्जन और हजारो ब्राडरिकका काम देखते ही देखते बदल दिया जायगा। उस समय इंग्लेण्डके सर्व साधारण लोग भारतीय प्रजाको प्रसन्न करनेके लिये उनकी प्रार्थना स्वीकार करनेमें निश्चयही ध्यान देंगे।

इसी विश्वासके वशमें होकर हमने बंगालका बँटवारा बन्द करनेके लिये विलायती वस्तुओंका बर्त्ताव यथाशक्ति बन्द करनेका संकल्प कियाहै। हमारा स्पष्ट विश्वास यहहै कि यदि इस सकल्पमें हम अटल बने रहसकेंगे तो निश्चयही हमारी कामना पूरी होगी, कटाहुआ मुण्ड बोलने लगेगा, कटाहुआ बगाल जुड़जायगा। इसी बीचमे हम जितनी दृढता दिखाचुकेहैं उसीसे विलायती वणिकोंको चौंकना पड़ाहै। यदि हम अपने संकल्पको दृढ रखसकेंगे, यदि सब प्रकार प्रय-

त्नोसे विलायती वस्तुओंको त्यागसकेंगे तो हमारी आशा पूरी होगी, निश्चयही जन्मभूमिका अगच्छेद बंद होजायगा।

इस विषयमे जातीय महासभाके सभापति माननीय गोपाल कृष्ण गोखले महाशयने गत अधिवेशनमें जो कुछ कहाथा वह हरेक बगालीको स्मरण रखना चाहिये। उन्होंने कहा था कि, "अमंगलसे भी मगलकी उत्पत्ति होतीहै। बंगालमे जो कुदिन हुआ था तथा अभीतक वनाहुआ है उसका एक शुभ फल इसी बीचमे दिखाई देने लगा है। इस बगच्छेद विषयमे लोगोंके चित्तका भाव जैसा प्रकाश हुआहै वह हमारे जातीय इतिहासमें स्मरण रखने योग्य होगा। अगरेजी राज्यमे इसबार पहले पहल सब श्रेणियोंके भारतवासी लोग जाति और धर्मका विचार न कर एकही उद्देश्यसे उत्साहित होकर एकही सम्मतिसे सर्व साधारणके एक हितकर विषयका प्रतिवाद कररहे हैं। सम्पूर्ण प्रान्तोंमें सच्चा जातीयभाव जग उठा है—सब लोग व्यक्तिगत स्वार्थ, विद्वेश, झगडे आदि और कुछ न हो तो थोडे दिनोंके लिये भी भूलगयेहैं। बगाली लोग राजकर्मचारियोंकी उद्दण्डताके विरुद्ध जिसप्रकार साहसके साथ दृढतापूर्वक खडे हुएहैं उससे सम्पूर्ण भारतवासी चौंककर पुलकित हुएहैं। इस प्रकार आन्दोलनमे कुछ थोडीसी ज्यादती दिखाई दे सकतीहै, किन्तु उससे विचलित होनेका कोई कारण नहीं है। इस घटनासे सर्व साधारण लोगोने जो शक्ति प्राप्त करलीहै उसके लिये बगालियोंका सबको कृतज्ञ रहना पडेगा। अवश्यही बगालके प्रधानोंकी इस विषयमें अगणित बाधा विघ्नोंका अतिक्रम करना होगा। यह कहना अनुचित न होगा कि अभी केवल बाधा विघ्नोंकी सूचना मात्र हुईहै। किन्तु मै जानताहू कि इन बाधाविघ्नोंके झेलनेमें वे दुःखी नहीं होंगे और इनके झेलनेमें जितने स्वार्थ विसर्जनका प्रयोजन है सो वे प्रसन्न मनसे करेंगे। सम्पूर्ण भारतवासी बगालके प्रधानोंके सहायक बनगयेहैं, इस विषयमें बंगदेशवासी दूसरे प्रान्तोंकी सहानूभूति पावेंगे। इसमें यदि बंगालियोंको बदनामी सहनी पडेगी तो वह बदनामी हमलोगोंकी भी होगी। और बगालियोंको स्मरण रखना चाहिये कि उनके ऊपरही इस सम्पूर्ण भारतका मान बनाये रखनेका भारहै।

बट्टेसे हानि।

सभी लोग जानते होंगे कि सन् १९०३ ई०मे चादीका मूल्य घट जानेसे बट्टेका भाव घटकर १३ पेनीका एक रुपया हुआथा। आगे भारत गवर्नमेण्टने इस देशके रुपयेका मूल्य १६ पेनी कर दिया। बट्टेका यह भाव ठहरादेनेसे गवर्नमेण्टका कुछ कुछ सुभीता तो हुआ। परन्तु तबसे भारतके किसान और कारीगरोंको प्रतिवर्ष २२ करोड रुपयेकी हानि सहनी पडती है।

इस नवीन प्रबन्धसे भारत गवर्नमेण्टका खर्च वार्षिक ५ करोड रुपया घटगया। होमचार्जके लिये उसको जितने रुपये विलायत भेजने पडते थे उससे अब ५ करोड रुपये कम भेजने पडते हैं। क्योंकि पहले इस देशसे १ रुपया भेजनेसे वहाके प्रभुलोग १३ पेनीकी प्राप्ति स्वीकार करते थे। इस नये प्रबन्धके होजाने पर वे एक रुपया पाकर १६ पेनीकी प्राप्ति स्वीकार करने लगे। इस उपायसे गवर्नमेण्टकी प्रतिवर्ष ५ करोड रुपयेकी बचत हो रहीहै।

किन्तु यह हमारे लिये आनन्दकी बात नहीं है। और विषयकी हानि बिना हुए यदि हमारे होमचार्जका प्रमाण घटजाता तो हम आनन्द पासकते। किन्तु होमचार्जके ५ करोड बचानेमें हमारे २२ करोड रुपयोंकी तिलाञ्जली हो रहीहै। पाठक! जानते होंगे कि प्रतिवर्ष इस देशसे प्रायः १४० करोड रुपयों के मालकी विदेशोंमे रफ्तनी होतीहै। इस मालका अधिकांश खेतीका है। इसलिये बाहरी वाणिज्यकी घटी बढीसे हमारे देशके किसानोंकी भलाई बुराईका घना सम्बध है। अब विचारिये कि बट्टेका भाव १६ पेनी निर्दिष्ट होजानेसे उन किसानोंकी हानि कैसी होरही है। मान लीजिये कि इस देशका कोई माल पहले-१३ पेनीमें विदेशोंमें बिकता था, अबभी अवश्यही वह माल वहा १३ पेनीमें बिकरहा है। किन्तु १३ पेनीके लिये पहले जहा १) रुपया मिलता था तहा अब ।।।-) आना मिल रहाहै। इस प्रकारसे हरएक रुपयेमें ≥) तीन आनेकी हानि होनेसे गेहू आदि रफ्तनीसे हमारे किसानोंकी हानि प्रतिवर्ष लगभग २२ करोड रुपयेकी होरहीहै।

चादीका मूल्य घटनेके साथ साथ बट्टेका भाव जिस प्रकार घट रहाथा वैसा घटने दिया जाता तो अबतक एक रुपयेका मूल्य ११ पेनी होगया होता। ऐसा होनेसे हम १३ पेनीका माल देकर १≥) एक रुपया तीन आने पाने लगते। चांदीका मूल्य घटनेके साथ साथ बट्टेका भाव जितना घटता रहता विदेशी मालका मूल्य उतनाही बढता रहता, देशी कारीगर लोग विदेशी कारीगरोंका मुकाबिला करनेका उतनाही सुभीता पाते। किन्तु गवर्नमेण्टके बट्टेका भाव निर्दिष्ट और स्थायी कर देनेसे इस सुभीतेसे देशके किसान और कारीगर वञ्चित हुए हैं। उल्टे उनकी बडीभारी हानि होरही है। केवल बाहरी वाणिज्यसे ही २२ करोड रुपयेकी हानि होरही है। इसके उपरान्त विदेशी कारीगरोंसे मुकाबिला करनेमें देशी कारीगरोंको जितनी हानि सहनी पडरही है उसका हिसाब कौन लगावेगा। बात यहहै कि रुपयेका ऐसा नकली मूल्य ठहरा देना द्रव्य नीतिका अनुकूल नही है।

राजकर्मचारीलोग कहतेहैं कि, इसप्रकार उपायसे रुपयेका मूल्य ठहरादेनेसे किसानोंकी जो हानि होनेकी सम्भावना थी वह विदेशके बाजारोंमे उनके मालका मूल्य बढजानेसे नही हो रही है। वे अब पहलेसे अधिक मूल्य पारहे हैं। इसलिये इस विषयमे फर्य्यादका कोई कारण नहीं रहा है। इस युक्तिको हम निस्सार समझते हैं। किसानोंके सौभाग्यसे विदेशी बाजारमें जब उनके मालका मूल्य बढगयाहै तब उनको उस वृद्धिका पूरा फल भोगनेदेना था। इसमें सदेह नही हैं कि बट्टेका भाव १६ पेनी न कर देनेसे इस देशके किसान औरभी अधिक लाभवान होसकते। क्या यह बात अस्वीकार की जासकतीहै कि गवर्नमेण्ट कानून बनाकर उसके सहारे उनको उस लाभसे वञ्चित कररहीहै? सब देशोंके ही किसान अन्नका मूल्य बढजानेका पूरा नफा पारहेहैं; केवल भारतके किसानोका भाग्य ऐसा खोटा है कि वे उसका पूरा फल भोगने नहीं पाते। क्या यह खेदकी बात नही है? इसी प्रकार ॥=) दस आने मूल्यकी चांदीका टुकडा देकर सोलह आना लेनाभी क्या कोई अच्छी नीति है? बाजारमें चांदीका मूल्य घट गयाहे, किन्तु कानूनके बलसे प्रजा उसका पूरा फल लाभ करनेसे रोंकी जारहीहै। यह कैसा प्रजाप्रेम है सो हमारी बुद्धिमे नही आता।

लार्ड कर्जनने कहाहै कि बट्टेके इस नये प्रबन्धके हेतु गवर्नमेण्ट नफेके पौने दस करोड़ रुपयेको विलायतमे लगादेनेमे समर्थ हुई है। जिससे सरकारी खजानेमें वार्षिक २९ लाख ९० हजार रुपयेकी आमदनी बढ़ीहै। बडेलाटकी इस बातपरभी हम प्रसन्न नही होसकेहैं। देशवासियोंको वार्षिक २२ करोड रुपयेकी हानि पहुँचाकर गवर्नमेण्ट को जो रुपये मिले हैं वह विलायती सूदमें लगादिया गयाहै। किन्तु इस देशके किसानोको अधिक सूद देनेपरभी उधार नही मिलता है। क्या यह बात आनन्ददायक है?

गवर्नमेण्टने बट्टेका नकली भाव ठहराकर देशी रुपयेका मूल्य घटादिया और साथही माल उपजानेवाले किसान तथा कारीगरोंको बड़ी भारी हानि पहुँचायी। इस हानिको किसी कदर भरनेके लिये टंकसाल बन्द करदी गयी। इसका फल यही होरहा है कि प्रतिवर्ष प्रयोजनसे कम रुपये ढल रहेहैं। चांदी सस्ती होनेसे देशमे रुपयेभी सस्ते होनेचाहिये थे। किंतु राजकर्मचारियोंने विदेशोंमें रुपयेका मूल्य सस्ता कर दिया है, १३ पेनीके लिये एक रुपयेके बदले ॥।−) आने पानेका प्रबन्ध कियाहै। और देशकी टकसाल बदकर भारतीय व्यवसायियोंके नित्यप्रति व्यवहारके रुपयेको महँगा और दुर्लभ बनादिया है। बाजारमे प्रयोजनके अनुसार रुपये न रहनेसे व्यवसायियोंको अधिक सूद देकर रुपये सग्रह करना पड रहाहै। जिस सवारिनके बदले पहले २२ रुपये मिलते थे उसके बदले अब १५ रुपयेसे अधिक नही मिलरहा है। सवारिनके पूर्व मूल्यके साथ वर्त्तमान मूल्यको मिलानेसे पाठक इस बातको समझ सकेंगे।

प्रभुओंके अवलम्बन कियेहुए नकली उपायसे देशी रुपयेके बाजारमें इसप्रकार दुरंगी गडबड खडी हो जानेसे भारती माल उपजानेवालोकी वार्षिक २२ करोड़ रुपयेकी हानि होरही है। यूरोपके देशोंमें खेतीके मालका मूल्य बढजानेसे इस हानिका अनुभव इस देशके किसानोंको भली भांति नहीं हुआ है। किंतु कारीगरोंको इसका पूरा पूरा अनुभव हो गयाहै। बगालमें कोयलेके व्यवसायियोंको कैसी हानि हुई है सो आनरेबल मि० केबलने सन् १९०४ ई० में बजेटका विचार करते समय कानूनसभामें बडे लाटके सम्मुख इस प्रकारसे सुनादिया है,—

The trade in coal at the present moment presents a very curious spectacle. On the one hand collieries in Bengal are with few exceptions being worked on the barest margin or being closed altogether, while on the other hand coal from abroad is being delivered almost at our doors

अर्थात् बगालमें कोयलेकी अधिकाश खानिया यातो प्रायः विना नफेके काम कररही हैं अथवा प्रायः बन्द होगयी हैं। किन्तु विलायती वा विदेशी कोयला बडेही सस्ते मूल्यमें हमारे दरवाजेपर मँगाया जारहाहै। यदि राजकर्मचारी लोग रुपयेका मूल्य ठहरा देनेमे हाथ न डालते तो विदेशी कोयलावाले एक सवारिन मूल्यका कोयला २२ रुपयेमें बेचनेको लाचार हुए होते। किन्तु स्वजातिप्रेमी सरकारकी कृपासे अब वे उस कोयलेको १५) रुपयेमे बेचरहे हैं। इसलिये देशी कोयलेकी खानिवाले मुकाबिलेमें हट रहेहैं। उनके मुकाबिलेमें असमर्थ होनेके और और कारणभी हैं। किन्तु यदि टंकसाल बद न होती तो सवारिनके बदले अबसे अधिक रुपये अवश्यही मिलते। बंगालके कोयलेवाले अपने मालका मूल्य अधिक पाते।

दूसरे व्यवसायोंकी भी कम कुगति नहीं हुई है। पहले कपासके व्यवसायकी ओर ध्यान दीजिये। सन् १८९८ ई० में बम्बईमें कपड़ेकी ८२ कलें थीं। इस समय घटकर ८० होगयी हैं। उक्त वर्ष भारतमें सब समेत १८५ कपड़ेकी कलें थीं; सन् १९०० ई० में उनकी संख्या बढकर १९३ हो गयी थी। किंतु सन् १९०२ ई० में घटकर १९२ हो गयी। इसके उपरांत बहुतेरोंकी दशा पहलेसे खराब होगयी है। कल जारी करनेमें लोगोंके जीकी लालसा अब बहुत अधिक हुई है, किंतु कलोंकी दशा अब पहले बिगड़गयीहै। राजशक्तिकी प्रतिकूलतासे व्यवसायमें लोगोंका नफा घट रहाहै। नकली रुपयेके लिये और टकसाल बंद होनेसे हानिका प्रमाण दिनपर दिन बढता जाताहै। नीलकी दशाभी ऐसीही शोचनीय हुई है। सर एडवर्ड ला कहते है,—"तुम सस्ता माल बनानेका प्रयत्न करो, सस्तेमें माल बेचनेका प्रबन्ध करनेसे ही तुम नफा उठाओगे।" व्यवसायी लोगभी यह बात जानते हैं। उनको व्यवसायका यह मूल तत्त्व समझानेके लिये सर एडवर्ड सरीखे मनुष्यके उपदेशक बनानेका कोई प्रयोजन नहीं था। वे टकसालमें पहलेकी भांति रुपये ढालनेकी आज्ञा दें, देशी व्यवसायोंकी बिना प्रयत्नही उन्नति होगी। देशी व्यवसायी जहां अब ॥।-) आने पा रहेहैं तहां १) पावेंगे, जहां १५) रुपये पा रहेहैं वहां सहजहीमें २२) रुपये पावेंगे। मि० जे० एन० टाटा महाशयने दिखाया है कि, सन् १८९५ ई० की तुलनासे "स्टाकके" कारबारमें व्यवसायियोंकी अब फी सैकडे ५०) रुपयेकी हानि होरही है।

प्रभुलोग कहतेहैं कि, विलायतके प्रसिद्ध द्रव्यनीति धुरन्धरोंके उपदेशसेही रुपयेका नकली मूल्य करादिया गयाहै। इसलिये उनकी भांति विज्ञमहाशयोंका भ्रम दिखानेको अग्रसर होना हमारे लिये कोई अच्छी बात नहीं है। किन्तु यह पूछना है कि क्या विलायतके प्रसिद्ध द्रव्यनीतिज्ञोंने अपनी इच्छासे तथा सहजहीमें उस व्यवस्थाका समर्थन किया था? लार्ड लैन्सडौनके दिनों क्या भारत गवर्नमेण्टने मुद्रसभाके सभासदोंको नहीं जताया था कि रुपयेका नकली मूल्य न ठहरा देनेसे भारतगवर्नमेण्टको दिवालिया होना पडेगा? इस प्रकारसे डरानेपर यदि सभासदोंने प्रभुओंकी व्यवस्थाका अनुमोदन किया हो तो उसके लिये हम उनको दोषी नहीं ठहरासकते। गवर्नमेण्टका अधिक आग्रह और व्यर्थ भयही इस बड़ीभारी हानिकारी व्यवस्थाका मूलकारण है।

इस युक्तिके उत्तरमें सर एडवर्ड ला महाशय कहतेहैं कि बाहरी वाणिज्यकी अधिकाई सचमुच भारतमें कुछभी नहीं घटीहै, उल्टे बहुत बढ़ी है। सन् १८९५ ई० मे पटुएके व्यवसायकी जैसी उन्नति थी उससे इस समय दूनी हुई है। पहले टाट बनानेके इस देशमें १० हजार करघे चलतेथे, अब २० हजार चलते है। सन् १९०० ई०से १९०२ई० तक तीन वर्षोंमें आमदनीसे भारतीय मालकी रफ्तनी ७२ करोड़ रुपयेकी अधिक हुई है। सो यह बात ठीक नहीं है कि नकली रुपयेके लिये व्यसायकी हानि होरहीहै।

द्रव्यमन्त्री महाशयके इस उत्तरसे हम प्रसन्न नहीं होसके। एक भारतवर्ष छोडकर पृथ्वीमे और कहीं पटुएकी इतनी अधिक खेती नहीं होती। किन्तु सब पश्चिमी देशोंमे पटुएका आदर दिनपर दिन बढ़रहा है। इस हेतु पटुएके व्यवसायकी उन्नति बिना हुए नहीं रह सकती। अब रफ्तनी बढ़नेकी बातभी विचारना चाहिये। द्रव्यमन्त्रीने तीन वर्षोंमें ७२ करोड रुपये अधिक मालकी रफ्तनी होते देखकर आनन्द प्रकट किया है। किन्तु वे यदि एकवार दूसरे

पश्चिमी देशोके वाणिज्यविस्तारके हिसाबको स्मरण करते तो ऐसा आनन्द प्रकाश करनेमें लज्जित होते। पाठक! एकबार अमेरिकाके वाणिज्यविस्तारके हिसाबकी ओर ध्यान दीजिये, ऐसा करनेसे हमारी बातका अनुभव कर सकेगे। सन् १८९७ ई०में अमेरिकाके रफ्तनी मालका मूल्य आमदनी मालसे ६३९०००००० रुपये अधिक था। सन् १९०० ई०मे रफ्तनी मालका मूल्य ११७०००००००और सन् १०९१ ई०में २०३७०००००० रुपये बढगया। इस हिसाबके साथ भारतके वाणिज्यका हिसाब मिलाना मानों ढिठाई है। "हितवादी"

सन् १९०१ ईस्वीकी मर्दुमशुमारी।

अङ्गरेजी भारतमें मनुष्यसंख्याकी तुलना।

	सन् १८९१ ई०की गिनती	सन् १९०१ ई०की गिनती
वङ्गाल विहार उडीसा	७,१३,४६,९६१	७,४७,४४,८६६
आसाम	५४,७७,३०२	६१,२६,३४३
बरार	२८,९७,४९१	२७,५४ ०१६
बम्बई	१,८८,७८,३१४	१,८५,५९,५६१
मध्य प्रदेश	१,०७८४,२९४	९८,७६,६४६
मदरास	३,५६,३०,४४०	३,८२,०९,४३६
पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त	१८,५७,५०४	२१,२५,४८०
पञ्जाब	१,९०,०९,३४३	२,०३,३०,३३९
आग्रा	३,४२,५३,९६०	३,४८,५८,७०५
अवध	१,२६,५०,८३१	१,२८,३३,०७७

बिहार, उडीसा, छोटानागपुर, मध्यप्रदेश और मदरास प्रान्तोंमें पुरुषोसे स्त्रियोकी सख्या अधिक है। खास बगाल, उत्तर वंगाल, आसाम, ब्रह्मदेश, कुर्ग, बलूचिस्थान, पञ्जाब, अजमेर, राजपुताना और काश्मीरमें स्त्रियोंसे पुरुषोकी सख्या अधिक दिखाई देती है। काश्मीरमे पुरुषोंकी संख्या स्त्रियोंसे ९ गुणी अधिक है। यूरोपमें सर्वत्र पुरुषोकी संख्या थोडी है।

	कुल मनुष्य सख्या।	गांवोके निवासी।
बृटिश भारतमें	२३,२८,९९,५०७	२०,९७,५७,२५०
उसमेंसे वलूचिस्थानमें	३,०८,२४६	२,६८,२१३
ब्रह्मदेशमें	१,०४,९०,६२४	९५,००,६८६
,,	शहरोंकी सख्या।	ग्रामोंकी सख्या।
सम्पूर्ण भारतमे	२,०९०	६,६६,९३६
वलूचिस्थानमे	६	१,२६४
ब्रह्मदेशमें	५२	६०,३०५
वंगदेशमे	१८२	२,०३,४७६
बम्बई प्रान्तमें	२०२	२५,६९९
मदरासप्रान्तमें	२३४	५४

मुसलमानोंकी संख्या।

सम्पूर्ण भारतसाम्राज्यमे	६,२४,५८,०७७	अर्थात् फी हजार	२१२
बगाल (प्रेसिडेन्सी) मे	२,५४,९५,४००	,, ,, सैकडे	३२
पञ्जाब और सीमाप्रान्तमें	१,४१,४१,१२२	,, ,, ,,	५३
आगरा अवध युक्तप्रान्तमे	६९,७३,७२२	,, ,, ,,	१८
बम्बई प्रान्तमें	४६,००,०००	,, ,, ,,	१८
मदरास, कोचीन और त्रवाणकोरमे	२७,३३,०००	,, ,, ,,	६॥
आसाममे	१५,८१,३१७	,, ,, ,,	२६
हैदराबादमें	११,५५,७५३	,, ,, ,	१०

बृटिशभारतमें बालक और युवाओंकी संख्या।

			भारत साम्राज्य।
५ वर्षसे	१० वर्षतकके	१,६५,९५,८४६	
१० ,,	१५ ,, ,,	१,४७,१६,७९२	१,८८,८०,६५८
१५ ,,	२० ,, ,,	९९,९८,४७७	१,२९,४२,३२२
२० ,,	२५ ,, ❀ ,,	९१,४९,२२७	१,१७,५७,६४३
२५ ,	३० ,, ,,	१,०२,८६,५६०	१,३१,३३,४३७

सम्पूर्ण भारतमें विकृतोंकी संख्या।

	पुरुष।	स्त्री।
पागल	४१,३१७	२४,८८८
बहरे और गूंगे	९२,६५५	६०,५१३
अन्धे	१,८०,७६२	१,७३,३४२
कोढ़ी	७२,४०३	२४,९३७
पचास वर्षसे अधिकके अन्धे	७३,६०९	८८,०६३

विकृत।

बृटिश भारतमे कुल	५,८४,२०५	देशीराज्योमे ८४,४२७
तखमीना ३९७ लोगोंमे	१	तखमीना फी ७३९ लोगोंमें १

पागल।

बृटिश भारतमे	५८,२२५	देशी राज्योमे ७,९९०
तखमीना ३,९८३ लोगोंमे	१	तखमीना ८,७१७ लोगोंमे १

अन्धे।

बृटिश भारतमें	३,१०,५८१	देशी राज्योमे ७,४३,५२३
तखमीना	७४६ लोगोंमे १	तखमीना १४३५ लोगोंमे १

❀ इस अवस्थाकी स्त्रियां अधिक हैं।

महाभारतमे महर्षि नारदजीने महाराज युधिष्ठिरसे पूछा था,–

"अन्धे, गूगे, लंगडे, बिकृत, बन्धुविहीन, और परिव्राजकोको आप पिताकी भांति पालन तो करते हैं ?"

सम्पूर्ण भारतकी भाषानुसार मनुष्यसंख्या।

बंगलाभाषा	४,४६,२४,०४८	राजस्थानी	१,०९,१७,७१२
पश्चिमीहिन्दी	३,९३,६७,७७९	कर्नाटकी	१,०३,६५,०४७
पूर्वीहिन्दी	२,०९,८६,३५८	गुजराती	९९,६८,५०१
बिहारी	३,७०,७६,९९०	उडिया	९६,८७,४२९
आन्ध्र (तेलुगू)	२,०६,९६,८७२	मालय	६०,२९,३०४
मराठी	१,८२,३७,८९१	सिन्धी	३०,०६,३९५
पञ्जाबी	१,७०,७०,९६१	सन्थाली	१७,९०,५२१
तामिल	१,६५,२५,५००	आसामी	१३,५०,८४६
अगरेजी	२,५२,३८८		

देशी कृस्तानोंकी संख्या।

	अङ्गरेजी प्रान्तोंमे.		रजवाडोंमें.
कुल	१६,७५,२८८	कुल	९,८९,०२५
बंगाल	२,२४,७१०	बंगाल	३,०५३
आसाम	३३,५९५	..	...
बम्बई	१,७१,२१४	बम्बई	१०,१०५
मध्यप्रदेश	१७,७९१	मध्य भारत	३,७१५
मदरास	९,८३,८८८	मदरास	९,०६,७८९
संयुक्तप्रान्त	६८,८४१	राजपुताना	१,३६८
पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त	५३३	मैसूर	३९,५८५
पञ्जाब	३७,६९५	हैदराबाद	१५,३५७
ब्रह्मदेश	१,२९,१९१	बडौदा	७,५४३
और और प्रान्त	७,८३०	और और प्रान्त	१,५१०

सम्पूर्ण भारत साम्राज्यमे युरोपियनोकी संख्या		१ ६९,६७७
,, ,, ,, युरेजियनोंकी	,,	८९,६५१
कुल देशी कृस्तानोकी	,,	२६,६४,३१३

देशी कृस्तानोमे कोल, भील, सन्थाल, गोंड, खासिया, मुण्डा आदि अनार्य्य, पहाडी असभ्य जातिके लोगही अधिक हैं।इसके कारणके विषयमें सेन्सरिपोर्टके३८९पृष्ठमे इसप्रकार लिखाहुआहै,

They look to the missionaries for help in their disputes with their landlords, and they see in Christianity a means of escape from the payment of fines imposed on witches and on those who are supposed to have neglected the demons, and from persecution to which they would be subjected if unwilling to meet the demands of the Bhuts and their earthly servants.

विलायतके क्रस्तान २२७ सम्प्रदायोंमे बँटे हुए हैं।

Those who are acquainted with the very numerous religious sects that exist in England and America, will not be disposed to be surprised at the length of the list given under the religion Hindu. Census Report (Bom. Pt. I)

बृटिश भारतमें मृत्युसंख्या।

	हर एक हजारमे.	कुलमृत्यु.
सन् १८८०ई०मे	२४	३९,२८,६३१
,, १९०१ई०मे	२९ ॥	६५,९६,३७७
,, १९०२ ,,	३१ ॥	७०,६२,४१७
,, १९०३ ,,	३५	७८,१८,१८३

जङ्गली जानवरोंसे मृत्यु।

(सन्१८७९ई०से सन्१९०३ई०तक)

	सांपके काटनेसे	जानवरोकेहमलेसे
मनुष्य	५,२४,७२६	७२,३९७
गौ भैंस आदि	१,२४,०२४	१७ ४०,७४
सन् १९०२ई०मे मनुष्य	२३,१६७	२,५३६
,, १९०३ ,, ,,	२१,८२७	२,७४९
,, १९०२ ,, ,, गौ भैंस आदि		८३,९९९
,, १९०३ ,, ,,		८६,२३२

शराबकी दूकानोंकी संख्या।

सन् १८९४-९५ ई०	८०,५२१
,, १९०१-२ ,,	८४,९२५
,, १९०२-३ ,,	८६,७४५

शिक्षाविषयकी फेहरिस्त ।

सम्पूर्ण भारतमें शिक्षित पुरुषोंकी संख्या ।

(सन् १९०१ ई०की मर्दुमशुमारीसे)

	कुल मनुष्य सख्या	वे जो लिखपढ़ सकते हैं.	वे जो अगरेजी जानते हैं.
हिन्दू	१०,५१,६३,४३२	९१,२२,२७६	६,७५,४२९
मुसलमान	३,१८,४३,५६५	१९,२७,१५१	१,०१,७१८
सिख	१२,४१,५४३	१,२१,५२०	६,४५८
जैनी	६,९१,७८७	३,२५,२८९	९,१८३
बौद्ध	४६,८०,३८४	१८,७९,८७९	११,१२६
पारसी	४८,०८६	३६,३४३	१९,५९६
कृस्तान	१५,०८,३७२	४,३९,६१३	१,९४ ४९५
दूसरे धर्मवाले	४२,६४,९३७	३८,०००	३,३१४
कुलजोड़	१४,९४,४२,१०६	१,४६,९०,०८०	१०,२१ ३१९

लिखी पढी स्त्रियोंकी संख्या ।

हिन्दू	१०,१९,४५,४३६	४,७७,३८७	९,४४२
मुसलमान	२,९८,४९,१४४	९१,०५९	१ ६७६
सिख	९,५०,८२३	७,११५	४१
जैनी	६,४२,२४९	११,४५५	८१
बौद्ध	४७,९६,३६८	२,०६,६३०	४७४
पारसी	४५,८८३	२४,६६९	४,४११
कृस्तान	१४,१०,८४३	१,७७,०३४	८६,८०७
दूसरे धर्मवाली	४३,३२,०५४	३,९९२	९८०
कुलजोड	१४,३९,७२,८००	९,९६,३४१	१,०३,९१२

वगदेशमें लिखेपढेहुए पुरुषोंकी संख्या ४०,९७,४७४

,, लिखी पढी हुई स्त्रियोंकी ,, २, ९९,९००

विद्यालयोंकी संख्या।

(सन् १९०४ ई० ३१ मार्चतक)

	सन् १८९६ ई०	सन् १९०० ई०	सन् १९०३ ई०
गवर्नमेण्टसे चलनेवाले	१,२१०	१,०८०	१,३८२
स्थानीय चन्द और म्युनिसिपलिटीसे चलनेवाले	१८,४०४	१७,६९५	२०,५७०
रजवाडोमे	२,७३१	३,५७७	३,३३२
सरकारी सहायता पानेवाले	६३,५९८	६२,९६९	६९,४९२
	[सन् १८९५ ई० मे]		
विना सरकारी सहायताके	२४,६१०	१९,५७९	१८,४१७
प्राइवेट	४४,९३२	४२,४६०	४२,६०८
		१,४७,३६०	१,५५,७६१

स्कूल कालेज और विद्यार्थियोंकी संख्या।

	पुरुषोंके लिये	स्त्रियोंके लिये	कुल विद्यार्थी।
आर्टस् कालेज	१३६	१२	१८,६१४
व्यवसायशिक्षा कालेज	४५	०	६,००४
सेकेण्डरी स्कूल	५,२५२	४८९	६६,२२,८७
प्राइमरी ,,	९७,७४४	७,९९१	३५,१३,१५६
ट्रेनिङ्ग ,,	२३२	६२	७,०६१
शिल्प स्कूल	८८	०	५,०७२
वाणिज्य सम्बन्धी	९	०	५०९
कृषि शिक्षा सम्बन्धी	७	०	३०९
दूसरे विद्यालय	१,११४	०	२४,१०६

धर्मानुसार विद्यार्थी और विद्यार्थिनियोंकी संख्या।

	सन् १८९२ ई०मे	सन् १९०३ई०३१ मार्च	सन् १९०४ई०३१ मार्च
हिन्दू	२६,६१,१३६	३१,१९,२६३	३२,२६,४८०
मुसलमान	८,९४,२४१	१०,१५,०६७	१०,७१,५३९
बौद्ध पारसी आदि	२,८५,५१५	३,८९,२९७	४,०७,५३५
देशी कृस्तान	९८,४२३	१,३९,०५७	१,४६,८३२
युरोपियन और फरङ्गी	२७,५००	३१,५०६	३१,७२७
केवल लडकियोंकी सख्या	१,६५,१३५	४,७२,१७१	५,०४,७९७
कुल विद्यार्थी सन् १८९६ई०—४३,६७,५५४		४६,९३,२१२	४८,८४,११३
ग्राजुयेट और अण्डरग्राजुयेट - सन् १९०१ ई०	८,३५६	८,०४९	८७९४

प्रान्तोंके अनुसार विद्यार्थी और विद्यार्थिनियोंकी संख्या ।

(सन् १९०४ ई० ३१ मार्च)

प्रान्तोके नाम ।	विद्यार्थियोंकी सख्या ।	विद्यार्थिनियोंकी सख्या ।
वंगदेश	१७,३०,३१४	१,६२,२६०
संयुक्तप्रान्त	४,७६,८३४	२६,०४८
पञ्जाब	२,४१,८५४	२९,३७६
मध्यप्रदेश	२,०७,९९६	११,९३५
बम्बई	४,६०,४३८	८७,९२२
मदरास	७,८४,६२१	१,३९,१३९
दूसरे प्रान्त	४,२६,२१२	५८,८६४
	कुल जोड ४३,६८,५६९	५,१५,५४४

वङ्गदेशमें ग्राजुयेट और अण्डरग्राजुयेटोंकी संख्या ।

सन् १९०१–२ ई०	२,३७९
,, १९०२–३ ,,	२,२२२
,, १९०३–४ ,,	१,९४०

समाचार पत्रोंकी संख्या ।

	सन् १९०२–३ ई०	सन् १८८७ ई०
अखण्ड वगदेशमे	१०२	१२१
बम्बई प्रान्तमे	२०९	२०२
मदरास प्रान्तमें	१०७	७९
सयुक्त प्रान्तमें	११३	..
पञ्जाबमे	१२४	८७

रेलवेका हिसाब ।

	माइल ।	मुसाफिरोकी सख्या ।
सन् १८७३ ई० तक खुली	५,६९७	———
सन् १८८० ई० ,, ,,	९,१६७	४,९१,५५,३८०
,, १८८५ ई० ,, ,,	१२,३८५	८,०८ ५४,७७९
,, १८९० ई० ,, ,,	१६,९८४	११,४०,८२,२४६
,, १८९५ ,, ,, ,,	१९,७१८	१५,३०,८१,४७७
,, १८९९ ,, ,, ,,	२३,७८०	१६,२९,४४,८७६
,, १९०१०२,, ,, ,,	२५,८९८	१९,६६,४८,०००
,, १९०४ ,, ,, ,, ३१ मार्चतक	२७,९०४	२२.७१,००,०००

,, ,, ,, ,, ,, ,, खर्च मजूर हुआ २०५५ माइल नयी रेलवेकी ।

,, ,, ,, ,, ,, ,, ,, रेलवेमें कुल खर्च हुआ ३,६३,८१,१५,१३५ रुपया

बंग देशके देशी शिलपियोंकी—

	काम करने योग्य लोगोंकी संख्या.		पुस्तैनी व्यवसायमें लगेहुए लोगोंकी स०		खेतीमें लगेहुए लोगोंकी संख्या.	
	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री
१ तांती (जुलाहे)						
खास बंगाल	६६७२७	१२३५१	३१९५२	३७३३	१९१५२	२०४५
बिहार	९५०५५	४४२८५	१२७०४	२३३६	५२५०१	२८०५२
उडीसा	५२६६२	२१५५४	२३६५४	१७६६	१५५६५	५४६
छोटा नागपुर	१२५५५	९००७	६४१४	२८५८	३७८३	३८७०
कुल जोड	२२६९९९	८७१९७	७४७२४	१०६९३	९१००१	३१४१३
२ जुगी (जुलाहे)						
खास बंगाल	७६७३८	१३४८०	३६१८६	८७७३	२४७३९	१२४५
३ चिक (जुलाहे)						
छोटा नागपुर	५७९८	३५०३	१८३९	६९७	१९७०	१२४४
४ पान (जुलाहे)						
खास बंगाल	१४४१	७३६	८७	८९	९१८	२४१
उडीसा	१०८१५९	४५१२३	७९०६	५०१	५६१६४	१२५५४
छोटा नागपुर	२७७१	१४५२	५१४	५५	१६७०	२११
कुल जोड	११२३७१	४७३११	८५०७	६४५	५८७५२	१३००६

दशा सुझानेवाली फेहरिस्त ।

कुली मजदूरोंके काममे लगेहुए लोगोकी सं०		बुरे व्यवसायमें लगे हुए लोगोकी संख्या		नसेकी वस्तु और बर्फ सोडावाटरके कारखानेमे लगेहुए लोगोकी स०		अलग अलग कामोंमे लगेहुए लोगोकी सं०	
पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री
४२२०	८६५	३१२	२०७	१३३४	२२९१	९७५७	३१७०
११४९२	७७७८	६५३	४६८	७७०७	६१०५	९९९५	२६४६
२१९२	३५४	१६०	३५	२३३	१९०९	१०८५८	१६९४४
४८८	७६८	२५	२४	३८६	६१६	१४५९	१७७१
१८३९२	९७६५	११५०	७३४	९६६०	१०९३१	३२०६९	२४३३१
२६१३	९८	६१०	३११	२२०१	९७८	१०१८९	२०७५
१४८	६६८	३७	६	२६	११	१७७८	८७७
४४	३६	...	....	२०	२१	३७२	३४९
२७१४५	९४८०	४५७	२९	५५	७१०	१६४३२	२१८४८
१०६	१८८	१३	१	..	१८	४६८	९७९
२७२६५	९७०४	४७०	३०	७५	७४९	१७२७२	२३१७७

वंग देशके देशी शिलिपयोंकी—

	काम करने योग्य लोगोंकी संख्या		पुश्तैनी व्यवसायमें लगेहुए लोगोंकी सं०		खेतीके काममें लगेहुए लोगोंकी संख्या	
५ जुलाहे	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री
खास बंगाल	११५६४३	९३७६	५६७८७	४६८७	३३४७२	७७७
बिहार	१५०९६८	७२२५६	४२१४४	१३६०४	७५९८७	३६१६५
छोटा नागपुर	४६४९०	३४१५३	८८६५	४५५८	३०८१३	२५१०७
कुल जोड	३१३१०१	११५७८५	१०७७९६	२२८४९	१४३२१२	६२०४९
६ मल्लिक (मुसलमान) जुलाहे						
खास बंगाल	३१७४	२३४	१८१	२	२१०५	९५
७ धुनिये (Gotton clenneis)						
बिहार	५९७२८	२५९१०	५४७१	२३६७	३९७०६	१५७२६
छोटानागपुर	१०९४	८१८	६६	५३	५५०	५४३
कुल जोड	६०८८२	२६७२८	५५३७	६४२०	४०२५६	१६२६९
८ कासार (बंगाली लुहार) और लुहार						
खास बंगाल	५१४१४	८२८०	१७१५६	३९१	१५८६७	२१३३
विहार	६५६७०	३०२८७	१५१२७	७१७	३५२३१	२४४९७
उडीसा	१४३७८	२०५७	६७५३	४१	५८८१	५५१
छोटानागपुर	२५१५७	११२१८	७७३६	१०९०	८४७९	६६२४
कुलजोड	१५६६१९	५१८४२	४६७७२	२२२९	६५४५८	३३८०५

दशा सुझानेवाली फेहरिस्त ।

…रोके काममे …गोकी स०	बुरे व्यवसायमे लगे हुए लोगोंकी सख्या		नशेकी वस्तु और बर्फ सोडावाटरके कारखानेमें लगेहुए लोगोंकी स०		अलग अलग कामोंमे लगेहुए लोगोंकी सं०	
स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री
२०७	८१४	२६३	९०४	९३२	१२८६४	२५१०
११४२२	१८७९	४६०	२३६३	१४९९	१६१५९	९१०६
२२७०	४३	७५	४१३	१६६	५१७१	१९४७
१३८९९	२७३६	७९८	३६८०	२५९७	३४१९४	१३५९३
४०	३४	१	७७	६८	३१८	२८
३११७	८३१	४६०	६२६	११६८	७०५२	३०४२
१४०	३२	७	११	८	३०५	६७
३२५७	८६७	४६७	६३७	११७६	७३५७	३१०९
१४५६	४५४	१३०	४४७	१४७१	१४७०४	२६९९
२९७९	२०३	६६	२२९	४४८	१०७२८	१५८०
३५२	३०	७	३६	३०५	१०१०	८०१
१६०१	६८	१२	९९	३८६	७५४५	१५०५
६३८८	७५५	२१५	८११	२६१०	३३९८७	६५८५

वंग देशके देशी शिल्पियोंकी–

	काम करने योग्य लोगोंकी संख्या		पुश्तैनी व्यवसायमें लगेहुए लोगोंकी सं०		खेतीके काममें लगेहुए लोगोंकी संख्या	
९ चूड़ी हारे (मुसलमान)	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री
विहार	४३६६	३२३८	१५६७	९४२	१९१२	१०३१
छोटानागपुर	३३९	२२०	१७२	१८१	९१	३२
कुल जोड	४७०५	३४५८	१७४८	११२३	२००३	१०९३
१० चमार और मोची (हिन्दू)						
वंगाल	९२१८७	११९११	९२२८	३१२	३३५७३	१२६९
विहार	२४९४०४	१८११६१	१४३११	२५३८	१६२३७९	१२३४१२
उडीसा	४००४	२२०२	७	६	१६१६	४४
छोटा नागपुर	३००३२	२३२१३	५०४८	१००१	१८५४८	१८४११
कुलजोड	३७६०२७	२१८४८७	२८५९४	३८५७	३१६११६	१४३१८०
११ तेली (हिन्दू)						
खास वंगाल	२७३३१	९५८४	९०३४	४०२९	२४१९२	३३७०
१२ तेली (मुसलमान)						
खास बगाल	२४१३४	२६५१	१३६२५	१५८७	४३३१	१९२
चम्पारन (विहार)	४१४	५४	१९८	४०	१५०	...
कुलजोड	२४५४८	२७०५	१३८२३	१६२७	४४८१	१९२
१३ लखेरे						
विहार	३०९५	१९२४	७०२	७१२	१२००	५७८

दशा सुझानेवाली फेहरिस्त ।

...दूरोंके काममें ...गोंकी सं०	बुरे व्यवसायमे लगेहुए लोगोंकी सं०		नशेकी वस्तु और बर्फ सोडा वाटरके कारखानेमे लगेहुए लोगोंकी सख्या		अलग अलग कामोंमे लगेहुए लोगोंकी सं०	
स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री
२६९	१६	५	१४	९	७५३	१५२
..	...	.	१७	..	५९	७
२६९	१६	५	३१	९	८१२	१५९
३५२७	२६६	३८४	५७०	२२८८	२९५२०	.
३९२७१	१४४७	३३९	४३२	१८६२	३२१६०	...
१७४	३		४१०	१७२	१३३७	....
२१३९	४८	१	११९९	६७	३२७६	.
४५१११	१९०४	७३४	२०११	४३८९	६६२९३	
४६१	३९	१९	९३६	१३८९	..	.
७६	२	१४	५०२६	७०७	..	.
१	.	१	...	१७	..	
७७	२	१५	५०२६	७२४	....	....
१९२	२	५८	५	१५	...	.

बंगदेशके कारीगरोंकी दशा सुनानेवाली उक्त फेहरिस्त सन् १९०१ ई०की मर्दुम शुमारीकी रिपोर्टसे संग्रह की गयी है। गत ५ वर्षोंमे उन सब संख्याओंकी अवश्यही कुछ कुछ घटी बढ़ी हुई है। तिसपरभी उक्त फेहरिस्तसे जान पड़ैगा कि हमारे देशके कितने कारीगर विदेशी शिल्प और वाणिज्यका मुकाबिला करनेमें असमर्थ होकर पुस्तैनी काम छोडतेहुए जीविकाके लिये अन्य उपाय अवलम्बन करनेको लाचार हुए हैं। बिहार प्रान्तमें पुस्तैनी व्यवसाय त्यागनेवालोंकी संख्या बंगालसेभी अधिक है। उस प्रान्तमें फी सैकडे ५ से अधिक ग्वाले गौ नहीं रखते। खास बंगालमें कुल ग्वालोंके दो तिहाई भागने पुस्तैनी व्यवसाय त्याग दियाहै। इसलिये गौओंकी अवनति विना हुए नहीं रह सकतीहै। बंगालमें जुलाहोंका केवल आधा भागही कपड़ा बुनकर जीविका कर लेता है। बिहारमें फी सैकडे ७५ जुलाहोंकी पुस्तैनी व्यवसाय त्यागना पड़ा है बिहारमें फी सैकडे केवल ७ ही चमार चमडेका काम करते हैं। बाकी सब यातो खेती और नही तो मजदूरी वा कुलीका काम कर जीविका कररहेहैं। बिहारमें (हिन्दू) जुलाहोंकी भी बुरी दशा है।

सम्पूर्ण भारतमें १८ लाख ३६ हजार मर्द और ८ लाख ३२ हजार ५९४ औरतें कपडे बुनकर जीविका करतेहैं। इसके उपरान्त १ लाख ४५ हजार ७६४ मर्द और २६ हजार ३०६ औरतें कभी करघे चलाते और कभी दूसरा कार करतेहुए जीविका करलेते हैं। इन २६ लाख ६९ हजार २८ मनुष्योंके पैदा कियेहुए धनसे सब समेत ५४ लाख ६० हजार ५१५ मनुष्योंका पालन होताहै। यहभी अवश्यही उक्त सन् १९०१ई०का हिसाब है। बंगदेशकी भांति भारतके प्रायः सभी प्रान्तोंमें कारीगरोंके पुस्तैनी व्यवसायकी जान मारी गयीहै। इसलिये खेतोंमे मजदूरी करके दिन काटनेवालोंकी संख्या बढरहीहै। सन् १८९१ई०मे इनलोगोंकी संख्या १,८६,७३,२०३ थी, वह संख्या सन् १९०१ ई०मे बढकर ३,३५,२२,६८२ हो गयी। जो लोग बढईका काम करतेहैं उनकी संख्या १,०३,९७९ से घटकर ८८,७९७ हो गयी। सभी जातिवालोंको पुस्तैनी व्यवसाय त्यागकर दिन पर दिन अन्नके लिये दूसरा उपाय अवलम्बन करना पडरहा है। स्वदेशी आन्दोलन स्थायी होनेसे इस शोचनीय दशाका अवश्यही परिवर्त्तन होगा।

मुकद्दमे।

भारतके निवासियोंमेसे किस प्रान्तमें फी हजार निवासियोंमेसे कितने लोग मुकद्दमोंमें फंसे रहतेहैं उनकी फेहरिस्त नीचे दीजाती है,—

प्रान्तके नाम।	दीवानी मुकद्दमा	फौजदारी मुकद्दम
अखण्ड बङ्गदेश	८.८	२४
बम्बईप्रान्त	१०.४	१०३
मदरास प्रान्त	९.१	८०
संयुक्त प्रान्त	११.४	२६
पञ्जाब	११.२	४५

देशी नरेश ।

देशी नरेशोंकी सख्या सब मिलाकर ६८० है । उनमेंसे अधिकांश नरेश धरतीके छोटे छोटे टुकडोंके स्वामी हैं। बहुतेरोंका राज्य २।४ ग्रामोंसे अधिक नहीं है । नाम और प्रभावशाली नरेशोंकी संख्या २१३ है । इनमेंसे १०५ कुछ कुछ सचे राज गौरवके अधिकारी हैं । नीचे ४४ नरेशोंका सक्षिप्त परिचय फेहरिस्तके ढङ्गसे दियाजाता है। इनके उपरान्त ३५ छोटे छोटे राजा ११ तोपोंकी सलामी और २६ तोपोंकी सलामी पातेहैं । छोटे बडे सब नरेश किसी विदेशी राजासे सन्धि वा लडाई नहीं कर सकते । भारतके बाहर किसी राज्यमें अथवा एक दूसरे के राज्यमें दूत रखना उनके लिये मना है । गवर्नमेण्टकी विशेष आज्ञाके विना अपने दरबारमें वे किसी युरोपियनको नियुक्त नहीं कर सकते । राज्य शासनमे ध्यान न देने तथा मनमानी अनुचित बातोंमे मन लगाने का सन्देह होनेसे गवर्नमेण्ट हर किसी राजाको बिना विचार राज्यसे च्युत कर सकती है । अधिकाश बडे बडे देशी राज्योंमें इन दिनों विलायती नमूनेपर कौन्सि-ल वा व्यवस्थापक सभा और कार्य्यकारिणी सभाकी सहायतासे राज्यका काम काज चलाया जाता है । अगरेजी भारतकी विधि व्यवस्था देशी रजवाडोंमें नहीं चलती । वहांकी अदालतें भी अंगरेजी हाईकोर्ट के अधीन नहीहै । किन्तु पोलिटिकल एजेण्ट वा रेसिडेण्ट नामके एक एक अंगरेज कर्मचारी गवर्नमेण्टकी ओरसे सभी देशी राज्योंमे रहतेहैं। उनकी शक्तिका पार नहीं है । देशी नरेशोंको उनके भयसे सदैव कम्पायमान रहना पडता है । रजवाडोंकी वार्षिक आमदनी सब मिलाकर २२॥ करोड रुपये हैं । सेनाकी सख्या ८५ हजार है । इसके उपरान्त इन सब राज्योंमें देशी नरेशोंके खर्चसे १५ हजार इम्पीरियल ट्रुप्स (Imperial troops) नामक सेना भारत गवर्न-मेण्टके लिये रखी जातीहै । देशी सेनासे गवर्नमेण्टकी सेना अच्छे अस्त्र शस्त्रोंसे सुसजित रहतीहै ।

देशी नरेशोंकी फेहरिस्त ।

सलामी—२१ तोपोंकी राज्यका प्रमाण—	वर्गमील,	मनुष्य सख्या,	आमदनी रुपया.
बडौदेके महाराज (गायकवाड, जी. सी. एस आई)	८,०९९	१९,५२,६९२	१,२३,००,०००)
हैदराबादके निजाम जी. सी बी जी सी. एस. आई	८२,६९८	१११४११४२	३,६०,००,०००)
मैसूरके महाराज (सलामी १९ तोपोंकी)	२९,४४४	५५,३९,३९९	१,८७,८०,०००)
भोपालकी बेगम (अथवा नव्वाब)	६,९९७	६,६५,९६१	२५,०५,०००)
गवालियरके महाराज जी. सी. सी. ओ. ए. डी. सी	२९,०४७	२९,३३,००१	१,३७,८५,०००)

सलामी १९ तोपोंकी राजका प्रमाण–	वर्गमील	मनुष्य संख्या	आमदनी रुपया
इन्दौरके महाराज (हुल्कर)	९,५००	८,५०,६९०	७६,५०,०००)
जम्बू और काश्मीरके महाराज जी. सी. एस. आई.	८०,९००	२९,०५,५७८	७५,९०,०००)
किलातके खा. जी. सी. आई. ई.	१०,०००	५,०७,४७२	७१,०५,०००)
कोल्हापुरके राजा जी. सी. एस. आई. जी. सी.वी. ओ	२,८५५	९,१०,०११	४८,४५,०००)
मेवाडके महाराना (उदयपुर) जी. सी. एस. आई.	१२,७५३	१०,१८,८०५	११,९५,०००)
त्रावणकोरके महाराज जी. सी. एस. आई. जी. सी. आई. ई.	६,७३०	२९,५१,०३८	९४,२० ०००)
सलामी–१७ तोपोंकी			
भहावलपुरके नव्वाब	१५,०००	७,२०,८७७	२४,००,०००)
भरतपुरके महाराज	१,९८२	६,२६,६६५	३६,६०,०००)
बीकानेरके महाराज के. सी. आई. ई.	२३,३११	५,०४,६२७	१९,९५,०००)
बूंदीके महाराव राजा जी. सी. आई. ई के. सी एस. आई.	२,२२०	१,७१,२२७	७,९५ ०००)
कोच्चिनके राजा जी. सी. एस. आई.	१,३६२	८,१२,०२५	२१,४५,०००)
जयेपुरके महाराज जी. सी एस. आई., जी. सी. आई ई	१५,५७९	२६,५८,६६६	६२,१०,०००)
करोलीके महाराज जी. सी. आई. ई	१,२४२	१,५६,७८६	५,१०,०००)
कोटाके महाराव के. सी. एस. आई .	५,६८४	५,४४,८७९	२८,२०,०००)
कच्छके राव जी सी. आई. ई	६,५००	४,८८,०२२	३०,४५,०००)
मारवाडके (जोधपुरके) महाराज.	३४,९६३	१९,३५,५६५	४९,९५,०००)
पटियालाके महाराज	५,४१२	१५,९६,६९२	६१,६५,०००)
रींवाके महाराज जी. सी. एस. आई.	१२,६७६	१३,१५,३०७	१८,००,०००)
टोंकके नवाब जी सी. आई.	२,५५३	२,७३,२०१	१५,००,०००)
(सलामी १५ तोपोंकी)			
अलवरके महाराज	३,१४१	८,२८,४८७	३०,००,०००)
बांसवाडाके महारावल	१,९४६	१,६५,३५०	१,६५,०००)
बेतीयाके महाराज के. सी. एस. आई.	९१२	१,७३,७५९	४,०५,०००)
दीवासका बडा घराना	४४६	६२,३१२	६०,०००)
,, छोटा ,,	४४०	५४,९०४	६०,०००)
धारा नगरीके राजा	१,७३९	१,४२,७१५	७,६५,०००)
धोलपुरके महाराज राना	१,१५५	२,७०,९७३	९,९०,०००)

सलामी १५ तोपोंकी—राज्यकाप्रमाण,	वर्गमील,	मनुष्यसंख्या,	आमदनी रुपया.
डोंगरपुरके महारावल	१,४४७	१,००,१०३	१,३५,०००)
ईडरके महाराज जी. सी एस. आई. के. सी. बी., ए. डी. सी.	१,९.९०	१,६८,५५७	४,९५,०००)
जैसलमीरके महारावल	१६,०६२	७३,३७०	१,०५,०००)
खैरपुरके मीर जी सी आई.ई.	६,१०९	१,९९,३१३	१२,६०,०००)
किसनगढके महाराज	८५८	९०,९७०	५,५५,०००)
ओरछाके महाराज जी सी आई. ई.	२,०८०	३,२१,६३४	९,००,०००)
प्रतापगढके महारावल	८८६	५२,०२५	१,८०,०००
सिकिमके महाराज	२,८१८	५९,०१४	६०,००००
सिरोहीके महाराव जी. सी. आई. ई., के. सी. एस. आई.	११,६५	१५४	५,४४३,६०,०००
सलामी १३ तोपोंकी			
जावराके नवाब	६०६	४४,१८५	३,६,००००
कूचविहारके महाराज जी.सी.आई. ई.सी. वी.	१,३०७	५,६६,९७४	२३,२०,०००
रामपुरके नव्वाब	८९३	५,३३,२१२	३१,९५,०००
टिपाराके राजा	४,०८६	१,७३,०२५	६,६०,०००

स्वतन्त्र हिन्दू राज्य नैपाल ।

नैपालके वर्त्तमान स्वतन्त्र नरनाथका नाम महाराजाधिराज पृथ्वी वीरविक्रम जङ्गबहादुर साहब बहादुर समशेर जङ्ग । नैपाल राज्यकी लम्बाई ५ सौ मील, पूरा प्रमाण ५४ हजार वर्गमील, मनुष्य संख्या प्रायः आधा करोड, आमदनी प्रायः डेढ करोड रुपये, सेना ३५ हजार, तोपें १ हजार, तथा वृटिश राज्यमे सलामी २१ तोपोंकी ।

रसीडण्टोंका व्यवहार ।

The Times of India regrets the growth of an un-English evil "The English Administration in India prides itself on its absolute uprightness, its absolute freeness from all unworthy taint. But curiously enough there is one Department of the State, and that Department in which one would think that extra precautions against an infringement of the English moral code would be enforced, in which it is not only possible, but openly authorized to accept gratifications which are most absolutely and sternly tabooed in all other branches of His Majesty's Service. No long acquaintance with India is required to at once recognise this curious re-

lavation of principle in the Political Department. John Company paid his servants badly and allowed them to shake the Pagoda tree, but the Government of His Majesty gives very handsome salaries to Political officers and yet allows to continue a system of perquisites—"Easements" is the official term—which should give even the easy consience of John Company a glow of comparative virtue. Thus a Political officer in many parts of India not only draws a very handsome salary, but he also lives practically free at the expense of some Native Prince or other. Rides His horses, drives his carriages, uses his cook, shoots his big game, spends money right and left on "improvements" for his own luxury and convenience, and generally uses the resources of the Native Prince in a manner quite foreign to the code that exists in any other branch of the Government service. The evil is patent, and it is intensely un-English." Nov. 1904.

ब्रृटिश भारतमें आमदनी होनेवाले मालके मूल्यकी फेहरिस्त।

	सन् १८८४–८५ ई०	सन् १९०३–४ ई०
जिन्दा जानवर	२०,७३,०३०	५३,६७,८३३
पुशाक	१,०६,७१,९१०	२,०८,४०,३८२
अस्त्र और लडाईके सामान	१४,९५,५६०	१,११,०६,४७४
पुस्तक और मनिहारी माल	३५,०६,३००	८७,४४,२०६
गृहादि बनानेका माल	१७,८८,९८०	३०,६३,५९८
रासायनिक पदार्थ	१९,४८,३८०	६३,४०,४५३
कोयला	१,२९,१३,३६०	३८,६५,८८२
रुमाल और ओढनेके कपडे	०	२६,२९,४४४
रूई	१६,२५,९८०	५,०२,९६५
सूत और पेठाहुआ सूत	३,४७,०८,७४०	२,३६,३१,८९०
कपडा सूती	२१,०९,०१,७४३	२८,४७,१६,५७५
कपासका मोटा माल	२४,७३,०२,४४०	३१,१५,६०,८७४
दवा आदि	४५,८०,१५०	१,२१,२८,८८५
रगनेके मसाले	१४,१३,०३०	९८,२१,४०८
चीना मट्टी और उसके बर्त्तन	१७,४३,७१०	२८,४६,११४
काच और काचके बर्तन	५०,८७,९६०	१,०१,१७,०५६
लोहेका माल	९०,१७,११०	२,६०,८२,३०५

	सन् १८८४–८५ ई०	सन् १९०३–०४ ई०
वैज्ञानिक यन्त्रादि	१७,७८,९४०	७९,५९,०२९
हाथी दात	११,०१,२६०	१९,०१,२६०
गहने और सोना चांदी	३१,१७,५२०	१,६७,१९,४९०
शराब	१,३६,०२,७९०	१,३८,१९,१५४
कल और यन्त्रादि	१,५०,०८,२४०	३,६४,५३,४३९
दियासलाई	२,२०,४२,८५०	५०,६१,००,०५७
ताम्शा	२,०९,४१,८९०	२,२३,४७,२५०
लोहा और फौलाद	२,२७,५९,४८०	६,५२,२८,५७०
टीन	२२,३४,८६०	३९,८६,४२०
दूसरे धातुए	३८,४९,५४०	७६,९०,४९६
खानगी तेल	१,१५,ट२,२२०	३,३८,२७,०२०
और और तेल	७,१२,७५०	१५,४७,८८७
चित्र और चित्रके मसाले	२०,४९,६४०	४२,६८,६७९
कागज और पीसबोर्ड	४८,९२,१२०	५९,६९,९७०
भोजनकी वस्तुए	१,१०,३३,२१०	२,०२,७२,८०५
रेलके यन्त्रादि	२,२२,००,८२०	५.६३,७०,०४०
निमक	६४,९२,३३०	६३,६९,१६७
रेशम	७४,७५,६.३०	५९,२९,५२७
रेशमी माल	१,२७,३३,५४०	१,८३,३४,७२०
चीनी	२,१४,०८,३८०	५,९३,५७,७३९
छाते	३३,५२,८५०	२४,५८,८७७
ऊनीमाल	१,३२,६६,६९०	२,२७,९०,३४७
और और वस्तुए	४,१२,५१,३१०	७,०८,६८,६५५
कुल जोड	५५,७०,३०,७२०	९२,५९,२२,७२३

बृटिश भारतमें रफ्तनी होनेवाले मालके मूल्यकी फेहरिस्त ।

	सन् १८८४–८५ ई०	सन् १९०३–०४ ई०
कोयला	८,२१५	३८,२२,७३०
काफी	१,२८,७९,७७०	१,३७,००,५६७
नारियलकी रस्सी	२१,४५,०४१	५०,१६,७३६
रूई	१३,२९,५१,२३९	२४,३७,७०,५२९
कपासके माल	४,५८,६७,०१५	११,८४,७०,७२९
अफीम	१०,८८,२६,०६०	१०,४७,०१,६३८
दवाके मसाले	३५,१६,९९४	४२,१३,९१३

	सन् १८८४–८५ ई०	सन् १९०३–०४ ई०
नील	४,०६,८८,९९६	१,०७,६२,०२९
हड़	२३,९०,२२२	४२,१०,२८८
रंगनेके मसाले	३९,३९,५८८	२७,६२,३१८
चारपायेकी रसद	०	९०,९३,७३७
चावल	७,१२,२९१४८	१८,९५,६४,९९४
गेहूँ	६,३१,६०,१८२	११,०८,८९,५४६
और और अन्न	४५,६५,१८९	२,५५,०२,०५९
चमड़ा	४,९३,६५,०१२	८,९३,५५,५५७
पटुआ	४,६६,१३,६८४	११,७१,८१,२२२
पटुएका बनाहुआ माल	१,५४,३८,९२८	९,४६,१२,७६९
लाख	५९,९१,८२१	२,७२,३८,९७०
खाद	८,४४,४१६	४४,२२,८७०
धातुएं	१४,५२,९०६	५४,९१,३०६
तेल	५६,४७,४६४	१,०९,२८,७०२
खानेकी वस्तुएं	४०,६७,०१०	८१,५७,८२९
शीरा	४२,५०,००४	४०,७५,३६४
अलसी	४,९१,२९,३४४	५,७४,४१,७६२
सरसों	२,६८,९७,३७४	२,५३,४१,१००
और और तेलोके बीज	३,१५,०१,८२२	६,२३,७८,३५०
रेशम	५०,९५,५२२	६४,८३,२९६
रेशमी माल	३५,९४,६४८	१५,३०,८२९
मसाले	५१,४५,८००	९३,९९,४४४
चीनी	७९,१३,६२१	१४,६४,१२५
चाय	४,१३,७३,५११	८,६२,२६,१२९
सागवनकी लकडी	५३,२४,१५६	९१,७२,६०३
ऊन	९९,३८,६९२	१,६२,६१,६४८
ऊनी माल	१५,०८,४८५	३१,५७,६२४
और और वस्तुएं	१,९२,८२,९६२	४,८२,६१,३८१
कुलजोड़	८३,२५,५२,९२१	१,५३,५१,७१,५९९

कुल प्रायः ९२॥ करोड़ रुपयेके आमदनी होने वाले मालमेंसे पौने ८ करोड़ रुपयेका माल गवर्नमेण्टके कामके लिये मगाया गया, बाकी पौने पचासीकरोड़ रुपयेमेंसे कपासके मालका प्रमाण ३१ करोड़ १५॥ लाख रुपये है। रफ्तनी मालमेंसे कच्चे मालका ही प्रमाण अधिक है । रूई, गेहूँ, चावल चमड़ा, पटुआ, तेलका बीज रेशम और ऊन आदि इस देशमें वस्तुए बनाकर विदेशीमें भेजनेसे इसदेशके लाखों लोगोको अन्न मिलनेका प्रवन्ध हो ।

बंगदेशमें आमदनी होनेवाले मालके मूल्यकी फेहरिस्त।

	सन् १८८४–८५ ई०	सन् १९०३–४ ई०
जिन्दा जानवर	८,८६,९१०	२०,१८,९५६
पुशाक	३७,६६,६४०	५१,२१,७१७
पुस्तक और मनिहारी माल	३४,२४,४९०	५३,९४,८१०
मकान बनानेका माल	६,३५,३८०	११,५७,५२२
रासायनिक माल	६,६६,६४०	२०,८३,९७१
मूंगा	१६,१७,४३०	४,०१,८५३
ऐंठा हुआ सूत	१,१४,३१,६४०	४९,७८,७८८
कपड़ा	१०,९५,०४,६२०	१४,४६,९७,९०४
सूत	५,०९,०००	९,३२,२८२
और और कपासका माल	८,१५,५२०	५७,६१,३१६
दवा आदि	१८,८८,९६०	४८,७१,७६८
रंगनेके मसाले	६,०२,३६०	१२,४७,९४५
काच और काचके बर्त्तन	१६,८७,५६०	३१,६४,२४१
लोहेका माल	२९,२३,५००	९१,९५,३७०
वैज्ञानिक यन्त्रादि	५,७७,९३०	३२,८९,३५९
गहने और सोना चांदी	९,६३,६३०	१,००,५०,२४७
शराब	४६,६४,२४०	५०,१२,३५५
कल और यन्त्रादि	७०,१८,९००	२,५९,८८,१३०
दियासलाई	४,१३,२४०	१३,४८,३२३
ताम्बा	९१,९४,०३०	८६,८५,४४७
लोहा	८८,५५,५५०	१,६५,१४,७००
शीशा	८,०५,६६०	१३,९२,१६३
फौलाद	५,४७,७४०	१,३०,६५,०४२
टीन	१४,५६,७७०	१९,८२,२६०
जस्ता	५,८४,४६०	८,२३,३१३
और और धातुएं	३,६८,९८०	१५,८२,२६४
खानगी तेल	७३,४९,८००	१,४३,८३,५७९
और और तेल	२,३६,११०	८,१२,०१२
चित्र और चित्रके मसाले	८,५१,१५०	१६,४९,०३६
खानेकी चीजें	१९,७१,९२०	३४,३०,९५१
रेलव यन्त्र आदि	१,०२,६८,७७०	२,८३,५२,७३०
निमक	५१,८०,३६०	५४,४४,८१०
रेशमी माल	१६,३२,४८०	१०,५८,५७१
मसाले	११,२४,०९०	२७,७३,७४०
चीनी	७,४१,६१०	३,३८,८९,५३४
छाते	१९,२०,८२०	२,९०,६३६

	सन् १८८४–८५ ई०	सन् १९०३–०४ई०
ऊनी माल	५९,०२,६५०	७७,७१,६२६
और और वस्तुए	१,१६,७७,६८०	१,८२,१२,२८८
कुल जोड	२२,५३,९९,२८०	३७,३८,३२,६३९

वंगदेशसे रफतनी होनेवाले मालके मूल्यकी फेहरिस्त।

	सन् १८८४–८५ ई०	सन् १९०३–४ई०
कोयला	५,३०८	३८,१२,४०४
रुई	६८,८२,०६०	७३,३०,३६३
कपासका माल	६,५८,०००	५४,३२,५८२
अफीम	६,२०,४४,५२०	७,०४,०७,९०८
दवाके मसाले	६३,९,२००	५,२३,४४२
नील	३,०२,३३,९६०	६०,१३,१७१
रंगनेके मसाले	१५,०२,३३०	६,८६,०६४
चावल	२,३४,८९,९६०	३,७७,७९,६०६
और और अन्न आदि	१,१८,३०,४००	२,७२,२४,९४०
चमडा	२,५३,१५,३७०	४,८२,९९,३६६
पटुआ	४,६६.१३,४६०	११,६५,९१,४४७
पटुएका बनाहुआ माल	१,५२,१३,२२०	९,४०,८३,१५२
लाख	५९,७१,८००	२,६८,९९,४४२
तेल	२९,२२,७३०	३१,८६,४६८
शोरा	४२,३८,६७०	४०,११,४३६
तेलके बीज (सरसों आदि)	३,५०,९९,६६०	४,५३,०४,४०६
रेशम	४५,४५,०३०	४७,०८,२७६
रेशमी माल	२९,२०,३६०	६,११,७५९
चीनी	३,७७,२३०	६,४२४
चाय	३,१८,२१,४३०	७,८८,१७,२०१
और और वस्तुएं	८०,२०,००२	१,८८,१८,२३२
कुल जोड	३२,८३,८४,१२०	६०,०६,२८,०५५

विलायतमें हिंदुस्थानके कपड़ेके विरुद्ध कानून।

The parliament passed two acts...called by sir George Birdwood "the scandalous law of 1700"...which both obtained the Royal assent on the 11th of April, by which it was enacted "that from and after the 29th day of September, 1701, all wrought silks, Bengals, and stuffs mixed with silk or herba, of the manufacture of China, Persia, of the East India, and all Calicoes, painted, dyed, printed or stained there, which are or shall be imported into this kingdom, shall not be worn or otherwise used in Great Britain; and all goods imported after that day, shall be warehoused or exported again." W. W. Hunter.

गत ७ वर्षोंकी आमदनी और रफ्तनी।

इसका भावार्थ यह है कि सन् १७०० ई०मे पार्लियामेण्ट महासभाने दो कानून बनाये। इन दो कानूनोंको सरजार्ज बार्डउडने " सन् १७००ई० का कलङ्क बढानेवाला कानून " कहा है। इङ्गलेण्डके नरेशने इन दोनों कानूनोंको ही उक्त सन्के ११ अप्रेलको मञ्जूर किया। इन कानूनोंके अनुसार सन् १७०१ ई०के २९ सेप्टेम्बरसे, वङ्गदेश और चीन देशमे बननेवाले सब प्रकार रेशमी मालकी, कौलिके कपड़ेकी और सब प्रकार छींटोंकी विलायतमे आमदनी होना और व्यवहार करना मना किया गया था। उन कानूनोंसे यहभी प्रबन्ध हुआथा कि उस प्रकार माल वहां आमदनी होतेही भारतमें लौटा दिया जायगा।

सन् ई०।	आमदनी।	रफ्तनी।
१८९८–९९	८९,९९,७०,०००	१,२०,२१,१५,०००.
१८९९–१९००	९६,२७,९०,०००	१,२७,०३,९०,०००
१९००–१	१,०५,४७,२०,०००	२,३१,९९,२०,०००
१९०१–२	१,०९,६१,४०,०००	१,४९,४९,६०,०००
१९०२–३	१,११,६९,९०,०००	१,३९,०५,३०,०००
१९०३–४	१,३१,१२,८०,०००	१,६९,७८,९५,०००
१९०४–५	१,४३,९१,९०,०००	१,७४,१३,६५,०००.

गत ७ वर्षोंके वाणिज्यके हिसाबकी ओर ध्यान देनेसे जानपडता है कि इसदेशमें कपासके मालकी आमदनी दिन पर दिन बढ रही है। सन् १८९७–९८ ई० मे २२ करोड २२ लाख ७३हजार रुपयेका, सन् १८९९ ई०मे २५ करोड ९४॥लाख रुपयेका; सन् १९००–१ ई० मे, २६ करोड २६ लाख ८५ हजार, सन् १९०३–४ ई० मे ३१ करोड़ १५ लाख ६१ हजार रुपयेका और सन् १९०४–५ ई. मे ३८ करोड पौने ५ लाख रुपयेका विदेशी कपासका माल मंगाया गया है।

सरकारी कर्ज और नहर आदि।

सन् १९०५ ई० के ३१ मार्चको सरकारी कर्जका प्रमाण ३ अरब २१ करोड ६२ लाख ४० हजार रुपये था। इसके उपरान्त सेविंगस बैंक आदिके हिसाबोंमें प्रायः २६ करोड रुपये कर्ज था। उस तारीख तक नहर आदि ३९करोड १६ लाख २० हजार रुपये कुल खर्च हुआ।

भारतमें दरिद्रता।

प्रसिद्ध पश्चिमी चिकित्सक सर फ्रेडरिक ट्रिव्स एशिया खण्डमे घूम कर The other side of the Lantern नामकी एक पुस्तक लिखी है। उस पुस्तकमें भारतकी दरिद्रताके सम्बन्धमे भिन्न भिन्न सम्मतिया दीगयी हैं। उनमे दो एक नीचे उद्धृत की जाती हैं –

India leaves on the mind an impression of poorness and melancholy * * * Sadder than the country are the common people of it. They are lean and weary-looking, their clothing is scanty, they all seem poor, and toiling for leave to live. * * * They appear feeble and depressed."

मृतक दाह करनेके विषयमें वे लिखते हैं,–

"The amount of wood employed in this ghastly ceremony depends upon the wealth of the surviving relatives. It happens, therefore, that so little wood is often used for the very poor that the body is only partly consumed, and what is thrown into the river is more than ash.

" Poverty is always piteous. In India it is most piteous when the heartbroken man is unable to buy wood enough for the burning of his dead."

गोरोंका चरित्र।

Fundamentally, says A de Quartrefages, the white, even when civilised, from the moral point of view is scarcely better than the negro, and too often by his conduct in the midst of inferior races has justified the argument opposed by a Mulagachy to a missionary. ' Your soldiers seduce all our women .....you come to rob us of our land, pillage the country and make war against us, and you wish to force your God upon us, saying that He forbids robbery pillage and war !' Such is the criticism of a savage The following is that of a European, M. Rose, giving his opinion of his own countrymen: 'The people are simple and confiding when we arrive, perfidious when we leave them. Once sober, brave and honest, we make them drunken, lazy and finally thieves. After having inoculated them with our vices we employ these vices as an argument for their destruction. ' However severe these conclusions may appear they are unfortunately true and the history of the relations of Europeans with the population they have encountered in America, at the Cape and in Oceania justify them too fully."—*The Human Species pp. 461, 62.*

That the famine," says Wallace in his book " " The Wonderfue Century," "at all events is almost chronic in India and is the direct result of governing in the interests of the ruling classes, instead of making the interests of the governed the first and the only object '

भारतमें चीनीके कारखाने।

गत सन् १८९४ ई०में भारतमें सब समेत २६४ चीनीके कारखानेथे। सन् १९०० ई० उनकी संख्या २०३ थी। सन् १९०३–४ई०संख्या घटकर केवल २१ शेष रह गयी। "वीट" चीनीका व्यवहार बढ़ता हुआ देशी चीनीका कैसा सत्यानाश हुआ सो शायद और समझानेका प्रयोजन नहीं होगा। विदेशी शक्कर यातो गौ सूवर आदि पशुओंके खून और नहीं तो श्मशानसे बटोरी हुई हड्डियोंके अङ्गारके सहारे साफ की जाती है। इस हेतु आजकल कोई भी धार्मिक हिन्दू मुसलमान विदेशी शक्करको काममें नहीं लाते। जो खानपानका विचार करना कुसंस्कार विचारते हैं उनको भी विदेशी शक्कर काममें नहीं लानी चाहिए। क्योंकि वैसा करनेसे देशवासी शक्कर व्यवसायियोंको भूखों मारनेका पाप होताहै।

इस पुस्तकका अनुवाद प्रथम संस्करणकी मूल बंगला पुस्तकसे हुआ था। परन्तु इस समयतक उक्त पुस्तकके चार संस्करण हुए हैं। प्रत्येक संस्करणमें कुछ न कुछ सुधार हुआहै। इससे पुस्तक पहलेसे बहुत बढ़गयीहै। कुछ अंशको छोड़ इसका पूर्ण अंश तीसरे संस्करणसे अनुवादित हुआ है। किन्तु चौथे संस्करणमें जो सुधार हुआ है वह इस अनुवादके छपजानेके कारण सम्मिलित नहीं होसका। इसका पूरा सुधार तो दूसरे संस्करणके समय होगा, इस समय इस स्थलपर कुछ अंशोंका दिग्दर्शन कराये देते हैं पाठकगण पढ़ते समय इस अंशको भी मिलाकर पढ़ते जावेंगे तो विषयोंके जाननेमें अधिक सुविधा होगी। पृष्ठ६, ड्यूक आफ आर्जिलके बाद इस अंशको जोड़िये;—

इस बारेमे पूर्वोक्त गुप्त पत्रमे लार्ड लिटनने भी यही बात कही है;—

" Since I am writing confidentially, I do not hesitate to say that both the Governments of England and of India appear to me, up to the present moment unable to answer satisfactoryil. The charge of having taken every means in their power breaking to the heart. The words of promise they had uttered to the ear."

इङ्गराज शासनेर दोषगुण।

एक बात और है, स्वर्गवासी बङ्किम बाबूने 'साम्य" नामक पुस्तकमें कहा है—यदि पृथ्वीके इतिहाससे कोईभी बात निश्चित ठहरायी जा सकती है, तो वह यह है; कि साधारण प्रजाके सतेज और राज नियन्ता न होनेसे राजपुरुषोंके स्वभावकी कभी भी उन्नति नहीं होती, अवनति ही होती है। यदि कोई भी कुछ नहीं कहे तो स्वभावतः राजकर्मचारी स्वेच्छाचारी होजाते हैं। स्वेच्छाचारी होनेहीसे आत्म-सुखमें रत कार्य्यमें शिथिल और दुष्कर्मी हो जाते है। इस लिये जिस देशकी प्रजा निस्तेज, नम्र, अनुत्साही और आलसी होती है, वहांके राजपुरुषोंकी स्वभावतः ऐसी अवनति होगी। × × × जिस देशके प्रजाकी अवस्था अच्छी होतीहै, उस देशके राजपुरुषोंकी ऐसी दुर्गति नही होती वह राजाकी दुर्मति देखतेही उससे नाराज होजा सकतीहै और होती भी है। राजपुरुषगण भी प्रजाके इस अनर्थकारी असन्तोषके डरसे सतर्क रहते है। इस प्रकार एक दूसरेके उपरोधसे दोनों पक्षकी उन्नति होती है। इसके सिवाय राजकार्यकी निःपक्षपात समालोचना करनेसे सर्व्वप्रकारके मानसिक गुणोंकी सृष्टि और पुष्टि होती है।"

पूर्व्वकालमें ऋषि मुनिही राजकार्य्यके समालोचक और नियन्ता होते थे। भगवान् रामचन्द्रको भी प्रजाकी समालोचना सुनकर जानकी देवीका त्यागकर देना पड़ा था। मध्यकालमें राजा लोग निरङ्कुश प्राय होकर ऐसे दुष्क्रियान्वित और अकर्म्मरत होगये थे कि अन्तमें मुसलमानोंके हाथ उन लोगोंका लोप हो गया। पक्षान्तरमे रूममें लिबियान लोगोके वादसे और इङ्गलेण्डमे "कमनों" के विवादसे स्वभावतः राजा और राजपुरुषोंकी उन्नति हुई थी। आशा है, भारतमें भी निर्भय समालोचनासे अङ्गरेज राजकर्म्मचारियोंकी उन्नति होगी।

आठवें पृष्ठमें " देशकी दशाके ऊपर इतना और जोड़िये;-

दुःखका विषय है, कि उदार नीतिक भारत सचिव जान मोरलेने भी १९०४।५ सालकी बजेट विवेचनके समय पार्लिमेण्ट सभामें वक्तृता देते हुए कहा था:-

"For as long a time as my poor imagination can pierce through, for so long a time our Government in India must partake, and in no small degree, of the personal and absolute element.'

बीसवें पृष्ठमें डाक्टर लिटनरके कथनके नीचे।

इन्हीं सब कारणोंसे सुभीता मिलतेही लोग अङ्गरेजोंका राज्य छोड़कर देशी राज्योंमें जा बसनेका आग्रह दिखाते हैं। १७६७ सालकी २४ वीं मईके दिन लार्ड सालिसबरीने इस बारेमें जो कहा था उसका एकांश यह है-

The British Government has never been guilty of violence and illegality of native sovereigns. But it has faults of its own, which though they are far more guiltless in intention, are *more terrible in effect*. The Native Government has a fitness and a congeniality for them (the people) impossible for us adequately to realise, but which compensiate them to an enormous degree for the material evils which its rudeness in a great many cases produces. I may mention as an instance which was told me by Sir George Clark, a distinguished member of the council of India representing the province of Kathiawad, in which the boundaries of English and the Native Governments are very much intermixed . . . He told me that the Natives were continually in the habits of migrating from the English into Native jurisdiction, but that he heard of an instance of a Native leaving his own to go into the English jurisdiction

५२ पृष्ठमें हितवादीके कथनके नीचे।

इटलीके सुप्रसिद्ध उद्धार कर्ता जोसिफ म्याजिननीने कहा है,-

In order to restore to man the free use of those powers and faculties which have been degraded by the prolonged arts of tyranny, the first step is to raise him in his own esteem, to efface the mark of slavery on his brow, and make known to him one divinity that lies dormant within him, the greatness of his destiny and the inviolability of human nature

छब्बीसवें पृष्ठमें जो नौकरियोंका हिसाब है उसे यों समझिये।

बड़ी नौकरियों पर भारतवासी बृटिश भारतीय प्रजाको कार्यदक्षता प्रकाश करनेका कितना कम अवसर प्राप्त होता है, यह निम्नलिखित तालिकाके देखनेसे सब कोई समझ सकेंगे।

१९०३ साल।

विभाग।	वेतन।	अङ्गरेज।	फिरङ्गी।	हिन्दू।	मुसलमान।
शासनविभाग	५००) और अधिक	१९०	२४	२५	२
कृषि ...	" "	७	०	०	०
आर्किओलाजि	" "	६	०	१	०
टाक्स ...	" "	१	०	१	०
पशुचिकित्सा	" "	१२	०	०	०
वाणिज्य शुल्क	" "	७१	५	१	१
इकोनामिकप्रोडक्ट	" "	२	०	०	०
शिक्षाविभाग	" "	११४	४	२३	१
"	"सहस्राधिक	४८	०	१	०
आबकारी	" "	५	०	२	०
परराष्ट्रविभाग	"	८	१	०	१
वन विभाग	"	१३६	०	१	०
जिओलाजिकल सर्वे	" "	९	०	२	०
इम्पिरियल सर्विस सैन्य	"	१५	०	०	०
जादूघर ...	" "	३	०	०	०
जेलखाना ...	" "	४१	०	४	०
विचारविभाग	" "	२३६	१३	१७३	३४
भूमिराजस्व...	" "	६७२	१५	१२०	५१
चिकित्सा (सिविल)	" "	१८२	१	१०	०
आवह विद्या ...	" "	४	०	०	०
सामरिकहिसाब	५००) और अधिक	९	५	०	०
सामरिक शासन	" "	३	०	०	०
खानि ...	" "	३	३	०	०
टकसाल...	" "	१०	०	१	०
विविध ...	" "	५	०	०	०
राजनीतिक	" "	१३४	१	२	२
पोर्ट ब्लेयरमें...	" "	५	१	०	१
डाक विभाग	" "	२७	०	२	०
पूर्तविभाग ...	" "	३३२	२३	५७	२
"	" १२ सौसे अधिक	६१	०	०	०
अहिफेन	५००) और अधिक	४१	१	१	१
तोपखाना	" "	१६	०	०	०
पाइलाट ...	" "	२१	०	०	०
पुलिस ...	" "	३२१	२	३	२

विभाग ।	वेतन ।	अङ्गरेज ।	फिरङ्गी ।	हिन्दू ।	मुसलमान ।
रजिष्ट्रि ...	" "	१ ...	० ...	१ ...	०
मेरिन ...	" "	१४ ...	० ...	० ..	०
लवण ...	" "	३५ ...	१	१ ..	०
वैज्ञानिक ...	" "	२ ...	० .	० ..	०
स्टाम्प ...	" "	१ ...	० ...	३ ..	०
स्टेट रेलवे ...	" "	२२१ .	२४ ..	० ..	०
" " १२ शताधिक मुद्रा		३१ ..	१ ..	० ..	०
छापाखाना ५००) और अधिक		७ .	१ ..	० ..	०
सप्लाइ ट्रान्सपोर्ट	" "	१ ..	० ...	० ..	०
सर्वे ...	" "	१९ ..	१३ ...	० ..	०
	जोड़	३०७६ ...	१४१	३३५ ..	९८
१८९७ सालमें	जोड़	१,८२३ ..	१२५	४८४ ..	८३
पांचसालमें वृद्धि		६५ ..	१४	२० ..	१५

"From the speech of Mr. Arthur Griffith delivered at the National Council Dublin Rotenda. 28-11-06 "University education in Ireland is regarded by the classes in Ireland as a means of washing away the original sin of Irish birth It is founded on the inversion of Aristotle, as indeed the three system of education in Ireland are. The young men who go to Trinity college are told by Aristotle that the end of education is to make men patriots, and by the professors of Trinity not to understand Aristotle litteally. Education in Ireland encumbers the intellect, chills the fancy, dibases the soul and evervotes the body-it cuts off the Irishman from his tradition, and by denying him a country debases his soul, it stores his mind with lumber and nonsense, it destroys his fancy by cutting him off from his tradition, and evereeases his body by denying him physical culture"

विद्यार्थी और राजनीति।

"–क्या इनको यह विदित नहीं है, जहां सदा वे करते वास।" वहा अन्नके बिना नित्य, रहता कितनोंके घर उपवास॥ तिसपर रोग टैक्स आदिकका, लोगोंको रहता है त्रास। सींचा जाता निर्दयतासे नमक घावपर बारह मास॥ किन्तु स्वार्थ वस इन्हें, दुःख नहिं औरोंका अनुभव होता। किसी तरह ये रहें खुशी, मर जाय देश चाहे रोता॥ दिये कान ईश्वरने, पर नहि पीड़ित शब्द सुनाई दे। आंखें हैं, पर हाय! नहीं कुछ दुःखित दशा दिखाई दे॥"

युवराजका स्वागत, ४३, ४४,

विलायतके कुछ स्वार्थी अङ्गरेजोंने इस देशको सदासे अनुदार चित्त और पराधीन बतलाया है और स्वतन्त्रताके नवीन प्रवाहको जो इस समय स्वदेशीके नामसे चारों ओर फैल रहा है, वर्त्तमान अङ्गरेजी शिक्षाका फल ठहराया है। उनके विचारमें भारतवासियोंको अङ्गरेजोंके राज्यमें जितना सुख मिला है, वही उनके लिये गनीमत है और इसके साथही वह अदृष्ट पूर्व भी है। कुछ इस देशके लोग भी उनकी हांमें हां मिलाते हैं और समझते हैं कि स्वतन्त्रताके लिये पहले इस देशमें घोरअन्धकार था और इस देशके लोग स्वाधीनताके सुखको बिलकुल समझतेही न थे। इसी प्रकारके लोगोंन अब यह कहना प्रारम्भ किया है कि इस देशके विद्यार्थियोंको राजनीतिके आन्दोलनसे अलग रहना चाहिये और साथही उनमेंसे किसी किसीने दबी जबानसे यह भी स्वीकार किया है कि यदि विपद्काल हो तौ विद्यार्थियोंको भी राजनीतिके विचारमे योग देकर देश सेवा करनी चाहिये अन्यथा नही। इन्हीं सब बातोंका यहां हम संक्षेपसे विचार करेंगे कि वे कहांतक ठीक हैं।

जो लोग भारतवर्षकी आर्य्यजातिको पराधीन बतलाते हैं वे या तो भ्रान्त हैं या किसी कारणवश जान बूझकर झूठ बोल रहे। अन्यथा यह कब सम्भव है कि दर्शन शास्त्रकी आदि भूमि होकर भारतवर्ष स्वतन्त्रताके सुखसे अपरिचित रहे और उसके प्राप्त करनेके लिये कुछ भी यत्न न करे। इस बातको सब कोई जानते हैं कि स्वतन्त्रताकी उत्पत्ति, तलवारसे नहीं, विचारसे होती है और विचार स्वातन्त्र्यसेही दर्शन शास्त्रकी उत्पत्ति हुई है। भारतवर्षकी प्रतिभाशाली सुसन्तान, महर्षि कपिल, कणाद, गौतम और व्यास आदिके दर्शन शास्त्र भी कुछ ऐसे वैसे साधारण ग्रन्थ नहीं हैं, संसारके दार्शनिक पण्डितोंने उन्हें सर्वोत्तम विचार ग्रन्थ ठहराया है। इसके सिवाय यहांकी शिक्षाका उपक्रम और उपसहार स्वतन्त्रताको लेकरही होता है और जगह जगह शास्त्रोंमें उसीके प्राप्त करनेपर बल लगाया गया है।

यहांकी शिक्षाका आरम्भ महर्षिमनुके धर्म्मशास्त्रसे होता है। और वेदान्त वा उपनिषदोंके अध्ययनपर उसकी समाप्ति हो जाती है। महर्षि मनुने सुख दुःखकी अनेक प्रकारकी व्याख्या कर अन्तमे सबका निचोड़ यह निकाला है कि:—

"सर्वं परवशं दुःखं सर्वमात्मवशं सुखम्। एतद् विद्यात् समासेन लक्षणं सुखदुःखयोः॥"

संक्षेपसे सुख दुःखका लक्षण यह समझना चाहिये कि जो परवश है वह सब दुःखरूप है और जो आत्मवश अर्थात् स्वाधीन है वह सब सुखरूप है। आगे चलकर उन्होंने इस बातपर जोर दिया है कि जो बातें परवश हैं उन्हें छोड़ देना चाहिये और जो स्वाधीन हैं उन्हें स्वीकार करना योग्य है वेदान्त शास्त्रका तो यह जगत् विदित सिद्धान्तही है कि जीवात्मा भ्रमसे पराधीन हो अपनेको दीन समझ रहा है नहीं तो सब उसका विलास मात्र है और वह उसी वेदान्त-वेद्य सर्वशक्तिमान अजर अमर परमेश्वरका स्वरूप है। श्रुतियां पुकार कर कह रही हैं कि—

"तत्र को मोहः कः शोक एकत्वमनुपश्यतः"

अर्थात् परमात्माके साथ जो अपनी एकता समझता है उसके पास शोक मोह फटकने भी नहीं पाते। वेदान्त शास्त्रको तब तक सन्तोष नहीं होता जब तक वह जिज्ञासुको "तत्त्वमसि" आदि महावाक्योंसे यह निश्चय नहीं करा देता कि वह स्वाधीनताकी मूर्त्ति सच्चिदानन्द परमात्माका रूप है। यह हम स्वीकार करतेहैं कि भारतवर्षमें भेदवादी वेदान्तियोंका भी एक मत है जो उक्त मतसे कुछ विलक्षण है पर यह अभिमान उनको भी है कि वे दास हैं तो केवल एक उस सर्व शक्तिमान परमात्माके जिसका यह ब्रह्माण्ड रचा हुआ है, न कि किसी मनुष्यके। इस देशके लोगोंको कोई अपनी विभूतिका डर दिखावे भी तो क्या दिखा सकता है, जब विपद्भञ्जन भगवान् श्रीकृष्ण स्वयं श्रीमुखसे पुकार रहे हैं कि—

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः। न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः॥

इस आत्माको न शस्त्र काट सकते हैं, न अग्नि जला सकती है न जल गीला कर सकता है और न पवन शोषणही कर सकता है। आर्य जातिकी स्वतन्त्रताके प्रचुर प्रमाण जिसे देखने हों, ऋग्वेदमें देख सकता है, विस्तारके भयसे हम यहां उनका उल्लेख करना नहीं चाहते।

पर दुःखकी बात यह है कि आर्य्य जातिकी स्वाधीनताका इतिहास लोगोंको पढ़ाया नहीं जाता। इससे इस देशके विद्यार्थियोंको सहजमें यह विदित नहीं होता कि किसी समय वे भी पूर्ण स्वतन्त्रताके अधिकारी थे और अपनी मातृभाषा बेटा भाई और भावपर उसी तरह मरते थे जिस तरह आजकल यूरोपके लोग। अस्तु विद्वान डाक्टर हण्टरसाहबकोभी यह बात खेदके साथ स्वीकार करनी पड़ीहै कि "भारतवर्षके विद्यार्थियोंके सामने पराधीनताका इतिहास आता है और उनकी सुखमयी स्वतन्त्रताका पुरावृत्त उनसे दूर रहताहै जिससे उनकी मानसिक स्वाधीनताका विकास नहीं होता। हमारा विचार है कि स्वतन्त्र ग्रन्थमें अपने " स्वाधीन जीवन " का इतिहास वर्णन कर दिखलावेंगे कि पिछली विपत्तियोंने हमें कहांतक नष्ट कर दिया कि अब हमारे समीप उसकी बात एक कहानीकी तरह रहगयी।

यह सच है कि यूरोपकी उद्दण्ड प्रजाकी तरह भारतीय प्रजाने कभी अराजकताका पक्ष ग्रहण नहीं किया और न कभी यही चाहा कि वह स्वयं शक्तिशालिनी होकर अपने राजाका नामतक मिटा दे, पर साथही इसने क्रूर प्रकृति राजाओंके

अत्याचारोंको अधिक दिन सहन भी नहीं किया। उत्पथगामी वेन जैसे नृशंस नरेशोंको उनके कर्म्मका फल भी इसने चखा दिया। भारतवर्षकी प्रजाने अपने उन राजाओंको सदा प्यार किया जिन्होने प्रकृति पुञ्जकी भलाईके लिये यत्न किया था। सूर्य्यवंशी महाराजाओंको उसने अपना देवता केवल इसीलिये नहीं बताया कि वे अलौकिक शक्ति सम्पन्न महापुरुष थे, बरञ्च इसी लिये भी कि उन्होंने प्रजाकी भलाईके लिये कोई बात उठा नहीं रखी थी। प्रजाको प्रसन्न करनेके लिये महाराज सगरने अपने कुमार असमञ्जसको देश निकाला दे दिया और भगवान् रामचन्द्रजीने पतिव्रता शिरोमणि जानकीजीको, भारतवर्षके प्राचीनराजाओंने प्रजामतके समक्ष, न कभी अपनी जातिका पक्ष किया, न कभी वंशका किया और न कभी अपने राजनियमहीको कुछ समझा। उन्होंने महाकवि भवभूतिके इस वाक्यके अनुसार कि " सतां केनाऽपि कार्य्येण लोकस्याराधनं व्रतम् "—प्रजारञ्जनही अपना प्रधान कर्त्तव्य समझा। उनकी सेना, उनका कोष और उनका बल उनके लिये न था वरञ्च प्रजाके लिये था और यह उसी पुण्यका फल था कि उनके समयमें न बहुत युद्ध विग्रह होते थे न दुर्भिक्ष और महामारीका भय था और न आज कलकी तरह न्यायालयोंमें अभियोगोंकीही भरमार थी। उस समय राजा और प्रजा आनन्द के साथ धर्म्म कार्य्य और धर्म्म चर्चामें समय व्यतीत किया करते थे। यद्यपि पिछले समयमें बौद्ध धर्म्मने आर्य्य जातिमें मतभेद कर उसे दुर्बल बना दिया था तथापि यह अपनी स्वतन्त्रताके सुखको नहीं भूली। इसने विक्रमादित्य जैसे महाराजा और शङ्कराचार्य्य जैसे महापुरुषोंको उत्पन्न किया और स्वाधीनता लाभ करनेके लिये पुनः पुनः उद्योग करती रही। बादशाही समयके सङ्कटमें यद्यपि हमने बहुत कुछ खोया और अपनेको भूलके अन्धकारमें छुपा लिया तथापि चित्तोड़ आदिकी श्मशान वह्नि उस अन्धेरेको कुछ दूर करती रही और हमें हमारा स्वरूप सुझाती रही। विपद कालमें सदासे भारतवर्षको अपने बालकोंका सहारा रहा है और यह उनके इस देशके लिये बड़े गौरवकी बात है कि वे अपनी कठिन परीक्षामें सदा उत्तीर्ण हुए हैं बलिके प्रतापके समय बटुक वामनने अपनी नीतिसे देव जातिका उद्धार किया था और धर्म्मप्राण प्रह्लादने अपने दुष्ट पिता और अन्यायी महाराजकी दुर्नीतिका विरोधकर अपने असीम साहसका परिचय दिया था। उसने राजकीय पाठशालाके सब विद्यार्थियोंको अपने मतमें मिला लिया था और सबके हृदयपर यह अङ्कित कर दिया था कि—

" कौमार आचरेत् प्राज्ञो धर्म्मान् भागवतानिह । दुर्लभं मानुषं जन्म तदप्यध्रुवमर्थदम् ॥ "

बुद्धिमान्को उचित है कि वह तेजस्विताके कार्य (भागवत धर्म्म) युवावस्थामें ही कर डाले। कारण कि प्रथम तो मनुष्य शरीरही दुर्लभ है। और उससे भी ऐसा शरीर जिससे प्रयोजन सिद्ध हो अधिक काल नहीं रहता। उस समयका भीषण वर्णन जो पुराणोंमें लिखा हुआ है उससे विदित होता है कि राजनीतिके विरोधी बालक केवल बहारितही नहीं होते थे, प्रत्युत अग्निमें जलाये जाते थे, फांसीपर चढ़ाये जाते थे और पहाड़ परसे गिराये जाते थे

उस कठिन समयमे न्याय और सत्यके सन्मुख विद्यार्थियोंने अपने प्राणोंको तुच्छ समझा और सत्य द्वेषी, स्वार्थी गुरुपुत्र 'शण्डामर्क' की आज्ञा और उपदेश न मानकर प्रह्लादको अपना नेता बना सब अत्याचारोंको सहन किया था।

महर्षि विश्वामित्रके यज्ञमे जब विश्व विजयी रावणके कर्म्मचारियोंने राक्षसी राजनीतिके अनुसार विघ्न करना आरम्भ किया था तब भी भारतवर्षके बालकोंहीने उसकी रक्षा की थी। रावणके नामसे वृद्ध महाराज दशरथ कांप उठे थे, किन्तु उनके "ऊनषोडश वर्ष" कुमार रामचन्द्र और लक्ष्मण निर्भीक चित्तसे धनुर्द्धर हो चुपचाप अकेले महर्षिके साथ भयानक वनमें चले आये और उन्होंने "स्वदेशस्य हिताय च" सब कुछ कर डाला।

अत्याचारके कारण भारतवर्षके बालकोंको कंसकी भीषण नीति भी सदा याद रहेगी जिसने कि अनेक प्रकारके छल बलसे निरपराध बालकोंका संहार करना आरम्भ कर दिया था। उसके अत्याचारोंसे लोग जन्मभूमिसे "निर्वासित हुए" विना अपराध अनेक जन कारावरुद्ध हुए और कितनेही अभागे पुत्रहीन भी हो गये थे। तथापि यदुनन्दन भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र और बलदेवजीने धीरतासे अपने पौरुषका परिचय दे उनका अन्त कर डाला था।

कुरु पाण्डवोंका वीर कथा भी इस देशके बालकोंके बल, स्वार्थ त्याग और स्वावलम्बनसे आरम्भ होतीहै। युवा भीष्मने स्वदेश और स्वजातिरक्षाके लिये चिर कुमार व्रत ग्रहणकर जैसा स्वार्थ त्याग दिखाया था, वैसा कौन दिखा सकता है? दुर्योधनादिके असह्य अत्याचारोंने पाण्डवोंको स्वावलम्बनके लिये बाध्य किया था और वे सहिष्णुताकी मर्यादाके पार जाकर प्रतीकार परायण हुए थे। यह दुःख पूर्ण सच है, कि कुरु पाण्डवोंकी वीरलीला किसी विजातीय वा भिन्नधर्म्मके विरुद्ध नहीं हुई थी वह स्वजाति हत्याके घोर पातक और आत्मकलहके कलङ्कसे कलङ्कित है, तथापि वीर पुत्र अभिमन्यु और बभ्रुवाहन आदिका चरित्र इतना महत्त्व पूर्ण है कि उससे हमारे विद्यार्थी बहुत कुछ सीख सकते है और यह जान सकते है कि जो काम बड़े बड़े वृद्ध लोगोंसे नही हुआ उसे इस देशके बालक तथा युवकोंने अपने प्राणोंकी बाजी लगाकर पूरा किया है।

हमारा वैदिक धर्म्म और हमारी आर्य्यजाति उस समय भी बालकोंहीसे उपकृत हुई थी। जब बौद्ध धर्म्मके कलहसे इस देशमें विदेशियोंका आधिपत्य हो चुका था। तेरह वर्षके कुमारिल और पांच वर्षके शङ्कराचार्यने जन्मभूमिके लिये सब सुखोंको छोड़कर अत्याचारोंके प्रज्वलित अग्निमे जीवनकी आहुति दी थी। उसीका प्रताप यह है कि वेदकी महिमा और पूर्वजोंकी प्राचीन कीर्ति अबतक इस देशमें सुनाई देती है।

मुगल बादशाहोंके समय हम यहांतक दीन होगये थे कि विधर्म्मी और विजातीय लोगोंके साथ कुटुम्बिता स्थापन करनेमें कितनेही नृपति अपना कल्याण समझने लगे थे तथापि इस देशके बालक उस समय भी विचलित नहीं हुए थे। राजपूतानेका गौरवमय दुर्ग चित्तोड़ जिन वीरोंके नामपर अबभी शिर ऊँचा कियेहुए है उनमे जीवन समर्पण करनेवाले बालकही प्रधान थे। पञ्जाबकी वीरभूमिने भी पिछले

समयके इतिहासमें बालकोंहीके कारण आदर पाया है। सिखोंके दशमगुरु महात्मा गोविन्दसिंहजीके दो बालक बादशाहकी आज्ञासे जीते हुए दीवारमें चिने गये पर उन्होंने उस समयकी दुर्नीतिका अनुसरण नहीं किया। "शाही हुक्म" से वीर बालक हकीकतरायने अपने टुकड़े टुकड़े करवा डाले पर राजाकी वह बात स्वीकार नहीं की जो सत्य और न्यायके विरुद्ध थी। इन वीर बालकोंके स्मारक चिह्न इस देशमें अब तक भी वर्तमान हैं, तथापि कुछ महात्मा यह कहनेमें सङ्कोच नहीं करते कि इस देशके विद्यार्थियोंको राजनीतिसे अलग रहना चाहिये।

कदाचित् कोई कह सकता है कि प्रह्लाद आदि धर्म्मपरायण बालकोंका प्रसङ्ग धर्म्मनीतिके उदाहरणमें दिया जा सकता है राजनीतिके प्रकरणमें नहीं। पर हम कहते हैं कि जिसके साथ राजाका सम्बन्ध हो वह धर्म्म नीति भी राजनीतिही है और इसके साथही यह भी स्मरण रखना चाहिये जिस कार्य्यमें न्याय और सत्यकी रक्षा हो वह चाहे जिस रूपमें हो पर उसे परम धर्म्म समझना चाहिये। कोई ईश्वरकी पूजा वैकुण्ठपतिके रूपमें करता है और कोई जन्मभूमिके रूपमें। भावमें जरा सङ्कोच विकासका भेद है, कर्त्तव्यमें नहीं।

क्या यह विपदकाल नहीं है।

जिन लोगोंका यह मत है कि विद्यार्थियों वा युवकोंसे विपद कालमें सहायता लेना चाहिये अन्यथा नहीं मालूम होता है वे इतने सुखी हैं कि उन्हें देशकी विपद होनेमें अबतक भी सन्देह है? ऐसेही लोगोंको लक्ष्य कर यह कहा गया है कि—

"दिये कान ईश्वरने पर नहिं पण्डित शब्द सुनाई दे। आंखें हैं पर हाय नहीं कुछ दुःखित दशा दिखाई दे॥"

जब हिन्दुस्थानियोंकी यह दशा है तब अङ्गरेज लोग इस देशको सुखी क्यों न बतलावें? ऐसे लोगोंको देशकी बात पढनेसे विदित हो जायगा कि इससे बढ़कर और विपदकाल कौनसा होगा?

कई शताब्दियोंसे यह देश दुर्बल होरहा है। दुर्बल प्रजाका भरोसा एक मात्र राजाही होता है, किन्तु इस देशका राजा सात समुन्दर पार रहता है और यहांकी प्रजाकी पुकारपर विदेशी गवर्नमेण्ट और उसके कर्म्मचारी ध्यान नहीं देते। जिस प्रजाकी प्रसन्नताके लिये इस देशके प्राचीन नृपतियोंने अपने पुत्र कलत्र तकको निर्वासित कर दिया था आज उसी प्रजाके लिये इस देशके कई राजपुरुष अपने सजातियोंको दण्ड देनेमें भी कुण्ठित है। निर्धनताका यहांतक राज्य है कि लाखों आदमी भरपेट खानेको भी नहीं पाते! चीन जापान आदिके भयानक युद्धोंमें भी उतने मनुष्य हताहत नहीं हुए जितने यहां प्लेगकी भेंट होचुके! और होते जा रहे है। विद्वान मर रहे हैं मूर्ख बढ़ रहे हैं और शिक्षाकी जड़ कट रही है, तथापि कहा जाता है कि यह विपदकाल नहीं है! इससे बढ़कर क्या आश्चर्य होगा? अब भी यदि इस देशके बालक, विद्यार्थी और युवकगण राजनीतिमें योग देकर इस देशकी सहायता न करेंगे तो कब करेंगे? "शतं जीवेम शरदः" की प्रार्थना भगवान् स्वीकार करते किम्वा हमारे देशके बालक मार्कण्डेयकी आयु पाते तो हम भी

" शण्डामर्ककी हांमें हां मिलाकर कहते कि देशसेवा वा धर्म्म सेवाके लिये बहुत काल है इस समय तो खाओ पीओ मौज उड़ाओ, बुढ़ापेमें देखाजायगा" किन्तु प्लेग आदि रोगों और अनेक प्रकारके उपद्रवोंने यहांतक छक्के छुटाये हैं कि बुढ़ापेकी तो बाते दूररहीं, युवा अवस्थातक भी बालकोंका पहुँचना कठिन होगया है। इसलिये हमें भी भक्त श्रेष्ठ प्रह्लादकी तरह कहना पड़ता है कि " भाइयो ! कलकी कौन जानता है, कि क्या होगा जो करना है अभी कर डालो। " दुर्लभ मानुषं जन्म तदप्यध्रुवमर्थदम् ॥"

यह बड़ी लज्जाकी बात है कि १४ वर्षका अकबर हिन्दुस्थानपर चढ़ाई कर दिल्लीकी बादशाही करने लगे, बीसवर्षसे कम उम्रके विलायती युवक भारतवर्षमें आकर शासक बन जायँ, और यहांके सुशिक्षित सुसभ्य युवा राजनीतिकी सभाओंमें योग देने और आन्दोलन करनेके पात्रभी न समझे जायँ। भारतवर्षकी प्राचीन और नव्यनीतिके अनुसार हम कह सकते हैं कि विद्यार्थियोंको राजनीतिके क्षेत्रसे अलग रखना धर्म्म और न्यायकी मर्य्यादासे बहुत परे है। राजनीति जब शिक्षा और कर्तव्यका विषय है तब उससे इस देशके विद्यार्थियोंको क्यों वञ्चित किया जाय ? जिस कार्य्यको एक जराजीर्ण वृद्ध कर सकता है उसे एक उत्साही नवयुवक करनेको उद्यत होजाय तो यह उसे अपना सौभाग्य समझना चाहिये।

इस समय भाग्यने कुछ पलटा खाया है दलके दल युवक देशसेवाके लिये सन्नद्ध और अकुतोभय होरहे हैं। ऐसे समयमें उन्हे हतोत्साह न कर प्रोत्साहित कर कर्तव्यमें नियुक्त करना उचित है। कारण, देशका भविष्य इन्हींकी उन्नति और अवनति पर निर्भर है। हमारे पवित्र लोकोंके देवता और पूर्वजोंके आत्मा, इनके सौभाग्यशाली मस्तकोंपर आशीर्वाद वर्षण और इनके पवित्र कार्य्योंको सतृष्ण नेत्रोंसे निरीक्षण कर रहे हैं। आशा है कि इनके द्वारा इस अधःपतित देशका उद्धार होगा और यह चिर प्रसुप्त एवं आत्म विस्मृत जाति भी कार्य्य करनेको सक्षम होगी।

अन्तमें हम " तिलकयात्रा " से निम्न लिखित कई पङ्क्तियां भी उद्धृत कर पाठकोंको उपहार देकर इस लेखको समाप्त करते हैं और चाहते हैं कि वे इन बचनोंपर ध्यान दे अपनी दशाका विचार करें।

" चढ़ता है सो गिरता भी है पर गिरकर जो उठै नही। उससे बढ़कर शोच्य जगतमें मिल सकता कब मनुज कहीं। साधुवृत्त कन्दुक सम गिरकर बेर बेर ऊपर आते। वृत्तहीन मृत्पिण्ड सदृश गिर तुरत धूलिमें मिल जाते। उठते है वे वीरपुत्र जिनको पितरोंका है अभिमान। नही उठानेसे उठते जो जारज कायर मृतक समान। पैरोंमें गिर ठोकर खाना यह कब किसको प्यारा था। उठना और उठाना सबको यह यक काम हमारा था। (तिलकयात्रा)

श्रीपञ्चमी सं०
१९६३ कलकत्ता

माधवप्रसाद मिश्र।

उपन्यास ग्रंथ भाषामें ।

सुद्राकुलीन-(मैसूरका इतिहास) २० प्रकरणोंमें पं० ज्वालाप्रसाद मिश्र-कृत भाषामे उपन्यास ... ... ॥=)

सुवामा-अर्थात् सुवामा और महेशका प्रेम प्रभाव दर्शनसे सुवामाके पिता महेशको सुवामाको अर्पित करना इत्यादि ... ... =)

देवरानी जिठानी-अनेक सामाजिक उपन्यास (बाबू गोपालराम द्वारा रचित) ... ... ॥)

डबल बीबी-एक हिन्दू गार्हस्थ्य रोचक उपन्यास इसमें पहिले विवाहिता स्त्रीसे संतति न होनेके कारण लड़केका मा बाप स्वयं दूसरी स्त्री करते है या बहुतसी सती स्त्री अपने स्वामीका दूसरा विवाह कराके अपने ऊपर आफत लाती हैं उसीका उपदेश पूर्ण वर्णित है ... ॥=)

सत्कुलाचरण-मुरलीधर शर्माकृत एक योग्य कुलीन सत्पुरुषका सरस उपाख्यान ... ... ।=)

स्वतंत्र रमा और परतंत्र लक्ष्मी-महता लज्जाराम कृत एक स्त्री शिक्षा विधायक बोधजनक सामाजिक उपन्यास, इस पुस्तकमें स्वतंत्रा भ्यास प्राप्तकरनेसे रमाने कैसे २ कष्ट उठाये और लक्ष्मीको परतंत्र रहनेसे कितना सुख हुआ इत्यादि वर्णन है ... ... ।=)

शिवाजी विजय-अर्थात् (जीवन प्रभात) महाराष्ट्रीय शूरवीर शिवाजीका समर कौशल अत्यंत ओजवर्द्धक और साथही औरङ्गजेबकी कूट नीति युद्धका सच्चाहाल पं० बलदेवप्रसाद मिश्ररचित ... ... १)

विक्टोरिया चरित्र-पं० लज्जारामजी रचित अर्थात् भारतेश्वरी महारानी का संपूर्ण जीवन वृत्तांत वर्णन है चित्रोंसहित ... ... १।)

वीरेन्द्र उपन्यास-(मनोहर उपन्यास वाक्यरचना रोचक है) ... ... =)

सास पतोहू-(गृह चरित्र अर्थात सास और बहूका सांसारिक व्यवहार का उपाख्यान) ... ... ॥)

विचित्र स्त्री चरित्र-स्त्रीके छल छंदका अपूर्व वर्णन स्त्रीकी जालोंसे बचना हो तो इसको अवश्य देखिये ... ... ॥)

त्रियाचरित्र-रक्षपालीकृत नानाप्रकारके उदाहरणों समेत स्त्री पुरुषोंका प्रेम लुब्ध चरित्र सुजनोंके सचेत होनेके लिये वर्णित है ... ... ।=)

राजकुमारी चन्द्रमुखी उपन्यास-अति बोधयुक्त ... ... ।)

बड़ाभाई-एक अपूर्व ग्राहस्थ्य उपन्यास (गोपालरामकृत) सौतेली माका सत्यानाश ... ... ॥=)

धूर्तरसिककाल-एक परम बोधजनक सामाजिक उपन्यास पं० लज्जाराम रचित इस पुस्तकमें धूर्तरसिकलालका अपने सेठ सोहनलालजी को अनेक प्रकारके दुर्व्यसनोंमें फँसाकर उसका सर्वस्व हरण करना साध्वी सत्य[illegible] पर व्यभिचारका कलंक लगाकर घरसे निकाल देना और असत्य व्यवहारसे सोहनलालको आत्मघातका

जाहिरात।

कंन्नीराम बांठियाकी पुस्तकें